नमस्ते जी

ऋषि दयानंद द्वारा प्रचारित वैदिक विचारधारा ने सैकड़ो हृदय को क्रन्तिकारी विचारो से भर दिया | जो वेद उस काल में विचारो से भी भुला दिए गए थे | ऋषि दयानंद ने उन हृदयों को वेदों के विचारो से ओतप्रोत कर दिया और देश में वेद गंगा बहने लगी | ऋषि के अपने अल्प कार्य काल में समाज की आध्यात्मिक, सामाजिक, और व्यक्तिगत विचार धारा को बदल के रख दिया | ऋषि के बाद भी कही वर्षों तक यह परिपाटी चली पर यह वैचारिक परिवर्तन पुनः उसी विकृति की और लौट रहा है | और इसी विकृति को रोकने के लिए वैदिक विद्वान प्रो० राजेंद्र जी जिज्ञासु के सानिध्य में "पंडित लेखराम वैदिक मिशन" संस्था का जन्म हुआ है | इस संस्था का मुख्य उद्देश्य वेदों को समाज रूपी शरीर के रक्त धमनियों में रक्त के समान स्थापित करना है | यह कार्य ऋषि के जीवन का मुख्य उद्देश्य था और यही इस संस्था का भी मुख्य उद्देश्य है | संस्था के अन्य उद्देश्यों में सम्मिलत है साहित्य का सृजन करना | जो दुर्लभ आर्य साहित्य नष्ट होने की ओर अग्रसर है उस साहित्य को नष्ट होने से बचाना और उस साहित्य को क्रम बद्ध तरीके से हमारे भाई और बहनों के समक्ष प्रस्तुत करना जिससे उनकी स्वाध्याय में रूचि बढ़े और वे तुलनात्मक अध्यन कर सकें जिससे उनकी स्वधर्म में रूचि बढ़े और अन्य मत मतान्तरो की जानकारी उन्हें प्राप्त हो और वे विधर्मियो द्वारा लगाये जा रहे विभिन्न आक्षेपों का उत्तर दे सकें विधर्मियो से स्वयं भी बचें और अन्यो की भी सहयता करें | संस्था का उद्देश्य है समाज के समक्ष हमारे गौरव शाली इतिहास को प्रस्तुत करना जिससे हमारा रक्त जो ठंडा हो गया है वह पुनः गर्म हो सके और हम हमारे इतिहास पुरुषो का मान सम्मान करें और उनके बताये गये नीतिगत मार्ग पर चलें | संस्था का अन्य उद्देश्य गौ पालन और गौ सेवा को बढ़ावा देना जिससे पशुओ के प्रति प्रेम, दया का भाव बढ़े और इन पशुओ की हत्या बंद हो, समाज में हो रहे परमात्मा के नाम पर पाखण्ड, अन्धविश्वास, अत्याचार को जड़ से नष्ट करना और परमात्मा के शुद्ध वैदिक स्वरुप को समाज के समक्ष रखना, हमारे युवा शक्ति को अनेक भोग, विबिन्न व्यसनों, छल, कपट इत्यादि से बचाना |

इन कार्यो को हम अकेले पूरा करने का सामर्थ्य नहीं रखते पर, यह सारे कार्य है तो बड़े विशाल और व्यापक पर अगर संस्था को आप का साथ मिला तो बड़ी सरलता से पूर्ण किये जा सकते है | हमारा समाजिक ढाचा ऐसा है की हम प्रत्येक कार्य की लिए एक दुसरे पर निर्भर है | आशा करते है की इस कार्य में आप हमारी तन, मन से साहयता करेंगे | संस्था द्वारा चलाई जा रही वेबसाइट www.aryamantavya.in और www.vedickranti.in पर आप संस्था द्वारा स्थापित संकल्पों सम्बन्धी लेख पड़ सकते है और भिन्न-भिन्न वैदिक साहित्य को निशुल्क डाउनलोड कर सकते है | कृपया स्वयं भी जाये और अन्यो को भी सूचित करे यही आप की हवी होंगी इस यज्ञ में जो आप अवश्य करेंगे यही परमात्मा से प्रार्थना करते हैं |

जिन सज्जनों के पास दुर्लभ आर्य साहित्य है एवं वे उसे संरक्षित करने में संस्था की सहायता करना चाहते हैं वो कृपया निम्न पते पर सूचित करें

ptlekhram@gmail.com

धन्यवाद् !

पंडित लेखराम वैदिक मिशन

आर्य मंतव्य टीम

॥ओ३म्॥

॥अथ सप्तमं मण्डलम्॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ पञ्चविंशत्यृचस्य प्रथमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १-१८ एकादशाक्षरपादैस्त्रिपदा विराड्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। १९-२५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ नरैः कथं विद्युदुत्पादनीयेत्याह॥

अब सातवें मण्डल के प्रथम सूक्त का आरम्भ है, इसके पहिले मन्त्र में मनुष्यों को विद्युत् अग्नि कैसे उत्पन्न करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अ॒ग्निं नरो॒ दीधि॑तिभिर॒रण्यो॒र्हस्त॑च्युती जनयन्त प्रश॒स्तम्।
दू॒रे॒दृशं॑ गृ॒हप॑तिमथ॒र्युम्॥ १॥

अ॒ग्निम्। नर॑ः। दीधि॑तिऽभिः। अ॒रण्यो॑ः। हस्त॑ऽच्युती। ज॒न॒य॒न्त॒। प्र॒ऽश॒स्तम्। दू॒रे॒ऽदृश॑म्। गृ॒हऽप॑तिम्। अ॒थ॒र्युम्॥ १॥

पदार्थः-(**अग्निम्**) पावकम् (**नरः**) (**दीधितिभिः**) प्रदीपिकाभिः क्रियाभिः (**अरण्योः**) यथा काष्ठविशेषयोः (**हस्तच्युती**) हस्तयोः प्रच्युत्या भ्रामणक्रियया (**जनयन्त**) (**प्रशस्तम्**) उत्तमम् (**दूरदेशम्**) दूरे द्रष्टुं योग्यम् (**गृहपतिम्**) स्वामिनम् (**अथर्युम्**) अहिंसां कामयमानम्॥१॥

अन्वयः-हे नरो विद्वांसो! यथा भवन्तो दीधितिभिर्हस्तच्युती अरण्योर्दूरे दृशमग्निं जनयन्त तथाऽथर्युं गृहपतिं प्रशस्तं कुर्वन्तु॥१॥

भावार्थः-हे विद्वज्जना! यथा घर्षिताभ्यामरणिभ्यामग्निरुत्पद्यते तथा सर्वैः पार्थिवैर्वायव्यैर्वा द्रव्यैर्द्रव्याणां घर्षणेन या विद्युत्सर्वव्याप्ता सत्युत्पद्यते सा दूरदेशस्थसमाचारादिव्यवहारान् साद्धुं शक्नोत्येतद्विद्यया गृहस्थानां महानुपकारो भवतीति॥१॥

पदार्थः-हे (**नरः**) विद्वान् मनुष्यो! जैसे आप (**दीधितिभिः**) उत्तेजक क्रियाओं से (**हस्तच्युती**) हाथों से प्रकट होने वाली घुमानारूप क्रिया से (**अरण्योः**) अरणी नामक ऊपर नीचे के दो काष्ठों में (**दूरेदृशम्**) दूर में देखने योग्य (**अग्निम्**) अग्नि को (**जनयन्त**) प्रकट करें, वैसे (**अथर्युम्**) अहिंसाधर्म को चाहते हुए (**गृहपतिम्**) घर के स्वामी को (**प्रशस्तम्**) प्रशंसायुक्त करो॥१॥

भावार्थः-हे विद्वान् जनो! जैसे घिसी हुई अरणियों से अग्नि उत्पन्न होता है, वैसे सब पार्थिव द्रव्य वा वायुसम्बन्धी द्रव्यों के घिसने से जो सर्वत्र व्याप्त हुई विद्युत् उत्पन्न होती है, वह दूर देशों में समाचारादि पहुँचने रूप व्यवहारों को सिद्ध कर सकती है। इस विद्युत् विद्या से गृहस्थों का बड़ा

उपकार होता है।

पुनस्तं कथं जनयेदित्याह॥

फिर उस बिजुली को कैसे प्रकट करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमग्निमस्ते वसवो न्यृण्वन्त्सुप्रतिचक्षमवसे कुतश्चित्।

दक्षाय्यो यो दम आस नित्यः॥ २॥

तम्। अग्निम्। अस्ते। वसवः। नि। ऋण्वन्। सुऽप्रतिचक्षम्। अवसे। कुतः। चित्। दक्षाय्यः। यः। दमे। आस। नित्यः॥ २॥

पदार्थः-(**तम्**) (**अग्निम्**) विद्युदाख्यम् (**अस्ते**) गृहे वा प्रक्षेपणे (**वसवः**) प्राथमकल्पिका विद्वांसः (**नि**) नितराम् (**ऋण्वन्**) प्रसाध्नुवन् (**सुप्रतिचक्षम्**) सुष्ठु प्रतिचष्टे पश्यत्यनेका विद्या येन तम् (**अवसे**) रक्षणाय बह्वन्नाय वा। **अव इत्यन्ननाम।** (निघं०२.७) (**कुतः**) कस्मात् (**चित्**) अपि (**दक्षाय्यः**) दक्षश्चतुरो विद्वानिव (**यः**) (**दमे**) गृहे दमने वा (**आस**) अस्ति (**नित्यः**) सनातनः॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो दक्षाय्य इव दमे नित्य आस यं सुप्रतिचक्षं कुतश्चिदवसे वसवो न्यृण्वँस्तमग्निमस्ते भवन्तो जनयन्तु॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! योऽयं नित्यस्वरूपो विद्युदग्निर्मूर्तद्रव्याणि गृहाणि कृत्वा नित्यस्वरूपेण प्रतिष्ठितोऽस्ति तं विद्याक्रियाभ्यां जनयित्वा कलायन्त्रेषु संप्रयोज्य बह्वन्नधनं रक्षणं च प्राप्नुवन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यः**) जो (**दक्षाय्यः**) चतुर विद्वान् के तुल्य (**दमे**) घर वा इन्द्रियादि के दमन में (**नित्यः**) सनातन उपयोगी (**आस**) है जिस (**सुप्रतिचक्षम्**) मनुष्य जिसके द्वारा अनेक विद्याओं को अच्छे प्रकार देखता है (**कुतश्चित्**) किसी से (**अवसे**) रक्षा वा अधिक अन्न के लिये (**वसवः**) प्रथम कक्षा के विद्वान् (**नि, ऋण्वन्**) निरन्तर प्रसिद्ध करें (**तम्**) उस (**अग्निम्**) विद्युत को (**अस्ते**) घर में वा फेंकने में आप लोग उत्पन्न करो॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो यह नित्यस्वरूप विद्युत् अग्नि स्थूल द्रव्यों को घर बना के नित्य स्वरूप से स्थित है, उस अग्नि को विद्या और क्रियाओं से प्रकट कर तथा कलायन्त्रों में संयुक्त कर के बहुत अन्न, धन और रक्षा को प्राप्त होओ॥ २॥

पुनस्तं कथं जनयेदित्याह॥

फिर उसको कैसे प्रकट करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रेद्धो अग्ने दीदिहि पुरो नोऽजस्रया सूर्म्या यविष्ठ।

त्वां शश्वन्त उप यन्ति वाजाः॥ ३॥

प्रऽइद्धः। अग्ने। दीदिहि। पुरः। नः। अजस्रया। सूर्म्या। यविष्ठ। त्वाम्। शश्वन्तः। उप। यन्ति। वाजाः॥ ३॥

पदार्थः-(**प्रेद्धः**) प्रकर्षेणेद्धः प्रदीप्तः (**अग्नेः**) पावक इव प्रकाशितप्रज्ञ (**दीदिहि**) प्रदीपय

(पुरः) पुरस्तात् **(नः)** अस्मान् **(अजस्रया)** निरन्तरया क्रियया **(सूर्म्या)** सच्छिद्रया मूर्त्या कलया वा **(यविष्ठ)** अतिशयेन युवन् **(त्वाम्)** **(शश्वन्तः)** अनादिभूताः प्रवाहेण नित्याः पृथिव्यादयः **(उप)** **(यन्ति)** **(वाजाः)** प्राप्तव्याः पदार्थाः॥३॥

अन्वयः-हे यविष्ठाग्ने यः प्रेद्धोऽग्निरजस्रया सूर्म्या नोऽस्माँस्त्वां च प्राप्तोऽस्ति यं शश्वन्तो वाजा उप यन्ति तं पुरो विद्याक्रियाभ्यां दीदिहि॥३॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! योऽग्निरनादिभूतेषु प्रकृत्यवयवेषु विद्युद्रूपेण व्याप्तोऽस्ति यस्य विद्यया बहवो: व्यवहाराः सिध्यन्ति तं सततं प्रकाश्य धनधान्यादिकमैश्वर्यं प्राप्नुत॥३॥

पदार्थः-हे **(यविष्ठ)** अत्यन्त जवान **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य प्रकाशित बुद्धि वाले विद्वान्! जो **(प्रेद्धः)** अच्छे प्रकार जलता हुआ अग्नि **(अजस्रया)** निरन्तर प्रवृत्त क्रिया **[से]** **(सूर्म्या)** अच्छे छिद्र सहित शरीरादि मूर्त्ति वा कला से **(नः)** हम को और **(त्वाम्)** तुम को प्राप्त है जिस को **(शश्वन्तः)** प्रवाह से नित्य आदि पृथिव्यादि **(वाजाः)** प्राप्त होने योग्य पदार्थ **(उप, यन्ति)** समीप प्राप्त होते हैं उसको **(पुरः)** पहिले वा सामने विद्या और क्रिया से **(दीदिहि)** प्रदीप्त कर॥३॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो अग्नि अनादिस्वरूप प्रकृति के अवयवों में विद्युद्रूप से व्याप्त है, जिसकी विद्या से बहुत से व्यवहार सिद्ध होते हैं, उसको निरन्तर प्रकाशित कर धनधान्यादि ऐश्वर्य्य को प्राप्त होओ॥३॥

पुनरग्निः कस्माज्जनयितव्य इत्याह॥

फिर अग्नि किससे प्रकट करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र ते अग्नयोऽग्निभ्यो वरं निः सुवीरासः शोशुचन्त द्युमन्तः।

यत्रा नरः समासते सुजाताः॥४॥

प्र। ते। अग्नयः। अग्निऽभ्यः। वरम्। निः। सुऽवीरासः। शोशुचन्त। द्युऽमन्तः। यत्र। नरः। सम्ऽआसते। सुऽजाताः॥४॥

पदार्थः-**(प्र)** **(ते)** **(अग्नयः)** विद्युदादयः **(अग्निभ्यः)** पावकपरमाणुभ्यः **(वरम्)** उत्तमं व्यवहारम् **(निः)** नितराम् **(सुवीरासः)** शोभनाश्च ते वीराश्च **(शोशुचन्त)** शोधयन्ति **(द्युमन्तः)** द्यौर्बह्वी दीप्तिर्वर्त्तते येषु ते **(यत्र)** यस्मिन् व्यवहारे। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(नरः)** पुरुषार्थेनाप्तव्यप्रापकाः **(समासते)** सम्यक् प्राप्नुवन्ति **(सुजाताः)** सुष्ठु प्रसिद्धाः॥४॥

अन्वयः-ये सुवीरासो नरस्ते यत्राग्निभ्यः सुजाता द्युमन्तोऽग्नयो जायन्ते तत्र निः शोशुचन्त तेभ्यो वरं प्र समासते तथैते यूयमपि जनयित्वोत्तमं सुखं प्राप्नुथ॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या अग्नेरग्निमुत्पाद्य सिद्धकामा भूत्वाऽनुत्तमं सुखं प्राप्नुवन्ति ते जगति सुप्रसिद्धा भवन्ति॥४॥

पदार्थः-जो **(सुवीरासः)** सुन्दर वीर **(नरः)** पुरुषार्थ को प्राप्त करने हारे विद्वान् हैं **(ते)** वे **(यत्र)** जिस व्यवहार में **(अग्निभ्यः)** अग्नि के परमाणुओं से **(सुजाताः)** अच्छे प्रकार प्रकट हुए

(द्युमन्तः) बहुत दीप्ति वाले **(अग्नयः)** विद्युत् आदि अग्नि उत्पन्न होते हैं उसमें **(निः, शोशुचन्त)** निरन्तर शुद्धि करते और उनसे **(वरम्)** उत्तम व्यवहार को **(प्र, समासते)** सम्यक् प्राप्त होते हैं, वैसे इसको प्रकट करके तुम लोग भी उत्तम सुख को प्राप्त होओ॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्नि से अग्नि को उत्पन्न कर सिद्ध कामना वाले होके सर्वोत्तम सुख पाते हैं, वे जगत् में अच्छे प्रसिद्ध होते हैं॥४॥

पुनः सोऽग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दा नो॑ अग्ने धि॒या र॒यिं सु॒वीरं॑ स्वप॒त्यं स॑हस्य प्रश॒स्तम्।

न यं यावा॒ तर॑ति यातु॒मावा॑न्॥५॥२३॥

दाः। न॒ः। अ॒ग्ने॒। धि॒या। र॒यिम्। सु॒ऽवीर॑म्। सु॒ऽअ॒प॒त्यम्। स॒ह॒स्य॒। प्र॒ऽश॒स्तम्। न। यम्। यावा॑। तर॑ति। या॒तु॒ऽमावा॑न्॥५॥

पदार्थः-(**दाः**) देहि (**नः**) अस्मभ्यम् (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**रयिम्**) धनम् (**सुवीरम्**) शोभना वीरा यस्मात्तम् (**स्वपत्यम्**) शोभनान्यपत्यानि सन्ताना यस्मात्तम् (**सहस्य**) सहसि बले साधो (**प्रशस्तम्**) उत्तमम् (**न**) निषेधे (**यम्**) (**यावा**) यो याति (**तरति**) उल्लङ्घयति (**यातुमावान्**) गच्छन्मत्सदृशः॥५॥

अन्वयः-हे सहस्याग्ने! धिया यथाऽग्निर्धिया क्रियया सुवीरं स्वपत्यं प्रशस्तं रयिं नोऽस्मभ्यं ददाति। यं यातुमावान् यावा न तरति तद्विद्याधियाऽस्मभ्यं त्वं दाः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथाग्निविद्यया सुसन्ताना उत्तमशूरवीराः श्रेष्ठं धनं महान् यानवेगश्च प्रजायते तां सुविचारेण विविधक्रियया जनयत॥५॥

पदार्थः-हे **(सहस्य)** बल में श्रेष्ठ **(अग्नि)** अग्नि के तुल्य तेजस्वी विद्वन्! **(धिया)** बुद्धि वा कर्म से जैसे अग्नि क्रिया से **(सुवीरम्)** सुन्दर वीर जन **(स्वपत्यम्)** सुन्दर सन्तान जिससे हों उस **(प्रशस्तम्)** उत्तम **(रयिम्)** धन को **(नः)** हमारे लिये देता है **(यम्)** जिसकी **(यातुमावान्)** मेरे तुल्य चलता हुआ **(यावा)** गमनशील **(न)** नहीं **(तरति)** उल्लङ्घन करता उस प्रकार की विद्या हमारे लिये बुद्धि से आप **(दाः)** दीजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जिसे अग्नि-विद्या से सुन्दर सन्तान, उत्तम शूरवीर जन श्रेष्ठ धन और यानों का बड़ा वेग उत्पन्न हो, उस विद्या को उत्तम विचार और अनेक प्रकार की क्रियाओं से प्रकट करो॥५॥

पुनरग्निविद्या किंवत्किं जनयतीत्याह॥

फिर अग्नि-विद्या किसके तुल्य क्या उत्पन्न करती है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उप॒ यमेति॑ युव॒तिः सु॒दक्षं॑ दो॒षावस्तो॑र्ह॒विष्म॑ती घृ॒ताची॑।

उपस्वैनमरमतिर्वसूयुः॥६॥

उप। यम्। एति। युवतिः। सुऽदक्षम्। दोषा। वस्तोः। हविष्मती। घृताची। उप। स्वा। एनम्। अरमतिः। वसूऽयुः॥६॥

पदार्थः-(**उप**) (**यम्**) हृद्यं पतिम् (**एति**) प्राप्नोति (**युवतिः**) प्राप्तयौवना कन्या (**सुदक्षम्**) सुष्ठुबलयुक्तम् (**दोषा**) रात्रिः (**वस्तोः**) दिनम् (**हविष्मती**) बहूनि हवींषि ग्राह्यवस्तूनि विद्यन्ते यस्यां सा (**घृताची**) रात्रिः। **घृताचीतिरात्रिनाम।** (निघं०१.७) (**उप**) (**स्वा**) स्वकीया (**एनम्**) विवाहितम् (**अरमतिः**) न विद्यते पूर्वा रमती रमणे गृहस्थक्रिया यस्याः सा (**वसूयुः**) या वसूनि द्रव्याणि कामयति सा॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा युवतिर्दोषावस्तोः सुदक्षं यं पतिमुपैति यथा हविष्मती घृताची चन्द्रमुपैति यथाऽरमतिर्वसूयुः **[स्वा]** स्वभार्य्यैनं युवानं प्रियं पतिं प्राप्य सुखमुपैति तथाऽग्निविद्यां प्राप्य यूयं सततं मोदध्वम्॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येऽहर्निशमुद्यमेन विद्यया वह्निविद्यां जनयन्ति ते प्रियस्त्रीपुरुषवन्महान्तमानन्दं प्राप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे (**युवतिः**) युवावस्था को प्राप्त कन्या (**दोषा, वस्तोः**) रात्रि दिन (**सुदक्षम्**) अच्छे बलयुक्त (**यम्**) जिस पति को (**उप, एति**) समीप से प्राप्त होती है जैसे (**हविष्मती**) ग्रहण करने योग्य बहुत वस्तुओं वाली (**घृताची**) रात्री चन्द्रमा को (**उप**) प्राप्त होती है तथा जैसे (**अरमतिः**) जिस के गृहस्थ के तुल्य रमण क्रिया नहीं वह (**वसूयुः**) द्रव्यों की कामना करने वाली (**स्वा**) अपनी स्त्री (**एनम्**) इस विवाहित प्रियपति को प्राप्त होके सुख पाती है, वैसे अग्निविद्या को प्राप्त होके तुम लोग निरन्तर आनन्दित होओ॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो दिन रात उद्यम और विद्या के द्वारा अग्निविद्या को प्रकट करते हैं, वे परस्पर प्रीति रखने वाले की पुरुषों के तुल्य बड़े आनन्द को प्राप्त होते हैं॥६॥

पुनरग्निना कीदृश उपकारो ग्राह्य इत्याह॥

फिर अग्नि से **[कैसा]** उपकार लेना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विश्वा अग्नेऽप दहारातीर्येभिस्तपोभिरदहो जरूथम्।
प्र निस्वरं चातयस्वामीवाम्॥७॥

विश्वाः। अग्ने। अप। दह। अरातीः। येभिः। तपःऽभिः। अदहः। जरूथम्। प्र। निऽस्वरम्। चातयस्व। अमीवाम्॥७॥

पदार्थः-(**विश्वाः**) समग्राः (**अग्ने**) अग्निवद्विद्वन् (**अप**) (**दह**) (**अरातीः**) शत्रुसेनाः (**येभिः**) यैः (**तपोभिः**) प्रतप्तकैरग्निगुणैः (**अदहः**) दहति (**जरूथम्**) जरावस्थां प्राप्तं जीर्णं काष्ठम् (**प्र**)

(निस्वरम्) निर्मूलम् **(चातयस्व)** नाशं प्रापय। **चततिर्गतिकर्मा।** (निघं०२.१४) **(अमीवाम्)** रोगम्॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! येभिस्तपोभिरग्निर्जरूथमदहस्तैर्विश्वा अरातीरप दहाऽमीवां निस्वरं प्र चातयस्व॥७॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यदि भवन्तोऽग्निप्रभावं विदित्वाऽऽग्नेयाऽस्त्रादीनि निर्माय सङ्ग्रामे प्रवर्तेरँस्तर्ह्यनेकाः शत्रुसेनाः सद्यो दह्येयुर्यथा सद्वैद्यः स्वकीयं शरीरमरोगं कृत्वाऽन्यानरोगान् करोति तथैव भवन्तोऽग्निविद्याप्रभावेन रोगभूताञ्छत्रूनिवारयन्तु॥७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वी विद्वन्! **(येभिः)** जिन **(तपोभिः)** हाथों को तपाने वाले अग्नि के गुणों से अग्नि **(जरूथम्)** जीर्ण अवस्था को प्राप्त हुए पुराने काष्ठ को **(अदहः)** जलाता है उन गुणों से **(विश्वाः)** सब **(अरातीः)** शत्रुओं की सेनाओं को **(अप, दह)** जलाइये तथा **(अमीवाम्)** रोग को **(निस्वरम्)** निर्मूल जैसे हो, वैसे **(प्र, चातयस्व)** नष्ट कीजिये॥७॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो आप अग्नि के प्रभाव को जान के आग्नेयास्त्र आदिकों को बना के संग्राम में प्रवृत्त हों तो अनेक शत्रुओं की सेनाएँ शीघ्र भस्म होवें, जैसे उत्तम वैद्य अपने शरीर को रोगरहित करके अन्यों को रोगरहित करता है, वैसे ही आप लोग अग्निविद्या के प्रभाव से रोगरूप शत्रुओं का निवारण करो॥७॥

पुनर्विद्वद्भिः केन तेजस्विनी सेना कार्येत्याह॥

फिर विद्वानों को किससे सेना तेजस्विनी करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ यस्ते अग्न इधते अनीकं वसिष्ठ शुक्र दीदिवः पावक।
उतो न एभिः स्तवथैरिह स्याः॥८॥

आ। यः। ते। अग्ने। इधते। अनीकम्। वसिष्ठ। शुक्र। दीदिऽवः। पावक। उतो इति। नः। एभिः। स्तवथैः। इह। स्याः॥८॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(यः)** **(ते)** तव **(अग्ने)** पावक इव **(इधते)** प्रदीपयति **(अनीकम्)** सैन्यम् **(वसिष्ठ)** अतिशयेन वसो **(शुक्र)** आशुकारिन् वीर्यवन् **(दीदिवः)** विजय कामयमान **(पावक)** पवित्र **(उतो)** **(नः)** अस्माकम् **(एभिः)** **(स्तवथैः)** **(इह)** अस्मिन् राज्ये **(स्याः)** भवेः॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने वह्निरिव वर्त्तमान वसिष्ठ शुक्र दीदिवः पावक राजन् यस्य ते तवाऽनीकं योऽग्निरा इधते तस्यैभिः स्तवथैरिह नो रक्षकः स्या उतो अपि वयं तदग्निबलेनैव ते रक्षकाः स्याम॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजपुरुषा अग्निविद्ययाऽऽग्नेयास्त्रादीनि निर्माय स्वसैन्यं सुप्रकाशितं कृत्वा न्यायेन प्रजापालकास्स्युस्ते दीर्घसमयं राज्यं महैश्वर्य्या जायन्ते॥८॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य वर्त्तमान **(वसिष्ठ)** अतिशय कर वसने और **(शुक्र)** शीघ्रता करने वाले पराक्रमी **(दीदिवः)** विजय की कामना करते हुए **(पावक)** पवित्र **[**राजन्! जिस**]** **(ते)**

आपकी **(अनीकम्)** सेना को **(यः)** जो अग्नि **(आ, इधते)** प्रदीप्त प्रकाशित कराता है उस अग्नि की **(एभिः)** इन **(स्तवथैः)** स्तुतियों से **(इह)** इस राज्य में **(नः)** हमारे रक्षक **(स्याः)** हूजिये **(उतो)** और भी हम लोग उस अग्नि के बल से ही आपके रक्षक होवें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजपुरुष अग्निविद्या से आग्नेयास्त्रादि को बना के अपनी सेना को अच्छे प्रकार प्रकाशित करके न्याय से प्रजा के पालक हों, वे दीर्घ समय तक राज्य को पाके महान् ऐश्वर्य वाले होते हैं॥८॥

पुनः कीदृशैः सह राजा प्रजाः पालयेदित्याह॥

फिर कैसे भृत्यों के साथ राजा प्रजा का पालन करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वि ये ते अग्ने भेजिरे अनीकं मर्ता नरः पित्र्यासः पुरुत्रा।

उतो न एभिः सुमना इह स्याः॥९॥

वि। ये। ते। अग्ने। भेजिरे। अनीकम्। मर्ताः। नरः। पित्र्यासः। पुरुऽत्रा। उतो इति। नः। एभिः। सुऽमनाः। इह। स्याः॥९॥

पदार्थः-**(वि)** **(ये)** विद्वांसः **(ते)** **(अग्ने)** तडिदिव प्रकाशमान **(भेजिरे)** सेवन्ते **(अनीकम्)** सैन्यम् **(मर्त्ताः)** मनुष्याः **(नरः)** नायकाः **(पित्र्यासः)** पितृभ्यो हिताः **(पुरुत्रा)** पुरुषु बहुषु राजसु **(उतो)** अपि **(नः)** अस्माकमुपरि **(एभिः)** प्रत्यक्षैर्विद्वद्भिः सह **(सुमनाः)** सुष्ठु शुद्धमनाः **(इह)** अस्मिन् राज्ये **(स्याः)**॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये पित्र्यासो मर्ता नरस्ते [पुरुत्रा] अनीकं वि भेजिरे उतो एभिस्सह त्वमिह नः सुमनाः स्याः॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! येऽग्निविद्यायां कुशला भवत्सेनाप्रकाशका वीरपुरुषा धर्मिष्ठा विद्वांसोऽधिकारिणः स्युस्तैस्सह भवान् न्यायेनाऽस्माकं पालको भूयाः॥९॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्युत् के तुल्य प्रकाशमान! **(ये)** जो विद्वान् **(पित्र्यासः)** पितरों के लिये हितकारी **(मर्त्ताः)** मनुष्य **(नरः)** नायक हैं **(ते)** वे **(पुरुत्रा)** बहुत राजाओं में **(अनीकम्)** सेना को **(वि, भेजिरे)** सेवन करते हैं **(उतो)** और **(एभिः)** इन प्रत्यक्ष विद्वानों के साथ आप **(इह)** इस राज्य में **(नः)** हम पर **(सुमनाः)** शुद्ध चित्त वाले प्रसन्न **(स्याः)** हूजिये॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! जो अग्निविद्या में कुशल, आपकी सेना के प्रकाशक, वीर पुरुष, धार्मिक, विद्वान् अधिकारी हों, उनके साथ आप न्याय से हमारे पालक हूजिये॥९॥

राज्ञा कीदृशा अमात्याः कर्त्तव्या इत्याह॥

राजा को कैसे मन्त्री करने चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमे नरो वृत्रहत्येषु शूरा विश्वा अदेवीरभि सन्तु मायाः।

ये मे धियं पनयन्त प्रशस्ताम्॥१०॥२४॥

इमे। नरः। वृत्रऽहत्येषु। शूराः। विश्वाः। अदेवीः। अभि। सन्तु। मायाः। ये। मे। धियम्। पनयन्त। प्रऽशस्ताम्॥ १०॥

पदार्थः-(**इमे**) वर्त्तमानाः (**नरः**) न्याययुक्ताः (**वृत्रहत्येषु**) स-ंग्रामेषु (**शूराः**) (**विश्वाः**) समग्राः (**अदेवीः**) अदिव्या अशुद्धाः (**अभि**) आभिमुख्ये (**सन्तु**) भवन्तु (**मायाः**) कपटछलयुक्ताः प्रज्ञाः (**ये**) (**मे**) मम (**धियम्**) प्रज्ञाम् (**पनयन्त**) स्तुवन्ति व्यवहरन्ति वा (**प्रशस्ताम्**) उत्तमाम्॥ १०॥

अन्वयः-हे राजन्! य इमे शूरा नरो वृत्रहत्येषु विश्वा अदेवीर्माया निवार्य्य मे प्रशस्तां धियमभि पनयन्त ते तव कार्य्यकराः सन्तु॥ १०॥

भावार्थः-हे राजन्! ये शत्रूणां छलैर्वञ्चिता न स्युस्सङ्ग्रामेषूत्साहिताः शौर्योपेता युध्येयुः सर्वतो गुणान् गृहीत्वा दोषाँस्त्यजेयुस्त एव तवाऽमात्याः सन्तु॥ १०॥

पदार्थः-हे राजन्! (**ये**) जो (**इमे**) वर्त्तमान (**शूराः**) शूरवीर (**नरः**) न्याययुक्त पुरुष (**वृत्रहत्येषु**) संग्रामों में (**विश्वाः**) समस्त (**अदेवीः**) अशुद्ध (**मायाः**) कपट छलयुक्त बुद्धियों को निवृत्त करके (**मे**) मेरी (**प्रशस्ताम्**) प्रशंसित (**धियम्**) उत्तम बुद्धि का (**अभि, पनयन्त**) सम्मुख स्तुति वा व्यवहार करते हैं, वे आपके कार्य्य करने वाले (**सन्तु**) हों॥ १०॥

भावार्थः-हे राजन्! जो शत्रुओं के छलों से ठगे हुए न हों, संग्रामों में उत्साह को प्राप्त, शूरतायुक्त युद्ध करें, सब ओर से गुणों को ग्रहण कर दोषों को त्यागें, वे ही आपके मन्त्री हों॥ १०॥

पुनरेते राजादयः किं न कुर्य्युरित्याह॥

फिर ये राजादि क्या न करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा शूने अग्ने नि षदाम नृणां माशेषसोऽवीरता परि त्वा।
प्रजावतीषु दुर्यासु दुर्य॥ ११॥

मा। शूने। अग्ने। नि। सदाम। नृणाम्। मा। अशेषसः। अवीरता। परि। त्वा। प्रजाऽवतीषु। दुर्यासु। दुर्य॥ ११॥

पदार्थः-(**मा**) निषेधे (**शूने**) शूः सद्यः करणं विद्यते यस्मिँस्तस्मिन् सैन्ये। अत्र **शू इति क्षिप्रनाम।** (निघं०२.१५) तस्मात्पामादित्वान्मत्वर्थीयो नः प्रत्ययः। (**अग्ने**) पावक इव तेजस्विन् (**नि**) नितराम् (**सदाम**) सीदेम (**नृणाम्**) नायकानाम् (**मा**) (**अशेषसः**) निःशेषाः (**अवीरता**) वीरभावरहितता (**परि**) (**त्वा**) त्वाम् (**प्रजावतीषु**) प्रशस्तप्रजायुक्तासु (**दुर्यासु**) गृहेषु भवासु रीतिषु (**दुर्य्य**) गृहेषु वर्त्तमान॥ ११॥

अन्वयः-हे अग्ने! याऽवीरता तथा नृणां मध्ये मा निषदाम शूने सैन्येऽशेषसः त्वा मा परि नि षदाम। हे दुर्य! यतः प्रजावतीषु दुर्यासु सुखेन नि षदाम तथा विधेहि॥ ११॥

भावार्थः-हे क्षत्रियकुलोद्भवा राजपुरुषा यूयं कातरा मा भवत विरोधेन परस्परेण सहयुध्वा निःशेषा मा सन्तु सनातन्या राजनीत्या प्रजाः पालयित्वा यशस्विनो भवत॥ ११॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य तेजस्विन्! जो (**अवीरता**) वीरों का अभाव है उससे

(नृणाम्) नायकों में **(मा, निषदाम)** निरन्तर स्थित न हों **(शूने)** शीघ्रकारिणी सेना में **(अशेषसः)** सम्पूर्ण हम **(त्वा)** तेरे **(मा)** न **(परि)** सब ओर से निरन्तर स्थित हों। हे **(दुर्य्य)** घरों में वर्त्तमान! जिस कारण **(प्रजावतीषु)** प्रशस्त सन्तानों से युक्त **(दुर्यासु)** घरों में हुई रीतियों में सुखपूर्वक निरन्तर स्थित हों वैसा कीजिये॥११॥

भावार्थः-हे क्षत्रिय-कुल में हुए राजपुरुषो! तुम कातर मत होओ। विरोध से परस्पर युद्ध करके निःशेष मत होओ। सनातन राजनीति से प्रजाओं का पालन कर कीर्त्ति वाले होओ॥११॥

पुनस्सोऽग्निः किं साध्नोतीत्याह॥

फिर वह अग्नि क्या सिद्ध करता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यमश्वी नित्यमुपयाति यज्ञं प्रजावन्तं स्वपत्यं क्षयं नः।
स्वजन्मना शेषसा वावृधानम्॥१२॥

यम्। अश्वी। नित्यम्। उपऽयाति। यज्ञम्। प्रजाऽवन्तम्। सुऽअपत्यम्। क्षयम्। नः। स्वऽजन्मना। शेषसा। ववृधानम्॥१२॥

पदार्थः-**(यम्)** **(अश्वी)** बहवो महान्तोऽश्वा वेगादयो गुणा विद्यन्ते यस्मिन् सोऽग्निः **(नित्यम्)** **(उपयाति)** समीपं गच्छति **(यज्ञम्)** सङ्गन्तव्यम् **(प्रजावन्तम्)** बह्वयः प्रजा विद्यन्ते यस्मिँस्तम् **(स्वपत्यम्)** उत्तमैरपत्यैर्युक्तम् **(क्षयम्)** गृहम् **(नः)** अस्माकम् **(स्वजन्मना)** स्वस्य जन्मना **(शेषसा)** शेषीभूतेन **(वावृधानम्)** वर्धमानं वर्धयन्तम्॥१२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! योऽश्वी नो यं प्रजावन्तं स्वपत्यं यज्ञं क्षयं स्वजन्मना शेषसा वावृधानं नित्यमुपयाति तं यूयं विजानीत॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽग्निः प्रादुर्भूतेन द्वितीयेन जन्मना प्रजाः सुसन्तानान् गृहञ्च प्रापयति तमग्निं प्रसाध्नुत॥१२॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो **(अश्वी)** बहुत वेगादि गुणों वाला अग्नि **(नः)** हमारे **(यम्)** जिस **(प्रजावन्तम्)** बहुत प्रजावाले **(स्वपत्यम्)** सुन्दर बालकों से युक्त **(यज्ञम्)** संग करने ठहरने योग्य **(क्षयम्)** घर को वा **(स्वजन्मना)** अपने [जन्म से] **(शेषसा)** शेष रहे भाग से **(वावृधानम्)** बढ़ते या बढ़ाते हुए के **(नित्यम्)** नित्य **(उपयाति)** निकट प्राप्त होता है, उसको तुम लोग जानो॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अग्नि प्रकट हुए द्वितीय जन्म से प्रजा, सुन्दर सन्तानों और घर को प्राप्त कराता है, उसको प्रसिद्ध करो॥१२॥

केन कस्मात् के रक्षणीया इत्याह॥

किसे करके किससे किसकी रक्षा करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पाहि नो अग्ने रक्षसो अजुष्टात्पाहि धूर्तेररुषो अघायोः।
त्वा युजा पृतनायूँरभि ष्याम्॥१३॥

पाहि। नः। अग्ने। रक्षसः। अजुष्टात्। पाहि। धूर्तेः। अररुषः। अघऽयोः। त्वा। युजा। पृतनाऽयून्। अभि। स्याम्॥ १३॥

पदार्थः-(**पाहि**) (**नः**) अस्मान् (**अग्ने**) विद्युदिव वर्त्तमान राजन्नुपदेशक वा (**रक्षसः**) दुष्टाचाराज्जनात् (**अजुष्टात्**) धर्म्ममसेवमानात् (**पाहि**) (**धूर्तेः**) धूर्त्तात् (**अररुषः**) भृशं हिंसकात् (**अघायोः**) आत्मनोऽघमिच्छतः (**त्वा**) त्वया। विभक्तिव्यत्ययः (**युजा**) युक्तेन (**पृतनायून्**) सेनां कामयमानान् (**अभि**) आभिमुख्ये (**स्याम्**) भवेयम्॥१३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं नो रक्षसः पाहि नोऽजुष्टाद्धूर्तेररुषोऽघायोः पाहि त्वा युजा वर्त्तमानोऽहं पृतनायूनभि ष्याम्॥१३॥

भावार्थः-स एव राजाऽध्यापक उपदेशकः कर्मकर्ता वा श्रेष्ठो भवति यः स्वयं धार्मिको भूत्वाऽन्यानपि धार्मिकान् कुर्यात्॥१३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्युत् अग्नि के तुल्य वर्त्तमान राजन् या उपदेशक! आप (**नः**) हमको (**रक्षसः**) दुष्टाचारी मनुष्यों से (**पाहि**) बचाइये। हमारी (**अजुष्टात्**) धर्म का सेवन न करते हुए अधर्मी (**धूर्तेः**) धूर्त (**अररुषः**) शीघ्र मारने वाले (**अघायोः**) आत्मा को पाप की इच्छा करते हुए से (**पाहि**) रक्षा कीजिये (**युजा**) युक्त हुए (**त्वा**) तुम्हारे साथ वर्त्तमान मैं (**पृतनायून्**) सेनाओं को चाहते हुओं के (**अभि, ष्याम्**) सम्मुख होऊँ॥१३॥

भावार्थः-वही राजा अध्यापक उपदेशक वा कर्म करनेहारा श्रेष्ठ होता है, जो आप धर्मात्मा होकर अन्यों को भी धार्मिक करे॥१३॥

पुनः सोऽग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सेदग्निरग्नीँरत्यस्त्वन्यान् यत्र वाजी तनयो वीळुपाणिः।
सहस्रपाथा अक्षरा समेति॥ १४॥

सः। इत्। अग्निः। अग्नीन्। अति। अस्तु। अन्यान्। यत्र। वाजी। तनयः। वीळुऽपाणिः। सहस्रऽपाथाः। अक्षरा। सम्ऽएति॥ १४॥

पदार्थः-(**सः**) (**इत्**) एव (**अग्निः**) पावकः (**अग्नीन्**) (**अति**) (**अस्तु**) (**अन्यान्**) भिन्नान् (**यत्र**) (**वाजी**) वेगबलादियुक्तः (**तनयः**) पुत्रः (**वीळुपाणिः**) वीळु बलं पाणयो यस्य सः (**सहस्रपाथाः**) सहस्राण्यमितानि पाथांस्यन्नादीनि यस्य सः (**अक्षरा**) उदकानि। अत्राकारादेशः। **अक्षरा इत्युदकनाम।** (निघं०१.१२) (**समेति**) सम्यगेति॥१४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वाजी वीळुपाणिस्तनय इवाग्निर्यत्राऽन्यानग्नीन् प्राप्तोऽत्यस्तु स इत् सहस्रपाथा अक्षरा समेति तं यूयं साध्नुत॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सुपुत्रः पितॄन् प्राप्नोति तथाऽग्निरग्नीन् प्राप्नोति प्रसिद्धो भूत्वा स्वस्वरूपं कारणं प्राप्य स्थिरो भवति येऽभिव्याप्तां विद्युतं प्रकटयितुं विजानन्ति

तेऽसंख्यमैश्वर्यमाप्नुवन्ति॥१४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(वाजी)** वेगबलादियुक्त **(वीळुपाणिः)** बलरूप जिस के हाथ हैं **(तनयः)** पुत्र के तुल्य **(अग्निः)** अग्नि **(यत्र)** जहाँ **(अन्यान्)** अन्य **(अग्नीन्)** अग्नियों को प्राप्त **(अत्यस्तु)** अत्यन्त हो **(सः, इत्)** वही **(सहस्रपाथाः)** अतोल **[**=अतुलनीय**]** अन्नादि पदार्थों वाला **(अक्षरा)** जलों को **(समेति)** सम्यक् प्राप्त होता है, वहाँ उसको तुम लोग सिद्ध करो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सुपुत्र पितरों को प्राप्त होता है, वैसे अग्नि अग्नियों को प्राप्त होता है तथा प्रसिद्ध होकर अपने स्वरूप कारण को प्राप्त होकर स्थिर होता है, जो लोग अभिव्याप्त बिजुली के प्रकट करने को जानते हैं, वे असंख्य ऐश्वर्य्य को प्राप्त होते हैं॥१४॥

पुनः सोऽग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सेदुग्निर्यो वनुष्यतो निपाति समेद्धारमंहस उरुष्यात्।
सुजातासः परि चरन्ति वीराः॥१५॥२५॥

सः। इत्। अग्निः। यः। वनुष्यतः। निपाति। सम्ऽएद्धारम्। अंहसः। उरुष्यात्। सुऽजातासः। परि। चरन्ति। वीराः॥१५॥

पदार्थः-(**सः**) (**इत्**) एव (**अग्निः**) पावकः (**यः**) (**वनुष्यतः**) याचमानान् (**निपाति**) नितरां रक्षति (**समेद्धारम्**) यः सम्यगिन्धयति प्रदीपयति तम् (**अंहसः**) दुःखदारिद्र्याख्यात् पापात् (**उरुष्यात्**) रक्षेत् (**सुजातासः**) सुष्ठु विद्यासु प्रसिद्धाः (**परि**) सर्वतः (**चरन्ति**) जानन्ति गच्छन्ति वा (**वीराः**) प्राप्तविज्ञानाः॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्य! योऽग्निर्वनुष्यतो निपाति समेद्धारमंहसः उरुष्याद्यं सुजातासो वीराः परिचरन्ति स इदेव युष्माभिः सम्प्रयोक्तव्यः॥१५॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सुविद्ययाऽग्निं संसेव्य कार्य्यसिद्धये सम्प्रयुञ्जते ते दुःखदारिद्र्यविरहा यशस्विनः सन्तो विजयसुखं सततं प्राप्नुवन्ति॥१५॥

पदार्थः-हे मनुष्य! **(यः)** जो **(अग्निः)** अग्नि **(वनुष्यतः)** याचना करते हुओं की **(निपाति)** निरन्तर रक्षा करता है तथा **(समेद्धारम्)** सम्यक् प्रकाशित कराने वाले को **(अंहसः)** दुःख वा दरिद्रता से **(उरुष्यात्)** रक्षा करे जिसको **(सुजातासः)** विद्याओं में अच्छे प्रकार प्रसिद्ध और **(वीराः)** विज्ञान को प्राप्त हुए वीरपुरुष **(परि, चरन्ति)** सब ओर से जानते वा प्राप्त होते हैं **(सः, इत्)** वही अग्नि तुम लोगों को अच्छे प्रकार उपयोग में लाना चाहिये॥१५॥

भावार्थः-जो मनुष्य अच्छी विद्या से अग्नि का सेवन कर कार्यसिद्ध के लिये संयुक्त करते हैं, वे दुःख और दरिद्रता से रहित, कीर्त्ति वाले हुए विजय के सुख को निरन्तर प्राप्त होते हैं॥१५॥

पुनः सोऽग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं सो अग्निराहुतः पुरुत्रा यमीशानः समिदिन्धे हविष्मान्।

परि यमेत्यध्वरेषु होता॥ १६॥

अयम्। सः। अग्निः। आऽहुतः। पुरुऽत्रा। यम्। ईशानः। सम्। इत्। इन्धे। हविष्मान्। परि। यम्। एति। अध्वरेषु। होता॥ १६॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**सः**) (**अग्निः**) विद्युत् (**आहुतः**) सम्यक् स्वीकृतः (**पुरुत्रा**) बहूनि कार्याणि (**यम्**) (**ईशानः**) जगदीश्वरः (**सम्**) (**इत्**) एव (**इन्धे**) प्रकाशयते (**हविष्मान्**) बहूनि हवींषि दातव्यानि वस्तूनि विद्यन्ते यस्य सः (**परि**) सर्वतः (**यम्**) (**एति**) (**अध्वरेषु**) अहिंसायुक्तेषु स- ामादिव्यवहारेषु (**होता**) हवनकर्त्ता॥१६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यमीशानः समिन्धे यं हविष्मान् होता अध्वरेषु पर्येति सोऽयमिदग्निराहुतः सन् पुरुत्रा कार्याणि साध्नोति॥१६॥

भावार्थः-हे विद्वांस! ईश्वरेण यदर्थो निर्मितो यदर्थमृत्विग्यजमानाः सेवन्ते तदर्थः सोऽग्निर्युष्माभिर्बहुषु व्यवहारेषु सम्प्रयुक्तः सन्ननेकेषां कार्याणां साधको भवति॥१६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यम्**) जिसको (**ईशान**) जगदीश्वर (**सम्, इन्धे**) सम्यक् प्रकाशित करता है और (**यम्**) जिसको (**हविष्मान्**) देने योग्य बहुत वस्तुओं सहित (**होता**) होम करने वाला (**अध्वरेषु**) हिंसारहित संग्रामादि व्यवहारों में (**परि, एति**) सब ओर से प्राप्त होता है (**सः, अयम् इत्**) सो वही (**अग्निः**) विद्युत् अग्नि (**आहुतः**) सम्यक् स्वीकार किया हुआ (**पुरुत्रा**) बहुत कार्य्यों को सिद्ध करता है॥१६॥

भावार्थः-हे विद्वानो! ईश्वर ने जिसलिये बनाया है, जिसलिये ऋत्विज् और यजमान सेवन करते हैं, तदर्थ वह अग्नि तुम लोगों से बहुत व्यवहारों में प्रयुक्त किया हुआ अनेक कार्य्यों का सिद्ध करने वाला होता है॥१६॥

पुनर्मनुष्याः किंवत्किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य लोग किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वे अग्न आहवनानि भूरीशानास आ जुहुयाम नित्या।

उभा कृण्वन्तो वहतू मियेधे॥ १७॥

त्वे इति। अग्ने। आऽहवनानि। भूरि। ईशानासः। आ। जुहुयाम। नित्या। उभा। कृण्वन्तः। वहतू इति। मियेधे॥१७॥

पदार्थः-(**त्वे**) अग्नाविव त्वयि (**अग्ने**) आप्तविद्वन् (**आहवनानि**) समन्ताद् दानानि (**भूरि**) बहूनि (**ईशानासः**) समर्थाः (**आ**) समन्तात् (**जुहुयाम**) दद्याम (**नित्या**) नित्यानि (**उभा**) उभौ यजमानपुरोहितौ (**कृण्वन्तः**) कुर्वन्तः (**वहतू**) प्रापकौ (**मियेधे**) परिमाणयुक्ते यज्ञे॥१७॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथोभा वहतू यजमानपुरोहितौ मियेधे नित्या **[भूरि]** आहवनानि जुहुतस्तथा ईशानासो वयं तौ द्वौ समर्थौ कृण्वन्तस्त्वे स्वामिनि सति तान्याजुहुयाम॥१७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये यजमानर्त्विग्वत्सर्वान् मनुष्यान् सुशिक्षयोपकुर्वन्ति तच्छिक्षां सर्वेऽनुतिष्ठन्तु॥१७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** सत्यवादी आप्तविद्वान्! जैसे **(उभा)** दोनों **(वहतू)** प्राप्ति कराने वाले यजमान और पुरोहित **(मियेधे)** परिमाण युक्त यज्ञ में **(नित्या)** नित्य **(भूरि)** बहुत **(आहवनानि)** अच्छे दानों को देते हैं, वैसे **(ईशानासः)** समर्थ हम लोग उन दोनों यजमान पुरोहितों को समर्थ **(कृण्वन्तः)** करते हुए **(त्वे)** अग्नि के तुल्य तेजस्वि आप स्वामी के होते हुए उन दोनों को **(आ, जुहुयाम)** अच्छे प्रकार देवें॥१७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो यजमान और ऋत्विजों के तुल्य सब मनुष्यों का अच्छी शिक्षा से उपकार करते हैं, उनकी शिक्षा का सब लोग अनुष्ठान करें॥१७॥

पुनर्मनुष्यैः किं प्राप्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या प्राप्त करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमो अग्ने वीततमानि हव्याऽजस्रो वक्षि देवतातिमच्छ।
प्रति न ईं सुरभीणि व्यन्तु॥१८॥

इमो इति। अग्ने। वीतऽतमानि। हव्या। अजस्रः। वक्षि। देवऽतातिम्। अच्छ। प्रति। नः। ईम्। सुरभीणि। व्यन्तु॥१८॥

पदार्थः-**(इमो)** इमानि। अत्र विभक्तेरोकारादेशः। **(अग्ने)** **(वीततमानि)** अतिशयेन व्याप्तुं समर्थानि **(हव्या)** दातुं योग्यानि **(अजस्रः)** निरन्तरः **(वक्षि)** वहसि **(देवतातिम्)** दिव्यसुखप्रापकं यज्ञम् **(अच्छ)** सम्यक् **(प्रति)** **(नः)** **(ईम्)** **(सुरभीणि)** सुगन्ध्यादिगुणसहितानि **(व्यन्तु)** प्राप्नुवन्तु॥१८॥

अन्वयः-हे अग्ने! येनाऽजस्रो देवतातिमच्छ वक्ष्यनेन न इमो सुरभीणि वीततमानि हव्या च नः प्रति ईं व्यन्तु॥१८॥

भावार्थः-मनुष्या यथाग्नावुत्तमानि हवींषि हुत्वा जलादीनि संशोध्य सर्वोपकारं साध्नुवन्ति तथैव वर्त्तताम्॥१८॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** तेजस्विन् विद्वन्! जिससे **(अजस्रः)** निरन्तर **(देवतातिम्)** उत्तम सुख देने वाले यज्ञ को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(वक्षि)** प्राप्त करते हैं इससे **(इमो)** इन **(सुरभीणि)** सुगन्धि आदि गुणों के सहित **(वीततमानि)** अतिशयकर व्याप्त होने को समर्थ **(हव्या)** देने योग्य वस्तुओं को **(नः)** हमारे **(प्रति)** प्रति **(ईम्)** सब ओर से **(व्यन्तु)** प्राप्त करें॥१८॥

भावार्थः-मनुष्य जैसे अग्नि में उत्तम हविष्यों का होम, कर जल आदि को शुद्ध करके सब के उपकार को सिद्ध करते हैं, वैसे वर्त्ताव करना चाहिये॥१८॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा नो अग्नेऽवीरते परा दा दुर्वाससेऽमतये मा नो अस्यै।
मा नः क्षुधे मा रक्षस ऋतावो मा नो दमे मा वन आ जुहूर्थाः॥१९॥

मा। नः। अग्ने। अवीरते। परा। दाः। दुःऽवाससे। अमतये। मा। नः। अस्यै। मा। नः। क्षुधे। मा। रक्षसे। ऋतऽवः। मा। नः। दमे। मा। वने। आ। जुहूर्थाः॥१९॥

पदार्थः-(**मा**) निषेधे (**नः**) अस्मान् (**अग्ने**) पावक इव विद्वन् (**अवीरते**) न विद्यन्ते वीरा यस्मिन् सैन्ये तस्मिन् (**परा**) (**दाः**) पराङ्मुखान् कुर्याः (**दुर्वाससे**) दुष्टवस्त्रधारणाय (**अमतये**) मूढत्वाय (**मा**) (**नः**) अस्मान् (**अस्यै**) पिपासायै (**मा**) (**नः**) अस्मान् (**क्षुधे**) बुभुक्षायै (**मा**) (**रक्षसे**) दुष्टाय जनाय (**ऋतावः**) सत्यप्रकाशक (**मा**) (**नः**) अस्मान् (**दमे**) गृहे (**मा**) (**वने**) अरण्ये (**आ**) (**जुहूर्थाः**) प्रदद्याः॥१९॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमवीरते नो मा परा दाः। दुर्वाससेऽमतये नो मा परा दाः नोऽस्यै मा क्षुधे मा नियुङ्क्ष्व। हे ऋतावो! रक्षसे दमे नो मा पीड वने नो मा आ जुहूर्थाः॥१९॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयमस्माकं कातरतां दारिद्र्यं मूढतां क्षुधं तृषां दुष्टसङ्गं गृहे जङ्गले वा पीडां निवार्य सुखिनः सम्पादयत॥१९॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य तेजस्वी! आप (**अवीरते**) वीरतारहित सेना में (**नः**) हमको (**मा, परा, दाः**) पराङ्मुख मत कीजिये (**दुर्वाससे**) बुरे वस्त्र धारण **[**करने**]** के लिये तथा (**अमतये**) मूर्खपन के लिये (**नः**) हमको (**मा**) मत नियुक्त कीजिये। (**नः**) हमको (**अस्यै**) इस प्यास के लिये (**मा**) मत वा (**क्षुधे**) भूख के लिये (**मा**) मत नियुक्त कीजिये। हे (**ऋतावः**) सत्य के प्रकाशक! (**रक्षसे**) दुष्ट जन के लिये (**दमे**) घर में (**नः**) हमको (**मा**) मत पीड़ा दीजिये (**वने**) वन में हम को (**मा**) मत (**आ, जुहूर्थाः**) पीड़ा दीजिये॥१९॥

भावार्थः-हे विद्वानो! तुम लोग हमारी कातरता, दरिद्रता, मूढ़ता, क्षुधा, तृषा, दुष्टों के सङ्ग और घर वा जङ्गल में पीड़ा का निवारण कर सुखी करो॥१९॥

पुनर्विद्वान् किं कुर्यादित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥२०॥२६॥

नु। मे। ब्रह्माणि। अग्ने। उत्। शशाधि। त्वम्। देव। मघवत्ऽभ्यः सुसूदः। रातौ। स्याम। उभयासः। आ। ते। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥२०॥

पदार्थः-(**नू**) सद्यः (**मे**) मम (**ब्रह्माणि**) बृहन्ति धनानि (**अग्ने**) दातः (**उत्**) (**शशाधि**)

शिक्षय **(त्वम्) (देव)** विद्वन् **(मघवद्भ्यः)** बहुधनयुक्तेभ्यो धनाढ्येभ्यः **(सुषूदः)** नाशय **(रातौ)** दाने **(स्याम)** भवेम **(उभयासः)** विद्वांसोऽविद्वांसश्च **(आ) (ते)** तव **(यूयम्) (पात)** रक्षत **(स्वस्तिभिः)** सुखैः **(सदा) (नः)** अस्मान्॥२०॥

अन्वयः-हे देवाग्ने! त्वं मे मघवद्भ्यो ब्रह्माण्युच्छशाधि दुःखानि सुषूदः। येनोभयासो वयं रातौ स्याम तथा ते रक्षां वयं कुर्याम तथा यूयं नः स्वस्तिभिः सदा नु पात॥२०॥

भावार्थः-राजादिपुरुषैर्धनाढ्येभ्यो दरिद्रा अपि सुशिक्षा धनाढ्याः कार्याः विद्वांसोऽविद्वांसश्च मेलयित्वोन्नताः कार्या अन्योऽन्येषान्दुःखनिवारणेन सुखैः संयोजनीयाः॥२०॥

पदार्थः-हे **(देव)** विद्वन् **(अग्ने)** दाताजन! **(त्वम्)** आप **(मे)** मेरे **(मघवद्भ्यः)** बहुत धनयुक्त धनाढ्यों से **(ब्रह्माणि)** बड़े-बड़े धनों की **(उत्, शशाधि)** शिक्षा कीजिये तथा दुःखों को **(सुषूदः)** नष्ट कीजिये जिससे **(उभयासः)** दोनों विद्वान् अविद्वान् हम लोग **(रातौ)** दान देने में प्रकट **(स्याम)** हों जैसे **(ते)** आपकी रक्षा हम करें, वैसे **(यूयम्)** तुम लोग **(नः)** हमारी **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(सदा)** सब काल में **(नु)** शीघ्र **(आ, पात)** अच्छे प्रकार रक्षा करो॥२०॥

भावार्थः-राजादि पुरुषों को चाहिये कि धनाढ्यों से दरिद्रों को भी अच्छी शिक्षा देके धनाढ्य करें तथा विद्वान् और अविद्वानों का मेल करा के परस्पर उन्नति करावें और परस्पर दुःख का निवारण कर सुखों से संयुक्त करें॥२०॥

पुनर्विद्वानत्र कथं वर्त्तेत्याह॥

फिर विद्वान् इस जगत् में कैसे वर्त्ते, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वमग्ने सुहवो रण्वसंदृक्सुदीती सूनो सहसो दिदीहि।
मा त्वे सचा तनये नित्य आ धङ्मा वीरो अस्मन्नर्यो वि दासीत्॥२१॥

त्वम्। अग्ने। सुऽहवः। रण्वऽसंदृक्। सुऽदीती। सूनो इति। सहसः। दिदीहि। मा। त्वे इति। सचा। तनये। नित्ये। आ। धक्। मा। वीरः। अस्मत्। नर्यः। वि। दासीत्॥२१॥

पदार्थः-**(त्वम्) (अग्ने)** पावक इव विद्यया प्रकाशमान् विद्वन् **(सुहवः)** सुस्तुतिः **(रण्वसंदृक्)** रमणीयं यः सम्यक् पश्यति सः **(सुदीती)** उत्तमया दीप्त्या **(सूनो)** तनय **(सहसः)** बलवतः **(दिदीहि)** प्रकाशय **(मा) (त्वे)** त्वयि **(सचा)** सम्बन्धेन **(तनये)** सन्ताने **(नित्ये)** सदा कर्त्तव्ये कर्मणि **(आ) (धक्)** दहेः **(मा) (वीरः) (अस्मत्)** अस्माकं सकाशात् **(नर्यः)** नृषु साधुः **(वि) (दासीत्)** विगतदानो भवेत्॥२१॥

अन्वयः-हे सहसः सूनोऽग्ने! सुहवः रण्वसंदृग्यथा नर्यो वीरोऽस्मन्मा विदासीन्नित्ये त्वे तनये सचा मा धक् तथा त्वं सुदीती अस्मान् दिदीहि॥२१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वान्! यथाऽस्माकं बन्धवोऽस्मद्विरोधिनो न भवन्ति यथा मातरि तनयस्तनये माता प्रेम्णा सह वर्त्तते तथैव भवानस्माभिः सह वर्त्तताम्॥२१॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** पुत्र **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य विद्या से प्रकाशमान

विद्वन्! **(सुहवः)** सुन्दर स्तुतियुक्त **(रण्वसंदृक्)** रमणीय सम्यक् देखने वाला जैसे **(नर्यः)** मनुष्यों में उत्तम **(वीरः)** वीर **(अस्मत्)** हम से **(मा)** मत **(वि, दासीत्)** दान से रहित हो वा **(नित्ये)** सब काल में करने योग्य कर्म में **(त्वे)** आप **(तनये)** सन्तान में **(सचा)** सम्बन्ध से **(मा, आ, धक्)** अच्छे प्रकार मत जलाइये, वैसे **(त्वम्)** आप **(सुदीती)** उत्तम दीप्ति से हमको **(दिदीहि)** प्रकाशित कीजिये॥२१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे हमारे बन्धु लोग हमारे विरोधी नहीं होते, जैसे माता में पुत्र, पुत्र के विषय में माता, प्रेम के साथ वर्त्तती है, वैसे ही आप भी हमारे साथ वर्त्तिये॥२१॥

पुनर्मनुष्याः सर्वेभ्यः किं गृह्णीयुरित्याह॥

फिर मनुष्य सब से किसको ग्रहण करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा नो॑ अग्ने दुर्भृ॒तये॒ सचै॒षु दे॒वेद्धे॒ष्व॒ग्निषु॒ प्र वो॑चः।
मा ते॑ अ॒स्मान् दु॑र्म॒तयो॑ भृ॒माच्चि॑द्दे॒वस्य॑ सूनो सहसो नशन्त॥२२॥

मा। नः॒। अ॒ग्ने॒। दुः॒ऽभृ॒तये॑। सचा॑। ए॒षु। दे॒वऽइ॑द्धेषु। अ॒ग्निषु॑। प्र। वो॒चः॒। मा। ते॒। अ॒स्मान्। दुः॒ऽम॒तयः॑। भृ॒मात्। चि॒त्। दे॒वस्य॑। सू॒नो॒ इति॑। स॒ह॒सः॒। न॒श॒न्त॒॥२२॥

पदार्थः-(मा) (निषेधे) (नः) अस्मान् (अग्ने) विद्वन् (दुर्भृतये) दुष्टा भृतिर्धारणं पोषणं वा यस्य तस्मै (सचा) सम्बन्धेन (एषु) (देवेद्धेषु) देवैरिद्धेषु प्रज्वालितेषु (अग्निषु) (प्र) (वोचः) (मा) (ते) तव (अस्मान्) (दुर्मतयः) (भृमात्) भ्रान्तेः। अत्र वर्णव्यत्ययेन रस्य स्थान **ऋकारो वा च्छन्दसीति सम्प्रसारणं वा।** (चित्) अपि (देवस्य) विदुषः (सूनो) तनय (सहसः) बलिष्ठस्य (नशन्त) व्याप्नुवन्तु। **नशदिति व्याप्तिकर्मा।** (निघं०२.१८)॥२२॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं सचैषु देवेद्धेष्वग्निषु दुर्भृतये नो मा प्र वोचः। हे सहसो देवस्य सूनो! भृमाच्चित्ते दुर्मतयोऽस्मान् मा नशन्त॥२२॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैः सर्वेभ्यः शुभगुणाः सुमतिः सुविद्या च गृहीतव्या नैव दोषाः॥२२॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! आप **(सचा)** सम्बन्ध से **(एषु)** इन **(देवेद्धेषु)** वायु आदि में प्रज्वलित किये हुए **(अग्निषु)** अग्नियों में **(दुर्भृतये)** दुष्ट दुःखयुक्त कठिन धारण वा पोषण जिसका उसके लिये **(नः)** हमको **(मा, प्र, वोच)** मत कठोर कहो। हे **(सहसः)** बलवान् **(देवस्य)** विद्वान् के **(सूनो)** पुत्र! **(भृमात्)** भ्रान्ति से **(चित्)** भी **(ते)** आपके **(दुर्मतयः)** दुष्टबुद्धि लोग **(अस्मान्)** हमको **(मा)** मत **(नशन्त)** प्राप्त होवें॥२२॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को योग्य है कि सब से शुभ गुण सुन्दर बुद्धि और उत्तम विद्या का ग्रहण करें, दोषों को कदापि ग्रहण न करें॥२२॥

पुनर्मनुष्यैः कः सेवनीय इत्याह॥

फिर मनुष्यो को किसका सेवन करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स मर्तो अग्ने स्वनीक रेवानमर्त्ये य आजुहोति हव्यम्।
स देवता वसुवनिं दधाति यं सूरिरर्थी पृच्छमान एति॥२३॥

सः। मर्तः। अग्ने। सुऽअनीक। रेवान्। अमर्त्ये। यः। आऽजुहोति। हव्यम्। सः। देवता। वसुऽवनिम्। दधाति। यम्। सूरिः। अर्थी। पृच्छमानः। एति॥२३॥

पदार्थः-(**सः**) (**मर्त्तः**) मनुष्यः (**अग्ने:**) विद्याविनयादिभिः प्रकाशमान (**स्वनीक**) शोभनमनीकं सैन्यं यस्य तत्सम्बुद्धौ (**रेवान्**) बहुधनवान् (**अमर्त्ये**) मरणधर्मरहिते वह्नौ परमात्मनि वा (**यः**) (**आजुहोति**) समन्तात्प्रक्षिपति स्थिरीकरोति (**हव्यम्**) होतुं दातुमर्हं घृतादिद्रव्यं चित्तं वा (**सः**) (**देवता**) दिव्यगुणा (**वसुवनिम्**) धनानां सम्भाजनम् (**दधाति**) (**यम्**) (**सूरिः**) विद्वान् (**अर्थी**) प्रशस्तोऽर्थोऽस्याऽस्तीति (**पृच्छमानः**) (**एति**) प्राप्नोति॥२३॥

अन्वयः-हे स्वनीकाग्ने! यो रेवान् सन्नमर्त्ये हव्यमाजुहोति स देवता वसुवनिं दधाति यमर्थी पृच्छमानः सूरिरेति स मर्तः सुखयति॥२३॥

भावार्थः-ये मनुष्या अग्निविद्यां विदित्वाऽस्मिन् सुगन्ध्यादिकं जुह्वत्यनेन कार्याणि साध्नुवन्ति ये च पृष्ट्वा ध्यात्वा परमात्मानं जानन्ति तानग्निर्धनाढ्यान् परमात्माविज्ञानवतश्च करोति॥२३॥

पदार्थः-हे (**स्वनीक**) सुन्दर सेना वाले (**अग्ने**) विद्या और विनयादि से प्रकाशमान जन! (**यः**) जो (**रेवान्**) बहुत धनवाला होता हुआ (**अमर्त्ये**) मरणधर्मरहित अग्नि वा परमात्मा में (**हव्यम्**) देने योग्य घृतादि द्रव्य वा चित्त को (**आजुहोति**) अच्छे प्रकार छोड़ता वा स्थिर करता है (**सः, देवता**) दिव्यगुणयुक्त वह (**वसुवनिम्**) धनों के सेवन को (**दधाति**) धारण करता है (**यम्**) जिसको (**अर्थी**) प्रशस्त प्रयोजन वाला (**पृच्छमानः**) पूछता हुआ (**सूरिः**) विद्वान् (**एति**) प्राप्त होता है (**सः**) वह (**मर्तः**) मनुष्य सुखी करता है॥२३॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्निविद्या को जान के इस अग्नि में सुगन्ध्यादि का होम करते और इससे कार्यों को सिद्ध करते हैं और जो पूछ अच्छे प्रकार विचार और ध्यान कर के परमात्मा को जानते हैं, उनको अग्नि, धनाढ्य और परमात्मा विज्ञानवान् करता है॥२३॥

पुनर्मनुष्या विद्वद्भ्यः किं गृह्णीयुरित्याह॥

फिर मनुष्य विद्वानों से क्या ग्रहण करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

महो नो अग्ने सुवितस्य विद्वान् रयिं सूरिभ्य आ वहा बृहन्तम्।
येन वयं सहसावन् मदेमाविक्षितास आयुषा सुवीराः॥२४॥

महः। नः। अग्ने। सुवितस्य। विद्वान्। रयिम्। सूरिऽभ्यः। आ। वह। बृहन्तम्। येन। वयम्। सहसाऽवन्। मदेम। अविऽक्षितासः। आयुषा। सुऽवीराः॥२४॥

पदार्थः-(**महः**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**अग्ने**) दातः (**सुवितस्य**) प्रेरितस्य (**विद्वान्**) (**रयिम्**) (**सूरिभ्यः**) विद्वद्भ्यः (**आ**) (**वह**) समन्तात्प्रापय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**बृहन्तम्**) महान्तम्

(येन) **(वयम्)** **(सहसावन्)** बलेनयुक्त **(मदेम)** आनन्देम **(अविक्षितासः)** अविक्षीणः क्षयरहिताः **(आयुषा)** जीवनेन **(सुवीराः)** शोभनैर्वीरैरुपेताः॥२४॥

अन्वयः-हे सहसावन्नग्ने विद्वाँस्त्वं महः सुवितस्य कर्ता सन् सूरिभ्यो बृहन्तं रयिं न आ वह येनाविक्षितासः सुवीराः सन्तो वयमायुषा मदेम॥२४॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्वद्भ्यो महतीं विद्यां गृह्णन्ति ते सर्वदा वर्धमानाः सन्तः पुष्कलां श्रियं दीर्घमायुश्च प्राप्नुवन्ति॥२४॥

पदार्थः-हे **(सहसावन्)** बल से युक्त **(अग्ने)** दानशीलपुरुष **(विद्वान्)** विद्वान्! आप **(महः)** महान् **(सुवितस्य)** प्रेरणा किये कर्म के कर्ता होते हुए **(सूरिभ्यः)** विद्वानों से **(बृहन्तम्)** बड़े **(रयिम्)** धन को **(नः)** हमारे लिये **(आ, वह)** अच्छे प्रकार प्राप्त कीजिये **(येन)** जिस से **(अविक्षितासः)** क्षीणतारहित **(सुवीराः)** सुन्दर वीरों से युक्त हुए **(वयम्)** हम लोग **(आयुषा)** जीवन के साथ **(मदेम)** आनन्दित रहें॥२४॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों से बड़ी विद्या को ग्रहण करते हैं, वे सब काल में वृद्धि को प्राप्त होते हुए पूर्ण लक्ष्मी और दीर्घ अवस्था को पाते हैं॥२४॥

पुनर्विद्वान् कीदृशः स्यादित्युच्यते॥

फिर विद्वान् कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू मे ब्रह्मांण्यग्न उच्छंशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥२५॥२७॥१॥

नु। मे। ब्रह्माणि। अग्ने। उत्। शशाधि। त्वम्। देव। मघवत्ऽभ्यः। सुसूदः। रातौ। स्याम। उभयासः। आ। ते। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥२५॥

पदार्थः-**(नू)** सद्यः। अत्र ऋचि तुनुघेति दीर्घः। **(मे)** मह्यम् **(ब्रह्माणि)** अन्नानि **(अग्ने)** विद्वन् **(उत्)** उत्कृष्टम् **(शशाधि)** शिक्षय **(त्वम्)** **(देव)** धनं कामयमान **(मघवद्भ्यः)** बहुधनयुक्तेभ्यः **(सुषूदः)** देहि **(रातौ)** सुपात्रेभ्यो दाने **(स्याम)** भवेम **(उभयासः)** दातृग्रहीतारः **(आ)** **(ते)** तुभ्यम् **(यूयम्)** **(पात)** रक्षत **(स्वस्तिभिः)** सुखैः **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥२५॥

अन्वयः-हे देवाऽग्ने! त्वं मघवद्भ्यो ब्रह्माणि म उच्छशाधि सुषूदो वयं ते तुभ्यमेव दद्याम येनोभयासो वयं रातौ स्याम यूयं स्वस्तिभिर्नो नु सदाऽऽपात॥२५॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान्न्यायेन सर्वानस्मान् शिक्षस्वास्मत्तो यथाविधि करं गृहाण पक्षपातं विहाय सर्वैस्सह वर्त्तस्व येन राजपुरुषाः प्रजाजनाश्च वयं सदा सुखिनः स्यामेति॥२५॥

अत्राग्निविद्वच्छ्रोत्र्युपदेशकेश्वरराजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या।

अस्मिन्नध्यायेऽश्विद्यावापृथिव्यग्निविद्युदुषःसेनायुद्धमित्रावरुणेन्द्रावरुणेन्द्रावैष्णवद्यावापृथिवी-सवित्रिन्द्रासोमयज्ञसोमारुद्रधनुराद्यग्न्यादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वाध्यायेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्।

इति श्रीमत् परमविदुषां परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण

परमहंसपरिव्राजकाचार्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचिते संस्कृताऽऽर्यभाषाभ्यां समन्विते सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्ये पञ्चमाष्टके प्रथमोऽध्यायः सप्तविंशो वर्गः सप्तमे मण्डले प्रथमं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(देव)** धन की कामना करने वाले **(अग्ने)** विद्वन्! **(त्वम्)** आप **(मघवद्भ्यः)** बहुत धनयुक्त पुरुषों से **(ब्रह्माणि)** अन्नों की **(मे)** मेरे लिये **(उत्, शशाधि)** उत्कृष्टतापूर्वक शिक्षा कीजिये और **(सुषूदः)** दीजिये हम लोग **(ते)** तुम्हारे लिये ही देवें जिससे **(उभयासः)** देने लेने वाले दोनों हम लोग **(रातौ)** सुपात्रों को दान देने के लिये प्रवृत्त **(स्याम)** हों **(यूयम्)** तुम लोग **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हमारी **(नु)** शीघ्र **(सदा)** सब काल में, **(आ, पात)** अच्छे प्रकार रक्षा करो॥२५॥

भावार्थः-हे राजपुरुष! आप न्यायपूर्वक हम सब लोगों को शिक्षा कीजिये, हम से यथायोग्य कर लिया कीजिये, पक्षपात छोड़ के सब के साथ वर्तिये, जिससे राजपुरुष और हम प्रजाजन सदा सुखी हों॥२५॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान्, श्रोता, उपदेशक, ईश्वर और राजप्रजा के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

इस अध्याय में अश्वि, द्यावापृथिवी, अग्नि, विद्युत्, उषःकाल, सेनायुद्ध, मित्रावरुण, इन्द्रावरुण, इन्द्रावैष्णव, द्यावापृथिवी, सविता, इन्द्रासोम, यज्ञ, सोमारुद्र, धनुष् आदि और अग्नि आदि के गुणों का वर्णन होने से इस अध्याय के अर्थ की पूर्व अध्याय के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये।

यह श्रीमत् परमविद्वान् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य विरजानन्द सरस्वती स्वामी जी के शिष्य परमहंस परिव्राजाकाचार्य श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामि से विरचित संस्कृतार्यभाषा से समन्वित सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्य में पञ्चमाष्टक में प्रथम अध्याय और सत्ताईसवां वर्ग तथा सप्तम मण्डल में प्रथम सूक्त भी समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

॥अथ पञ्चमाष्टके द्वितीयोऽध्यायः॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ ऋ०५.८२.५॥

अथैकादशर्चस्य द्वितीयस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। आप्री देवता। १-९ विराट्त्रिष्टुप् २, ४ त्रिष्टुप्। ३, ६-८, १०, ११ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किंवद्वर्त्तेरन्नित्याह॥

अब पञ्चमाष्टक के द्वितीयाऽध्याय का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् लोग किसके तुल्य वर्तें, इस विषय का उपदेश करते हैं।

जुषस्व नः सुमिधमग्ने अद्य शोचा बृहद्यजतं धूममृण्वन्।
उप स्पृश दिव्यं सानु स्तूपैः संरश्मिभिस्ततनः सूर्यस्य॥१॥

जुषस्व। नः। सम्ऽइधम्। अग्ने। अद्य। शोच। बृहत्। यजतम्। धूमम्। ऋण्वन्। उप। स्पृश। दिव्यम्। सानु। स्तूपैः। सम्। रश्मिऽभिः। ततनः। सूर्यस्य॥ १॥

पदार्थः-(**जुषस्व**) सेवस्व (**नः**) अस्माकम् (**समिधम्**) काष्ठविशेषम् (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् (**अद्य**) इदानीम् (**शोचा**) पवित्रीकुरु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**बृहत्**) महत् (**यजतम्**) सङ्गन्तव्यम् (**धूमम्**) (**ऋण्वन्**) प्रसाध्नुवन् (**उप**) (**स्पृश**) (**दिव्यम्**) कमनीयं शुद्धं वा (**सानु**) सम्भजनीयं धनम् (**स्तूपैः**) सन्तप्तैः (**सम्**) (**रश्मिभिः**) किरणैः (**ततनः**) व्याप्नुहि (**सूर्यस्य**) सवितुः॥१॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमग्निः समिधमिव नः प्रजा जुषस्व पावकइवाद्य बृहद्यजतं शोचा धूममृण्वन्नाग्निरिव सत्यानि कार्य्याण्युपस्पृश सूर्यस्य स्तूपै रश्मिभिर्वायुवद् दिव्यं सानु सं ततनः॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथाग्निः समिद्भिः प्रदीप्यते तथाऽस्मान् विद्यया प्रदीपयन्तु यथा सूर्यस्य रश्मयस्सर्वानुपस्पृशन्ति तथा भवतामुपदेशा अस्मानुपस्पृशन्तु॥१॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य तेजस्वि विद्वन्! आप **[**अग्नि**]** जैसे (**समिधम्**) समिधा को, वैसे (**नः**) हमारी प्रजा का (**जुषस्व**) सेवन कीजिये तथा अग्नि के तुल्य (**अद्य**) आज (**बृहत्**) बड़े (**यजतम्**) सङ्ग करने योग्य व्यवहार को (**शोचा**) पवित्र कीजिये और (**धूमम्**) धूम को (**ऋण्वन्**) प्रसिद्ध करते हुए अग्नि के तुल्य सत्य कामों का (**उप, स्पृश**) समीप से स्पर्श कीजिये तथा (**सूर्यस्य**) सूर्य के (**स्तूपैः**) सम्यक् तपे हुए (**रश्मिभिः**) किरणों से वायु के तुल्य (**दिव्यम्**) कामना के योग्य वा शुद्ध (**सानु**) सेवने योग्य धन को (**सम्, ततनः**) सम्यक् प्राप्त कीजिये॥१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे अग्नि समिधाओं से प्रदीप्त होता, वैसे हमको विद्या से प्रदीप्त कीजिये। जैसे सूर्य कि किरणें सब का स्पर्श करती हैं, वैसे आप लोगों के उपदेश हम को प्राप्त होवें॥१॥

पुनर्मनुष्यैः किं सेवनीयमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किसका सेवन करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नराशंसस्य महिमानमेषामुप स्तोषाम यजतस्य यज्ञैः।
ये सुक्रतवः शुचयो धियं धाः स्वदन्ति देवा उभयानि हव्या॥२॥

नराशंसस्य। महिमानम्। एषाम्। उप। स्तोषाम। यजतस्य। यज्ञैः। ये। सुऽक्रतवः। शुचयः। धियम्ऽधाः। स्वदन्ति। देवाः। उभयानि। हव्या॥२॥

पदार्थः-(**नराशंसस्य**) नरैराशंसितस्य (**महिमानम्**) (**एषाम्**) (**उप**) (**स्तोषाम**) प्रशंसेम (**यजतस्य**) सङ्गन्तव्यस्य (**यज्ञैः**) सङ्गन्तव्यैस्साधनैः (**ये**) (**सुक्रतवः**) उत्तमप्रज्ञाः (**शुचयः**) पवित्राः (**धियन्धाः**) उत्तमकर्मधराः (**स्वदन्ति**) सुस्वादमदन्ति (**देवाः**) विद्वांसः (**उभयानि**) शरीरात्मपुष्टिकराणि (**हव्या**) हव्यान्यत्तुमर्हाणि॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये सुक्रतवः शुचयो धियन्धा देवा उभयानि हव्या स्वदन्ति यज्ञैर्यजतस्य नराशंसस्य भोगान्भुञ्जत एषां महिमानं वयमुप स्तोषाम॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! सदैव विद्वदनुकरणेन शरीरात्मबलवर्धकान्यन्नपानानि सेवनीयानि येन युष्माकं महिमा वर्धेत॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**ये**) जो (**सुक्रतवः**) उत्तम प्रज्ञा वाले (**शुचयः**) पवित्र (**धियन्धाः**) उत्तम कर्मों के धारण करने वाले (**देवाः**) विद्वान् लोग (**उभयानि**) शरीर और आत्मा के पुष्टिकारक (**हव्या**) भोजन के योग्य पदार्थों को (**स्वदन्ति**) अच्छे स्वादपूर्वक खाते और (**यज्ञैः**) सङ्गति के योग्य साधनों से (**यजतस्य**) सङ्ग करने योग्य (**नराशंसस्य**) मनुष्यों से प्रशंसा किये हुए तथा अन्न का भोग करने वाले के (**एषाम्**) इनकी (**महिमानम्**) महिमा को हम लोग (**उप, स्तोषाम**) समीप प्रशंसा करें॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम को चाहिये कि सदैव विद्वानों के अनुकरण से शरीर और आत्मा के बल को बढ़ाने वाले खानपानों का सेवन किया करो, जिससे तुम्हारी महिमा बढ़े॥२॥

पुनर्मनुष्याः कं सत्कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसका सत्कार करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ईळेन्यं वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम्।
मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम॥३॥

ईळेन्यम्। वः। असुरम्। सुऽदक्षम्। अन्तः। दूतम्। रोदसी इति। सत्यऽवाचम्। मनुष्वत्। अग्निम्। मनुना। सम्ऽइद्धम्। सम्। अध्वराय। सदम्। इत्। महेम॥३॥

पदार्थः-(**ईळेन्यम्**) प्रशंसनीयम् (**वः**) युष्माकम् (**असुरम्**) मेघमिव वर्त्तमानम् (**सुदक्षम्**) सुष्ठुबलचातुर्यम् (**अन्तः**) मध्ये (**दूतम्**) यो दुनोति तम् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**सत्यवाचम्**) सत्या वाग्यस्य तम् (**मनुष्वत्**) मनुष्येण तुल्यम् (**अग्निम्**) कार्यसाधकं पावकम् (**मनुना**) मननशीलेन विदुषा (**समिद्धम्**) प्रदीपनीकृतम् (**सम्**) सम्यक् (**अध्वराय**) अहिंसिताय व्यवहाराय (**सदम्**) सीदन्ति यस्मिँस्तम् (**इत्**) इव (**महेम**) सत्कुर्याम॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा वयं वोऽन्तरसुरमिव सुदक्षं रोदसी दूतमग्निमिव सत्यवाचमीळेऽन्यं मनुष्वन्मनुनाऽध्वराय समिद्धं सदमग्निमिव विद्वांसमिन्महेम तथा यूयमप्येनं सत्कुरुत॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये मघवदुपकारकानग्निवत्प्रकाशितविद्यान् धर्मिष्ठान् विदुषः सत्कुर्वन्ति ते सर्वत्र सत्कृता भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे हम लोग (**वः**) आपके (**अन्तः**) बीच में (**असुरम्**) मेघ के तुल्य वर्त्तमान (**सुदक्षम्**) सुन्दर बल और चतुराई से युक्त (**रोदसी**) सूर्य-भूमि और (**दूतम्**) उपताप देनेवाले (**अग्निम्**) कार्य को सिद्ध करने वाले अग्नि को जैसे, वैसे (**सत्यवाचम्**) सत्य बोलने वाले (**ईळेन्यम्**) प्रशंसा योग्य (**मनुष्वत्**) मनुष्य के तुल्य (**मनुना**) मननशील विद्वान् के साथ (**अध्वराय**) हिंसारहित व्यवहार के लिये (**समिद्धम्**) प्रदीप्त किये (**सदम्**) जिसके निकट बैठें उस अग्नि के तुल्य विद्वान् को (**सम्, इत्, महेम**) सम्यक् ही सत्कार करें, वैसे तुम लोग भी इस का सत्कार करो॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो मेघ के तुल्य उपकारक, अग्नि के तुल्य प्रकाशित विद्यावाले, धर्मात्मा, विद्वानों का सत्कार करते हैं, वे सर्वत्र सत्कार पाते हैं॥३॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सपर्यवो भरमाणा अभिज्ञु प्र वृञ्जते नमसा बर्हिरग्नौ।
आजुह्वाना घृतपृष्ठं पृषद्वदध्वर्यवो हविषा मर्जयध्वम्॥४॥

सपर्यवः। भरमाणाः। अभिऽज्ञु। प्र। वृञ्जते। नमसा। बर्हिः। अग्नौ। आऽजुह्वानाः। घृतऽपृष्ठम्। पृषत्ऽवत्। अध्वर्यवः। हविषा। मर्जयध्वम्॥४॥

पदार्थः-(**सपर्यवः**) सत्यं सेवमानाः (**भरमाणाः**) विद्यां धरन्तः (**अभिज्ञु**) विदुषां सन्निधौ कृते अभिमुखे जानुनी यैस्ते (**प्र**) (**वृञ्जते**) त्यजन्ति (**नमसा**) अन्नेन सह (**बर्हिः**) उत्तमं घृताऽऽदिकम् (**अग्नौ**) पावके (**आजुह्वानाः**) समन्ताद्धोमस्य कर्त्तारः (**घृतपृष्ठम्**) घृतं पृष्ठमिव यस्य तम् (**पृषद्वत्**) सेचकवत् (**अध्वर्यवः**) अध्वरमहिंसां कामयमानाः (**हविषा**) होमसामग्र्या (**मर्जयध्वम्**) शोधयत॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽभिज्ञु विद्यार्थिनो विद्वांसो भूत्वा सपर्यवो भरमाणा नमसा सह बर्हिरग्नौ प्र वृञ्जते तथा घृतपृष्ठमाजुह्वानाः पृषद्वदध्वर्यवो हविषा जनाऽन्तःकरणानि यूयं मर्जयध्वम्॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्वांसो यजमानवन्मनुष्याणामन्तःकरणान्यात्मनश्चाऽध्यापनोपदेशाभ्यां शोधयन्ति ते स्वयं शुद्धा भूत्वा सर्वोपकारका भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(अभिज्ञु)** विद्वानों के समीप पग पीछे करके सन्मुख घोटूं जिन के हों वे विद्यार्थी विद्वान् होकर **(सपर्यवः)** सत्य का सेवन करते और **(भरमाणाः)** विद्या को धारण करते हुए **(नमसा)** अन्न के साथ **(बर्हिः)** उत्तम घृत आदि को **(अग्नौ)** अग्नि में **(प्र, वृञ्जते)** छोड़ते हैं, वैसे **(घृतपृष्ठम्)** घृत जिसके पीठ के तुल्य है उस अग्नि को **(आजुह्वानाः)** अच्छे प्रकार होमयुक्त करते हुए **(पृषद्वत्)** सेवनकर्त्ता के तुल्य **(अध्वर्यवः)** अहिंसाधर्म चाहते हुए **(हविषा)** होम सामग्री से मनुष्यों के अन्तःकरणों को तुम लोग **(मर्जयध्वम्)** शुद्ध करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में [उपमा] वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् लोग यजमानों के तुल्य मनुष्यों के अन्तःकरण और आत्माओं को अध्यापन और उपदेश से शुद्ध करते हैं, वे आप शुद्ध होकर सब के उपकारक होते हैं॥४॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्वाध्यो३ वि दुरो देवयन्तोऽशिश्रयू रथयुर्देवताता।
पूर्वी शिशुं न मातरा रिहाणे समग्रुवो न समनेष्वञ्जन्॥५॥ १॥

सुऽआध्यः। वि। दुरः। देवऽयन्तः। अशिश्रयुः। रथऽयुः। देवऽताता। पूर्वी इति। शिशुम्। न। मातरा। रिहाणे इति। सम्। अग्रुवः। न। समनेषु। अञ्जन्॥५॥

पदार्थः-**(स्वाध्यः)** सुष्ठु चिन्तयन्तः **(वि)** **(दुरः)** द्वाराणि **(देवयन्तः)** देवान् विदुषः कामयन्तः **(अशिश्रयुः)** श्रयन्ति **(रथयुः)** रथं कामयमानः **(देवताता)** देवैरनुष्ठातव्ये सङ्गन्तव्ये व्यवहारे **(पूर्वी)** पूर्व्यौ **(शिशुम्)** बालकम् **(न)** इव **(मातरा)** मातापितरौ **(रिहाणे)** स्वादयन्त्यौ **(सम्)** **(अग्रुवः)** अग्रं गच्छन्त्यः सेनाः **(न)** इव **(समनेषु)** स- ग्रामेषु **(अञ्जन्)** गच्छन्ति॥५॥

अन्वयः-ये स्वाध्यो देवयन्तो जना देवताता रथयुरिव रिहाणे पूर्वी मातरा शिशुं न समनेष्वग्रुवो न दुरो व्यशिश्रयुः समञ्जँस्ते सुखकारकाः स्युः॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सम्यग्विचारयन्तो विद्वत्सङ्गप्रियाः यज्ञवत्परोपकारका मातापितृवत्सर्वानुन्नयन्तः संग्रामाञ्जयन्तो न्यायेन प्रजाः पालयन्ति ते सदा सुखिनो जायन्ते॥५॥

पदार्थः-जो **(स्वाध्यः)** सुन्दर विचार करते **(देवयन्तः)** विद्वानों को चाहते हुए जन **(देवताता)** विद्वानों के अनुष्ठान या सङ्ग करने योग्य व्यवहार में **(रथयुः)** रथ को चाहने वाले के तुल्य **(रिहाणे)** स्वाद लेते हुए **(पूर्वी)** अपने से पूर्व हुए **(मातरा)** माता-पिता **(शिशुम्, न)** बालक के तुल्य **(समनेषु)** संग्रामों में **(अग्रुवः)** आगे चलती हुई सेना[एँ] **(न)** जैसे, वैसे **(दुरः)** द्वारों का **(वि, अशिश्रयुः)** विशेष आश्रय करते हैं और **(सम्, अञ्जन्)** चलते हैं, वे सुखकरने वाले होवें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सम्यक् विचार करते हुए, विद्वानों के सङ्ग में प्रीति रखने वाले यज्ञ के तुल्य परोपकारी, माता-पिता के तुल्य सब की उन्नति

करते और संग्रामों को जीतते हुए, न्याय से प्रजाओं का पालन करते हैं, वे सदा सुखी होते हैं॥५॥

पुनर्विदुष्यः स्त्रियः कीदृश्यो भवेयुरित्याह॥

फिर विदुषी स्त्रियाँ कैसी हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत योषणे दिव्ये मही न उषासानक्ता सुदुघेव धेनुः।
बर्हिषदा पुरुहूते मघोनी आ यज्ञिये सुविताय श्रयेताम्॥६॥

उत। योषणे इति। दिव्ये इति। मही इति। नः। उषासानक्ता। सुदुघाऽइव। धेनुः। बर्हिऽसदा। पुरुहूते इति पुरुऽहूते। मघोनी इति। आ। यज्ञिये इति। सुविताय। श्रयेताम्॥६॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**योषणे**) विदुष्यौ स्त्रियाविव (**दिव्ये**) शुद्धस्वरूपे (**मही**) महत्यौ (**नः**) अस्मभ्यम् (**उषासानक्ता**) रात्रिप्रातर्वेले (**सुदुघेव**) सुष्ठुकामप्रपूरिकेव (**धेनुः**) गौर्विद्यायुक्ता वाग्वा (**बर्हिषदा**) ये बर्हिष्यन्तरिक्षे सीदन्ति (**पुरुहूते**) बहुभिर्व्याख्याते (**मघोनी**) बहुधननिमित्ते (**आ**) (**यज्ञिये**) यज्ञसम्बन्धिनि कर्मणि (**सुविताय**) ऐश्वर्याय (**श्रयेताम्**) सेवेयाताम्॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! ये नो यज्ञिये मघोनी योषणे इव दिव्ये मही धेनुः सुदुघेवोत बर्हिषदा पुरुहूते उषासानक्ता न आश्रयेतां ते सुविताय यथावत्सेवनीये॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! याः स्त्रियो दिव्यविद्यागुणऽन्विता रात्र्युषर्वत्सुखप्रदाः सत्या वागिव प्रियवचनाः स्युस्ता एव यूयमाश्रयत॥६॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो (**नः**) हमारे लिये (**यज्ञिये**) सम्बन्धी कर्म में (**मघोनी**) बहुत धन मिलने के निमित्त (**योषणे**) उत्तम स्त्रियों के तुल्य (**दिव्ये**) शुद्धस्वरूप (**मही**) बड़ी (**धेनुः**) विद्यायुक्त वाणी वा गौ (**सुदुघेव**) सुन्दर प्रकार कामनाओं को पूर्ण करने वाली के तुल्य (**उत**) और (**बर्हिषदा**) अन्तरिक्ष में रहने वाली (**पुरुहूते**) बहुतों से व्याख्यान की गई (**उषासानक्ता**) दिन रात रूप वेला हम को (**आ, श्रयेताम्**) आश्रय करें वे दिन रात (**सुविताय**) ऐश्वर्य के लिये यथावत् सेवने योग्य हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो स्त्रियाँ उत्तम विद्या और गुणों से युक्त, रात्रि दिन के तुल्य सुख देने वाली सत्य वाणी के तुल्य प्रिय बोलने वाली हों उन्हीं का तुम लोग आश्रय करो॥६॥

पुनस्तौ दम्पती कीदृशौ भवेतामित्याह॥

फिर वे स्त्री-पुरुष कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विप्रा यज्ञेषु मानुषेषु कारू मन्ये वां जातवेदसा यजध्यै।
ऊर्ध्वं नो अध्वरं कृतं हवेषु ता देवेषु वनथो वार्याणि॥७॥

विप्रा। यज्ञेषु। मानुषेषु। कारू इति। मन्ये। वाम्। जातऽवेदसा। यजध्यै। ऊर्ध्वम्। नः। अध्वरम्। कृतम्। हवेषु। ता। देवेषु। वनथः। वार्याणि॥७॥

पदार्थः-(**विप्रा**) विप्रौ मेधाविनौ स्त्रीपुरुषौ (**यज्ञेषु**) सत्सु कर्मसु (**मानुषेषु**) मनुष्यसम्बन्धिषु

(कारू) शिल्पविद्याकुशलौ पुरुषार्थिनौ **(मन्ये)** **(वाम्)** युवाम् **(जातवेदसा)** प्राप्तप्रकटविद्यौ **(यजध्यै)** सङ्गन्तुम् **(ऊर्ध्वम्)** उत्कृष्टम् **(नः)** अस्माकम् **(अध्वरम्)** अहिंसनीयं गृहाश्रमादिव्यवहारम् **(कृतम्)** कुरुतम् **(हवेषु)** गृह्णन्ति येषु पदार्थेषु **(ता)** तौ **(देवेषु)** दिव्यगुणेषु विद्वत्सु वा **(वनथः)** संविभजथः **(वार्याणि)** वर्त्तुमर्हाणि॥७॥

अन्वयः-हे स्त्रीपुरुषौ! यौ मानुषेषु यज्ञेषु कारू जातवेदसा विप्रा युवां नो हवेष्वध्वरमूर्ध्वं कृतं देवेषु वार्याणि वनथस्ता वां यजध्या अहं मन्ये तथा युवां मां मन्येथाम्॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा कृतब्रह्मचर्यविद्यौ क्रियाकुशलौ विद्वांसौ स्त्रीपुरुषौ सर्वाणि गृहकृत्यान्यलङ्कर्तुं शक्नुतस्तौ सङ्गन्तुं योग्यौ भवतस्तथा यूयमपि भवत॥७॥

पदार्थः-हे स्त्रीपुरुषो! जो **(मानुषेषु)** मनुष्यसम्बन्धी **(यज्ञेषु)** सत्कर्मों में **(कारू)** वा शिल्पविद्या में कुशल वा पुरुषार्थी **(जातवेदसा)** विद्या को प्रसिद्ध प्राप्त हुए **(विप्रा)** बुद्धिमान् तुम दोनों **(नः)** हमारे **(हवेषु)** जिन में ग्रहण करते उन घरों में **(अध्वरम्)** रक्षा करने योग्य गृहाश्रमादि के व्यवहार को **(ऊर्ध्वम्)** उन्नत **(कृतम्)** करो **(देवेषु)** दिव्य गुणों वा विद्वानों में **(वार्याणि)** ग्रहण करने योग्य पदार्थों को **(वनथः)** सम्यक् सेवन करो **(ता)** वे **(वाम्)** तुम दोनों **(यजध्यै)** सङ्ग करने के अर्थ मैं **(मन्ये)** मानता, वैसे तुम दोनों मुझ को मानो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे ब्रह्मचर्यसेवन से विद्या को प्राप्त हुए क्रिया में कुशल विद्वान् स्त्रीपुरुष सब घर के कामों को शोभित करने को समर्थ होते हैं और वे संग करने योग्य होते हैं, वैसे तुम लोग भी होओ॥७॥

पुनः स्त्रीपुरुषाः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर स्त्री-पुरुष कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ भार॑ती भार॑तीभिः स॒जोषा॒ इळा॑ दे॒वैर्म॑नु॒ष्ये॑भिर॒ग्निः।

सर॑स्वती सारस्व॒तेभि॑र॒र्वाक् ति॒स्रो दे॒वीर्ब॒र्हिरेदं स॑दन्तु॥८॥

आ। भार॑ती। भार॑तीभिः। सऽजो॑षाः। इळा॑। दे॒वैः। म॒नु॒ष्ये॑भिः। अ॒ग्निः। सर॑स्वती। सा॒र॒स्व॒तेभिः॑। अ॒र्वाक्। ति॒स्रः। दे॒वीः। ब॒र्हिः। आ। इ॒दम्। स॒द॒न्तु॥८॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(भारती)** सद्यः शास्त्राणि धृत्वा सर्वस्य पालिका वागिव विदुषी **(भारतीभिः)** तादृशीभिर्विदुषीभिः **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेविका **(इळा)** स्तोतुमर्हा **(देवैः)** सत्यवादिभिर्विद्वद्भिः **(मनुष्येभिः)** अनृतवादिभिर्जनैः। **सत्यमेव देवा अनृतं मनुष्याः** (शत०ब्रा०१.१.१.४) **(अग्निः)** पावक इव **(सरस्वती)** विज्ञानयुक्ता वाक् **(सारस्वतेभिः)** सरस्वत्यां कुशलैः **(अर्वाक्)** पुनः **(तिस्रः)** त्रिविधाः **(देवीः)** दिव्याः **(बर्हिः)** उत्तमं गृहं शरीरं वा **(इदम्)** प्रत्यक्षम् **(सदन्तु)** प्राप्नुवन्तु॥८॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा भारतीभिर्भारती सजोषा देवैर्मनुष्येभिरिळा सारस्वतेभिस्सरस्वत्यर्वागग्निरिव शुद्धास्तिस्रो देवीरिदं बर्हिरा सदन्तु तथैव यूयं विद्वद्भिः

सहाऽऽगच्छध्वम्॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यदि यूयं प्रशस्तां वाणी प्रज्ञां च प्राप्नुयुस्तर्हि सूर्य्यवत् सुप्रकाशिता भूत्वाऽस्मिञ्जगति कल्याणकरा भवथ॥८॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे **(भारतीभिः)** तुल्य विदुषी स्त्रियों के साथ **(भारती)** शीघ्र शास्त्रों को धारण कर, वाणी के तुल्य सब की रक्षक विदुषी **(सजोषाः)** तुल्य प्रीति को सेवने वाली **(देवैः)** सत्यवादी विद्वानों **(मनुष्येभिः)** और मिथ्यावादी मनुष्यों से **(इळा)** स्तुति के योग्य **(सारस्वतेभिः)** वाणी विद्या में कुशलों से **(सरस्वती)** विज्ञानयुक्त वाणी **(अर्वाक्)** पुनः **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य शुद्ध **(तिस्रः)** तीन प्रकार की **(देवीः)** उत्तम स्त्रियाँ **(इदम्)** इस **(बर्हिः)** उत्तम घर वा शरीर को **(आ, सदन्तु)** अच्छे प्रकार प्राप्त हों, वैसे ही तुम लोग विद्वानों के साथ **(आ)** आओ॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो। यदि तुम लोग प्रशंसित वाणी और बुद्धि को प्राप्त हो तो सूर्य के तुल्य प्रकाशित होकर इस जगत् में कल्याण करने वाले होओ॥८॥

पुनर्मनुष्यैः किं प्राप्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या प्राप्त करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तन्न॑स्तु॒रीप॒मध॑ पोषयि॒त्नु देव॑ त्वष्ट॒र्वि र॑रा॒णः स्य॑स्व।
यतो॑ वी॒रः क॑र्म॒ण्य॑: सु॒दक्षो॑ यु॒क्तग्रा॑वा॒ जाय॑ते दे॒वका॑मः॥९॥

तत्। नः॒। तु॒रीप॑म्। अध॑। पो॒ष॒यि॒त्नु। देव॑। त्व॒ष्टः॒। वि। र॒रा॒णः। स्य॒स्वेति॑ स्यस्व। यत॑ः। वी॒रः। क॒र्म॒ण्य॑ः। सु॒ऽदक्ष॑ः। यु॒क्तग्रा॑वा। जाय॑ते। दे॒वऽका॑मः॥९॥

पदार्थः-**(तत्)** अध्यापनासनम् **(नः)** अस्माकम् **(तुरीपम्)** क्षिप्रम् **(अध)** अथ **(पोषयित्नु)** पोषकम् **(देव)** विद्वन् **(त्वष्टः)** विद्याप्रापक **(वि)** **(रराणः)** विद्या ददत् सन् **(स्यस्व)** विद्यां पारं गमय **(यतः)** **(वीरः)** **(कर्मण्यः)** कर्मसु कुशलः **(सुदक्षः)** सुष्ठु बलोपेतः **(युक्तग्रावा)** युक्तो योजितो ग्रावा मेघो येन सः **(जायते)** **(देवकामः)** देवानां विदुषां काम इच्छा यस्य सः॥९॥

अन्वयः-हे त्वष्टर्देव! वि रराणस्त्वं नस्तत्पोषयित्नु तुरीपं स्यस्वाऽध यतः कर्मण्यः सुदक्षो युक्तग्रावा देवकामो वीरो जायते॥९॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैः सर्वेभ्यो लाभेभ्यो विद्यालाभमुत्तमं मत्वा तत्प्राप्तव्यं सदैव विद्वत्सङ्गमनं कृत्वा सदैव कर्मानुष्ठानी जायते सः श्रेष्ठात्मबलो भवति॥९॥

पदार्थः-हे **(त्वष्टः)** विद्या को प्राप्त कराने वाले **(देव)** विद्वान्! **(वि, रराणः)** विशेष विद्या देते हुए **(नः)** हमारे **(तत्)** पढ़ाने के आसन को **(पोषयित्नु)** पुष्ट करने वाले **(तुरीपम्)** शीघ्र **(स्यस्व)** विद्या को पार कीजिये **(अध)** अब **(यतः)** जिससे **(कर्मण्यः)** कर्मों में कुशल **(सुदक्षः)** सुन्दर बल से युक्त **(युक्तग्रावा)** मेघ को युक्त करने और **(देवकामः)** विद्वानों की कामना करने वाला **(वीरः)** वीर पुरुष **(जायते)** प्रकट होता है॥९॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को उचित है कि सब लाभों से विद्या लाभ को उत्तम मान के उसको

प्राप्त हों, सदैव जो विद्वानों का सङ्ग करके सदा कर्मों का अनुष्ठान करने वाला होता है, वह श्रेष्ठ आत्मा के बल वाला होता है॥९॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वन॑स्पतेऽव॑ सृजोप॑ दे॒वान॒ग्निर्ह॒विः श॑मि॒ता सू॑दयाति।

सेदु॒ होता॑ स॒त्यत॑रो यजाति॒ यथा॑ दे॒वानां॒ जनि॑मानि॒ वेद॑॥१०॥

वन॑स्पते। अव॑। सृ॒ज। उप॑। दे॒वान्। अ॒ग्निः। ह॒विः। श॒मि॒ता। सू॒द॒याति॒। सः। इत्। ऊँ इति॑। होता॑। स॒त्यऽत॑रः। य॒जा॒ति॒। यथा॑। दे॒वाना॑म्। जनि॑मानि। वेद॑॥१०॥

पदार्थः-(**वनस्पते**) वनानां किरणानां पालक सूर्य इव विद्वन् (**अव**) (**सृज**) (**उप**) (**देवान्**) (**अग्निः**) पावकः (**हविः**) हुतं द्रव्यम् (**शमिता**) शान्तियुक्तः (**सूदयाति**) सूदयेत् क्षरयेत् (**सः**) (**इत्**) एव (**उ**) (**होता**) दाता (**सत्यतरः**) यः सत्येन दुःखं तरति (**यजाति**) यजेत् (**यथा**) (**देवानाम्**) दिव्यानां पृथिव्यादिपदार्थानां विदुषां वा (**जनिमानि**) जन्मानि (**वेद**) जानाति॥१०॥

अन्वयः-हे वनस्पते! शमिता त्वं यथाग्निर्हविः सूदयाति तथा देवानुपाऽव सृज यथा होता यजाति तथेदु सत्यतरो भव यो देवानां जनिमानि वेद स पदार्थविद्यां प्राप्तुमर्हति॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यदि भवन्तः सूर्य्यो वर्षा इव होता यज्ञमिव विद्वान् विद्या इवाऽध्यापनोपदेशाभ्यां सर्वोपकारं साध्नुयुस्तर्हि भवादृशाः केऽपि न सन्तीति वयं विजानीयामः॥१०॥

पदार्थः-हे (**वनस्पते**) किरणों के पालक सूर्य के तुल्य तेजस्वि विद्वन्! (**शमिता**) शान्तियुक्त आप (**यथा**) जैसे (**अग्निः**) अग्नि (**हविः**) हवन किये द्रव्य को (**सूदयाति**) छिन्न-भिन्न करे, वैसे (**देवान्**) दिव्यगुणों को (**उप, अव, सृज**) फैलाइये जैसे (**होता**) दाता (**यजाति**) यज्ञ करे, वैसे (**इत्**) ही (**उ**) तो (**सत्यतरः**) सत्य से दुःख के पार होने वाले हूजिये। जो (**देवानाम्**) पृथिव्यादि दिव्य पदार्थों वा विद्वानों के (**जनिमानि**) जन्मों को (**वेद**) जानता है (**सः**) वह पदार्थविद्या को प्राप्त होने योग्य है॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे विद्वानो! यदि आप लोग सूर्य जैसे वर्षा को, होता जैसे यज्ञ को और विद्वान् जैसे विद्या को, वैसे पढ़ाने और उपदेश से सर्वोपकार को सिद्ध करें तो आप के तुल्य कोई लोग नहीं हो, यह हम जानते हैं॥१०॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ या॑ह्यग्ने समिधा॒नो अ॒र्वाङिन्द्रे॑ण दे॒वैः स॒रथं॑ तु॒रेभिः॑।

ब॒र्हिर्न॑ आस्ता॒मदि॑तिः सुपु॒त्रा स्वाहा॑ दे॒वा अ॒मृता॑ मादयन्ताम्॥११॥२॥

आ। या॒हि॒। अ॒ग्ने॒। स॒म्ऽइ॒धा॒नः। अ॒र्वाङ्। इन्द्रे॑ण। दे॒वैः। स॒ऽरथ॑म्। तु॒रेभिः॑। ब॒र्हिः। न॒ः। आस्ता॑म्।

अदि॑तिः। सु॒ऽपु॒त्रा। स्वाहा॑। दे॒वाः। अ॒मृता॑। मा॒द॒य॒न्ता॒म्॥ ११॥

पदार्थः-(**आ**) (**याहि**) आगच्छ (**अग्ने**) पावक इव (**समिधानः**) शुभगुणैर्देदीप्यमानः (**अर्वाङ्**) योऽर्वाङ्धोऽञ्चति (**इन्द्रेण**) विद्युता सह सूर्य्येण वा (**देवैः**) विद्वद्भिर्दिव्यगुणैर्वा (**सरथम्**) रथेन सह वर्त्तमानम् (**तुरेभिः**) आशुकारिभिः (**बर्हिः**) अन्तरिक्षम् (**नः**) (**अस्मभ्यम्**) (**अदितिः**) माता (**सुपुत्रा**) शोभनाः पुत्रा यस्याः सा (**स्वाहा**) सत्यक्रियया (**देवाः**) विद्वांसः (**अमृताः**) प्राप्तमोक्षाः (**मादयन्ताम्**) आनन्दयन्तु॥ ११॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा समिधानोऽग्निस्सूर्यप्रकाश इन्द्रेण सहाऽर्वाङागच्छति तथाभूतस्त्वं तुरेभिर्देवैस्सह नस्सरथं बर्हिरा याहि यथा स्वाहा सुपुत्राऽदितिरस्ति तथा भवानत्राऽऽस्ताम् यथाऽमृता देवाः सर्वानानन्दयन्ति तथा भवन्तोऽपि सर्वान् मादयन्ताम्॥ ११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथा सूर्यप्रकाशो दिव्यैर्गुणैः सहाऽधःस्थानस्मान् प्राप्नोति यथा च सत्यविद्यया युक्तोत्तमसन्ताना सुखमास्ते तथैवाऽविदुषोऽस्मान् भवन्तः प्राप्य सुशिक्षन्तां सुखयन्त्विति॥ ११॥

अत्राग्निमनुष्यविद्युद्विद्वध्यापकोपदेशकोत्तमवाक् पुरुषार्थ विद्वदुपदेशस्त्र्यादिकृत्यवर्णानादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वितीय सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान विद्वन्! जैसे (**समिधानः**) शुभ गुणों से देदीप्यमान अग्नि अर्थात् सूर्य्य का प्रकाश (**इन्द्रेण**) बिजुली वा सूर्य्य के साथ (**अर्वाङ्**) नीचे जाने वाला प्राप्त होता है, वैसे होकर आप भी (**तुरेभिः**) शीघ्र करने वाले (**देवैः**) विद्वानों वा दिव्य गुणों के साथ (**नः**) हमारे लिये (**सरथम्**) रथ के साथ वर्त्तमान (**बर्हिः**) अन्तरिक्ष को (**आ, याहि**) आइये और जैसे (**स्वाहा**) सत्यक्रिया से (**सुपुत्रा**) सुन्दर पुत्रों से युक्त (**अदितिः**) माता है, वैसे आप भी (**आस्ताम्**) स्थित होवें और जैसे (**अमृता**) मोक्ष को प्राप्त हुए (**देवाः**) विद्वान् जन सब की आनन्दित करते हैं, वैसे आप भी सब को (**मादयन्ताम्**) आनन्दित कीजिये॥ ११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे सूर्य्य का प्रकाश दिव्य गुण के साथ नीचे भी स्थित हम सबों को प्राप्त होता है और जैसे सत्यविद्या से युक्त और उत्तम सन्तान वाली माता सुखपूर्वक स्थित होती है, वैसे ही अविद्वान् हम सबों को आप प्राप्त होकर अच्छी शिक्षा दीजिये तथा सुखी कीजिये॥ ११॥

इस सूक्त में **[अग्नि]**, मनुष्य, बिजुली, विद्वान्, अध्यापक, उपदेशक, उत्तम वाणी, पुरुषार्थ, विद्वानों का उपदेश तथा स्त्री आदि के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये।

यह दूसरा सूक्त और दूसरा वर्ग भी समाप्त हुआ॥

अथ दशर्चस्य तृतीयस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ९, १० विराट्त्रिष्टुप्। ४, ६, ७, ८ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। २ स्वराट् पङ्क्तिः। ३ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ कीदृशी विद्युदस्तीत्याह॥

अब सातवें मण्डल के तृतीय सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में विद्युत् कैसी है, इस विषय को कहते हैं।

अ॒ग्निं वो॑ दे॒वम॒ग्निभिः॑ स॒जोषा॒ यजि॑ष्ठं दू॒तम॑ध्व॒रे कृ॑णुध्वम्।
यो मर्त्ये॑षु॒ निध्रु॑विर्ऋ॒तावा॒ तपु॑र्मूर्धा घृ॒तान्नः॑ पाव॒कः॥ १॥

अ॒ग्निम्। व॒ः। दे॒वम्। अ॒ग्निऽभिः॑। स॒ऽजोषाः॑। यजि॑ष्ठम्। दू॒तम्। अ॒ध्व॒रे। कृ॒णु॒ध्व॒म्। यः। मर्त्ये॑षु। निऽध्रु॑विः। ऋ॒तऽवा॑। तपुः॑ऽमूर्धा। घृ॒तऽअ॑न्नः। पा॒व॒कः॥ १॥

पदार्थः- **(अग्निम्)** पावकम् **(वः)** युष्माकम् **(देवम्)** दिव्यगुणकर्मस्वभावम् **(अग्निभिः)** सूर्य्यादिभिः **(सजोषाः)** समानसेवी **(यजिष्ठम्)** अतिशयेन सङ्गन्तारम् **(दूतम्)** दूतवत्सद्यः समाचारप्रापकम् **(अध्वरे)** अहिंसनीये शिल्पव्यवहारे **(कृणुध्वम्)** **(यः)** **(मर्त्येषु)** मरणधर्मेषु मनुष्यादिषु **(निध्रुविः)** नितरां ध्रुवः **(ऋतावा)** सत्यस्य जलस्य वा विभाजकः **(तपुर्मूर्धा)** तपुस्तापो मूर्द्धेवोत्कृष्टो यस्य **(घृतान्नः)** घृतमाज्यं प्रदीपनमन्नमिव प्रदीपकं यस्य **(पावकः)** पवित्रकरः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वस्सजोषा मर्त्येषु निध्रुविर्ऋतावा तपुर्मूर्धा घृतान्नः पावकोऽस्ति तमध्वरेऽग्निभिस्सह यजिष्ठं दूतमग्निं देवं यूयं कृणुध्वम्॥ १॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! या विद्युत्सर्वत्र स्थिता विभाजिका प्रदीप्तगुणा साधनजन्या वर्त्तते तामेव यूयं दूतमिव कृत्वा सङ्ग्रामादीनि कार्य्याणि साध्नुत॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(वः)** तुम्हारा **(सजोषाः)** एक सी प्रीति को सेवनेवाला **(मर्त्येषु)** मरणधर्म सहित मनुष्यादिकों में **(निध्रुविः)** निरन्तर स्थित **(ऋतावा)** सत्य वा जल का विभाग करने वाला **(तपुर्मूर्धा)** शिर के तुल्य उत्कृष्ट वा उत्तम जिसका ताप है **(घृतान्नः)** अन्न के तुल्य प्रकाशित जिसका घृत है **(पावकः)** जो पवित्र करने वाला है उस **(अध्वरे)** सूर्य आदि के साथ **(यजिष्ठम्)** अत्यन्त संगति करने वाले **(दूतम्)** दूत के तुल्य तार द्वारा शीघ्र समाचार पहुँचाने वाले **(अग्निम्, देवम्)** उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव युक्त अग्नि को तुम लोग **(कृणुध्वम्)** प्रकट करो॥ १॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो विद्युत् सर्वत्र स्थित, विभाग करने वाली प्रकाशित गुणों से युक्त साधनों से प्रकट हुई वर्त्तमान है, उसी को तुम लोग दूत के तुल्य बना कर युद्धादि कार्य्यों को सिद्ध करो॥ १॥

पुनः सा विद्युत्कीदृशी वर्त्तत इत्याह॥

फिर वह विद्युत् कैसी है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन् यदा महः संवरणाद् व्यस्थात्।
आदस्य वातो अनुवाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति॥ २॥

प्रोथत्। अश्वः। न। यवसे। अविष्यन्। यदा। महः। सम्ऽवरणात्। वि। अस्थात्। आत्। अस्य। वातः। अनु। वाति। शोचिः। अध। स्म। ते। व्रजनम्। कृष्णम्। अस्ति॥ २॥

पदार्थः- (**प्रोथत्**) शब्दं कुर्वन् (**अश्वः**) आशुगामी तुरङ्गः (**न**) इव (**यवसे**) घासे (**अविष्यन्**) रक्षणं करिष्यन् (**यदा**) (**महः**) महतः (**संवरणात्**) सम्यक् स्वीकरणात् (**वि**) विशेषेण (**अस्थात्**) तिष्ठति (**आत्**) आनन्तर्ये (**अस्य**) (**वातः**) वायुः (**अनु**) (**वाति**) गच्छति (**शोचिः**) प्रदीपनम् (**अध**) अथ (**स्म**) एव (**ते**) तव (**व्रजनम्**) गमनम् (**कृष्णम्**) कर्षणीयम् (**अस्ति**)॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यत्ते कृष्णं व्रजनमस्ति तन्महः संवरणाच्छोचिरध स्मास्य वातो [यदा]ऽनु वाति। आत्तदा यवसेऽविष्यन् प्रोथदश्वो न सद्योऽयमग्निरध्वानं व्यस्थात्॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यदा मनुष्या अग्नियानेन गमनं तडिता समाचारांश्च गृह्णीयुतस्तदेते सद्यः कार्याणि साद्धुं शक्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जो (**ते**) आपका (**कृष्णम्**) आकर्षण करने योग्य (**व्रजनम्**) गमन (**अस्ति**) है उसके सम्बन्ध में (**महः**) महान् (**संवरणात्**) सम्यक् स्वीकार से (**शोचिः**) प्रदीपन (**अध, स्म**) और इसके अनन्तर ही (**अस्य**) इसके सम्बन्ध में (**वातः**) वायु (**यदा**) जब (**अनु, वाति**) अनुकूल चलता है (**आत्**) अनन्तर तब (**यवसे**) भक्षण के अर्थ (**अविष्यन्**) रक्षा करता (**प्रोथत्**) और शब्द करता हुआ (**अश्वः**) घोड़े के (**न**) समान शीघ्र यह अग्निमार्ग को (**वि, अस्थात्**) व्याप्त होता है॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जब मनुष्य लोग अग्नियान से गमन और विद्युत् से समाचारों को ग्रहण करें तब ये शीघ्र कार्यों को सिद्ध कर सकते हैं॥ २॥

पुनर्विद्वान् विद्युता किं कुर्यादित्याह॥

फिर विद्वान् बिजुली से क्या सिद्ध करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उद्यस्य ते नवजातस्य वृष्णोऽग्ने चरन्त्यजरा इधानाः।
अच्छा द्यामरुषो धूम एति सं दूतो अग्न ईयसे हि देवान्॥ ३॥

उत्। यस्य। ते। नवऽजातस्य। वृष्णः। अग्ने। चरन्ति। अजराः। इधानाः। अच्छ। द्याम्। अरुषः। धूमः। एति। सम्। दूतः। अग्ने। ईयसे। हि। देवान्॥ ३॥

पदार्थः- (**उत्**) (**यस्य**) (**ते**) तव (**नवजातस्य**) नवीनविदुषः (**वृष्णः**) विद्यया बलिष्ठस्य (**अग्ने**) विद्युदिव गुप्तप्रतापिन् (**चरन्ति**) गच्छन्ति (**अजराः**) व्ययरहिताः (**इधानाः**) देदीप्यमानाः (**अच्छ**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**द्याम्**) प्रकाशम् (**अरुषः**) गर्भस्थः (**धूमः**) (**एति**) गच्छति (**सम्**) सम्यक् (**दूतः**) दूत इव समाचारप्रदः (**अग्ने**) प्रसिद्धाग्निवत्कार्यसाधक (**ईयसे**) गच्छसि (**हि**)

यत: **(देवान्)** विदुष:॥३॥

अन्वय:-हे अग्ने! यस्य नवजातस्य वृष्णस्ते यथाऽग्न इधाना अजरा अग्नय उच्चरन्त्यरुषो द्यां प्राप्य यस्य धूम अच्छैति यो दूत इव देवानीयते यदा तं हि त्वं समीयसे तदा कार्यं कर्त्तुं शक्नोषि॥३॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! यदि भवान् विद्युद्विद्यां विजानीयात्तर्हि किं किं कार्यं साद्धुं न शक्नुयात्॥३॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** विद्युत् अग्नि के तुल्य गुप्त प्रताप वाले! **(यस्य)** जिस **(नवजातस्य)** नवीन प्रकट हुए **(वृष्ण:)** विद्या से बलवान् **(ते)** आप विद्वान् के निकटवर्ती जैसे **(अग्ने)** प्रसिद्ध अग्नि के तुल्य कार्यसाधक **(इधाना:)** प्रकाशमान जलते हुए **(अजरा:)** खर्चरहित अग्नि **(उत, चरन्ति)** ऊपर को उठते वा चलते हैं **(अरुष:)** गर्भस्थ पुरुष **(द्याम्)** प्रकाश को प्राप्त होकर जिसका **(धूम:)** धुआँ **(अच्छा, एति)** अच्छा जाता है जो **(दूत:)** दूत के तुल्य **(देवान्)** विद्वानों को प्राप्त होता जब उसको **(हि)** ही आप **(सम्, ईयसे)** प्राप्त होते हो, तब कार्य करने को समर्थ होते हो॥३॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! यदि आप विद्युत् की विद्या को जानें तो आप किस-किस कार्य को सिद्ध न कर सकें॥३॥

पुन: सा विद्युत्कीदृशी कथं प्रकटनीयेत्याह॥

फिर वह विद्युत् कैसी है और कैसे प्रकट करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वि यस्य॑ ते पृथि॒व्यां पाजो॒ अश्रे॑त्तृ॒षु यदन्ना॑ स॒मवृ॑क्त॒ जम्भैः॑।
सेने॑व सृ॒ष्टा प्रसि॑तिष्ट ए॒ति यवं॒ न द॑स्म जु॒ह्वा॑ विवे॑क्षि॥४॥

वि। यस्य॑। ते॒। पृ॒थि॒व्याम्। पाजः॑। अश्रे॑त्। तृ॒षु। यत्। अन्ना॑। स॒म्ऽअवृ॑क्त। जम्भैः॑। सेना॑ऽइव। सृ॒ष्टा। प्रऽसि॑तिः। ते॒। ए॒ति। यव॑म्। न। द॒स्म॒। जु॒ह्वा॑। वि॒वे॒क्षि॒॥४॥

पदार्थ:- **(वि) (यस्य) (ते)** तस्या विद्युत:। अत्र पुरुषव्यत्यय:। **(पृथिव्याम्) (पाज:)** बलम्। **पाज इति बलनाम।** (निघं०२.९) **(अश्रेत्)** श्रयति **(तृषु)** क्षिप्रम् **(यत्) (अन्ना)** अन्नानि **(समवृक्त)** सम्यग्वृङ्क्ते **(जम्भै:)** गात्रविक्षेपै: **(सेनेव) (सृष्टा)** सम्प्रयुक्ता **(प्रसिति:)** प्रकर्षं बन्धनम् **(ते)** तव **(एति) (यवम्)** अन्नविशेषम् **(न)** इव **(दस्म)** दु:खोपक्षयित: **(जुह्वा)** होमसाधनेन **(विवेक्षि)** व्याप्नोषि॥४॥

अन्वय:-हे दस्म विद्वन्! यां जुह्वा यवं न विद्युद्विद्यां विवेक्षि सा ते सृष्टा प्रसिति: सती सेनेवैति यद्या जम्भैरन्ना समवृक्त यस्य ते विद्युद्रूपस्याग्ने: पाज: पृथिव्यां तृषु व्यश्रेत्तां त्वं विजानीहि॥४॥

भावार्थ:-ये विद्वांसो विद्युद्विद्यां जानन्ति त उत्तमा सेनेव शत्रून् सद्यो जेतुं शक्नुवन्ति यथा घृतादिनाऽग्नि: प्रदीप्यते तथा घर्षणादिना विद्युत्प्रदीपनीया॥४॥

पदार्थ:-हे **(दस्म)** दु:खों के नाश करनेहारे विद्वन्! जिस **(जुह्वा)** होमसाधन से **(यवम्)** यवों को **(न)** जैसे, वैसे विद्युद्विद्या को **(विवेक्षि)** व्याप्त होते हो वह **(ते)** तुम्हारी **(सृष्टा)** प्रयुक्त क्रिया **(प्रसिति:)** प्रबल बन्धन होती हुई **(सेनेव)** सेना के तुल्य **(एति)** प्राप्त होती है और **(यत्)** जो

(जम्भैः) गात्रविक्षेपों से **(अन्ना)** अन्नों को **(समवृक्त)** अच्छे प्रकार वर्जित करता अर्थात् शरीर से छुड़ाता है **(यस्य)** जिस **(ते)** उस विद्युत् के **(पाजः)** बल को **(पृथिव्याम्)** पृथिवी में **(तृषु)** शीघ्र **(वि, अश्रेत्)** आश्रय करता है, उसको तुम जानो॥४॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग विद्युद्विद्या को जानते हैं, वे उत्तम सेना के तुल्य शत्रुओं को शीघ्र जीत सकते हैं, जैसे घी आदि से अग्नि प्रज्वलित होता, वैसे घर्षण आदि से विद्युत् अग्नि प्रकट करना चाहिये॥४॥

पुनस्सा विद्युत्कथमुत्पादनीया सा च किं करोतीत्याह॥

फिर वह विद्युत् कैसे उत्पन्न करनी चाहिये और वह क्या करती है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमिद्दोषा तमुषसि यविष्ठमग्निमत्यं न मर्जयन्त नरः।
निशिशाना अतिथिमस्य योनौ दीदाय शोचिराहुतस्य वृष्णः॥५॥ ३॥

तम्। इत्। दोषा। तम्। उषसि। यविष्ठम्। अग्निम्। अत्यम्। न। मर्जयन्त। नरः। निऽशिशानाः। अतिथिम्। अस्य। योनौ। दीदाय। शोचिः। आऽहुतस्य। वृष्णः॥५॥

पदार्थः- **(तम्)** विद्युदग्निम् **(इत्)** एव **(दोषा)** रात्रौ **(तम्)** **(उषसि)** प्रभाते **(यविष्ठम्)** अतिशयेन युवानमिव **(अग्निम्)** विद्युतम् **(अत्यम्)** वेगवन्तं वाजिनम् **(न)** इव **(मर्जयन्त)** घर्षणादिना शोधयन्तु **(नरः)** **(निशिशानाः)** तीक्ष्णीकर्त्तारः **(अतिथिम्)** अतिथिमिव सेवनीयम् **(अस्य)** अग्नेः **(योनौ)** **(दीदाय)** प्रकाशय **(शोचिः)** दीप्तिमन्तम् **(आहुतस्य)** सर्वतः कृतप्रियस्य **(वृष्णः)** वर्षकस्य॥५॥

अन्वयः-हे नरो! ये निशिशानास्सन्तो भवन्तस्तं दोषा तमुषस्यत्यन्न यविष्ठमग्निं मर्जयन्तोऽस्याहुतस्य वृष्णोऽग्नेर्योनावतिथिमिव शोचिर्दीदायेत्॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये तीव्रैर्घर्षणादिभिरहर्निशं विद्युतमग्निं प्रकटयन्ति तेऽश्वेनेव सद्यः स्थानान्तरं गन्तुं शक्नुवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे **(नरः)** नायक मनुष्यो! जो **(निशिशानाः)** निरन्तर तीक्ष्णता पूर्वक कार्य करते हुए आप **(तम्)** उस विद्युत् अग्नि को **(दोषा)** रात्रि में **(तम्)** उसको **(उषसि)** दिन में **(अत्यम्)** घोड़े को **(न)** जैसे, वैसे **(यविष्ठम्)** अत्यन्त जवान के तुल्य **(अग्निम्)** विद्युत् अग्नि को **(मर्जयन्त)** घर्षण आदि से शुद्ध करें **(अस्य)** इस **(आहुतस्य)** अभीष्ट सिद्धि के लिये संग्रह किये **(वृष्णः)** वर्षा के हेतु अग्नि के **(योनौ)** कारण में **(अतिथिम्)** अतिथि के तुल्य सेवने योग्य **(शोचिः)** दीप्तियुक्त विद्युत् को **(दीदाय)** प्रकाशित **(इत्)** ही कीजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो तीव्र घर्षणादिकों से दिन-रात विद्युत् अग्नि को प्रकट करते हैं, वे जैसे घोड़े से, वैसे शीघ्र स्थानान्तर के जाने को समर्थ होते हैं॥५॥

पुनः सा विद्युत्कीदृशीत्याह॥

फिर वह विद्युत् अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सुसंदृक्ते स्वनीक प्रतीकं वियद्रुक्मो न रोचस उपाके।

दिवो न ते तन्यतुरेति शुष्मश्चित्रो न सूरः प्रतिचक्षि भानुम्॥६॥

सुऽसंदृक्। ते। सुऽअनीक। प्रतीकम्। वि। यत्। रुक्मः। न। रोचसे। उपाके। दिवः। न। ते। तन्यतुः। एति। शुष्मः। चित्रः। न। सूरः। प्रति। चक्षि। भानुम्॥६॥

पदार्थः- **(सुसन्दृक्)** सुष्ठु पश्यति यया सा **(ते)** तव **(स्वनीक)** शोभनमनीकं सैन्यं यस्य तत्सम्बुद्धौ **(प्रतीकम्)** विजयप्रतीतिकरम् **(वि)** **(यत्)** **(रुक्मः)** रोचमानः सूर्यः **(न)** इव **(रोचसे)** **(उपाके)** समीपे **(दिवः)** सूर्य्यस्य **(न)** इव **(ते)** तव **(तन्यतुः)** विद्युत् **(एति)** गच्छति **(शुष्मः)** बलयुक्तः **(चित्रः)** अद्भुतः **(नः)** **(सूरः)** सूर्य्यः **(प्रति)** **(चक्षि)** वदेयम् **(भानुम्)** प्रकाशयुक्तम्॥६॥

अन्वयः-हे स्वनीक! यस्य ते यत्प्रतीकं रुक्मो नेवास्ति ये उपाके वि रोचसे यस्य ते दिवो न सुसन्दृक् तन्यतुः प्रतीकमेति तस्य शुष्मश्चित्रः सूरो नेवाहं भानुं त्वा प्रति चक्षि॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! यदि भवान् विद्युद्विद्यां प्राप्नुयात्तर्हि सूर्य्यवत्सुसेनादिभिः प्रकाशितः सन् सर्वत्र विजयकीर्त्ती राजसु राजेत॥६॥

पदार्थः-हे **(स्वनीक)** सुन्दर सेना वाले सेनापते! जिस **(ते)** आपका **(यत्)** जो **(प्रतीकम्)** विजय का निश्चय कराने वाले **(रुक्मः)** प्रकाशमान सूर्य्य के **(न)** तुल्य है जो **(उपाके)** समीप में **(वि, रोचसे)** विशेष कर रुचिकारक होते हो। जिस **(ते)** तुम्हारा **(दिवः, न)** सूर्य्य के तुल्य **(सुसन्दृक्)** अच्छे प्रकार देखने का साधन **(तन्यतुः)** विद्युत् विजय प्रतितिकारक नियम को **(एति)** प्राप्त होता है उसका **(शुष्मः)** बलयुक्त **(चित्रः)** आश्चर्यस्वरूप **(सूरः)** सूर्य **(न)** जैसे, वैसे मैं **(भानुम्)** प्रकाशयुक्त आपके **(प्रति)** **(चक्षि)** कहूं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! यदि आप विद्युद् विद्या को जानें तो सूर्य्य के तुल्य सुन्दर सेनादिकों से प्रकाशित हुए सर्वत्र विजय, कीर्ति और राजाओं में सुशोभित होवें॥६॥

पुनर्मनुष्याः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यथा वः स्वाहाऽग्नये दाशेम परीळाभिर्घृतवद्भिश्च हव्यैः।

तेभिर्नो अग्ने अमितैर्महोभिः शतं पूर्भिरायसीभिर्नि पाहि॥७॥

यथा। वः। स्वाहा। अग्नये। दाशेम। परि। इळाभिः। घृतवत्ऽभिः। च। हव्यैः। तेभिः। नः। अग्ने। अमितैः। महःऽभिः। शतम्। पूःऽभिः। आयसीभिः। नि। पाहि॥७॥

पदार्थः- **(यथा)** **(वः)** युष्मभ्यम् **(स्वाहा)** सत्यया क्रियया **(अग्नये)** पावकाय **(दाशेम)** दद्याम **(परि)** सर्वतः **(इळाभिः)** अन्नैः **(घृतवद्भिः)** घृतादियुक्तैः **(च)** **(हव्यैः)** होतुमर्हैः **(तेभिः)** **(नः)** अस्मान् **(अग्ने)** अग्निरिव प्रकाशमान राजन् **(अमितैः)** असंख्यैः **(महोभिः)** महद्भिः कर्मभिः

पुरुषैर्वा **(शतम्)** **(पूर्भिः)** नगरीभिः **(आयसीभिः)** अयसा निर्मिताभिः **(नि)** नितराम् **(पाहि)** रक्ष॥७॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा वयं वः स्वाहा घृतवद्भिर्हव्यैरिळाभिश्चाग्नये शतं परि दाशेम तथाऽमितैर्महोभिस्तेभिरायसीभिः पूर्भिश्च सह वर्त्तमानान्नोऽस्मान् हे अग्ने! नि पाहि॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथर्त्विग्यजमाना घृतादिनाऽग्निं वर्धयन्ति तथैव राजा प्रजाः प्रजा राजानं च न्यायविनयादिभिर्वर्धयित्वाऽमितानि सुखानि प्राप्नुवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे विद्वान् लोगो! **(यथा)** जैसे हम लोग **(वः)** तुम्हारे अर्थ **(स्वाहा)** सत्यक्रिया से **(घृतवद्भिः)** घृतादि से युक्त **(हव्यैः)** होम के योग्य पदार्थों **(च)** और **(इळाभिः)** अन्नों के साथ **(अग्नये)** अग्नि के लिये **(शतम्)** सैकड़ों प्रकार के हविष्यों को **(परि, दाशेम)** सब ओर से देवें, वैसे **(अमितैः)** असंख्य **(महोभिः)** बड़े-बड़े कर्मों वा पुरुषों और **(तेभिः)** उन **(आयसीभिः)** लोहे से बनी **(पूर्भिः)** नगरियों के साथ वर्त्तमान **(नः)** हम लोगों को हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वी प्रकाशमान् राजन्! **(नि, पाहि)** निरन्तर रक्षा कीजिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे ऋत्विक् और यजमान लोग घृतादि से अग्नि को बढ़ाते हैं, वैसे ही राजा प्रजाओं को और प्रजाएँ राजा को न्याय विनयादि से बड़ा के अपरिमित सुखों को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनः कैः काभिः काः पालनीया इत्याह॥

फिर किन-किन से किनकी रक्षा करनी चाहिये॥

या वा॑ ते॒ सन्ति॑ दा॒शुषे॒ अधृ॑ष्टा॒ गिरो॒ वा॒ याभि॑र्नृ॒वती॑रुरु॒ष्याः।
ताभि॑र्नः सूनो सहसो॒ नि पा॑हि॒ स्मत्सू॒रीञ्ज॑रि॒तॄञ्जा॑तवेदः॥८॥

याः। वा॒। ते॒। सन्ति॑। दा॒शुषे॑। अधृ॑ष्टाः। गिरः॑। वा॒। याभिः॑। नृ॒ऽवतीः॑। उ॒रु॒ष्याः। ताभिः॑। न॒ः। सू॒नो॒ इति॑। स॒ह॒सः॒। नि। पा॒हि॒। स्मत्। सू॒रीन्। ज॒रि॒तॄन्। जा॒त॒ऽवे॒दः॒॥८॥

पदार्थः- **(याः)** **(वा)** **(ते)** तव **(सन्ति)** **(दाशुषे)** दात्रे **(अधृष्टाः)** अधर्षणीयाः **(गिरः)** सुशिक्षिता वाचः **(वा)** **(याभिः)** **(नृवतीः)** नरो विद्यन्ते यासु प्रजासु ताः **(उरुष्याः)** **(रक्षेः)** **(ताभिः)** **(नः)** अस्मान् **(सूनो)** अपत्य **(सहसः)** बलिष्ठस्य **(नि)** नितराम् **(पाहि)** रक्ष **(स्मत्)** एव **(सूरीन्)** विदुषः **(जरितॄन्)** सकलविद्यास्तावकान् **(जातवेदः)** ज्ञातप्रज्ञः॥८॥

अन्वयः-हे सहसस्सूनो! जातवेदो यास्तेऽधृष्टा गिरः सन्ति वा दाशुषे हितकर्यः सन्ति याभिर्वा त्वं नृवतीरुरुष्यास्ताभिर्नोऽस्मान् सूरीञ्जरितॄन् स्मन्नि पाहि॥८॥

भावार्थः-मनुष्या यावद्विद्याशिक्षाविनयान् गृहीत्वा**[ऽन्यान्]** न ग्राहयन्ति तावत् प्रजाः पालयितुं न शक्नुवन्ति यावद्धार्मिकाणां विदुषां राज्येऽधिकारा न स्युस्तावद्यथावत्प्रजापालनं दुर्घटम्॥८॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** पुत्र! **(जातवेदः)** प्रकट बुद्धिमानी को प्राप्त हुए **(याः)** जो **(ते)** आपकी **(अधृष्टाः)** न धमकाने योग्य **(गिरः)** सुशिक्षित वाणी **(सन्ति)** हैं **(वा)** अथवा

(दाशुषे) दाता पुरुष के लिये हितकारिणी हैं **(वा)** अथवा **(याभिः)** जिन वाणियों से आप **(नृवतीः)** उत्तम मनुष्यों वाली प्रजाओं की **(उरुष्याः)** रक्षा कीजिये **(ताभिः)** उनसे **(नः)** हम **(जरितॄन्)** समस्त विद्याओं की स्तुति प्रशंसा करने वाले **(सूरीन्)** विद्वानों की **(स्मत्)** ही **(नि, पाहि)** निरन्तर रक्षा कीजिये॥८॥

भावार्थः-मनुष्य लोग जब तक विद्या, शिक्षा, विनयों को ग्रहण कर अन्यों को नहीं ग्रहण कराते, तब तक प्रजों का पालन करने को नहीं समर्थ होते हैं, जब तक धर्मात्मा विद्वानों के राज्य में अधिकार न हों, तब तक यथावत् प्रजा का पालन होना दुर्घट है॥८॥

पुनर्मनुष्यैः कीदृशो राजा मन्तव्य इत्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा राजा मानना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

निर्यत्पूतेव स्वधितिः शुचिर्गात्स्वया कृपा तन्वा३ रोचमानः।
आ यो मात्रोरुशेन्यो जनिष्ट देवयज्याय सुक्रतुः पावकः॥९॥

निः। यत्। पूताऽइव। स्वऽधितिः। शुचिः। गात्। स्वया। कृपा। तन्वा। रोचमानः। आ। यः। मात्रोः। उशेन्यः। जनिष्ट। देवऽयज्याय। सुक्रतुः। पावकः॥९॥

पदार्थः- **(निः)** **(नितराम्)** **(यत्)** यः **(पूतेव)** पवित्रेव **(स्वधितिः)** वज्रः **(शुचिः)** पवित्रः **(गात्)** प्राप्नोति **(स्वया)** स्वकीयया **(कृपा)** कृपया **(तन्वा)** शरीरेण **(रोचमानः)** प्रकाशमानः **(आ)** **(यः)** **(मात्रोः)** जननिपालिकयोः **(उशेन्यः)** कमनीयः **(जनिष्ट)** जायते **(देवयज्याय)** देवानां समागमाय **(सुक्रतुः)** उत्तमप्रज्ञः **(पावकः)** पावक इव प्रकाशितयशाः॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यः पूतेव स्वधितिः शुचिर्नि गाद्यः स्वया कृपा तन्वा रोचमानो मात्रोरुशेन्यः पावक इव सुक्रतुर्देवयज्यायऽऽजनिष्ट स एवाऽत्र प्रशंसनीयो भवेत्॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! य वज्रवद्दृढं वह्निवत्पवित्रं कृपालुं दर्शनीयशरीरं विद्वांसं धर्मात्मानं विजानीयुस्तमेवेषां राजानं मन्यन्ताम्॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(पूतेव)** पवित्रता के तुल्य **(स्वधितिः)** वज्र **(शुचिः)** पवित्र पुरुष **(नि, गात्)** निरन्तर प्राप्त होता है **(यः)** जो **(स्वया)** अपनी **(कृपा)** कृपा से **(तन्वा)** शरीर करके **(रोचमानः)** प्रकाशमान **(मात्रोः)** जननी और धात्री में **(उशेन्यः)** कामना के योग्य **(पावकः)** अग्नि के तुल्य प्रकाशित यश वाले **(सुक्रतुः)** उत्तम प्रज्ञा वाले **(देवयज्याय)** बुद्धिमानों के समागम के लिये **(आ, जनिष्ट)** प्रकट होता है, वही इस जगत् में प्रशंसा के योग्य होवे॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो! जिसको वज्र के समान दृढ़ अग्नि के समान पवित्र, कृपालु, दर्शनीय शरीर, विद्वान् धर्मात्मा जानो उसी को इनमें से राजा मानो॥९॥

राजा च कीदृशो भवेदित्याह॥

राजा भी कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम।
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥१०॥४॥

एता। नः। अग्ने। सौभगा। दिदीहि। अपि। क्रतुम्। सुऽचेतसम्। वतेम। विश्वा। स्तोतृऽभ्यः। गृणते। च। सन्तु। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥१०॥

पदार्थः- **(एता)** एतानि **(नः)** अस्माकम् **(अग्ने)** पावकवद्विद्वन् राजन् **(सौभगा)** उत्तमैश्वर्याणां भावान् **(दिदीहि)** प्रकाशय **(अपि)** **(क्रतुम्)** प्रज्ञाम् **(प्रचेतसम्)** प्रकृष्टविद्यायुक्ताम् **(वतेम)** सम्भजेम। अत्र वर्णव्यत्ययेन नस्य स्थाने तः। **(विश्वा)** सर्वाणि **(स्तोतृभ्यः)** ऋत्विग्भ्यः **(गृणते)** स्तावकाय **(च)** **(सन्तु)** **(यूयम्)** **(पात)** रक्षत **(स्वस्तिभिः)** स्वास्थ्यकारिभिः सुखैः कर्मभिर्वा **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं न एता सौभगा दिदीहि येनाऽपि वयं सुचेतसं क्रतुं वतेम स्तोतृभ्यो विश्वा गृणते चैतानि सन्तु यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् सर्वेषां मनुष्याणां सौभाग्यानि वर्धयित्वा प्रज्ञां प्रापयतु, हे प्रजाजना! भवन्तो राजानं राज्यं च सदैव रक्षन्त्विति॥१०॥

अत्राऽग्निविद्वद्राजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति तृतीयं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वी विद्वन् राजन्! आप **(नः)** हमारे **(एता)** इन **(सौभगा)** उत्तम ऐश्वर्य्यों के भावों को **(दिदीहि)** प्रकाशित कीजिये जिससे **(अपि)** भी हम लोग **(सुचेतसम्)** प्रबल विद्यायुक्त **(क्रतुम्)** बुद्धि का **(वतेम)** सेवन करें **(स्तोतृभ्यः)** ऋत्विजों और **(विश्वा)** सब की **(गृणते)** स्तुति करने वाले के लिये ये **(च)** भी सब प्राप्त **(सन्तु)** हों **(यूयम्)** हम लोग **(स्वस्तिभिः)** स्वस्थता करने वाले सुखों वा कर्मों से **(नः)** हमारी **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! आप सब मनुष्यों के सौभाग्यों को बढ़ा के बुद्धि को प्राप्त करो। हे प्रजापुरुषो! आप लोग राजा और राज्य की सदैव रक्षा करो॥१०॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान्, राजा और प्रजा के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥१०॥

यह तृतीय सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ दशर्चस्य चतुर्थस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ४, ७ भुरिक् पङ्क्तिः। ६ स्वराट् पङ्क्तिः। ८, ९ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ५ निचृत्त्रिष्टुप्। १० विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः कीदृशैर्भवितव्यमित्याह॥

अब दश ऋचा वाले चतुर्थ सूक्त का प्रारम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को कैसा होना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

प्र वः शुक्राय भानवे भरध्वं हव्यं मतिं चाग्नये सुपूतम्।
यो दैव्यानि मानुषा जनूंष्यन्तर्विश्वानि विद्मना जिगाति॥१॥

प्र। वः। शुक्राय। भानवे। भरध्वम्। हव्यम्। मतिम्। च। अग्नये। सुऽपूतम्। यः। दैव्यानि। मानुषा। जनूंषि। अन्तः। विश्वानि। विद्मना। जिगाति॥१॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वः**) युष्माकम् (**शुक्राय**) शुद्धाय (**भानवे**) विद्याप्रकाशाय (**भरध्वम्**) धरत पालयत वा (**हव्यम्**) दातुमर्हम् (**मतिम्**) मननशीलां प्रज्ञाम् (**च**) (**अग्नये**) पावके होमाय (**सुपूतम्**) सुष्ठु पवित्रम् (**यः**) (**दैव्यानि**) दैवैः कृतानि कर्माणि (**मानुषा**) मनुष्यैर्निर्मितानि (**जनूंषि**) जन्मानि (**अन्तः**) मध्ये (**विश्वानि**) सर्वाणि (**विद्मना**) विज्ञातव्यानि (**जिगाति**) प्रशंसति॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वः शुक्राय भानवेऽग्नये सुपूतं हव्यमिव मतिं दैव्यानि मानुषा जनूंषि चाऽन्तर्विश्वानि विद्मना जिगाति तस्मा उत्तमानि सुखानि यूयं प्र भरध्वम्॥१॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यो युष्मदर्थमुत्तमानि द्रव्याणि सर्वेषां हितानि जन्मानि विज्ञानानि चोपदेष्टुं प्रवर्त्तते तं यूयं सततं रक्षत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**वः**) तुम्हारे (**शुक्राय**) शुद्ध (**भानवे**) विद्याप्रकाश के लिये तथा (**अग्नये**) अग्नि में होम करने के लिये (**सुपूतम्**) सुन्दर पवित्र (**हव्यम्**) होमने योग्य पदार्थ के तुल्य (**मतिम्**) विचारशील बुद्धि को वा (**दैव्यानि**) विद्वानों के किये (**मानुषानि**) मनुष्यों से सम्पादित (**जनूंषि**) जन्मों वा कर्मों को (**च**) और (**विश्वानि**) सब (**अन्तः**) अन्तर्गत (**विद्मना**) जानने योग्य वस्तुओं को (**जिगाति**) प्रशंसा करता है, उसके लिये तुम लोग उत्तम सुखों का (**प्र भरध्वम्**) पालन वा धारण करो॥१॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो तुम्हारे लिये उत्तम द्रव्यों तथा सब के हितकारी जन्मों और विज्ञानों का उपदेश करने को प्रवृत्त होता है, उसकी तुम लोग निरन्तर रक्षा करो॥१॥

मनुष्यैर्युवावस्थायामेव विवाहः कार्य्य इत्याह॥

मनुष्यों को युवावस्था में ही विवाह करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स गृत्सो अग्निस्तरुणश्चिदस्तु यतो यविष्ठो अजनिष्ट मातुः।
सं यो वना युवते शुचिदन् भूरि चिदन्ना समिदत्ति सद्यः॥२॥

सः। गृत्सः। अग्निः। तरुणः। चित्। अस्तु। यतः। यविष्ठः। अजनिष्ट। मातुः। सम्। यः। वना।

यु॒वते॑। शुचि॑ऽदन्। भूरि॑। चि॒त्। अन्ना॑। सम्। इत्। अ॒त्ति। स॒द्यः॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) (**गृत्सः**) मेधावी (**अग्निः**) पावक इव तीव्रबुद्धिः (**तरुणः**) युवा (**चित्**) अपि (**अस्तु**) (**यतः**) (**यविष्ठः**) अतिशयेन युवा (**अजनिष्ट**) जायते (**मातुः**) जनन्याः सकाशात् (**सम्**) (**यः**) (**वना**) वनानि किरणान् सूर्य इव (**युवते**) युनक्ति (**शुचिदन्**) पवित्रदन्तः (**भूरि**) बहु (**चित्**) अपि (**अन्ना**) अन्नानि (**सम्**) (**इत्**) (**अत्ति**) भक्षयति (**सद्यः**)॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मातुरजनिष्ट सोऽग्निरिव कुमारः संस्तरुणश्चिदस्तु यतः स गृत्सो यविष्ठः स्यात् सद्यश्चिदन्नेत् समत्ति शुचिदन् भूरि वना सूर्य इव तेजांसि सं युवते॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा स्वपुत्राः पूर्णयुवावस्था ब्रह्मचर्ये संस्थाप्य विद्यायुक्ता बलिष्ठा अभिरूपा भोक्तारो धार्मिका दीर्घायुषो धीमन्तो भवेयुस्तथाऽनुतिष्ठत॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**मातुः**) अपनी माता से (**अजनिष्ट**) उत्पन्न होता (**सः**) वह (**अग्नि**) पावक के तुल्य तेज बुद्धि वाला बालक (**तरुणः**) जवान (**चित्**) ही (**अस्तु**) हो (**यतः**) जिससे वह (**गृत्सः**) बुद्धिमान् (**यविष्ठः**) अत्यन्त जवान हो (**सद्यश्चित्**) शीघ्र ही (**अन्ना**) अन्नों का (**इत्**) ही (**सम्, अत्ति**) सम्यक् भोजन करता है (**शुचिदन्**) पवित्र दाँतों वाला (**भूरि**) बहुत (**वना**) जैसे सूर्य किरणों को संयुक्त करता, वैसे वनों [=तेजों] को (**सम्, युवते**) संयुक्त करे॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे अपने पुत्र पूर्ण युवावस्थावाले ब्रह्मचर्य्य में सम्यक् स्थापन कर विद्यायुक्त, अति बलवान्, सुरूपवान् सुख भोगने वाले, धार्मिक दीर्घ अवस्था वाले, बुद्धिमान् होवें, वैसा अनुष्ठान करो॥ २॥

पुनर्विद्वांसं कीदृशं सभ्यमध्यक्षं च कुर्य्युरित्याह॥

फिर कैसे विद्वान् को सभासद् और अध्यक्ष करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒स्य दे॒वस्य॑ सं॒सद्यनी॑के॒ यं मर्ता॑सः श्ये॒तं ज॑गृ॒भ्रे।
नि यो गृभं॒ पौरु॑षेयीमु॒वोच॑ दु॒रोक॑म॒ग्निरा॒यवे॑ शुशोच॥ ३॥

अ॒स्य। दे॒वस्य॑। स॒म्ऽसदि॑। अनी॑के। यम्। मर्ता॑सः। श्ये॒तम्। ज॒गृ॒भ्रे। नि। यः। गृभ॑म्। पौरु॑षेयीम्। उ॒वोच॑। दुः॒ऽओक॑म्। अ॒ग्निः। आ॒यवे॑। शु॒शो॒च॥ ३॥

पदार्थः-(**अस्य**) (**देवस्य**) विदुषः (**संसदि**) सभायाम् (**अनीके**) सैन्ये (**यम्**) (**मर्त्तासः**) मनुष्याः (**श्येतम्**) श्वेतं शुभ्रम् (**जगृभ्रे**) गृह्णन्ति (**नि**) (**यः**) (**गृभम्**) गृहीतुम् (**पौरुषेयीम्**) पौरुषेयस्य रीतिम् (**उवोच**) वदति (**दुरोकम्**) शत्रुभिर्दुःसेवम् (**अग्निः**) पावक इव (**आयवे**) जीवनाय (**शुशोच**) शोचति॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः पौरुषेयीं नि गृभमुवोचाग्निरिवाऽऽयवे शुशोच यं श्येतं दुरोकमस्य देवस्य संसद्यनीके च मर्त्तासो जगृभ्रे तमेव सभ्यं सेनापतिं च कुरुत॥ ३॥

भावार्थः-विद्वद्भिः सुपरीक्ष्य विद्वांस एव सभ्या अध्यक्षाश्च कर्त्तव्याः ये वीर्य्यवन्तो दीर्घायुषो भवन्ति त एव राज्यं सुभूषयितुमर्हन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(पौरुषेयीम्)** पुरुषसम्बन्धी कार्य्यों की रीति का **(नि गृभम्)** निरन्तर ग्रहण करने को **(उवोच)** कहता है **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य तेजस्वी **(आयवे)** जीवन के लिये **(शुशोच)** शोच करता है **(यम्)** जिस **(श्येतम्)** श्वेत **(दुरोकम्)** शत्रुओं से दुःख के साथ सेवने योग्य को **(अस्य)** इस **(देवस्य)** विद्वान् की **(संसदि)** सभा वा **(अनीके)** सेना में **(मर्त्तासः)** मनुष्य **(जगृभ्रे)** ग्रहण करते हैं, उसी को सभापति सेनापति करो॥३॥

भावार्थः-विद्वानों को चाहिये कि अच्छे प्रकार परीक्षा कर सभासदों और अध्यक्षों को नियत करें। जो बलवान् और अधिक अवस्था वाले हों, वे ही राज्य को अच्छे प्रकार भूषित कर सकते हैं॥३॥

को महान् विश्वसनीयो विद्वान् भवेदित्याह॥

कौन विद्वान् अधिक कर विश्वास के योग्य हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं कविरकविषु प्रचेता मर्तेष्वग्निरमृतो नि धायि।
स मा नो अत्र जुहुरः सहस्वः सदा त्वे सुमनसः स्याम॥४॥

अयम्। कविः। अकविषु। प्रऽचेताः। मर्तेषु। अग्निः। अमृतः। नि। धायि। सः। मा। नः। अत्र। जुहुरः। सहस्वः। सदा। त्वे इति। सुऽमनसः। स्याम॥४॥

पदार्थः-**(अयम्)** **(कविः)** क्रान्तप्रज्ञो विद्वान् **(अकविषु)** अक्रान्तप्रज्ञेष्वविद्वत्सु **(प्रचेताः)** प्रज्ञापयिता **(मर्त्तेषु)** मनुष्येषु **(अग्निः)** विद्युदिव **(अमृतः)** स्वस्वरूपेण नाशरहितः **(नि)** **(धायि)** निधीयते **(सः)** **(मा)** निषेधे **(नः)** अस्मान् **(अत्र)** अस्मिन् व्यवहारे **(जुहुरः)** हिंस्यात् **(सहस्वः)** प्रशस्तबलयुक्त **(सदा)** **(त्वे)** त्वयि **(सुमनसः)** **(स्याम)**॥४॥

अन्वयः-हे सहस्वो! योऽयं भवानकविषु कविर्मर्त्तेषु प्रचेता अग्निरिवाऽमृतो नि धायि स त्वमत्र नो मा जुहुरो यतो वयं त्वे सुमनसः सदा स्याम॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! योऽयं दीर्घब्रह्मचर्येण विद्वद्भ्यो विद्या गृह्णाति स एव विद्वान् प्रशस्तधीर्मनुष्येषु महान् कल्याणकारकः स्यात्तं प्रति सर्वे मनुष्याः सुहृद्भावेन यदि वर्त्तेरंस्तर्ह्यविद्वांसोऽपि धीमन्तो भवेयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(सहस्वः)** प्रशस्त बलवाले! जो **(अयम्)** प्रत्यक्ष आप **(अकविषु)** न्यून बुद्धि वाले अविद्वानों में **(कविः)** तीव्र बुद्धियुक्त विद्वान् **(मर्त्तेषु)** मनुष्यों में **(प्रचेताः)** चेत कराने वाले **(अग्निः)** विद्युत् अग्नि के तुल्य **(अमृतः)** अपने स्वरूप से नाशरहित पुरुष को **(नि, धायि)** धारण करते हैं **(सः)** सो आप **(अत्र)** इस व्यवहार में **(नः)** हमको **(मा)** मत **(जुहुरः)** मारिये जिससे हम लोग **(त्वे)** आप में **(सुमनसः)** सुन्दर प्रसन्न चित्त वाले **(सदा)** सदा **(स्याम)** होवें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो यह दीर्घ ब्रह्मचर्य के साथ विद्वानों से विद्या को ग्रहण करता है, वही विद्वान् प्रशंसित बुद्धि वाला, मनुष्यों में महान् कल्याणकारी हो उसके प्रति सब मनुष्य यदि मित्रता से वर्तें तो अविद्वान् भी बुद्धिमान् होवें॥४॥

को विद्वान् किंवत्करोतीत्याह॥

कौन विद्वान् किसके तुल्य करता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ यो योनिं देवकृतं ससाद क्रत्वा ह्यग्निरमृताँ अतारीत्।
तमोषधीश्च वनिनश्च गर्भं भूमिश्च विश्वधायसं बिभर्ति॥५॥५॥

आ। यः। योनिम्। देवऽकृतम्। ससाद। क्रत्वा। हि। अग्निः। अमृतान्। अतारीत्। तम्। ओषधीः। च। वनिनः। च। गर्भम्। भूमिः। च। विश्वऽधायसम्। बिभर्ति॥५॥

पदार्थः-(**आ**) (**यः**) (**योनिम्**) गृहम् देवकृतम् विद्वद्भिर्विद्याध्ययनाय निर्मितम् (**ससाद**) निवसेत् (**क्रत्वा**) प्रज्ञया (**हि**) यतः (**अग्निः**) पावक इव (**अमृतान्**) नाशरहिताञ्जीवान् पदार्थान् वा (**अतारीत्**) तारयति (**तम्**) (**ओषधीः**) सोमाद्याः (**च**) (**वनिनः**) वनानि बहवो किरणा विद्यन्ते येषु तान् (**च**) (**गर्भम्**) (**भूमिः**) पृथिवी च (**विश्वधायसम्**) यो विश्वाः समग्रा विद्या दधाति ताम् (**बिभर्ति**)॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽग्निरिव देवकृतं योनिमा ससाद स हि क्रत्वाऽमृतानतारीद्यश्च भूमिरिव तं विश्वधायसं गर्भमोषधीश्च वनिनश्च बिभर्ति स एव पूज्यतमो भवति॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽग्निः समिद्भिर्हविर्भिश्च वर्धते तथैव ये विद्यालयं गत्वाऽऽचार्य्यं प्रसाद्य ब्रह्मचर्येण विद्यामभ्यस्यन्ति त ओषधीवदविद्यारोगनिवारकाः सूर्यवद्धर्मप्रकाशका भूमिवद्विश्वम्भरा भवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**अग्निः**) अग्नि के तुल्य तेजस्वी (**देवकृतम्**) विद्वानों ने विद्या पढ़ने के अर्थ बनाये (**योनिम्**) घर में (**आ, ससाद**) अच्छे प्रकार निवास करे वह (**हि**) ही (**क्रत्वा**) बुद्धि से (**अमृतान्**) नाशरहित जीवों वा पदार्थों को (**अतारीत्**) तारता है (**च**) और जो (**भूमिः**) पृथिवी के तुल्य सहनशील पुरुष (**तम्**) उस (**विश्वधायसम्**) समस्त विद्याओं के धारण करने वाले (**गर्भम्**) उपदेशक (**च**) और (**ओषधिः**) सोमादि ओषधियों (**च**) और (**वनिनः**) बहुत किरणों वाले अग्नियों को (**च**) भी (**बिभर्ति**) धारण करता है, वही अतिपूज्य होता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि समिधा और होमने योग्य पदार्थों से बढ़ता है, वैसे ही जो पाठशाला में जा आचार्य को प्रसन्न कर ब्रह्मचर्य से विद्या का अभ्यास करते हैं, वे ओषधियों के तुल्य अविद्यारूप रोग के निवारक, सूर्य के तुल्य धर्म के प्रकाशक और पृथिवी के समान सब के धारण वा पोषणकर्त्ता होते हैं॥५॥

मनुष्यैः कदाचित्कृतघ्नैर्न भवितव्यमित्याह॥

मनुष्यों को कभी कृतघ्न नहीं होना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ईशे ह्यग्निरमृतस्य भूरेरीशे रायः सुवीर्यस्य दातोः।
मा त्वा वयं सहसावन्नवीरा माप्सवः परि षदाम मादुवः॥६॥

ईशे। हि। अग्निः। अमृतस्य। भूरेः। ईशे। रायः। सुऽवीर्यस्य। दातोः। मा। त्वा। वयम्।

सहसाऽवन्। अवीराः। मा। अप्सवः। परि। सदाम। मा। अदुवः॥६॥

पदार्थः-(**ईशे**) ईष्टे ज्ञातुमिच्छति (**हि**) खलु (**अग्निः**) पावक इव (**अमृतस्य**) परमात्मनः। **अधीगर्थदयेशां कर्मणी**ति कर्मणि षष्ठी। (अष्टा०२.३.५२) (**भूरेः**) बहुविधस्य (**ईशे**) (**रायः**) धनस्य (**सुवीर्यस्य**) सुष्ठु वीर्यं पराक्रमो यस्मात्तस्य (**दातोः**) दातुम् (**मा**) (**त्वा**) त्वाम् (**वयम्**) (**सहसावन्**) बहुबलयुक्त (**अवीराः**) वीरतारहिताः (**मा**) (**अप्सवः**) कुरूपाः (**परि**) (**सदाम**) प्राप्नुयाम (**मा**) (**अदुवः**) अपरिचारकाः॥६॥

अन्वयः-हे सहसावन् विद्वन्! योऽग्निरिव भवानमृतस्येशे भूरेः सुवीर्यस्य रायो दातोरीशे तं हि त्वाऽवीराः सन्तो वयं मा परि षदामाऽप्सवो भूत्वा त्वां मा परि षदामाऽदुवो भूत्वा मा परि षदाम॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽमृतविज्ञानं पुष्कलां विविधसुखप्रियां श्रियं युष्मभ्यं प्रयच्छति तत्सन्निधौ वीरतां सुरूपतां सेवां च त्यक्त्वा निष्ठुराः कृतघ्ना मा भवत॥६॥

पदार्थः-हे (**सहसावन्**) बहुत बलयुक्त विद्वान् पुरुष! जो (**अग्निः**) अग्नि के समान तेजस्वी आप (**अमृतस्य**) नाशरहित नित्य परमात्मा को जानने को (**ईशे**) समर्थ वा इच्छा करते हो (**भूरेः**) बहुत प्रकार के (**सुवीर्यस्य**) सुन्दर पराक्रम के निमित्त (**रायः**) धन के (**दातोः**) देने को (**ईशे**) समर्थ हो (**तम्**) उन (**हि**) ही (**त्वा**) आपको (**अवीराः**) वीरता रहित हुए (**वयम्**) हम लोग [(**मा**)] (**परि, सदाम**) सब ओर से प्राप्त [**न**] हों (**अप्सवः**) कुरूप होकर आपको (**मा**) मत प्राप्त हों (**अदुवः**) न सेवक होकर (**मा**) नहीं प्राप्त हों॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अमृतरूप ईश्वर का विज्ञान, विविध सुखों से तृप्त करने वाली परिपूर्ण लक्ष्मी को तुम्हारे लिये देता है, उसके समीप वीरता, सुन्दरपन और सेवा को छोड़ के निठुर, कृतघ्नी मत होओ॥६॥

किं धनं स्वकीयं परकीयञ्चास्तीत्याह॥

अपना कौन और पराया धन कौन है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

परिषद्यं ह्यरणस्य रेक्णो नित्यस्य रायः पतयः स्याम।
न शेषो अग्ने अन्यजातमस्त्यचेतानस्य मा पथो वि दुक्षः॥७॥

परिऽसद्यम्। हि। अरणस्य। रेक्णः। नित्यस्य। रायः। पतयः। स्याम। न। शेषः। अग्ने। अन्यऽजातम्। अस्ति। अचेतानस्य। मा। पथः। वि। दुक्षः॥७॥

पदार्थः-(**परिषद्यम्**) परिषदि सभायां भवम् (**हि**) (**अरणस्य**) अविद्यमानो रणः स-ग्रामो यस्मिंस्तस्य (**रेक्णः**) धनम्। **रेक्ण इति धननाम।** (निघं०२.१०) (**नित्यस्य**) स्थिरस्य (**रायः**) धनस्य (**पतयः**) स्वामिनः (**स्याम**) (**न**) (**शेषः**) (**अग्ने**) विद्वन् (**अन्यजातम्**) अन्येनाऽन्यस्माद्वा समुत्पन्नम् (**अस्ति**) (**अचेतानस्य**) चेतनतारहितस्य मूर्खस्य (**मा**) (**पथः**) मार्गान् (**वि**) (**दुक्षः**) दूषयेः॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमचेतानस्य पथो मा विदुक्षः परिषद्यमन्यजातं हि रेक्णोऽस्य शेषो वा स्वकीयो नास्तीति विजानीहि त्वत्सङ्गेन सहायेन वयमरणस्य नित्यस्य रायः पतयः स्याम॥७॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यद्धर्मयुक्तेन पुरुषार्थेन धनं प्राप्नुयात्तदेव स्वकीयं मन्यध्वं नाऽन्यायेनोपार्जितं ज्ञानिनां मार्गं पाखण्डोपदेशेन मा विदूषयत यथा धर्म्येण पुरुषार्थेन धनं लभ्येत तथैव प्रयतध्वम्॥७॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** विद्वन्! आप **(अचेतानस्य)** चेतनतारहित मूर्ख के **(पथ:)** मार्गों को **(मा)** मत **(विदुक्ष:)** दूषित कर **(परिषद्यम्)** सभा में होने वाले **(अन्यजातम्)** अन्य से उत्पन्न **(हि)** ही **(रेक्ण:)** धन को इस प्रकार जाने कि इस की **(शेष:)** विशेषता वा अपने आत्मा की ओर से शुद्ध विचार कुछ **(न, अस्ति)** नहीं है, **[**ऐसा जानो**]**, आपके सङ्ग वा सहाय से हम लोग **(अरणस्य)** संग्रामरहित **(नित्यस्य)** स्थिर **(राय:)** धन के **(पतय:)** स्वामी **(स्याम)** होवें॥७॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! धर्मयुक्त पुरुषार्थ से जिस धन को प्राप्त हो उसी को अपना धन मानो, किन्तु अन्याय से उपार्जित धन को अपना मत मानो। ज्ञानियों के मार्ग को पाखण्ड के उपदेश से मत दूषित करो, जैसे धर्मयुक्त पुरुषार्थ से धन प्राप्त हो, वैसे ही प्रयत्न करो॥७॥

क: पुत्रो मन्तुं योग्योऽस्तीत्याह॥

कौन पुत्र मानने के योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नहि ग्रभायारण: सुशेवोऽन्योदर्यो मनसा मन्तवा उ।
अधा चिदोक: पुनरित्स एत्या नो वाज्यभीषाळेतु नव्य:॥८॥

नहि। ग्रभाय। अरण:। सुऽशेव:। अन्यऽउदर्य:। मनसा। मन्तवै। ऊँ इति। अध। चित्। ओक:। पुन:। इत्। स:। एति। आ। न:। वाजी। अभीषाट्। एतु। नव्य:॥८॥

पदार्थ:-**(नहि)** निषेधे **(ग्रभाय)** ग्रहणाय **(अरण:)** अरममाण: **(सुशेव:)** सुसुख: **(अन्योदर्य्य:)** अन्योदराज्जात: **(मनसा)** अन्त:करणेन **(मन्तवै)** मन्तुं योग्य: **(उ)** **(अध)** अथ। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घ:। (अष्टा० ६.३.१३४) **(चित्)** अपि **(ओक:)** गृहम् **(पुन:)** **(इत्)** एव **(स:)** **(एति)** **(आ)** **(न:)** अस्मान् **(वाजी)** विज्ञानवान् **(अभीषाट्)** योऽभिसहते स: **(एतु)** प्राप्नोतु **(नव्य:)** नवेषु भव:॥८॥

अन्वय:-हे मनुष्य! योऽरण: सुशेवोऽन्योदर्य्यो भवेत्स मनसा ग्रभाय नहि मन्तवै चिदु पुनरित् स ओको न ह्येत्यध यो नव्योऽभिषाड् वाजी नोऽस्माना एतु॥८॥

भावार्थ:-हे मनुष्या:! पुत्रत्वायाऽन्यगोत्रजोऽन्यस्माज्जातो न गृहीतव्य: स च गृहादिदायभागी न भवेत्किन्तु य औरसो स्वगोत्राद् गृहीतो वा भवेत्स एव पुत्र: पुत्रप्रतिनिधिर्वा भवेत्॥८॥

पदार्थ:-हे मनुष्य! जो **(अरुण:)** रमण न करता हुआ **(सुशेव:)** सुन्दर सुख से युक्त **(अन्योदर्य्य:)** दूसरे के उदर से उत्पन्न हुआ हो **(स:)** वह **(मनसा)** अन्त:करण से **(ग्रभाय)** ग्रहण के लिये **(नहि)** नहीं **(मन्तवै)** मानने योग्य है **(चित्, उ, पुन:, इत्)** और भी फिर ही वह **(ओक:)** घर को नहीं **(एति)** प्राप्त होता **(अध)** इस के अनन्तर जो **(नव्य:)** नवीन **(अभीषाट्)** अच्छा सहनशील **(वाजी)** विज्ञानवाला **(न:)** हमको **(आ, एतु)** प्राप्त हो॥८॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! अन्य गोत्र में अन्य पुरुष से उत्पन्न हुए बालक को पुत्र करने के लिये

नहीं ग्रहण करना चाहिये क्योंकि वह घर आदि का दायभागी नहीं हो सकता, किन्तु जो अपने शरीर से उत्पन्न वा अपने गोत्र से लिया हुआ हो, वही पुत्र वा पुत्र का प्रतिनिधि होवे॥८॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वमग्ने वनुष्यतो नि पाहि त्वमु नः सहसावन्नवद्यात्।
सन्त्वाध्वस्मन्वदभ्येतु पाथः सं रयिः स्पृहयाय्यः सहस्री॥९॥

त्वम्। अग्ने। वनुष्यतः। नि। पाहि। त्वम्। उं इति। नः। सहसाऽवन्। अवद्यात्। सम्। त्वा। ध्वस्मन्ऽवत्। अभि। एतु। पाथः। सम्। रयिः। स्पृहयाय्यः। सहस्री॥९॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् राजन् सज्जन (**वनुष्यतः**) याचमानान् (**नि**) नित्यम् (**पाहि**) (**त्वम्**) (**त्वम्**) (**उ**) (**नः**) अस्मान् (**सहसावन्**) बहुबलेन युक्त (**अवद्यात्**) अधर्माचरणान्निन्द्यात् (**सम्**) (**त्वा**) त्वाम् (**ध्वस्मन्वत्**) ध्वस्तदोषविकारम् (**अभि**) (**एतु**) सर्वतः प्राप्नोतु (**पाथः**) अन्नम् **[सम्]** (**रयिः**) धनम् (**स्पृहयाय्यः**) स्पृहणीयः (**सहस्री**) असंख्यः॥९॥

अन्वयः-हे सहसावन्नग्ने! त्वं वनुष्यतो नि पाहि त्वमु अवद्यान्नो नि पाहि यतस्त्वा ध्वस्मन्वत् पाथः समभ्येतु सहस्री स्पृहयाय्यो रयिश्च समभ्येतु॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि त्वं त्वत्तो रक्षणमिच्छतः प्रजाजनान् सततं रक्षेस्त्वं च निन्द्यादधर्माचरणात् पृथग्वर्त्तेत तर्ह्यतुले धनधान्ये त्वां प्राप्नुयाताम्॥९॥

पदार्थः-हे (**सहसावन्**) बहुत बल से युक्त (**अग्ने**) के तुल्य तेजस्वि विद्वन्! (**त्वम्**) आप (**वनुष्यतः**) मांगने वालों की (**नि, पाहि**) निरन्तर रक्षा कीजिये (**उ**) और (**त्वम्**) आप (**अवद्यात्**) निन्दित अधर्माचरण से (**नः**) हमारी निरन्तर रक्षा कीजिये जिससे (**त्वा**) आपको (**ध्वस्मन्वत्**) दोष और विकार जिसके नष्ट हो गये उस (**पाथः**) अन्न को (**सम्, अभि, एतु**) सब ओर से प्राप्त हूजिये (**सहस्री**) असंख्य (**स्पृहयाय्यः**) चाहने योग्य (**रयिः**) धन भी (**सम्**) सम्यक् प्राप्त होवे॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि आप से रक्षा चाहते हुए प्रजाजनों की निरन्तर रक्षा करें और आप स्वयं अधर्माचरण से पृथक् वर्त्तें तो आप को अतुल धनधान्य प्राप्त होवें॥९॥

पुना राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्युच्यते।

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम।
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥१०॥६॥

एता। नः। अग्ने। सौभगा। दिदीहि। अपि। क्रतुम्। सुऽचेतसम्। वतेम। विश्वा। स्तोतृऽभ्यः। गृणते। च। सन्तु। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः सदा। नः॥१०॥

पदार्थः-(**एता**) एतानि (**नः**) अस्मभ्यम् (**अग्ने**) पावक इव विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमान

(सौभगा) सुभगस्योत्तमैश्वर्यस्य भावो येषु तानि **(दिदीहि)** सर्वतः प्रकाशय **(अपि)** **(क्रतुम्)** प्रज्ञाम् **(सुचेतसम्)** सुष्ठु विज्ञानयुक्ताम् **(वतेम)** सम्भजेम **(विश्वा)** सर्वाणि **(स्तोतृभ्यः)** ऋत्विग्भ्यः **(गृणते)** यजमानाय **(च)** **(सन्तु)** **(यूयम्)** राजभृत्याः **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** स्वास्थ्यकरणाभिः क्रियाभिः **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमेता सौभगा न दिदीह्यपि तु सुचेतसं क्रतुं दिदीहि स्तोतृभ्यो गृणते च सौभगा सन्तु यतो यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात तस्माद्वयं पूर्वोक्तां प्रज्ञां विश्वा धनानि च वतेम॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवान् सर्वेभ्यो ब्रह्मचर्येण विद्यादानं दापयेद् ऋत्विजो यजमानं च सर्वदा रक्षेस्तर्हि स्वास्थ्येन पूर्णं राज्यैश्वर्यं प्राप्नुयादिति॥१०॥

अत्राऽग्निविद्वद्राजवीरप्रजारक्षणादिकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्थं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वि राजन्! आप **(एता)** इन **(सौभगा)** उत्तम ऐश्वर्य्य वाले पदार्थों को **(नः)** हमारे लिये **(दिदीहि)** प्रकाशित कीजिये **(अपि)** और तो **(सुचेतसम्)** सुन्दर ज्ञानयुक्त **(क्रतुम्)** बुद्धि को प्रकाशित कीजिये **(अपि)** और तो **(सुचेतसम्)** सुन्दर ज्ञानयुक्त **(क्रतुम्)** बुद्धि को प्रकाशित कीजिये **(स्तोतृभ्यः)** ऋत्विजों के लिये **(च)** तथा **(गृणते)** यजमान के लिये उत्तम ऐश्वर्य्य वाले **(सन्तु)** हों जिससे **(यूयम्)** तुम लोग **(स्वस्तिभिः)** स्वस्थता करने वाली क्रियाओं से **(नः)** हमारी **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो इसलिये हम लोग पूर्वोक्त बुद्धि और **(विश्वा)** धनों का **(वतेम)** सेवन करें॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि आप सब मनुष्यों को ब्रह्मचर्य्य के साथ विद्यादान दिलावें, ऋत्विजों और यजमानों को सर्वदा रक्षा करें तो स्वस्थता से पूर्ण राज्य के ऐश्वर्य्य को प्राप्त हों॥१०॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान्, राजा, वीर और प्रजा की रक्षा आदि कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह चौथा सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्य पञ्चमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। वैश्वानरो देवता। १, ४ विराट्त्रिष्टुप् २, ३, ८, ९ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५, ७ स्वराट् पङ्क्तिः। ६ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ कस्य प्रशंसोपासने कर्त्तव्ये इत्याह॥

अब नौ ऋचावाले पांचवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में किसकी प्रशंसा और उपासना करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

प्राग्नये॑ त॒वसे॑ भरध्वं॒ गिरं॑ दि॒वो अ॑र॒तये॑ पृथि॒व्याः।
यो विश्वे॑षाम॒मृता॑नामु॒पस्थे॑ वैश्वान॒रो वा॑वृ॒धे जा॑गृ॒वद्भिः॑॥ १॥

प्र। अ॒ग्नये॑। त॒वसे॑। भ॒र॒ध्व॒म्। गिर॑म्। दि॒वः। अ॒र॒तये॑। पृ॒थि॒व्याः। यः। विश्वे॑षाम्। अ॒मृता॑नाम्। उ॒पऽस्थे॑। वै॒श्वा॒न॒रः। व॒वृ॒धे। जा॒गृ॒वत्ऽभिः॑॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**अग्नये**) परमात्मने (**तवसे**) बलिष्ठाय (**भरध्वम्**) (**गिरम्**) योगसंस्कारयुक्तां वाचम् (**दिवः**) सूर्यस्य (**अरतये**) प्राप्ताय (**पृथिव्याः**) भूमेर्मध्ये (**यः**) (**विश्वेषाम्**) सर्वेषाम् (**अमृतानाम्**) नाशरहितानां जीवानां प्रकृत्यादीनां वा (**उपस्थे**) समीपे (**वैश्वानरः**) विश्वेषु नरेषु राजमानः (**वावृधे**) वर्धयति (**जागृवद्भिः**) अविद्यानिद्रात उत्थातृभिः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वैश्वानरो जगदीश्वरे दिवः पृथिव्या विश्वेषाममृतानामुपस्थे वावृधे जागृवद्भिरेव गम्यते तस्मै तवसेऽरतयेऽग्नये गिरं प्र भरध्वम्॥ १॥

भावार्थः-यदि सर्वे मनुष्याः सर्वेषां धर्त्तारं योगिभिर्गम्यं परमात्मानमुपासीरंस्तर्हि ते सर्वतो वर्धन्ते॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**यः**) जो (**वैश्वानरः**) सम्पूर्ण मनुष्यों में प्रकाशमान जगदीश्वर (**दिवः**) सूर्य वा (**पृथिव्याः**) पृथिवी के बीच (**विश्वेषाम्**) सब (**अमृतानाम्**) नाशरहित जीवात्माओं वा प्रकृति आदि के (**उपस्थे**) समीप में (**वावृधे**) बढ़ाता है (**जागृवद्भिः**) अविद्या निद्रा से उठने वाले ही उसको प्राप्त होते उस (**तवसे**) बलिष्ठ (**अरतये**) व्याप्त (**अग्नये**) परमात्मा के लिये (**गिरम्**) योगसंस्कार से युक्त वाणी को (**प्र, भरध्वम्**) धारण करो अर्थात् स्तुति प्रार्थना करो॥ १॥

भावार्थः-यदि सब मनुष्य सब के धर्त्ता योगियों को प्राप्त होने योग्य परमेश्वर की उपासना करें तो वे सब ओर से वृद्धि को प्राप्त हों॥ १॥

पुनः स कीदृश इत्याह॥

फिर वह कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पृ॒ष्टो दि॒वि धाय्य॒ग्निः पृ॑थि॒व्यां ने॒ता सिन्धू॑नां वृ॒ष॒भः स्तिया॑नाम्।
स मानु॑षीर॒भि वि॒शो॒ वि भा॑ति वैश्वान॒रो वा॑वृधा॒नो वरे॑ण॥ २॥

पृ॒ष्टः। दि॒वि। धायि॑। अ॒ग्निः। पृ॒थि॒व्याम्। ने॒ता। सिन्धू॑नाम्। वृ॒ष॒भः। स्तिया॑नाम्। सः। मानु॑षीः। अ॒भि। विशः॑। वि। भा॒ति। वै॒श्वा॒न॒रः। व॒वृ॒धा॒नः। वरे॑ण॥ २॥

पदार्थः-(**पृष्ठः**) प्रष्टव्यः (**दिवि**) सूर्ये (**धायि**) ध्रियते (**अग्निः**) पावक इव स्वप्रकाश ईश्वरः (**पृथिव्याम्**) अन्तरिक्षे भूमौ वा (**नेता**) मर्यादायाः स्थापकः (**सिन्धूनाम्**) नदीनां समुद्राणां वा (**वृषभः**) अनन्तबलः (**स्तियानाम्**) अपां जलानाम्। **स्तिया आपो भवन्ति स्त्यायनादिति।** (निरु० ६.१७) (**सः**) (**मानुषीः**) मनुष्यसम्बन्धिनीरिमाः (**अभि**) (**विशः**) प्रजाः (**वि**) (**भाति**) प्रकाशते (**वैश्वानरः**) सर्वेषां नायकः (**वावृधानः**) सदा वर्धयिता (**वरेण**) उत्तमस्वभावेन॥२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! योगिभिर्योऽग्निर्दिवि पृथिव्यां धायि सिन्धूनां स्तियानां वृषभः सन्नेता वरेण वावृधानो यो वैश्वानरो मानुषीर्विशोऽभि वि भाति स पृष्टोऽस्ति॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सर्वस्याः प्रजाया नियमव्यवस्थायां स्थापकस्सूर्यादिप्रजाप्रकाशकः सर्वेषामुपास्यदेवो स पृष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो ज्ञातव्योऽस्ति॥२॥

पदार्थः-हे विद्वानो! योगियों से जो (**अग्निः**) अग्नि के तुल्य स्वयं प्रकाशस्वरूप ईश्वर (**दिवि**) सूर्य (**पृथिव्याम्**) भूमि वा अन्तरिक्ष में (**धायि**) धारण किया जाता (**सिन्धूनाम्**) नदी वा समुद्रों और (**स्तियानाम्**) जलों के बीच (**वृषभः**) अनन्तबलयुक्त हुआ (**नेता**) मर्यादा का स्थापक (**वरेण**) उत्तम स्वभाव के साथ (**वावृधानः**) सदा बढ़ाने वाला (**वैश्वानरः**) सब को अपने-अपने कामों में नियोजक (**मानुषीः**) मनुष्यसम्बन्धी (**विशः**) प्रजाओं को (**अभि, वि, भाति**) प्रकाशित करता है (**सः**) वह (**पृष्टः**) पूछने योग्य है॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सब प्रजा का नियम व्यवस्था में स्थापक, सूर्यादि प्रजा का प्रकाशक, सब का उपास्य देव, वह पूछने, सुनने, जानने, विचारने और मानने योग्य है॥२॥

पुनः स परमेश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह परमेश्वर कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वद्भिया विश आयन्नसिक्नीरसमना जहतीर्भोजनानि।
वैश्वानर पूरवे शोशुचानः पुरो यदग्ने दरयन्नदीदेः॥३॥

त्वत्। भिया। विशः। आयन्। असिक्नीः। असमनाः। जहतीः। भोजनानि। वैश्वानर। पूरवे। शोशुचानः। पुरः। यत्। अग्ने। दरयन्। अदीदेः॥३॥

पदार्थः-(**त्वत्**) तव सकाशात् (**भिया**) भयेन (**विशः**) प्रजाः (**आयन्**) मर्यादामायान्तु (**असिक्नीः**) रात्रीः। **असिक्नीति रात्रिनाम।** (निघं०१.७) (**असमनाः**) पृथक् पृथग्वर्त्तमानाः (**जहतीः**) पूर्वामवस्थां त्यजन्तीः (**भोजनानि**) भोक्तव्यानि पालनानि वा (**वैश्वानर**) सर्वत्र विराजमान (**पूरवे**) मनुष्याय (**शोशुचानः**) पवित्रं विज्ञानम् **[ददन्]** (**पुरः**) पुरस्तात् (**यत्**) यः (**अग्ने**) सूर्य इव स्वप्रकाश (**दरयन्**) दुःखानि विदारयन् (**अदीदेः**) प्रकाशयेः॥३॥

अन्वयः-हे वैश्वानराग्ने! यद्यस्त्वं दुःखानि दरयन् पूरवे शोशुचानः पुरोऽदीदेस्तस्मात् त्वद्भियाऽसिक्नीरसमना भोजनानि जहतीर्विश आयन्॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! (**भीषास्माद् वातः पवते भीषोदेति सूर्यः। भीषास्मादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति**

पञ्चम इति कठवल्ल्युपनिषदि (तुलना-कठोप०२.६.३, तैत्तिरोयोप० ब्र० वल्ली, अनुवाक ८.१) परमेश्वरस्य सत्यन्यायभयात् सर्वे जीवा अधर्माद्भीत्वा धर्मे रुचिं कुर्वन्ति यस्य प्रभावात्पृथिवी सूर्यादयो लोकाः स्वस्वपरिधौ नियमेन भ्रमन्ति स्वस्वरूपं धृत्वा जगदुपकुर्वन्ति स एव परमात्मा सर्वैर्मनुष्यैर्ध्येयः॥३॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** सर्वत्र विराजमान **(अग्ने)** सूर्य के तुल्य प्रकाशस्वरूप **(यत्)** जो आप दुःखों को **(दरयन्)** विदीर्ण करते हुए **(पूरवे)** मनुष्य के लिये **(शोशुचानः)** पवित्र विज्ञान को **(पुरः)** पहिले **(अदीदेः)** प्रकाशित करें इससे **(त्वत्)** आपके **(भिया)** भय से **(असिक्नीः)** रात्रियों के प्रति **(असमनाः)** पृथक्-पृथक् वर्त्तमान **(भोजनानि)** भोगने योग्य वा पालन और **(जहतीः)** अपनी पूर्वावस्था को त्यागती हुई **(विशः)** प्रजा **(आयन्)** मर्यादा को प्राप्त हों॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस परमेश्वर के भय से वायु आदि पदार्थ अपने-अपने काम में नियुक्त होते हैं, उसके सत्य-न्याय के भय से सब जीव अधर्म से भय कर धर्म में रुचि करते हैं। जिसके प्रभाव से पृथिवी सूर्य्य आदि लोक अपनी अपनी परिधि में नियम से भ्रमते हैं, अपने स्वरूप का धारण कर जगत् का उपकार करते हैं, वही परमात्मा सब को ध्यान करने योग्य है॥३॥

पुनः स जगदीश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह जगदीश्वर कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तव त्रिधातु पृथिवी उत द्यौर्वैश्वानर व्रतमग्ने सचन्त।
त्वं भासा रोदसी आततन्थाऽजस्त्रेण शोचिषा शोशुचानः॥४॥

तव। त्रिऽधातु। पृथिवी। उत। द्यौः। वैश्वानर। व्रतम्। अग्ने। सचन्त। त्वम्। भासा। रोदसी इति। आ। ततन्थ। अजस्त्रेण। शोचिषा। शोशुचानः॥४॥

पदार्थः-**(तव)** जगदीश्वरस्य **(त्रिधातु)** त्रयस्सत्त्वादयो गुणा धातवो धारका यस्मिंस्तदव्यक्तं प्रकृत्यात्मकं जगत्कारणम् **(पृथिवी)** भूमिः **(उत)** **(द्यौः)** सूर्यः **(वैश्वानर)** विश्वस्य नायक **(व्रतम्)** कर्म **(अग्ने)** सर्वप्रकाशक **(सचन्तः)** सम्बध्नन्ति **(त्वम्)** **(भासा)** स्वकीयप्रकाशेन **(रोदसी)** सूर्यादिप्रकाशकं पृथिव्याद्यप्रकाशं द्विविधं जगत् **(आ ततन्थ)** सर्वतस्तनोषि **(अजस्त्रेण)** निरन्तरेणान्नादिना **(शोचिषा)** स्वप्रकाशेन **(शोशुचानः)** प्रकाशमानः॥४॥

अन्वयः-हे वैश्वानराग्ने! तव व्रतं त्रिधातु पृथिवी उत द्यौश्च सचन्त यस्त्वमजस्रेण शोचिषा शोशुचानः सन् स्वभासा रोदसी आततन्थ तमेव त्वं वयं सततं ध्याये॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्याधारे पृथिवी भूमिः सूर्यश्च स्थित्वा स्वकार्य्यं कुरुतः न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः। तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभातीति कठवल्यामिति वेदितव्यम्। (कठो०२.५.१५)॥५॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** सबके नायक **(अग्ने)** सबके प्रकाशक ईश्वर! **(तव)** आपके **(व्रतम्)** कर्म और **(त्रिधातु)** धारण करने वाले तीन सत्त्वादि गुणों वाले प्रकृत्यादिरूप अव्यक्त जगत् के कारण को **(पृथिवी)** भूमि **(उत)** और **(द्यौः)** सूर्य **(सचन्त)** सम्बद्ध करते हैं जो **(त्वम्)** आप **(अजस्त्रेण)**

निरन्तर अन्नादि **(शोचिषा)** अपने प्रकाश से **(शोशुचानः)** प्रकाशमान हुए **(भासा)** अपने प्रकाश से **(रोदसी)** सूर्य्यादि प्रकाशवाले और पृथिव्यादि प्रकाशरहित दो प्रकार के जगत् को **(आ, ततन्थ)** सब ओर से विस्तृत करते हैं, उन्हीं आपका हम लोग निरन्तर ध्यान करें॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसके आधार में पृथिवी सूर्य स्थित होके अपना कार्य करते हैं, कठोपनिषद् में लिखा है कि उस परमात्मा को जानने के लिये सूर्य, चन्द्रमा, बिजुली वा अग्नि आदि कुछ प्रकाश नहीं कर सकते, किन्तु उसी प्रकाशित परमेश्वर के प्रकाश से सब प्रकाशित होते हैं॥४॥

पुनः स कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वाम॑ग्ने हरितो॑ वावशा॒ना गिर॑: सचन्ते॒ धुन॑यो घृ॒ताचीः॑।
पतिं॑ कृष्टी॒नां र॒थ्यं॑ रयी॒णां वै॑श्वान॒रमु॒षसां॑ के॒तुमह्ना॑म्॥५॥७॥

त्वाम्। अ॒ग्ने॒। ह॒रित॑:। वा॒व॒शा॒नाः। गिर॑:। स॒च॒न्ते॒। धुन॑यः। घृ॒ताचीः॑। पति॑म्। कृ॒ष्टी॒नाम्। र॒थ्य॑म्। र॒यी॒णाम्। वै॒श्वा॒न॒रम्। उ॒षसा॑म्। के॒तुम्। अह्ना॑म् ॥५॥

पदार्थः-**(त्वाम्)** परमात्मानम् **(अग्ने)** ज्ञानस्वरूप **(हरितः)** दिशः। **हरित इति दिङ्नाम**। (निघं०१.६) **(वावशानाः)** कमनीयाः **(गिरः)** वाचः **(सचन्ते)** **(धुनयः)** वायवः **(घृताचीः)** रात्रयः। **घृताचीति रात्रिनाम**। (निघं०१.७) **(पतिम्)** स्वामिनं पालकम् **(कृष्टीनाम्)** मनुष्याणाम्। **कृष्टय इति मनुष्यनाम**। (निघं०२.३) **(रथ्यम्)** रथेभ्यो हितमश्वमिव प्रापकं **(रयीणाम्)** धनानाम् **(वैश्वानरम्)** अग्निमिव **(उषसाम्)** प्रभातवेलानाम् **(केतुम्)** सूर्यमिव **(अह्नाम्)** दिनानाम्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने जगदीश्वर! यं त्वां हरितो वावशाना गिरो धुनयो घृताचीश्च सचन्ते तं रयीणां रथ्यमिवोषसां वैश्वानरमह्नां केतुमिव कृष्टीनां पतिं त्वां वयं सततं भजेम॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्मिन् सर्वा दिशो वेदवाचः पवना रात्र्यादयः कालावयवाः सम्बद्धाः सन्ति तमेव समग्रैश्वर्यप्रदं सूर्य इव स्वप्रकाशं परमात्मानं नित्यं ध्यायत॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** ज्ञानस्वरूप जगदीश्वर! जिस **(त्वाम्)** आपको **(हरितः)** दिशा **(वावशानाः)** कामना के योग्य **(गिरः)** वाणी **(धुनयः)** वायु और **(घृताचीः)** रात्री **(सचन्ते)** सम्बन्ध करते हैं उस **(रयीणाम्)** धनों के **(रथ्यम्)** पहुँचाने वाले घोड़े के तुल्य रथों के हितकारी **(उषसाम्)** प्रभात वेलाओं के बीच **(वैश्वानरम्)** अग्नि के तुल्य प्रकाशित **(अह्नाम्)** दिनों के बीच **(केतुम्)** सूर्य के तुल्य **(कृष्टीनाम्)** मनुष्यों के **(पतिम्)** रक्षक स्वामी आपका हम लोग निरन्तर सेवन करें॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस में सब दिशा, वेदवाणी, पवन और रात्री आदि काल के अवयव सम्बद्ध हैं, उसी समग्र ऐश्वर्य के देने वाले सूर्य के तुल्य स्वयं प्रकाशित परमात्मा का नित्य ध्यान करो॥५॥

पुनः स कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वे असुर्यं१ वसवो न्यृण्वन् क्रतुं हि ते मित्रमहो जुषन्त।
त्वं दस्यूँरोकसो अग्न आज उरु ज्योतिर्जनयन्नार्याय॥६॥

त्वे इति। असुर्यम्। वसवः। नि। ऋण्वन्। क्रतुम्। हि। ते। मित्रऽमहः। जुषन्त। त्वम्। दस्यून्। ओकसः। अग्ने। आजः। उरु। ज्योतिः। जनयन्। आर्याय॥६॥

पदार्थः-(**त्वे**) त्वयि परमात्मनि (**असुर्यम्**) असुरस्य मेघस्येदं स्वकीयं स्वरूपम् (**वसवः**) पृथिव्यादयः (**नि**) नित्यम् (**ऋण्वन्**) प्रसाध्नुवन्ति (**क्रतुम्**) क्रियाम् (**हि**) खलु (**ते**) तव (**मित्रमहः**) यो मित्रेषु महाँस्तत्सम्बुद्धौ (**जुषन्त**) सेवन्ते (**त्वम्**) (**दस्यून्**) दुष्टकर्मकारकान् (**ओकसः**) गृहात् (**अग्ने**) वह्निवत्सर्वदोषप्रणाशकः (**आजः**) प्रापयसि (**उरु**) बहु (**ज्योतिः**) प्रकाशम् (**जनयन्**) प्रकटयन् (**आर्याय**) सज्जनाय मनुष्याय॥६॥

अन्वयः-हे मित्रमहोऽग्ने! यस्मिँस्त्वे वसवोऽसुर्यं क्रतुं न्यृण्वञ्जुषन्तो यस्त्वमार्यायोरु ज्योतिर्जनयन्नोकसो दस्यूनाज तस्य ते हि वयं ध्यायेम॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योगिनः यस्मिन् परमेश्वरे स्थिरा भूत्वेष्टं कामं साध्नुवन्ति तस्यैव ध्यानेन सर्वान् कामान् यूयमपि प्राप्नुत॥६॥

पदार्थः-हे (**मित्रमहः**) मित्रों में बड़े (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य सब दोषों के नाशक! जिस (**त्वे**) आप परमात्मा में (**वसवः**) पृथिवी आदि आठ वसु (**असुर्यम्**) मेघ के सम्बन्धी (**क्रतुम्**) कर्म को (**नि, ऋण्वन्**) निरन्तर प्रसिद्ध करते हैं तथा (**जुषन्त**) सेवते हैं जो (**त्वम्**) आप (**आर्याय**) सज्जन मनुष्य के लिये (**उरु**) अधिक (**ज्योतिः**) प्रकाश को (**जनयन्**) प्रकट करते हुए (**ओकसः**) घर से (**दस्यून्**) दुष्ट कर्म करने वालों को (**आजः**) प्राप्त करते हैं उन (**ते**) आपका (**हि**) ही निरन्तर हम लोग ध्यान करें॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! योगीजन जिस परमेश्वर में स्थिर होकर इष्ट काम को सिद्ध करते हैं, उसी परमात्मा के ध्यान से सब कामनाओं को तुम लोग भी प्राप्त होओ॥६॥

पुनः स जगदीश्वरः किं करोतीत्याह॥

फिर वह जगदीश्वर क्या करता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स जायमानः परमे व्योमन् वायुर्न पाथः परि पासि सद्यः।
त्वं भुवना जनयन्नभि क्रन्नपत्याय जातवेदो दशस्यन्॥७॥

सः। जायमानः। परमे। विऽओमन्। वायुः। न। पाथः। परि। पासि। सद्यः। त्वम्। भुवना। जनयन्। अभि। क्रन्। अपत्याय। जातऽवेदः। दशस्यन्॥७॥

पदार्थः-(**सः**) योगी (**जायमानः**) उत्पद्यमानः (**परमे**) उत्कृष्टे (**व्योमन्**) व्योमवद्व्यापके (**वायुः**) पवनः (**न**) इव (**पाथः**) पृथिव्यादिकम् (**परि**) (**सर्वतः**) (**पासि**) (**सद्यः**) (**त्वम्**) (**भुवना**) सर्वांल्लोकान् (**जनयन्**) उत्पादयन् (**अभि क्रन्**) पूर्णं कुर्वन्। अत्र **वाच्छन्दसीति** विकरणभावः।

(अपत्याय) सन्तानाय मातेव **(जातवेदः)** यो जातं सर्वं वेत्ति तत्सम्बुद्धौ **(दशस्यन्)** कामान् प्रयच्छन्॥७॥

अन्वयः-हे परमेश्वर! यः परमो व्योमँस्त्वयि जायमानो योगी वायुर्न पाथः सद्य एति स भवतोन्नीयते। हे जातवेदो! यस्त्वं भुवना जनयन्नपत्याय मातेव कामान् दशस्यन् सर्वमभि क्रन् सर्वं परि पासि तस्मादुपासनीयोऽसि॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! योऽपत्याय मातेव कृपालुरक्षको योगीव सर्वकामप्रदः सकलविश्वकर्त्ता सर्वरक्षक ईश्वरोऽस्ति तमेव नित्यमुपाध्वम्॥७॥

पदार्थः-हे परमेश्वर जो **(परमे)** उत्तम **(व्योमन्)** आकाश के तुल्य व्यापक आप में **(जायमानः)** उत्पन्न होता हुआ योगीजन **(वायुः, न)** वायु के तुल्य **(पाथः)** पृथिव्यादि को **(सद्यः)** शीघ्र **(एति)** प्राप्त होता है **(सः)** वह आप से उन्नति को प्राप्त होता है। हे **(जातवेदः)** उत्पन्न हुए सब को जानने वाले! जो **(त्वम्)** आप **(भुवना)** सब लोकों को **(जनयन्)** उत्पन्न करते हुए **(अपत्याय)** माता जैसे सन्तान के लिये, वैसे कामनाओं को **(दशस्यन्)** पूर्ण करते हुए सब को **(अभि, क्रन्)** पूर्ण करते हुए **(परि, पासि)** सब ओर से रक्षा करते हो, इससे उपासना के योग्य हैं॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो अपत्य के लिये माता के तुल्य कृपालु, रक्षक, योगी के तुल्य सब काम देने वाला, सब विश्व का कर्त्ता, सब का रक्षक ईश्वर है, उसी की नित्य उपासना करो॥७॥

पुनस्स ईश्वरः कस्मै किं ददातीत्याह॥

फिर वह ईश्वरो किसको क्या देता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं।

तामग्ने अस्मे इषमेरयस्व वैश्वानर द्युमतीं जातवेदः।
यया राधः पिन्वसि विश्ववार पृथु श्रवो दाशुषे मर्त्याय॥८॥

ताम्। अग्ने। अस्मे इति। इषम्। आ। ईरयस्व। वैश्वानर। द्युऽमतीम्। जातऽवेदः। यया। राधः। पिन्वसि। विश्वऽवार। पृथु। श्रवः। दाशुषे। मर्त्याय॥८॥

पदार्थः-**(ताम्)** **(अग्ने)** विज्ञानस्वरूप **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(इषम्)** अन्नादिकम् **(आ)** समन्तात् **(ईरयस्व)** प्रापय **(वैश्वानर)** विश्वस्मिन् राजमान **(द्युमतीम्)** प्रशस्ता द्यौः कामाना विद्यते यस्यास्ताम् **(जातवेदः)** जातेषु सर्वेषु विद्यमान **(यया)** रीत्या **(राधः)** धनम् **(पिन्वसि)** ददासि **(विश्ववार)** विश्वैस्सर्वैर्वरणीय **(पृथु)** विस्तीर्णम् **(श्रवः)** श्रवणम् **(दाशुषे)** विद्यादात्रे **(मर्त्याय)** मनुष्याय॥८॥

अन्वयः-हे वैश्वानर जातवेदो विश्ववाराग्ने! त्वं दाशुषे मर्त्याय यया पृथु राधः श्रवश्च पिन्वसि तां द्युमतीमिषमस्मे एरयस्व॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्योपासनेन विद्वांसः पुष्कलमैश्वर्यं पूर्णां विद्यां चाप्नुवन्ति यश्चोपासितः सन् समग्रमैश्वर्यं प्रयच्छति तमेव नित्यं सेवध्वम्॥८॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** सब में प्रकाशमान **(जातवेदः)** उत्पन्न हुए पदार्थों में विद्यमान

(विश्ववार) सब से स्वीकार करने योग्य **(अग्ने)** विज्ञानस्वरूप ईश्वर! आप **(दाशुषे)** विद्या देने वाले **(मर्त्याय)** मनुष्य के लिये **(यया)** जिससे **(पृथु)** विस्तारयुक्त **(राधः)** धन और **(श्रवः)** श्रवण को **(पिन्वसि)** देते हो **(ताम्)** उस **(द्युमतीम्)** प्रशस्त कामना वाले **(इषम्)** अन्नादि को **(अस्मे)** हमारे लिये **(आ, ईरयस्व)** प्राप्त कीजिये॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसकी उपासना से विद्वान् लोग पूर्ण विद्या को प्राप्त होते हैं, जो उपासना किया हुआ समस्त ऐश्वर्य को देता है, उसी की नित्य सेवा करो॥८॥

पुनः स ईश्वर किं किं ददातीत्याह॥

फिर वह ईश्वर क्या क्या देता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तं नो अग्ने मघवद्भ्यः पुरुक्षुं रयिं नि वाजं श्रुत्यं युवस्व।
वैश्वानर महि नः शर्म यच्छ रुद्रेभिरग्ने वसुभिः सजोषाः॥९॥८॥

तम्। नः। अग्ने। मघवत्ऽभ्यः। पुरुऽक्षुम्। रयिम्। नि। वाजम्। श्रुत्यम्। युवस्व। वैश्वानर। महि। नः। शर्म। यच्छ। रुद्रेभिः। अग्ने। वसुऽभिः। सऽजोषाः॥९॥

पदार्थः- **(तम्)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(अग्ने)** विद्युदिव वर्त्तमान जगदीश्वर **(मघवद्भ्यः)** बहुधनयुक्तेभ्यो धनेशेभ्यः **(पुरुक्षुम्)** बह्वन्नादिकम् **(रयिम्)** धनम् **(नि)** नित्यम् **(वाजम्)** विज्ञानम् **(श्रुत्यम्)** श्रोतुमर्हम् **(युवस्व)** संयोजय **(वैश्वानर)** **(महि)** महत् **(नः)** अस्मभ्यम् **(शर्म)** सुखं गृहं वा **(यच्छ)** देहि **(रुद्रेभिः)** प्राणैः **(अग्ने)** प्राणस्य प्राण **(वसुभिः)** पृथिव्यादिभिस्सह **(सजोषाः)** व्याप्तः सन् प्रीतः प्रसन्नः॥९॥

अन्वयः-हे वैश्वानराग्ने त्वं मघवद्भ्यो नोऽस्मभ्यं पुरुक्षुं तं श्रुत्यं रयिं वाजं नि युवस्व। हे अग्ने! रुद्रेभिर्वसुभिः सजोषास्त्वं नो महि शर्म यच्छ॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो धनैश्वर्यप्रशंसनीयविज्ञानं राज्यं च पुरुषार्थिभ्यः प्रयच्छति तमेव प्रीत्या सततमुपाध्वमिति॥९॥

अत्रेश्वरकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** सब को अपने-अपने कार्य में लगाने वाले **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य प्रकाशित जगदीश्वर आप **(मघवद्भ्यः)** बहुत धनयुक्त हमारे लिये **(पुरुक्षुम्)** बहुत अन्नादि **(तम्)** उस **(श्रुत्यम्)** सुनने योग्य **(रयिम्)** धन को और **(वाजम्)** विज्ञान को **(नि, युवस्व)** नित्य संयुक्त करो। हे **(अग्ने)** प्राण के प्राण! **(वसुभिः)** पृथिवी आदि तथा **(रुद्रेभिः)** प्राणों के साथ **(सजोषाः)**

व्याप्त और प्रसन्न हुए आप **(नः)** हमारे लिये **(महि)** बड़े **(शर्म)** सुख वा घर को **(यच्छ)** दीजिये॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमात्मा धन ऐश्वर्य्य और प्रशंसा के योग्य विज्ञान और राज्य को पुरुषार्थियों के लिये देता है, उसी की प्रीतिपूर्वक निरन्तर उपासना किया करो॥९॥

इस सूक्त में ईश्वर के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह पांचवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य षष्ठस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। वैश्वानरो देवता। १, ४, ५ निचृत्त्रिष्टुप्। ६ विराट् त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। २ निचृत्पङ्क्तिः। ३, ७ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ को राजा वरः स्यादित्याह।

अब सात ऋचा वाले छठे सूक्त का आरम्भ है। इसके पहिले मन्त्र में कौन राजा श्रेष्ठ हो, इस विषय को कहते हैं॥

प्र सम्राजो असुरस्य प्रशस्तिं पुंसः कृष्टीनामनुमाद्यस्य।
इन्द्रस्येव प्र तवसस्कृतानि वन्दे दारुं वन्दमानो विवक्मि॥१॥

प्र। सम्ऽराजः। असुरस्य। प्रऽशस्तिम्। पुंसः। कृष्टीनाम्। अनुऽमाद्यस्य। इन्द्रस्यऽइव। प्र। तवसः। कृतानि। वन्दे। दारुम्। वन्दमानः। विवक्मि॥१॥

पदार्थः-(**प्र**) (**सम्राजः**) चक्रवर्तिनः (**असुरस्य**) मेघस्येव वर्त्तमानस्य (**प्रशस्तिम्**) प्रशंसाम् (**पुंसः**) पुरुषस्य (**कृष्टीनाम्**) मनुष्याणाम् (**अनुमाद्यस्य**) अनुहर्षितुं योग्यस्य (**इन्द्रस्येव**) सूर्यस्येव (**प्र**) (**तवसः**) बलात् (**कृतानि**) (**वन्दे**) नमस्करोमि (**दारुम्**) दुःखविदारकम् (**वन्दमानः**) स्तुवन् सन् (**विवक्मि**) विशेषेण वदामि॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा दारुं वन्दमानोऽहं कृष्टीनां मध्येऽसुरस्येवेन्द्रस्येवानुमाद्यस्य सम्राजः पुंसः प्रशस्तिं प्र विवक्मि तवसः कृतानि प्र वन्दे तथैतस्य प्रशंसां कृत्वैतं सदा वन्दध्वम्॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यः शुभगुणकर्मस्वभावैर्युक्तो वन्दनीयः प्रशंसनीयः स्यात् तस्य चक्रवर्तिनः शुभकर्मजनितां प्रशंसां कुरुत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**दारुम्**) दुःख के दूर करने वाले ईश्वर की (**वन्दमानः**) स्तुति करता हुआ मैं (**कृष्टीनाम्**) मनुष्यों के बीच (**असुरस्य**) मेघ के तुल्य वर्त्तमान (**इन्द्रस्य**) सूर्य के समान (**अनुमाद्यस्य**) अनुकूल हर्ष करने योग्य (**सम्राजः**) चक्रवर्ती (**पुंसः**) पुरुष की (**प्रशस्तिम्**) प्रशंसा (**प्र, विवक्मि**) विशेष कहता हूँ (**तवसः**) बल से (**कृतानि**) किये हुओं को (**प्र, वन्दे**) नमस्कार करता हूँ, वैसे इस की प्रशंसा कर के इस की सदा वन्दना करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो शुभ गुण, कर्म और स्वभावों से युक्त वन्दनीय और प्रशंसा के योग्य हो, उस चक्रवर्ती राजा की शुभकर्मों से हुई प्रशंसा करो॥१॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कविं केतुं धासिं भानुमद्रेर्हिन्वन्ति शं राज्यं रोदस्योः।
पुरंदरस्य गीर्भिरा विवासेऽग्नेर्व्रतानि पूर्व्या महानि॥२॥

कविम्। केतुम्। धासिम्। भानुम्। अद्रेः। हिन्वन्ति। शम्। राज्यम्। रोदस्योः। पुरम्ऽदरस्य।

गी॒:ऽभि:। आ। वि॒वा॒से॒। अ॒ग्नेः। व्र॒तानि॑। पू॒र्व्या। म॒हानि॑॥ २॥

पदार्थः-(**कविम्**) क्रान्तप्रज्ञं विद्वांसम् (**केतुम्**) महाप्राज्ञम् (**धासिम्**) अन्नमिव पोषकम् (**भानुम्**) विद्याविनयदीप्तिमन्तम् (**अद्रेः**) मेघस्य (**हिन्वन्ति**) प्राप्नुवन्ति वर्धयन्ति वा (**शम्**) सुखरूपम् (**राज्यम्**) (**रोदस्योः**) प्रकाशपृथिव्योः सम्बन्धि (**पुरंदरस्य**) शत्रूणां पुरां विदारकस्य (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**आ**) समन्तात् (**विवासे**) सेवे (**अग्नेः**) पावकस्येव वर्त्तमानस्य (**व्रतानि**) कर्माणि (**पूर्व्या**) पूर्वै राजभिः कृतानि (**महानि**) महान्ति॥ २॥

अन्वयः-हे राजन्नग्नेरिव! यस्य ते गीर्भिरद्रेरिव वर्त्तमानस्य पुरंदरस्य राज्ञो महानि पूर्व्या व्रतानि कविं केतुं धासिं भानुं रोदस्योः शं राज्यं हिन्वन्ति तमहं विवासे॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यस्योत्तमानि कर्माणि राज्यं विदुषो वर्धयन्ति राज्यं सुखयुक्तं कुर्वन्ति तस्यैव सत्कारः सर्वैः कर्त्तव्यः॥ २॥

पदार्थः-हे राजन् (**अग्नेः**) अग्नि के समान! जिन आपकी (**गीर्भिः**) वाणियों से (**अद्रेः**) मेघ के तुल्य वर्तमान (**पुरंदरस्य**) शत्रुओं के नगरों को विदीर्ण करने वाले राजा के (**महानि**) बड़े (**पूर्व्या**) पूर्वज राजाओं ने किये (**व्रतानि**) कर्मों को तथा (**कविम्**) तीव्र बुद्धि वाले (**केतुम्**) अतीव बुद्धिमान् विद्वान् को (**धासिम्**) अन्न के तुल्य पोषक (**भानुम्**) विद्या, विनय और दीप्ति से युक्त (**रोदस्योः**) प्रकाश और पृथिवी के सम्बन्धी (**शम्**) सुखस्वरूप (**राज्यम्**) राज्य को (**हिन्वन्ति**) प्राप्त करवाते बढ़ाते हैं, उनका मैं (**आ, विवासे**) अच्छे प्रकार सेवन करता हूँ॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिसके उत्तम कर्म राज्य और विद्वानों को बढ़ाते हैं और राज्य को सुखयुक्त करते हैं, उसी प्रकार सबको करना चाहिये॥ २॥

पुनर्विद्वद्भिः के निरोद्धव्या इत्याह॥

फिर विद्वानों को कौन रोकने योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न्य॑क्र॒तून्ग्र॒थिनो॑ मृ॒ध्रवा॑चः प॒णीँरश्र॒द्धाँ अ॑वृ॒धाँ अ॑य॒ज्ञान्।
प्रप्र॒ तान् दस्यूँ॑र॒ग्निर्वि॑वाय॒ पूर्व॑श्चका॒राप॑राँ॒ अय॑ज्यून्॥ ३॥

नि। अ॒क्रतू॑न्। ग्र॒थिनः॑। मृ॒ध्रऽवा॑चः। प॒णीन्। अ॒श्र॒द्धान्। अ॒वृ॒धान्। अ॒य॒ज्ञान्। प्रऽप्र। तान्। दस्यू॑न्। अ॒ग्निः। वि॒वा॒य॒। पूर्वः॑। च॒कार॒। अप॑रान्। अय॑ज्यून्॥ ३॥

पदार्थः-(**नि**) (**अक्रतून्**) निर्बुद्धीन् (**ग्रथिनः**) अज्ञानेन बद्धान् (**मृध्रवाचः**) मृध्रा हिंस्रा अनृता वाग्येषान्ते (**पणीन्**) व्यवहारिणः (**अश्रद्धान्**) श्रद्धारहितान् (**अवृधान्**) अवर्धकान् हानिकरान् (**अयज्ञान्**) सङ्गत्यग्निहोत्राद्यनुष्ठानरहितान् (**प्रप्र**) (**तान्**) (**दस्यून्**) दुष्टान् साहसिकाँश्चोरान् (**अग्निः**) अग्निरिव राजा (**विवाय**) दूरं गमयति (**पूर्वः**) आदिमः (**चकार**) करोति (**अपरान्**) अन्यान् (**अयज्यून्**) विद्वत्सत्कारविरोधिनः॥ ३॥

अन्वयः-हे राजन्नग्निरिव! भवानक्रतूनग्रथिनो मृध्रवाचोऽयज्ञानश्रद्धानवृधाँस्तान् दस्यून् प्रप्र विवाय पूर्वः सन्नपरानयज्यून् पणीन्नि चकार॥ ३॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यूयं सत्योपदेशशिक्षाभ्यां सर्वानविदुषो बोधयन्तु यत एतेऽपरानपि विदुषः कुर्य्युः॥३॥

पदार्थ:-हे राजन् **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य तेजोमय! आप **(अक्रतून्)** निर्बुद्धि **(ग्रथिनः)** अज्ञान से बंधने **(मृध्रवाचः)** हिंसक वाणी वाले **(अयज्ञान्)** सङ्गादि वा अग्निहोत्रादि के अनुष्ठान से रहित **(अश्रद्धान्)** श्रद्धारहित **(अवृधान्)** हानि करनेहारे **(तान्)** उन **(दस्यून्)** दुष्ट साहसी चोरों को **(प्रप्र, विवाय)** अच्छे प्रकार दूर पहुँचाइये **(पूर्वः)** प्रथम से प्रवृत्त हुए आप **(अपरान्)** अन्य **(अयज्यून्)** विद्वानों के सत्कार के विरोधियों को **(पणीन्)** व्यवहार वाले **(नि, चकार)** निरन्तर करते हैं॥३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! तुम लोग सत्य के उपदेश और शिक्षा से सब अविद्वानों को बोधित करो, जिससे ये अन्यों को भी विद्वान् करें॥३॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यो अ॑पाची॒ने तम॑सि॒ मद॑न्तीः प्राची॑श्च॒कार॒ नृत॑मः॒ शची॑भिः।
तमीशा॑नं॒ वस्वो॑ अ॒ग्निं गृ॑णी॒षेऽना॑नतं द॒मय॑न्तं पृत॒न्यून्॥४॥

यः। अ॒पा॒चीने॑। तम॑सि। मद॑न्तीः। प्राचीः॑। च॒कार॑। नृऽत॑मः। शची॑भिः। तम्। ईशा॑नम्। वस्वः॑। अ॒ग्निम्। गृ॒णी॒षे। अना॑नतम्। द॒मय॑न्तम्। पृ॒त॒न्यून्॥४॥

पदार्थ:-**(यः)** **(अपाचीने)** योऽधोऽञ्चति **(तमसि)** अन्धकारे **(मदन्तीः)** आनन्दन्तीः **(प्राचीः)** या प्रागञ्चति **(चकार)** करोति **(नृतमः)** अतिशयेन नृणां मध्य उत्तमः (**शचीभिः)** उत्तमाभिर्वाग्भिः। **शचीति वाङ्नाम**। (निघं०१.११) **(तम्)** **(ईशानम्)** समर्थम् **(वस्वः)** वसुनो धनस्य **(अग्निम्)** **(गृणीषे)** स्तौषि **(अनानतम्)** नम्रीभूतम् **(दमयन्तम्)** निवारयन्तम् **(पृतन्यून्)** आत्मनः पृतनां सेनामिच्छून्॥४॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यो नृतमः शचीभिरपाचीने तमसि मदन्तीः प्राचीश्चकार। हे विद्वन्! यो वस्वः ईशानमनानतं पृतन्यून् दमयन्तमग्निं गृणीषे तं वयं सत्कुर्याम॥४॥

भावार्थ:-यो नरोत्तमो राजा प्रजाभिस्सह पितृवद्वर्त्तते यथा निद्रायां सुखी भवति तथा सर्वाः प्रजा आनन्दयञ्छत्रून्निवारयति यो युद्धे भयाच्छत्रुभ्यो नम्रो न भवति धनस्य वर्धको वर्त्तते तमेव राजानं वयं सदा सत्कुर्याम॥४॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(नृतमः)** मनुष्यों में उत्तम **(शचीभिः)** उत्तम वाणियों से **(अपाचीने)** बुरा चलना जिसमें हो उस **(तमसि)** अन्धकार में **(मदन्तीः)** आनन्द करती हुई **(प्राचीः)** पूर्व को चलने वाली सेनाओं को **(चकार)** करता है। हे विद्वन्! जिस **(वस्वः)** धन के **(ईशानम्)** स्वामी **(अनानतम्)** नम्रस्वरूप **(पृतन्यून्)** अपने को सेना की इच्छा करने वालों को **(दमयन्तम्)** निवृत्त करते हुए **(अग्निम्)** अग्नि के तुल्य प्रकाशस्वरूप ईश्वर की **(गृणीषे)** स्तुति करता है **(तम्)**

उसका हम लोग सत्कार करें॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्यों में उत्तम राजा प्रजाओं के साथ पिता के तुल्य वर्त्तता है, जैसे निद्रा में सुखी होता है, वैसे सब प्रजाओं को आनन्द देता हुआ शत्रुओं को निवृत्त करता है। जो युद्ध में भय से शत्रुओं के साथ नम्र नहीं होता और धन का बढ़ाने वाला है, उसी राजा का हम लोग सदा सत्कार करें॥४॥

पुनः कीदृशो राजोत्तमतमो भवतीत्याह॥

फिर कैसा राजा अत्यन्त उत्तम होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यो देह्यो३ अनमयद्वधस्नैर्यो अर्यपत्नीरुषसश्चकार।
स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निर्विशश्चक्रे बलिहृतः सहोभिः॥५॥

यः। देह्यः। अनमयत्। वधऽस्नैः। यः। अर्यऽपत्नीः। उषसः। चकार। सः। निरुध्य। नहुषः। यह्वः। अग्निः। विशः। चक्रे। बलिऽहृतः। सहःऽभिः॥५॥

पदार्थः-(**यः**) (**देह्यः**) उपचेतुं वर्धयितुं योग्यः (**अनमयत्**) दुष्टान्नम्रान् कारयेत् (**वधस्नैः**) वधेन शोधकैर्भृत्यैर्न्यायाधीशैः (**यः**) (**अर्यपत्नीः**) स्वामिनां भार्या (**उषसः**) प्रातर्वेला इव सुशोभिताः (**चकार**) करोति (**सः**) (**निरुध्या**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नहुषः**) सत्ये बद्धः (**यह्वः**) महान् (**अग्निः**) अग्निरिव तेजस्वी (**विशः**) प्रजाः (**चक्रे**) कुर्यात् (**बलिहृतः**) या बलिं हरन्ति ताः (**सहोभिः**) सहनशीलैर्बलिष्ठैः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्यो! यो देह्यो वधस्नैर्दुष्टाननमयद्यः सूर्य उषस इवाऽर्यपत्नीश्चकार यो नहुषो यह्वोऽग्निरिव सहोभिश्शत्रून् निरुध्या विशो बलिहृतश्चक्रे स सर्वैः पितृवत्पूज्यः॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे प्रजाजना! यो विद्वत्तमो दुष्टाचारानन्यायवृत्तिं च निरुध्य जितेन्द्रियो भूत्वा न्यायेन प्रजाभ्यो बलिं हरति स सर्वैर्वर्धनीयो भवति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**यः**) जो (**देह्यः**) बढ़ाने योग्य (**वधस्नैः**) मारने से शुद्ध करने वाले न्यायाधीशों से दुष्टों को (**अनमयत्**) नम्र करावे (**यः**) जो सूर्य जैसे (**उषसः**) प्रातःकाल की वेलाओं को सुशोभित करता है, वैसे (**अर्यपत्नीः**) स्वामी की स्त्रियों को शोभित (**चकार**) करता है और जो (**नहुषः**) सत्य में बद्ध (**यह्वः**) महान् (**अग्निः**) अग्नि के तुल्य तेजस्वी (**सहोभिः**) सहनशील बलिष्ठों के साथ शत्रुओं को (**निरुध्या**) रोक के (**विशः**) प्रजाओं को (**बलिहृतः**) कर पहुँचाने वाला (**चक्रे**) करे (**सः**) वह सब को पिता के तुल्य पूज्य है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे प्रजाजनो! जो अत्यन्त विद्वान् दुष्टाचारियों और अन्याय के वर्त्ताव को रोक जितेन्द्रिय होके न्यायपूर्वक प्रजा से कर लेता है, वह सब को बढ़ाने योग्य होता है॥५॥

पुनः को राजा नित्यं वर्धत इत्याह॥

फिर कौन राजा नित्य बढ़ता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्य शर्मन्नुप विश्वे जनास एवैस्तस्थुः सुमतिं भिक्षमाणाः।
वैश्वानरो वरमा रोदस्योराग्निः ससाद पित्रोरुपस्थम्॥६॥

यस्य। शर्मन्। उप। विश्वे। जनासः। एवैः। तस्थुः। सुऽमतिम्। भिक्षमाणाः। वैश्वानरः। वरम्। आ। रोदस्योः। आ। अग्निः। ससाद। पित्रोः। उपऽस्थम्॥६॥

पदार्थः-(**यस्य**) (**शर्मन्**) गृहे (**उप**) (**विश्वे**) सर्वे (**जनासः**) उत्तमा धार्मिका विद्वांसः (**एवैः**) विज्ञानादिप्राप्तैः सद्गुणैस्सह (**तस्थुः**) तिष्ठन्ति (**सुमतिम्**) शोभनां प्रज्ञाम् (**भिक्षमाणाः**) नित्यं याचमाना उन्नतिशीलाः (**वैश्वानरः**) विश्वेषां नराणां मध्ये राजमानः (**वरम्**) उत्तमं जनम् (**आ**) (**रोदस्यो**) द्यावापृथिव्योर्मध्ये (**आ**) (**अग्निः**) सूर्य इव (**ससाद**) सीदति (**पित्रोः**) सुशिक्षाकर्त्रोरध्यापकोपदेशकयोः (**उपस्थम्**) समीपम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य शर्मन् सुमतिं भिक्षमाणा एवैः सह वर्त्तमाना विश्वे जनास उप तस्थुर्यो वैश्वानरो रोदस्योरग्निरास्थित इव पित्रोरुपस्थं वरमा ससाद स एव साम्राज्यं कर्त्तुमर्हति॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। स एव राजा नित्यं वर्धते यस्य समीपे नित्यं विद्यावर्धका विद्वांसो मन्त्रिणस्स्युर्यो ह्याप्तोपदेशं नित्यं गृह्णाति स सूर्य इव भूगोले प्रकाशमानो भूत्वा प्रशस्तं राज्यं प्राप्नोति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**यस्य**) जिसके (**शर्मन्**) घर में (**सुमतिम्**) उत्तम बुद्धि की (**भिक्षमाणाः**) नित्य याचना करते हुए उन्नतिशील (**एवैः**) विज्ञानादि से प्राप्त हुए श्रेष्ठ गुणों के साथ वर्त्तमान (**विश्वे**) सब (**जनासः**) धर्मात्मा, उत्तम विद्वान् जन (**उप, तस्थुः**) उपस्थित होते हैं जो (**वैश्वानरः**) समस्त मनुष्यों के बीच राजमान (**रोदस्योः**) सूर्य-पृथिवी के बीच (**अग्निः**) सूर्य के तुल्य स्थित हुए के समान (**पित्रोः**) उत्तम शिक्षा करने वाले अध्यापक-उपदेशक के (**उपस्थम्**) समीप (**वरम्**) उत्तम जन को (**आ, ससाद**) अच्छे प्रकार स्थित करे, वही चक्रवर्ती राज्य कर सकता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वही राजा नित्य बढ़ता है, जिसके समीप विद्यावर्धक, विद्वान् मन्त्री सदा रहें। जो सत्यवक्ता के उपदेश को नित्य स्वीकार करता है, वह सूर्य के तुल्य भूगोल में प्रकाशमान होकर प्रशस्त राज्य को प्राप्त होता है॥६॥

को राजा प्रशस्तयशा भवतीत्याह॥

कौन राजा प्रशंसित यश वाला होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ देवो ददे बुध्न्या३ वसूनि वैश्वानर उदिता सूर्यस्य।
आ समुद्रादवरादा परस्मादाग्निर्ददे दिव आ पृथ्व्याः॥७॥९॥

आ। देवः। ददे। बुध्न्या। वसूनि। वैश्वानरः। उत्ऽइता। सूर्यस्य। आ। समुद्रात्। अवरात्। आ। परस्मात्। आ। अग्निः। ददे। दिवः। आ। पृथिव्याः॥७॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**देवः**) पूर्णविद्यः सुखप्रदः (**ददे**) ददाति (**बुध्न्या**)

बुध्न्यान्यन्तरिक्षस्थानि **(वसूनि)** द्रव्याणि **(वैश्वानरः)** विश्वेषां नराणामयं नायकः **(उदिता)** उदितावुदये **(सूर्यस्य)** **(आ)** **(समुद्रात्)** अन्तरिक्षात् **(अवरात्)** अर्वाचीनात् **(आ)** **(परस्मात्)** **(आ)** **(अग्निः)** पावक इव वर्त्तमानः **(ददे)** ददाति **(दिवः)** प्रकाशस्य **(आ)** **(पृथिव्याः)** भूमेर्मध्ये॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वैश्वानरोऽग्निरिव देवो राजा यथा सूर्यस्योदिता बुध्न्या वसून्यासमन्तात् प्रकाशितानि जायन्ते तथा यो न्यायविद्याप्रकाशं सर्वेभ्य आददे यथा परस्मादादवरादासमुद्राद् दिवः पृथिव्याश्च मध्ये सूर्यः प्रकाशं प्रयच्छति तथा सद्गुणानादाय प्रजाभ्यो हितमाददे स आ समन्तात्सुखेन वर्धते॥७॥

भावार्थः-यदि विद्वांसः सत्यभावेन न्यायं संगृह्य प्रजाः पुत्रवत्पालयेयुस्तर्हि ते प्रजामध्ये सूर्य इव प्रशस्तयशसो भूत्वा इति सर्वेभ्यः सुखं दातुं शक्नुवन्तीति॥७॥

अत्र वैश्वानरदृष्टान्तेन राजकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षष्ठं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **[जो]** **(वैश्वानरः)** सब मनुष्यों का नायक **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य तेजस्वी **(देवः)** पूर्ण विद्वान् सुखदाता राजा जैसे **(सूर्यस्य)** सूर्य के **(उदिता)** उदय में **(बुध्न्या)** अन्तरिक्षस्थ **(वसूनि)** द्रव्य **(आ)** अच्छे प्रकार प्रकाशित होते हैं, वैसे जो न्याय और विद्या के प्रकाश को सब से **(आ ददे)** लेता है वा जैसे **(परस्मात्)** पर **(अवरात्)** तथा इधर हुए **(आ, समुद्रात्)** अन्तरिक्ष के जल पर्य्यन्त **(दिवः)** प्रकाश और **(पृथिव्याः)** पृथिवी के बीच सूर्य्य प्रकाश को देता है, वैसे श्रेष्ठ गुणों का ग्रहण कर प्रजा के लिये हित **(आ ददे)** ग्रहण करता है वह **(आ)** अच्छे सुख से बढ़ता है॥७॥

भावार्थः-यदि विद्वान् लोग सत्य भाव से न्याय का संग्रह कर प्रजाओं का पुत्र के तुल्य पालन करें तो वे प्रजा में सूर्य के तुल्य प्रकाशित कीर्ति वाले होकर सब के लिये सुख देने को समर्थ होते हैं॥७॥

इस सूक्त मे के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह छठा सूक्त और नववां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य सप्तमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३ त्रिष्टुप्। ४, ५, ६ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ भुरिक् पङ्क्तिः। ७ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ कीदृशं राजानं कुर्युरित्याह॥

अब सात ऋचा वाले सातवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में कैसे पुरुष को राजा करें, इस विषय को कहते हैं।

प्र वो॑ दे॒वं चि॑त्सहसा॒नम॒ग्निमश्वं॒ न वा॒जिनं॑ हिषे॒ नमो॑भिः।
भवा॑ नो दू॒तो अ॑ध्व॒रस्य॑ वि॒द्वान्त्मना॑ दे॒वेषु॑ विविदे मि॒तद्रुः॥ १॥

प्र। वः। दे॒वम्। चि॒त्। स॒ह॒सा॒नम्। अ॒ग्निम्। अश्व॑म्। न। वा॒जिन॑म्। हि॒षे॒। नमः॑ऽभिः। भव॑। नः॒। दू॒तः। अ॒ध्व॒रस्य॑। वि॒द्वान्। त्मना॑। दे॒वेषु॑। वि॒वि॒दे॒। मि॒तऽद्रुः॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वः**) युष्मान् (**देवम्**) दातारम् (**चित्**) अपि (**सहसानम्**) (**अग्निम्**) विद्यया प्रकाशमानम् (**अश्वम्**) आशुगामिनम् (**न**) इव (**वाजिनम्**) प्रशस्तवेगवन्तम् (**हिषे**) प्रहिणोमि (**नमोभिः**) अन्नादिभिः (**भवा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नः**) अस्माकम् (**दूतः**) सुशिक्षितो दूत इव (**अध्वरस्य**) अहिंसामयस्य न्याय्यव्यवहारस्य (**विद्वान्**) (**त्मना**) आत्मना (**देवेषु**) विद्वत्सु (**विविदे**) विद्वत्सु (**विविदे**) विज्ञायते (**मितद्रुः**) यो मितं शास्त्रसंमितं द्रवति प्राप्नोति सः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहं वः सहसानं देवमग्निमश्वं न वाजिनं नमोभिः प्र हिषे तथैतं यूयमपि वर्धयत। हे राजँस्त्मना यो देवेषु मितद्रुर्विद्वान् विविदे तं प्राप्य नोऽध्वरस्य दूतो भव॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो हि प्रजाक्षेपं सहतेऽश्व इव सर्वकार्याणि सद्यो व्याप्नोति विद्वत्सु विद्वान् दूत इव प्राप्तसमाचारो भवेत्तमेव राजानं कुरुत॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मैं (**वः**) तुमको (**सहसानम्**) यज्ञ के साधक (**देवम्**) दानशील (**अग्निम्**) विद्या से प्रकाशमान (**अश्वम्, न**) शीघ्र चलने वाले घोड़े के तुल्य (**वाजिनम्**) उत्तम वेग वाले (**नमोभिः**) अन्नादि करके (**प्र, हिषे**) अच्छी वृद्धि करता हूँ, वैसे इसको तुम लोग भी बढ़ाओ। हे राजन्! (**त्मना**) आत्मा से जो (**देवेषु**) विद्वानों में (**मितद्रुः**) शास्त्रानुकूल पदार्थों को प्राप्त होने वाला (**विद्वान्**) विद्वान् (**विविदे**) जाना जाता है उसको प्राप्त होके (**नः**) हमारे (**अध्वरस्य**) अहिंसा और न्याययुक्त व्यवहार के (**दूतः**) सुशिक्षित दूत के तुल्य (**भव**) हूजिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो प्रजा के किये आक्षेपों को सहता, घोड़े के तुल्य सब कार्य्यों को शीघ्र व्याप्त होता, विद्वानों में विद्वान्, दूत के तुल्य समाचार पहुँचाने वाला हो, उसी को राजा करो॥ १॥

पुनः कीदृशो राजा श्रेयान् भवतीत्याह॥

फिर कैसा राजा श्रेष्ठ होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं।

आ या॑ह्यग्ने प॒थ्या॒३॑ अनु॒ स्वा म॒न्द्रो दे॒वानां॑ स॒ख्यं जु॒षा॒णः।

आ सानु शुष्मैर्नदयन् पृथिव्या जम्भेभिर्विश्वमुशधग्वनानि॥२॥

आ। याहि। अग्ने। पथ्याः। अनु। स्वाः। मन्द्रः। देवानाम्। सख्यम्। जुषाणः। आ। सानु। शुष्मैः। नदयन्। पृथिव्याः। जम्भेभिः। विश्वम्। उशधक्। वनानि॥२॥

पदार्थः-(**आ याहि**) आगच्छ (**अग्ने**) विद्युदिव राजविद्याव्याप्त (**पथ्याः**) या धर्मपन्थानमर्हन्ति (**अनु**) अनुकूलाः (**स्वाः**) स्वकीयाः प्रजाः (**मन्द्रः**) आनन्दप्रदः (**देवानाम्**) विदुषाम् (**सख्यम्**) मित्रभावम् (**जुषाणः**) सेवमानः (**आ**) (**सानु**) शिखरमिव विज्ञानम् (**शुष्मैः**) बलैः (**नदयन्**) नादं कुर्वन् (**पृथिव्याः**) भूमेः (**जम्भेभिः**) गात्रविनामैः (**विश्वम्**) सर्वं जगत् (**उशधक्**) कामयमानः (**वनानि**) सूर्यकिरणानिव धनानि॥२॥

अन्वयः-हे अग्ने! देवानां सख्यं जुषाणो मन्द्रः शुष्मैः पृथिव्याः सान्वा नदयन्विद्युदिव जम्भेभिर्विश्वं वनान्युशधक्सन् पथ्याः स्वा अन्वा याहि॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो विद्युदिव पराक्रमी सूर्य इव प्रतापी स्वानुकूलाः प्रजा न्यायेनानन्दिताः करोति स एवोत्तमो राजा भवति॥२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) बिजुली के तुल्य राजविद्या में व्याप्त! (**देवानाम्**) विद्वानों के (**सख्यम्**) मित्रपन को (**जुषाणः**) सेवते हुए (**मन्द्रः**) आनन्ददाता (**शुष्मैः**) बलों के साथ (**पृथिव्याः**) पृथिवी के (**सानु**) शिखर के तुल्य विज्ञान को (**आ, नदयन्**) अच्छे प्रकार नाद करते हुए विद्युत् के तुल्य (**जम्भेभिः**) गात्र नमाने से (**विश्वम्**) [सम्पूर्ण जगत] (**वनानि**) सूर्य की किरणों के तुल्य धनों की (**उशधक्**) कामना करते हुए (**पथ्याः**) धर्ममार्ग को प्राप्त होने वाली (**स्वाः**) अपनी प्रजाओं को (**अनु, आ, याहि**) अनुकूल आइये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो बिजुली के तुल्य पराक्रमी, सूर्य के तुल्य प्रतापी, अपनी अनुकूल प्रजाओं को न्याय से आनन्दित करता है, वही उत्तम राजा होता है॥२॥

अत्र के मनुष्या उत्तमाः सन्तीत्याह॥

इस जगत् में कौन मनुष्य उत्तम हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्राचीनो यज्ञः सुधितं हि बर्हिः प्रीणीते अग्निरीळितो न होता।
आ मातरा विश्ववारे हुवानो यतो यविष्ठ जज्ञिषे सुशेवः॥३॥

प्राचीनः। यज्ञः। सुऽधितम्। हि। बर्हिः। प्रीणीते। अग्निः। ईळितः। न। होता। आ। मातरा। विश्ववारे इति विश्वऽवारे। हुवानः। यतः। यविष्ठ। जज्ञिषे। सुऽशेवः॥३॥

पदार्थः-(**प्राचीनः**) यः प्रागञ्चति (**यज्ञः**) सङ्गन्तव्यः (**सुधितम्**) सुष्ठु हितम् (**हि**) निश्चये (**बर्हिः**) उत्तमं प्रवृद्धं हविः (**प्रीणीते**) कामयते (**अग्निः**) पावक इव (**ईळितः**) प्रशंसितगुणः (**न**) इव (**होता**) हवनकर्त्ता (**आ**) (**मातरा**) जनकौ (**विश्ववारे**) सर्वसुखवरितारौ (**हुवानः**) स्तुवन् (**यतः**) याभ्याम् (**यविष्ठ**) अतिशयेन यौवनं प्राप्तः (**जज्ञिषे**) जायसे (**सुशेवः**) सुसुखः॥३॥

अन्वयः-हे यविष्ठ! यतस्त्वं सुशेवो जज्ञिषे तौ विश्ववारे मातरा हुवान ईळितो होता नाग्निरिव प्राचीनो यज्ञः सुधितं बर्हिः प्राप्तुं बर्हिः प्राप्तुं य आ प्रीणीते स हि योग्यो जायते॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा होता वेदविहितं यज्ञं हवींषि च कामयते तथैव ये पितॄन् प्रशंसमानाः सेवन्ते त एवाऽत्र कृतज्ञा जायन्ते॥३॥

पदार्थः-हे **(यविष्ठ)** अतिशय कर युवावस्था को प्राप्त **(यतः)** जिनसे आप **(सुशेवः)** सुन्दर सुखयुक्त **(जज्ञिषे)** होते हो उन **(विश्ववारे)** सब सुखों के स्वीकार करने वाले दोनों **(मातरा)** माता-पिता की **(हुवानः)** स्तुति करता हुआ **(ईळितः)** प्रशंसित गुणोंवाला **(होता)** होमकर्त्ता **(न)** जैसे, वैसे **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य **(प्राचीनः)** पूर्वकाल सम्बन्धी **(यज्ञः)** संग करने योग्य पुरुष **(सुधितम्)** सुन्दर हितकारी **(बर्हिः)** उत्तम अधिक हविष्य को प्राप्त करने के अर्थ जो **(आ, प्रीणीते)** अच्छे प्रकार कामना करता है **(हि)** वही योग्य होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे होमकर्त्ता वेदविहित यज्ञ और उसकी सामग्री की कामना करता है, वैसे ही जो पितृजनों की प्रशंसा करते हुए सेवन करते हैं, वे इस जगत् में कृतज्ञ होते हैं॥३॥

पुनः को मनुष्यो योग्यो राजा भवतीत्याह॥

फिर कौन मनुष्य योग्य राजा होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒द्यो अ॑ध्व॒रे र॑थि॒रं ज॑नन्त॒ मानु॑षासो॒ विचे॑तसो॒ य ए॑षाम्।
वि॒शाम॑धायि वि॒श्पति॑र्दुरो॒णे३॒॑ग्निर्म॒न्द्रो मधु॑वचा ऋ॒ताव॑ा॥४॥

स॒द्यः। अ॒ध्व॒रे। र॒थि॒रम्। ज॒न॒न्त॒। मानु॑षासः। विऽचे॑तसः। यः। ए॒षा॒म्। वि॒शाम्। अ॒धा॒यि॒। वि॒श्पति॑ः। दु॒रो॒णे। अ॒ग्निः। म॒न्द्रः। मधु॑ऽवचाः। ऋ॒तऽवा॑॥४॥

पदार्थः-**(सद्यः)** **(अध्वरे)** अहिंसामये व्यवहारे **(रथिरम्)** यो रथिषु रमते तम् **(जनन्त)** जनयन्ति **(मानुषासः)** मनुष्याः **(विचेतसः)** विविधप्रज्ञायुक्ताः **(यः)** **(एषाम्)** विदुषाम् **(विशाम्)** प्रजानाम् **(अधायि)** धीयते **(विश्पतिः)** प्रजापालकः **(दुरोणे)** गृहे **(अग्निः)** पावक इव **(मन्द्रः)** आनन्दप्रदः **(मधुवचाः)** मधूनि मधुराणि वचांसि यस्य सः **(ऋतावा)** य ऋतं सत्यमेव वनति सम्भजति सः॥४॥

अन्वयः-विचेतसो मानुषासोऽध्वरे यं रथिरं सद्यो जनन्त य एषां मध्ये दुरोणेऽग्निरिव मन्द्रो मधुवचा ऋतावा विशां विश्पतिर्विद्वद्भिरधायि स एव राजा भवितुमर्हति॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यं सुशिक्षया विद्यां ग्राहयित्वा विपश्चितं विद्वांसो जनयन्ति स योग्यो भूत्वा गृहे दीप इव प्रजासु न्यायप्रकाशको जायते॥४॥

पदार्थः- **(विचेतसः)** विविधप्रकार की बुद्धि से युक्त **(मानुषासः)** मनुष्य **(अध्वरे)** अहिंसारूप व्यवहार में जिस **(रथिरम्)** रथवालों में रमण करने वाले को **(सद्यः)** शीघ्र **(जनन्त)** प्रकट करते हैं **(यः)** जो **(एषाम्)** विद्वानों के बीच **(दुरोणे)** घर में **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य **(मन्द्रः)**

आनन्ददाता **(मधुवचाः)** कोमल वचनों **(ऋतावा)** और सत्य का सेवन करने वाला **(विशाम्)** प्रजाओं का **(विश्पतिः)** रक्षक विद्वानों से **(अधायि)** धारण किया जाता, वही राजा होने को योग्य होता है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिसको उत्तम शिक्षा से विद्या ग्रहण कराके विद्वान् लोग पण्डित करते हैं, वह योग्य होकर घर में दीप के तुल्य प्रजाओं में न्याय का प्रकाशक होता है॥४॥

पुनरग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

असादि वृतो वह्निराजगन्वानग्निर्ब्रह्मा नृषदने विधर्ता।
द्यौश्च यं पृथिवी वावृधाते आ यं होता यजति विश्ववारम्॥५॥

असादि। वृतः। वह्निः। आऽजगन्वान्। अग्निः। ब्रह्मा। नृऽसदने। विऽधर्ता। द्यौः। च। यम्। पृथिवी। वावृधाते इति। आ। यम्। होता। यजति। विश्वऽवारम्॥५॥

पदार्थः-**(असादि)** आसद्यते **(वृतः)** स्वीकृतः **(वह्निः)** वोढा **(आजगन्वान्)** समन्ताद्गन्ता **(अग्निः)** पावक इव **(ब्रह्मा)** चतुर्वेदवित् **(नृषदने)** नृणां स्थाने **(विधर्ता)** विशेषेण धारकः **(द्यौः)** सूर्यः **(च)** यम् **(पृथिवी)** भूमी **(वावृधाते)** वर्धयतः **(आ)** **(यम्)** **(होता)** **(यजति)** सङ्गच्छते **(विश्ववारम्)** विश्वः सर्वैर्वरणीयम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा नृषदने ब्रह्मा भवति तथा यो वृत आजगन्वान् वह्निरग्निर्विधर्ताऽसादि यं द्यौः पृथिवी च वावृधाते यं विश्ववारं होता आ यजति तं सर्वे विजानन्तु॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाग्निर्यथावत्सम्प्रयुक्तः सन् सर्वाणि कार्य्याणि साध्नोति तथैव सत्कृत्य स्वीकृतवेदविद्वांसो धर्मार्थकाममोक्षान् पदार्थान् सर्वान् प्रापयन्ति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(नृषदने)** मनुष्यों के स्थान में **(ब्रह्मा)** चार वेद का जानने वाला होता है, वैसे जो **(वृतः)** स्वीकार किया **(आजगन्वान्)** अच्छे प्रकार प्राप्त होने वाला **(वह्निः)** पहुँचाने वाले **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य **(विधर्ता)** विशेष कर धारणकर्ता **(असादि)** अच्छे प्रकार स्थित होता है **(यम्)** जिसको **(द्यौः)** सूर्य **(च)** और **(पृथिवी)** भूमि **(वावृधाते)** बढ़ाते हैं **(यम्)** जिस **(विश्ववारम्)** सबको स्वीकार करने योग्य को **(होता)** होमकर्ता **(आ, यजति)** अच्छे प्रकार सङ्ग करता है, उस को सब लोग जानें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि यथावत् सम्प्रयोग किया हुआ सब कार्य्यों को सिद्ध करता है, वैसे ही सत्कार कर स्वीकार किये वेद के विद्वान् लोग धर्मार्थ-काम-मोक्ष पदार्थों को सबको प्राप्त कराते हैं॥५॥

पुनः के वरा विद्वांसो भवन्तीत्याह॥

फिर कौन श्रेष्ठ विद्वान् होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एते द्युम्नेभिर्विश्वमातिरन्त मन्त्रं ये वारं नर्या अतक्षन्।
प्र ये विशस्तिरन्त श्रोषमाणा आ ये मे अस्य दीधयन्नृतस्य॥६॥

एते। द्युम्नेभिः। विश्वम्। आ। अतिरन्त। मन्त्रम्। ये। वा। अरम्। नर्याः। अतक्षन्। प्र। ये। विशः। तिरन्त। श्रोषमाणाः। आ। ये। मे। अस्य। दीधयन्। ऋतस्य॥६॥

पदार्थः-(**एते**) (**द्युम्नेभिः**) धनैर्यशोभिर्वा (**विश्वम्**) समग्रम् (**आ अतिरन्त**) तरन्ति (**मन्त्रम्**) विचारम् (**ये**) (**वा**) (**अरम्**) अलम् (**नर्याः**) नृषु साधवः (**अतक्षन्**) कुर्वन्ति (**प्र**) (**ये**) (**विशः**) प्रजाः (**तिरन्त**) प्रतरन्ति (**श्रोषमाणाः**) शृण्वन्तः (**आ**) (**ये**) (**मे**) मम (**अस्य**) (**दीधयन्**) प्रदीपयन्ति (**ऋतस्य**) सत्यस्य विज्ञानस्य॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य एते नर्या द्युम्नेभिर्विश्वं मन्त्रमातिरन्त वारमतक्षन् ये श्रोषमाणा विशः प्र तिरन्त ये मेऽस्यर्त्तस्याऽऽदीधयँस्तेऽभीष्टं प्राप्नुवन्ति॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सुविचारेण स्वीकर्त्तव्यान् पदार्थान् प्राप्नुवन्ति नित्यं विद्वद्वचसां श्रोतारो भूत्वा सत्याऽनृते विविच्य सत्यं धृत्वाऽऽसत्यं विहाय यशस्विनो धनाढ्या जायन्ते त एवाऽत्र सत्कर्तव्या भवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**ये**) जो (**एते**) ये (**नर्याः**) मनुष्यों में श्रेष्ठ (**द्युम्नेभिः**) धन वा कीर्त्ति से (**विश्वम्**) समस्त (**मन्त्रम्**) विचार को (**आ, अतिरन्त**) अच्छे प्रकार पार होते (**वा, अरम्**) अथवा पूर्ण कार्य्य को (**अतक्षन्**) तीक्ष्णता से करते (**ये**) जो (**श्रोषमाणाः**) सुनते हुए (**विशः**) प्रजाजनों को (**प्र, तिरन्त**) अच्छे तरते और (**ये**) जो (**मे**) मेरे (**अस्य**) इस (**ऋतस्य**) सत्य विज्ञान को (**आ, दीधयन्**) अच्छे प्रकार प्रकाशित करते हैं, वे अभीष्ट को प्राप्त होते हैं॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य सुन्दर विचार के साथ स्वीकार करने योग्य पदार्थों को प्राप्त होते और नित्य विद्वानों के वचनों के श्रोता होकर सत्य झूठ का विवेक कर असत्य छोड़ सत्य का ग्रहण कर यशस्वी धनाढ्य होते हैं, वही इस जगत् में सत्कार के योग्य होते हैं॥६॥

पुनः कः सुप्रज्ञो बलिष्ठः प्रशंसितो जायत इत्याह॥

फिर कौन अच्छा, चतुर, अतिबलवान् तथा प्रशंसित होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशानं सूनो सहसो वसूनाम्।
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥७॥१०॥

नु। त्वाम्। अग्ने। ईमहे। वसिष्ठाः। ईशानम्। सूनो इति। सहसः। वसूनाम्। इषम्। स्तोतृऽभ्यः। मघवत्ऽभ्यः। आनट्। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥७॥

पदार्थः-(**नु**) क्षिप्रम्। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**त्वाम्**) (**अग्ने**) विज्ञानस्वरूप (**ईमहे**) याचामहे (**वसिष्ठाः**) अतिशयेन वसवः (**ईशानम्**) ईषणशीलम् (**सूनो**) सत्पुत्र (**सहसः**) बलिष्ठस्य

(वसूनाम्) पृथिव्यादितत्त्वानां धनानां वा **(इषम्)** अन्नादिकम् **(स्तोतृभ्य:)** सर्वविद्याप्रशंसकेभ्य: **(मघवद्भ्य:)** बहुधनयुक्तेभ्य: **(आनट्)** व्याप्नोति **(यूयम्)** **(पात)** रक्षत **(स्वस्तिभि:)** स्वास्थ्यकारिणीभि: क्रियाभि: **(सदा)** **(न:)** अस्मान्॥७॥

अन्वय:-हे सहस: सूनोऽग्ने! वसूनां मध्ये ईशानं त्वां वयं वसिष्ठा ईमहे यूयं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्यो नोऽस्मान् सदा पात यो युष्मान्विषं चानट् तं यूयं स्वस्तिभि: सदा पात॥७॥

भावार्थ:-यो विद्वद्भ्यो धनं प्रयच्छति विद्यां च याचते यस्य रक्षामाप्ता विदधति सर्वदा रक्षितो वर्धमान: सन् सर्वैश्वर्यो जायत इति॥७॥

अत्राग्निदृष्टान्तेन राजादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे **(सहस:)** अतिबलवान् के **(सूनो)** सत्पुत्र **(अग्ने)** विज्ञानस्वरूप! **(वसूनाम्)** पृथिव्यादि तत्त्व साधनों के बीच **(ईशानम्)** समर्थ बलवान् **(त्वाम्)** आप को **(वसिष्ठा:)** अत्यन्त वसने वाले हम लोग **(ईमहे)** याचना करते हैं **(यूयम्)** तुम लोग **(स्तोतृभ्य:)** सब विद्याओं की प्रशंसा करने वाले **(मघवद्भ्य:)** बहुत धनयुक्त होने के लिये **(न:)** हमारी **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो। जो तुमको और **(इषम्)** अन्नादि को **(नु)** शीघ्र **(आनट्)** व्याप्त हो, उसकी तुम **(स्वस्तिभि:)** स्वस्थता कराने वाली क्रियाओं से सदा रक्षा करो॥७॥

भावार्थ:-जो विद्वानों के लिये धन देता है और विद्या की याचना करता है, जिसकी रक्षा आप्त करते हैं, वह सदा रक्षा को प्राप्त, बढ़ता हुआ सब ऐश्वर्य से युक्त होता है॥७॥

इस सूक्त में अग्नि के दृष्टान्त से राजादि के गुणों का वर्णन होने से सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यहाँ सातवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्याष्टमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ७ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ५ निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः। २, ३, ४, ६ त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ स राजा कीदृशः स्यादित्याह॥

अब वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्धे राजा समर्यो नमोभिर्यस्य प्रतीकमाहुतं घृतेन।
नरो हव्येभिरीळते सबाध आग्निरग्र उषसामशोचि॥ १॥

इन्धे। राजा। सम्। अर्यः। नमःऽभिः। यस्य। प्रतीकम्। आऽहुतम्। घृतेन। नरः। हव्येभिः। ईळते। सऽबाधः। आ। अग्निः। अग्रे। उषसाम्। अशोचि॥ १॥

पदार्थः-(**इन्धे**) प्रदीपयामि (**राजा**) प्रकाशमानः (**समर्यः**) युद्धकुशलः (**नमोभिः**) अन्नादिभिस्सत्कारैर्वा (**यस्य**) (**प्रतीकम्**) प्रत्येति येन तत्सैन्यम् (**आहुतम्**) स्पर्द्धितम् (**घृतेन**) प्रदीपनेनोदकेनाज्येन वा (**नरः**) नेतारो मनुष्याः (**हव्येभिः**) होतुं दातुमर्हैः (**ईळते**) स्तुवन्ति (**सबाधः**) बाधेन सह वर्त्तमानः (**आ**) (**अग्निः**) पावक इव (**अग्रे**) पुरस्तात् (**उषसाम्**) प्रभातानाम् (**अशोचि**) प्रकाश्यते॥ १॥

अन्वयः-ये नरो हव्येभिर्नमोभिस्सह घृतेन यस्याहुतं प्रतीकमीळते स समर्यो राजाऽहं तानिन्धे। यथोषसामग्रे सबाधोऽग्निराशोचि तथाऽहं शत्रूणां सम्मुखे स्वसेनाप्रकाशक उत्साहकश्च भवेयम्॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये यस्य भृत्या उपकारकाः स्युस्त उपकृतेन सदा सत्करणीयाः॥ १॥

पदार्थः-जो (**नरः**) नायक मनुष्य (**हव्येभिः**) देने योग्य जनों वा (**नमोभिः**) अन्नादि से होने वाले सत्कारों के साथ (**घृतेन**) प्रदीप्तकारक जल वा घी से (**यस्य**) जिसकी (**आहुतम्**) स्पर्द्धा ईर्षा को प्राप्त (**प्रतीकम्**) सेना की निश्चय करने वाली (**ईळते**) स्तुति करते हैं वह (**समर्यः**) युद्ध में कुशल (**राजा**) प्रकाशमान तेजस्वी मैं उनको (**इन्धे**) प्रदीप्त करता हूँ जैसे (**उषसाम्**) प्रभात समय होने से (**अग्रे**) पहिले (**सबाधः**) बाध अर्थात् संयोग से बने सब संसार के साथ वर्त्तमान (**अग्निः**) अग्नि के तुल्य तेजस्वी जन (**आ, अशोचि**) प्रकाशित किया जाता है, वैसे मैं शत्रुओं के सम्मुख अपनी सेना का प्रकाशक और उत्साह देने वाला होऊँ॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो जिस के भृत्य उपकार करने वाले हों, वे उपकार को प्राप्त हुए से सदा सत्कार पाने योग्य हैं॥ १॥

पुनः स राजा कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयमु ष्य सुमहाँ अवेदि होता मन्द्रो मनुषो यह्वो अग्निः।
वि भा अकः ससृजानः पृथिव्यां कृष्णपविरोषधीभिर्ववक्षे॥ २॥

अयम्। ऊँ इति। स्यः। सुऽमहान्। अवेदि। होता। मन्द्रः। मनुषः। यह्वः। अग्निः। वि। भाः।

अकरित्यकः। ससृजानः। पृथिव्याम्। कृष्णऽपविः। ओषधीभिः। ववक्षे॥ २॥

पदार्थः-(**अयम्**) (उ) (**स्यः**) सः (**सुमहान्**) शुभैर्गुणकर्मभिः पूजनीयः (**अवेदि**) विद्यते (**होता**) दाता (**मन्द्रः**) आनन्दयिता (**मनुषः**) मनुष्यः (**यह्वः**) महान् (**अग्निः**) पावक इव (**वि**) (**भाः**) यो भाति (**अकः**) करोति (**ससृजानः**) स्रष्टा सन् (**पृथिव्याम्**) भूमौ (**कृष्णपविः**) कृष्णो विलेखः पविः शस्त्रासमूहो यस्य (**ओषधीभिः**) सोमलतादिभिः (**ववक्षे**) वहति॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा विभा यह्वोऽग्निरोषधीभिर्ववक्षे तथा कृष्णपविर्होता मन्द्रः सुमहान् मनुषो विद्वद्भिरवेदि स्योऽयमु पृथिव्यां सर्वान् सुखेन ससृजानः सन् सर्वेषामुन्नतिमकः॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्यवदुपकारका भवन्ति त एव सुष्ठु पूज्या जायन्ते॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे (**विभाः**) प्रकाश करने वाला (**यह्वः**) बड़ा (**अग्निः**) अग्नि के तुल्य तेजस्वी (**ओषधीभिः**) सोमलतादि ओषधियों से (**ववक्षे**) प्राप्त करता है, वैसे (**कृष्णपविः**) तीक्ष्ण काट करने वाले शस्त्र अस्त्रों से युक्त (**होता**) दानशील (**मन्द्रः**) आनन्द कराने वाला (**सुमहान्**) शुभ गुणकर्मों से सत्कार करने योग्य (**मनुषः**) मनुष्य विद्वानों से (**अवेदि**) जाना जाता है (**स्यः**) वह (**अयम्**) यह (उ) ही (**पृथिव्याम्**) पृथिवी पर सब को सुख से (**ससृजानः**) संयुक्त करता हुआ सबकी उन्नति (**अकः**) करता है॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य के तुल्य उपकारक होते हैं वे ही अच्छे प्रकार सत्कार पाने योग्य होते हैं॥ २॥

पुनस्ते राजप्रजाजनाः कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर वे राजा और प्रजा के जन कैसे वर्त्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कया नो अग्ने वि वसः सुवृक्तिं कामु स्वधामृणवः शस्यमानः।
कदा भवेम पतयः सुदत्र रायो वन्तारो दुष्टरस्य साधोः॥ ३॥

कया। नः। अग्ने। वि। वसः। सुऽवृक्तिम्। काम्। ऊँ इति। स्वधाम्। ऋणवः। शस्यमानः। कदा। भवेम। पतयः। सुऽदत्र। रायः। वन्तारः। दुस्तरस्य। साधोः॥ ३॥

पदार्थः-(**कया**) रीत्या (**नः**) अस्मान् (**अग्ने**) विद्युद्वदैश्वर्यप्रद (**वि**) (**वसः**) निवासय (**सुवृक्तिम्**) सुष्ठु व्रजन्ति यस्यां नीतौ ताम् (**काम्**) (उ) (**स्वधाम्**) अन्नम् (**ऋणवः**) प्रसाध्नुयाः (**शस्यमानः**) स्तूयमानः (**कदा**) (**भवेम**) (**पतयः**) (**सुदत्र**) सुष्ठु दातः (**रायः**) धनस्य (**वन्तारः**) सम्भाजकाः (**दुष्टरस्य**) दुःखेन तरितुं योग्यस्य (**साधोः**) सत्पुरुषस्य॥ ३॥

अन्वयः-हे सुदत्राऽग्ने! शस्यमानस्त्वं कया नो वि वसः कामु [सुवृक्तिं] स्वधामृणवः कदा दुष्टरस्य साधोर्वन्तारो रायः पतयो वयं भवेम॥ ३॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवानस्मान् यथावत्पालयित्वा धनाढ्यान् कुर्यास्तर्हि वयमपि तव सज्जनस्य सततमुन्नतिं कुर्य्याम॥ ३॥

पदार्थः-हे (**सुदत्र**) सुन्दर दाता (**अग्ने**) विद्युत् के समान ऐश्वर्य देने वाले राजपुरुष!

(शस्यमानः) प्रशंसा को प्राप्त हुए आप **(कया)** किस रीति से **(नः)** हमको **(वि, वसः)** प्रकाश कराते हैं **(काम्, उ)** किसी **(सुवृक्तिम्)** सुन्दर प्रकार जिस में प्राप्त हों उस नीति और **(स्वधाम्)** अन्न को **(ऋणवः)** प्रसिद्ध करो **(कदा)** कब **(दुष्टरस्य)** दुःख से तरने योग्य **(साधोः)** सत्पुरुष के **(वन्तारः)** सेवक **(रायः)** धन के **(पतयः)** स्वामी हम लोग **(भवेम)** होवें॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि आप हमारा यथावत् पालन कर धनाढ्य करें तो हम भी आप सज्जन की निरन्तर उन्नति करें॥३॥

पुनः कीदृशो राजा सत्कर्त्तव्योऽयं कीदृशान् सत्कुर्यादित्याह॥

फिर कैसा राजा सत्कार के योग्य होता और यह राजा कैसों का सत्कार करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रप्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वि यत्सूर्यो न रोचते बृहद्भाः।
अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ द्युतानो दैव्यो अतिथिः शुशोच॥४॥

प्रऽप्र। अयम्। अग्निः। भरतस्य। शृण्वे। वि। यत्। सूर्यः। न। रोचते। बृहत्। भाः। अभि। यः। पूरुम्। पृतनासु। तस्थौ। द्युतानः। दैव्यः। अतिथिः। शुशोच॥४॥

पदार्थः-**(प्रप्र)** अतिप्रकर्षः **(अयम्)** **(अग्निः)** पावक इव **(भरतस्य)** धारकस्य पोषकस्य **(शृण्वे)** **(वि)** **(यत्)** यः **(सूर्यः)** **(न)** इव **(रोचते)** प्रकाशते **(बृहत्)** महज्जगद्राज्यं वा **(भाः)** प्रकाशयति **(अभि)** **(यः)** **(पूरुम्)** पालकं सेनापतिम् **(पृतनासु)** सेनासु **(तस्थौ)** तिष्ठेत् **(द्युतानः)** देदीप्यमानः **(दैव्यः)** देवैः कृतो विद्वान् **(अतिथिः)** अविद्यमाना तिथिर्गमनागमनयोर्यस्य **(शुशोच)** शोचते प्रकाशते॥४॥

अन्वयः-हे राजन्! यद्योऽयं भरतस्याऽग्निरिव सूर्यो न वि रोचते यमहम्प्रप्र शृण्वे यो बृहत्पूरुमभि भा अतिथिरिव दैव्यो द्युतानः पृतनासु तस्थौ स शुशोच तं त्वं सदैव सत्कुर्याः॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये राजानः सत्कर्मकर्त्तॄनेव सत्कुर्य्युर्दुष्टाचारान् दण्डयेयुस्त एवसूर्यवत्प्रकाशमाना अतिथिवत्सत्कर्तव्याः सन्तः सर्वदा विजयिनो भूत्वा प्रसिद्धकीर्त्तयो भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे राजपुरुष **(यत्)** जो **(अयम्)** यह **(भरतस्य)** धारण वा पोषण करने वाले के **(अग्निः)** अग्नि के समान वा **(सूर्य, नः)** सूर्य के समान **(वि, रोचते)** विशेष प्रकाशित होता है वा जिसको मैं **(प्रप्र, शृण्वे)** अच्छे प्रकार सुनता हूँ **(यः)** जो **(बृहत्)** बड़े जगत् वा राज्य को तथा **(पूरुम्)** पालक सेनापति को **(अभि, भाः)** सब ओर से प्रकाशित करता है तथा **(अतिथिः)** जाने आने की तिथि जिसकी नियत न हो उसके तुल्य **(दैव्यः)** विद्वानों ने किया विद्वान् **(द्युतानः)** प्रकाशमान **(पृतनासु)** सेनाओं में **(तस्थौ)** स्थित हो वह **(शुशोच)** प्रकाशित होता है, उसका आप सदा सत्कार कीजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो राजा लोग सत्कर्म करने वालों का ही सत्कार करें और दुष्टाचारियों को दण्ड देवें वे ही सूर्य के तुल्य प्रकाशमान अतिथियों के

समान सत्कार करने योग्य होते हुए सर्वदा विजयी होकर प्रसिद्ध कीर्त्ति वाले होते हैं॥४॥

पुनः सः राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

असन्नित्त्वे आहवनानि भूरि भुवो विश्वेभिः सुमना अनीकैः।
स्तुतश्चिदग्ने शृण्विषे गृणानः स्वयं वर्धस्व तन्वं सुजात॥५॥

असन्। इत्। त्वे इति। आऽहवनानि। भूरि। भुवः। विश्वेभिः। सुऽमनाः। अनीकैः। स्तुतः। चित्। अग्ने। शृण्विषे। गृणानः। स्वयम्। वर्धस्व। तन्वम्। सुऽजात॥५॥

पदार्थः-(**असन्**) भवन्ति (**इत्**) एव (**त्वे**) त्वयि (**आहवनानि**) सत्कारपूर्वकनिमन्त्रणानि (**भूरि**) (**भुवः**) पृथिव्याः (**विश्वेभिः**) समग्रैः (**सुमनाः**) शोभनमनाः (**अनीकैः**) सुशिक्षितैस्सैन्यैः (**स्तुतः**) (**चित्**) अपि (**अग्ने**) विद्वन्राजन् (**शृण्विषे**) (**गृणानः**) स्तुवन् (**स्वयम्**) (**वर्धस्व**) (**तन्वम्**) शरीरम् (**सुजात**) सुष्ठु प्रसिद्ध॥५॥

अन्वयः-हे सुजाताग्ने! त्वे भुवो भूर्याहवनान्यसन् विश्वेभिरनीकैः सुमनाः स्तुतो गृणानः सर्वेषां वाक्यानि **[चित्]** शृण्विषे स त्वं स्वयमित्तन्वं वर्धस्व॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवान् प्रशंसितानि धर्म्याणि कार्याण्यकरिष्यत्तर्हि सर्वत्र विजयमानः सन् स्वयं वर्द्धित्वा सर्वाः प्रजा अवर्धयिष्यत्॥५॥

पदार्थः-हे (**सुजात**) सुन्दर प्रकार प्रसिद्ध (**अग्ने**) विद्वन् राजन्! (**त्वे**) आप के निमित्त (**भुवः**) पृथिवी के सम्बन्ध में (**भूरि**) बहुत (**आहवनानि**) सत्कारपूर्वक निमन्त्रण (**असन्**) होते हैं (**विश्वेभिः**) सब (**अनीकैः**) अच्छी शिक्षित सेनाओं के साथ (**सुमनाः**) प्रसन्न चित्त (**स्तुतः**) स्तुति को प्राप्त (**गृणानः**) स्तुति करने वालों के वाक्यों को (**चित्**) भी (**शृण्विषे**) सुनते हैं सो आप (**स्वयमित्**) स्वयमेव (**तन्वम्**) शरीर को (**वर्धस्व**) बढ़ाइये॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि आप प्रशंसित धर्मयुक्त कर्मों को करें तो सर्वत्र विजय को प्राप्त होते हुए आप वृद्धि को प्राप्त होके सब प्रजाओं को बढ़ावें॥५॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इदं वचः शतसाः संसहस्रमुदग्नये जनिषीष्ट द्विबर्हाः।
शं यत्स्तोतृभ्य आपये भवाति द्युमदमीवचातनं रक्षोहा॥६॥

इदम्। वचः। शतऽसाः। सम्ऽसहस्रम्। उत्। अग्नये। जनिषीष्ट। द्विऽबर्हाः। शम्। यत्। स्तोऽतृभ्यः। आपये। भवाति। द्युऽमत्। अमीवऽचातनम्। रक्षःऽहा॥६॥

पदार्थः-(**इदम्**) (**वचः**) वचनम् (**शतसाः**) यः शतानि सनति विभजति (**सम्, सहस्रम्**) सम्यक्सहस्रम् (**उत्**) (**अग्नये**) पावकायेव (**जनिषीष्ट**) जनयतु (**द्विबर्हाः**) द्वाभ्यां विद्याविनयाभ्यां बर्हः

वर्धनं यस्य सः **(शम्)** सुखम् **(यत्)** **(स्तोतृभ्यः)** स्तावकेभ्यो विद्वद्भ्यः **(आपये)** प्रापकायाऽऽप्ताय **(भवाति)** भवेत् **(द्युमत्)** द्यौः कामना विद्यते यस्य **(अमीवचातनम्)** रोगनाशनम् **(रक्षोहा)** रक्षसां दुष्टानां हन्ता॥६॥

अन्वयः-हे राजञ्छतसा द्विबर्हा रक्षोहा भवानग्नय इदं सं सहस्रं वचो जनिषीष्ट यद् द्युमदमीवचातनं शं स्तोतृभ्य आपय उद्भवाति तदेव सततं साधयतु॥६॥

भावार्थः-हे प्रजाजना! यथा राजा सभेशः सर्वेभ्यो: मधुरं वचः उत्तमं सुखं दत्वा दुःखं दूरीकरोति तथैव यूयमपि राज्ञेऽसंख्यान् पदार्थान् दत्वा प्रमादरोगरहितं सम्पादयत॥६॥

पदार्थः-हे राजन्! **(शतसाः)** सौ का विभाग करने **(द्विबर्हाः)** विद्या और विनय से बढ़ने और **(रक्षोहा)** दुष्ट राक्षसों के हिंसा करने वाले आप **(अग्नये)** अग्नि के लिये जैसे, वैसे **(इदम्)** इस **(सम्, सहस्रम्)** सम्यक् सहस्र **(वचः)** वचन को **(जनिषीष्ट)** प्रकट कीजिये **(यत्)** जिस **(द्युमत्)** कामना वाले **(अमीवचातनम्)** रोगनाशरूप **(शम्)** सुख को **(स्तोतृभ्यः)** स्तुतिकर्ता विद्वानों के लिये वा **(आपये)** प्राप्त कराने वाले के लिये **(उद्भवाति)** प्रसिद्ध करते हैं, उसी को निरन्तर सिद्ध करें॥६॥

भावार्थः-हे प्रजाजनो! जैसे सभापति राजा सब के लिये मधुर कोमल वचन और उत्तम सुख देकर दुःख दूर करता है, वैसे ही तुम लोग भी राजा के लिये असंख्य पदार्थों को देकर प्रमाद और रोग रहित करके अधिकरतर धन देओ॥६॥

कीदृशं राजानं प्रजा मन्येरन्नित्याह॥

कैसे पुरुष को प्रजा लोग राजा मानें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू त्वाम॑ग्न ईमहे॒ वसि॑ष्ठा ईशा॒नं सू॑नो सहसो॒ वसू॑नाम्।

इषं॑ स्तो॒तृभ्यो॑ म॒घव॑द्भ्य आनड्यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभि॒: सदा॑ नः॥७॥ ११॥

नु। त्वाम्। अ॒ग्ने॒। ई॒म॒हे॒। वसि॑ष्ठाः। ई॒शा॒नम्। सू॒नो॒ इति॑। स॒ह॒सः॒। वसू॑नाम्। इष॑म्। स्तो॒तृऽभ्यः॑। म॒घव॑त्ऽभ्यः। आ॒न॒ट्। यू॒यम्। पा॒त॒। स्व॒स्तिऽभिः॑। सदा॑। नः॒॥७॥

पदार्थः-**(नु)** सद्यः **(त्वाम्)** **(अग्ने)** सन्मार्गप्रकाशक **(ईमहे)** याचामहे **(वसिष्ठाः)** अतिशयेन वसुमन्तः **(ईशानम्)** समर्थम् **(सूनो)** अपत्य **(सहसः)** बलवतः **(वसूनाम्)** वासयितॄणाम् **(इषम्)** विज्ञानं धनं वा **(स्तोतृभ्यः)** ऋत्विग्भ्यः **(मघवद्भ्यः)** बहुधनयुक्तेभ्यः **(आनट्)** व्याप्नोषि **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥७॥

अन्वयः-हे सहसस्सूनोऽग्ने! यतस्त्वं स्तोतृभ्य इषं मघवद्भ्य इषमानट् तस्माद्वसिष्ठा वयं वसूनामीशानं त्वां त्वीमहे वयं याँश्च युष्मान् रक्षेम ते यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् विद्वद्भ्यो वरं वस्तु मघवद्भ्यः प्रतिष्ठां ददाति त्वं भृत्याश्चास्मान् सततं रक्षन्ति तस्माद्भवतां वयं सेवकाः स्म इति॥७॥

अत्राग्निदृष्टान्तेन राजकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** पुत्र **(अग्ने)** सत्य मार्ग के प्रकाशक राजन् पुरुष! जिससे आप **(स्तोतृभ्यः)** ऋत्विजों के लिये **(इषम्)** विज्ञान वा धन को **(मघवद्भ्यः)** बहुत धन वाले के लिये धन वा विज्ञान को **(आनट्)** व्याप्त होते हो इस कारण **(वसिष्ठाः)** अत्यन्त धन वाले हम लोग **(वसूनाम्)** वास के हेतु पृथिव्यादि के **(ईशानम्)** अध्यक्ष **(त्वाम्)** आपको **(नु, ईमहे)** शीघ्र चाहते हैं और हम जिन तुम लोगों की रक्षा करें वे **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** कल्याणों से **(नः)** हमारी सदा **(पात)** रक्षा करो॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! आप विद्वानों के लिये श्रेष्ठ वस्तु, धनवानों के लिये प्रतिष्ठा देते हो आप और राजपुरुष हमारी निरन्तर रक्षा करते हैं, इसलिये आपके हम सेवक होवें॥७॥

इस सूक्त में अग्नि के दृष्टान्त से राजा के कर्त्तव्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह आठवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्‌चस्य नवमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १ त्रिष्टुप्। ४, ५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ३ भुरिक् पङ्क्तिः। ६ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनः के विद्वांसः सेवनीया इत्याह॥

अब छः ऋचा वाले नवमे सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में फिर कौन विद्वान् सेवने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

अबोधि जार उषसामुपस्थाद्धोता मन्द्रः कवितमः पावकः।
दधाति केतुमुभयस्य जन्तोर्हव्या देवेषु द्रविणं सुकृत्सु॥ १॥

अबोधि। जारः। उषसाम्। उपऽस्थात्। होता। मन्द्रः। कविऽतमः। पावकः। दधाति। केतुम्। उभयस्य। जन्तोः। हव्या। देवेषु। द्रविणम्। सुकृत्ऽसु॥ १॥

पदार्थः- **(अबोधि)** बोधयति **(जारः)** रात्रेर्जरयिता सूर्यः **(उषसाम्)** प्रातर्वेलानाम् **(उपस्थात्)** समीपात् **(होता)** दाता **(मन्द्रः)** आनन्दयिता **(कवितमः)** विद्वत्तमः **(पावकः)** पवित्रीकरः **(दधाति)** **(केतुम्)** प्रज्ञाम् **(उभयस्य)** इहाऽमुत्र भवस्य **(जन्तोः)** जीवस्य **(हव्या)** होतुमर्हाणि वस्तूनि **(देवेषु)** पृथिव्यादिषु विद्वत्सु वा **(द्रविणम्)** धनं बलं वा **(सुकृत्सु)** पुण्याऽऽत्मसु॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा रात्रेर्जारः सूर्य उषसामुपस्थादुभयस्य जन्तोर्हव्या केतुं द्रविणञ्च देवेषु दधाति तथा होता मन्द्रः कवितमः पावको विद्वान् जन्तोर्हव्या सुकृत्सु देवेषु द्रविणं केतुञ्च दधाति स्वयमबोध्यज्ञान् बोधयति तमेवाध्यापकं विद्वांसं सततं सेवध्वम्॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्वांसो यथा सूर्यो रात्रिं निवार्य्य प्रकाशं जनयति तथाऽविद्यां निवार्य्य विद्यां जनयन्ति ते यथा धार्मिको न्यायाधीशो राजा पुण्यात्मसु प्रेम दधाति तथा शमदमादियुक्तेषु श्रोतृषु प्रीतिं विदध्युः॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(जारः)** रात्रि का नाश करने वाला सूर्य **(उषसाम्)** प्रातःकाल की वेलाओं के **(उपस्थात्)** समीप से **(उभयस्य)** इस लोक परलोक में जाने आने वाले **(जन्तोः)** जीवात्मा के **(हव्या)** होमने योग्य वस्तुओं को **(केतुम्)** बुद्धि को और **(द्रविणम्)** धन वा बल को **(देवेषु)** पृथिव्यादि वा विद्वानों में **(दधाति)** धारण करता है तथा **(होता)** दानशील **(मन्द्रः)** आनन्दाता **(कवितमः)** अति प्रवीण **(पावकः)** पवित्रकर्ता विद्वान् जीव के ग्राह्य वस्तुओं को **(सुकृत्सु)** पुण्यात्मा विद्वानों में धन और बुद्धि का धारण करता स्वयं अज्ञानियों को **(अबोधि)** बोध कराता उसी अध्यापक विद्वान् की निरन्तर सेवा करो॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् जैसे रात्रि को सूर्य निवारण कर प्रकाश को उत्पन्न करता, वैसे अविद्या का निवारण करके विद्या को प्रकट करते हैं, वे जैसे धर्मात्मा न्यायाधीश राजा पुण्यात्माओं में प्रेम धारण करता है, वैसे शमदमादि युक्त श्रोताओं में प्रीति को विधान करें॥ १॥

पुनः क राजकर्मसु वरा भवन्तीत्याह॥

फिर राज कार्य्यों में कौन लोग श्रेष्ठ होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं।

स सुक्रतुर्यो वि दुरः पणीनां पुनानो अर्कं पुरुभोजसं नः।
होता मन्द्रो विशां दमूनास्तिरस्तमो ददृशे राम्याणाम्॥२॥

सः। सुऽक्रतुः। यः। वि। दुरः। पणीनाम्। पुनानः। अर्कम्। पुरुऽभोजसम्। नः। होता। मन्द्रः। विशाम्। दमूनाः। तिरः। तमः। ददृशे। राम्याणाम्॥२॥

पदार्थः-(**सः**) (**सुक्रतुः**) सुष्ठुप्रज्ञः (**यः**) (**वि**) (**दुरः**) द्वाराणि (**पणीनाम्**) स्तुत्यव्यवहारकर्तॄणाम् (**पुनानः**) पवित्रयन् (**अर्कम्**) अन्नं सत्कर्तव्यं जनं वा (**पुरुभोजसम्**) बहूनां रक्षितारम् (**नः**) अस्माकम् (**होता**) दाता (**मन्द्रः**) आनन्दयिता (**विशाम्**) प्रजानां मध्ये (**दमूनाः**) दमनशीलः (**तिरः**) तिरस्करणे (**तमः**) अन्धकारम् (**ददृशे**) दृश्यते (**राम्याणाम्**) रात्रीणाम्। **राम्येति रात्रिनाम।** (निघं०१.७.२)॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः पणीनां दुरः पुनानो राम्याणां तमस्तिरस्कृत्य सूर्यो ददृशे तथा सुक्रतुरर्कं पुरुभोजसं वि पुनानो नो विशां मन्द्रो होता दमूना अविद्यां तिरस्करोति सोऽस्माकं राजा भवतु॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सभ्या राजानः सूर्यवन्न्यायप्रकाशका अविद्यान्धकारनिवारका दुष्टानां दमनशीला धार्मिकाणां सत्कर्त्तारः सन्तो धर्ममार्गं पुनन्ति त एव सर्वैस्सत्कर्त्तव्या भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**पणीनाम्**) प्रशस्त व्यवहार करनेहारों के (**दुरः**) द्वारों को (**पुनानः**) पवित्र करता हुआ (**राम्याणाम्**) रात्रियों के (**तमः**) अन्धकार का (**तिरः**) तिरस्कार करके सूर्य (**ददृशे**) दीखता है तथा (**सुक्रतुः**) सुन्दर बुद्धि वाला (**अर्कम्**) अन्न वा सत्कार योग्य (**पुरुभोजसम्**) बहुतों के रक्षक मनुष्य को (**वि**) विशेष कर पवित्रकर्ता (**नः**) हमारी (**विशाम्**) प्रजाओं में (**मन्द्रः**) आनन्ददाता (**होता**) दानशील (**दमूनाः**) दमनशील अविद्या का तिरस्कार करता है (**सः**) वह हमारा राजा हो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सभ्य राजा लोग सूर्य के तुल्य न्याय के प्रकाशक, अविद्यारूप अन्धकार के निवारक, दुष्टों का दमन और श्रेष्ठ धार्मिकों का सत्कार करने वाले होते हुए धर्मसम्बन्धी मार्ग को पवित्र करते हैं, वे ही सब को सत्कार करने योग्य होते हैं॥२॥

पुनः कीदृशो विद्वान् पूजनीयोऽस्तीत्याह॥

फिर कैसा विद्वान् पूजनीय होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अमूरः कविरदितिर्विवस्वान्त्सुसंसन्मित्रो अतिथिः शिवो नः।
चित्रभानुरुषसां भात्यग्रेऽपां गर्भः प्रस्व१ आ विवेश॥३॥

अमूरः। कविः। अदितिः। विवस्वान्। सुऽसंसत्। मित्रः। अतिथिः। शिवः। नः। चित्रऽभानुः। उषसाम्। भाति। अग्रे। अपाम्। गर्भः। प्रऽस्वः। आ। विवेश॥३॥

पदार्थः-(**अमूरः**) अमूढः। अत्र वर्णव्यत्ययेन ढस्य स्थाने रः। (**कविः**) क्रान्तदर्शनः प्राज्ञः (**अदितिः**) पितेव वर्त्तमानः (**विवस्वान्**) सूर्य इव (**सुसंसत्**) शोभना संसत्सभा यस्य सः (**मित्रः**) सुहृत् (**अतिथिः**) आप्तो विद्वानिव (**शिवः**) मङ्गलकारी (**नः**) अस्माकम् (**चित्रभानुः**) अद्भुतप्रकाशः (**उषसाम्**) प्रभातवेलानाम् (**भाति**) प्रकाशते (**अग्रे**) पुरस्तात् (**अपाम्**) अन्तरिक्षस्य मध्ये (**गर्भः**) गर्भ इव वर्त्तते (**प्रस्वः**) प्रकृष्टाः स्वे स्वकीयजना यस्य सः (**आ विवेश**) आविशेत्॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य उषसामग्रे चित्रभानुर्विवस्वानिवापांगर्भ इव प्रस्वः सन् भाति सुसंसन्मित्रोऽमूरः कविरदितिरतिथिरिव नः शिवः सन्नस्मा आ विवेश स एव विद्वान् सर्वैः सत्कर्त्तव्योऽस्ति॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो विदुषामग्रगण्यः सूर्य इव सत्यन्यायप्रकाशकोऽविद्यादिदोषरहितो धर्मात्मा विद्वान् पुत्रवत्प्रजाः पालयति स एवाऽतिथिवत्सत्कर्तव्यो भवति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**उषसाम्**) प्रभात वेलाओं के (**अग्रे**) पहिले (**चित्रभानुः**) अद्भुत प्रकाशयुक्त (**विवस्वान्**) सूर्य के समान (**अपाम्**) अन्तरिक्ष के बीच (**गर्भः**) गर्भ के तुल्य वर्त्तमान (**प्रस्वः**) अपने सम्बन्धी उत्तम जनों वाला हुआ (**भाति**) प्रकाशित होता है (**सु, संसत्**) सुन्दर सभा वाला (**मित्रः**) मित्र (**अमूरः**) मूढ़ता रहित (**कविः**) प्रवृत्त बुद्धि वाला पण्डित (**अदितिः**) पिता के तुल्य वर्त्तमान (**अतिथिः**) प्राप्त हुए विद्वान् के तुल्य (**नः**) हमारा (**शिव**) मङ्गलकारी हुआ (**आ, विवेश**) प्रवेश करता है, वही विद्वान् सब को सत्कार करने योग्य होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो विद्वानों में मुखिया, सूर्य के तुल्य सत्य-न्याय का प्रकाशक, अविद्यादि दोषों से रहित, धर्मात्मा, विद्वान्, पुत्र के तुल्य प्रजाओं का पालन करता है, वही अतिथि के तुल्य सत्कार करने योग्य होता है॥३॥

पुनः कः प्रशंसनीयो भवतीत्याह॥

फिर कौन प्रशंसा योग्य होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ईळेन्यो॑ वो॒ मनु॑षो यु॒गेषु॑ सम॒नगा॒ अशु॑चज्जा॒तवे॑दाः।
सु॒संदृशा॑ भा॒नुना॒ यो वि॒भाति॑ प्रति॒ गाव॑: समिधा॒नं बु॑धन्त॥४॥

ईळेन्य॑:। व॒:। मनु॑षः। यु॒गेषु॑। स॒म॒न॒ऽगाः। अ॒शु॒च॒त्। जा॒तऽवे॑दाः। सु॒ऽसं॒दृशा॑। भा॒नुना॑। यः। वि॒ऽभाति॑। प्रति॑। गाव॑:। स॒म्ऽइ॒धा॒नम् बु॒ध॒न्त॥४॥

पदार्थः-(**ईळेन्यः**) स्तोतुमर्हः (**वः**) युष्मान् (**मनुषः**) मननशीलान् (**युगेषु**) बहुषु वर्षेषु (**समनगाः**) यः समनं स-ग्रामं गच्छति सः (**अशुचत्**) शोधयति (**जातवेदाः**) जातविद्यः (**सुसंदृशा**) सुष्ठु सम्यग् दर्शकेन (**भानुना**) किरणेन (**यः**) (**विभाति**) (**प्रति**) (**गावः**) किरणाः (**समिधानम्**) देदीप्यमानम् (**बुधन्त**) बोधयन्ति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य ईळेन्यस्समनगा जातवेदा युगेषु वो मनुषः सुसंदृशा भानुना सूर्य इव विभाति

यथा समिधानं प्रति गावो बुधन्त तथाऽशुचत् स एव नरोत्तमो भवति॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सूर्यवच्छुभान् गुणान् ग्राहयित्वा मनुष्यान् प्रकाशयन्ति ते प्रशंसितुं योग्या जायन्ते॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(ईळेन्यः)** स्तुति के योग्य **(समनगाः)** संग्राम को प्राप्त होने वाला **(जातवेदाः)** विद्या को प्राप्त हुआ **(युगेषु)** बहुत वर्षों में **(वः)** तुम **(मनुषः)** मनुष्यों को **(सुसन्दृशा)** अच्छे प्रकार दिखाने वाले **(भानुना)** किरण से सूर्य के समान **(विभाति)** प्रकाशित करता है और जैसे **(समिधानम्)** देदीप्यमान के **(प्रति)** प्रति **(गावः)** किरण **(बुधन्त)** बोध के हेतु होते हैं, वैसे **(अशुचत्)** शुद्ध प्रतीति कराता है, वही मनुष्यों में उत्तम होता है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य के सदृश शुभ गुणों का ग्रहण कराके मनुष्यों को प्रकाशित करते हैं, वे प्रशंसा करने योग्य होते हैं॥४॥

पुनः के विद्वांसः सङ्गन्तव्याः सन्तीत्याह॥

फिर कौन विद्वान् संगति करने योग्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अग्ने याहि दूत्यं१ मा रिषण्यो देवाँ अच्छा ब्रह्मकृता गणेन।
सरस्वतीं मरुतो अश्विनापो यक्षि देवान् रत्नधेयाय विश्वान्॥५॥

अग्ने। याहि। दूत्यम्। मा। रिषण्यः। देवान्। अच्छ। ब्रह्मऽकृता। गणेन। सरस्वतीम्। मरुतः। अश्विना। अपः। यक्षि। देवान्। रत्नऽधेयाय। विश्वान्॥५॥

पदार्थः-**(अग्ने)** वह्निरिव कार्य्यसाधक **(याहि)** **(दूत्यम्)** दूतस्य कर्म **(मा)** निषेधे **(रिषण्यः)** हिंस्याः **(देवान्)** विदुषश्शुभान् गुणान् वा **(अच्छ)** सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(ब्रह्मकृता)** येन ब्रह्म धनमन्नं वा करोति तेन **(गणेन)** समूहेन **(सरस्वतीम्)** विद्यासुशिक्षायुक्तां वाचम् **(मरुतः)** मनुष्यान् **(अश्विना)** अध्यापकोपदेशकौ **(अपः)** कर्माणि **(यक्षि)** सङ्गच्छसे **(देवान्)** विदुषः **(रत्नधेयाय)** रत्नानि धीयन्ते यस्मिँस्तस्मै **(विश्वान्)** समग्रान्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं दूत्यं याहि देवान् मा रिषण्यो ब्रह्मकृता गणेन रत्नधेयाय सरस्वतीं मरुतोऽश्विनाऽपो विश्वान् देवान् यतोऽच्छ यक्षि तस्मात् सत्कर्त्तव्योऽसि॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथाऽग्निना दूतेन विद्वांसो बहूनि कार्याणि साध्नुवन्ति तथा कार्यसिद्धिं कृत्वा कञ्चन मा हिंसत पदार्थविद्यया धनेन धान्येन वा कोशान् प्रपूर्य्य सर्वान् सुखयत॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** वह्नि के तुल्य कार्य सिद्ध करनेहारे विद्वन्! आप **(दूत्यम्)** दूत के कर्म को **(याहि)** प्राप्त हूजिये **(देवान्)** विद्वानों वा शुभ गुणों को **(मा)** मत **(रिषण्यः)** नष्ट कीजिये **(ब्रह्मकृता)** जिससे धन वा अन्न को उत्पन्न करते **(गणेन)** उस सामग्री के समुदाय से **(रत्नधेयाय)** रत्नों का जिसमें धारण हो उसके लिये **(सरस्वतीम्)** विद्याशिक्षायुक्त वाणी का **(मरुतः)** मनुष्यों का **(अश्विना)** अध्यापक और उपदेशकों के **(अपः)** कर्मों का और **(विश्वान्)** सब **(देवान्)** विद्वानों का जिस कारण **(अच्छा)** अच्छे प्रकार **(यक्षि)** संग करते हैं, इससे सत्कार करने योग्य है॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् लोग अग्निरूप दूत से बहुत कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वैसे कार्य को सिद्धि करके किसी को मत मारो, पदार्थविद्या, धन वा धान्य से कोश को पूर्ण कर सब को सुखी करो॥५॥

पुनस्ते विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे विद्वान् क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वामग्ने समिधानो वसिष्ठो जरूथं हन् यक्षि राये पुरंधिम्॥
पुरुणीथा जातवेदो जरस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥६॥१२॥

त्वाम्। अग्ने। सम्ऽइधानः। वसिष्ठः। जरूथम्। हन्। यक्षि। राये। पुरम्ऽधिम्। पुरुऽनीथा। जातऽवेदः। जरस्व। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥६॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) विद्वांसम् (**अग्ने**) वह्निवद्विद्यादिगुणप्रकाशित (**समिधानः**) सम्यक् प्रकाशमानः (**वसिष्ठः**) अतिशयेन धनाढ्यः (**जरूथम्**) जरावस्थया युक्तम् (**हन्**) हन्ति (**यक्षि**) सङ्गच्छे (**राये**) धनाय (**पुरन्धिम्**) यो बहून् दधाति तम् (**पुरुणीथा**) पुरून्नयन्ति येषु तानि धर्म्यकर्माणि (**जातवेदः**) जातविज्ञान (**जरस्व**) प्रशंस (**यूयम्**) उपदेशकाः (**पात**) रक्षत (**स्वस्तिभिः**) सुखैः (**सदा**) सर्वस्मिन् काले (**नः**) अस्मान्॥६॥

अन्वयः-हे जातवेदोऽग्ने! यथा समिधानो वसिष्ठो जरूथं जीर्णे मेघं हँस्तथा सुसभ्यं पुरन्धिं त्वां रायेऽहं यक्षि यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात पुरुणीथा जरस्व॥६॥

भावार्थः-ये सराजकाः सभ्याः सूर्यो मेघमिवाऽविद्यां दुष्टाचाराँश्च घ्नन्ति सर्वान् धर्म्यमार्गं नयन्ति ते सर्वेषां यथावद्रक्षका भवन्ति॥६॥

अत्राग्निदृष्टान्तेन विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति नवमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) विज्ञान को प्राप्त (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य विद्यादि गुणों से प्रकाशित विद्वन्! जैसे (**समिधानः**) सम्यक् प्रकाशमान (**वसिष्ठः**) अत्यन्त धनी (**जरूथम्**) शिथिलावस्था से युक्त जीर्ण मेघ को (**हन्**) हनन करता है, वैसे सुन्दर सभा के योग्य (**पुरन्धिम्**) बहुतों को धारण करने वाले (**त्वाम्**) आप विद्वान् का (**राये**) धन प्राप्ति के लिये मैं (**यक्षि**) सङ्ग करता हूँ (**यूयम्**) तुम लोग (**स्वस्तिभिः**) सुख साधनों से (**नः**) हमारी (**सदा**) सदा (**पात**) रक्षा करो और (**पुरुनीथा**) बहुतों को प्राप्त होने वाले धर्मयुक्त कर्मों की (**जरस्व**) प्रशंसा करो॥६॥

भावार्थः-जो राजा के सहित सम्य लोग, सूर्य मेघ को जैसे, वैसे अविद्या और दुष्टाचारों का नाश करते हैं, सब को धर्मयुक्त मार्ग को प्राप्त कराते, वे सब के यथावत् रक्षक होते हैं॥६॥

इस सूक्त में अग्नि के दृष्टान्त से विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह नववां सूक्त और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य दशमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २, ३ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः।

अथ विद्वान् किंवत्किं कुर्यादित्याह॥

अब पांच ऋचा वाले दशवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अब विद्वान् किसके तुल्य क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

उषो न जारः पृथु पाजो अश्रेद्दविद्युतद्दीद्यच्छोशुचानः।
वृषा हरिः शुचिरा भाति भासा धियो हिन्वान उशतीरजीगः॥ १॥

उषः। न। जारः। पृथु। पाजः। अश्रेत्। दविद्युतत्। दीद्यत्। शोशुचानः। वृषा। हरिः। शुचिः। आ। भाति। भासा। धियः। हिन्वानः। उशतीः। अजीगरिति॥ १॥

पदार्थः– **(उषः)** प्रभातवेला **(न)** इव **(जारः)** जरयिता **(पृथु)** विस्तीर्णम् **(पाजः)** अन्नादिकम् **(अश्रेत्)** श्रयति **(दविद्युतत्)** विद्योतयति **(दीद्यत्)** दीप्यते **(शोशुचानः)** शुद्धः संशोधकः **(वृषा)** वृष्टिकर्त्ता **(हरिः)** हरणशीलः **(शुचिः)** पवित्रः **(आ भाति)** प्रकाशयते **(भासा)** दीप्त्या **(धियः)** कर्माणि प्रज्ञाश्च **(हिन्वानः)** वर्धयन् **(उशतीः)** काम्यमानाः **(अजीगः)** जागारयति॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा जारो न शोशुचानो वृषा हरिरुशतीर्धियोहिन्वानोऽग्निरजीगो भासा सर्वमा भाति पृथु पाजोऽश्रेत् सर्वं दविद्युतदुषइव शुचिः स्वयं दीद्यत्तथा त्वं विधेहि॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा सुशिक्षिता विद्वांसः कार्याणि यथावत्साध्नुवन्ति तथैव विद्युदादयः पदार्थाः सम्प्रयुक्ताः सन्तः सर्वान् व्यवहारान् सम्पादयन्ति॥ १॥

पदार्थः–हे विद्वन् जैसे **(जारः)** जीर्ण करनेहारे के **(न)** तुल्य **(शोशुचानः)** शुद्ध संशोधक **(वृषा)** वृष्टिकर्त्ता **(हरिः)** हरणशील **(उशतीः)** कामना किये जाते **(धियः)** कर्मों वा बुद्धियों को **(हिन्वानः)** बढ़ाता हुआ अग्नि **(अजीगः)** जगाता है **(भासा)** दीप्ति से सब को **(आ, भाति)** प्रकाशित करता है **(पृथु)** विस्तृत **(पाजः)** अन्नादि का **(अश्रेत्)** आश्रय करता है, सब को **(दविद्युतत्)** प्रकट करता है **(उषः)** प्रभातवेला के तुल्य **(शुचिः)** पवित्र स्वयं **(दीद्यत्)** प्रकाशित होता है, वैसे आप कीजिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे उत्तम शिक्षा को प्राप्त विद्वान् यथावत् कार्य्यों को सिद्ध करते, वैसे ही विद्युत् आदि पदार्थ सम्प्रयोग में लाये हुए सब व्यवहारों को सिद्ध करते हैं॥ १॥

पुनः स विद्वान् कीदृशः कि कुर्यादित्याह॥

फिर वह विद्वान् कैसा हो क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्वर्ण वस्तोरुषसामरोचि यज्ञं तन्वाना उशिजो न मन्म।
अग्निर्जन्मानि देव आ वि विद्वान् द्रवद्दूतो देवयावा वनिष्ठः॥ २॥

स्वः। न। वस्तोः। उषसाम्। अरोचि। यज्ञम्। तन्वानाः। उशिजः। नः। मन्म। अग्निः। जन्मानि।

देवः। आ। वि। विद्वान्। द्रवत्। दूतः। देवऽयावा। वनिष्ठः॥२॥

पदार्थः-(**स्वः**) आदित्यः (**न**) इव (**वस्तोः**) दिनस्य (**उषसाम्**) प्रभातवेलानाम् (**अरोचि**) प्रकाशते (**यज्ञम्**) सङ्गन्तव्यं व्यवहारम् (**तन्वानाः**) विस्तृणन्तः (**उशिजः**) कामयमाना ऋत्विजः (**न**) इव (**मन्म**) मन्तव्यं विज्ञानम् (**अग्निः**) पावक इव (**जन्मानि**) (**देवः**) देदीप्यमानः कामयमानो वा (**आ**) (**वि**) (**विद्वान्**) (**द्रवत्**) धावन् (**दूतः**) समाचारदाता (**देवयावा**) यो देवान् दिव्यगुणान् याति प्राप्नोति (**वनिष्ठः**) अतिशयेन संविभाजकः॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विद्युदग्निः स्वर्णवस्तोरुषसां सम्बन्धेऽरोचि यज्ञं तन्वाना उशिजो न देवो विद्वान्मन्म जन्मानि व्याद्रवद्दूतो वनिष्ठो देवयावाग्निरिव सद्व्यवहारानरोचि तं विप्रश्चितं सततं सेवध्वम्॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये जिज्ञासवो विद्वद्भ्यः शिक्षां प्राप्य विधिक्रियाभ्यां वह्न्यादिभ्यः पदार्थेभ्योऽविशिष्टान् व्यवहारान् साध्नुवन्ति ते सिद्धश्रियो जायन्ते॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अग्निः**) विद्युत् अग्नि (**स्वः**, **न**) आदित्य के समान (**वस्तोः**) दिवस और (**उषसाम्**) प्रभातवेलाओं के सम्बन्ध में (**अरोचि**) रुचि करता है वा प्रकाशित होता (**यज्ञम्**) संगति योग्य व्यवहार को (**तन्वानाः**) विस्तृत करते और (**उशिजः**) कामना करते हुए के (**नः**) तुल्य (**देवः**) प्रकाशयुक्त कामना करता हुआ (**विद्वान्**) विद्वान् (**मन्म**) मानने योग्य विज्ञान और (**जन्मानि**) जन्मों को (**वि, आ, द्रवत्**) विशेष कर अच्छा शुद्ध करता हुआ (**दूतः**) समाचार पहुँचाने वाला (**वनिष्ठः**) अत्यन्त विभागकर्ता (**देवयावा**) दिव्य उत्तम गुणों को प्राप्त होने वाला अग्नि के तुल्य श्रेष्ठ व्यवहारों को प्रकाशित करता उस विद्वान् पुरुष की निरन्तर सेवा करो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो जिज्ञासु विद्वानों से शिक्षा को प्राप्त होके विधि और क्रिया से अग्नि आदि पदार्थों से समस्त व्यवहारों को सिद्ध करते हैं, वे प्रसिद्ध धनवान् होते हैं॥२॥

पुनः स्त्रीपुरुषाः किंवद्भूत्वा कथं स्वीकुर्य्युरित्याह॥

फिर स्त्रीपुरुष किसके तुल्य होकर कैसे स्वीकार करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अच्छा गिरो मतयो देवयन्तीरग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षमाणाः।
सुसंदृशं सुप्रतीकं स्वञ्चं हव्यवाहमरतिं मानुषाणाम्॥३॥

अच्छ। गिरः। मतयः। देवऽयन्तीः। अग्निम्। यन्ति। द्रविणम्। भिक्षमाणाः। सुऽसंदृशम्। सुऽप्रतीकम्। सुऽअञ्चम्। हव्यऽवाहम्। अरतिम्। मानुषाणाम्॥३॥

पदार्थः-(**अच्छा**) सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**गिरः**) विद्यायुक्ता वाचः (**मतयः**) प्रज्ञा इव वर्त्तमानाः कन्याः (**देवयन्तीः**) देवान्विदुषः पतीन् कामयमानाः (**अग्निम्**) विद्युद्विद्याम् (**यन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**द्रविणम्**) धनं यशो वा (**भिक्षमाणाः**) याचमानाः (**सुसन्दृशम्**) सुष्ठु संद्रष्टव्यम् (**सुप्रतीकम्**) सुष्ठु प्रत्येति येन तम् (**स्वञ्चम्**) यः, सुष्ठ्वञ्चति तम् (**हव्यवाहम्**) यो हव्यानि वहति तम्

(अरतिम्) सर्वत्र प्राप्तम् **(मानुषाणाम्)** मनुष्याणां सकाशात्॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! याः कन्या मतय इव गिरोऽच्छ देवयन्तीः सुसन्दृशं सुप्रतीकं स्वञ्चं मानुषाणां हव्यवाहमरतिं द्रविणं भिक्षमाणा अग्निं यन्ति ता एव वरणीया भवन्ति॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा कन्या दीर्घब्रह्मचर्येण विदुष्यः सत्योऽग्न्यादिविद्यां प्राप्य पुरुषाणां मध्यादुत्तममुत्तमं पतिं याचमानाः स्वाभीष्टं स्वाभीष्टं स्वामिनं प्राप्नुवन्ति तथैव पुरुषैरपि स्वेष्टा भार्याः प्राप्तव्याः॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो कन्या **(मतयः)** बुद्धि के तुल्य वर्त्तमान **(गिरः)** विद्यायुक्त वाणियों और **(अच्छा)** अच्छे प्रकार **(देवयन्तीः)** पतियों की कामना करती हुई **(सुसन्दृशम्)** अच्छे प्रकार देखने योग्य **(सुप्रतीकम्)** सुन्दर प्रतीति के साधन **(स्वञ्चम्)** सुन्दर प्रकार पूजने योग्य **(मानुषाणाम्)** मनुष्यों के सम्बन्ध से **(हव्यवाहम्)** होमने योग्य पदार्थों को देशान्तर पहुँचाने वाले **(अरतिम्)** सर्वत्र प्राप्त होने वाले **(द्रविणम्)** धन वा यश को **(भिक्षमाणाः)** चाहती हुई **(अग्निम्)** विद्युत् की विद्या को **(यन्ति)** प्राप्त होती हैं, वे ही विवाहने योग्य होती हैं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे कन्या दीर्घ ब्रह्मचर्य के साथ विदुषी हो और अग्नि आदि की विद्या को प्राप्त हो के पुरुषों में से उत्तम उत्तम पतियों को चाहती हुई अपने-अपने अभीष्ट स्वामी को प्राप्त होती हैं, वैसे पुरुषों को भी अपने अनुकूल स्त्रियों को प्राप्त होना चाहिये॥३॥

को विद्वान् सततं सेवनीय इत्याह॥

कौन विद्वान् निरन्तर सेवने योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रं नो अग्ने वसुभिः सजोषा रुद्रं रुद्रेभिरा वहा बृहन्तम्।
आदित्येभिरदितिं विश्वजन्यां बृहस्पतिमृक्वभिर्विश्ववारम्॥४॥

इन्द्रम्। नः। अग्ने। वसुऽभिः। सऽजोषाः। रुद्रम्। रुद्रेभिः। आ। वह। बृहन्तम्। आदित्येभिः। अदितिम्। विश्वऽजन्याम्। बृहस्पतिम्। ऋक्वऽभिः। विश्वऽवारम्॥४॥

पदार्थः-**(इन्द्रम्)** विद्युतम् **(नः)** अस्माकम् **(अग्ने)** पावक इव विद्वन् **(वसुभिः)** पृथिव्यादिभिः **(सजोषाः)** समानसेवी **(रुद्रम्)** जीवात्मानम् **(रुद्रेभिः)** प्राणैस्सह **(आ वहा)** समन्तात्प्रापय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(बृहन्तम्)** महान्तम् **(आदित्येभिः)** संवत्सरस्य मासैः **(अदितिम्)** अखण्डितां कालविद्याम् **(विश्वजन्याम्)** विश्वं जन्यं यया ताम् **(बृहस्पतिम्)** बृहत्या ऋग्वेदादिवेवाच्याः पालकं परमात्मानम् **(ऋक्वभिः)** ऋग्वेदादिभिः **(विश्ववारम्)** सर्वैर्वरणीयम्॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने! सजोषास्त्वं नो वसुभिः रुद्रेभिर्बृहन्तं रुद्रमादित्येभिर्विश्वजन्यामदितिमृक्वभि-र्विश्ववारं बृहस्पतिमा वहा॥४॥

भावार्थः-यो हि पृथिव्यादिविद्यया सह विद्युद्विद्यां प्राणविद्यया सह जीवविद्यां कालविद्यया सह प्रकृतिविज्ञानं वेदविद्यया परमात्मान ज्ञापयितुं शक्नोति तमेव सर्वे विद्यार्थमाश्रयन्तु॥४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वी विद्वन् **(सजोषाः)** तुल्य सेवनकर्त्ता आप **(नः)** हमारे लिये **(वसुभिः)** पृथिव्यादि के साथ **(इन्द्रम्)** विद्युत् अग्नि को **(रुद्रेभिः)** प्राणों के साथ **(बृहन्तम्)** बड़े **(रुद्रम्)** जीवात्मा को **(आदित्येभिः)** बारह महीनों से **(विश्वजन्याम्)** संसारोत्पत्ति की हेतु **(अदितिम्)** अखण्डित कालविद्या को और **(ऋक्वभिः)** ऋग्वेदादि से **(विश्ववारम्)** सब के स्वीकार करने योग्य **(बृहस्पतिम्)** बड़ी ऋग्वेदादि वाणी के रक्षक परमात्मा को **(आ, वह)** अच्छे प्रकार प्राप्त कीजिये॥४॥

भावार्थः-जो ही पृथिव्यादि विद्या के साथ बिजुली की विद्या को, प्राणविद्या के साथ जीवविद्या को, कालविद्या के साथ प्रकृति के विज्ञान को और वेदविद्या से परमात्मा के विज्ञान कराने को समर्थ होता है, उसी का सब लोग विद्या प्राप्ति के लिये आश्रय करें॥४॥

मनुष्याः कस्यान्वेषणं प्रत्यहं कुर्युरित्याह॥

मनुष्य प्रतिदिन किस का खोज करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मन्द्रं होतारमुशिजो यविष्ठमग्निं विश ईळते अध्वरेषु।
स हि क्षपावाँ अभवद्रयीणामतन्द्रो दूतो यजथाय देवान्॥५॥१३॥

मन्द्रम्। होतारम्। उशिजः। यविष्ठम्। अग्निम्। विशः। ईळते। अध्वरेषु। सः। हि। क्षपाऽवान्। अभवत्। रयीणाम्। अतन्द्रः। दूतः। यजथाय। देवान्॥५॥

पदार्थः-**(मन्द्रम्)** आनन्दकरम् **(होतारम्)** दातारम् **(उशिजः)** कामयमानाः **(यविष्ठम्)** अतिशयेन युवानमिव **(अग्निम्)** पावकम् **(विशः)** प्रजाः **(ईळते)** स्तुवन्त्यन्विच्छन्ति वा **(अध्वरेषु)** अग्निहोत्रादिक्रियामयव्यवहारेषु **(सः)** **(हि)** एव **(क्षपावान्)** बह्व्यः क्षपा रात्रयो विद्यन्ते यस्मिन् सः **(अभवत्)** भवति **(रयीणाम्)** द्रव्याणाम् **(अतन्द्रः)** अनलसः **(दूतः)** दूत इव **(यजथाय)** सङ्गमनाय **(देवान्)** दिव्यगुणान्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यमध्वरेषु मन्द्रं होतारं यविष्ठमिवाग्निमुशिजो विश ईळते स हि क्षपावानतन्द्रो दूत इव रयीणां यजथाय देवान् प्रापयितुं समर्थोऽभवत्॥५॥

भावार्थः-योऽग्निर्दूतवत्सर्वासां विद्यानां सङ्गमयिता वर्त्तते तं सर्वे मनुष्या अन्विच्छन्तु यतस्सर्वशुभगुणलाभः स्यादिति॥५॥

अत्राऽग्निविद्वद्विदुषीकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति दशमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो जिसको **(अध्वरेषु)** अग्निहोत्रादिक्रियारूप व्यवहारों में **(मन्द्रम्)** आनन्दकारी **(होतारम्)** दाता **(यविष्ठम्)** अतिजवान के तुल्य **(अग्निम्)** अग्नि की **(उशिजः)** कामना

करते हुए **(विशः)** प्रजाजन **(ईळते)** स्तुति वा खोज करते हैं **(सः, हि)** वही **(क्षपावान्)** बहुत रात्रियों वाला **(अतन्द्रः)** आलस्यरहित **(दूतः)** दूत के समान **(रयीणाम्)** द्रव्यों की **(यजथाय)** प्राप्ति के लिये **(देवान्)** दिव्यगुणों के प्राप्त करने को समर्थ **(अभवत्)** होता है॥५॥

भावार्थः-जो अग्नि, दूत के तुल्य सब विद्याओं का संग करने वाला होता है उसको सब मनुष्य खोज करें, जिससे सब गुणों की प्राप्ति हो॥५॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान् और विदुषी के कर्त्तव्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये।

यह दशवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्यैकादशस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १ स्वराट् पङ्क्तिः। २, ४ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३ विराट् त्रिष्टुप्। ५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्या क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

म॒हाँ अ॑स्यध्व॒रस्य॑ प्रके॒तो न ऋ॒ते त्वद॒मृता॑ मादयन्ते।

आ विश्वे॑भिः स॒रथं॑ याहि दे॒वैर्न्य॑ग्ने॒ होता॑ प्रथ॒मः स॑दे॒ह॥ १॥

म॒हान्। अ॒सि॒। अ॒ध्व॒रस्य॑। प्र॒ऽके॒तः। न। ऋ॒ते। त्वत्। अ॒मृता॑ः। मा॒द॒य॒न्ते॒। आ। विश्वे॑भिः। स॒ऽरथ॑म्। या॒हि॒। दे॒वैः। नि। अ॒ग्ने॒। होता॑। प्र॒थ॒मः। स॒दः। इ॒ह॥ १॥

पदार्थः-(**महान्**) (**असि**) (**अध्वरस्य**) सर्वव्यवहारस्य (**प्रकेतः**) प्रकृष्टप्रज्ञावान् प्रज्ञापकः (**न**) निषेधे (**ऋते**) (**त्वत्**) (**अमृताः**) नाशरहिता जीवाः (**मादयन्ते**) आनन्दयन्ति (**आ**) (**विश्वेभिः**) सर्वैः (**सरथम्**) रमणीयेन स्वरूपेण सह वर्त्तमानम् (**याहि**) समन्तात्प्राप्नुहि (**देवैः**) विद्वद्भिः सह (**नि**) (**अग्ने**) स्वप्रकाशस्वरूप जगदीश्वर (**होता**) विद्यादिशुभगुणदाता (**प्रथमः**) आदिमः (**सद**) सीद (**इह**)॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमिह विश्वेभिर्देवैः सह प्रथमो होताऽस्मान् सरथं न्यायाहि यतस्त्वदृतेऽमृता न मादयन्ते तस्मात्त्वं सद त्वमध्वरस्य महान् प्रकेतोऽसि॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन विना न विद्या न सुखं लभ्यते यो विद्वत्सङ्गयोगाभ्यासधर्माचरणैः प्राप्योऽस्ति तमेव जगदीश्वरं सदोपाध्वम्॥ १॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) स्वप्रकाशस्वरूप जगदीश्वर आप (**इह**) इस जगत् में (**विश्वेभिः**) सब (**देवैः**) विद्वानों के साथ (**प्रथमः**) पहिले (**होता**) विद्यादि शुभगुणों के दाता हमको (**सरथम्**) रथ सहित (**नि, आ, याहि**) निरन्तर प्राप्त हूजिये जिस कारण (**त्वत्**) आप से (**ऋते**) भिन्न (**अमृताः**) नाशरहित जीव (**न**) नहीं (**मादयन्ते**) आनन्द करते हैं इससे आप (**सद**) स्थिर हूजिये आप (**अध्वरस्य**) सब व्यवहार के (**महान्**) बड़े (**प्रकेतः**) उत्तमबुद्धि के प्रकाशक (**असि**) हैं॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसके विना न विद्या, न सुख प्राप्त होता है, जो विद्वानों का सङ्ग, योगाभ्यास और धर्माचरण से प्राप्त होने योग्य है, उसी जगदीश्वर की सदा उपासना करो॥ १॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वामी॑ळते अजि॒रं दू॒त्या॑य ह॒विष्म॑न्तः सद॒मिन्मानु॑षासः।

यस्य॑ दे॒वैरास॑दो ब॒र्हिर॒ग्नेऽहा॑न्यस्मै सु॒दिना॑ भवन्ति॥ २॥

त्वाम्। ई॒ळ॒ते॒। अ॒जि॒रम्। दू॒त्या॑य। ह॒विष्म॑न्तः। सद॑म्। इत्। मानु॑षासः। यस्य॑। दे॒वैः। आ। अस॑दः। ब॒र्हिः। अ॒ग्ने॒। अहा॑नि। अ॒स्मै॒। सु॒ऽदिना॑। भ॒व॒न्ति॒॥ २॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**ईळते**) स्तुवन्ति (**अजिरम्**) प्रक्षेप्तारम् (**दूत्याय**) दूतकर्मणे (**हविष्मन्तः**) प्रशस्तसामग्रीयुक्ताः (**सदम्**) यः सीदति तम् (**इत्**) एव (**मानुषासः**) मनुष्याः (**यस्य**) (**देवैः**) विद्वद्भिः (**आ**) (**असदः**) प्राप्तव्यम् (**बर्हिः**) उत्तमं वर्धकं विज्ञानम् (**अग्ने**) पावक इव स्वप्रकाशेश्वर (**अहानि**) दिनानि (**अस्मै**) विदुषे (**सुदिना**) शोभनानि दिनानि येषु तानि (**भवन्ति**)॥२॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्य ते देवैरासदो बर्हिः प्राप्यते अस्मै तेऽहानि सुदिना भवन्ति यथा हविष्मन्तो मानुषासो दूत्याय सदमिदजिरमग्निमीळते तथैते त्वामित्सततं स्तुवन्तु॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सामग्रीमन्तोऽग्निविद्यां प्राप्य सततमानन्दिता भवन्ति तथैवेश्वरं प्राप्य सततं श्रीमन्तो जायन्ते॥२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य स्वयंप्रकाशस्वरूप ईश्वर (**यस्य**) जिस आप के (**देवैः**) विद्वानों से (**आ, असदः**) प्राप्त होने योग्य (**बर्हिः**) सुखवर्द्धक विज्ञान प्राप्त होता है (**अस्मै**) इस विद्वान् के लिये आप के (**अहानि**) दिन (**सुदिना**) सुदिन (**भवन्ति**) होते हैं जैसे (**हविष्मन्तः**) प्रशस्त सामग्री वाले (**मानुषासः**) मनुष्य (**दूत्याय**) दूतकर्म के लिये (**सदम्, इत्**) स्थिर होने वाले (**अजिरम्**) फैंकने हारे अग्नि की (**ईळते**) स्तुति करते हैं, वैसे ये लोग (**त्वाम्**) आपकी निरन्तर स्तुति करें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सामग्री वाले अग्निविद्या को प्राप्त होके निरन्तर आनन्दित होते हैं, वैसे ईश्वर को प्राप्त होके निरन्तर श्रीमान् होते हैं॥२॥

कस्मिन् सति मनुष्या दिव्यान् गुणान् प्राप्नुवन्तीत्याह॥

किसके होने पर मनुष्य उत्तम गुण को प्राप्त होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रिश्चिदुक्तोः प्र चिकितुर्वसूनि त्वे अन्तर्दाशुषे मर्त्याय।
मनुष्वदग्न इह यक्षि देवान्भवा नो दूतो अभिशस्तिपावा॥३॥

त्रिः। चित्। अक्तोः। प्र। चिकितुः। वसूनि। त्वे इति। अन्तः। दाशुषे। मर्त्याय। मनुष्वत्। अग्ने। इह। यक्षि। देवान्। भव। नः। दूतः। अभिशस्तिऽपावा॥३॥

पदार्थः-(**त्रिः**) त्रिवारम् (**चित्**) अपि (**अक्तोः**) रात्रेः (**प्र**) (**चिकितुः**) विजानन्ति (**वसूनि**) द्रव्याणि (**त्वे**) त्वयि (**अन्तः**) मध्ये (**दाशुषे**) दात्रे (**मर्त्याय**) मनुष्याय (**मनुष्वत्**) मनुष्यैस्तुल्यम् (**अग्ने**) विद्वन् (**इह**) (**यक्षि**) यजसि (**देवान्**) विदुषः (**भव**) (**नः**) अस्माकम् (**दूतः**) दूत इव (**अभिशस्तिपावा**) प्रशंसितानां पालकः पवित्रकरः॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वेऽन्तर्दाशुषे मर्त्याय वसून्यक्तोश्चित् त्रिः विद्वांसः प्रचिकितुस्त्वमिह मनुष्वद् देवान् यक्षि त्वं नो दूतइवाभिशस्तिपावा भव॥३॥

भावार्थः-यस्य सङ्गेन मनुष्यान् दिव्या गुणाः पुष्कलानि धनानि च प्राप्नुवन्ति तमेवेह स्तुत्वा यो दूतवत्परोपकारी भवति स सर्वानिह सत्यं प्रज्ञापयितुं शक्नोति॥३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन्! (**त्वे**) आपके (**अन्तः**) बीच (**दाशुषे**) दानशील (**मर्त्याय**) मनुष्य के लिये (**वसूनि**) द्रव्यों को (**अक्तोः**) रात्रि के सम्बन्ध में (**चित्**) भी (**त्रिः**) तीन वार विद्वान् (**प्र,**

चिकितुः) जानते हैं आप (**इह**) इस जगत् में (**मनुष्वत्**) मनुष्यों के तुल्य (**देवान्**) विद्वानों का (**यक्षि**) सत्कार कीजिये **[आप]** (**नः**) हमारे (**दूतः**) दूत के समान (**अभिशस्तिपावा**) प्रशंसितों के रक्षक पवित्रकारी (**भव**) हूजिये॥३॥

भावार्थः-जिसके संग से मनुष्यों को दिव्य गुण और पुष्कल धन प्राप्त होते हैं, इस जगत् में उसी की स्तुति कर जो दूत के तुल्य परोपकारी होता है, वह सब को सत्य जताने को समर्थ होता है॥३॥

कस्य विद्ययाऽभीष्टं प्राप्तव्यमित्याह॥

किसकी विद्या से अभीष्ट प्राप्त करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒ग्निरी॑शे बृह॒तो अ॑ध्व॒रस्या॒ग्निर्विश्व॑स्य ह॒विषः॑ कृ॒तस्य॑।
क्रतुं॒ ह्य॑स्य॒ वस॑वो जु॒षन्ताथा॑ दे॒वा द॑धिरे हव्य॒वाह॑म्॥४॥

अ॒ग्निः। ई॒शे॒। बृ॒ह॒तः। अ॒ध्व॒रस्य॑। अ॒ग्निः। विश्व॑स्य। ह॒विषः॑। कृ॒तस्य॑। क्रतु॑म्। हि। अ॒स्य॒। वस॑वः। जु॒षन्त॑। अथ॑। दे॒वाः। द॒धि॒रे॒। ह॒व्य॒ऽवाह॑म्॥४॥

पदार्थः-(**अग्निः**) विद्युत् (**ईशे**) ईष्टे (**बृहतः**) महतः (**अध्वरस्य**) अहिंसनीयस्य व्यवहारस्य (**अग्निः**) (**विश्वस्य**) समग्रस्य (**हविषः**) सङ्गन्तुमर्हस्य (**कृतस्य**) शुद्धस्य (**क्रतुम्**) प्रज्ञाम् (**हि**) खलु (**अस्य**) (**वसवः**) (**जुषन्त**) सेवन्ते (**अथा**) अनन्तरम्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**देवाः**) विद्वांसः (**दधिरे**) दधति। (**हव्यवाहम्**) यो हव्यान्यादातुमर्हाणि वहति प्राप्नोति॥४॥

अन्वयः-अग्निर्बृहतोऽध्वरस्येशे योऽग्निः कृतस्य विश्वस्य हविष ईशेऽस्य हि सङ्गेन ये वसवो देवाः क्रतुं हि जुषन्ताऽथा हव्यवाहं दधिरे ते हि जगत्पूज्या जायन्ते॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! या विद्युन्महान्ति कार्याणि साध्नोति यस्य सकाशाद्योगाभ्यासेन प्रज्ञां प्राप्नोति तमेवाग्निं सर्वे युक्त्या परिचरन्तु॥४॥

पदार्थः-(**अग्निः**) विद्युत् अग्नि (**बृहतः**) बड़े (**अध्वरस्य**) रक्षा योग्य व्यवहार के करने को (**ईशे**) समर्थ है (**अग्निः**) अग्नि (**कृतस्य**) शुद्ध (**विश्वस्य**) सब (**हविषः**) संग करने योग्य व्यवहार के लिये समर्थ है (**अस्य**) इस अग्नि के संग से जो (**वसवः**) चौबीस वर्ष ब्रह्मचर्य्य करने वाले प्रथम कक्षा (**देवाः**) विद्वान् जन (**क्रतुम्**) बुद्धि का (**हि**) ही (**जुषन्त**) सेवन करते हैं (**अथा**) इसके अनन्तर (**हव्यवाहम्**) ग्रहण करने योग्य वस्तुओं को प्राप्त करने वाले अग्नि को (**दधिरे**) धारण करते हैं, वे ही जगत् में पूज्य होते हैं॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो विद्युत् बड़े-बड़े कार्य्यों को सिद्ध करती, जिसके सम्बन्ध से योगाभ्यास कर के मनुष्य बुद्धि को प्राप्त होता, उसी अग्नि का सब लोग युक्ति से सेवन करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आग्ने॑ वह ह॒विरद्या॑य दे॒वानिन्द्र॑ज्येष्ठास इ॒ह मा॑दयन्ताम्।

इमं यज्ञं दिवि देवेषु धेहि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥५॥१४॥

आ। अग्ने। वह। हविःऽअद्याय। देवान्। इन्द्रऽज्येष्ठासः। इह। मादयन्ताम्। इमम्। यज्ञम्। दिवि। देवेषु। धेहि। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥५॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**अग्ने**) वह्निरिव विद्वन् (**वह**) सर्वतः प्रापय (**हविः**) अत्तुमर्हम् (**अद्याय**) अत्तुं योग्याय (**देवान्**) विदुषः (**इन्द्रज्येष्ठासः**) इन्द्रो राजा ज्येष्ठो येषान्ते (**इह**) अस्मिन्समये (**मादयन्ताम्**) आनन्दयन्तु (**इमम्**) वर्त्तमानम् (**यज्ञम्**) धर्म्यं व्यवहारम् (**दिवि**) द्योतनात्मके परमात्मनि (**देवेषु**) विद्वत्सु (**धेहि**) यूयम् (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) सुखैः (**सदा**) (**नः**) अस्मान्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमद्याय देवान् हविरावह तेनेहेन्द्रज्येष्ठासो जना मादयन्तां त्वमिमं यज्ञं दिवि देवेषु धेहि हे विद्वांसो! यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यथाग्निः सूर्यादिरूपेण सर्वानानन्दयति तथाऽत्र यूयं सर्वान् संरक्ष्य कर्त्तव्यं कारयित्वेष्टान् भोगान् प्रापयतेति॥५॥

अत्राग्निविद्वत्कृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकादशं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य तेजस्वि विद्वन्! आप (**अद्याय**) भोगने योग्य वस्तु के लिये (**देवान्**) विद्वानों (**हविः**) भोजन योग्य अन्न को (**आ, वह**) अच्छे प्रकार प्राप्त कीजिये उससे (**इह**) इस समय (**इन्द्रज्येष्ठासः**) जिन में राजा श्रेष्ठ है वे मनुष्य (**मादयन्ताम्**) आनन्दित करें आप (**इमम्**) इस यज्ञम् धर्मयुक्त व्यवहार को (**दिवि**) द्योतनस्वरूप परमात्मा और (**देवेषु**) विद्वानों में (**धेहि**) धारण करो, हे विद्वानो! (**यूयम्**) तुम लोग (**स्वस्तिभिः**) सुखों से (**नः**) हमारी (**सदाः**) सदा (**पात**) रक्षा करो॥५॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जैसे अग्नि सूर्यादिरूप से सब को आनन्दित करता है, वैसे इस जगत् में तुम सब लोगों की रक्षा कर और कर्त्तव्य को कराके अभीष्ट लोगों को प्राप्त कराओ॥५॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों का कृत्य वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह ग्यारहवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ त्र्यर्चस्य द्वादशस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषि:। अग्निर्देवता। १ विराट्त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप् छन्द:। धैवत: स्वर:। ३ पङ्क्तिश्छन्द:। पञ्चम: स्वर:॥

अथ पुनरग्नि: कीदृशोऽस्तीत्याह॥

अब बारहवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में अग्नि कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

अगन्म महा नमसा यविष्ठं यो दीदाय समिद्ध: स्वे दुरोणे।
चित्रभानुं रोदसी अन्तरुर्वी स्वाहुतं विश्वत: प्रत्यञ्चम्॥ १॥

अगन्म। महा। नमसा। यविष्ठम्। य:। दीदाय। सम्ऽइद्ध:। स्वे। दुरोणे। चित्रऽभानुम्। रोदसी इति। अन्त:। उर्वी इति। सुऽआहुतम्। विश्वत:। प्रत्यञ्चम्॥ १॥

पदार्थ:- **(अगन्म)** प्राप्नुयाम **(महा)** महान्तम् **(नमसा)** सत्कारेणान्नादिना वा **(यविष्ठम्)** अतिशयेन विभाजकम् **(य:)** **(दीदाय)** दीपयति **(समिद्ध:)** प्रदीप्त: **(स्वे)** स्वकीये **(दुरोणे)** गृहे **(चित्रभानुम्)** अद्भुतकिरणम् **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यो: **(अन्त:)** मध्ये **(उर्वी)** महत्यो: **(स्वाहुतम्)** सुष्ठ्वाहुतम् **(विश्वत:)** सर्वत: **(प्रत्यञ्चम्)** य: प्रत्यञ्चति तम्॥ १॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यस्स्वे दुरोणे समिद्ध: स दीदाय तमुर्वी रोदसी अन्तर्वर्त्तमानं चित्रभानुं स्वाहुतं विश्वत: प्रत्यञ्चं यविष्ठं महाऽग्निं नमसा यथा वयमगन्म तथैतं यूयमपि प्राप्नुत॥ १॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। विद्वद्भि: सर्व एवमुपदेष्टव्यो यथा वयं सर्वान्त:स्थां विद्युतं विजानीयाम तथा यूयमपि विजानीत॥ १॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो **(य:)** जो **(स्वे)** अपने **(दुरोणे)** घर में **(समिद्ध:)** प्रकाशित है वह **(दीदाय)** सबको प्रकाशित करता है उसको **(उर्वी)** बड़ी **(रोदसी)** सूर्य-पृथिवी के **(अन्त:)** भीतर वर्त्तमान **(चित्रभानुम्)** अद्भुत किरणों वाले **(स्वाहुतम्)** सुन्दर प्रकार ग्रहण किये **(विश्वत:)** सब ओर से **(प्रत्यञ्चम्)** पीछे चलने और **(यविष्ठम्)** अतिशय विभाग करने वाले **(महा)** बड़े अग्नि को **(नमसा)** सत्कार वा अन्नादि से जैसे हम लोग **(अगन्म)** प्राप्त हों, वैसे इसको तुम लोग भी प्राप्त होओ॥ १॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्वानों को उचित है कि सब को ऐसा उपदेश करें कि जैसे हम लोग सब के अन्त:स्थित विद्युत् अग्नि को जानें, वैसे तुम लोग भी जानो॥ १॥

पुन: प्रेम्णोपासित ईश्वर: किं करोतीत्याह॥

फिर प्रेम से उपासना किया ईश्वर क्या करता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स मह्ना विश्वा दुरितानि साह्वानग्नि: ष्टवे दम आ जातवेदा:।
स नो रक्षिषद् दुरितादवद्यादस्मान् गृणत उत नो मघोन:॥ २॥

स:। मह्ना। विश्वा। दु:ऽइतानि। सह्वान्। अग्नि:। स्तवे। दमे। आ। जातऽवेदा:। स:। न:। रक्षिषत्।

दुः॒ऽइ॒तात्। अ॒व॒द्यात्। अ॒स्मान्। गृ॒ण॒तः। उ॒त। नः॒। म॒घोनः॑॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) (**मह्ना**) महत्त्वेन (**विश्वा**) सर्वाणि (**दुरितानि**) दुराचरणानि (**साह्वान्**) सोढा (**अग्निः**) पावक इव जगदीश्वरः (**स्तवे**) स्तवने (**दमे**) गृहे (**आ**) (**जातवेदाः**) यो जातेषु पदार्थेष्वभिव्याप्य विद्यते सः (**सः**) (**नः**) अस्मान् (**रक्षिषत्**) रक्षेत् (**दुरितात्**) दुष्टाचारात् (**अवद्यात्**) निन्दनीयात् (**अस्मान्**) (**गृणतः**) शुचिं कुर्वतः (**उत**) अपि (**नः**) अस्मान् (**मघोनः**) बहुधनयुक्तान्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! जगदीश्वरो दमेऽग्निरिव जातवेदाः स्तवे मह्ना साह्वान् विश्वा दुरितानि दूरीकरोति सोऽवद्याद् दुरितान्न आ रक्षिषत्। गृणतोऽस्मान् न्यायाचरणाद्रक्षतु उतोऽपि मघोनो नोऽस्मान् स रक्षिषत्॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा गृहे प्रज्वालितोऽग्निरन्धकारं शीतं च निवर्त्तयति तथैवोपासितः परमेश्वरोऽज्ञानमधर्माचरणं च दूरीकृत्य धर्मे विद्याग्रहणे च प्रवर्त्तयित्वा सम्यग्रक्षति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जगदीश्वर (**दमे**) घर में (**अग्निः**) अग्नि के तुल्य (**जातवेदाः**) उत्पन्न हुए पदार्थों में व्याप्त होकर विद्यमान (**स्तवे**) स्तुति में (**मह्ना**) महत्त्व से (**साह्वान्**) सहनशील (**विश्वा**) सब (**दुरितानि**) दुराचरणों को दूर करता है (**सः**) वह (**अवद्यात्**) निन्दनीय (**दुरितात्**) दुष्टाचार से (**नः**) हमारी (**आ, रक्षिषत्**) रक्षा करे (**गृणतः**) शुद्धि करते हुए हम लोगों की रक्षा करे (**उत**) और (**मघोनः**) बहुत धन वाले (**नः**) हमारी (**सः**) वह रक्षा करे॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे घर में प्रज्वलित किया अग्नि अन्धकार और शीत की निवृत्ति करता है, वैसे ही उपासना किया परमेश्वर अज्ञान और अधर्म्माचरण को दूर कर धर्म और विद्या ग्रहण में प्रवृत्ति कराके सम्यक् रक्षा करता है॥ २॥

पुनः स उपासितः किं करोतीत्याह॥

फिर वह उपासना किया ईश्वर क्या करता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं व॑रुण उ॒त मि॒त्रो अ॑ग्ने॒ त्वां व॑र्धन्ति म॒तिभि॒र्वसि॑ष्ठाः।

त्वे वसु॑ सुषण॒नानि॑ सन्तु यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभिः॒ सदा॑ नः॥ ३॥ १५॥

त्वम्। वरु॑णः। उ॒त। मि॒त्रः। अ॒ग्ने॒। त्वाम्। व॒र्धन्ति॒। म॒तिऽभिः॑। वसि॑ष्ठाः। त्वे इति॑। वसु॑। सु॒ऽस॒न॒नानि॑। स॒न्तु॒। यू॒यम्। पा॒त। स्व॒स्तिऽभिः॑। सदा॑। नः॒॥ ३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**वरुणः**) वरः श्रेष्ठः (**उत**) अपि (**मित्रः**) सुहृत् (**अग्ने**) अग्निरिव स्वप्रकाशेश्वर (**त्वाम्**) (**वर्धन्ति**) वर्धयन्ति (**मतिभिः**) प्रज्ञाभिः (**वसिष्ठाः**) सकलविद्यास्वतिशयेन वासकर्त्तारः (**त्वे**) त्वयि (**वसु**) द्रव्यम् (**सुषणनानि**) सुष्ठु विभाजितानि (**सन्तु**) (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) स्वास्थ्यक्रियाभिः (**सदा**) (**नः**) अस्मान्॥ ३॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये वसिष्ठा मतिभिस्त्वां वर्धन्ति तेषां त्वे प्रीतिमतां वसु सुषणनानि सन्तु। यस्त्वं वरुण उत मित्रोऽसि सोऽस्मान् सदा पातु हे विद्वांसो! यूयं जगदीश्वरवन्नोऽस्मान् स्वस्तिभिस्सदा पात॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्वद्भिः संवर्धितोऽग्निर्दारिद्र्यं विनाशयति तथैवोपासितः परमेश्वरोऽज्ञानं निवर्तयति यथाऽऽप्ताः सर्वान् सदा रक्षन्ति तथैव परमात्मा सकलं विश्वं पातीति॥३॥

अत्राऽग्नीश्वरविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वादशं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य स्वयं प्रकाशस्वरूप ईश्वर! जो **(वसिष्ठाः)** सब विद्याओं में अतिशय कर निवास करने वाले **(मतिभिः)** बुद्धियों से **(त्वाम्)** तुमको **(वर्धन्ति)** बढ़ाते हैं उन **(त्वे)** आप में प्रीति वालों के **(वसु)** द्रव्य **(सुषणनानि)** सुन्दर विभाग किये **(सन्तु)** हों जो **(त्वम्)** आप **(वरुणः)** श्रेष्ठ **(उत)** और **(मित्रः)** मित्र है सो आप हमारी **(सदा)** सदा रक्षा करो और हे विद्वानो! **(यूयम्)** तुम लोग ईश्वर के तुल्य **(नः)** हमारी **(स्वस्तिभिः)** स्वस्थता सम्पादक क्रियाओं से **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वानों से सम्यक् बढ़ाया हुआ अग्नि दरिद्रता का विनाश करता है, वैसे ही उपासना किया परमेश्वर अज्ञान की निवृत्त करता है। जैसे आप्त लोग सब की सदा रक्षा करते हैं, वैसे परमात्मा सब संसार की रक्षा करता है॥३॥

इस सूक्त में अग्नि, ईश्वर और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह बारहवां सूक्त और पन्द्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ त्र्यर्चस्य त्रयोदशस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। वैश्वानरो देवता। १, २ स्वराट्पङ्क्तिः। ३ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ संन्यासिनः कीदृशो भवन्तीत्याह॥

अब तीन ऋचावाले तेरहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में संन्यासी कैसे होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

प्राग्नये विश्वशुचे धियंधेऽसुरघ्ने मन्म धीतिं भरध्वम्।
भरे हविर्न बर्हिषि प्रीणानो वैश्वानराय यतये मतीनाम्॥१॥

प्र। अग्नये। विश्वऽशुचे। धियम्ऽधे। असुरऽघ्ने। मन्म। धीतिम्। भरध्वम्। भरे। हविः। न। बर्हिषि। प्रीणानः। वैश्वानराय। यतये। मतीनाम्॥१॥

पदार्थः- **(प्र)** **(अग्नये)** अग्निरिव विद्यादिशुभगुणैः प्रकाशमानाय **(विश्वशुचे)** यो विश्वं सर्वं जगच्छोधयति तस्मै **(धियन्धे)** यो धियं दधाति तस्मै **(असुरघ्ने)** योऽसुरान् दुष्टकर्मकारिणो हन्ति तिरस्करोति तस्मै **(मन्म)** विज्ञानम् **(धीतिम्)** धर्मस्य धारणाम् **(भरध्वम्)** धरध्वं पोषयत वा **(भरे)** स- ग्रामे **(हविः)** दातव्यमत्तव्यमन्नादिकम् **(न)** इव **(बर्हिषि)** सभायाम् **(प्रीणानः)** प्रसन्नः **(वैश्वानराय)** विश्वेषां नराणां नायकाय **(यतये)** यतमानाय संन्यासिने **(मतीनाम्)** मनुष्याणां मध्ये॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! मतीनां मध्ये वैश्वानराय विश्वशुचे धियन्धेऽसुरघ्नेऽग्नये यतये बर्हिषि प्रीणानो राजा भरे हविर्न मन्म धीतिञ्च यूयं प्र भरध्वम्॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे गृहस्था! येऽग्निवद्विद्यासत्यधर्मप्रकाशका अधर्मखण्डनेन धर्ममण्डनेन सर्वेषां शुद्धिकराः प्रज्ञाः प्रमाप्रदा अविद्वत्ताविनाशका मनुष्याणां विज्ञानं धर्मधारणं च कारयन्तो यतयः संन्यासिनो भवेयुस्तत्सङ्गेन सर्वे यूयं प्रज्ञां धृत्वा निःसंशया भवत यथा राजा युद्धस्य सामग्रीमलङ्करोति तथैव यतिवराः सुखस्य सामग्रीमलंकुर्वन्ति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो **(मतीनाम्)** मनुष्यों के बीच **(वैश्वानराय)** सब मनुष्यों के नायक **(विश्वशुचे)** सब को शुद्ध करने वाले **(धियन्धे)** बुद्धि को धारण करनेहारे **(असुरघ्ने)** दुष्ट कर्मकारियों को मारने वा तिरस्कार करने वाले **(अग्नये)** अग्नि के तुल्य विद्यादि शुभ गुणों से प्रकाशमान **(यतये)** यत्न करने वाले संन्यासी के लिये **(बर्हिषि)** सभा में **(प्रीणानः)** प्रसन्न हुआ राजा **(भरे)** संग्राम में **(हविः)** भोगने वा देने योग्य अन्न को जैसे **(न)** वैसे **(मन्म)** विज्ञान **(धीतिम्)** धर्म की धारणा को तुम लोग **(प्र, भरध्वम्)** धारण वा पोषण करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में [उपमा]वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे गृहस्थो! जो अग्नि के तुल्य विद्या और सत्य धर्म के प्रकाशक, अधर्म के खण्डन और धर्म के मण्डन से सब के शुद्धिकर्त्ता, बुद्धिमान्, निश्चित ज्ञान देने वाले, अविद्वत्ता के विनाशक, मनुष्यों को विज्ञान और धर्म का धारण कराते हुए संन्यासी हों, उनके सङ्ग से सब तुम लोग बुद्धि को धारण कर निस्सन्देह होओ। जैसे राजा युद्ध की सामग्री को शोभित करता है, वैसे उत्तम संन्यासी जन सुख की सामग्री को शोभित करते हैं॥१॥

पुनस्ते सन्न्यासिनः किंवत् किं कुर्वन्तीत्याह॥

फिर वे सन्न्यासी किसके तुल्य क्या करते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वम॑ग्ने शो॒चिषा॒ शोशु॑चान॒ आ रोद॑सी अपृणा॒ जाय॑मानः।

त्वं दे॒वाँ अ॒भिश॑स्तेरमुञ्चो वैश्वा॑नर जातवेदो महि॒त्वा॥२॥

त्वम्। अ॒ग्ने॒। शो॒चिषा॑। शोशु॑चानः। आ। रोद॑सी॒ इति॑। अ॒पृ॒णाः॒। जाय॑मानः। त्वम्। दे॒वान्। अ॒भिऽश॑स्तेः। अ॒मु॒ञ्चः॒। वैश्वा॑नर। जा॒त॒ऽवे॒दः॒। म॒हि॒ऽत्वा॥२॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान सन्न्यासिन् (**शोचिषा**) प्रकाशेन (**शोशुचानः**) शोधयन् (**आ**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**अपृणाः**) पूरय (**जायमानः**) उत्पद्यमानः (**त्वम्**) (**देवान्**) विदुषः (**अभिशस्तेः**) आभिमुख्येन स्वप्रशंसां कुर्वतो दम्भिनः (**अमुञ्चः**) मोचय (**वैश्वानर**) विश्वेषु नरेषु राजमान (**जातवेदः**) जातविद्य (**महित्वा**) महिम्ना॥२॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं यथाग्निः शोशुचानो जायमानः शोचिषा रोदसी आपृणाति तथाऽस्माँस्त्वमापृणाः। हे वैश्वानर जातवेदस्त्वं महित्वाऽस्मान् देवानभिशस्तेरमुञ्चः॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाग्निः स्वयं शुद्धः सर्वाञ्छोधयति तथैव सन्न्यासिनः स्वयं पवित्राचरणाः सन्तः सर्वान् पवित्रयन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य वर्त्तमान तेजस्विन् सन्न्यासिन्! आप जैसे अग्नि (**शोशुचानः**) शुद्ध करता और (**जायमानः**) उत्पन्न होता हुआ (**शोचिषा**) प्रकाश से (**रोदसी**) सूर्य भूमि को अच्छे प्रकार पूरित करता, वैसे हम लोगों को (**त्वम्**) आप (**आ, अपृणाः**) अच्छे प्रकार पूर्ण कीजिये हे (**वैश्वानर**) सब मनुष्यों के नायक (**जातवेदः**) विद्या को प्राप्त विद्वन्! (**त्वम्**) आप (**महित्वा**) अपनी महिमा से (**देवान्**) हम विद्वानों को (**अभिशस्तेः**) सम्मुख प्रशंसा करने वाले दम्भी से (**अमुञ्चः**) छुड़ाइये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे अग्नि आप शुद्ध हुआ सब को शुद्ध करता है, वैसे संन्यासी लोग स्वयं पवित्र हुए सब को पवित्र करते हैं॥२॥

पुनस्ते यतयः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर वे संन्यासी कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

जा॒तो यद॑ग्ने॒ भुव॑ना॒ व्यख्यः॑ प॒शून्न गो॒पा इर्यः॑ परि॑ज्मा।

वैश्वा॑नर॒ ब्रह्म॑णे विन्द गा॒तुं यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभिः॒ सदा॑ नः॥३॥१६॥

जा॒तः। यत्। अ॒ग्ने॒। भुव॑ना। वि। अ॒ख्यः॑। प॒शून्। न। गो॒पाः। इर्यः॑। परि॑ऽज्मा। वैश्वा॑नर। ब्रह्म॑णे। वि॒न्द॒। गा॒तुम्। यू॒यम्। पा॒त॒। स्व॒स्तिऽभिः॑। सदा॑। नः॒॥३॥

पदार्थः-(**जातः**) उत्पन्नः (**यत्**) यः (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् (**भुवना**) लोकलोकान्तरान् (**वि**) विशेषेण (**अख्यः**) प्रकाशयति (**पशून्**) गवादीन् (**न**) इव (**गोपाः**) गोपालाः पशुरक्षकाः (**इर्यः**)

सत्यमार्गे प्रेरकः **(परिज्मा)** परितः सर्वतोऽजति गच्छति **(वैश्वानर)** विश्वेषु नरेषु प्रकाशक **(ब्रह्मणे)** परमेश्वराय वेदाय वाऽथवा चतुर्वेदविदे **(विन्द)** प्राप्नुहि **(गातुम्)** प्रशंसितां भूमिम् **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** स्वास्थ्यकारिणीभिः क्रियाभिः **(सदा)** सर्वदा **(नः)** अस्मान्॥३॥

अन्वयः-हे वैश्वानराग्ने! यते यथा जातोऽग्निर्भुवना व्यख्यस्तथा यद्यस्त्वं विद्यासु प्रसिद्धजनानामात्मनः प्रकाशय पशून् गोपा नेर्यः परिज्मा भव स त्वं ब्रह्मणे गातुं विन्द यूयं संन्यासिनः सर्वे स्वस्तिभिः सत्योपदेशनैर्नः सदा पात॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये सूर्यवत्प्रख्यातपरोपकार विद्योपदेशा वत्सान् गाव इव विद्यादानेन सर्वेषां रक्षकाः सर्वदा भ्रमन्तो वेदेश्वरविज्ञानाय राज्यरक्षणाय नृप इव न्यायशीला भूत्वा सर्वानज्ञान् बोधयन्ति ते सदैव सर्वैः सत्कर्त्तव्या भवन्तीति॥३॥

अत्राग्निदृष्टान्तेन संन्यासिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयोदशं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** सब मनुष्यों में प्रकाश करने वाले **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वि विद्वन् संन्यासिन्! जैसे **(जातः)** उत्पन्न हुआ अग्नि **(भुवना)** लोक-लोकान्तरों को **(वि, अख्यः)** विशेष कर प्रकाशित करता है, वैसे **(यत्)** जो आप विद्याओं में प्रसिद्ध मनुष्यों के आत्माओं को प्रकाशित कीजिये तथा **(पशून्)** गौ आदि को **(गोपाः)** पशुरक्षकों के **(न)** तुल्य **(इर्यः)** सत्य मार्ग में प्रेरक और **(परिज्मा)** सब ओर से प्राप्त होने वाले हूजिये वह आप **(ब्रह्मणे)** परमेश्वर, वेद वा चार वेदों के ज्ञाता के लिये **(गातुम्)** प्रशस्त भूमि को **(विन्द)** प्राप्त हूजिये **(यूयम्)** तुम संन्यासी लोग सब **(स्वस्तिभिः)** स्वस्थता के हेतु क्रियाओं और सत्य उपदेशों से **(नः)** हमारी **(सदा)** **(पात)** रक्षा करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में **[उपमा]**वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो सूर्य के तुल्य, परोपकार, विद्या और उपदेश जिनके प्रसिद्ध हैं, वे जैसे गौएँ बछड़ों की रक्षा करती, वैसे विद्यादान से सब की रक्षा करने वाले सर्वदा घूमते हुए वेद, ईश्वर को जानने के लिये राज्यरक्षणार्थ राजा के तुल्य न्यायशील होकर सब सुखों को बोध कराते वे सदा सब को सत्कार करने योग्य होते हैं॥३॥

इस सूक्त में अग्नि के दृष्टान्त से संन्यासियों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह तेरहवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ त्र्यर्चस्य चतुर्दशस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १ निचृद्बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। २ निचृत्त्रिष्टुप्। ३ विराट् त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ यतिः किंवत्सेवनीय इत्याह॥

अब तीन ऋचा वाले चौदहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में संन्यासी की सेवा कैसे करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स॒मिधा॑ जा॒तवे॑दसे दे॒वाय॑ दे॒वहू॑तिभिः।
ह॒विर्भिः॑ शु॒क्रशो॑चिषे नम॒स्विनो॑ व॒यं दा॑शेमा॒ग्नये॑॥ १॥

स॒म्ऽइधा॑। जा॒तऽवे॑दसे। दे॒वाय॑। दे॒वहू॑तिऽभिः। ह॒विःऽभिः॑। शु॒क्रऽशो॑चिषे। न॒म॒स्विनः॑। व॒यम्। दा॒शे॒म॒। अ॒ग्नये॑॥ १॥

पदार्थः- **(समिधा)** प्रदीपनसाधनेन **(जातवेदसे)** जातेषु विद्यमानाय **(देवाय)** विदुषे **(देवहूतिभिः)** देवैः प्रशंसिताभिर्वाग्भिः **(हविर्भिः)** होमसाधनैः **(शुक्रशोचिषे)** शुक्रेण वीर्येण शोचिर्दीप्तिर्यस्य तस्मै **(मनस्विनः)** नमोऽन्नं सत्कारो वा विद्यते येषां ते **(वयम्)** **(दाशेम)** **(अग्नये)** पावकाय॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथर्त्विग्यजमानाः समिधा हविर्भिरग्नये प्रयतन्ते तथा नमस्विनो वयं जातवेदसे शुक्रशोचिषे देवाय यतयेऽन्नादिकं दाशेम॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा दीक्षिता अग्निहोत्रादौ यज्ञे घृताहुतिभिर्हुतेनाग्निना जगद्धितं कुर्वन्ति तथैव वयमतिथीनां संन्यासिनां सेवनेन मनुष्यकल्याणं कुर्याम॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे ऋत्विज् पुरुष और यजमान लोग **(समिधा)** दीप्ति के हेतु काष्ठ और **(हविर्भिः)** होम के साधनों और **(देवहूतिभिः)** विद्वानों ने प्रशंसित की हुई वाणियों के साथ **(अग्नये)** अग्नि के लिये प्रयत्न करते हैं, वैसे **(नमस्विनः)** अन्न और सत्कार वाले **(वयम्)** हम लोग **(जातवेदसे)** उत्पन्न पदार्थों में विद्यमान **(शुक्रशोचिषे)** वीर्य्य और पराक्रम से दीप्तिमान् तेजस्वी **(देवाय)** विद्वान् संन्यासी के लिये अन्नादि पदार्थ **(दाशेम)** देवें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे दीक्षित लोग अग्निहोत्रादि यज्ञ में घृत की आहुतियों से होम किये अग्नि से जगत् का हित करते हैं, वैसे ही हम अनियत तिथि वाले संन्यासियों की सेवा से मनुष्यों का कल्याण करें॥ १॥

पुनस्ते यतयः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे संन्यासी क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

व॒यं ते॑ अग्ने स॒मिधा॑ विधेम व॒यं दा॑शेम सुष्टु॒ती य॑जत्र।
व॒यं घृ॒तेना॑ध्वरस्य होतर्व॒यं दे॑व ह॒विषा॑ भद्रशोचे॥ २॥

व॒यम्। ते॒। अ॒ग्ने॒। स॒म्ऽइधा॑। वि॒धे॒म॒। व॒यम्। दा॒शे॒म॒। सु॒ऽस्तु॒ती। य॒ज॒त्र॒। व॒यम्। घृ॒तेन॑। अ॒ध्व॒रस्य॒। हो॒त॒रिति॑। व॒यम्। दे॒व॒। ह॒विषा॑। भ॒द्र॒ऽशो॒चे॒॥ २॥

पदार्थः-(**वयम्**) (**ते**) तुभ्यमतिथये (**अग्ने**) वह्निरिव विद्वन् (**समिधा**) इन्धनेन (**विधेम**) कुर्याम (**वयम्**) (**दाशेम**) (**दद्याम**) (**सुष्टुती**) श्रेष्ठया प्रशंसया (**यजत्र**) सङ्गन्तव्यं (**वयम्**) (**घृतेन**) आज्येन (**अध्वरस्य**) यज्ञस्य मध्ये (**होतः**) हवनकर्त्तः (**वयम्**) (**देव**) दिव्यगुण (**हविषा**) होतव्येन द्रव्येण (**भद्रशोचे**) कल्याणदीपक॥२॥

अन्वयः-हे यजत्र होतर्भद्रशोचे देवाग्ने! यथा वयं समिधाग्नौ होमं विधेम तथा सुष्टुती ते तुभ्यमन्नादिकं वयं दाशेम। यथर्त्विग्यजमाना अध्वरस्य मध्ये घृतेन हविषा जगद्धितं कुर्वन्ति तथा वयं तव हितं कुर्याम यथा वयं त्वां सेवेमहि तथा त्वमस्मान् सत्यमुपदिश॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा गृहस्थाः प्रीत्या यतीनां सेवां कुर्य्युस्तथैव प्रेम्णा यतय एषां कल्याणाय सत्यमुपदिशेयुः॥२॥

पदार्थः-हे (**यजत्र**) सङ्ग करने योग्य (**होतः**) होम करने वाले (**भद्रशोचे**) कल्याण के प्रकाशक (**देव**) दिव्य गुणयुक्त (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य तेजस्विन्! जैसे (**वयम्**) हम लोग (**समिधा**) ईंधन से अग्नि में होम (**विधेम**) करें, वैसे (**सुष्टुती**) श्रेष्ठ प्रशंसा से (**ते**) तुम अतिथि के लिये (**वयम्**) हम अन्नादिक (**दाशेम**) देवें जैसे ऋत्विज् और यजमान लोग (**अध्वरस्य**) यज्ञ के बीच (**घृतेन**) घी तथा (**हविषा**) होमने योग्य द्रव्य से जगत् का हित करते हैं, वैसे (**वयम्**) हम लोग आप का हित करें। जैसे (**वयम्**) हम आप की सेवा करें, वैसे आप हमको सत्य उपदेश करें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे गृहस्थ लोग प्रीति से संन्यासियों की सेवा करें, वैसे ही प्रीति से संन्यासी भी इनके कल्याण के अर्थ सत्य का उपदेश करें॥२॥

पुनर्गृहस्थयतयः परस्परस्मिन् कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर गृहस्थ और यति लोग परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नो देवेभिरुप देवहूतिमग्ने याहि वषट्कृतिं जुषाणः।
तुभ्यं देवाय दाशतः स्याम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥३॥१७॥

आ। नः। देवेभिः। उप। देवऽहूतिम्। अग्ने। याहि। वषट्ऽकृतिम्। जुषाणः। तुभ्यम्। देवाय। दाशतः। स्याम। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥३॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**नः**) अस्मानस्माकं वा (**देवेभिः**) विद्वद्भिस्सह (**उप**) समीपे (**देवहूतिम्**) देवैराहूताम् (**अग्ने**) पावक इव दोषदाहक (**याहि**) प्राप्नुहि (**वषट्कृतिम्**) सत्यक्रियाम् (**जुषाणः**) सेवमानः (**तुभ्यम्**) (**देवाय**) विदुषे (**दाशतः**) सेवमानाः (**स्याम**) भवेम (**यूयम्**) यतयः (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) सुखक्रियाभिः (**सदा**) (**नः**) अस्मान्॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं देवेभिः सह नो देवहूतिं वषट्कृतिं जुषाणोऽस्मानुपा याहि वयं देवाय तुभ्यं दाशतः स्याम यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥३॥

भावार्थः-गृहस्थैस्सदैव पूर्णविद्यानां यतीनां निमन्त्रणैरभ्यर्थना कार्य्या यतस्ते समीपमागताः सन्तस्तेषां रक्षां सत्योपदेशं च सततं कुर्य्युरिति॥३॥

अत्राग्निदृष्टान्तेन यतिगृहस्थयोः कृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्दशं सूक्तं सप्तदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः–हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य दोषों के जलाने वाले! आप **(देवेभिः)** विद्वानों के साथ **(नः)** हमारे **(देवहूतिम्)** विद्वानों से स्वीकार की हुई **(वषट्कृतिम्)** सत्य क्रिया को **(जुषाणः)** सेवन करते हुए हमको **(उप, आ, याहि)** समीप प्राप्त हूजिये हम लोग **(तुभ्यम्)** तुम **(देवाय)** विद्वान् के लिये **(दाशतः)** सेवन करने वाले **(स्याम)** होवें **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुख क्रियाओं से **(नः)** हमारी **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो॥३॥

भावार्थः-गृहस्थों को चाहिये कि सदैव पूर्ण विद्या वाले संन्यासियों की निमन्त्रण द्वारा प्रार्थना वा सत्कार करें जिससे वे समीप आये हुए उनकी रक्षा और निरन्तर उपदेश करें॥३॥

इस सूक्त में अग्नि दृष्टान्त से यति और गृहस्थ के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह चौदहवां सूक्त और सत्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चदशर्चस्य पञ्चदशतमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ७, १०, १२, १४ विराड्गायत्री। २, ४, ५, ६, ९, १३ गायत्री। ८ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ११, १५ आर्च्युष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथाऽतिथिः कीदृशो भवतीत्याह॥

अब पन्द्रहवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में अतिथि कैसा हो, इस विषय को कहते हैं॥

उपसद्याय मीळ्हुषं आस्ये जुहुता हविः। यो नो नेदिष्ठमाप्यम्॥ १॥

उपऽसद्याय। मीळ्हुषे। आस्ये। जुहुत। हविः। यः। नः। नेदिष्ठम् आप्यम्॥ १॥

पदार्थः-(**उपसद्याय**) समीपे स्थापयितुं योग्याय (**मीह्ळुषे**) वारिणेव सत्योपदेशैस्सेचकाय (**आस्ये**) मुखे (**जुहुता**) दत्त। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**हविः**) होतुं दातुमर्हमन्नादिकम् (**यः**) (**नः**) अस्माकम् (**नेदिष्ठम्**) अति निकटम् (**आप्यम्**) प्राप्तुं योग्यम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो नो नेदिष्ठमाप्यं प्राप्नोति तस्मै मीळ्हुष उपसद्यायाऽऽस्ये हविर्जुहुत॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो यतिरन्तिकं प्राप्नुयात्तं सर्वे सत्कुरुताऽन्नादिकञ्च भोजयत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**यः**) जो (**नः**) हमारे (**नेदिष्ठम्**) अति निकट (**आप्यम्**) प्राप्त होने योग्य को प्राप्त होता है उस (**उपसद्याय**) समीप में स्थापन करने योग्य (**मीळ्हुषे**) जल से जैसे, वैसे सत्य उपदेशों से सींचने वाले के लिये (**आस्ये**) मुख में (**हविः**) देने योग्य वस्तु को (**जुहुत**) देओ॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो यति समीप प्राप्त हो उसका तुम सब लोग सत्कार करो और अन्नादि का भोजन कराओ॥१॥

पुनस्तौ यतिगृहस्थौ परस्परं कथं वर्तेयातामित्याह॥

फिर वे संन्यासी और गृहस्थ परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यः पञ्च चर्षणीरभि निषसाद दमेदमे। कविर्गृहपतिर्युवा॥ २॥

यः। पञ्च। चर्षणीः। अभि। निऽससाद। दमेऽदमे। कविः। गृहऽपतिः। युवा॥ २॥

पदार्थः-(**यः**) (**पञ्च**) (**चर्षणीः**) मनुष्यान् (**अभि**) आभिमुख्ये (**निषसाद**) निषीदेत् (**दमेदमे**) गृहेगृहे (**कविः**) जातप्रज्ञः (**गृहपतिः**) गृहस्य पालकः (**युवा**) पूर्णेन ब्रह्मचर्येण युवावस्थां प्राप्य कृतविवाहः॥२॥

अन्वयः-यः कविरतिथिर्दमेदमे पञ्च चर्षणीरभिनिषसाद तं युवा गृहपतिः सततं सत्कुर्यात्॥२॥

भावार्थः-यतिः सदा सर्वत्र भ्रमणं कुर्याद् गृहस्थश्चैतं सदैव सत्कुर्यादत उपदेशाञ्छृणुयात्॥२॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**कविः**) उत्तम ज्ञान को प्राप्त हुआ संन्यासी (**दमेदमे**) घर-घर में (**पञ्च**) पांच (**चर्षणीः**) मनुष्यों वा प्राणों को (**अभि, निषसाद**) स्थिर करे उसका (**युवा**) पूर्ण ब्रह्मचर्य्य के साथ वर्त्तमान (**गृहपतिः**) घर का रक्षक युवा पुरुष निरन्तर सत्कार करे॥२॥

भावार्थः-संन्यासी जन सदा सब जगह भ्रमण करे और गृहस्थ इस विरक्त का सत्कार करे

और इससे उपदेश सुनें॥२॥

पुनस्तौ परस्परं किं कुर्यातामित्याह॥

फिर वे दोनों परस्पर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स नो वेदो अमात्यमग्नी रक्षतु विश्वतः। उतास्मान् पात्वंहसः॥३॥

सः। नः। वेदः। अमात्यम्। अग्निः। रक्षतु। विश्वतः। उत। अस्मान्। पातु। अंहसः॥३॥

पदार्थः-(**सः**) यतिः (**नः**) अस्मान् गृहस्थान् (**वेदः**) धनम्। **वेद इति धननाम।** (निघं०२.१०) (**अमात्यम्**) अमात्येषु साधुम् (**अग्निः**) पावक इव (**रक्षतु**) (**विश्वतः**) सर्वतः (**उत**) अस्मान् (**पातु**) (**अंहसः**) दुष्टाचरणादपराधाद्वा॥३॥

अन्वयः-सोऽग्निरिव नोऽमात्यं वेदो विश्वतो रक्षतूताप्यस्मानंहसः पातु॥३॥

भावार्थः-गृहस्था एवमिच्छेयुर्यतिरस्मानेवमुपदिशेद्यतो वयं धनरक्षकाः सन्तोऽधर्माचरणात् पृथग्वसेम॥३॥

पदार्थः-(**सः**) वह संन्यासी (**अग्निः**) के तुल्य (**नः**) हम गृहस्थों की वा (**अमात्यम्**) उत्तम मन्त्री की और (**वेदः**) धन की (**विश्वतः**) सब ओर से (**रक्षतु**) रक्षा करे (**उत**) और (**अस्मान्**) हमारी (**अंहसः**) दुष्टाचरण वा अपराध से (**पातु**) रक्षा करे॥३॥

भावार्थः-गृहस्थ लोग ऐसी इच्छा करें कि संन्यासी जन हमको ऐसा उपदेश करे कि जिससे हम लोग धन के रक्षक हुए अधर्म के आचरण से पृथक् रहें॥३॥

पुनस्तेऽतिथयः कीदृशाः स्युरित्याह॥

फिर वे संन्यासी लोग कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नवं नु स्तोममग्नये दिवः श्येनाय जीजनम्। वस्वः कुविद्वनाति नः॥४॥

नवम्। नु। स्तोमम्। अग्नये। दिवः। श्येनाय। जीजनम्। वस्वः। कुवित्। वनाति। नः॥४॥

पदार्थः-(**नवम्**) नवीनम् (**नु**) क्षिप्रम् (**स्तोमम्**) प्रशंसाम् (**अग्नये**) पावकवत्पवित्राय (**दिवः**) कामनायाः (**श्येनाय**) श्येन इव पाखण्डिहिंसकाय (**जीजनम्**) जनयेयम् (**वस्वः**) धनस्य (**कुवित्**) महत् (**वनाति**) सम्भजेत् (**नः**) अस्माकम्॥४॥

अन्वयः-यो नो वस्वः कुविद्वनाति तस्मै श्येनायेवाग्नये दिवो नवं स्तोममहं नु जीजनम्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येऽतिथयः श्येनवच्छीघ्रगन्तारः पाखण्डहिंसका द्रव्यविद्योपदेशका यतयः स्युस्तान् गृहस्थाः सत्कुर्युः॥४॥

पदार्थः-जो (**नः**) हमारे (**वस्वः**) धन के (**कुवित्**) बड़े भाग को (**वनाति**) सेवन करे उस (**श्येनाय**) श्येन के तुल्य पाखण्डियों के विनाश करने वाले (**अग्नये**) अग्नि के समान पवित्र के लिये (**दिवः**) कामना की (**नवम्**) नवीन (**स्तोमम्**) प्रशंसा को मैं (**नु**) शीघ्र (**जीजनम्**) प्रकट करूं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो अतिथि लोग श्येन पक्षी के तुल्य शीघ्र चलने वाले, पाखण्ड के नाशक, द्रव्य और विद्या के उपदेशक संन्यासधर्म युक्त हों, उनका गृहस्थ

सत्कार करें॥४॥

कस्य धनं प्रशंसनीयं भवेदित्याह॥

किसका धन प्रशंसनीय होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्पार्हा यस्य श्रियो दृशे रयिर्वीरवतो यथा। अग्रे यज्ञस्य शोचतः॥५॥१८॥

स्पार्हाः। यस्य। श्रियः। दृशे। रयिः। वीरऽवतः। यथा। अग्रे। यज्ञस्य। शोचतः॥५॥

पदार्थः-(**स्पार्हाः**) स्पृहणीयाः (**यस्य**) (**श्रियः**) (**दृशे**) द्रष्टुम् (**रयिः**) धनम् (**वीरवतः**) वीरा विद्यन्ते यस्य तस्य (**यथा**) (**अग्रे**) (**यज्ञस्य**) सङ्गन्तव्यस्य व्यवहारस्य (**शोचतः**) पवित्रस्य॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य वीरवतस्स्पार्हाः श्रियो दृशे योग्याः स यथाऽग्रे शोचतो यज्ञस्य साधको रयिरस्ति तथा सत्क्रियासिद्धिकरः स्यात्॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। तस्यैव धनं सफलं येन न्यायेनोपार्जितं धर्म्ये व्यवहारे व्ययितं स्यात्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**यस्य**) जिस (**वीरवतः**) वीरों वाले के (**स्पार्हाः**) चाहना करने योग्य (**श्रियः**) लक्ष्मी शोभाएं (**दृशे**) देखने को योग्य हों वह (**यथा**) जैसे (**अग्रे**) पहिले (**शोचतः**) पवित्र (**यज्ञस्य**) सङ्ग के योग्य व्यवहार का साधक (**रयिः**) धन है, वैसे सत्क्रिया का सिद्ध करने वाला हो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। उसी का धन सफल है, जिसने न्याय से उपार्जन किया धन धर्मयुक्त व्यवहार में व्यय किया होवे॥५॥

पुनः सोऽग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सेमां वेतु वषट्कृतिमग्निर्जुषत नो गिरः। यजिष्ठो हव्यवाहनः॥६॥

सः। इमाम्। वेतु। वषट्ऽकृतिम्। अग्निः। जुषत। नः। गिरः। यजिष्ठः। हव्यऽवाहनः॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**इमाम्**) (**वेतु**) प्राप्नोतु (**वषट्कृतिम्**) सत्क्रियाम् (**अग्निः**) पावकः (**जुषत**) सेवध्वम् (**नः**) अस्माकम् (**गिरः**) वाचः (**यजिष्ठः**) अतिशयेन यष्टा (**हव्यवाहनः**) यो हव्यानि दातुमर्हाणि वहति प्राप्नोति सः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! स यजिष्ठो हव्यवाहनोऽग्निर्न इमां वषट्कृतिं गिरश्च वेतु तं यूयं जुषत॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽग्निः सम्प्रयोजितः सन्नस्माकं क्रियाः सेवते स युष्माभिस्सेवनीयः॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**सः**) वह (**यजिष्ठः**) अत्यन्त यज्ञकर्त्ता (**हव्यवाहनः**) देने योग्य पदार्थों को प्राप्त होने वाला (**अग्निः**) पावक अग्नि (**नः**) हमारी (**इमाम्**) इस (**वषट्कृतिम्**) शुद्ध क्रिया को और (**गिरः**) वाणियों को (**वेतु**) प्राप्त हो उसको तुम लोग (**जुषत**) सेवन करो॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अग्नि सम्यक् प्रयुक्त किया हुआ हमारी क्रियाओं का सेवन करता वह तुम लोगों को सेवने योग्य है॥६॥

पुनः स राजा प्रजाजनाश्च परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नि त्वा नक्ष्य विश्पते द्युमन्तं देव धीमहि। सुवीरमग्न आहुत॥७॥

नि। त्वा। नक्ष्य। विश्पते। द्युऽमन्तम्। देव। धीमहि। सुऽवीरम्। अग्ने। आऽहुत॥७॥

पदार्थः-(**नि**) नितराम् (**त्वा**) त्वाम् (**नक्ष्य**) नक्ष्येषु व्याप्तेषु साधो (**विश्पते**) प्रजापालक (**द्युमन्तम्**) दीप्तिमन्तम् (**देव**) विद्वन् (**धीमहि**) दधीमहि (**सुवीरम्**) शोभना वीरा यस्मात्तम् (**अग्ने**) पावक इव विद्वन् (**आहुत**) बहुभिः सत्कृत॥७॥

अन्वयः-हे नक्ष्याहुत विश्पते देवाऽग्ने! यं द्युमन्तं सुवीरमग्निं त्वा यथा निधीमहि तथा त्वमस्मानानन्दे नि धेहि॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा वयं भवन्तं न्यायेन राज्यपालनाख्ये व्यवहारे सदा प्रतिष्ठापयेम तथा त्वमस्मान् सदा धर्म्ये व्यवहारे प्रतिष्ठापय॥७॥

पदार्थः-हे (**नक्ष्य**) व्याप्त वस्तुओं को उत्तम प्रकार जानने वाले (**आहुत**) बहुतों से सत्कार को प्राप्त (**विश्पते**) प्रजारक्षक (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य तेजस्वि (**देव**) विद्वन्! जिस (**द्युमन्तम्**) प्रकाश वाले (**सुवीरम्**) उत्तम वीर हों जिससे उस अग्नि के तुल्य शुद्ध (**त्वा**) आपको जैसे (**नि, धीमहि**) निरन्तर ध्यान करें, वैसे आप हमको निरन्तर आनन्द में स्थिर कीजिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे हम लोग आपको न्याय से राज्य पालनरूप व्यवहार में सदा स्थित करें, वैसे आप हमको धर्मयुक्त व्यवहार में प्रतिष्ठित कीजिये॥७॥

पुना राजप्रजाजनाः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

क्षप उस्रश्च दीदिहि स्वग्नयस्त्वया वयम्। सुवीरस्त्वमस्मयुः॥८॥

क्षपः। उस्रः। च। दीदिहि। सुऽअग्नयः। त्वया। वयम्। सुवीरः। त्वम्। अस्मऽयुः॥८॥

पदार्थः-(**क्षपः**) रात्रीः (**उस्रः**) किरणयुक्तानि दिनानि। **उस्रा इति रश्मिनाम।** (निघं०१.५) (**च**) (**दीदिहि**) प्रकाशय (**स्वग्नयः**) शोभना अग्नयो येषान्ते (**त्वया**) रक्षकेण राज्ञा (**वयम्**) (**सुवीरः**) शोभना वीरा यस्य सः (**त्वम्**) (**अस्मयुः**) अस्मान् कामयमानः॥८॥

अन्वयः-हे राजन्नस्मयुः सुवीरस्त्वं क्षप उस्रश्चास्मान् दीदिहि त्वया सह स्वग्नयो वयं त्वामहर्निशं प्रकाशेम॥८॥

भावार्थः-हे राजराजजना! यथाऽहर्निशं सूर्यः प्रकाशते तथा यूयं प्रकाशिता भवत॥८॥

पदार्थः-हे राजन्! (**अस्मयुः**) हमको चाहने वाले (**सुवीरः**) सुन्दर वीर पुरुषों से युक्त (**त्वम्**) आप (**क्षपः**) रात्रियों (**च**) और (**उस्रः**) किरणयुक्त दिनों में (**अस्मान्**) हम को (**दीदिहि**) प्रकाशित कीजिये (**त्वया**) आप के साथ (**स्वग्नयः**) सुन्दर अग्नियों वाले (**वयम्**) हम लोग प्रतिदिन प्रकाशित हों॥८॥

भावार्थः-हे राजा और राजपुरुषो! जैसे प्रतिदिन सूर्य प्रकाशित होता है, वैसे तुम लोग सदा प्रकाशित होओ॥८॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्वन्तीत्याह॥

फिर विद्वान् क्या करते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उप॑ त्वा सा॒तये॒ नरो॒ विप्रा॑सो यन्ति धी॒तिभिः॑। उपाक्ष॑रा सह॒स्रिणी॑॥९॥

उप॑। त्वा॒। सा॒तये॑। नरः॑। विप्रा॑सः। य॒न्ति॒। धी॒तिऽभिः॑। उप॑। अक्ष॑रा। स॒ह॒स्रिणी॑॥९॥

पदार्थः-(**उप**) (**त्वा**) त्वाम् (**सातये**) संविभागाय (**नरः**) मनुष्याः (**विप्रासः**) मेधाविनः (**यन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**धीतिभिः**) अङ्गुलिभिः (**उप**) (**अक्षरा**) अक्षराण्यकारादीनि (**सहस्रिणी**) सहस्राण्यसंख्याता विद्याविषया विद्यन्ते यस्यां सा॥९॥

अन्वयः-हे विद्यार्थिनि! यथा विप्रासो नरो धीतिभिरक्षराण्युप यन्ति ते या सहस्रिणी वर्त्तते ताञ्जानन्तु तथा त्वा सातये विप्रासो नर उप यन्ति॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽङ्गुष्ठाऽङ्गुलीभिरक्षराणि विज्ञाय विद्वान् भवति तथैव विद्वांस शोधनेन विद्यारहस्यानि प्राप्नुवन्ति॥९॥

पदार्थः-हे विद्यार्थिनि! जैसे (**विप्रासः**) बुद्धिमान् (**नरः**) मनुष्य (**धीतिभिः**) अंगुलियों से (**अक्षरा**) अकारादि अक्षरों को (**उप, यन्ति**) उपाय से प्राप्त करते वे जो कन्या (**सहस्रिणी**) असंख्य विद्याविषयों को जानने वाली हैं उसको जानें, वैसे (**त्वा**) आप के (**सातये**) सम्यक् विभाग के लिये बुद्धिमान् मनुष्य (**उप**) समीप प्राप्त हों॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अंगूठा और अंगुलियों से अक्षरों को जान कर विद्वान् होता है, वैसे ही विद्वान् लोग शोधन कर विद्या के रहस्यों को प्राप्त हों॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒ग्नी रक्षां॑सि सेधति शु॒क्रशो॑चि॒रम॑र्त्यः। शुचिः॑ पाव॒क ईड्यः॑॥१०॥१९॥

अ॒ग्निः। रक्षां॑सि। से॒ध॒ति॒। शु॒क्रऽशो॑चिः। अम॑र्त्यः। शुचिः॑। पा॒व॒कः। ईड्यः॑॥१०॥

पदार्थः-(**अग्निः**) अग्निरिव राजा सेनेशो वा (**रक्षांसि**) रक्षयितव्यानि (**सेधति**) साधयति (**शुक्रशोचिः**) शुद्धतेजस्कः (**अमर्त्यः**) मर्त्यधर्मरहितः (**शुचिः**) पवित्रः (**पावकः**) शोधकः पवित्रकर्त्ता (**ईड्यः**) स्तोतुमन्वेष्टुं वा योग्यः॥१०॥

अन्वयः-यः शुक्रशोचिरमर्त्यः शुचिः पावक ईड्योऽग्निरिव रक्षांसि सेधति स कीर्त्तिमान् भवति॥१०॥

भावार्थः-यथा राजाऽन्यायं निवार्य्य न्यायं प्रकाशयति तथैव विद्युद्दारिद्र्यं विनाशय लक्ष्मीं जनयति॥१०॥

पदार्थः-जो (**शुक्रशोचिः**) शुद्ध तेजस्वी (**अमर्त्यः**) साधारण मनुष्यपन से रहित (**शुचिः**)

पवित्र **(पावकः)** शुद्ध पवित्र करने वाला **(ईड्यः)** स्तुति करने वा खोजने चाहने योग्य **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य राजा वा सेनाधीश **(रक्षांसि)** रक्षा करने योग्य कार्यों को **(सेधति)** सिद्ध करे वह कीर्ति वाला होता है॥१०॥

भावार्थः-जैसे राजा अन्याय का निवारण कर न्याय का प्रकाश करता है, वैसे विद्युत् दरिद्रता का विनाश कर लक्ष्मी को प्रकट करता है॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स नो राधांस्या भरेशानः सहसो यहो। भगश्च दातु वार्यम्॥११॥

सः। नः। राधांसि। आ। भर। ईशानः। सहसः। यहो इति। भगः। च। दातु। वार्यम्॥११॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**राधांसि**) समृद्धिकराणि धनानि (**आ**) (**भर**) (**ईशानः**) ईषणशीलः समर्थः (**सहसः**) बलिष्ठस्य (**यहो**) अपत्य (**भगः**) ऐश्वर्यवानैश्वर्यं वा (**च**) (**दातु**) ददातु (**वार्यम्**) वरणीयम्॥११॥

अन्वयः-हे सहसो यहो राजन्नग्निरिवेशानो भगो यस्त्वं नो राधांस्याभर। वार्य्यं भगश्च स भवान् दातु॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निविद्यया धनधान्यैश्वर्यं मनुष्याः प्राप्नुवन्ति तथैवोत्तमराजप्रबन्धेन जना धनाढ्याः सुखिनश्च जायन्ते॥११॥

पदार्थः-हे (**सहसः**) अति बलवान् के (**यहो**) पुत्र राजन्! अग्नि के तुल्य तेजस्वी (**ईशानः**) समर्थ (**भगः**) ऐश्वर्यवान् जो आप (**नः**) हमारे लिये (**राधांसि**) सुख बढ़ाने वाले धनों को (**आ, भर**) अच्छे प्रकार धारण वा पोषण करें तथा (**वार्यम्**) स्वीकार करने योग्य ऐश्वर्य को (**च**) भी (**सः**) सो आप (**दातु**) दीजिये॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्निविद्या से धनधान्य सम्बन्धी ऐश्वर्य को मनुष्य प्राप्त होते हैं, वैसे ही उत्तम राज्य प्रबन्ध से मनुष्य धनाढ्य और सुखी होते हैं॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वमग्ने वीरवद्यशो देवश्च सविता भगः। दितिश्च दाति वार्यम्॥१२॥

त्वम्। अग्ने। वीरऽवत्। यशः। देवः। च। सविता। भगः। दितिः। च। दाति। वार्यम्॥१२॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) अग्निरिव राजन् (**वीरवत्**) प्रशस्ता वीरा विद्यन्ते यस्मिंस्तत् (**यशः**) धनं कीर्तिं च (**देवः**) दाता देदीप्यमानः (**च**) (**सविता**) प्रेरकः सूर्यो वा (**भगः**) धनैश्वर्यम् (**दितिः**) दुःखनाशिका नीतिः (**च**) (**दाति**) ददाति (**वार्यम्**) वरणीयम्॥१२॥

अन्वयः-हे अग्ने राजन्! यथा देवः सविता दितिश्च वार्यं वीरवद्यशो भगश्च दाति तदेतत्त्वं देहि॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा सुसम्प्रयुक्ताऽग्न्यादिवत्प्रजास्वैश्वर्यमुद्योगेन सुनीत्या च कारयित्वा दुःखं खण्डयति स एव यशस्वी भवति॥१२॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वि राजन्! जैसे **(देवः)** दानशील वा प्रकाशमान **(सविता)** प्रेरणा करने वाला वा सूर्य और **(दितिः)** दुःखनाशक नीति **(च)** भी **(वार्यम्)** स्वीकार के योग्य **(वीरवत्)** जिससे उत्तम वीर पुरुष हों **(यशः)** उस धन वा कीर्ति **(च)** और **(भगः)** ऐश्वर्य को **(दाति)** देती है, इसको **(त्वम्)** आप दीजिये॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा अच्छे प्रकार सम्प्रयुक्त अग्नि आदि के तुल्य प्रजाओं में उद्योग से और अच्छी नीति से ऐश्वर्य कराके दुःख को खण्डित करता है, वही यशस्वी होता है॥१२॥

पुनः स राजा किंवत्किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा किसके समान क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहतेहैं॥

अग्ने रक्षा णो अंहसः प्रति ष्म देव रीषतः। तपिष्ठैरजरो दह॥१३॥

अग्ने। रक्ष। नः। अंहसः। प्रति। स्म। देव। रिषतः। तपिष्ठैः। अजरः। दह॥१३॥

पदार्थः-**(अग्ने)** पावक इव **(रक्षा)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(अंहसः)** पापाचरणात् **(प्रति)** **(स्म)** एव **(देव)** दिव्यगुणकर्मस्वभावयुक्त **(रीषतः)** हिंसकात् **(तपिष्ठैः)** अतिशयेन प्रतापकैः **(अजरः)** जरारहितः **(दह)** भस्मसात्कुरु॥१३॥

अन्वयः-हे देवाऽग्ने राजन्! यथाऽग्निस्तपिष्ठैः काष्ठादिकं दहति तथैवाऽजरः सँस्त्वं रीषतो नो रक्ष। अंहसः स्म प्रति रक्ष दुष्टाचाराँस्तपिष्ठैर्दह॥१३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाग्निः शीतादन्धकाराच्च रक्षति तथा राजादयो विद्वांसो हिंसादिपापाचरणात् सर्वान् पृथग्रक्षन्ति॥१३॥

पदार्थः-हे **(देव)** उत्तम गुण-कर्म-स्वभावयुक्त **(अग्ने)** अग्निवत् तेजस्वी राजन्! जैसे अग्नि **(तपिष्ठैः)** अत्यन्त तपाने वाले तेजों से काष्ठादि को जलाता है, वैसे **(अजरः)** वृद्धपन वा शिथिलता रहित हुए आप **(रीषतः)** हिंसक से **(नः)** हमारी **(रक्ष)** रक्षा कीजिये और **(अंहसः)** पापाचरण से **(स्म)** ही **(प्रति)** प्रतीति के साथ रक्षा कीजिये और दुष्टचारियों को तेजों से **(दह)** जलाइये॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि शीत और अन्धकार से रक्षा करता है, वैसे राजा आदि विद्वान् हिंसादि पापरूप आचरण से सब को पृथक् रखते हैं॥१३॥

पुना राजानौ प्रजाः प्रति किं कुर्यातामित्याह॥

फिर राजा और राणी प्रजा के प्रति क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अधा मही न आयस्यनाधृष्टो नृपीतये। पूर्भवा शतभुजिः॥१४॥

अध। मही। नः। आयसी। अनाधृष्टः। नृऽपीतये। पूः। भव। शतऽभुजिः॥१४॥

पदार्थः-(**अधा**) अध अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**मही**) महती वागेव राज्ञी (**नः**) अस्मान् स्त्रीजनान् (**आयसी**) अयोमयी दृढा (**अनाधृष्टः**) केनाऽप्याधर्षयितुमयोग्या (**नृपीतये**) नृणां पालनाय (**पूः**) नगरीव रक्षिका (**भवा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङः** इति दीर्घः। (**शतभुजिः**) शतमसंख्याता भुजयः पालनानि यस्याः सा॥१४॥

अन्वयः-हे राज्ञि! यथा तवाऽनाधृष्टः पती राजा न्यायेन नॄन्पालयति तथाऽधाऽऽयसी पूरिव मही शतभुजिस्त्वं नृपीतये नो रक्षिका भव॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यत्र शुभगुणकर्मस्वभावो राजा नृणां तादृशी राज्ञी च स्त्रीणां न्यायपालने कुर्यातां तत्र सर्वदा विद्यानन्दायुरैश्वर्याणि वर्धेरन्॥१४॥

पदार्थः-हे राणी! जैसे तुम्हारा (**अनाधृष्टः**) किसी से न धमकाने योग्य पति राजा न्याय से मनुष्यों का पालन करता है, वैसे (**अध**) अब (**आयसी**) लोहे से बनी दृढ (**पूः**) नगरी के समान रक्षक (**मही**) महती वाणी के तुल्य (**शतभुजिः**) असंख्यात जीवों का पालन करने वाली आप (**नृपीतये**) मनुष्यों के पालन के लिये (**नः**) हम स्त्री जनों की रक्षा करने वाली (**भव**) हूजिये॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जहाँ शुभ गुणकर्मस्वभावयुक्त राजा पुरुषों और वैसे गुणों वाली राणी स्त्रियों का न्याय और पालन करें, वहाँ सब काल में विद्या, आनन्द, अवस्था और ऐश्वर्य बढ़ें॥१४॥

पुना राजानौ प्रजाः प्रति कथं वर्तेयातामित्याह॥

फिर राणी राजा, प्रजा-जनों के प्रति कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं नः पाह्यंहसो दोषावस्तरघायतः। दिवा नक्तमदाभ्य॥१५॥२०॥

त्वम्। नः। पाहि। अंहसः। दोषाऽवस्तः। अघऽयतः। दिवा। नक्तम्। अदाभ्य॥१५॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**पाहि**) (**अंहसः**) अपराधात् (**दोषावस्तः**) अहर्निशम् (**अघायतः**) आत्मनोऽघमिच्छतः सङ्गात् (**दिवा**) दिनम् (**नक्तम्**) रात्रिम् (**अदाभ्य**) अहिंसनीय॥१५॥

अन्वयः-हे अदाभ्य राजन्! त्वं दोषावस्तरघायतो दिवानक्तमंहसश्च नः पाहि॥१५॥

भावार्थः-यथा राजा पुरुषान् सततं रक्षेत्तथा राज्ञी प्रजास्थानारीर्नित्यं पालयेदिति॥१५॥

अत्राऽग्निदृष्टान्तेन राजराज्ञिकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चदशं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अदाभ्य**) रक्षा करने योग्य राजन्! (**त्वम्**) आप (**दोषावस्तः**) दिन-रात (**अघायतः**) अपने को पाप चाहते हुए दुष्ट के सङ्ग से और (**दिवानक्तम्**) रात्रि दिन सब समय में

(अंहसः) अपराध से **(नः)** हमको आप **(पाहि)** रक्षित कीजिये, बचाइये॥१५॥

भावार्थः-जैसे राजा पुरुषों की निरन्तर रक्षा करे, वैसे राणी प्रजा की स्त्रियों की नित्य रक्षा करे॥१५॥

इस सूक्त में अग्नि के दृष्टान्त से राजा और रानी के कृत्यों का वर्णन करने से इस सूक्त की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह पन्द्रहवां सूक्त और बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ द्वादशर्चस्य षोडशस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १ स्वराडनुष्टुप्। ५ निचृदनुष्टुप्। ७ अनुष्टुप्। ११ भुरिगनुष्टुप्छन्दः। गान्धारः स्वरः। २ भुरिग्बृहती। ३ निचृद्बृहती। ४, ९, १० बृहतीछन्दः। मध्यमः स्वरः। ६, ८, १२ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ राजा प्रजासुखाय किं किं कुर्य्यादित्याह॥

अब राजा प्रजा के सुख के लिये क्या क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एना वो अग्निं नमसोर्जो नपातमा हुवे।
प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम्॥ १॥

एना। वः। अग्निम्। नमसा। ऊर्जः। नपातम्। आ। हुवे। प्रियम्। चेतिष्ठम्। अरतिम्। सुऽअध्वरम्। विश्वस्य। दूतम्। अमृतम्॥ १॥

पदार्थः-(**एना**) एनेन (**वः**) युष्मान् (**अग्निम्**) (**नमसा**) अन्नेन सत्कारादिना वा (**ऊर्जः**) पराक्रमस्य (**नपातम्**) अविनाशम् (**आ**) (**हुवे**) आदद्मि (**प्रियम्**) कमनीयं प्रीतम् (**चेतिष्ठम्**) अतिशयेन संज्ञापकम् (**अरतिम्**) सुखप्रापकम् (**स्वध्वरम्**) शोभना अध्वरा अहिंसादयो व्यवहारा यस्य तम् (**विश्वस्य**) संसारस्य (**दूतम्**) बहुकार्यसाधकम् (**अमृतम्**) स्वस्वरूपेण नाशरहितम्॥ १॥

अन्वयः-हे प्रजाजना! यथाऽहं राजा व एना नमसोर्जो नपातं प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरममृतं विश्वस्य दूतमग्निमिवोपदेशकमाहुवे तथा यूयमप्येतमाह्वयत॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा राजा सत्योपदेशकान् प्रचारयेत्तथोपदेष्टारः स्वकृत्यं प्रीत्या यथावत्कुर्य्युः॥ १॥

पदार्थः-हे प्रजाजनो! जैसे मैं राजा (**एना**) इस (**नमसा**) अन्न वा सत्कारादि से (**ऊर्जः**) पराक्रम के (**नपातम्**) विनाश को प्राप्त न होने वाले (**प्रियम्**) चाहने योग्य (**चेतिष्ठम्**) अतिशय कर सम्यक् ज्ञापक (**अरतिम्**) सुख प्रापक (**स्वध्वरम्**) सुन्दर अहिंसादि व्यवहार वाले (**अमृतम्**) अपने स्वरूप से नाशरहित (**विश्वस्य**) संसार के (**दूतम्**) बहुत कार्य्यों के साधक (**अग्निम्**) अग्नि के तुल्य तेजस्वी उपदेशक को (**आहुवे**) स्वीकार करता, वैसे तुम भी उसको स्वीकार करो॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे राजा सत्योपदेशकों का प्रचार करे, वैसे उपदेशक अपने कर्त्तव्य को प्रीति से यथावत् पूरा करें॥ १॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स योजते अरुषा विश्वभोजसा स दुद्रवत् स्वाहुतः।
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवं राधो जनानाम्॥ २॥

सः। योजते। अरुषा। विश्वऽभोजसा। सः। दुद्रवत्। सुऽआहुतः। सुऽब्रह्मा। यज्ञः। सुऽशमी। वसूनाम्। देवम्। राधः। जनानाम्॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) (**योजते**) (**अरुषा**) अश्वाविव जलाऽग्नी (**विश्वभोजसा**) विश्वस्य पालकौ (**सः**) (**द्रुद्रवत्**) भृशं गच्छेत् (**स्वाहुतः**) सुष्ठुकृताह्वानः (**सुब्रह्मा**) शोभनानि ब्रह्माणि धनाऽन्नानि यस्य यद्वा सुष्ठु चतुर्वेदवित् (**यज्ञः**) पूजनीयः (**सुशमी**) शोभनकर्मा (**वसूनाम्**) धनानाम् (**देवम्**) दिव्यस्वरूपम् (**राधः**) धनम् (**जनानाम्**) मनुष्याणाम्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यदि स्वाहुतः स सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां राधो जनानां देवं विश्वभोजसा अरुषा योजयन् द्रुद्रवत् सन् योजते स सिद्धेच्छो जायते॥२॥

भावार्थः-यो राजा प्रजापालनाय सदा सुस्थिरस्तं ये दुःखनिवारणायाह्वयेयुस्तान् सद्यः प्राप्य सुखिनः करोत्युत्तमाचरणो विद्वान् सन्प्रजाहितं प्रतिक्षणं चिकीर्षति स एव सर्वैः पूजनीयो भवति॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो यदि (**सः**) वह (**स्वाहुतः**) सुन्दर प्रकार आह्वान किया हुआ (**सः**) वह (**सुब्रह्मा**) सुन्दर अन्न वा धनों से युक्त वा अच्छे प्रकार चारों वेद का ज्ञाता (**यज्ञः**) सत्कार के योग्य (**सुशमी**) सुन्दर कर्मों वाला (**वसूनाम्**) धनों का (**राधः**) धन (**जनानाम्**) मनुष्यों के बीच (**देवम्**) उत्तम (**विश्वभोजसा**) विश्व के रक्षक (**अरुषा**) घोड़ों के तुल्य जल-अग्नि को युक्त करता और (**द्रुद्रवत्**) शीघ्र प्राप्त होता हुआ (**योजते**) युक्त करता है, वह इच्छा सिद्धि वाला होता है॥२॥

भावार्थः-जो राजा प्रजापालन के अर्थ सदा सुस्थिर है उसको जो दुःख निवारण के लिये बुलावें उनको शीघ्र प्राप्त होकर सुखी करता है, उत्तम आचरणों वाला विद्वान् होता हुआ प्रतिक्षण प्रजा के हित की इच्छा करता है, वही सब को पूजनीय होता है॥२॥

पुनः सोऽग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उदस्य शोचिरस्थादाजुह्वानस्य मीळ्हुषः।
उद्धूमासो अरुषासो दिविस्पृशः समग्निमिन्धते नरः॥३॥

उत्। अस्य। शोचिः। अस्थात्। आऽजुह्वानस्य। मीळ्हुषः। उत्। धूमासः। अरुषासः। दिविऽस्पृशः। सम्। अग्निम्। इन्धते। नरः॥३॥

पदार्थः-(**उत्**) (**अस्य**) अग्नेः (**शोचिः**) दीप्तिः (**अस्थात्**) उत्तिष्ठते (**आजुह्वानस्य**) समन्तात् प्राप्तहुतद्रव्यस्य (**मीळ्हुषः**) सेचकस्य (**उत्**) (**धूमासः**) (**उरुषासः**) ज्वालाः (**दिविस्पृशः**) ये दिवि स्पृशन्ति (**सम्**) (**अग्निम्**) (**इन्धते**) (**नरः**) मनुष्याः॥३॥

अन्वयः-ये नरो यस्याऽऽजुह्वानस्य मीळ्हुषोऽस्याग्नेः शोचिरुदस्थाद्दिविस्पृशो धूमासोऽरुषास उत्तिष्ठन्ते तमग्निं समिन्धिते त उन्नतिं प्राप्नुवन्ति॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयमूर्ध्वगामिनं धूमध्वजं तेजोमयं वृष्ट्यादिना प्रजापालकमग्निं सम्प्रयुङ्ध्वं येन युष्माकं कामसिद्धिः स्यात्॥३॥

पदार्थः-जो (**नरः**) मनुष्य जिस (**आजुह्वानस्य**) अच्छे प्रकार होम किये द्रव्य को प्राप्त (**मीळ्हुषः**) सेचक (**अस्य**) इस अग्नि का (**शोचिः**) दीप्ति (**उदस्थात्**) उठती है (**दिविस्पृशः**) प्रकाश

में स्पर्श करने वाले **(धूमासः)** धूम और **(अरुषासः)** अरुणवर्ण लपटें **(उत्)** उठती हैं उस **(अग्निम्)** अग्नि को **(समिन्धते)** सम्यक् प्रकाशित करते हैं, वे उन्नति को प्राप्त होते हैं॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम लोग ऊर्ध्वगामी धूमध्वजा वाले तेजोमय वृष्टि आदि से प्रजा के रक्षक अग्नि को सम्यक् प्रयुक्त करो, जिस से तुम्हारे कार्यों की सिद्धि होवे॥३॥

पुना राजादयो मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजादि मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तं त्वा दूतं कृण्महे यशस्तमं देवाँ आ वीतये वह।
विश्वा सूनो सहसो मर्तभोजना रास्व तद्यत्त्वेमहे॥४॥

तम्। त्वा। दूतम्। कृण्महे। यशःऽतमम्। देवान्। आ। वीतये। वह। विश्वा। सूनो इति। सहसः। मर्तऽभोजना। रास्व। तत्। यत्। त्वा। ईमहे॥४॥

पदार्थः-**(तम्)** **(त्वा)** त्वाम् **(दूतम्)** **(कृण्महे)** **(यशस्तमम्)** अतिशयेन कीर्तिकारकम् **(देवान्)** दिव्यगुणान् पदार्थान् वा **(आ)** **(वीतये)** विज्ञानादिप्राप्तये **(वह)** प्राप्नुहि प्रापय वा **(विश्वा)** सर्वाणि **(सूनो)** अपत्य **(सहसः)** बलवतः **(मर्त्तभोजना)** मर्त्तानां मनुष्याणां भोजनानि पालनानि **(रास्व)** देहि **(तत्)** तम् **(यत्)** यम् **(त्वा)** त्वाम् **(ईमहे)** याचामहे॥४॥

अन्वयः-हे सहसस्सूनो विद्वन्! यथा वयं यशस्तमं तमग्निं दूतं कृण्महे तथा त्वा मुख्यं कृण्महे त्वं वीतये देवाना वह विश्वा मर्त्तभोजना रास्व यथा यद्यमग्निं कार्यसिद्धये प्रयुञ्जमहे तथा तत्तं त्वेमहे॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सर्वकार्य्यसाधकं विद्युदग्निं दूतं राजकार्य्यसाधकं विद्याविनयान्वितं पुरुषं राजानं च कुर्वन्ति ते समग्रमैश्वर्यं पालनं च लभन्ते॥४॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** पुत्र विद्वन्! जैसे हम लोग **(यशस्तमम्)** अतिशय कीर्ति करने वाले **(तम्)** उस अग्नि को **(दूतम्)** दूत **(कृण्महे)** करते, वैसे **(त्वा)** आपको मुख्य करते हैं आप **(वीतये)** विज्ञानादि को प्राप्ति करने के लिये **(देवान्)** दिव्य गुणों वा पदार्थों को **(आ, वह)** अच्छे प्रकार प्राप्त हूजिये वा कीजिये **(विश्वा)** सब **(मर्त्तभोजना)** मनुष्यों के भोजनों वा पालनों को **(रास्व)** दीजिये जैसे **(यत्)** जिस अग्नि को कार्यसिद्धि के लिये प्रयुक्त करते, वैसे **(तत्)** उसको और **(त्वा)** आपको **(ईमहे)** याचना करते हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सब कार्यों के साधक विद्युत् अग्नि के दूत और राजकार्यों के साधक विद्या वा विनय से युक्त पुरुष को राजा करते हैं, वे सब ऐश्वर्य और पालन को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्यः कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर मनुष्य कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वमग्ने गृहपतिस्त्वं होता नो अध्वरे।

त्वं पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि वेषि च वार्यम्॥५॥

त्वम्। अग्ने। गृहऽपतिः। त्वम्। होता। नः। अध्वरे। त्वम्। पोता। विश्वऽवार। प्रऽचेताः। यक्षि। वेषि। च। वार्यम्॥५॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) वह्निरिव प्रकाशमान (**गृहपतिः**) गृहस्य पालकः (**त्वम्**) (**होता**) दाता (**नः**) अस्माकम् (**अध्वरे**) अहिंसादिलक्षणे धर्माचरणे (**त्वम्**) (**पोता**) पवित्रकर्त्ता (**विश्ववार**) सर्वैर्वरणीय (**प्रचेताः**) प्रकर्षेण प्रज्ञापकः (**यक्षि**) यजसि सङ्गच्छसे (**वेषि**) व्याप्नोषि (**च**) (**वार्यम्**) वरणीयं धर्म्यं व्यवहारम्॥५॥

अन्वयः-हे विश्ववाराग्ने यो वह्निरिव गृहपतिस्त्वं नोऽध्वरे होता त्वं प्रचेता वार्य्यं यक्षि वेषि च तं त्वां वयमीमहे॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। पूर्वस्मान् मन्त्रात् (ईमहे) इति पदमनुवर्त्तते। यथाऽग्निर्गृहपालकः सुखदाताऽध्वरे पवित्रकर्त्ता शरीरे चेतयिता सर्वं विश्वं सङ्गच्छते व्याप्नोति च तथैव मनुष्या भवन्तु॥५॥

पदार्थः-हे (**विश्ववार**) सब को स्वीकार करने योग्य (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य प्रकाशमान (**गृहपतिः**) घर के रक्षक! (**त्वम्**) आप (**नः**) हमारे (**अध्वरे**) अहिंसादि लक्षणयुक्त धर्म के आचरण में (**होता**) दाता (**त्वम्**) (**पोता**) पवित्रकर्त्ता (**त्वम्**) आप (**प्रचेताः**) अच्छे प्रकार जताने वाले आप (**वार्य्यम्**) स्वीकार योग्य धर्मयुक्त व्यवहार को (**यक्षि**) सङ्गत करते (**च**) और (**वेषि**) व्याप्त होते हैं, उन आपकी हम लोग याचना करते हैं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। पूर्व मन्त्र से यहाँ (ईमहे) पद की अनुवृत्ति आती है। जैसे अग्नि घर का पालक, सुखदाता, यज्ञ में पवित्रकर्त्ता, शरीर में चेतनता कराने वाला, सब विश्व का संग करता और व्याप्त होता है, वैसे ही मनुष्य होवें॥५॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कृधि रत्नं यजमानाय सुक्रतो त्वं हि रत्नधा असि।
आ न ऋते शिशीहि विश्वमृत्विजं सुशंसो यश्च दक्षते॥६॥२१॥

कृधि। रत्नम्। यजमानाय। सुक्रतो इति सुऽक्रतो। त्वम्। हि। रत्नऽधाः। असि। आ। नः। ऋते। शिशीहि। विश्वम्। ऋत्विजम्। सुऽशंसः। यः। च। दक्षते॥६॥

पदार्थः-(**कृधि**) कुरु (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**यजमानाय**) परोपकारार्थं यज्ञं कुर्वते (**सुक्रतो**) उत्तमप्रज्ञ धर्म्यकर्मकर्त्तः (**त्वम्**) (**हि**) यतः (**रत्नधाः**) यो रत्नानि धनानि दधाति सः (**असि**) (**आ**) (**नः**) अस्मान् (**ऋते**) सत्यभाषणादिरूपे सङ्गन्तव्ये व्यवहारे (**शिशीहि**) तीव्रोद्योगिनः कुरु (**विश्वम्**) समग्रम् (**ऋत्विजम्**) य ऋतूनर्हति तम् (**सुशंसः**) सुष्ठुप्रशंसः (**यः**) (**च**) (**दक्षते**) वर्धते॥६॥

अन्वयः-हे सुक्रतो! यः सुशंसो दक्षते तं विश्वमृत्विजं नोऽस्मांश्चर्ते त्वमा शिशीहि। हि यतस्त्वं रत्नधा असि तस्माद्यजमानाय रत्नं कृधि॥६॥

भावार्थः-अस्मिन् संसारे यो धनाढ्यः स्यात्स प्रीत्या निर्धनानुद्योगं कारयित्वा सततं पालयेत्। ये सत्क्रियायां वर्धन्ते तान् धन्यवादेन धनादिदानेन च प्रोत्साहयेत्॥६॥

पदार्थः-हे **(सुक्रतो)** उत्तम बुद्धि वा धर्मयुक्त कर्म करने वाले पुरुष! **(यः)** जो **(सुशंसः)** सुन्दर प्रशंसायुक्त जन **(दक्षते)** वृद्धि को प्राप्त होता उस **(विश्वम्)** सब **(ऋत्विजम्)** ऋतुओं के योग्य काम करने वाले को **(च)** और **(नः)** हमको **(ऋते)** सत्यभाषणादि रूप संगत करने योग्य व्यवहार में **(त्वम्)** आप **(आ, शिशीहि)** तीव्र उद्योगी कीजिये **(हि)** जिस कारण आप **(रत्नधाः)** उत्तम धनों के धारणकर्त्ता **(असि)** हैं इस कारण **(यजमानाय)** परोपकरार्थ यज्ञ करते हुए के लिये **(रत्नम्)** रमणीय धन को प्रकट **(कृधि)** कीजिये॥६॥

भावार्थः-इस संसार में जो पुरुष धनाढ्य हो वह निर्धनों को उद्योग कराके निरन्तर पालन करे। जो सत् श्रेष्ठ कर्मों में बढ़ते उन्नत होते हैं उन को धन्यवाद और धनादि पदार्थों के दान से उत्साहयुक्त करे॥६॥

पुनः स राजा कान् सत्कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा किन का सत्कार करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वे अ॑ग्ने स्वाहुत प्रि॒यास॑ः सन्तु सू॒रय॑ः।

य॒न्तारो॒ ये म॒घवा॑नो॒ जना॑नामू॒र्वान् दय॑न्त॒ गोना॑म्॥७॥

त्वे॒ इति॑। अ॒ग्ने॒। सु॒ऽआ॒हु॒त॒। प्रि॒यास॑ः। स॒न्तु॒। सू॒रय॑ः। य॒न्तार॑ः। ये। म॒घऽवा॑नः। जना॑नाम्। ऊ॒र्वान्। दय॑न्त। गोना॑म्॥७॥

पदार्थः-**(त्वे)** त्वयि **(अग्ने)** विद्याविनयप्रकाशक **(स्वाहुत)** सुष्ठु सत्कृत **(प्रियासः)** प्रीतिमन्तः **(सन्तु)** **(सूरयः)** धार्मिका विद्वांसः **(यन्तारः)** ये यान्ति प्राप्नुवन्ति ते **(ये)** **(मघवानः)** बहुधनयुक्ताः **(जनानाम्)** मनुष्याणां मध्ये **(ऊर्वान्)** आच्छादकान् पावकान् **(दयन्त)** दयन्ते **(गोनाम्)** गवादिपशूनाम्॥७॥

अन्वयः-हे स्वाहुताग्ने अग्निवद्वर्त्तमान् राजन्! ये जनानां मध्ये गोनामूर्वान् दयन्त यन्तारो मघवानः सूरयस्त्वे प्रियासः सन्तु तांस्त्वं नित्यं सत्कुर्याः॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा राजा सर्वेषु दयां विधाय विदुषः सत्कृत्य धनाढ्यान् स्वराज्ये वासयेत्तथा प्रजाजना राजहितैषिणः स्युः॥७॥

पदार्थः-हे **(स्वाहुत)** सुन्दर प्रकार सत्कार को प्राप्त **(अग्ने)** विद्या विनय के प्रकाशक अग्नि के तुल्य तेजस्वि राजन्! **(ये)** जो **(जनानाम्)** मनुष्यों के बीच **(गोनाम्)** गौ आदि पशुओं के **(ऊर्वान्)** रक्षकों को **(दयन्त)** दया करते वा सुरक्षित रखते और **(यन्तारः)** शुभ कर्मों को प्राप्त होने वाले **(मघवानः)** बहुत प्रकार के धनों से युक्त **(सूरयः)** धर्मात्मा विद्वान् **(त्वे)** आप में **(प्रियासः)** प्रीति

करने वाले **(सन्तु)** हों उनका आप नित्य सत्कार कीजिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे राजा सब में दया का विधान कर और विद्वानों का सत्कार करके अपने राज्य में धनाढ्यों को बसावे, वैसे प्रजाजन भी राजा के हितैषी होवें॥७॥

राज्ञा के पालनीया दण्डनीयाश्च सन्तीत्याह॥

राजा को किनका पालन वा किनको दण्ड देना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

येषा॒मिळा॑ घृ॒तह॑स्ता दुरो॒ण आँ अपि॑ प्रा॒ता नि॒षीद॑ति।
ताँस्त्रा॑यस्व सहस्य द्रु॒हो नि॒दो यच्छा॑ नः॒ शर्म॑ दीर्घ॒श्रुत्॥८॥

येषा॑म्। इळा॑। घृ॒तऽह॑स्ता। दु॒रो॒णे। आ। अपि॑। प्रा॒ता। नि॒ऽसीद॑ति। तान्। त्रा॒य॒स्व॒। स॒ह॒स्य॒। द्रु॒हः। नि॒दः। यच्छ॑। नः॒। शर्म॑। दी॒र्घ॒ऽश्रु॒त्॥८॥

पदार्थः-**(येषाम्)** **(इळा)** प्रशंसनीया वाक् **(घृतहस्ता)** घृतं हस्ते गृह्यते यया सा **(दुरोणे)** गृहे **(आ)** **(अपि)** **(प्राता)** व्यापिका **(निषीदति)** **(तान्)** **(त्रायस्व)** **(सहस्य)** सहसा बलेन युक्त **(द्रुहः)** द्रोग्धीन् **(निदः)** निन्दकान् **(यच्छा)** निगृह्णीहि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नः)** अस्माकम् **(शर्म)** गृहम् **(दीर्घश्रुत्)** यो दीर्घं कालं शृणोति॥८॥

अन्वयः-हे सहस्य! येषां दुरोणे घृतहस्ता प्रातेळा आ निषीदति ताँस्त्वं त्रायस्व दीर्घश्रुत्त्वं नः शर्म यच्छ ये द्रुहो निदः सन्ति तानप्यायच्छ॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! ये सत्यवाचो वेदविदः स्युस्तेभ्यो नित्यं सुखं प्रयच्छ ये च द्रोहादिदोषयुक्ता आप्तनिन्दकाः स्युस्तान् भृशं दण्डय॥८॥

पदार्थः-हे **(सहस्य)** बल से युक्त राजन्! **(येषाम्)** जिन के **(दुरोणे)** घर में **(घृतहस्ता)** हाथ में घी लेने वाली के तुल्य **(प्राता)** व्यापक **(इळा)** प्रशंसा योग्य वाणी **(आ, निषीदति)** अच्छे प्रकार निरन्तर स्थिर होती **(तान्)** उनकी आप **(त्रायस्व)** रक्षा कीजिये **(दीर्घश्रुत्)** दीर्घ काल तक सुनने वाले आप **(नः)** हमारे **(शर्म)** घर को **(यच्छ)** ग्रहण कीजिये जो **(द्रुहः)** द्रोही **(निदः)** निन्दक हैं उनको **(अपि)** भी अच्छे प्रकार ग्रहण कीजिये॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! जो सत्यवाणी वाले, वेद ज्ञाता हों उनको नित्य सुख दीजिये और जो द्रोहादि दोषयुक्त आप्तों के निन्दक हैं, उनको शीघ्र दण्ड दीजिये॥८॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स म॒न्द्रया॑ च जि॒ह्वया॒ वह्नि॑रा॒सा वि॒दुष्ट॑रः।
अग्ने॑ र॒यिं म॒घव॑द्भ्यो न॒ आ व॑ह ह॒व्यदा॑तिं च सूदय॥९॥

सः। मन्द्रया। च। जिह्वया। वह्निः। आसा। विदुःऽतरः। अग्ने। रयिम्। मघवत्ऽभ्यः। नः। आ। वह। हव्यऽदातिम्। च। सूदय॥९॥

पदार्थः-(**सः**) (**मन्द्रया**) प्रशंसितयाऽऽनन्दप्रदया (**च**) (**जिह्वया**) सत्यभाषणयुक्तया वाचा (**वह्निः**) वोढा विद्यासुखप्रापकः (**आसा**) मुखेन (**विदुष्टरः**) अतिशयेन विद्वान् (**अग्ने**) अग्निरिव न्यायेन प्रकाशित राजन् (**रयिम्**) धनम् (**मघवद्भ्यः**) प्रशंसितधनेभ्यः (**नः**) अस्मभ्यम् (**आ**) (**वह**) समन्तात् प्रापय (**हव्यदातिम्**) होतुं दातुं गृहीतुं वा योग्यानां खण्डनम् (**च**) (**सूदय**) विनाशय॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने! यो वह्निरिव वर्त्तमानो विदुष्टरस्स एवं मन्द्रया जिह्वयाऽऽसा च मघवद्भ्यो नो रयिमा वह हव्यदातिं च सूदय॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्नि सर्वेभ्यः पृथिव्यादिभ्यस्तत्त्वेभ्यो हीरकादीनि परिपाच्य प्रयच्छति तथा राजा धनाढ्यानां सकाशान्निर्धनं श्रीमन्तं कारयित्वा सुखं प्रापयेत् सत्यया मधुरया वाचा सर्वाञ्छिक्षेत यत एतेऽयुक्ते व्यवहारे धनहानिं न कुर्य्युः॥९॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य न्याय से प्रकाशित राजन्! [**जो**] (**वह्निः**) अग्नि के तुल्य वर्त्तमान विद्या और सुख प्राप्त करने वाले (**विदुष्टरः**) अत्यन्त विद्वान् हैं (**सः**) सो आप (**मन्द्रया**) प्रशंसित आनन्द देने वाली (**जिह्वया**) सत्य भाषणयुक्त वाणी से (**च**) और (**आसा**) मुख से (**मघवद्भ्यः**) प्रशंसित धन वाले (**नः**) हम लोगों के लिये (**रयिम्**) धन को (**आ, वह**) प्राप्त कीजिये (**च**) और (**हव्यदातिम्**) होम के वा ग्रहण करने के योग्य वस्तुओं के खण्डन को (**सूदय**) नष्ट कीजिये॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि सब पृथिव्यादि तत्त्वों से हीरा आदि रत्नों को सब ओर से पका के देता है, वैसे राजा, धनाढ्यों के सम्बन्ध से निर्धन को धनवान् कराके सुख प्राप्त करे, सत्य मधुर वाणी से प्रजाजनों को शिक्षा करे, जिससे ये अयुक्त व्यवहार में धनहानि न करें॥९॥

पुनः स राजा प्रजाजनान् प्रति कथं वर्तेत इत्याह॥

फिर वह राजा प्रजाजनों के प्रति कैसे वर्त्ते, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये राधांसि दद॒त्यश्व्या॑ म॒घा कामे॑न॒ श्रव॑सो म॒हः।

ताँ अंह॑सः पिपृ॒हि प॒र्तृभि॒ष्ट्वं श॒तं पू॒र्भिर्य॑विष्ठ्य॥१०॥

ये। राधांसि। ददति। अश्व्या। मघा। कामेन। श्रवसः। महः। तान्। अंहसः। पिपृहि। पर्तृऽभिः। त्वम्। शतम्। पूःऽभिः। यविष्ठ्य॥१०॥

पदार्थः-(**ये**) (**राधांसि**) धनानि (**ददति**) (**अश्व्या**) महत्सु भवानि (**मघा**) पूजनीयानि (**कामेन**) इच्छया (**श्रवसः**) अन्नस्य (**महः**) महतः (**तान्**) (**अंहसः**) दुष्टाचारात् (**पिपृहि**) पालय (**पर्तृभिः**) पालकैः (**त्वम्**) (**शतम्**) असंख्यम् (**पूर्भिः**) नगरीभिः (**यविष्ठ्य**) येऽतिशयेन युवानस्तेषु साधो॥१०॥

अन्वयः-हे यविष्ठ्य राजन्! ये महः श्रवसः कामेन शतं मघाऽश्व्या राधांसि सर्वेभ्यो ददति तान्पर्तृभिः पूर्भिस्त्वमंहसः पिपृहि॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! ये धर्मात्मभ्य उद्योगिभ्यः श्रमं कारयित्वा धनाऽन्नानि प्रयच्छन्ति तान्नगरीभिः पालकैस्सह वर्त्तमानानधर्माचरणात्पृथग् रक्षयत एते धर्मेणोद्योगेन पुष्कलं धनाऽन्नं प्राप्य जगद्धिताय सततं दानं कुर्य्युः॥१०॥

पदार्थः-हे **(यविष्ठ्य)** अतिशय कर जवानों में श्रेष्ठ राजन्! **(ये)** जो **(महः)** बड़े **(श्रवसः)** अन्न की **(कामेन)** कामना से **(शतम्)** सैकड़ों **(मघा)** स्वीकार करने योग्य **(अश्व्या)** महत् लोगों में प्रकट होने वाले **(राधांसि)** धनों को सब को **(ददति)** देते हैं **(तान्)** उनको **(पर्तृभिः)** रक्षक **(पूर्भिः)** नगरियों के साथ **(त्वम्)** आप **(अंहसः)** दुष्टाचरण से **(पिपृहि)** रक्षा कीजिये॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! जो धर्मात्मा उद्योगी जनों को उनसे श्रम करा के धन और अन्न देते हैं, उन नगरी और पालकों के साथ वर्त्तमानों को अधर्माचरण से पृथक् रक्खो जिससे धर्मपूर्वक उद्योग से पुष्कल धन और अन्न पाकर जगत् के हितार्थ निरन्तर दान करें॥१०॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्यासिचम्।
उद्वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद्वो देव ओहते॥११॥

देवः। वः। द्रविणःऽदाः। पूर्णाम्। विवष्टि। आऽसिचम्। उत्। वा। सिञ्चध्वम्। उप। वा। पृणध्वम्। आत्। इत्। वः। देवः। ओहते॥११॥

पदार्थः-**(देव)** विद्वान् **(वः)** युष्मान् **(द्रविणोदाः)** धनप्रदः **(पूर्णम्)** **(विवष्टि)** विशेषेण कामयते **(आसिचम्)** समन्तात्सिक्ताम् **(उत्)** **(वा)** **(सिञ्चध्वम्)** **(उप)** **(वा)** **(पृणध्वम्)** पूरयत **(आत्)** अनन्तरम् **(इत्)** एव **(वः)** युष्मान् **(देवः)** दिव्यगुणः **(ओहते)** वितर्कयति॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो द्रविणोदा देवो वः पूर्णामासिचं विवष्टि वा यो देवो वो युष्मानोहतं तमुत्सिञ्चध्वं वाऽऽदिदुपपृणध्वम्॥११॥

भावार्थः-ये विद्वांसो मनुष्याणां पूर्णां कामनां कुर्वन्ति तान् सर्वे सुखयन्तु॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(द्रविणोदाः)** धनदाता **(देवः)** विद्वान् **(वः)** तुमको **(पूर्णाम्)** पूरी **(आसिचम्)** अच्छे प्रकार सेचन की कान्ति को **(विवष्टि)** विशेष कर कामना करता है **(वा)** अथवा जो **(देवः)** दिव्यगुणधारी विद्वान् **(वः)** तुमको **(ओहते)** वितर्कित करता उसको **(उत्, सिञ्चध्वम्)** ही सींचो **(वा)** अथवा **(आत्, इत्)** इसके अनन्तर ही **(उप, पृणध्वम्)** समीप में तृप्त करो॥११॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग मनुष्यों की कामना पूर्ण करते हैं, उनको सब सुखी करें॥११॥

पुनरध्यापकाः अध्येतारः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर अध्यापक और अध्येता क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तं होतारमध्वरस्य प्रचेतसं वह्निं देवा अकृण्वत।
दधाति रत्नं विधते सुवीर्यमग्निर्जनाय दाशुषे॥१२॥२२॥

तम्। होतारम्। अध्वरस्य। प्रऽचेतसम्। वह्निम्। देवाः। अकृण्वत। दधाति। रत्नम्। विधते। सुऽवीर्यम्। अग्निः। जनाय। दाशुषे॥१२॥

पदार्थः-(**तम्**) (**होतारम्**) विद्याया आदातारम् (**अध्वरस्य**) अहिंसामयस्य यज्ञस्य (**प्रचेतसम्**) प्रकर्षेण ज्ञापयितारम् (**वह्निम्**) वोढारम् (**देवाः**) विद्वासः (**अकृण्वत**) कुर्वन्तु (**दधाति**) (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**विधते**) विधानं कुर्वते (**सुवीर्यम्**) सुष्ठु पराक्रमम् (**अग्निः**) वह्निरिव वर्त्तमानः (**जनाय**) परोपकारे प्रसिद्धाय (**दाशुषे**) दात्रे॥१२॥

अन्वयः-योऽग्निरिव विधते दाशुषे जनाय सुवीर्यं रत्नं दधाति यं देवा अध्वरस्य होतारं वह्निं प्रचेतसमकृण्वत तं सर्वे सुशिक्षयन्तु॥१२॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! ये जितेन्द्रियास्तीव्रप्रज्ञा विद्याग्रहणाय प्रवृत्ता विद्यार्थिनस्युस्तानहिंस्रान् प्राज्ञान् विद्याधर्मधरान्कुरुतेति॥१२॥

अत्राग्निविद्वद्राजयजमानपुरोहितोपदेशकविद्यार्थिकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षोडशं सूक्तं द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो (**अग्निः**) अग्नि के तुल्य वर्तमान विद्वान् (**विधते**) विधान करते हुए (**दाशुषे**) दाता (**जनाय**) जन के लिये (**सुवीर्यम्**) सुन्दर पराक्रम युक्त (**रत्नम्**) रमणीय धन को (**दधाति**) धारण करता जिसको (**देवाः**) विद्वान् लोग (**अध्वरस्य**) अहिंसारूप यज्ञ के कर्त्ता वा (**होतारम्**) विद्या के ग्रहीता (**वह्निम्**) कार्य्यों के चलाने और (**प्रचेतसम्**) अच्छे प्रकार जताने वाले जन को (**अकृण्वत**) करें (**तम्**) उसको सब सुशिक्षित करावें॥१२॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो जितेन्द्रिय, तीव्रबुद्धि वाले, विद्या ग्रहण के अर्थ प्रवृत्त विद्यार्थी हों उनको अहिंसाशील, बुद्धिमान्, विद्या और धर्म के धारक करो॥१२॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान्, राजा, यजमान, पुरोहित, उपदेशक और विद्यार्थी के कृत्य का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह सोलहवां सूक्त और बाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य सप्तदशस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ४, ६, ७ आर्च्युष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। २ साम्नी त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ साम्नी पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः।

अथ विद्यार्थिनः किंवत्कीदृशा भवेयुरित्याह॥

अब विद्यार्थी किसके तुल्य कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अग्ने भव सुषमिधा समिद्ध उत बर्हिरुर्विया वि स्तृणीताम्॥ १॥

अग्ने। भव। सुऽसमिधा। सम्ऽइद्धः। उत। बर्हिः। उर्विया। वि। स्तृणीताम्॥ १॥

पदार्थः-(**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन्! (**भव**) (**सुषमिधा**) शोभनया समिधेव धर्म्यक्रियया (**समिद्धः**) प्रदीप्तः (**उत**) अपि (**बर्हिः**) प्रवृद्धमुदकम्। **बर्हिरित्युदकनाम**। (निघं०१.१२ (**उर्विया**) पृथिव्या सह (**वि**) (**स्तृणीताम्**) तनोतु॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा सुषमिधा समिद्धोऽग्निर्भवति तथा भव उत यथा वह्निरुर्विया बर्हिषि स्तृणाति तथाविधो भवान् वि स्तृणीताम्॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथेन्धनैरग्निः प्रदीप्यते वर्षोदकेन भूमिमाच्छदयति तथैव ब्रह्मचर्यसुशीलतापुरुषार्थैर्विद्यार्थिनः सुप्रकाशिता भूत्वा जिज्ञासुहृदयेषु विद्यां विस्तारयन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य तेजस्वी विद्वन्! जैसे (**सुषमिधा**) समिधा के तुल्य शोभायुक्त धर्मानुकूल क्रिया से (**समिद्धः**) प्रदीप्त अग्नि होता है, वैसे (**भव**) हूजिये (**उत**) और जैसे अग्नि (**उर्विया**) पृथिवी के साथ (**बर्हिः**) बढ़े हुए जल का विस्तार करता है, वैसे प्रकार होकर आप (**वि, स्तृणीताम्**) विस्तार कीजिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे इन्धनों से अग्नि प्रदीप्त होता, वर्षा जल से पृथिवी को आच्छादित करता है, वैसे ही ब्रह्मचर्य्य, सुशीलता और पुरुषार्थ से विद्यार्थी जन सुप्रकाशित होकर जिज्ञासुओं के हृदयों में विद्या का विस्तार करते हैं॥ १॥

पुनरध्यापकविद्यार्थिनः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर अध्यापक और विद्यार्थी परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

उत द्वार उशतीर्वि श्रयन्तामुत देवाँ उशत आ वहेह॥ २॥

उत। द्वारः। उशतीः। वि। श्रयन्ताम्। उत। देवान्। उशतः। आ। वह। इह॥ २॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**द्वारः**) द्वाराणि (**उशतीः**) कामयमानाः (**वि**) (**श्रयन्ताम्**) सेवन्ताम् (**उत**) (**देवान्**) दिव्यगुणकर्मस्वभावान् (**उशतः**) कामयमानान् पतीन् (**आ**) (**वह**) (**इह**) अस्मिन्॥ २॥

अन्वयः-हे विद्यार्थिन्! यथा द्वार उशतीर्द्वद्याः पत्नीर्विद्वांस उत वोशतो देवान् स्त्रियो वि श्रयन्तां यथाऽग्निरिह सर्वं वहत्युत वा दिव्यान् गुणान् प्रापयति तथैव त्वमावह॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्यार्थिनो विद्याकामनाय आप्तानध्यापकान् सेवन्ते

यानुत्तमान् विद्यार्थिनोऽध्यापका इच्छन्ति ते परस्परं कामयमाना विद्यामुन्नेतुं शक्नुवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे विद्यार्थी! जैसे **(द्वारः)** द्वार **(उशतीः)** कामना वाली हृदय को प्यारी पत्नियाँ को विद्वान् **(उत)** और **(उशतः)** कामना करते हुए **(देवान्)** उत्तम गुण-कर्म-स्वभावयुक्त विद्वान् पतियों को स्त्रियाँ **(वि, श्रयन्ताम्)** विशेष कर सेवन करें वा जैसे अग्नि **(इह)** इस जगत् में सब को प्राप्त होता **(उत)** और दिव्य गुणों को प्राप्त कराता है, वैसे ही आप **(आ, वह)** प्राप्त करिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्यार्थी विद्या की कामना से आप्त अध्यापकों का सेवन करते, जिन उत्तम विद्यार्थियों को अध्यापक चाहते, वे परस्पर कामना करते हुए विद्या की उन्नति कर सकते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अग्ने वीहि हविषा यक्षि देवान्त्स्वध्वरा कृणुहि जातवेदः॥३॥

अग्ने। वीहि। हविषा। यक्षि। देवान्। सुऽअध्वरा। कृणुहि। जातऽवेदः॥३॥

पदार्थः-**(अग्ने)** वह्निरिव तीव्रप्रज्ञ **(वीहि)** व्याप्नुहि **(हविषा)** आदत्तेन पुरुषार्थेन **(यक्षि)** यज सङ्गच्छस्व **(देवान्)** विदुषोऽध्यापकान् **(स्वध्वरा)** शोभनोऽध्वरोऽहिंसामयो व्यवहारो येषां तान् **(कृणुहि)** **(जातवेदः)** जातविद्य॥३॥

अन्वयः-हे जातवेदोऽग्ने विद्यार्थिँस्त्वं विद्युदिव हविषा विद्या वीहि देवान् यक्षि स्वध्वरा कृणुहि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। विद्यार्थिनो यथा विद्युदध्वानं सद्यो व्याप्नोति तथा पुरुषार्थेन शीघ्रं विद्याः प्राप्नुवन्त्वध्यापकाश्च ताँस्तूर्णं विदुषः कुर्वन्तु॥३॥

पदार्थः-हे **(जातवेदः)** विद्या को प्राप्त **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तीव्रबुद्धि वाले विद्यार्थिन्! तू विद्युत् के तुल्य **(हविषा)** ग्रहण किये पुरुषार्थ से विद्याओं को **(वीहि)** प्राप्त हो **(देवान्)** विद्वान् अध्यापकों का **(यक्षि)** सङ्ग कर और **(स्वध्वरा)** सुन्दर अहिंसारूप व्यवहार वाले कामों को **(कृणुहि)** कर॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्यार्थिजन जैसे विद्युत् मार्ग को शीघ्र व्याप्त होते, वैसे पुरुषार्थ से शीघ्र विद्याओं को प्राप्त हों और अध्यापक पुरुष उनको शीघ्र विद्वान् करें॥३॥

केऽध्यापकाः वराः सन्तीत्याह॥

कौन अध्यापक श्रेष्ठ हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्वध्वरा करति जातवेदा यक्षद् देवाँ अमृतान् पिप्रयच्च॥४॥

सुऽअध्वरा। करति। जातऽवेदाः। यक्षत्। देवान्। अमृतान्। पिप्रयत्। च॥४॥

पदार्थः-**(स्वध्वरा)** सुष्ठ्वहिंस्रस्वभावयुक्तान् **(करति)** कुर्यात् **(जातवेदाः)** प्रसिद्धविद्यः **(यक्षत्)** सङ्गच्छेत् **(देवान्)** विदुषः **(अमृतान्)** स्वस्वरूपेण मृत्युरहितान् **(पिप्रयत्)** प्रीणीयात्

(च)॥४॥

अन्वयः-यो जातवेदाः अध्यापको विद्यार्थिनो देवान् स्वध्वरा करत्यमृतान् यक्षदेतान् पिप्रयच्च स विद्यार्थिभिः सेवनीयोऽस्ति॥४॥

भावार्थः-येषामध्यापकानां विद्यार्थिनः सद्यो विद्वांसः सुशीला धार्मिका जायन्ते त एवाऽध्यापकाः प्रशंसनीयाः सन्ति॥४॥

पदार्थः-जो **(जातवेदाः)** विद्या में प्रसिद्ध अध्यापक विद्यार्थियों को **(देवान्)** विद्वान् और **(स्वध्वरा)** अच्छे प्रकार अहिंसा स्वभाव वाले **(करति)** करे **(अमृतान्)** अपने स्वरूप से मृत्यु रहितों को **(यक्षत्)** संगत करे **(च)** और इनको **(पिप्रयत्)** तृप्त करे, वह विद्यार्थियों को सेवने योग्य है॥४॥

भावार्थः-जिन अध्यापकों के विद्यार्थी शीघ्र विद्वन्, सुशील, धार्मिक होते हैं, वे ही अध्यापक प्रशंसनीय होते हैं॥४॥

पुनरध्यापकं प्रति विद्यार्थिनः किं पृच्छेयुरित्याह॥

फिर अध्यापक से विद्यार्थी जन क्या पूछें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वंस्व विश्वा वार्याणि प्रचेतः सत्या भवन्त्वाशिषो नो अद्य॥५॥

वंस्व। विश्वा। वार्याणि। प्रचेत इति। प्रऽचतः। सत्याः। भवन्तु। आऽशिषः। नः। अद्य॥५॥

पदार्थः-**(वंस्व)** संभज **(विश्वा)** सर्वाणि **(वार्याणि)** वरणीयानि प्रज्ञानानि **(प्रचेतः)** प्रकर्षेण प्रज्ञया युक्त **(सत्याः)** सत्सु साध्व्यः **(भवन्तु)** **(आशिषः)** इच्छा **(नः)** अस्माकम् **(अद्य)** अस्मिन् अहनि॥५॥

अन्वयः-हे प्रचेतस्त्वं विश्वा वार्याणि वंस्व यतो नोऽद्याऽऽशिषः सत्या भवन्तु॥५॥

भावार्थः-हे अध्यापक! त्वं विवेकेन सत्यानि शास्त्राण्यध्यापय सुशिक्षां कुरु येन वयं सत्यकामा भवेम॥५॥

पदार्थः-हे **(प्रचेतः)** उत्तम बुद्धि से युक्त पुरुष! आप **(विश्वा)** सब **(वार्याणि)** ग्रहण करने योग्य विद्वानों का **(वंस्व)** सेवन कीजिये जिससे **(अद्य)** आज **(नः)** हमारी **(आशिषः)** इच्छा **(सत्याः)** सत्य **(भवन्तु)** होवें॥५॥

भावार्थः-हे अध्यापक! आप विवेक से सत्य शास्त्रों को पढ़ाइये और सुशिक्षा करिये जिससे हम लोग सत्य कामना वाले हों॥५॥

पुनर्विद्यार्थिनः कमिव कं सेवेरन्नित्याह॥

फिर विद्यार्थी किसके तुल्य किसका सेवन करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वामु ते दधिरे हव्यवाहं देवासो अग्न ऊर्ज आ नपातम्॥६॥

त्वाम्। ऊँ इति। ते। दधिरे। हव्यऽवाहम्। देवासः। अग्ने। ऊर्जः। आ। नपातम्॥६॥

पदार्थः-**(त्वाम्)** **(उ)** **(ते)** **(दधिरे)** दधतु **(हव्यवाहम्)** यो हव्यानि हुतानि द्रव्याणि वहति तद्वद्वर्त्तमानम् **(देवासः)** दिव्यस्वभावा विद्यार्थिनः **(अग्ने)** सकलविद्यया प्रकाशित **(ऊर्जः)**

पराक्रमयुक्ता: **(आ) (नपातम्)** न विद्यते पातो यस्य तम्॥६॥

अन्वय:-हे अग्ने! त ऊर्जो देवासो नपातं हव्यवाहमिव त्वामु आ दधिरे॥६॥

भावार्थ:-यथाऽग्निविद्या जना ऋत्विजोऽग्निं परिचरन्ति तथैव विद्यार्थिनोऽध्यापकं सेवेरन्॥६॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** समस्त विद्या से प्रकाशित **(ते)** आपके **(ऊर्ज:)** पराक्रम युक्त **(देवास:)** उत्तम स्वभाव वाले विद्यार्थी जन **(नपातम्)** जिसका गिरना नहीं विद्यमान उस **(हव्यवाहम्)** होने हुए पदार्थों को पहुँचाने वाले अग्नि के समान **(त्वाम्) (उ)** तुझे ही **(आ, दधिरे)** अच्छे प्रकार धारण करें॥६॥

भावार्थ:-जैसे अग्निविद्या जानने वाले ऋत्विज् अग्नि की सेवा करते हैं, वैसे ही विद्यार्थी जन अध्यापक की सेवा करें॥६॥

पुनस्ते परस्परं किं किं प्रदद्युरित्याह॥

फिर वे परस्पर क्या क्या देवें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते ते देवाय दाशतः स्याम महो नो रत्ना वि दध इयानः॥७॥ २३॥ १॥

ते। ते। देवाय। दाशतः। स्याम। महः। नः। रत्ना। वि। दधः। इयानः॥७॥

पदार्थ:-**(ते) (ते)** तुभ्यम् **(देवाय)** विदुषेऽध्यापकाय **(दाशत:)** दातार: **(स्याम) (मह:)** महान्ति **(न:)** अस्मभ्यम् **(रत्ना)** विद्यादिरमणीयप्रज्ञाधनानि **(वि) (दध:)** विदधाति **(इयान:)** प्राप्नुवन्॥७॥

अन्वय:-हे अध्यापक! यो भवान् न इयानो महो रत्ना वि दधस्तस्मै ते देवाय ते यं दाशत: स्याम॥७॥

भावार्थ:-यथाऽध्यापका: प्रीत्या विद्या: प्रदद्युस्तथा विद्यार्थिनो वाङ्मन:शरीरधनैरध्यापकान् प्रीणीयुरिति॥७॥

अत्राध्यापकविद्यार्थिकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदे सप्तममण्डले प्रथमोऽनुवाक: सप्तदशं सूक्तं पञ्चमेऽष्टके द्वितीयाध्याये त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे अध्यापक! जो आप **(न:)** हमारे लिये **(इयान:)** प्राप्त होते हुए **(मह:)** बड़े-बड़े **(रत्ना)** रत्नों को **(वि, दध:)** विधान करते हो **(ते)** उन **(देवाय)** विद्वान् अध्यापक आप के लिये **(ते)** वे हम लोग **(दाशत:)** देने वाले **(स्याम)** हों॥७॥

भावार्थ:-जैसे अध्यापक जन प्रीति के साथ विद्यायें देवें, वैसे विद्यार्थी जन वाणी, मन शरीर और धनों से अध्यापकों को तृप्त करें॥७॥

इस सूक्त में अध्यापक और विद्यार्थियों के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह ऋग्वेद के सप्तममण्डल में पहिला अनुवाक और सत्रहवां सूक्त तथा पांचवें अष्टक के द्वितीयाध्याय में तेईसवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ पञ्चविंशत्यृचस्याऽष्टादशतमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। १-२१ इन्द्रः। २२-२५ सुदासः पैजवनस्य दानस्तुतिर्देवता। १, १७, २१ पङ्क्तिः। २, ४, १२, २२ भुरिक् पङ्क्तिः। ८, १३, १४ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, ७ विराट् त्रिष्टुप्। ५, ९, ११, १६, १९, २० निचृत्त्रिष्टुप्। ६, १०, १५, १८, २३, २४, २५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजा कीदृशो वरो भवतीत्याह॥

अब पच्चीस ऋचा वाले अठारहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा कैसा श्रेष्ठ होता है, इस विषय को कहते हैं॥

त्वे ह यत्पितरश्चिन्न इन्द्र विश्वा वामा जरितारो असन्वन्।

त्वे गावः सुदुघास्त्वे ह्यश्वास्त्वं वसु देवयते वनिष्ठः॥ १॥

त्वे इति। ह। यत्। पितरः। चित्। नः। इन्द्र। विश्वा। वामा। जरितारः। असन्वन्। त्वे इति। गावः। सुऽदुघाः। त्वे इति। हि। अश्वाः। त्वम्। वसु। देवऽयते। वनिष्ठः॥ १॥

पदार्थः-(**त्वे**) त्वयि (**ह**) खलु (**यत्**) ये (**पितरः**) ऋतवः इव पालयितारः (**चित्**) अपि (**नः**) अस्माकम् (**इन्द्र**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**वामा**) प्रशस्यानि (**जरितारः**) स्तावकः (**असन्वन्**) याचन्ते (**त्वे**) त्वयि (**गावः**) धेनवः (**सुदुघाः**) सुष्ठु कामप्रपूरिकाः (**त्वे**) त्वयि (**हि**) (**अश्वाः**) महान्तस्तुरङ्गाः (**त्वम्**) (**वसु**) द्रव्यम् (**देवयते**) कामयमानाय (**वनिष्ठः**) अतिशयेन वनिता सम्भाजकः॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजँस्त्वे सति सद्ये नः पितरश्चिज्जरितारो विश्वा वामा असन्वँस्त्वे ह सुदुघा गावोऽसन्वँस्त्वे ह्यश्वा असन्वन् यस्त्वं देवयते वनिष्ठः सन् वसु ददासि स त्वं सर्वैः सेवनीयः॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि राजा सूर्यवद्विद्यान्यायप्रकाशकौ भवेत्तर्हि सर्वं राष्ट्रं कामेनालंकृतं भूत्वा राजानमलंकामं कुर्याद्धार्मिका धर्ममाचरेयुरधार्मिकाश्च पापाचारं त्यक्त्वा धर्मिष्ठा भवेयुः॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजन्! (**त्वे**) आपके होते (**यत्**) जो (**नः**) हमारे (**पितरः**) ऋतुओं के समान पालना करने वाले (**चित्**) और (**जरितारः**) स्तुतिकर्ता जन (**विश्वा**) समस्त (**वामा**) प्रशंसा करने योग्य पदार्थों की (**असन्वन्**) याचना करते हैं (**त्वे, ह**) आपके होते (**सुदुघाः**) सुन्दर काम पूरने वाली (**गावः**) गौएँ हैं उनको मांगते हैं (**त्वे, हि**) आप ही के होते (**अश्वाः**) जो बड़े-बड़े घोड़े हैं उनको मांगते हैं जो आप (**देवयते**) कामना करने वाले के लिये (**वनिष्ठः**) अतीव पदार्थों को अलग करने वाले होते हुए (**वसु**) धन देते हैं सो (**त्वम्**) आप सब को सेवा करने योग्य हैं॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। यदि राजा सूर्य के समान विद्या और न्याय का प्रकाशक हो तो सम्पूर्ण राज्य कामना से अलङ्कृत होकर राजा को पूर्ण कामना वाला करे तथा धार्मिक जन धर्म का आचरण करें और अधार्मिक जन भी पापाचरण को छोड़ धर्मात्मा होवें॥ १॥

पुनः स राजा कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

राजेव हि जनिभिः क्षेष्येवाव द्युभिरभि विदुष्कविः सन्।
पिशा गिरो मघवन् गोभिरश्वैस्त्वायतः शिशीहि राये अस्मान्॥ २॥

राजाऽइव। हि। जनिऽभिः। क्षेषि। एव। अव। द्युऽभिः। अभि। विदुः। कविः। सन्। पिशा। गिरः। मघऽवन्। गोभिः। अश्वैः। त्वाऽयतः। शिशीहि। राये। अस्मान्॥ २॥

पदार्थः-(**राजेव**) यथा राजा तथा (**हि**) (**जनिभिः**) प्रादुर्भूताभिः प्रजाभिः (**क्षेषि**) निवससि (**एव**) (**अव**) (**द्युभिः**) दिनैः (**अभि**) (**विदुः**) विद्वान् (**कविः**) काव्यादिनिर्माणे चतुरः (**सन्**) (**पिशा**) रूपेण (**गिरः**) वाचः (**मघवन्**) (**गोभिः**) धेनुभिः (**अश्वैः**) तुरङ्गैः (**त्वायतः**) त्वां कामयमानान् (**शिशीहि**) तीक्ष्णप्रज्ञान् (**कुरु**) (**राये**) धनाय (**अस्मान्**)॥ २॥

अन्वयः-हे मघवन् विद्वन्! यस्त्वं जनिभी राजेव गोभिरश्वै राये त्वायतोऽस्माञ्छिशीहि विदुः कविः सन् पिशा गिरः शिशीहि द्युभिर्ह्यभ्यव क्षेषि तमेव वयं सततं प्रोत्साहयेम॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सूर्यः सर्वैः पदार्थैस्सह प्रकाशते तथा राजा प्रकाशमानो भवेद्यो नृपः सत्यं कामयमानानस्मान् प्रीणाति सोऽपि सदा प्रसन्नः स्यात्॥ २॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) ऐश्वर्य्यवान् विद्वान्! जो आप (**जनिभिः**) उत्पन्न हुई प्रजाओं से (**राजेव**) जैसे राजा जैसे (**गोभिः**) धेनु और (**अश्वैः**) घोड़ों से (**राये**) धन के लिये (**त्वायतः**) तुम्हारी कामना करते हुए (**अस्मान्**) हम लोगों को (**शिशीहि**) तेजबुद्धि वाले करो। जो (**विदुः**) विद्वान् (**कविः**) कविताई करने में चतुर (**सन्**) होते हुए (**पिशा**) रूप से (**गिरः**) वाणियों को तीक्ष्ण करो (**द्युभिः**) दिनों से (**हि**) ही (**अभि, अव, क्षेषि**) सब ओर से निरन्तर निवास करते हो (**एव**) उन्हीं आपको हम लोग निरन्तर उत्साहित करें॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सूर्य सब पदार्थों के साथ प्रकाशित होता है, वैसे जो राजा प्रकाशमान हो और जो हम लोगों को सत्य के चाहने वालों को प्रसन्न करता है, वह भी सदा प्रसन्न हो॥ २॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमा उ त्वा पस्पृधानासो अत्र मन्द्रा गिरो देवयन्तीरुप स्थुः।
अर्वाची ते पथ्या राय एतु स्याम ते सुमताविन्द्र शर्मन्॥ ३॥

इमाः। ऊँ इति। त्वा। पस्पृधानासः। अत्र। मन्द्राः। गिरः। देवऽयन्तीः। उप। स्थुः। अर्वाची। ते। पथ्या। रायः। एतु। स्याम। ते। सुऽमतौ। इन्द्र। शर्मन्॥ ३॥

पदार्थः-(**इमाः**) प्रजाः (**उ**) (**त्वा**) त्वाम् (**पस्पृधानासः**) स्पर्धमानाः (**अत्र**) (**मन्द्राः**) आनन्दप्रदाः (**गिरः**) वाचः (**देवयन्तीः**) देवान् विदुषः कामयमानाः (**उप**) (**स्थुः**) उपतिष्ठन्तु

(अर्वाची) नवीना **(ते)** तव **(पथ्या)** पथिषु साध्या **(रायः)** धनानि **(एतु)** प्राप्नोतु **(स्याम)** **(ते)** तव **(सुमतौ)** **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त राजन् **(शर्मन्)** गृहे॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यं त्वा पस्पृधानस इमा देवयन्तीः मन्द्रा गिर उप स्थुस्तेऽर्वाची पथ्या राय एतु तस्य तेऽत्र सुमतौ शर्मन्नु वयं सम्मताः स्याम॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवान् सर्वविद्यायुक्तसुशिक्षिता मधुरा श्लक्ष्णाः सत्याः वाचो दध्यात्तर्हि तव नीतिः सर्वेषां पथ्या स्यात् सर्वाः प्रजा अनुरक्ता भवेयुः॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त राजन्! जिस **(त्वा)** आपको **(पस्पृधानासः)** स्पर्धा करते अर्थात् अति चाहना से चाहते हुए **(इमाः)** यह प्रजाजन और **(देवयन्तीः)** विद्वानों की कामना करती हुई **(मन्द्राः)** आनन्द देने वाली **(गिरः)** वाणियां **(उप, स्थुः)** उपस्थित हों और **(ते)** आपकी **(अर्वाची)** नवीन **(पथ्या)** मार्ग में उत्तम नीति **(रायः)** धनों को **(एतु)** प्राप्त हो उन **(ते)** आपके **(अत्र)** इस **(सुमतौ)** श्रेष्ठमति और **(शर्मन्)** घर में (उ) भी हम लोग सम्मत **(स्याम)** हों॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि आप सर्वविद्या युक्त, सुशिक्षित, मधुर, श्लक्ष्ण, सत्यवाणियों को धारण करो तो तुम्हारी नीति सब को पथ्य हो, सब प्रजाजन अनुरागयुक्त होवें॥३॥

राजा सर्वसम्मत्या राजशासनं कुर्यादित्याह॥

राजा सर्वसम्मति से राजशासन करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

धेनुं न त्वा सूयवसे दुदुक्षन्नुप ब्रह्माणि ससृजे वसिष्ठः।
त्वामिन्मे गोपतिं विश्व आहा न इन्द्रः सुमतिं गन्त्वच्छ॥४॥

धेनुम्। न। त्वा। सूयवसे। दुधुक्षन्। उप। ब्रह्माणि। ससृजे। वसिष्ठः। त्वाम्। इत्। मे। गोऽपतिम्। विश्वः। आह। आ। नः। इन्द्रः। सुऽमतिम्। गन्तु। अच्छ॥४॥

पदार्थः-**(धेनुम्)** दुग्धदात्रीं गौः **(न)** इव **(त्वा)** त्वाम् **(सूयवसे)** शोभने भक्षणीये घासे। अत्र**ान्येषामपी**त्याद्यचो दीर्घः। **(दुदुक्षन्)** कामान् प्रपूरयन् **(उप)** **(ब्रह्माणि)** महान्त्यन्नानि धनानि वा **(ससृजे)** सृजति **(वसिष्ठः)** अतिशयेन वसुः **(त्वाम्)** **(इत्)** **(मे)** मम **(गोपतिम्)** गवां पालकम् **(विश्वः)** सर्वो जनः **(आह)** ब्रूयात् **(आ)** **(नः)** अस्माकम् **(इन्द्रः)** परमैश्वर्ययुक्तो राजा **(सुमतिम्)** शोभनां प्रज्ञाम् **(गन्तु)** गच्छतु प्राप्नोतु **(अच्छ)** सम्यक्॥४॥

अन्वयः-हे राजन्! यो वसिष्ठः सूयवसे धेनुं न त्वा दुदुक्षन् ब्रह्माण्युप ससृजे मे गोपतिं त्वां विश्वो जनो यदाह तामिन्नः सुमतिमिन्द्रो भवानच्छा गन्तु॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! यदि भवानस्माकं विदुषां सम्मतौ वर्तित्वा राज्यशासनं कुर्याद्यः कश्चित्प्रजाजनः स्वकीयं सुखदुःखप्रकाशकं वचः श्रावयेत्तत्सर्वं श्रुत्वा यथावत्समादध्यात्तर्हि भवन्तं सर्वे वयं गौर्दुग्धेनेव राज्यैश्वर्येणोन्नतं कुर्याम॥४॥

पदार्थः-हे राजन्! जो **(वसिष्ठः)** अतीव धन **(सूयवसे)** सुन्दर भक्षण करने योग्य घास के निमित्त **(धेनुम्)** गौ की **(न)** जैसे वैसे **(त्वा)** तुम्हें **(दुदुक्षन्)** कामों से परिपूर्ण करता हुआ **(ब्रह्माणि)**

बहुत अन्न वा धनों को **(उप, ससृजे)** सिद्ध करता है **(मे)** मेरी **(गोपतिम्)** इन्द्रियों की पालना करने वाले **(त्वाम्)** तुम्हें **(विश्वः)** सब जन जो **(आह)** कहे **(इत्)** उसी **(नः)** हमारी **(सुमतिम्)** सुन्दर मति को **(इन्द्रः)** परमैश्वर्ययुक्त राजा आप **(अच्छ, आ, गन्तु)** अच्छे प्रकार प्राप्त हूजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। यदि आप हम लोगों को विद्वानों की सम्मति में वर्त्तकर राज्यशासन करें वा जो कोई प्रजा जन स्वकीय सुख दुःख प्रकाश करने वाले वचन को सुनावे उस सब को सुन कर यथावत् समाधान दें तो आप को सब हम लोग गौ दूध से जैसे, वैसे राज्यैश्वर्य से उन्नत करें॥४॥

पुना राजा किंवत् किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्णांसि चित्पप्रथाना सुदास इन्द्रो गाधान्यकृणोत् सुपारा।
शर्धन्तं शिम्युमुचथस्य नव्यः शापं सिन्धूनामकृणोदशस्तीः॥५॥२४॥

अर्णांसि। चित्। पप्रथाना। सुऽदासे। इन्द्रः। गाधानि। अकृणोत्। सुऽपारा। शर्धन्तम्। शिम्युम्। उचथस्य। नव्यः। शापम्। सिन्धूनाम्। अकृणोत्। अशस्तीः॥५॥

पदार्थः-**(अर्णांसि)** उदकानि **(चित्)** इव **(पप्रथाना)** विस्तीर्णानि **(सुदासे)** सुष्ठु दातव्ये व्यवहारे **(इन्द्रः)** सूर्यो विद्युद्वा **(गाधानि)** परिमितानि **(अकृणोत्)** करोति **(सुपारा)** सुखेन पारं गन्तुं योग्यानि **(शर्धन्तम्)** बलं कुर्वन्तम् **(शिम्युम्)** आत्मनः शिमि कर्म कामयमानम्। **शिमीति कर्मनाम।** (निघं०२.१) **(उचथस्य)** वक्तुं योग्यस्य **(नव्यः)** नवेषु भवः **(शापम्)** शपन्त्याक्रुश्यन्ति येन तम् **(सिन्धूनाम्)** नदीनाम् **(अकृणोत्)** करोति **(अशस्तीः)** अप्रशंसिता निरुदकाः॥५॥

अन्वयः-हे राजन्! नव्यस्त्वमिन्द्रश्चित् सुदासे पप्रथाना अर्णांसि गाधानि सुपाराऽकृणोत् सिन्धूनामशस्तीरकृणोत् तथोचथस्य शर्धन्तं शिम्युं प्रति शापं कुर्याः॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन् यथा सूर्यो विद्युद्वा समुद्रस्थान्यपि जलानि सुखेन पारं गन्तुं

योग्यानि करोति तथैव व्यवहारान् परिमितान् सुगमान् कृत्वा दुष्टनाशनं श्रेष्ठसम्मानं विधाय दुष्टानामधर्म्याः क्रिया निन्दितास्त्वं सदा कुर्याः॥५॥

पदार्थः-हे राजन्! **(नव्यः)** नवीनों में प्रसिद्ध आप **(इन्द्रः)** सूर्य वा बिजुली **(चित्)** के समान **(सुदासे)** सुन्दर देने योग्य व्यवहार में **(पप्रथाना)** विस्तीर्ण **(अर्णांसि)** जल जो **(गाधानि)** परिमित हैं उनको **(सुपारा)** सुन्दरता से पार जाने योग्य **(अकृणोत्)** करते हैं **(सिन्धूनाम्)** नदियों की **(अशस्तीः)** अप्रशंसित जलरहित **(अकृणोत्)** करते हैं, वैसे **(उचथस्य)** कहने योग्य **(शर्धन्तम्)** बल करते हुए **(शिम्युम्)** अपने को कर्म की कामना करने वाले **[के]** प्रति **(शापम्)** शाप अर्थात् जिससे दण्ड देते हैं, ऐसे काम को करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है।[1] हे राजा! जैसे सूर्य वा बिजुली समुद्रस्थ जलों को सुख से पार जाने योग्य करता है, वैसे ही व्यवहारों को भी परिमाण युक्त और सुगम कर दुष्टों का नाश और श्रेष्ठों का सम्मान कर दुष्टों की अधर्म क्रियाओं को निन्दित आप सदा करें॥५॥

पुना राजा कान् सत्कुर्यादित्याह॥

फिर राजा किनका सत्कार करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुरोळा इत्तुर्वशो यक्षुरासीद्राये मत्स्यासो निशिता अपीव।
श्रुष्टिं चक्रुर्भृगवो द्रुह्यवश्च सखा सखायमतरद् विषूचोः॥६॥

पुरोळाः। इत्। तुर्वशः। यक्षुः। आसीत्। राये। मत्स्यासः। निऽशिताः। अपिऽइव। श्रुष्टिम्। चक्रुः। भृगवः। द्रुह्यवः। च। सखा। सखायम्। अतरत्। विषूचोः॥६॥

पदार्थः-**(पुरोळाः)** पुरःसरः **(इत्)** एव **(तुर्वशः)** सद्यो वशङ्करः **(यक्षुः)** सङ्गन्ता **(आसीत्)** अस्ति **(राये)** धनाय **(मत्स्यासः)** समुद्रस्था मत्स्या इव **(निशिताः)** नितरां तीक्ष्णगतिस्वभावाः **(अपीव)** **(श्रुष्टिम्)** शीघ्रम् **(चक्रुः)** कुर्वन्ति **(भृगवः)** परिपक्वज्ञानाः **(द्रुह्यवः)** दुष्टानां निन्दकाः **(च)**

1. संस्कृतभावार्थ में उपमा दिया हुआ है।

(सखा) (सखायम्) सखायम् **(अतरत्)** तरति **(विषूचो:)** व्याप्तविद्याधर्मसुशीलयोर्द्वयो:॥६॥

अन्वय:-हे राजन्! राये यस्तुर्वश: पुरोळा यक्षुरिदासीद् ये मत्स्यासश्चाऽपीव निशिता भृगवो द्रुह्यवश्च श्रुष्टिं चक्रुर्य: सखा विषूचो: सखायमतरत् तानित्त्वं सदा सत्कुर्या:॥६॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। हे राजन्! सर्वेषु शुभकर्मस्वग्रसंराधनोन्नतिकारका महामत्स्या इव गम्भीराशय स्था: शीघ्रं कर्त्तार: परस्परस्मिन् सुहृद: स्युस्तानतीवप्रज्ञान् सत्कृत्य राज्यकार्येषु नियोजय॥६॥

पदार्थ:-हे राजन्! **(राये)** धन के लिये **(तुर्वश:)** शीघ्र वश करने और **(पुरोळा:)** आगे जाने **(यक्षु:)** दूसरों से मिलने वाला **(इत्)** ही **(आसीत्)** है वा **(च)** और जो **(मत्स्यास:)** समुद्रों में स्थिर मछलियों के समान **(अपीव)** अतीव **(निशिता:)** निरन्तर तीक्ष्णस्वभायुक्त **(भृगव:)** परिपक्व ज्ञान वाले **(द्रुह्यव:)** दुष्टों की निन्दा करने वाले **(च)** भी **(श्रुष्टिम्)** शीघ्रता **(चक्रु:)** करते हैं जो **(सखा)** मित्र **(विषूचो:)** विद्या और धर्म का सुन्दर शील जिनमें विद्यमान उन के **(सखायम्)** मित्र को **(अतरत्)** तरता है, उन सबों का आप सदा सत्कार करो॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जो सब शुभ कर्म्मों में आगे, अच्छे प्रकार सिद्धि की उन्नति करने वाले, बड़े मगरमच्छों के समान गम्भीर आशयवाले, शीघ्रकारी एक दूसरे में मित्रता रखने वाले हों उन अतीव बुद्धिमानों का सत्कार कर राज्यकार्य्यों में नियुक्त करो॥६॥

पुना राजजना: कीदृशा वरा: स्युरित्याह॥

फिर राजजन कैसे श्रेष्ठ हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ प॒क्थासो॑ भला॒नसो॑ भन॒न्तालि॑नासो विषा॒णिन॑: शि॒वास॑:।

आ यो॒ऽन॑यत्सध॒मा आर्य॑स्य ग॒व्या तृत्सु॑भ्यो अजगन्यु॒धा नॄन्॥७॥

आ। प॒क्थास॑:। भ॒ला॒नस॑:। भ॒न॒न्त॒। आ। अ॒लि॑नास:। वि॒षा॒णिन॑:। शि॒वास॑:। आ। य:। अन॑यत्। स॒ध॒ऽमा:। आर्य॑स्य। ग॒व्या। तृत्सु॑ऽभ्य:। अ॒ज॒ग॒न्। यु॒धा। नॄन्॥७॥

पदार्थ:-**(आ)** समन्तात् **(पक्थास:)** पाकविद्याकुशला: परिपक्वज्ञाना वा **(भलानस:)** भला: परिभाषणीया नासिका येषान्ते **(भनन्त)** भनन्तूपदिशन्तु **(आ) (अलिनास:)** अलिना: सुभूषिता नासिका येषान्ते **(विषाणिन:)** विषाणमिव तीक्ष्णा हस्ते नखा येषान्ते **(शिवास:)** मङ्गलकारिण: **(आ) (य:) (अनयत्)** नयति **(सधमा:)** समानस्थाने मन्यमान: **(आर्यस्य)** उत्तमजनस्य **(गव्या)** गव्यानि सुवाचि भवानि **(तृत्सुभ्य:)** हिंसकेभ्य: **(अजगन्)** गच्छन्तु **(युधा)** युद्धेन **(नॄन्)** मनुष्यान्॥७॥

अन्वय:-हे राजन्! ये पक्थासो भलानसोऽलिनासो विषाणिन: शिवासो भवन्तं प्रत्याभनन्त तृत्सुभ्यो युधा नॄनाजगन् य: सधमा आर्यस्य गव्याऽऽनयत्तान् सर्वान् सुरक्ष॥७॥

भावार्थ:-हे राजन्! ये तपस्विन: पुरुषार्थिनो वक्तार: सुरूपा मङ्गलाचारा युद्धविद्याकुशला आर्या जना भवन्तं यद्यदुपदिशेयुस्तत्तदप्रमत्त: सन् सदाऽनुतिष्ठ॥७॥

पदार्थ:-हे राजन्! जो **(पक्थास:)** पाकविद्या में कुशल **(भलानस:)** सब ओर से कहने योग्य **(अलिनास:)** जिनकी सूभूषित नासिका **(विषाणिन:)** जिनके सींग के समान तीक्ष्ण नख

विद्यमान (**शिवासः**) और जो मङ्गलकारी आपको (**आ, भनन्त**) अच्छे प्रकार उपदेश करें (**तृत्सुभ्यः**) हिंसकों से (**युधा**) युद्ध से (**नॄन्**) मनुष्यों को (**आ, अजगन्**) प्राप्त हों (**यः**) जो (**सधमाः**) समान स्थान में मानते हुए (**आर्यस्य**) उत्तम जन के (**गव्या**) उत्तम वाणी में प्रसिद्ध हुओं को (**आ, अनयत्**) अच्छे प्रकार पहुँचाता है, उन सब की आप उत्तमता से रक्षा करो॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! जो तपस्वी पुरुषार्थी वक्ता जन उत्तम रूप वाले मङ्गल जिनके आचरण युद्ध विद्या में कुशल आर्यजन आपको जिस-जिस का उपदेश दें, उस-उस को अप्रमत्त होते हुए सदा ठानो अर्थात् सर्वदैव उसका आचरण करो॥७॥

केऽत्र भाग्यहीना सन्तीत्याह॥

कौन इस लोग में भाग्यहीन होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दुराध्यो३ अदितिं स्रेवयन्तोऽचेतसो वि जगृभ्रे परुष्णीम्।
मह्नाविव्यक् पृथिवीं पत्यमानः पशुष्कविरशयच्चायमानः॥८॥

दुःऽआध्यः। अदितिम्। स्रेवयन्तः। अचेतसः। वि। जगृभ्रे। परुष्णीम्। मह्ना। अविव्यक्। पृथिवीम्। पत्यमानः। पशुः। कविः। अशयत्। चायमानः॥८॥

पदार्थः-(**दुराध्यः**) दुष्टाचारा दुष्टधियः (**अदितिम्**) अनित्यं कामम् (**स्रेवयन्तः**) (**अचेतसः**) निर्बुद्धयः (**वि**) (**जगृभ्रे**) गृह्णन्ति (**परुष्णीम्**) पालिकाम् (**मह्ना**) महत्वेन (**अविव्यक्**) व्याजीकरोति (**पृथिवीम्**) भूमिम् (**पत्यमानः**) पतिरिवाचरन् (**पशुः**) गवादिः (**कविः**) क्रान्तप्रज्ञः (**अशयत्**) शेते (**चायमानः**) वर्धमानः॥८॥

अन्वयः-यथा मह्ना पत्यमानश्चायमानः कविः पशुरशयत् परुष्णीं पृथिवीमविव्यक् तथा येऽचेतसो दुराध्योऽदितिं स्रेवयन्तो वि जगृभ्रे ते वर्त्तन्त इति वेद्यम्॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! त एवाऽत्र पशुवत्पामराः सन्ति ये स्त्र्यासक्ता भवन्ति॥८॥

पदार्थः-जैसे (**मह्ना**) बड़प्पन से (**पत्यमानः**) पति के समान आचरण करता (**चायमानः**) वृद्धि को प्राप्त होता हुआ (**कविः**) प्रत्येक काम में आक्रमण करने वाली बुद्धि जिसकी वह (**पशुः**) गो आदि पशु (**अशयत्**) सोता है (**परुष्णीम्**) पालने वाली (**पृथिवीम्**) भूमि को (**अविव्यक्**) विविध प्रकार से आक्रमण करता है, वैसे जो (**अचेतसः**) निर्बुद्धि (**दुराध्यः**) दुष्टबुद्धिपुरुष (**अदितिम्**) उत्पत्ति काम को (**स्रेवयन्तः**) सेवते हुए (**वि, जगृभ्रे**) विशेषता से लेते हैं, वे वर्त्तमान हैं, ऐसा जानो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! वे ही इस संसार में पशु के तुल्य पामरजन हैं, जो स्त्री में आसक्त हैं॥८॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ईयुरर्थं न न्यर्थं परुष्णीमाशुश्चनेदभिपित्वं जगाम।
सुदास इन्द्रः सुतुकाँ अमित्रानरन्धयन्मानुषेह वध्रिवाचः॥९॥

ईयुः। अर्थम्। न। निऽअर्थम्। परुष्णीम्। आशुः। चन। इत्। अभिऽपित्वम्। जगाम। सुऽदासे। इन्द्रः। सुऽतुकान्। अमित्रान्। अरन्धयत्। मानुषे। वध्रिऽवाचः॥९॥

पदार्थः-(**ईयुः**) प्राप्नुयुः (**अर्थम्**) द्रव्यम् (**न**) इव (**न्यर्थम्**) निश्चितोऽर्थो यस्मिंस्तम् (**परुष्णीम्**) पालिकां नीतिम् (**आशुः**) सद्यः (**चन**) अपि (**इत्**) एव (**अभिपित्वम्**) प्राप्यम् (**जगाम**) (**सुदासः**) शोभनानि दानानि यस्य सः (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् (**सुतुकान्**) शोभनानि तुकान्यपत्यानि येषां तान् (**अमित्रान्**) मित्रतारहितान् (**अरन्धयत्**) हिंस्यात् (**मानुषे**) मनुष्याणामस्मिन् स- ामे (**वध्रिवाचः**) वध्रयो वर्धिका वाचो येषां ते॥९॥

अन्वयः-यथा सुदास इन्द्रोऽर्थं न न्यर्थमाशुः सन् परुष्णीं चनाऽभिपित्वं जगामाऽमित्रानरन्धयन्मानुषे वध्रिवाचः सुतुकान् रक्षन्ति तथेतरेऽपि मनुष्यास्तदिदीयुः॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजजना! यथा न्यायाधीशो राजा न्यायेन प्राप्तं गृह्णात्यन्यायजन्यं त्यजति श्रेष्ठान् संरक्ष्य दुष्टान् दण्डयति स एवोत्तमो भवति॥९॥

पदार्थः-जैसे (**सुदासः**) सुन्दर दान जिसके विद्यमान वह (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् (**अर्थम्**) द्रव्य के (**न**) समान (**न्यर्थम्**) निश्चित अर्थ वाले को (**आशुः**) शीघ्रकारी होता हुआ (**परुष्णीम्**) पालना करने वाली नीति को (**चन**) भी (**अभिपित्वम्**) और प्राप्त होने योग्य पदार्थ को (**जगाम**) प्राप्त होता है (**अमित्रान्**) मित्रता रहित अर्थात् शत्रुओं को (**अरन्धयत्**) नष्ट करे और (**मानुषे**) मनुष्यों के इस संग्राम में (**वध्रिवाचः**) जिनकी वृद्धि देने वाली वाणी वे (**सुतुकान्**) सुन्दर जिनके सन्तान है उनकी रक्षा करते हैं और भी मनुष्य (**इत्**) उसको (**ईयुः**) प्राप्त हों॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजजनो! जैसे न्यायाधीश राजा न्याय से प्राप्त पदार्थ को लेता और अन्याय से उत्पन्न हुए पदार्थ को छोड़ता तथा श्रेष्ठों की सम्यक् रक्षा कर दुष्टों को दण्ड देता है, वही उत्तम होता है॥९॥

पुनर्जीवाः स्वस्वकृतकर्मफलं प्राप्नुवन्त्येवेत्याह॥

फिर जीव अपने-अपने किये हुए कर्म के फल को प्राप्त होते [ही] हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ईयुर्गावो न यवसादगोपा यथाकृतमभि मित्रं चितासः।
पृश्निगावः पृश्निनिप्रेषितासः श्रुष्टिं चक्रुर्नियुतो रन्तयश्च॥१०॥२५॥

ईयुः। गावः। न। यवसात्। अगोपाः। यथाऽकृतम्। अभि। मित्रम्। चितासः। पृश्निऽगावः। पृश्निऽनिप्रेषितासः। श्रुष्टिम्। चक्रुः। निऽयुतः। रन्तयः। च॥१०॥

पदार्थः-(**ईयुः**) प्राप्नुयुर्गच्छेयुर्वा (**गावः**) धेनवः (**न**) इव (**यवसात्**) भक्षणीयाद् घासाद्यात्

(अगोपाः) अविद्यमानो गोपो यासां ताः **(यथाकृतम्)** येन प्रकारेणाऽनुष्ठितम् **(अभि मित्रम्)** अभिमुखं सखायमिव **(चितासः)** सञ्चययुक्ताः **(पृश्निगावः)** पृश्निवदन्तरिक्षवद्गावो येषान्ते **(पृश्निनिप्रेषितासः)** पृश्नावन्तरिक्षे नितरां प्रेषिता यैस्ते **(श्रुष्टिम्)** क्षिप्रम् **(चक्रुः)** कुर्वन्ति **(नियुतः)** निश्चितगतयो वायवः **(रन्तयः)** येषु रमन्ते **(च)**॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यवसादगोपा गावो नाऽभिमित्रमिव चितासो जीवा यथाकृतं कर्मफलमीयुर्यथा पृश्निगावोऽन्तरिक्षकिरणयुक्ताः पृश्निनिप्रेषितासो नियुतो रन्तयश्च वायवः श्रुष्टिं चक्रुस्तथैव ये कर्माणि कुर्वन्ति ते तादृशमेव लभन्ते॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा गोपालरहिता गावः स्ववत्सान् वायवोऽन्तरिक्षस्थान् किरणान् सखा सखायं च प्राप्नोति तथैव स्वकृतानि शुभाऽशुभानि कर्माणि जीवा ईश्वरव्यवस्थया प्राप्नुवन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यवसात्)** भक्षण करने योग्य घास आदि से **(अगोपाः)** जिनकी रक्षा विद्यमान नहीं वे **(गावः)** गौयें **(न)** जैसे वा जैसे **(अभिमित्रम्)** सम्मुख मित्र, वैसे **(चितासः)** संचय अर्थात् संचित पदार्थों से युक्त जीव **(यथाकृतम्)** जैसे किया कर्म, वैसे उसके फल को **(ईयुः)** प्राप्त हों वा पहुँचें वा जैसे **(पृश्निगावः)** अन्तरिक्ष के तुल्य किरणों से युक्त **(पृश्निनिप्रेषितासः)** अन्तरिक्ष में निरन्तर प्रेषित किये हुए **(नियुतः)** निश्चित गति वाले वायु और **(रन्तयः)** जिनमें रमते हैं वे वायु **(च)** **(श्रुष्टिम्)** शीघ्रता **(चक्रुः)** करते हैं, **[**उसी प्रकार जो कर्म करते हैं,**]** वे वैसा ही फल पाते हैं॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे चरवाहों से रहित गौयें अपने बछड़ों को और वायु अन्तरिक्षस्थ किरणों को और मित्र मित्र को प्राप्त होता है, वैसे ही अपने किये हुए शुभ अशुभ कर्मों को जीव ईश्वरव्यवस्था से प्राप्त होते हैं॥१०॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एकं च यो विंशतिं च श्रवस्या वैकर्णयोर्जनान् राजा न्यस्तः।
दस्मो न सद्मन् नि शिशाति बर्हिः शूरः सर्गमकृणोदिन्द्र एषाम्॥११॥

एकम्। च। यः। विंशतिम्। च। श्रवस्या। वैकर्णयोः। जनान्। राजा। नि। अस्तरित्यस्तः। दस्मः। न। सद्मन्। नि। शिशाति। बर्हिः। शूरः। सर्गम्। अकृणोत्। इन्द्रः। एषाम्॥११॥

पदार्थः-**(एकम्)** **(च)** **(यः)** **(विंशतिम्)** एतत्संख्याताम् **(च)** **(श्रवस्या)** श्रवस्यन्ने साधूनि **(वैकर्णयोः)** विविधेषु कर्णेषु श्रोत्रेषु भवयोर्व्यवहारयोः **(जनान्)** मनुष्यान् **(राजा)** राजमानः **(नि)** **(अस्तः)** योऽस्यति सः **(दस्मः)** दुःखोपक्षयिता **(न)** इव **(सद्मन्)** सीदन्ति यस्मिन् तस्मिन् गृहे **(नि)** नितराम् **(शिशाति)** तीक्ष्णीकरोति **(बर्हिः)** प्रवृद्धम् **(शूरः)** निर्भयः **(सर्गम्)** उदकम्। **सर्ग इत्युदकनामा** (निघं०१.१२) **(अकृणोत्)** करोति **(इन्द्रः)** सूर्यः **(एषाम्)** वीराणां मनुष्याणां

मध्ये॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो दस्मो न वैकर्णयोर्न्यस्तो राजा जनान् सद्मन् नि शिशाति विंशतिं चैकं च श्रवस्याकृणोत् स एषामिन्द्रो बर्हिः सर्गमिव शूरश्शत्रून् विजयते॥११॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यो राजा मनुष्यान् पुत्रवत्पालयत्यहिंसक इव सर्वानानन्दयते सूर्यवत् न्यायविद्याबलानि प्रकाश्य शत्रून् विजयते स एव सर्वं सुखमाप्नोति॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो **(यः)** जो **(दस्मः)** दुःख के विनाश करने वाले के **(न)** समान **(वैकर्णयोः)** विविध प्रकार के कानों में उत्पन्न हुए व्यवहारों का **(नि, अस्तः)** निरन्तर प्रक्षेपण करने अर्थात् औरों के कानों में डालने वाला **(राजा)** विराजमान **(जनान्)** मनुष्यों को **(सद्मन्)** जिसमें बैठते हैं उस घर में **(नि, शिशाति)** निरन्तर तीक्ष्ण करता है और **(विंशतिम्, च, एकम्, च)** बीस और एक भी अर्थात् इक्कीस **(श्रवस्या)** अन्न में उत्तम गुण देने वालों को **(अकृणोत्)** सिद्ध करता है वह **(एषाम्)** इन वीर मनुष्यों के बीच **(इन्द्रः)** सूर्य **(बर्हिः)** अच्छे प्रकार बड़े हुए **(सर्गम्)** जल को जैसे वैसे **(शूरः)** निर्भय शत्रुओं को जीतता है॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो राजा मनुष्यों के पुत्र के समान पालता, अहिंसक के समान सब को आनन्दित करता और सूर्य के समान न्यायविद्या और बलों को प्रकाशित कर शत्रुओं को जीतता है, वही सब सुखों को प्राप्त होता है॥११॥

पुना राजामात्याः प्रजापुरुषाश्च परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा अमात्य और प्रजा पुरुष परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अध श्रुतं कवषं वृद्धमप्स्वनु द्रुह्युं नि वृणग्वज्रबाहुः।
वृणाना अत्र सख्याय सख्यं त्वायन्तो ये अमदन्ननु त्वा॥१२॥

अध। श्रुतम्। कवषम्। वृद्धम्। अप्ऽसु। अनु। द्रुह्युम्। नि। वृणक्। वज्रऽबाहुः। वृणानाः। अत्र। सख्याय। सख्यम्। त्वाऽयन्तः। ये। अमदन्। अनु। त्वा॥१२॥

पदार्थः-**(अध)** अथ **(श्रुतम्)** **(कवषम्)** उपदेशकम् **(वृद्धम्)** वयोविद्याभ्यामधिकम् **(अप्सु)** जलेषु **(अनु)** **(द्रुह्युम्)** यो द्रोग्धि तम् **(नि)** **(वृणक्)** वृणक्ति **(वज्रबाहुः)** शस्त्रपाणिः **(वृणानाः)** स्वीकुर्वाणाः **(अत्र)** **(सख्याय)** मित्रत्वाय **(सख्यम्)** मित्रभावम् **(त्वायन्तः)** त्वां कामयमानाः **(ये)** **(अमदन्)** मदन्ति हर्षन्ति **(अनु)** **(त्वा)** त्वाम्॥१२॥

अन्वयः-हे राजन्! येऽत्र सख्याय सख्यं वृणानास्त्वायन्तो धार्मिका विद्वांसस्त्वान्वमदनध तैः यच्छ्रुतं तेषां मध्ये कवषं वृद्धं द्रुह्युं यो वज्रबाहुः नि वृणक् अप्स्वनुवृणक् तांस्तं च सर्वे सत्कुर्वन्तु॥१२॥

भावार्थः-हे राजन्! ये तयानुकूला वर्तन्ते येषां चानुकूलो भवान् वर्तते ते सर्वे सखायो भूत्वा न्यायेन पुत्रवत् प्रजास्सम्पाल्यानन्दं भुञ्जीरन्॥१२॥

पदार्थः-हे राजन्! **(ये)** जो **(अत्र)** यहाँ **(सख्याय)** मित्रता के लिये **(सख्यम्)** मित्रपन को **(वृणानाः)** स्वीकार करते और **(त्वायन्तः)** तुम्हारी चाह करते हुए धार्मिक विद्वान् पुरुष **(त्वा)** तुमको

(अनु, अमदन्) आनन्दित करते हैं **(अध)** इसके अनन्तर उनसे जिस कारण **(श्रुतम्)** सुना इस कारण उनमें से **(कवषम्)** उपदेश करने वाले **(वृद्धम्)** अवस्था और विद्या से अधिक को और **(द्रुह्युम्)** दुष्टों से द्रोह करने वाले को जो **(वज्रबाहुः)** शास्त्रों को हाथों में रखने वाला **(निवृणक्)** निरन्तर विवेक से स्वीकार करता और **(अप्सु)** जलों में **(अनु)** अनुकूलता से स्वीकार करता है, उन सबको वा उसको सब सत्कार करें॥१२॥

भावार्थः-हे राजा! जो आपके अनुकूल वर्त्तमान हैं, जिनके अनुकूल आप हैं, वे सब मित्र मित्र होकर न्याय से पुत्र के समान पालन कर आनन्द भोगें॥१२॥

पुनस्ते राजादयः कीदृशं बलं कुर्युरित्याह॥

फिर वे राजा आदि कैसा बल करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वि स॒द्यो विश्वा॑ दृंहि॒तान्ये॑षा॒मिन्द्र॒: पुर॒: सह॑सा स॒प्त द॑र्दः।
व्यान॑वस्य॒ तृत्स॑वे॒ गयं॑ भा॒ग्जेष्म॑ पू॒रुं वि॒दथे॑ मृध्रवा॑चम्॥१३॥

वि। स॒द्यः। विश्वा॑। दृं॒हि॒तानि॑। ए॒षा॒म्। इन्द्र॑ः। पुर॑ः। सह॑सा। स॒प्त। द॒र्दॄरिति॑ दर्दः। वि। आन॑वस्य। तृत्स॑वे। गय॑म्। भा॒क्। जेष्म॑। पू॒रुम्। विदथे॑। मृध्रऽवा॑चम्॥१३॥

पदार्थः-**(वि)** विशेषेण **(सद्यः)** शीघ्रम् **(विश्वा)** सर्वाणि **(दृंहितानि)** वृद्धानि सैन्यानि **(एषाम्)** शत्रूणाम् **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् **(पुरः)** शत्रूणां पुराणि **(सहसा)** बलेन **(सप्त)** एतत्संख्याकान् **(दर्दः)** विदृणाति **(वि)** **(आनवस्य)** समन्तान्नवीनस्य **(तृत्सवे)** हिंसकाय **(गयम्)** प्रजाम् गृहं वा **(भाक्)** भजति **(जेष्म)** जयेम **(पूरुम्)** पूरणप्रज्ञं **[=पूर्णप्रज्ञं]** मनुष्यम् **(विदथे)** स- ामे **(मृध्रवाचम्)** मृध्रा हिंसिका वाक् यस्य तम्॥१३॥

अन्वयः-यथेन्द्रो राजा सहसैषां सप्त पुरो वि दर्द आनवस्य गयं वि भाक् पूरुं विदथे मृध्रवाचं च तृत्सवे वर्तमानं वयं जेष्म यतोऽस्माकं सद्यो विश्वा दृंहितानि स्युः॥१३॥

भावार्थः-ये धार्मिकास्सप्रधाना वा राजकार्यशूरवीराः स्वेभ्यः सप्तगुणानधिकानपि दुष्टान् शत्रूञ्जेतुं शक्नुवन्ति ते प्रजाः पालयितुमर्हन्ति॥१३॥

पदार्थः-जैसे **(इन्द्रः)** परमैश्वर्य्यवान् राजा **(सहसा)** बल से **(एषाम्)** इन शत्रुओं के **(सप्त)** सातों **(पुरः)** पुरों को **(वि, दर्दः)** विशेषता से छिन्न-भिन्न करता वा **(आनवस्य)** सब ओर से नवीन के **(गयम्)** प्रजा वा घर को **(वि, भाक्)** विशेषता से सेवता है तथा **(पूरुम्)** पूरण बुद्धि वाले मनुष्य को और **(विदथे)** संग्राम में **(मृध्रवाचम्)** हिंसा करने वाली जिसकी वाणी और **(तृत्सवे)** दूसरे हिंसक के लिये सम्मुख विद्यमान है उसको हम लोग **(जेष्म)** जीतें जिससे हमारी **(सद्यः, विश्वा, दृंहितानि)** समस्त सेना के जन शीघ्र वृद्धि उन्नति को प्राप्त हों॥१३॥

भावार्थः-जो धार्मिक अपने प्रधानों से सहित वा राज्यकार्य्यों में शूरवीर पुरुष अपने से सतगुने अधिक भी दुष्ट शत्रुओं को जीत सकते हैं, वे प्रजा पालने को योग्य होते हैं॥१३॥

राजादिमनुष्यैः कियद्बलं वर्धयितव्यमित्याह॥

राजादि मनुष्यों से कितना बल बढ़वाना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नि गव्यवोऽनवो द्रुह्यवश्च षष्टिः शता सुषुपुः षट् सहस्रा।
षष्टिर्वीरासो अधि षट् दुवोयु विश्वेदिन्द्रस्य वीर्या कृतानि॥ १४॥

नि। गव्यवः। अनवः। द्रुह्यवः। च। षष्टिः। शता। सुसुपुः। षट्। सहस्रा। षष्टिः। वीरासः। अधि। षट्। दुवोयु। विश्वा। इत्। इन्द्रस्य। वीर्या। कृतानि॥ १४॥

पदार्थः-(**नि**) नितराम् (**गव्यवः**) आत्मनो गां भूमिमिच्छवः (**अनवः**) मनुष्याः। **अनव इति मनुष्यनाम।** (निघं० २.३) (**द्रुह्यवः**) ये दुष्टानधार्मिकान् द्रुह्यन्ति जिघांसन्ति (**षष्टिः**) (**शता**) शतानि (**सुषुपुः**) स्वपेयुः (**षट्**) (**सहस्रा**) सहस्राणि (**षष्टिः**) एतत्संख्याकाः (**वीरासः**) शरीरात्मबलशौर्योपेताः (**अधि**) (**षट्**) (**दुवोयु**) यो दुवः परिचरणं कामयते तस्मै (**विश्वा**) सर्वाणि (**इत्**) एव (**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्ययुक्तस्य राज्ञः (**वीर्या**) वीर्याणि (**कृतानि**) निष्पादितानि॥ १४॥

अन्वयः-यैरिन्द्रस्य विश्वेद् वीर्या कृतानि ते गव्यवो द्रुह्यवोऽनवो षष्टिर्वीरासः षट्सहस्रा शत्रूनधि विजयन्ते ते च षट्षष्टिः शता शत्रवः दुवोयु नि सुषुपुः॥ १४॥

भावार्थः-यत्र राजा प्रजासेनयोः प्रजासेने च विद्युदिव पूर्णबलां पराक्रमयुक्तां सेनां वर्द्धयन्ति तत्र षष्टिरपि योद्धारो षट् सहस्राण्यपि शत्रून् विजेतुं शक्नुवन्ति॥ १४॥

पदार्थः-जिन्होंने (**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्ययुक्त राजा के (**विश्वा**) समस्त (**इत्**) ही (**वीर्या**) पराक्रम (**कृतानि**) उत्पन्न किये वे (**गव्यवः**) अपने को भूमि चाहते (**द्रुह्यवः**) और दुष्ट अधर्मी जनों को मारने की इच्छा करते हुए (**अनवः, षष्टिः, वीरासः**) साठ वीर अर्थात् शरीर और आत्मा के बल और शूरता से युक्त मनुष्य (**षट् सहस्रा**) छः सहस्र शत्रुओं को (**अधि**) अधिकता से जीतते हैं वे (**च**) भी (**षट्, षष्टिः, शता**) छासठ सैंकड़े शत्रु (**दुवोयु**) जो सेवन की कामना करता है, उसके लिये (**नि, सुषुपुः**) निरन्तर सोते हैं॥ १४॥

भावार्थः-जहाँ राजा और प्रजा सेनाओं में प्रजा और सेना बिजुली के समान पूरण बल और पराक्रम युक्त सेना को बढ़वाते हैं वहाँ साठ योद्धा छः हजार शत्रुओं को भी जीत सकते हैं॥ १४॥

केन सह के किं कुर्युरित्याह॥

किस के साथ कौन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रेणैते तृत्सवो वेविषाणा आपो न सृष्टा अधवन्त नीचीः।
दुर्मित्रासः प्रकलविन्मिमाना जहुर्विश्वानि भोजना सुदासे॥ १५॥ २६॥

इन्द्रेण। एते। तृत्सवः। वेविषाणाः। आपः। न। सृष्टाः। अधवन्त। नीचीः। दुःऽमित्रासः। प्रकलऽवित्। मिमानाः। जहुः। विश्वानि। भोजना। सुऽदासे॥ १५॥

पदार्थः-(**इन्द्रेण**) परमैश्वर्येण युक्तेन राज्ञा सह (**एते**) पूर्वोक्ता वीराः (**तृत्सवः**) शत्रूणां हिंसकाः (**वेविषाणाः**) शत्रुबलानि व्याप्नुवन्तः (**आपः**) जलानि (**न**) इव (**सृष्टाः**) शत्रूणामुपरि

नियताः कृताः **(अधवन्त)** धुन्वन्ति **(नीचीः)** अधोगताः **(दुर्मित्रासः)** दुष्टा मित्राः सखायो येषां ते **(प्रकलवित्)** यः प्रकृष्टं कलनं संख्यां वेत्ति सः **(मिमानाः)** उत्पादयन्तः **(जहुः)** जहति **(विश्वानि)** सर्वाणि **(भोजना)** भोजनानि पालनानि भोक्तव्यानि वा **(सुदासे)** सुष्ठु दातरि॥१५॥

अन्वयः-य एत इन्द्रेण सहितास्तृत्सवो वेविषाणा आपो न सृष्टा विश्वानि भोजना मिमानास्सन्तो ये दुर्मित्रासः स्युस्तेषां याः सेनाः ता नीचीरधवन्त तेषामुपरि शस्त्रास्त्राणि जहुर्यश्चेन्द्रः सुदासे प्रकलविदस्ति ते सर्वे विजयभाजो भवन्ति॥१५॥

भावार्थः-अत्रोपमालुप्तोपमालङ्कारः। येषां समुद्रतरङ्गा इव उत्सहिता बलिष्ठाः सेनाः स्युस्ते शत्रुसेनास्सद्योऽधो निपात्य जेतुं शक्नुवन्ति॥१५॥

पदार्थः-जो **(एते)** ये **(इन्द्रेण)** परमैश्वर्ययुक्त राजा के साथ **(तृत्सवः)** शत्रुओं को मारने वाले **(वेविषाणाः)** शत्रुओं के बलों को व्याप्त होते हुए **(आपः)** जलों के **(न)** समान **(सृष्टाः)** शत्रुओं पर नियम से रक्खे और **(विश्वानि)** समस्त **(भोजना)** भोजनों को **(मिमानाः)** उत्पन्न करते हुए जो **(दुर्मित्रासः)** दुष्ट मित्रों वाले हों उनकी जो सेना हैं वे **(नीचीः)** नीचे जाती और **(अधवन्त)** कम्पती हैं उन पर जो शस्त्र अस्त्रों को **(जहुः)** छोड़ते हैं और जो परमैश्वर्ययुक्त राजा **(सुदासे)** श्रेष्ठ देने वाले के निमित्त **(प्रकलवित्)** अच्छे प्रकार संख्या का जानने वाला है, वे सब विजयभागी होते हैं॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिनकी समुद्र की तरङ्गों के समान, उत्साहयुक्त, बलिष्ठ सेना हों, वे शत्रुओं की सेनाओं को नीचे गिरा शीघ्र उन्हें जीत सकते हैं॥१५॥

पुनस्स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्धं वीरस्य शृतपामनिन्द्रं परा शर्धन्तं नुनुदे अभि क्षाम्।

इन्द्रो मन्युं मन्युम्यो मिमाय भेजे पथो वर्तनिं पत्यमानः॥१६॥

अर्धम्। वीरस्य। शृतऽपाम्। अनिन्द्रम्। परा। शर्धन्तम्। नुनुदे। अभि। क्षाम्। इन्द्रः। मन्युम्। मन्युऽम्यः। मिमाय। भेजे। पथः। वर्तनिम्। पत्यमानः॥१६॥

पदार्थः-**(अर्द्धम्)** वर्द्धकम् **(वीरस्य)** व्याप्तशुभगुणस्य **(शृतपाम्)** यः शृते परिपक्वं पयसं पिबति तम् **(अनिन्द्रम्)** अनैश्वर्यम् **(परा)** दूरे **(शर्धन्तम्)** बलयन्तम् **(नुनुदे)** नुदति **(अभि)** आभिमुख्ये **(क्षाम्)** भूमिम्। **क्षेति भूमिनाम।** (निघं०१.१) **(इन्द्रः)** ऐश्वर्ययुक्तः शत्रूणां विदारकः **(मन्युम्)** क्रोधम् **(मन्युम्यः)** यो मन्युं मिनोति सः **(मिमाय)** मिमीते **(भेजे)** भजति **(पथः)** मार्गान् **(वर्तनिम्)** वर्तन्ते यस्मिंस्तं न्यायमार्गम् **(पत्यमानः)** पतिरिवाचरन्॥१६॥

अन्वयः-यः क्षां पत्यमान इन्द्रो वीरस्य शृतपामर्धं शर्धन्तं सेनेशं प्राप्यानिन्द्रम्परा णुनुदे यो मन्युम्यः शत्रूणामुपरि मन्युमभिमिमाय पथो वर्तनिं च भेजे स एव राजवरो राजराजेश्वरो भवति॥१६॥

भावार्थः-यो राजा वीराणां बलवृद्धिं कृत्वा दुष्टानामुपरि क्रोधकृद् धार्मिकाणामुपर्यानन्ददृष्टिः न्याय्यं पन्थानमनु वर्तमानः सन्नैश्वर्यं जनयति स एव सर्वदा वर्धते॥१६॥

पदार्थः-जो **(क्षाम्)** भूमि को **(पत्यमानः)** पति के समान आचरण करता हुआ **(इन्द्रः)** ऐश्वर्ययुक्त शत्रुओं को विदीर्ण करने वाला **(वीरस्य)** शुभ गुणों में व्याप्त राजा **(शृतपाम्)** पके हुए दूध को पीने वा **(अर्द्धम्)** वर्षने वा **(शर्धन्तम्)** बल करने वाले सेनापति को पाकर **(अनिन्द्रम्)** अनैश्वर्य को **(परा णुनुदे)** दूर करता है वा जो **(मन्युम्यः)** क्रोध को नष्ट करने वाला शत्रुओं पर **(मन्युम्)** क्रोध को **(अभि)** सम्मुख से **(मिमाय)** मानता **(पथः)** वा मार्गों को और **(वर्त्तनिम्)** जिसमें वर्तमान होते हैं उस न्याय-मार्ग को **(भेजे)** सेवता है, वही राजजनों में श्रेष्ठ और राजराजेश्वर होता है॥१६॥

भावार्थः-जो राजा वीर जनों की बल वृद्धि करके दुष्टों पर क्रोध करता और धार्मिकों पर आनन्ददृष्टि हो तथा न्याययुक्त मार्ग का अनुगामी होता हुआ ऐश्वर्य को पैदा करता है, वही सर्वदा वृद्धि को प्राप्त होता है॥१६॥

के शत्रून् विजेतुमर्हन्तीत्याह॥

कौन शत्रुओं के जीतने में योग्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आध्रेणं चित्तद्वेकं चकार सिंह्यं चित्पेत्वेना जघान।

अवं स्रक्तीर्वेश्यावृश्चदिन्द्रः प्रायंच्छद्विश्वा भोजना सुदासे॥१७॥

आध्रेणं। चित्। तत्। ऊँ इतिं। एकंम्। चकार। सिंह्यंम्। चित्। पेत्वेन। जघान। अवं। स्रक्तीः। वेश्यां। अवृश्चत्। इन्द्रंः। प्र। अयच्छत्। विश्वां। भोजंना। सुऽदासें॥१७॥

पदार्थः-**(आध्रेण)** समन्तात् घृतेन **(चित्)** अपि **(तत्)** **(उ)** वितर्के **(एकम्)** **(चकार)** करोति **(सिंह्यम्)** सिंहेषु भवं बलमिव **(चित्)** इव **[एव]** **(पेत्वेन)** प्रापणेन। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(जघान)** हन्ति **(अव)** **(स्रक्तीः)** सृज्यमानाः सेनाः **(वेश्या)** वेशी प्रवेशयित्री सूची तथा **(अवृश्चत्)** वृश्चति छिनत्ति **(इन्द्रः)** दुष्टदलविदारकः **(प्र)** **(अयच्छत्)** प्रयच्छति ददाति **(विश्वा)** सर्वाणि **(भोजना)** भोजनानि अन्नादीनि **(सुदासे)** सुष्ठु दातरि सति॥१७॥

अन्वयः-य इन्द्रो स्रक्तीर्वेश्यावृश्चत् आध्रेण चित्तदेकमु चकार सिह्यं चित्पेत्वेनाव जघान विश्वा भोजना प्रायच्छत्तस्मिन् सुदासे सति वीराः कथं न शत्रून् विजयेरन्॥१७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये वीराः सिंहवत् पराक्रम्य शत्रून् घ्नन्त्यखण्डितमेकं राज्यं भूगोले कर्तुं प्रयतन्ते ते समग्रं बलं विधाय वीरान् सत्कृत्य धीमद्भिः राज्यं शासितुं प्रवर्तेरन्॥१७॥

पदार्थः-जो **(इन्द्रः)** दुष्टों के समूह को विदारने वाला **(स्रक्तीः)** रची हुई सेनाओं को **(वेश्या)** सूचना से **(अवृश्चत्)** छिन्न-भिन्न करता **(आध्रेण)** सब ओर से धारण किये विषय से **(चित्)** ही **(तत्)** उस **(एकम्, उ)** एक को **(चकार)** सिद्ध करता **(सिंह्यम्)** सिंहों में उत्पन्न हुए बल के समान **(चित्)** ही **(पेत्वेन)** पहुँचाने से **(अव, जघान)** शत्रुओं को मारता और **(विश्वा)** समस्त **(भोजना)** अन्नादि पदार्थों को **(प्र, अयच्छत्)** देता है उस **(सुदासे)** अच्छे देने वाले के होते वीरजन कैसे नहीं शत्रुओं को जीतें॥१७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो वीर सिंह के समान पराक्रम पर शत्रुओं को मारते

हैं और भूगोल में एक अखण्डित राज्य करने को अच्छा यत्न करते हैं, वे समग्र बल को विधान कर और वीरों को सत्कार कर बुद्धिमानों से राज्य की शिक्षा दिलाने को प्रवृत्त हों॥१७॥

मनुष्यैस्सदा शत्रुभावप्रयुक्ता वारणीया इत्याह॥

मनुष्यों को सदा शत्रुपन से युक्त निवारने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शश्वन्तो हि शत्रवो रारधुष्टे भेदस्य चिच्छर्धतो विन्द रन्धिम्।
मर्ताँ एनः स्तुवतो यः कृणोति तिग्मं तस्मिन्नि जहि वज्रमिन्द्र॥१८॥

शश्वन्तः। हि। शत्रवः। ररधुः। ते। भेदस्य। चित्। शर्धतः। विन्द। रन्धिम्। मर्तान्। एनः। स्तुवतः। यः। कृणोति। तिग्मम्। तस्मिन्। नि। जहि। वज्रम्। इन्द्र॥१८॥

पदार्थः-(**शश्वन्तः**) निरन्तरः (**हि**) यतः (**शत्रवः**) (**रारधुः**) हिंसन्ति (**ते**) (**भेदस्य**) विदारणस्य द्वैधीभावस्य (**चित्**) अपि (**शर्धतः**) बलवतः (**विन्द**) लभेरन् (**रन्धिम्**) वशीकरम् (**मर्त्तान्**) मनुष्यान् (**एनः**) प्रापकः (**स्तुवतः**) स्तावकान् (**यः**) (**कृणोति**) (**तिग्मम्**) तीव्रगुणकर्मस्वभावम् (**तस्मिन्**) स- ामे (**नि**) (**जहि**) त्यज (**वज्रम्**) शस्त्रास्त्रम् (**इन्द्र**) शत्रुविदारक॥१८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये हि शश्वन्तः शत्रवस्ते स्तुवतो मर्त्तान् रारधुः ये भेदस्य शर्धतो रन्धिश्चिद्विन्द य एनः हिंसां कृणोति तस्मिन् तेषु च तिग्मं वज्रं नि जहि निपातय॥१८॥

भावार्थः-हे राजादयो धार्मिका जना! ये सर्वदा शत्रुभावयुक्ता धार्मिकान् हिंसन्तस्सन्ति तान् सद्यो घ्नत येन सर्वत्र सर्वेषामभयसुखे वर्द्धेयाताम्॥१८॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) शत्रुओं को विदीर्ण करने वाले! जो (**हि**) निश्चय से (**शश्वन्तः**) निरन्तर (**शत्रवः**) शत्रुजन हैं (**ते**) वे (**स्तुवतः**) स्तुति करते हुए (**मर्तान्**) मनुष्यों को (**रारधुः**) मारते हैं जो (**भेदस्य, शर्धतः**) बलवान् भेद के (**रन्धिम्**) वश करने को (**चित्**) हीं (**विन्द**) प्राप्त हों (**यः**) जो (**एनः**) पहुँचाने वाला हिंसा (**कृणोति**) करता है (**तस्मिन्**) उसके और उन पिछलों के निमित्त भी (**तिग्मम्**) तीव्र गुण-कर्म-स्वभाव वाले (**वज्रम्**) शस्त्र और अस्त्र को (**नि, जहि**) निरन्तर छोड़ो॥१८॥

भावार्थः-हे राजन् आदि धार्मिक जनो! जो सर्वदा शत्रुभावयुक्त और धार्मिक जनों को नष्ट करते हुए विद्यमान हैं, उनको शीघ्र मारो, जिससे सब जगह सबके अभय और सुख बढ़ें॥१८॥

ये मनुष्याः परस्परेषां रक्षणं विधाय न्यायेन राज्यं पालयन्ति त एव शिरोवदुत्तमा भवन्ति।

जो मनुष्य परस्पर की रक्षा कर न्याय से राज्य को पालते हैं, वे ही शिर के समान उत्तम होते हैं॥

आवदिन्द्रं यमुना तृत्सवश्च प्रात्र भेदं सर्वताता मुषायत्।
अजासश्च शिग्रवो यक्षवश्च बलिं शीर्षाणि जभ्रुरश्व्यानि॥१९॥

आवत्। इन्द्रम्। यमुना। तृत्सवः। च। प्र। अत्र। भेदम्। सर्वऽताता। मुषायत्। अजासः। च। शिग्रवः। यक्षवः। च। बलिम्। शीर्षाणि। जभ्रुः। अश्व्यानि॥१९॥

पदार्थः-(**आवत्**) रक्षेत् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यवन्तम् (**यमुना**) नियन्तारः (**तृत्सवः**) हिंस्राः (**च**) (**प्र**) (**अत्र**) अस्मिन् (**भेदम्**) विदारणं भेदभावं वा (**सर्वताता**) राजपालनाख्ये यज्ञे (**मुषायत्**) मुष्णाति (**अजासः**) शस्त्रास्त्रप्रक्षेपकाः (**च**) (**शिग्रवः**) अव्यक्तशब्दकर्तारः। अत्र शिजिधातोरौणादिको रुक् प्रत्ययः। (**यक्षवः**) सङ्गन्तारः (**च**) (**बलिम्**) भोग्यं पदार्थम् (**शीर्षाणि**) शिरांसि (**जभ्रुः**) बिभ्रति (**अश्व्यानि**) अश्वानां महतामिमानि॥१९॥

अन्वयः-ये अजासः शिग्रवः यक्षवश्च यमुना तृत्सवश्चात्र सर्वताता बलिमश्व्यानि शीर्षाणि जभ्रुः यश्च भेदं प्रमुषायदिन्द्रमावत् ते सर्वे वारस्सन्ति॥१९॥

भावार्थः-ये राजादयः सार्वजनिकाभयदक्षिणे राज्यपालनाख्ये यज्ञे भेदबुद्धिं विहाय महतां धार्मिकाणामुत्तमान्यैकमत्यादीनि कर्माणि स्वीकृत्य शत्रूणां विजयाय प्रवर्त्तन्ते त एव परमैश्वर्यं प्राप्नुवन्ति॥१९॥

पदार्थः-जो (**अजासः**) शस्त्र और अस्त्रों के छोड़ने (**शिग्रवः**) सांकेतिक बोली बोलने (**यक्षवश्च**) और संग करने वा (**यमुना**) नियम करने (**तृत्सवश्च**) और मारने वाले जन (**अत्र**) इस (**सर्वताता**) राज्यपालनरूपी यज्ञ में (**बलिम्**) भोगने योग्य पदार्थ को और (**अश्व्यानि**) बड़ों के इन (**शीर्षाणि**) शिरों को (**जभ्रुः**) धारण करते हैं (**च**) और जो (**भेदम्**) विदीर्ण करने वा एक एक से तोड़-फोड़ करने को (**प्र, मुषायत्**) चुराता छिपाता है वा जो (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यवान् की (**आवत्**) रक्षा करे, वे सब श्रेष्ठ हैं॥१९॥

भावार्थः-जो राजा आदि जन, सब मनुष्यों को अभयरूपी दक्षिणा जिस के बीच विद्यमान है ऐसे राज्यपालनरूपी यज्ञ में भेद बुदि को छोड़, महान् धार्मिक उत्तम जनों के एकमति आदि उत्तम कामों को स्वीकार कर शत्रुओं के जीतने को प्रवृत्त होते हैं, वे ही परमैश्वर्य को प्राप्त होते हैं॥१९॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न तं इन्द्र सुमतयो न रायः संचक्षे पूर्वा उषसो न नूत्नाः।
देवकं चिन्मान्यमानं जघन्थाव त्मना बृहतः शम्बरं भेत्॥२०॥२७॥

न। ते। इन्द्र। सुऽमतयः। न। रायः। सम्ऽचक्षे। पूर्वाः। उषसः। न। नूत्नाः। देवकम्। चित्। मान्यमानम्। जघन्थ। अव। त्मना। बृहतः। शम्बरम्। भेत्॥२०॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**ते**) तव (**इन्द्र**) सुखप्रद राजन् (**सुमतयः**) शोभनाः प्रज्ञा येषु ते (**न**) इव (**रायः**) धनानि (**संचक्षे**) सम्यक् प्रख्यातुम् (**पूर्वाः**) (**उषसः**) (**न**) इव (**नूत्नाः**) नवीनाः (**देवकम्**) देवमिव वर्त्तमानम् (**चित्**) इव (**मान्यमानम्**) मान्यानां मानं सत्कारो यस्मात् तम् (**जघन्थ**) हंसि (**अव**) विरोधे (**त्मना**) आत्मना (**बृहतः**) (**शम्बरम्**) मेघम् (**भेत्**) बिभेत्ति॥२०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते पूर्वा नूत्ना उषसो न सुमतयो न रायः संचक्षे कोऽपि न जघन्थ कोऽपि न हन्ति यथा सूर्यो बृहतः शम्बरं भेत्तथा यं त्मना त्वमव जघन्थ चिदिव मान्यमानं देवकं सत्कुर्यास्तदा प्रजाः सर्वतो

वर्धेरन्॥२०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा पूर्वा नूतना भविष्यन्त्यश्च प्रभातवेलाः सर्वथा मङ्गलकारिण्यः सन्ति तथा यदि न्यायोपार्जितेन धार्मिकान् प्राज्ञान् सत्कृत्यैते राजकार्याणि साधयेस्तत्र मेघं सूर्य इव दुष्टान् हत्वा श्रेष्ठान् प्रसन्नान् रक्षेस्तर्हि तव सर्वतो वृद्धिः स्यात्॥२०॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सुख देने वाले **(ते)** आपके **(पूर्वाः)** पहिली और **(नूत्नाः)** नवीन **(उषसः)** उषा वेलाओं के **(न)** समान वा **(सुमतयः)** उत्तम बुद्धिमानों के **(न)** समान **(रायः)** धनों को **(संचक्षे)** अच्छे प्रकार कहने को कोई भी **(न)** नहीं **(जघन्थ)** मारता है वा जैसे सूर्य **(बृहतः)** बड़े से बड़े **(शम्बरम्)** मेघदल को **(भेत्)** विदीर्ण करता, वैसे जिसे **(त्मना)** अपने से आप **(अव)** नष्ट करते हैं **(चित्)** उसके समान **(मान्यमानम्)** मान्यों का सत्कार जिसमें है उस **(देवकम्)** देव समान वर्त्तमान का सत्कार करें तो प्रजा सब ओर से बढ़े॥२०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे पिछली और नई होने वाली प्रभात वेला सर्वथा मंगल करने वाली हैं, वैसे यदि न्याय से इकट्ठे किये हुए धन से धार्मिक और उत्तम बुद्धि वाले जनों का सत्कार कर उन उक्त मनुष्यों की रक्षा कर इनसे राज्य के कार्य्यों को साधिये और वहाँ मेघ को सूर्य के समान दुष्टों को मार श्रेष्ठों को प्रसन्न रखिये तो आपकी सब ओर से वृद्धि हो॥२०॥

पुना राजसहायेन प्रजाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजा के सहाय से प्रजाजन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र ये गृहादममदुस्त्वाया पराशरः शतयातुर्वसिष्ठः।
न ते भोजस्य सख्यं मृषन्ताधा सूरिभ्यः सुदिना व्युच्छान्॥२१॥

प्र। ये। गृहात्। अममदुः। त्वाऽया। पराऽशरः। शतऽयातुः। वसिष्ठः। न। ते। भोजस्य। सख्यम्। मृषन्त। अध। सूरिऽभ्यः। सुऽदिना। वि। उच्छान्॥२१॥

पदार्थः-**(प्र)** **(ये)** **(गृहात्)** **(अममदुः)** हर्षन्ति **(त्वाया)** तव नीत्या **(पराशरः)** दुष्टानां हिंसकः **(शतयातुः)** यः शतैः सह याति **(वसिष्ठः)** अतिशयेन वसुः **(न)** निषेधे **(ते)** **(भोजस्य)** पालनस्य भोजनस्य वा **(सख्यम्)** मित्रत्वम् **(मृषन्त)** सहन्ते **(अध)** आनन्तर्ये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(सूरिभ्यः)** विद्वद्भ्यः **(सुदिना)** सुखयुक्तानि दिनानि **(वि)** **(उच्छान्)** निवसेयुः॥२१॥

अन्वयः-हे राजन्! ये त्वाया गृहादममदुः शतयातुर्वसिष्ठः पराशर आनन्देत्ते भोजस्य सख्यं न प्र मृषन्ताऽध ये सूरिभ्यः सुदिना व्युच्छाँस्ते त्वया सत्कर्त्तव्याः सन्ति॥२१॥

भावार्थः-यस्य विद्याविनयसुशीलताभिः सर्वे गृहस्थादयो मनुष्या आनन्देयुर्ये चान्योत्कर्षं दृष्ट्वा परितपन्ति ये हि विद्वद्भ्यः सदा सुशिक्षां गृह्णन्ति ते सर्वाणि सुखानि प्राप्नुवन्ति॥२१॥

पदार्थः-हे राजन् **(ये)** जो **(त्वाया)** तुम्हारी नीति के साथ **(गृहात्)** घर से **(अममदुः)** आनन्दित होते हैं वा **(शतयातुः)** जो सैकड़ों के साथ जाता है जो **(वसिष्ठः)** अतीव वसने वाला और

जो **(पराशरः)** दुष्टों का हिंसक आनन्दित होता है **(ते)** वे **(भोजस्य)** भोगने और पालन करने की **(सख्यम्)** मित्रता को **(न)** नहीं **(प्र, मृषन्त)** सहते हैं **(अध)** इसके अनन्तर जो **(सूरिभ्यः)** विद्वानों से **(सुदिना)** सुखयुक्त दिनों में **(व्युच्छान्)** निरन्तर वसें, वे तुमको सदा सत्कार करने योग्य हैं॥२१॥

भावार्थः-जिसकी विद्या, विनय और सुशीलता से सब गृहस्थ आदि मनुष्य आनन्दित हों और जो औरों का उत्कर्ष देखकर पीड़ित होते हैं और जो विद्वानों से सर्वदैव सुन्दर शिक्षा लेते हैं, वे सब सुख पाते हैं॥२१॥

पुनस्स राजा किंवत्किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा किसके तुल्य क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द्वे नप्तुर्देववतः शते गोर्द्वा रथा वधूमन्ता सुदासः।
अर्हन्नग्ने पैजवनस्य दानं होतेव सद्म पर्येमि रेभन्॥२२॥

द्वे इति। नप्तुः। देवऽवतः। शते इति। गोः। द्वा। रथा। वधूऽमन्ता। सुऽदासः। अर्हन्। अग्ने। पैजऽवनस्य। दानम्। होताऽइव। सद्म। परि। एमि। रेभन्॥२२॥

पदार्थः-**(द्वे)** **(नप्तुः)** पौत्रस्य **(देववतः)** प्रशस्तगुणविद्वद्युक्तस्य **(शते)** **(गोः)** धेनोर्भूमेर्वा **(द्वा)** द्वौ **(रथा)** जलस्थलान्तरिक्षेषु गमयितारौ **(वधूमन्ता)** प्रशस्ते वध्वौ विद्येते ययोस्तौ **(सुदासः)** उत्तमदानः **(अर्हन्)** सत्कुर्वन् **(अग्ने)** विद्वन् **(पैजवनस्य)** वेगयुक्तस्य **(दानम्)** यद्दीयते तत् **(होतेव)** दातेव **(सद्म)** स्थानम् **(परि)** सर्वतः **(एमि)** प्राप्नोमि **(रेभन्)** स्तुवन्ति॥२२॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथार्हन् सुदासोऽहं दानं होतेव सद्म पैजवनस्य नप्तुः सद्म पर्येमि देववतोगोर्द्वे शते वधूमन्ता द्वा रथा पर्येमि यथा विद्वांसो रेभँस्तान् पर्य्येमि तथा त्वं भव॥२२॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे मनुष्या! यथा दातार उत्तमानि दानानि ददति पौत्रपर्यन्तं धनदान्यपश्वादीन् समर्धयन्ति तथा सर्वैर्वर्तितव्यम्॥२२॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! जैसे **(अर्हन्)** सत्कार करता हुआ **(सुदासः)** उत्तम दानशील मैं **(दानम्)** दान **(होतेव)** देने वाले के समान **(सद्म)** घर को वा **(पैजनवस्य)** वेगवान् **(नप्तुः)** पौत्र के स्थान को **(पर्येमि)** सब ओर से जाता हूँ और **(देववतः)** प्रशंसित गुण वाले विद्वानों से युक्त की **(गोः)** धेनु वा भूमिसम्बन्धी **(द्वे)** दो **(शते)** सौ **(वधूमन्ता)** प्रशंसायुक्त वधू वाले **(द्वा)** दो **(रथा)** जल-स्थल में जाने वाले रथों को सब ओर से प्राप्त होता हूँ वा जैसे विद्वान् जन **(रेभन्)** स्तुति करते हैं, उनको सब ओर से जाता हूँ, वैसे आप हूजिये॥२२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो जैसे देने वाले उत्तम दान देते और पौत्रपर्य्यन्त धनधान्य और पशु आदि की समृद्धि करते हैं, वैसे सब को वर्त्तना चाहिये॥२२॥

पुनस्ते राजादयः किमनुतिष्ठेयुरित्याह॥

फिर वे राजा आदि क्या अनुष्ठान करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

चत्वारो मा पैजवनस्य दानाः स्मद्दिष्टयः कृशनिनो निरेके।
ऋज्रासो मा पृथिविष्ठाः सुदासस्तोकं तोकाय श्रवसे वहन्ति॥२३॥

चत्वारः। मा। पैजऽवनस्य। दानाः। स्मत्ऽदिष्टयः। कृशनिनः। निरेके। ऋज्रासः। मा। पृथिविऽस्थाः। सुऽदासः। तोकम्। तोकाय। श्रवसे। वहन्ति॥२३॥

पदार्थः-(**चत्वारः**) ऋत्विजः (**मा**) माम् (**पैजवनस्य**) क्षमाशीलस्य पुत्रस्य (**दानाः**) दातारः (**स्मद्दिष्टयः**) निश्चिता दिष्टयो दर्शनानि येषान्ते (**कृशनिनः**) कृशनं बहुहिरण्यं विद्यते येषान्ते। **कृशनमिति हिरण्यनाम।** (निघं०१.२) (**निरेके**) निःशङ्के राजव्यवहारे (**ऋज्रासः**) सरलस्वभावाः (**मा**) माम् (**पृथिविष्ठाः**) ये पृथिव्यां तिष्ठन्ति (**सुदासः**) शोभनदानः (**तोकम्**) अपत्यम् (**तोकाय**) अपत्याय (**श्रवसे**) विद्याश्रवणाय (**वहन्ति**) प्राप्नुवन्ति॥२३॥

अन्वयः-हे राजन्! पैजवनस्य ते यथा चत्वारो दानाः स्मद्दिष्टयः कृशनिन ऋज्रासः पृथिविष्ठा विद्वांसो निरेके मा नि दधति श्रवसे तोकाय च **[मा]** तोकं वहन्ति तथा तान् प्रति भवान् सुदासो भवेत्॥२३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा वेदविद ऋत्विजो राजसहायेन यज्ञानुष्ठानात्सर्वेषां निश्चितं सुखं वर्धयन्ति यथा च ब्रह्मचारिणः सन्तानाय ब्रह्मचर्येण पूर्वं विद्याध्ययनाय च विवाहं विधायाऽपत्यमुत्पादयन्ति तथैव राजा राजपुरुषाश्च सर्वेषां हिताय सर्वान् सन्तानान् ब्रह्मचर्येण विद्या ग्राहयित्वा सर्वेषां सुखमुन्नेयुः॥२३॥

पदार्थः-हे राजन्! (**पैजवनस्य**) क्षमाशील रखने वाले के पुत्र आपके जैसे (**चत्वारः**) चार ऋत्विज् (**दानाः**) देनेवाले (**स्मद्दिष्टयः**) जिनके निश्चित दर्शन (**कृशनिनः**) वा बहुत हिरण्य विद्यमान (**ऋज्रासः**) जो सरल स्वभाव (**पृथिविष्ठाः**) पृथिवी पर स्थित रहते हैं वे विद्वान् जन (**निरेके**) निःशङ्क राज्यव्यवहार में (**मा**) मुझे विधान करते हैं, स्थिर करते हैं (**श्रवसे**) विद्या सुनने के लिये (**तोकाय**) सन्तान के अर्थ (**मा**) मुझ (**तोकम्**) सन्तान को (**वहन्ति**) पहुँचाते हैं, वैसे उनके प्रति आप (**सुदासः**) सुन्दर दानशील हूजिये॥२३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! वेदवेत्ता ऋत्विज् ब्राह्मण राजसहाय से यज्ञानुष्ठान से सब का निश्चित सुख बढ़ाते हैं और जैसे ब्रह्मचारी सन्तान के लिये ब्रह्मचर्य्य से पहिले विद्या पढ़ने के लिये विवाह कर सन्तान उत्पन्न करते हैं, वैसे राजजन और राजपुरुष सब के हित के लिये ब्रह्मचर्य्य से विद्या ग्रहण कराकर सब के सुख की उन्नति करें॥२३॥

पुनस्ते राजादयः किंवत् किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे राजा आदि किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्य श्रवो रोदसी अन्तरुर्वी शीर्ष्णेशीर्ष्णे विबभाजा विभक्ता।
सप्तेदिन्द्रं न स्रवतो गृणन्ति नि युध्यामधिमशिशादभीके॥२४॥

यस्य। श्रवः। रोदसी इति। अन्तरिति। उर्वी इति। शीर्ष्णेऽशीर्ष्णे। विऽबभाज। विऽभक्ता। सप्त। इत्।

इन्द्रम्। न। स्रवतः। गृणन्ति। नि। युध्यामधिम्। अशिशात्। अभीके॥२४॥

पदार्थः-(**यस्य**) मनुष्यस्य (**श्रवः**) अन्नं श्रवणं वा (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**अन्तः**) मध्ये (**उर्वी**) बहुकलादियुक्ते (**शीर्ष्णेशीर्ष्णे**) शिरोवदुत्तमायोत्तमाय सुखाय (**विबभाज**) विशेषेण भजेत् सेवेत (**विभक्ता**) विभक्ते भिन्ने (**सप्त**) सप्तविधे (**इत्**) एव (**इन्द्रम्**) विद्युतम् (**न**) इव (**स्रवतः**) प्रापयतः (**गृणन्ति**) स्तुवन्ति (**नि**) (**युध्यामधिम्**) यो युधि स-ाम आमं रोगं दधाति तं शत्रुम् (**अशिशात्**) छेदयेत् (**अभीके**) समीपे॥२३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य श्रव उर्वी रोदसी शीर्ष्णेशीर्ष्णेऽन्तर्विबभाज ये इन्द्रं न सप्त विभक्ता सत्यौ सुखानीत् स्रवतो येषां सर्वे विद्वांसो गृणन्ति तयोर्विद्यया यो राजाऽभीके युध्यामधिं न्यशिशात्स एव राज्यं शासितुमर्हेत्॥२४॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यदि राजादयो धर्म्ये न्याये वर्त्तित्वा राज्यं प्रशासयेयुस्तर्हि सूर्यवत्प्रजासूत्तमानि सुखान्युन्नेतुं शक्नुवन्ति शत्रून्निवार्य्य भद्रान् समीपस्थान्जनान् सत्कर्तुं जानन्ति॥२४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यस्य**) जिसका (**श्रवः**) अन्न वा श्रवण (**उर्वी**) बहुफलादि पदार्थों से युक्त (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी को (**शीर्ष्णेशीर्ष्णे**) शिर के तुल्य उत्तम सुख के लिये (**अन्तः**) बीच में (**विबभाज**) विशेषता से भेजता है जिन (**इन्द्रम्**) इन्द्र के (**न**) समान (**सप्त**) सप्त प्रकार से (**विभक्ता**) विभाग को प्राप्त हुई [=हुए] आकाश और पृथिवी सुखों को (**इत्**) ही (**स्रवतः**) पहुँचाते हैं जिनकी सब विद्वान् जन (**गृणन्ति**) प्रशंसा करते हैं उनकी विद्या से जो राजा (**अभीके**) समीप में (**युध्यामधिम्**) युद्धरूपी रोग को धारण करते शत्रु को (**नि, अशिशात्**) निरन्तर छेदे, वही राज्य-शिक्षा देने के योग्य हो॥२४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। यदि राजादि पुरुष धर्मयुक्त न्याय में वर्त कर राज्य को उत्तम शिक्षा दिलावें तो सूर्य के समान प्रजाओं में उत्तम सुखों की उन्नति कर सकते हैं और शत्रुओं को निवार [=निवारण कर] सुख देने वाले समीपस्थ जनों को सत्कार करना जानते हैं॥२४॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशं राजानं समाश्रयेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे राजा को अच्छे प्रकार आश्रय करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमं नरो मरुतः सश्चतानु दिवोदासं न पितरं सुदासः।

अविष्टना पैजवनस्य केतं दूणाशं क्षत्रमजरं दुवोयु॥२५॥२८॥

इमम्। नरः। मरुतः। सश्चत। अनु। दिवःऽदासम्। न। पितरम्। सुऽदासः। अविष्टन। पैजऽवनस्य। केतम्। दुःऽनशम्। क्षत्रम्। अजरम्। दुवःऽयु॥२५॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**नरः**) नायकाः (**मरुतः**) मनुष्याः (**सश्चत**) समवयन्तु (**अनु**) (**दिवोदासम्**) विद्याप्रकाशदातारम् (**न**) इव (**पितरम्**) पालकम् (**सुदासः**) उत्तमविद्यादानः (**अविष्टन**) व्याप्नुत। अत्र संहितायामिति दीर्घः। (**पैजवनस्य**) क्षमाशीलाज्ञातस्य पुत्रस्य (**केतम्**) प्रज्ञाम् (**दूणाशम्**) दुःखेन

नाशयितुं योग्यं दुर्लभविनाशं वा **(क्षत्रम्)** राज्यं धनं वा **(अजरम्)** नाशरहितम् **(दुवोयु)** परिचरणाय कमनीयम्॥ २५॥

अन्वयः-हे नरो मरुतो यः सुदासो भवेत्तमिमं दिवोदासं पितरं न यूयं सश्चत पैजवनस्य दूणाशं केतमजरं दुवोयु क्षत्रं चान्वविष्टन॥ २५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यदि मनुष्या विद्यादिशुभगुणदातारं पितरमिव पालकं राजानमाश्रयेयुस्तर्हि पूर्णां प्रज्ञामविनाशि सेवनीयमैश्वर्यं राज्यं च स्थिरं कर्तुं शक्नुयुरिति॥ २५॥

अत्रेन्द्रराजप्रजामित्रधार्मिकाऽमात्यशत्रुनिवारणधार्मिकसत्करणार्थप्रतिपादनादस्य सूक्तस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टादशं सूक्तमष्टाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(नरः)** नायक **(मरुतः)** मनुष्यो! जो **(सुदासः)** उत्तम दान देने वाला हो **(इमम्)** उस **(दिवोदासम्)** विद्याप्रकाश देने वाले को **(पितरम्)** पालने वाले पिता के **(न)** समान तुम लोग **(सश्चत)** मिलो, सम्बन्ध करो और **(पैजवनस्य)** क्षमाशील है जिसका उससे उत्पन्न हुए पुत्र के **(दूणाशम्)** दुःख से नाश करने योग्य पदार्थ वा दुर्लभ विनाश **(केतम्)** उत्तम बुद्धि और **(अजरम्)** विनाशरहित **(दुवोयु)** सेवन करने के लिये मनोहर **(क्षत्रम्)** राज्य वा धन को **(अनु, अविष्टन)** व्याप्त होओ॥ २५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। यदि मनुष्य विद्यादि शुभ गुणों के देने वाले, पिता के समान **[**=पालक**]** राजा का आश्रय करें तो पूर्ण प्रज्ञा अविनाशि सेवने योग्य ऐश्वर्य और राज्य को स्थिर कर सकें॥ २५॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, प्रजा, मित्र धार्मिक, अमात्य, शत्रुनिवारण तथा धार्मिक सत्कार के अर्थ का प्रतिपादन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह अठारहवां सूक्त और अट्ठाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्यैकोनविंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ५ त्रिष्टुप्। ३, ६ निचृत्त्रिष्टुप्। ७, ९, १० विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ निचृत्पङ्क्तिः। ४ पङ्क्तिः। ८, ११ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ कीदृशो राजा राजोत्तमो भवतीत्याह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले उन्नीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में कैसा राजा उत्तम राजा होता है, इस विषय को कहते हैं॥

यस्ति॒ग्मशृ॑ङ्गो वृष॒भो न भी॒म एकः॑ कृ॒ष्टीश्च्या॒वय॑ति॒ प्र विश्वाः॑।
यः शश्व॑तो॒ अदा॑शुषो॒ गय॑स्य प्रय॒न्तासि॒ सुष्वि॑तराय॒ वेदः॑॥ १॥

यः। ति॒ग्मऽशृ॑ङ्गः। वृष॒भः। न। भी॒मः। एकः॑। कृ॒ष्टीः। च्य॒वय॑ति। प्र। विश्वाः॑। यः। शश्व॑तः। अदा॑शुषः। गय॑स्य। प्र॒ऽय॒न्ता। अ॒सि॒। सुस्वि॑ऽतराय। वेदः॑॥ १॥

पदार्थः-(**यः**) (**तिग्मशृङ्गः**) तिग्मानि तेजस्वीनि शृङ्गानि किरणा यस्य सूर्यस्य सः (**वृषभः**) वृष्टिकरः (**न**) इव (**भीमः**) भयङ्करः (**एकः**) असहायः (**कृष्टीः**) मनुष्याः (**च्यावयति**) चालयति (**प्र**) (**विश्वाः**) समग्राः प्रजाः (**यः**) (**शश्वतः**) अनादिभूतस्य (**अदाशुषः**) अदातुः (**गयस्य**) अपत्यस्य (**प्रयन्ता**) प्रकर्षेण नियन्ता (**असि**) (**सुष्वितराय**) सुष्ठ्वतिशयितमैश्वर्यं यः सुनोति तस्मै (**वेदः**) विज्ञानं धनं वा। **वेद इति धननाम।** (निघं०२.१०)॥१०॥

अन्वयः-हे राजन्! यो भद्रो जनस्तिग्मशृङ्गो वृषभो भीमो नैको विश्वा कृष्टीः प्र च्यावयति यः शश्वतोऽदाशुषो गयस्य सुष्वितराय वेदः करोति तस्य यतस्त्वं प्रयन्तासि तस्मादधिकमाननीयोऽसि॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्यो विद्युद्वा वृष्टिकरणेन सुखप्रदा तीव्रतापेन निपातेन वा भयङ्करा वर्त्तते तथा यो राजा विद्याध्ययनायाऽपत्यानि ये न समर्पयन्ति तेभ्यो दण्डदाता वा ब्रह्मचर्येण सर्वेषां विद्यावर्धको यो राजा भवेत्तमेव सर्वे स्वीकुर्वन्तु॥१॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यः**) जो कल्याण जन (**तिग्मशृङ्गः**) तीक्ष्ण किरणों से युक्त (**वृषभः**) वर्षा (**भीमः**) भय करने वाले सूर्य के (**न**) समान (**एकः**) अकेला (**विश्वाः**) समग्र प्रजा (**कृष्टीः**) मनुष्यों को (**प्र, च्यावयति**) अच्छे प्रकार चलाता है और (**यः**) जो (**शश्वतः**) निरन्तर (**अदाशुषः**) न देने वाले के (**गयस्य**) सन्तान के (**सुष्वितराय**) सुन्दर अतीव ऐश्वर्य को निकालने वाले के लिये (**वेदः**) विज्ञान वा धन को करता है, उसके जिससे तुम (**प्रयन्ता**) उत्तमता से नियम करने वाले (**असि**) हो, इससे अधिक मानने योग्य हो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य वा बिजुली वर्षा करने से सुख देने वाली और तीव्र ताप से वा पड़ जाने से भयंकर है, वैसे जो राजा विद्याध्ययन के लिये सन्तानों को नहीं देते उनके लिये दण्ड देने वाला वा ब्रह्मचर्य्य से सब की विद्या बढ़ाने वाला राजा हो, उसी को सब स्वीकार करें॥१॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं ह त्यदि॑न्द्र कुत्स॑माव॒: शुश्रू॑षमाणस्त॒न्वा॑ सम॒र्ये।
दास॒ं यच्छुष्ण॒ं कुय॑वं॒ न्य॑स्मा॒ अर॑न्धय आर्जुने॒याय॒ शिक्ष॑न्॥ २॥

त्वम्। ह॒। त्यत्। इ॒न्द्र॒। कुत्स॑म्। आ॒व॒:। शुश्रू॑षमाण:। त॒न्वा॑। स॒ऽम॒र्ये। दास॑म्। यत्। शुष्ण॑म्। कुय॑वम्। नि। अ॒स्मै॒। अर॑न्धय:। आ॒र्जु॒ने॒याय॑। शिक्ष॑न्॥ २॥

पदार्थ:-(**त्वम्**) (**ह**) खलु (**त्यत्**) (**इन्द्र**) सूर्य इव प्रतापयुक्त (**कुत्सम्**) विद्युतमिव वज्रम् (**आव:**) रक्षे: (**शुश्रूषमाण:**) श्रोतुमिच्छमानो विद्याश्रवणाय सेवां कुर्वाण: (**तन्वा**) शरीरेण (**समर्ये**) (**दासम्**) दातारं सेवकं वा (**यत्**) यम् (**शुष्णम्**) शोषकं बलवन्तम् (**कुयवम्**) कुत्सिता यवा अन्नादि यस्य तम् (**नि**) (**अस्मै**) (**अरन्धय:**) हिंसये: (**आर्जुनेयाय**) अर्जुन्या: सुरूपवत्या विदुष्या: पुत्राय (**शिक्षन्**) विद्योपार्जनं कारयन्॥ २॥

अन्वय:-हे इन्द्र राजँस्त्वं सूर्य इव त्यत्कुत्सं दुष्टानामुपरि प्रहत्य भद्रिका: प्रजा आव: शुश्रूषमाणस्त्वं तन्वा समर्ये होत्तमा सेना आवो यद्यं शुष्णं कुयवं दासं न्यरन्धयोऽस्मा आर्जुनेयायाशिक्षन्नविद्यां हिंस्या:॥ २॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। ये मनुष्या विद्याप्राप्तय आप्तानध्यापकान् शुश्रूषन्ते शरीरात्मबलं विधाय संग्रामे दुष्टान् विजयन्ते विद्याध्ययनविरहांस्तिरस्कृत्य विद्याभ्यासकान् सत्कुर्वन्ति ते स्थिरं राज्यैश्वर्यं प्राप्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थ:-हे (**इन्द्र**) सूर्य के समान प्रतापयुक्त राजा (**त्वम्**) आप सूर्य के समान (**त्यत्**) उस (**कुत्सम्**) बिजुली के तुल्य वज्र को दुष्टों पर प्रहार कल्याण करने वाली प्रजा की (**आव:**) पालना कीजिये (**शुश्रूषमाण:**) सुनने की इच्छा करने वाले आप (**तन्वा**) शरीर से (**समर्ये**) संग्राम में (**ह**) ही उत्तम सेना की रक्षा कीजिये (**यत्**) और जिस (**शुष्णम्**) शुष्क करने वा (**कुवयम्**) कुत्सित यव आदि अन्न रखने वाले (**दासम्**) दाता वा सेवक को (**नि, अरन्धय:**) नहीं मारते (**अस्मै**) इस (**आर्जुनेयाय**) सुन्दर रूपवती विदुषी के पुत्र के निमित्त (**शिक्षन्**) विद्या इकट्ठी कराते हुए अविद्या को हनो॥ २॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य विद्याप्राप्ति के लिये आप्त, श्रेष्ठ, विद्वान् अध्यापकों की शुश्रूषा करते शरीर और आत्मा के बल का विधान कर संग्राम में दुष्टों को जीतते और विद्याध्ययन से [रहित] जनों का तिरस्कार करते, विद्याभ्यास करने वालों का सत्कार करते हैं, वे स्थिर राज्यैश्वर्य को प्राप्त होते हैं॥ २॥

पुन: स किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं धृ॑ष्णो धृष॒ता वी॒तह॑व्यं॒ प्रावो॒ विश्वा॑भिरू॒तिभि॑: सु॒दास॑म्।
प्र पौरु॑कुत्सिं त्र॒सद॑स्युमाव॒: क्षेत्र॑साता वृत्र॒हत्ये॑षु पू॒रुम्॥ ३॥

त्वम्। धृ॒ष्णो॒ इति॑। धृ॒ष॒ता। वी॒तऽह॑व्यम्। प्र। आ॒व॒:। विश्वा॑भि:। ऊ॒तिऽभि॑:। सु॒ऽदास॑म्। प्र।

पौरुऽकुत्सिम्। त्रसदस्युम्। आवः। क्षेत्रऽसाता। वृत्रऽहत्येषु। पूरुम्॥ ३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**धृष्णो**) दृढ (**धृषता**) प्रगल्भेन पुरुषेण सह (**वीतहव्यम्**) प्राप्तप्राप्तव्यम् (**प्र आवः**) प्रकर्षेण रक्ष (**विश्वाभिः**) समग्राभिः (**ऊतिभिः**) रक्षाभिः (**सुदासम्**) शोभना दासा दातारः सेवका वा यस्य तम् (**प्र**) (**पौरुकुत्सिम्**) पुरवो बहवः कुत्साः शस्त्राऽस्त्रविद्यायोगा यस्य तस्यापत्यम् (**त्रसदस्युम्**) त्रसा भयभीता दस्यवो भवन्ति यस्मात्तम् (**आवः**) कामयस्व (**क्षेत्रसाता**) क्षेत्राणां विभागे (**वृत्रहत्येषु**) शत्रुहननेषु स- ामेषु (**पूरुम्**) पालकं धारकं वा॥ ३॥

अन्वयः-हे धृष्णो! त्वं धृषता विश्वभिरूतिभिर्वीतहव्यं सुदासं पौरुकुत्सिं त्रसदस्युं सततं प्रावः। क्षेत्रसाता वृत्रहत्येषु पूरुं प्रावः॥ ३॥

भावार्थः-ये राजानो धार्मिकान् दस्युप्रहारकाञ्छस्त्रास्त्रप्रक्षेपकुशलान् विद्यादिशुभगुणदातॄन् सत्कुर्वन्ति ते सदा सुखिनो जायन्ते॥ ३॥

पदार्थः-हे (**धृष्णो**) दृढ पुरुष! (**त्वम्**) आप (**धृषता**) प्रगल्भ पुरुष के साथ (**विश्वाभिः**) समग्र (**ऊतिभिः**) रक्षाओं के साथ (**वीतहव्यम्**) पाये हुए और पाने योग्य पदार्थ वा (**सुदासम्**) अच्छे जिसके दास जो (**पौरुकुत्सिम्**) बहुत शस्त्रास्त्रविद्याओं के योग रखने वाले पुत्र (**त्रसदस्युम्**) जिससे भयभीत दस्यु होते हैं उस जन की निरन्तर (**प्रावः**) कामना करो और (**क्षेत्रसाता**) क्षेत्रों के विभाग में (**वृत्रहत्येषु**) शत्रुओं के मारने रूप सङ्ग्रामों में (**पूरुम्**) पालना वा धारणा करने वाले की (**प्रावः**) कामना करो॥ ३॥

भावार्थः-जो राजजन धार्मिक, दस्युओं को मारने, शस्त्र अस्त्रों के फेंकने में कुशल और विद्यादि शुभगुणों के देने वाले सज्जनों का सत्कार करते हैं, वे सदा सुखी होते हैं॥ ३॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं नृभिर्नृमणो देववीतौ भूरीणि वृत्रा हर्यश्व हंसि।
त्वं नि दस्युं चुमुरिं धुनिं चास्वापयो दभीतये सुहन्तु॥ ४॥

त्वम्। नृऽभिः। नृऽमनः। देवऽवीतौ। भूरीणि। वृत्रा। हरिऽअश्व। हंसि। त्वम्। नि। दस्युम्। चुमुरिम्। धुनिम्। च। अस्वापयः। दभीतये। सुऽहन्तु॥ ४॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**नृभिः**) न्यायनेतृभिः सज्जनैः सह (**नृमणः**) नृषु न्यायाधीशेषु मनो यस्य तत्सम्बुद्धौ (**देववीतौ**) देवानां वीतिः प्राप्तिर्यस्मिन् व्यवहारे तस्मिन् (**भूरीणि**) बहूनि (**वृत्रा**) वृत्राणि शत्रुसैन्यानि धनानि वा (**हर्यश्व**) कमनीयाश्व (**हंसि**) नाशयसि प्राप्नोषि वा (**त्वम्**) (**नि**) (**दस्युम्**) दुष्टाचारं साहसिकम् (**चुमुरिम्**) चोरम् (**धुनिम्**) श्रेष्ठानां कम्पयितारम् (**च**) (**अस्वापयः**) हत्वा शापय (**दभीतये**) हिंसनाय (**सुहन्तु**) शोभनेन प्रकारेण नाशयतु॥ ४॥

अन्वयः-हे हर्यश्व नृमणो राजँस्त्वं नृभिः सह देववीतौ भूरीणि वृत्रा हंसि त्वं धुनिं चुमुरिं दस्युं न्यस्वापयो दभीतये च दुष्टान् भवान् सुहन्तु॥ ४॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् सदैव सत्पुरुषसङ्गं न्यायेन राज्यं पालयित्वा धनेच्छां दुष्टान् दस्यून्निवार्य्य प्रजापालनं सततं कुरु॥४॥

पदार्थः-हे **(हर्यश्व)** मनोहर घोड़ा से युक्त **(नृमणः)** और न्यायधीशों में मन रखने वाले राजन्! **(त्वम्)** आप **(नृभिः)** न्याय प्राप्ति कराने वाले विद्वानों के साथ **(देववीतौ)** विद्वानों की प्राप्ति जिस व्यवहार में होती उसमें **(भूरीणि)** बहुत **(वृत्रा)** शत्रुसैन्यजन वा धनों को **(हंसि)** नाशते वा प्राप्त होते हैं **(त्वम्)** आप **(धुनिम्)** श्रेष्ठों को कंपाने वाले **(चुमुरिम्)** चोर और **(दस्युम्)** दुष्ट आचरण करने वाले साहसी जन को **(नि, अस्वापयः)** मार कर सुलाओ तथा **(दभीतये)** हिंसा के लिये **(च)** भी दुष्टों को आप **(सुहन्तु)** अच्छे प्रकार नाशो॥४॥

भावार्थः-हे राजा! आप सदैव सत्पुरुषों का संग न्याय से राज्य को पाल के धन की इच्छा और दुष्ट डाकुओं को निवार के प्रजापालना निरन्तर करो॥४॥

पुना राज्ञः सैन्यानि कीदृशानि भवेयुरित्याह॥

फिर राजा के सेनाजन कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तव॑ च्यौ॒त्नानि॑ वज्रहस्त॒ तानि॒ नव॒ यत्पुरो॑ नव॒तिं च॑ स॒द्यः।
नि॒वेश॑ने शतत॒माऽवि॑वेषी॒रह॑न् च वृ॒त्रं नमु॑चिमु॒ताह॑न्॥५॥२९॥

तव॑। च्यौ॒त्नानि॑। व॒ज्र॒ऽह॒स्त॒। तानि॑। नव॑। यत्। पुरः॑। न॒व॒तिम्। च॒। स॒द्यः। नि॒ऽवेश॑ने। श॒त॒ऽत॒मा। अवि॑वेषीः। अह॑न्। च॒। वृ॒त्रम्। नमु॑चिम्। उ॒त। अ॒ह॒न्॥५॥

पदार्थः-**(तव)** **(च्यौत्नानि)** च्यवन्ति शत्रवो येभ्यस्तानि बलानि। **च्यौत्नमिति बलनाम।** (निघं०२.९) **(वज्रहस्त)** **(तानि)** **(नव)** **(यत्)** याः **(पुरः)** शत्रूणां नगर्यः **(नवतिम्)** एतत्संख्याताः **(च)** **(सद्यः)** **(निवेशने)** निविशन्ति यस्मिंस्तस्मिन् **(शततमा)** अतिशयेन शतानि **(अविवेषीः)** व्याप्नुयाः **(अहन्)** हन्ति **(च)** **(वृत्रम्)** आवरकं मेघम् **(नमुचिम्)** यः स्वस्वरूपं न मुञ्चति तम् **(उत)** अपि **(अहन्)** हन्ति॥५॥

अन्वयः-हे वज्रहस्त! यथा तव तानि च्यौत्नानि सूर्यो यन्नवनवतिं पुरः सद्योऽहँश्च निवेशने शततमा असंख्यान्युतापि नमुचिं वृत्रं चाऽहंस्तथा त्वमविवेषीः सैन्यानि प्राप्य शत्रुबलान्यविवेषीः॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा सूर्योऽसंख्यानि मेघस्य नगराणीवाब्दलानि घनाकाराणि हन्ति तथा तवोत्तमानि सैन्यानि भूत्वा सर्वान् दुष्टाञ्छत्रून् घ्नन्तु॥५॥

पदार्थः-हे **(वज्रहस्त)** हाथ में वज्र रखने वाले! जैसे **(तव)** आपके **(तानि)** वे **(च्यौत्नानि)** बल हैं अर्थात् सूर्य **(यत्)** जो **(नवनवतिम्)** निन्यानवे **(पुरः)** मेघरूपी शत्रुओं की नगरी उनको **(सद्यः)** शीघ्र **(अहन्)** हनता **(च)** और **(निवेशने)** जिसमें निवास करते हैं उस स्थान में **(शततमा)** अतीव सैकड़ों को **(उत)** और **(नमुचिम्)** जो अपने रूप को नहीं छोड़ता उस **(वृत्रम्)** आच्छादन करने वाले मेघ को **(च)** भी **(अहन्)** मारता, वैसे आप **(अविवेषीः)** व्याप्त हूजिये अर्थात् सेना जनों को प्राप्त होकर शत्रुबलों को प्राप्त हूजिये॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! जैसे सूर्य असंख्य मेघ की नगरियों के समान सघन घन घटाघूम बादलों को हनता है, वैसे तुम्हारे सेना जन उत्तम होकर समस्त शत्रुओं को मारें॥५॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सना ता त इन्द्र भोजनानि रातहव्याय दाशुषे सुदासे।
वृष्णे ते हरी वृषणा युनज्मि व्यन्तु ब्रह्माणि पुरुशाक वाजम्॥६॥

सना। ता। ते। इन्द्र। भोजनानि। रातऽहव्याय। दाशुषे। सुऽदासे। वृष्णे। ते। हरी इति। वृषणा। युनज्मि। व्यन्तु। ब्रह्माणि। पुरुऽशाक। वाजम्॥६॥

पदार्थः-(**सना**) सनातनानि विभजनीयानि वा (**ता**) तानि (**ते**) तव (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद राजन् (**भोजनानि**) भोक्तव्यानि पालनानि वा (**रातहव्याय**) दत्तदातव्याय (**दाशुषे**) दात्रे (**सुदासे**) सुदानाय (**वृष्णे**) सुखवर्षकाय (**ते**) तव (**हरी**) अश्वौ (**वृषणा**) बलयुक्तौ (**युनज्मि**) संयोजयामि (**व्यन्तु**) प्राप्नुवन्तु (**ब्रह्माणि**) धनानि (**पुरुशाक**) बहुशक्तिमन् (**वाजम्**) वेगम्॥६॥

अन्वयः-हे पुरुशाकेन्द्र! यानि ते तव रातहव्याय सुदासे वृष्णे दाशुषे सना भोजनानि सन्ति तान्यहं युनज्मि यौ ते वृषणा हरी तावहं युनज्मि यतः प्रजाजना वाजं ब्रह्माणि च व्यन्तु॥६॥

भावार्थः-हे राजजना! यदि भवन्तः करदातॄणां पालनं न्यायेन कुर्युः शरीरेण धनेन मनसा प्रजा उन्नयेयुस्तर्हि किमप्यैश्वर्यमलभ्यं न स्यात्॥६॥

पदार्थः-हे (**पुरुशाक**) बहुत शक्तियुक्त (**इन्द्र**) परम ऐश्वर्य के देने वाले राजा! जो (**ते**) आपके (**रातहव्याय**) दी है देने योग्य वस्तु जिसने उस (**सुदासे**) सुन्दर दानशील (**वृष्णे**) सुखवृष्टि करने (**दाशुषे**) देने वाले के लिये (**सना**) सनातन वा विभाग करने योग्य (**भोजनानि**) भोजन है (**ता**) उनको मैं (**युनज्मि**) संयुक्त करता हूँ तथा जो (**ते**) आपके (**वृषणा**) बलयुक्त अश्व (**हरी**) हरणशील हैं उनको संयुक्त करता हूँ जिससे प्रजाजन (**वाजम्**) वेग और (**ब्रह्माणि**) धनों को (**व्यन्तु**) प्राप्त हों॥६॥

भावार्थः-हे राजजनो! यदि आप लोग कर देने वालों की पालना न्याय से करें और शरीर से धन से और मन से प्रजाजनों की उन्नति करें तो कुछ भी ऐश्वर्य अलभ्य न हो॥६॥

पुना राजप्रजाजना अन्योऽन्यं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा ते अस्यां सहसावन् परिष्टावघाय भूम हरिवः परादै।
त्रायस्व नोऽवृकेभिर्वरूथैस्तव प्रियासः सूरिषु स्याम॥७॥

मा। ते। अस्याम्। सहसाऽवन्। परिष्टौ। अघाय। भूम। हरिऽवः। पराऽदै। त्रायस्व। नः। अवृकेभिः। वरूथैः। तव। प्रियासः। सूरिषु। स्याम॥७॥

पदार्थः-(**मा**) निषेधे (**ते**) तव (**अस्याम्**) प्रजायाम् (**सहसावन्**) बहुबलयुक्त (**परिष्टौ**) परितः सङ्गन्तव्यायाम् (**अघाय**) पापाय (**भूम**) भवेम (**हरिवः**) प्रशस्तमनुष्ययुक्त (**परादै**) परादानाय त्यागाय त्यक्तव्याय (**त्रायस्व**) (**नः**) अस्मान् (**अवृकेभिः**) अचोरैः (**वरूथैः**) वरैः (**तव**) (**प्रियासः**) प्रीताः (**सूरिषु**) विद्वत्सु (**स्याम**) भवेम॥७॥

अन्वयः-हे हरिवः सहसावन् राजन्नस्यां परिष्टौ ते परादा अघाय वयं मा भूमाऽवृकेभिर्वरूथैर्नस्त्रायस्व यतो वयं तव सूरिषु प्रियासः स्याम॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा वयं तवोन्नतौ प्रयतेमहि तथा त्वमपि प्रयतस्व विद्याप्रचारेण सर्वान् विदुषः कारय येन विरोधो न स्यात्॥७॥

पदार्थः-हे (**हरिवः**) प्रशंसित मनुष्य और (**सहसावन्**) बहुत बल से युक्त राजा! (**अस्याम्**) इस (**परिष्टौ**) सब ओर से संग करने योग्य वेला में (**ते**) आपके (**परादै**) त्याग करने योग्य (**अघाय**) पाप के लिये हम लोग (**मा, भूम**) मत होवें (**अवृकेभिः**) और जो चोर नहीं उन (**वरूथैः**) श्रेष्ठों के साथ (**नः**) हम लोगों की (**त्रायस्व**) रक्षा कीजिये जिससे हम लोग (**तव**) तुम्हारे (**सूरिषु**) विद्वानों में (**प्रियासः**) प्रसन्न (**स्याम**) हों॥७॥

भावार्थः-हे राजा! जैसे हम लोग तुम्हारी उन्नति के निमित्त प्रयत्न करें, वैसे आप भी प्रयत्न कीजिये, विद्या के प्रचार से सबको विद्वान् कराइये जिससे विरोध नहो॥७॥

पुनर्मनुष्याः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रियास इत्ते मघवन्नभिष्टौ नरो मदेम शरणे सखायः।
नि तुर्वशं नि याद्वं शिशीह्यतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन्॥८॥

प्रियासः। इत्। ते। मघऽवन्। अभिष्टौ। नरः। मदेम। शरणे। सखायः। नि। तुर्वशम्। नि। याद्वम्। शिशीहि। अतिथिऽग्वाय। शंस्यम्। करिष्यन्॥८॥

पदार्थः-(**प्रियासः**) प्रीतिमन्तः प्रीता वा (**इत्**) एव (**ते**) तव (**मघवन्**) बहुधनप्रद (**अभिष्टौ**) अभिप्रियायां सङ्गतौ (**नरः**) नायकाः (**मदेम**) आनन्देम (**शरणे**) शरणागतपालने कर्मणि (**सखायः**) मित्राः सन्तः (**नि**) (**तुर्वशम्**) निकटस्थं जनम्। **तुर्वश इति अन्तिकनाम।** (निघं०२.१६) (**नि**) (**याद्वम्**) ये यान्ति तान् यो याति तम् (**शिशीहि**) तीक्ष्णीकुरु (**अतिथिग्वाय**) अतिथीनां गमनाय (**शंस्यम्**) प्रशंसनीयम् (**करिष्यन्**)॥८॥

अन्वयः-हे मघवन्! सखायः प्रियासो नरो वयं तेऽभिष्टौ शरणे मदेम त्वं तुर्वशं नि शिशीहि याद्वं नि शिशीह्यतिथिग्वाय शंस्यमित्करिष्यञ्छिशीहि॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! ये शुभगुणकर्मस्वभावाचरणेन युक्तास्त्वयि प्रीतिमन्तः स्युस्तान् धार्मिकान् प्रशंसितान् कुरु यथाऽतिथीनामागमनं स्यात्तथा विधेहि॥८॥

पदार्थः- (**मघवन्**) बहुत धन देने वाले! (**सखायः**) मित्र होते हुए (**प्रियासः**) प्रीतिमान् वा

प्रसन्न हुए **(नरः)** नायक मनुष्य हम लोग **(ते)** आपके **(अभिष्टौ)** सब ओर से प्रिय संगति अर्थात् मेल मिलाप में **(शरणे)** शरणागत की पालना करने कर्म में **(मदेम)** आनन्दित हों। आप **(तुर्वशम्)** निकटस्थ मनुष्य को **(नि, शिशीहि)** निरन्तर तीक्ष्ण कीजिये और **(याद्वम्)** जो जाते हैं उन पर जो जाता है उसको **(नि)** निरन्तर तीक्ष्ण कीजिये और **(अतिथिग्वाय)** अतिथियों के गमन के लिये **(शंस्यम्)** प्रशंसनीय को **(इत्)** ही **(करिष्यन्)** करते हुए तीक्ष्ण कीजिये॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! जो शुभ गुणों के आचरण से युक्त तुम में प्रीतिमान् हों उन धार्मिक जनों को प्रशंसित कीजिये, जैसे अतिथियों का आगमन हो वैसा विधान कीजिये॥८॥

पुनः पठकपाठकाः [=पाठकादयः] परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर पढ़ने और पढ़ाने वाले परस्पर कैसे वर्ताव वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒द्यश्चि॒न्नु ते॑ मघवन्न॒भिष्टौ॒ नरः॑ शंसन्त्युक्थ॒शास॑ उ॒क्था।
ये ते॒ हवे॑भि॒र्वि प॒णीँरदा॑शन्न॒स्मान् वृ॑णीष्व॒ युज्या॑य॒ तस्मै॑॥९॥

स॒द्यः। चि॒त्। नु। ते॒। म॒घ॒ऽव॒न्। अ॒भिष्टौ॑। नरः॑। शं॒स॒न्ति॒। उ॒क्थ॒ऽशास॑ः। उ॒क्था। ये। ते॒। हवे॑भिः। वि। प॒णीन्। अदा॑शन्। अ॒स्मान्। वृ॒णी॒ष्व॒। युज्या॑य। तस्मै॑॥९॥

पदार्थः-**(सद्यः)** **(चित्)** अपि **(नु)** इव **(ते)** तव **(मघवन्)** पूजनीयविद्याऽध्यापक **(अभिष्टौ)** अभिप्रियायाम् नीतौ **(नरः)** **(शंसन्ति)** **(उक्थशासः)** य उक्थानां प्रशंसनीयानां मन्त्राणामर्थञ्छासन्ति ते **(उक्था)** उक्थानि प्रशंसनीयानि वचनानि **(ये)** **(ते)** **(हवेभिः)** हवनैः **(वि)** **(पणीन्)** व्यवहर्तॄन् **(अदाशन्)** ददति **(अस्मान्)** **(वृणीष्व)** स्वीकुर्याः **(युज्याय)** योक्तुं योग्याय व्यवहाराय **(तस्मै)**॥९॥

अन्वयः-हे मघवन्! य उक्थशासो नरस्तेऽभिष्टौ सद्यश्चिदुक्था शंसन्ति ये च हवेभिस्ते विपणीन्वादाशँस्तानस्माँश्च तस्मै युज्याय वृणीष्व॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वन्नध्यापक! यूयमस्मान् वेदार्थं सद्यो ग्राहयत येन वयमप्यध्यापनं कुर्याम॥९॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** प्रशंसनीय विद्या के अध्यापक! जो **(उक्थशासः)** प्रशंसा करने योग्य मन्त्रों के अर्थों की शिक्षा देने वाले **(नरः)** विद्वान् जन **(ते)** तुम्हारी **(अभिष्टौ)** सब ओर से प्रिय वेला में **(सद्यः)** शीघ्र **(चित्)** ही **(उक्था)** प्रशंसित वचनों को **(शंसन्ति)** प्रबन्ध से कहते हैं और **(ये)** जो **(हवेभिः)** हवनों के साथ **(ते)** आपके **(विपणीन्)** व्यवहारों को **(नु, अदाशन्)** ही देते है उन्हें और **(अस्मान्)** हम लोगों को **(तस्मै)** उस **(युज्याय)** युक्त करने योग्य व्यवहार के लिये **(वृणीष्व)** स्वीकार कीजिये॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वान् अध्यापक! तुम हम लोगों को वेदार्थ शीघ्र ग्रहण कराओ, जिससे हम लोग भी अध्यापन करावें॥९॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एते स्तोमा॑ न॒रां नृ॑तम॒ तुभ्य॑मस्म॒द्र्य॑ञ्चो॒ दद॑तो म॒घानि॑।
तेषा॑मिन्द्र वृत्र॒हत्ये॑ शि॒वो भूः॒ सखा॑ च॒ शूरो॑ऽवि॒ता च॑ नृ॒णाम्॥१०॥

ए॒ते। स्तोमाः॑। न॒राम्। नृ॒ऽत॒म॒। तुभ्य॑म्। अ॒स्म॒द्र्य॑ञ्चः। दद॑तः। म॒घानि॑। तेषा॑म्। इ॒न्द्र॒। वृ॒त्र॒ऽहत्ये॑। शि॒वः। भूः॒। सखा॑। च॒। शूरः॑। अ॒वि॒ता। च॒। नृ॒णाम्॥१०॥

पदार्थः-(**एते**) (**स्तोमाः**) प्रशंसनीया विद्वांसोऽध्येतारश्च (**नराम्**) नायकानाम् (नृणां) मध्ये (**नृतम**) अतिशयेन नायक (**तुभ्यम्**) (**अस्मद्र्यञ्चः**) येऽस्मानञ्चन्ति प्राप्नुवन्ति ते (**ददतः**) (**मघानि**) विद्याधनादीनि (**तेषाम्**) (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्ययुक्त राजन् (**वृत्रहत्ये**) मेघहनन इव स-ग्रामे (**शिवः**) मङ्गलकारी (**भूः**) भव। अत्राडभावः। (**सखा**) सुहृत् (**च**) (**शूरः**) शत्रूणां हन्ता (**अविता**) रक्षकः (**च**) (**नृणाम्**) मनुष्याणाम्॥१०॥

अन्वयः- हे नरां नृतमेन्द्र! य एत अस्मद्र्यञ्चः स्तोमास्तुभ्यं मघानि ददतस्तेषां नृणां वृत्रहत्ये सूर्य इवाऽविता शिवः सखा च शूरश्च त्वं भूः॥१०॥

भावार्थः- हे राजन्! यदि भवान् विदुषां रक्षां कृत्वा तेभ्य उपकारं गृह्णीयात्तर्हि का कोन्नतिर्न स्यात्॥१०॥

पदार्थः-हे (**नराम्**) नायक मनुष्यों के बीच (**नृतम**) अतीव नायक (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त राजा! जो (**एते**) ये (**अस्मद्र्यञ्चः**) हम लोगों को प्राप्त होते हुए (**स्तोमाः**) प्रशंसनीय विद्वान् और पढ़ने वाले (**तुभ्यम्**) तुम्हारे लिये (**मघानि**) विद्याधनों को (**ददतः**) देते हैं (**तेषाम्**) उन (**नृणाम्**) मनुष्यों के (**वृत्रहत्ये**) मेघों के हनन करने के समान संग्राम में सूर्य के समान (**अविता**) रक्षा करने वाले (**शिवः**) मंगलकारी (**सखा, च**) और मित्र (**शूरः**) शत्रुओं के मारने वाले (**च**) भी आप (**भूः**) हूजिये॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप विद्वानों की रक्षा करके उनसे उपकार लें तो कौन-कौन उन्नति न हो॥१०॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजा विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

नू इ॑न्द्र शूर॒ स्तव॑मान ऊ॒ती ब्रह्म॑जूतस्त॒न्वा॑ वावृधस्व।
उप॑ नो॒ वाजा॑न् मिमीह्यु॒प स्तीन् यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभिः॒ सदा॑ नः॥११॥३०॥२॥

नु। इ॒न्द्र॒। शू॒र॒। स्तव॑मानः। ऊ॒ती। ब्रह्म॑ऽजूतः। त॒न्वा॑। व॒वृ॒ध॒स्व॒। उप॑। नः॒। वाजा॑न्। मि॒मी॒हि॒। उप॑। स्तीन्। यू॒यम्। पा॒त॒। स्व॒स्तिऽभिः॑। सदा॑। नः॒॥११॥

पदार्थः-(**नू**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**इन्द्रः**) शत्रूणां विदारक (**शूर**) निर्भय सेनेश (**स्तवमानः**) सर्वान् योद्धॄन् वीररसयुक्तव्याख्यानेनोत्साहयन् (**ऊती**) सम्यग्रक्षया (**ब्रह्मजूतः**) ब्रह्मणा धनेनान्नेन युक्तः (**तन्वा**) शरीरेण (**वावृधस्व**) भृशं वर्धस्व (**उप**) (**नः**) अस्मान् (**वाजान्**)

बलवेगादियुक्तान् **(मिमीहि)** मान्यं कुरु **(उप)** **(स्तीन्)** संहतान् मिलितान् **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** सुखैः **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥११॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! त्वं स्तवमानो ब्रह्मजूत ऊती तन्वा वावृधस्व स्तीन् वाजान्न उपमिमीहि नु सद्यः शत्रुबलमुपमिमीहि। हे भृत्या! यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥११॥

भावार्थः-हे सेनेश! त्वं यथा स्वशरीरबलं वर्धयसि तथैव सर्वेषां योद्धृणां शरीरबलं वर्धय, यथा भृत्यास्त्वां रक्षेयुस्तथा त्वमप्येतान् सततं रक्षेति॥११॥

अत्रेन्द्रदृष्टान्तेन राजसभासेनेशाऽध्यापकाऽध्येतृराजप्रजाभृत्यकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

अस्मिन्नध्यायेऽग्निवाग्विद्वद्राजप्रजाऽध्यापकाऽध्येतृपृथिव्यादिमेधाविविद्युत्सूर्य्यमेघयज्ञहोतृयजमान-सेनासेनापतिगुणकृत्यवर्णनादेतदध्यायार्थस्य पूर्वाऽध्यायार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदे पञ्चमाष्टके द्वितीयोऽध्यायस्त्रिंशो वर्गः सप्तमे मण्डल एकोनविंशं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(शूर)** निर्भय सेनापति **(इन्द्र)** शत्रुओं के विदीर्ण करने वाले! आप **(स्तवमानः)** सब युद्ध करने वालों को वीररस व्याख्यान से उत्साहित करते हुए और **(ब्रह्मजूतः)** धन वा अन्न से संयुक्त **(ऊती)** सम्यक् रक्षा से **(तन्वा)** शरीर से **(वावृधस्व)** निरन्तर बढ़ो **(स्तीन्)** और मिले हुए **(वाजान्)** बल वेगादियुक्त **(नः)** हम लोगों का **(उपमिमीहि)** समीप में मान करो तथा **(नु)** शीघ्र शत्रुबल को **(उप)** उपमान करो, हे भृत्य जनो! **(यूयम्)** तुम लोग **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदा **(पात)** रक्षा करो॥११॥

भावार्थः-हे सेनापति! तुम जैसे अपने शरीर और बल को बढ़ाओ, वैसे ही समस्त योद्धाओं के शरीर-बल को बढ़ाओ। जैसे भृत्यजन तुम्हारी रक्षा करें, वैसे तुम भी इनकी निरन्तर रक्षा करो॥११॥

इस सूक्त में इन्द्र के दृष्टान्त से राजसभा, सेनापति, अध्यापक, अध्येता, राजा, प्रजा और भृत्यजनों के काम का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

इस अध्याय में अग्नि, वाणी, विद्वान्, राजा, प्रजा, अध्यापक, अध्येता, पृथिवी आदि, मेधावी, बिजुली, सूर्य, मेघ, यज्ञ, होता, यजमान, सेना और सेनापति के गुण कर्मों का वर्णन होने से इस अध्याय के अर्थ की इससे पूर्व अध्याय के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह ऋग्वेद के पञ्चम अष्टक में दूसरा अध्याय और तीसवां वर्ग, सातवां मण्डल और उन्नीसवां सूक्त पूरा हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चमाष्टके तृतीयोऽध्यायः॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ दशर्चस्य विंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ स्वराट् पङ्क्तिः। ७ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ४, १० निचृत्त्रिष्टुप्। ३, ५ विराट्त्रिष्टुप्। ६, ८, ९ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ कीदृशो राजा श्रेष्ठः स्यादित्याह॥

अब पञ्चमाष्टक के तीसरे अध्याय तथा दश ऋचा वाले बीसवें सूक्त का आरम्भ है, जिसके पहले मन्त्र में कैसा राजा श्रेष्ठ हो, इस विषय को कहते हैं॥

उ॒ग्रो ज॑ज्ञे वी॒र्या॑य स्व॒धावा॑न् चक्रि॒रपो॑ नर्यो॒ यत्क॑रि॒ष्यन्।
जग्मि॒र्युवा॑ नृषद॑न॒मवो॑भिस्त्रा॒ता न॒ इन्द्र॒ एन॑सो म॒हश्चि॑त्॥१॥

उ॒ग्रः। ज॒ज्ञे। वी॒र्या॑य। स्व॒धाऽवा॑न्। चक्रिः॑। अपः॑। नर्यः॑। यत्। क॒रि॒ष्यन्। जग्मिः॑। युवा॑। नृ॒ऽसद॑नम्। अवः॑ऽभिः। त्रा॒ता। नः॒। इन्द्रः॑। एन॑सः। म॒हः। चि॒त्॥१॥

पदार्थः-(**उग्रः**) तेजस्वी (**जज्ञे**) जायते (**वीर्याय**) पराक्रमाय (**स्वधावान्**) बहुधनधान्ययुक्तः (**चक्रिः**) कर्ता (**अपः**) जलानि (**नर्यः**) नृषु साधुः (**यत्**) यः (**करिष्यन्**) (**जग्मिः**) गन्ता (**युवा**) प्राप्तयौवनः (**नृषदनम्**) नृणां स्थानम् (**अवोभिः**) रक्षादिभिः (**त्राता**) रक्षकः (**नः**) अस्मानस्माकं वा (**इन्द्रः**) सूर्य इव राजा (**एनसः**) पापाचरणात् (**महः**) महतः (**चित्**) इव॥१॥

अन्वयः-यद्यो नर्यः स्वधावाञ्चक्रिरुग्रो युवा नृषदनं जग्मिरवोभिः पालनं करिष्यँस्त्राता सूर्योऽपश्चिदिवेन्द्रो वीर्याय जज्ञे मह एनसो नोऽस्मान् पृथग्रक्षति स एव राजा भवितुं योग्यः॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो मनुष्याणां हितकारी पितृवत्पालक उपदेशकवत्पापाचरणात् पृथक्कर्त्ता सभायां स्थित्वा न्यायकर्त्ता धनैश्वर्यपराक्रमांश्च सततं वर्धयति तमेव सर्वे मनुष्या राजानं मन्यन्ताम्॥१॥

पदार्थः-(**यत्**) जो (**नर्यः**) मनुष्यों में साधु उत्तम जन (**स्वधावान्**) बहुत धनधान्य से युक्त (**चक्रिः**) करने वाला (**उग्रः**) तेजस्वी (**युवा**) जवान मनुष्य (**नृषदनम्**) मनुष्यों के स्थान को (**जग्मिः**) जाने वाला (**अवोभिः**) रक्षा आदि से पालना (**करिष्यन्**) करता हुआ (**त्राता**) रक्षा करने वाला सूर्य जैसे (**अपः**) जलों को (**चित्**) वैसे (**इन्द्रः**) राजा (**वीर्याय**) पराक्रम के लिये (**जज्ञे**) उत्पन्न हो और (**महः**) महान् (**एनसः**) पापाचरण से (**नः**) हम लोगों को अलग रखता है, वही राजा होने के योग्य हैं॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्यों का हितकारी पिता के समान पालने और उपदेश करने वाले के समान पापाचरण से अलग रखने वाला, सभा में स्थित होकर न्यायकर्ता तथा धन, ऐश्वर्य और पराक्रम को निरन्तर बढ़ाता है, उसी को सब मनुष्य राजा मानें॥१॥

पुनः स कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हन्ता वृत्रमिन्द्रः शूशुवानः प्रावीन्नु वीरो जरितारमूती।
कर्ता सुदासे अह वा उ लोकं दाता वसु मुहुरा दाशुषे भूत्॥२॥

हन्ता। वृत्रम्। इन्द्रः। शूशुवानः। प्र। आवीत्। नु। वीरः। जरितारम्। ऊती। कर्ता। सुऽदासे। अह। वै। ॐ इति। लोकम्। दाता। वसु। मुहुः। आ। दाशुषे। भूत्॥२॥

पदार्थः-(**हन्ता**) शत्रूणां घातकः (**वृत्रम्**) मेघमिव (**इन्द्रः**) सूर्य इव राजा (**शूशुवानः**) भृशं वर्धमानः (**प्र**) (**आवीत्**) प्रकर्षेण रक्षेत् (**नु**) शीघ्रम् (**वीरः**) शुभगुणकर्मस्वभावव्यापकः (**जरितारम्**) गुणानां प्रशंसकम् (**ऊती**) रक्षया (**कर्त्ता**) (**सुदासे**) सुष्ठु दात्रे (**अह**) विनिग्रहे (**वै**) निश्चये (**उ**) अद्भुते (**लोकम्**) दर्शनं द्रष्टव्यं जन्मान्तरे लोकान्तरं वा (**दाता**) (**वसु**) द्रव्यम् (**मुहुः**) वारंवारम् (**आ**) (**दाशुषे**) दानशीलाय (**भूत्**) भवेत्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! इन्द्रो वृत्रमिव यः शत्रूणमह नु हन्ता शूशुवानो वीरः कर्त्ता वसु दाता सुदासेऽहोती जरितारमु लोकं मुहुः प्रावीद्दाशुषे मुहुरा भूत् स वै राज्यकरणाय श्रेष्ठः स्यात्॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। य आशुकारी सूर्यवद्विद्याविनयप्रकाशेन दुष्टनिवारकः शूरवीरः सन् सुपात्रेभ्यो यथायोग्यं ददद् बहुसुखं प्राप्नुयात्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**इन्द्रः**) सूर्य जैसे (**वृत्रम्**) मेघ को, वैसे जो शत्रुओं का (**अह**) निग्रह कर अर्थात् पकड़-पकड़ (**नु**) शीघ्र (**हन्ता**) घात करने वाला राजा (**शूशुवानः**) निरन्तर बढ़ते हुए (**वीरः**) शुभ गुण-कर्म-स्वभावों में व्याप्त (**कर्त्ता**) दृढ़ कार्य करने वाले और (**वसु, दाता**) धन के देने वाले (**सुदासे**) सुन्दर दानशील के लिये ही (**ऊती**) रक्षा से (**जरितारम्**) गुणों की प्रशंसा करने वाले (**उ**) अद्भुत (**लोकम्**) अन्य जन्म में देखने योग्य वा अन्य लोक को (**मुहुः**) वार-वार (**प्र, आवीत्**) उत्तम रक्षा करे (**दाशुषे**) दानशील के लिये वार-वार (**आ, भूत्**) प्रसिद्ध हो (**वै**) वही राज्य करने के लिये श्रेष्ठ हो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो शीघ्रकारी, सूर्य के समान विद्या और विनय के प्रकाश से दुष्टों का निवारण करने वाला शूरवीर होता हुआ अच्छे सुपात्रों के लिये यथायोग्य पदार्थ देता हुआ बहुत सुख को प्राप्त हो॥२॥

पुनः स कीदृशो भूत्वा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह कैसा होकर क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

युध्मो अनर्वा खजकृत्समद्वा शूरः सत्राषाड् जनुषेमषाळ्हः।

व्यासु इन्द्रः पृतनाः स्वोजा अधा विश्वं शत्रूयन्तं जघान॥३॥

युध्मः। अनर्वा। खजऽकृत्। समत्ऽवा। शूरः। सत्राषाट्। जनुषा। ईम्। अषाळ्हः। वि। आसे। इन्द्रः। पृतनाः। सुऽओजाः। अध। विश्वम्। शत्रुऽयन्तम्। जघान॥३॥

पदार्थः-(**युध्मः**) योद्धा (**अनर्वा**) अविद्यमाना अश्वा यस्य सः (**खजकृत्**) यः खजं सङ्ग्रामं करोति सः। **खज इति सङ्ग्रामनाम।** (निघं०२.१७) (**समद्वा**) यो मदेन सह वर्त्तमानान् वनति सम्भजति सः (**शूरः**) शत्रूणां हिंसकः (**सत्राषाट्**) यः सत्राणि बहून् यज्ञान् कर्त्तुं सहते (**जनुषा**) जन्मना (**ईम्**) सर्वतः (**अषाळ्हः**) यः शत्रुभिः सोढुमशक्यः (**वि**) (**आसे**) मुखे (**इन्द्रः**) विद्युदिव (**पृतनाः**) सेना मनुष्यान् वा (**स्वोजाः**) शोभनमोजः पराक्रमोऽन्नं वा यस्य सः (**अध**) अथ (**विश्वम्**) सर्वम् (**शत्रूयन्तम्**) शत्रून् कामयमानम् (**जघान**) हन्यात्॥३॥

अन्वयः-यो राजेन्द्रो जनुषा स्वोजा युध्मोऽनर्वाऽषाळ्हः खजकृत्समद्वा शूरः सत्राषाडषाळ्हः पृतनाः स्वसेनाः पालयेदध व्यासे विश्वं शत्रूयन्तमीं जघान स एव शत्रून् विजेतुं शक्नुयात्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो वरराजगुणसहितो दीर्घेण ब्रह्मचर्येण द्वितीयजन्मनः कर्ता पूर्णबलपराक्रमो धार्मिकः स्यात् स सूर्य्यवद्दुष्टाञ्छत्रूनन्यायान्धकारं निवारयेत्स एव सर्वेषामानन्दप्रदो भवेत्॥३॥

पदार्थः-जो राजा (**इन्द्रः**) बिजुली के समान (**जनुषा**) जन्म से (**स्वोजाः**) शुभ अन्न वा पराक्रम जिसके विद्यमान (**युध्मः**) जो युद्ध करने वाला (**अनर्वा**) जिसके घोड़े विद्यमान नहीं जो (**अषाळ्हः**) शत्रुओं से न सहने योग्य (**खजकृत्**) सङ्ग्राम करने वाला (**समद्वा**) जो मत्त प्रमत्त मनुष्यों को सेवता (**शूरः**) शत्रुओं को मारता (**सत्राषाट्**) जो यज्ञों के करने को सहता और (**पृतनाः**) अपनी सेनाओं को पाले (**अध**) इसके अनन्तर (**वि, आसे**) विशेषता से मुख के सम्मुख (**विश्वम्**) सब (**शत्रूयन्तम्**) शत्रुओं की कामना करने वाले को (**ईम्**) सब ओर से (**जघान**) मारे वही शत्रुओं को जीत सके॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! श्रेष्ठ राजगुणों सहित, दीर्घ ब्रह्मचर्य्य से द्वितीय जन्म अर्थात् विद्या जन्म का कर्त्ता, पूर्ण बल पराक्रमयुक्त, धार्मिक हो वह सूर्य के समान दुष्ट शत्रुओं को अन्यायरूपी अन्धकार को निवारे, वही सब का आनन्द देने वाला हो॥३॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उभे चिदिन्द्र रोदसी महित्वा पप्राथ तविषीभिस्तुविष्मः।

नि वज्रमिन्द्रो हरिवान् मिमिक्षन्त्समन्धसा मदेषु वा उवोच॥४॥

उभे इति। चित्। इन्द्र। रोदसी इति। महिऽत्वा। आ। पप्राथ। तविषीभिः। तुविष्मः। नि। वज्रम्। इन्द्रः। हरिऽवान्। मिमिक्षन्। सम्। अन्धसा। मदेषु। वै। उवोच॥४॥

पदार्थः-(**उभे**) द्वे (**चित्**) इव (**इन्द्र**) सूर्यवद्राजन् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**महित्वा**) सत्कारं प्राप्य (**आ**) समन्तात् (**पप्राथ**) प्रति व्याप्नोति (**तविषीभिः**) बलिष्ठाभिः सेनाभिः (**तुविष्मः**) बहुबलयुक्तः (**नि**) (**वज्रम्**) शस्त्रास्त्रम् (**इन्द्रः**) वीरपुरुषराजा (**हरिवान्**) बहुमनुष्ययुक्तः (**मिमिक्षन्**) सुखैः सेक्तुमिच्छन् (**सम्**) (**अन्धसा**) अन्नादिना (**मदेषु**) आनन्देषु (**वै**) निश्चयेन (**उवोच**) उच्यात्॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमुभे रोदसी चिदिव महित्वा तविषीभिरा पप्राथ तुविष्मः सन् हरिवानन्धसा सं नि मिमिक्षन् वज्रं धृत्वा य इन्द्रो मदेषूवोच स वै राज्यं कर्त्तुमर्हेत्॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा भूमिसूर्यौ महत्त्वेन सर्वानभि व्याप्य जलान्नाभ्यां सर्वानार्द्रीकृतं जगत्सुखयतस्तथैव राजा विद्याविनयाभ्यां सत्यमुपदिश्य सर्वाः प्रजाः सततमुन्नयेत्॥४॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सूर्य के समान वर्त्तमान राजा! आप (**उभे**) दो (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी (**चित्**) के समान (**महित्वा**) सत्कार पाके (**तविषीभिः**) बलिष्ठ सेनाओं से (**आ, पप्राथ**) निरन्तर व्याप्त होता और (**तुविष्मः**) बहुत बलयुक्त होता हुआ (**हरिवान्**) बहुत मनुष्यों से युक्त (**अन्धसा**) अन्नादि पदार्थ से (**सम्, नि, मिमिक्षन्**) प्रसिद्ध सुखों से निरन्तर सीचने की इच्छा करता हुआ (**वज्रम्**) शस्त्र अस्त्रों को धारण कर जो (**इन्द्रः**) वीर पुरुष राजा (**मदेषु**) आनन्दों के निमित्त (**उवाच**) कहे (**वै**) वही राज्य करने को योग्य हो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे भूमि और सूर्य बड़प्पन से सब को व्याप्त होकर जल और अन्न से सब को और गीले किये हुए जगत् को सुखी करते हैं, वैसे ही राजा विद्या और विनय से सत्य का उपदेश कर सब प्रजाजनों की निरन्तर उन्नति करे॥४॥

उत्पन्नो मनुष्यः कीदृशो भूत्वा शक्तिमाञ्जायत इत्याह॥

उत्पन्न हुआ मनुष्य कैसा होकर सामर्थ्यवान् होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वृषा जजान वृषणं रणाय तमु चिन्नारी नर्यं ससूव।

प्र यः सेनानीरध नृभ्यो अस्तीनः सत्वा गवेषणः स धृष्णुः॥५॥ १॥

वृषा। जजान। वृषणम्। रणाय। तम्। ऊँ इति। चित्। नारी। नर्यम्। ससूव। प्र। यः। सेनाऽनीः। अध। नृऽभ्यः। अस्ति। इनः। सत्वा। गोऽएषणः। सः। धृष्णुः॥५॥

पदार्थः-(**वृषा**) वर्षकः (**जजान**) जनयेत् (**वृषणम्**) बलिष्ठं योद्धारम् (**रणाय**) स-ग्रामाय (**तम्**) (**उ**) (**चित्**) (**नारी**) नरस्य स्त्री (**नर्यम्**) नृषु बलिष्ठम् (**ससूव**) जनयति (**प्र**) (**यः**) (**सेनानीः**) यः सेनां नयति सः (**अध**) अनन्तरम् (**नृभ्यः**) सेनानायकेभ्यः (**अस्ति**) (**इनः**) ईश्वर इव (**सत्वा**) बलवान् (**गवेषणः**) उत्तमवाग्विद्यान्वेषी (**सः**) (**धृष्णुः**) धृष्टः प्रगल्भः॥५॥

अन्वयः-यो वृषा सेनानीः सत्वा गवेषणो नृभ्यो धृष्णुर्जजान स इन इव रणाय प्रताप्यस्ति अध यमु नर्यं वृषणं वृषा नारी च प्र ससूव तं चिज्जना न्यायकारिणं मन्यन्ते॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यं स्त्रीपुरुषौ दीर्घं ब्रह्मचर्यं संसेव्य जनयतः स

पुरुषो जगदीश्वरवत्सर्वान् न्यायेन पालयितुं शक्तो भूत्वा सेनाऽधिपः शत्रून्विजेतुं सदा प्रभुर्भवति॥५॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**वृषा**) वर्षा करने (**सेनानीः**) सेना को पहुँचाने (**सत्वा**) बलवान् (**गवेषणः**) और उत्तम वाणी विद्या का ढूंढने वाला (**नृभ्यः**) सेना नायकों से (**धृष्णुः**) धृष्ट प्रगल्भ (**जजान**) उत्पन्न हो (**सः**) वह (**इनः**) ईश्वर के समान (**रणाय**) संग्राम के लिये प्रतापी (**अस्ति**) है (**अध**) इसके अनन्तर जिस (**उ**) ही (**नर्यम्**) मनुष्यों में (**वृषणम्**) बलिष्ठ योद्धा पुत्र को वर्षा करने वाला पुरुष और (**नारी**) स्त्री (**प्र, सुसूव**) उत्पन्न करते हैं (**तम्, चित्**) उसी को जन न्यायकारी मानते हैं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिसको स्त्रीपुरुष दीर्घ ब्रह्मचर्य्य का सेवन कर उत्पन्न करते हैं, वह पुरुष जगदीश्वरवत् सब को न्याय से पालने को समर्थ होकर सेनाधिप हुआ शत्रुओं के जीतने को सदा समर्थ होता है॥५॥

पुनर्मनुष्याः किं कृत्वा कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करके कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू चित्स भ्रेषते जनो न रेषन्मनो यो अस्य घोरमाविवासात्।
यज्ञैर्य इन्द्रे दधते दुवांसि क्षयत्स राय ऋतपा ऋतेजाः॥६॥

नु। चित्। सः। भ्रेषते। जनः। न। रेषत्। मनः। यः। अस्य। घोरम्। आऽविवासात्। यज्ञैः। यः। इन्द्रे। दधते। दुवांसि। क्षयत्। सः। राये। ऋतऽपाः। ऋतेऽजाः॥६॥

पदार्थः-(**नू**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघे**ति दीर्घः। (**चित्**) अपि (**सः**) (**भ्रेषते**) प्राप्नोति (**जनः**) मनुष्यः (**न**) निषेधे (**रेषत्**) हिनस्ति (**मनः**) अन्तःकरणम् (**यः**) (**अस्य**) (**घोरम्**) (**आविवासात्**) समन्तात्सेवेत (**यज्ञैः**) सङ्गतैः कर्मभिः (**यः**) (**इन्द्रे**) परमैश्वर्ययुक्ते परमेश्वरे (**दधते**) धरति (**दुवांसि**) परिचरणानि सेवनानि (**क्षयत्**) निवसेत् (**सः**) (**राये**) धनाय (**ऋतपाः**) सः सत्यं पाति सः (**ऋतेजाः**) यः सत्ये जायते सः॥६॥

अन्वयः-यो जनोऽस्य घोरं मनो नाऽऽविवासात् स चिन्नु विजयं भ्रेषते स न रेषत्। य ऋतपा ऋतेजा यज्ञैरिन्द्रे दुवांसि दधते स राये सततं क्षयत्॥६॥

भावार्थः-ये रागद्वेषरहितमनसो घोरकर्मविरहाः परमेश्वरसेवका धर्मात्मानो जनाः स्युस्ते कदाचिद्धिंसिता न स्युः॥६॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**जनः**) मनुष्य (**अस्य**) इसके (**घोरम्**) घोर (**मनः**) अन्तःकरण को (**न**) [नहीं] (**आविवासात्**) सेवे (**सः, चित्**) वही (**नु**) शीघ्र विजय को (**भ्रेषते**) पाता और वह नहीं (**रेषत्**) हिंसा करता है (**यः**) जो (**ऋतपाः**) जो सत्य की पालना करने और (**ऋतेजाः**) सत्य में उत्पन्न अर्थात् प्रसिद्ध होने वाला (**यज्ञैः**) मिले हुए कर्मों से (**इन्द्रे**) परमैश्वर्ययुक्त परमेश्वर में (**दुवांसि**) सेवनों को (**दधते**) धारण करता (**सः**) वह (**राये**) धन के लिये निरन्तर (**क्षयत्**) वसे॥५॥

भावार्थः-जो रागद्वेषरहित मन वाले, घोरकर्मरहित, परमेश्वर के सेवक, धर्मात्मा जन हों वे

कभी नष्ट न हों॥६॥

पुनर्विद्वांसोऽन्यान् प्रति कथमुपकारिणो भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् अन्य जनों के प्रति कैसे उपकारी हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यदिन्द्र पूर्वो अपराय शिक्षन्नयज्ज्यायान् कनीयसो देष्णम्।
अमृत इत्पर्यासीत दूरमा चित्र चित्र्यं भरा रयिं नः॥७॥

यत्। इन्द्र। पूर्वः। अपराय। शिक्षन्। अयत्। ज्यायान्। कनीयसः। देष्णम्। अमृतः। इत्। परि। आसीत। दूरम्। आ। चित्र। चित्र्यम्। भर। रयिम्। नः॥७॥

पदार्थः-(**यत्**) यः (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**पूर्वः**) (**अपराय**) अन्यस्मै (**शिक्षन्**) विद्याग्रहणं कारयन् (**अयत्**) प्राप्नोति (**ज्यायान्**) अतिशयेन ज्येष्ठः (**कनीयसः**) अतिशयेन कनिष्ठात् (**देष्णम्**) दातुं योग्यम् (**अमृतः**) नाशरहितः (**इत्**) एव (**परि**) सर्वतः (**आसीत**) (**दूरम्**) (**आ**) (**चित्र**) अद्भुतकर्मकारिन् (**चित्र्यम्**) चित्रेष्वद्भुतेषु भवम् (**भर**) धर। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**रयिम्**) धनम् (**नः**) अस्मभ्यम्॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यद्यः पूर्वोऽपराय ज्यायान् कनीयसो देष्णं शिक्षन्नयत्। हे चित्र! योऽमृत इत् आत्मना नित्यो योगी दूरं पर्यासीत तेन सहितस्त्वं नश्चित्र्यं रयिमा भर॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! ये पूर्वं विद्वांसो भूत्वा विद्यार्थिनः शिक्षयन्ति ये ज्येष्ठा कनिष्ठान्प्रति पितृवद्वर्त्तन्ते ये च योगिनः परमात्मानं समाधिनाऽऽत्मनि संस्थाप्य साक्षात्कृत्याऽन्यानुपदिशन्ति तदर्थं त्वं शरीरं मनो धनं च धर॥७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परमैश्वर्य के देने वाले (**यत्**) जो (**पूर्वः**) प्रथम (**अपराय**) और के लिये (**ज्यायान्**) अतीव वृद्ध वा श्रेष्ठ जन (**कनीयसः**) अत्यन्त कनिष्ठ से (**देष्णम्**) देने योग्य की (**शिक्षन्**) शिक्षा अर्थात् विद्या ग्रहण कराता हुआ (**अयत्**) प्राप्त होता वा हे (**चित्र**) अद्भुत कर्म करने वाले! जो (**अमृतः, इत्**) नाशरहित ही आत्मा से नित्य योगी (**दूरम्**) दूर (**पर्यासीत**) सब ओर से स्थित हो उसके साथ आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**चित्र्यम्**) अद्भुत-अद्भुत कर्मों में हुए (**रयिम्**) धन को (**आ, भर**) अच्छे प्रकार धारण कीजिये॥७॥

भावार्थः-हे राजा! जो पहिले विद्वान् होकर विद्यार्थियों को शिक्षा देते हैं वा जो ज्येष्ठ कनिष्ठों के प्रति पिता के समान वर्त्ताव रखते हैं वा जो योगी जन परमात्मा को समाधि से अपने आत्मा में अच्छे प्रकार आरोप के औरों को उपदेश देते हैं, उनके लिये तुम शरीर, मन और धन को धारण करो॥७॥

पुना राजभृत्यप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा, भृत्य और प्रजाजन परस्पर कैसे वर्त्ताव करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्त इन्द्र प्रियो जनो ददाशदसन्निरेके अद्रिवः सखा ते।

वयं ते अस्यां सुमतौ चनिष्ठाः स्याम वरूथेह अघ्नतो नृपीतौ॥८॥

यः। ते। इन्द्र। प्रियः। जनः। ददाशत्। असत्। निरेके। अद्रिऽवः। सखा। ते। वयम्। ते। अस्याम्। सुऽमतौ। चनिष्ठाः। स्याम। वरूथे। अघ्नतः। नृऽपीतौ॥८॥

पदार्थः-(**यः**) (**ते**) तव (**इन्द्र**) विद्वन् (**प्रियः**) यः पृणाति सः (**जनः**) मनुष्यः (**ददाशत्**) दाशेत् (**असत्**) भवेत् (**निरेके**) निःशङ्के व्यवहारे (**अद्रिवः**) अद्रयो मेघा विद्यन्ते यस्य सूर्यस्य तद्वद्वर्त्तमान (**सखा**) मित्रः (**ते**) तव (**वयम्**) (**ते**) तव (**अस्याम्**) (**सुमतौ**) शोभनायां सम्मतौ (**चनिष्ठाः**) नृभिर्या पीयते रक्ष्यते तस्याम् (**स्याम**) (**वरूथे**) गृहे (**अघ्नतः**) अहिंसकस्य (**नृपीतौ**) नृभिर्या पीयते रक्ष्यते तस्याम्॥८॥

अन्वयः-हे अद्रिव इन्द्र! यः प्रियो जनः सखा निरेकेऽसत्सुखं ददाशद्यस्य तेऽस्यां नृपीतौ सुमतौ वयं चनिष्ठाः स्यामाऽघ्नतस्ते तव वरूथे चनिष्ठाः स्याम तौ द्वौ माननीयौ वयं सत्कुर्याम॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! यस्य नीतिज्ञस्य ते ये नीतिमन्तस्त एव प्रिया सन्तु भवाँश्च तेषामेव प्रियो भवेदेवं परस्परं सुहृदो भूत्वैकमत्यं विधाय सततमुन्नतिं त्वं विधेहि॥८॥

पदार्थः-हे (**अद्रिवः**) मेघों वाले सूर्य के समान वर्तमान (**इन्द्र**) विद्वान्! (**यः**) जो (**प्रियः**) प्रसन्न करने वाला (**जनः**) मनुष्य (**सखा**) मित्र (**निरेके**) निःशंक व्यवहार में (**असत्**) हो और सुख (**ददाशत्**) दे जिन (**ते**) आपके (**अस्याम्**) इस (**नृपीतौ**) मनुष्यों से जो रक्षा की जाती उसमें और (**सुमतौ**) अच्छी सम्मति में (**वयम्**) हम लोग (**चनिष्ठाः**) अत्यन्त अन्नादि ऐश्वर्ययुक्त (**स्याम**) हों और (**अघ्नतः**) अहिंसक जो (**ते**) तुम उनके (**वरूथे**) घर में प्रसिद्ध हों उन मान करने योग्य दो को हम सत्कार युक्त करें॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! जिस नीतिज्ञ आपके जो नीतिमान् जन हैं वे ही प्रिय हों और आप भी उन्हीं के प्रिय हूजिये, ऐसे परस्पर सुहृद् होकर एक सम्मति कर निरन्तर आप उन्नति कीजिये॥८॥

पुनर्मनुष्याः किं कृत्वा किं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करके किसको प्राप्त हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एष स्तोमो अचिक्रदद् वृषा त उत स्तामुर्मघवन्नक्रपिष्ट।
रायस्कामो जरितारं त आगन् त्वमङ्ग शक्र वस्व आ शको नः॥९॥

एषः। स्तोमः। अचिक्रदत्। वृषा। ते। उत। स्तामुः। मघऽवन्। अक्रऽपिष्ट। रायः। कामः। जरितारम्। ते। आ। अगन्। त्वम्। अङ्ग। शक्र। वस्वः। आ। शकः। नः॥९॥

पदार्थः-(**एषः**) (**स्तोमः**) प्रशंसनीयः (**अचिक्रदत्**) आह्वयेत् (**वृषा**) बलिष्ठः (**ते**) तव (**उत**) (**स्तामुः**) स्तावकः (**मघवन्**) बहुधनयुक्त (**अक्रपिष्ट**) कल्पते (**रायः**) श्रियः (**कामः**) कामनामभिलाषां कुर्वाणः (**जरितारम्**) स्तोतारम् (**ते**) तुभ्यम् (**आ**) (**अगन्**) समन्तात्प्राप्नोतु (**त्वम्**) (**अङ्ग**) सखे (**शक्र**) शक्तिमन् (**वस्वः**) धनानि (**आ**) (**शकः**) समन्ताच्छक्नुहि (**नः**) अस्मान्॥९॥

अन्वयः-हे शक्राऽङ्ग पुरुषार्थि राजन्! य एष ते स्तोम उत वृषाऽचिक्रदत्। हे मघवँस्तामुरक्रपिष्ट ते यो रायस्कामो जरितारं त्वामागन् स त्वं नो वस्व आ शकः॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं यदि शक्तिं वर्धयित्वा धर्म्येण कर्मणैश्वर्यादिप्राप्तेरभिलाषां वर्धयेयुस्तर्हि युष्मान् पुष्कलमैश्वर्यं प्राप्नुयात्॥९॥

पदार्थः-हे **(शक्र)** शक्तिमान् **(अङ्ग)** मित्र पुरुषार्थी राजन्! जो **(एषः)** यह **(ते)** आपका **(स्तोमः)** प्रशंसा करने योग्य **(उत)** और **(वृषा)** बलिष्ठ जन **(अचिक्रदत्)** बुलावे वा हे **(मघवन्)** बहुत धनयुक्त! **(स्तामुः)** स्तुति करने वाला जन **(अक्रपिष्ट)** समर्थ होता है वा **(ते)** तुम्हारे लिये जो **(रायः)** धन की **(कामः)** कामना करने वाला **(जरितारम्)** स्तुति करने वाले आपको **(आ, अगन्)** सब ओर से प्राप्त हो वह **(त्वम्)** आप **(नः)** हमारे **(वस्वः)** धनों को **(आ, शकः)** सब ओर से सह सको॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम जो शक्ति को बढ़ा कर धर्म कर्म से ऐश्वर्य आदि की प्राप्ति की अभिलाषा बढ़ाओ तो तुमको पुष्कल ऐश्वर्य प्राप्त हो॥९॥

पुनर्मनुष्याः कथं प्रयतेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे प्रयत्न करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

स नं इन्द्र त्वयंताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति।
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥१०॥२॥

सः। नः। इन्द्रः। त्वऽयंतायै। इषे। धाः। त्मनां। च। ये। मघऽवानः। जुनन्ति। वस्वी। सु। ते। जरित्रे। अस्तु। शक्तिः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥१०॥

पदार्थः-**(सः)** **(नः)** अस्मान् **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त राजन् **(त्वयतायै)** यया स्वस्मिन् यतते तस्यै **(इषे)** अन्नाद्यायै **(धाः)** धेहि **(त्मना)** आत्मना **(च)** **(ये)** **(मघवानः)** प्रशंसित धनाः **(जुनन्ति)** गच्छन्ति **(वस्वी)** धनसम्बन्धिनी **(सु)** **(ते)** तुभ्यम् **(जरित्रे)** सत्यप्रशंसकाय **(अस्तु)** **(शक्तिः)** सामर्थ्यम् **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** सुखैः **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यसत्वं त्मना त्वयताया इषे नो धा ये च मघवान एतस्यै त्वां जुनन्ति स त्वमुद्योगी भव यतो जरित्रे ते वस्वी शक्तिरस्तु। हे अस्माकं सम्बन्धिनौ! यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा सु पात॥१०॥

भावार्थः-त एव श्रीकरा जना भवन्ति य आलस्यं त्याजयित्वा पुरुषार्थेन सह योजयन्ति। ये ब्रह्मचर्यमाचरन्ति तेषामैश्वर्यप्रापकं सामर्थ्यं जायते येऽन्योऽन्यस्य रक्षां विदधति ते सदा सुखिनो भवन्तीति॥१०॥

अत्र राजसूर्य्ययोधृबलिष्ठसेनापतिसेवकाऽध्यापकाऽध्येतृमित्रदातृरचककृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य सूक्तस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति विंशतितमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त राजा जो आप **(त्मना)** आत्मा से **(त्वयतायै)** जिससे अपने

में यत्न होता है उस **(इषे)** अन्न आदि सामग्री के लिये **(नः)** हम लोगों को **(धाः)** धारण कीजिये **(ये, च)** और जो **(मघवानः)** प्रशंसित धन वाले इस अन्नादि सामग्री के लिये आपको **(जुनन्ति)** प्राप्त होते हैं **(सः)** सो आप उद्योगी हूजिये जिससे **(जरित्रे)** सत्य की प्रशंसा करने वाले **(ते)** तेरे लिये **(वस्वी)** धनसम्बन्धिनी **(शक्तिः)** शक्ति **(अस्तु)** हो। हे हमारे सम्बन्धिजनो! **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों को **(सदा)** **(सु,पात)** अच्छे प्रकार रक्षा करो॥१०॥

भावार्थः-वे ही लक्ष्मी करने वाले जन हैं जो आलस्य का त्याग कराके पुरुषार्थ के साथ युक्त करते हैं वा जो ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, उनको ऐश्वर्य की प्राप्ति कराने वाली सामर्थ्य होती है वा जो परस्पर की रक्षा करते हैं, वे सदा सुखी होते हैं॥१०॥

इस सूक्त में राजा, सूर्य, बलिष्ठ, सेनापति, सेवक, अध्यापक, अध्येता, मित्र, दाता और रचने वालों के कृत्य और गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह बीसवां सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ दशर्चस्यैकविंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ६, ८, ९ विराट् त्रिष्टुप्। २, १० निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ७ भुरिक्पंक्तिः। ४, ५ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वान् किं कुर्य्यादित्याह॥

अब दश ऋचावाले इक्कीसवें सूक्त का आरम्भ है उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

असावि देवं गोऋजीकमन्धो न्यस्मिन्निन्द्रो जनुषेमुवोच।
बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैर्बोधा नः स्तोममन्धसो मदेषु॥१॥

असावि। देवम्। गोऽऋजीकम्। अन्धः। नि। अस्मिन्। इन्द्रः। जनुषा। ईम्। उवोच। बोधामसि। त्वा। हरिऽअश्वः। यज्ञैः। बोध। नः। स्तोमम्। अन्धसः। मदेषु॥१॥

पदार्थः-(**असावि**) सूयते (**देवम्**) दातारम् (**गोऋजीकम्**) गोर्भूमेर्ऋजुत्वेन प्रापकम् (**अन्धः**) अन्नम् (**नि**) (**अस्मिन्**) व्यवहारे (**इन्द्रः**) विद्यैश्वर्यः (**जनुषा**) जन्मना (**ईम्**) (**उवोच**) उच्यात् (**बोधामसि**) बोधयेम (**त्वा**) त्वाम् (**हर्यश्व**) कमनीयाश्व (**यज्ञैः**) विद्वत्सङ्गादिभिः (**बोध**) बोधय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**स्तोमम्**) प्रशंसाम् (**अन्धसः**) अन्नादेः (**मदेषु**) आनन्देषु॥१॥

अन्वयः-हे हर्यश्व! यदन्धोऽसावि तज्जनुषा गोऋजीकं देवमिन्द्र उवोच यस्मिँस्त्वा नि बोधामस्यस्मिँस्त्वमन्धसो मदेषु यज्ञैर्नो बोध स्तोमं प्रापय॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! पृथिव्यादिभ्यो धान्यादिं प्राप्य विद्यां प्राप्नुयन्ति ये च विद्वत्सङ्गेन सकलविद्यारहस्यानि गृह्णन्ति ते कदाचिद् दुःखिनो न जायन्ते॥१॥

पदार्थः-हे (**हर्यश्व**) मनोहर घोड़ों वाले! जो (**अन्धः**) अन्न (**असावि**) उत्पन्न होता उसकी तथा (**जनुषा**) जन्म से अर्थात् उत्पन्न होते समय से (**ईम्**) ही (**गोऋजीकम्**) भूमि के कोमलता से प्राप्त कराने और (**देवम्**) देने वाले को (**इन्द्रः**) विद्या और ऐश्वर्ययुक्त जन (**उवोच**) कहे वा जिसके निमित्त (**त्वा**) आप को (**नि, बोधामसि**) निरन्तर बोधित करें (**अस्मिन्**) इस व्यवहार में आप (**अन्धसः**) अन्न आदि पदार्थ के (**मदेषु**) आनन्दों में (**यज्ञैः**) विद्वानों के संग आदि से (**नः**) हम लोगों को (**बोध**) बोध देओ और (**स्तोमम्**) प्रशंसा की प्राप्ति कराओ॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य पृथिवी आदि से धान्य आदि को प्राप्त होकर विद्या को प्राप्त होते हैं और जो विद्वानों के संग से समस्त विद्या के रहस्यों को ग्रहण करते हैं, वे कभी दुःखी नहीं होते हैं॥१॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र यन्ति यज्ञं विपयन्ति बर्हिः सोममादो विदथे दुध्रवाचः।
न्यु भ्रियन्ते यशसो गृभादा दूरउपब्दो वृषणो नृषाचः॥२॥

प्र। यन्ति। यज्ञम्। विपयन्ति। बर्हिः। सोमऽमादः। विदथे। दुध्रऽवाचः। नि। ऊँ इति। भ्रियन्ते। यशसः। गृभात्। आ। दूरेऽउपब्दः। वृषणः। नृऽसाचः॥ २॥

पदार्थः-(**प्र**) (**यन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**यज्ञम्**) विद्वत्सङ्गादिकम् (**विपयन्ति**) विशेषेण गच्छन्ति (**बर्हिः**) अन्तरिक्षे (**सोममादः**) ये सोमेन मदन्ति हर्षन्ति ते (**विदथे**) स-ामे (**दुध्रवाचः**) दुर्धरा वाग्येषान्ते (**नि**) (**उ**) (**भ्रियन्ते**) ध्रियन्ते (**यशसः**) कीर्तेः (**गृभात्**) गृहात् (**आ**) (**दूरउपब्दः**) दूर उपब्दिर्वाग्येषान्ते। **उपब्दिरिति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) (**वृषणः**) बलिष्ठाः (**नृषाचः**) ये नृभिर्नायकैस्सह। सम्बध्नन्ति ते॥ २॥

अन्वयः-ये सोममादो दुध्रवाचो वृषणो नृषचो यज्ञं प्र यन्ति विदथे बर्हिर्विपयन्त्यु ये यशसो गृभादा भ्रियन्ते दूरउपब्दो नि भ्रियन्ते ते विजयमाप्नुवन्ति॥ २॥

भावार्थः-यथा यज्ञानुष्ठातार आनन्दमाप्नुवन्ति तथा युद्धकुशला विजयं लभन्ते यथा दूरकीर्तिर्विद्वान् भवति तथा यशोचितानि कर्माणि कृत्वा परोपकारिणो जना भवन्तु॥ २॥

पदार्थः-जो (**सोममादः**) सोम से हर्षित होते (**दुध्रवाचः**) वा जिनकी दुःख से धारण करने योग्य वाणी (**वृषणः**) वे बलिष्ठ (**नृषाचः**) नायक मनुष्यों से सम्बन्ध करने वाले जन (**यज्ञम्**) विद्वानों के संग आदि को (**प्र, यन्ति**) प्राप्त होते हैं (**विदथे**) संग्राम में (**बर्हिः**) अन्तरिक्ष में (**विपयन्ति**) विशेषता से जाते हैं (**उ**) और जो (**यशसः**) कीर्ति से वा (**गृभात्**) घर से (**आ, भ्रियन्ते**) अच्छे प्रकार उत्तमता को धारण करते हैं तथा (**दूरउपब्दः**) जिनकी दूर वाणी पहुँचती वे सज्जन (**नि**) निरन्तर उत्तमता को धारण करते हैं और वे विजय को प्राप्त होते हैं॥ २॥

भावार्थः-जैसे यज्ञ का अनुष्ठान करने वाले आनन्द को प्राप्त होते हैं, वैसे युद्ध में निपुण पुरुष विजय को प्राप्त होते हैं जैसे दूरदेशों में कीर्ति रखने वाले विद्वान् जन होता है, वैसे यश से संचय किये कर्मों को कर परोपकारी जन हों॥ २॥

पुनः स राजा किंवत्किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा किसके तुल्य क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वमिन्द्र स्रवितवा अपस्कः परिष्ठिता अहिना शूर पूर्वीः।
त्वद्वावक्रे रथ्यो३ न धेना रेजन्ते विश्वा कृत्रिमाणि भीषा॥ ३॥

त्वम्। इन्द्र। स्रवितवै। अपः। करिति कः। परिऽस्थिताः। अहिना। शूर। पूर्वीः। त्वत्। वावक्रे। रथ्यः। न। धेनाः। रेजन्ते। विश्वा। कृत्रिमाणि। भीषा॥ ३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**इन्द्र**) सूर्य इव विद्वन् (**स्रवितवै**) स्रवितुम् (**अपः**) जलानि (**कः**) करोषि (**परिष्ठिताः**) परितः सर्वतः स्थिताः (**अहिना**) मेघेन (**शूर**) (**पूर्वीः**) पूर्वे स्थिताः (**त्वत्**) (**वावक्रे**) वक्रा गच्छन्ति (**रथ्यः**) रथाय हितोऽश्वः (**न**) इव (**धेनाः**) प्रयुक्ता वाच इव (**रेजन्ते**) कम्पन्ते (**विश्वा**) सर्वाणि (**कृत्रिमाणि**) कृत्रिमाणि (**भीषा**) भयेन॥ ३॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र राजन्! यथा सूर्य्यः स्रवितवा अहिना सह पूर्वीः परिष्ठिता अपः करोति तथा त्वं

प्रजाः सन्मार्गे को यथा सूर्यादयो रथ्यो वावक्रे कृत्रिमाणि रेजन्ते तथा त्वद्भीषा प्रजा धेना न प्रवर्त्तन्ताम्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यो राजा सूर्यवत्प्रजाः पालयति दुष्टान्भीषयति स एव व्याप्तसुखो भवति॥३॥

पदार्थः-हे **(शूर)** शूरवीर **(इन्द्रः)** सूर्य के समान विद्वान् राजा! जैसे सूर्य्य **(स्रवितवै)** वर्षा को **(अहिना)** मेघ के साथ **(पूर्वीः)** पहिले स्थिर हुए **(परिष्ठिताः)** वा सब ओर से स्थिर होने वाले **(अपः)** जलों को उत्पन्न करता है, वैसे **(त्वम्)** आप प्रजा जनों को सन्मार्ग में **(कः)** स्थिर करो जैसे सूर्य आदि और **(रथ्यः)** रथ के लिये हितकारी घोड़ा यह सब पदार्थ **(वावक्रे)** टेढ़े चलते हैं और **(विश्वा)** समस्त **(वि, कृत्रिमणि)** विशेषता से कृत्रिम किये कामों को **(रेजन्ते)** कंपित करते हैं, वैसे **(त्वत्)** तुम से **(भीषा)** उत्पन्न हुए भय से प्रजाजन **(धेनाः)** बोली हुई वाणियों के **(न)** समान प्रवृत्त हों॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो राजा सूर्य्य के समान प्रजाजनों की पालना करता है, दुष्टों को भय देता है, वही सुख से व्याप्त होता है॥३॥

पुनस्स सेनेशः किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह सेनापति क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भीमो विवेषायुधेभिरेषामपांसि विश्वा नर्याणि विद्वान्।
इन्द्रः पुरो जर्हृषाणो वि दूधोद्वि वज्रहस्तो महिना जघान॥४॥

भीमः। विवेष। आयुधेभिः। एषाम्। अपांसि। विश्वा। नर्याणि। विद्वान्। इन्द्रः। पुरः। जर्हृषाणः। वि। दूधोत्। वि। वज्रऽहस्तः। महिना। जघान॥४॥

पदार्थः-**(भीमः)** भयङ्करः **(विवेष)** व्याप्नुयात् **(आयुधेभिः)** युद्धसाधनैः **(एषाम्)** **(अपांसि)** कर्माणि **(विश्वा)** सर्वाणि **(नर्याणि)** नृभ्यो हितानि **(विद्वान्)** **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् **(पुरः)** शत्रुपुराणि **(जर्हृषाणः)** भृशं हृषितः **(वि)** **(दूधोत्)** अकम्पयत् **(वि)** **(वज्रहस्तः)** शस्त्रास्त्रपाणिः **(महिना)** महिम्ना **(जघान)** हन्यात्॥४॥

अन्वयः-यो भीमो वज्रहस्तो जर्हृषाणो विद्वानिन्द्र आयुधेभिर्महिनैषां शत्रूणां विश्वा नर्याण्यपांसि विवेष पुरो विदूधोच्छत्रून्विजघान स एव सेनापतित्वमर्हति॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युद्धकृत्यानि समग्राणि विज्ञाय स्वसैन्यानि युद्धकुशलानि कृत्वा शत्रूनभिकम्प्य शत्रुसेनाः कम्पयन्ति ते विजयेन भूषिता भवन्ति॥४॥

पदार्थः-जो **(भीमः)** भय करने वा **(वज्रहस्तः)** शस्त्र और अस्त्र हाथों में रखने वाला **(जर्हृषाणः)** निरन्तर आनन्दित **(विद्वान्)** विद्वान् **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् राजा **(आयुधेभिः)** युद्ध सिद्धि कराने वाले शस्त्रों से **(महिना)** बड़प्पन के साथ **(एषाम्)** इन शत्रुओं के **(विश्वा)** समस्त **(नर्याणि)** मनुष्यों के हित करने वाले **(अपांसि)** कर्मों को **(विवेष)** व्याप्त हो **(पुरः)** शत्रुओं की नगरियों को **(वि, दूधोत्)** कंपावे शत्रुओं को **(वि, जघान)** मारे, वही सेनापति होने योग्य होता है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो युद्ध कार्यों को समग्र जान अपनी सेना को युद्ध में निपुण कर शत्रुओं को कंपा और शत्रुसेनाओं को कंपाते हैं, वे विजय से शोभित होते हैं॥४॥

अथ के तिरस्करणीयः सन्तीत्याह॥

अब कौन तिरस्कार करने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न यातव इन्द्र जूजुवुर्नो न वन्दना शविष्ठ वेद्याभिः।

स शर्धदर्यो विषुणस्य जन्तोर्मा शिश्नदेवा अपि गुर्ऋतं नः॥५॥३॥

न। यातवः। इन्द्र। जूजुवुः। नः। न। वन्दना। शविष्ठ। वेद्याभिः। सः। शर्धत्। अर्यः। विषुणस्य। जन्तोः। मा। शिश्नऽदेवाः। अपि। गुः। ऋतम्। नः॥५॥

पदार्थः-(**न**) (**यातवः**) स-ग्रामं ये यान्ति ते (**इन्द्र**) दुष्टशत्रुविदारक (**जूजुवुः**) सद्यो गच्छन्ति (**नः**) अस्मान् (**न**) निषेधे (**वन्दना**) वन्दनानि स्तुत्यानि कर्माणि (**शविष्ठ**) अतिशयेन बलयुक्त (**वेद्याभिः**) ज्ञातव्याभिर्नीतिभिः (**सः**) (**शर्धत्**) उत्सहेत् (**अर्यः**) स्वामी (**विषुणस्य**) शरीरे व्याप्तस्य (**जन्तोः**) जीवस्य (**मा**) (**शिश्नदेवाः**) अब्रह्मचर्या कामिनो ये शिश्नेन दीव्यन्ति क्रीडन्ति ते (**अपि**) (**गुः**) प्राप्नुयुः (**ऋतम्**) सत्यं धर्मम् (**नः**) अस्मान्॥५॥

अन्वयः-हे शविष्ठेन्द्र! यथा यातवो नो न जूजुवुर्ये शिश्नदेवास्त ऋतं मा गुरपि च नोऽस्मान्न प्राप्नुवन्तु ते च विषुणस्य जन्तोर्वेद्याभिर्वन्दना मा गुर्योऽर्यो विषुणस्य जन्तोः शर्धन्त्सोऽस्मान्प्राप्नोतु॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये कामिनो लम्पटा स्युस्ते युष्माभिः कदापि न वन्दनीयास्तेऽस्मान् कदाचिन्माप्नुवन्त्विति मन्यध्वम्। ये च धर्मात्मानस्ते वन्दनीयाः सेवनीयाः सन्ति कामातुराणां धर्मज्ञानं सत्यविद्या च कदाचिन्न जायते॥५॥

पदार्थः-हे (**शविष्ठ**) अत्यन्त बलयुक्त (**इन्द्र**) दुष्ट शत्रुजनों के विदीर्ण करने वाले जन! जैसे (**यातवः**) संग्राम को जाने वाले (**नः**) हम लोगों को (**न**) न (**जूजुवुः**) प्राप्त होते हैं और जो (**शिश्नदेवाः**) शिश्न अर्थात् उपस्थ इन्द्रिय से विहार करने वाले ब्रह्मचर्य्यरहित कामी जन हैं वे (**ऋतम्**) सत्यधर्म को (**मा, गुः**) मत पहुँचे (**अपि**) और (**नः**) हम लोगों को (**न**) न प्राप्त हों वे ही (**विषुणस्य**) शरीर में व्याप्त (**जन्तोः**) जीव को (**वेद्याभिः**) जानने योग्य नीतियों से (**वन्दना**) स्तुति करने योग्य कर्मों को न पहुँचे और (**यः**) जो (**अर्यः**) स्वामी जन शरीर में व्याप्त जीव को (**शर्धत्**) उत्साहित करे (**सः**) वह हम को प्राप्त हो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो कामी लंपट जन हों, वे तुम लोगों को कदापि वन्दना करने योग्य नहीं, वे हम लोगों को कभी न प्राप्त हों, इसको तुम लोग जानो और जो धर्मात्मा जन हैं, वे वन्दना करने तथा सेवा करने योग्य हैं, कामातुरों को धर्मज्ञान और सत्यविद्या कभी नहीं होती है॥५॥

अथ कीदृशाज्जनाच्छत्रवो जेतुं न शक्नुयुरित्याह॥

अब कैसे जन से शत्रुजन नहीं जीत सकते, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि क्रत्वेन्द्र भूरध ज्मन्न ते विव्यङ् महिमानं रजांसि।

स्वेना हि वृत्रं शवसा जघन्थ न शत्रुरन्तं विविदद्युधा ते॥६॥

अभि। क्रत्वा। इन्द्र। भूः। अध। ज्मन्। न। ते। विव्यक्। महिमानम्। रजांसि। स्वेन। हि। वृत्रम्। शवसा। जघन्थ। न। शत्रुः। अन्तम्। विविदत्। युधा। ते॥६॥

पदार्थः-(**अभि**) आभिमुख्ये (**क्रत्वा**) प्रज्ञया सह (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**भूः**) भव (**अध**) अथ (**ज्मन्**) पृथिव्याम्। **ज्मेति पृथिवीनाम।** (निघं०१.१) (**न**) निषेधे (**ते**) तव (**विव्यक्**) व्याप्नुयात् (**महिमानम्**) (**रजांसि**) ऐश्वर्याणि (**स्वेन**) स्वकीयेन। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**हि**) खलु (**वृत्रम्**) मेघमिव शत्रुम् (**शवसा**) बलेन (**जघन्थ**) हन्यात् (**न**) निषेधे (**शत्रुः**) (**अन्तम्**) (**विविदत्**) प्राप्नोति (**युधा**) स- ामेण (**ते**) तव॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं क्रत्वा ज्मञ्छत्रूनभि भूरध ते महिमानं रजांसि शत्रुर्मा न विव्यक् स्वेन शवसा हि सूर्यो वृत्रमिव शत्रुं त्वं जघन्थैवं युधा शत्रुस्तेऽन्तं न विविदत्॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्या शरीरात्मबलं प्रत्यहं वर्धयन्ति तेषां शत्रवो दूरतः पलायन्ते शत्रून्विजेतुं स्वयं शक्नुयुः॥६॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त जन! आप (**क्रत्वा**) बुद्धि के साथ (**ज्मन्**) पृथिवी पर शत्रुओं के (**अभि, भूः**) सम्मुख हूजिये (**अध**) इसके अनन्तर (**ते**) आपके (**महिमानम्**) बड़प्पन को और (**रजांसि**) ऐश्वर्य्यों को (**शत्रुः**) शत्रुजन मुझे (**न**) न (**विव्यक्**) व्याप्त हों (**स्वेन**) अपने (**शवसा**) बल से (**हि**) ही सूर्य जैसे (**वृत्रम्**) मेघ को, वैसे शत्रु को आप (**जघन्थ**) मारो इस प्रकार से (**युधा**) संग्राम से शत्रुजन (**ते**) आपके (**अन्तम्**) अन्त अर्थात् नाश वा सिद्धान्त को (**न**) न (**विविदत्**) प्राप्त हो॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य शरीर और आत्मा के बल को प्रतिदिन बढ़ाते हैं, उन के शत्रुजन दूर से भागते हैं, किन्तु वह आप शत्रुओं को जीत सकें॥६॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

देवाश्चित्ते असुर्याय पूर्वेऽनु क्षत्राय ममिरे सहांसि।
इन्द्रो मघानि दयते विषह्येन्द्रं वाजस्य जोहुवन्त सातौ॥७॥

देवाः। चित्। ते। असुर्याय। पूर्वे। अनु। क्षत्राय। ममिरे। सहांसि। इन्द्रः। मघानि। दयते। विऽसह्य। इन्द्रम्। वाजस्य। जोहुवन्त। सातौ॥७॥

पदार्थः-(**देवाः**) विद्वांसः (**चित्**) अपि (**ते**) तव (**असुर्याय**) असुरे मेघे भवाय (**पूर्वे**) प्रथमतो विद्यां गृहीतवन्तः (**अनु**) (**क्षत्राय**) राज्याय धनाय वा (**ममिरे**) निर्मिमते (**सहांसि**) बलानि (**इन्द्रः**) सूर्य इव राजा (**मघानि**) पूजनीयानि धनानि (**दयते**) दयां करोति (**विषह्य**) विशेषेण सोढ्वा (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यम् (**वाजस्य**) प्राप्तस्य (**जोहुवन्त**) भृशमाददति (**सातौ**) संविभागे॥७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! ये पूर्वे देवास्तेऽसुर्याय क्षत्राय सहांस्यनु ममिरे यश्चिदपीन्द्रो मघानि दयते ये वाजस्य सातावन्द्रिं जोहुवन्त ताँस्त्वं सत्कुरु॥७॥

भावार्थः-ते एव विद्वांसो वरा भवन्ति ये सर्वेषु दयां विधाय सत्यशास्त्राण्युपदिश्य बलानि वर्धयन्ति त एव पितेव पूजनीया भवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे विद्वान् जो **(पूर्वे)** पहिले विद्या ग्रहण किये हुए **(देवाः)** विद्वान् जन **(ते)** आप के **(असुर्याय)** मेघ में उत्पन्न हुए के लिये और **(क्षत्राय)** राज्य वा धन के लिये **(सहांसि)** बलों का **(अनु, ममिरे)** निरन्तर अनुमान करते जो **(चित्)** भी **(इन्द्रः)** सूर्य के समान राजा **(मघानि)** प्रशंसा करने योग्य धनों को **(दयते)** ग्रहण करता वा जो **(वाजस्य)** प्राप्त हुए व्यवहार के **(सातौ)** संविभाग में **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्य को **(विषह्य)** विशेष सह करके परमैश्वर्य को **(जोहुवन्त)** निरन्तर ग्रहण करते हैं, उनका आप सत्कार करो॥७॥

भावार्थः-वे ही विद्वान् जन श्रेष्ठ होते हैं जो सबों में दया का विधान और सत्य शास्त्रों का उपदेश कर बलों को बढ़ाते हैं, वे ही पिता के समान सत्कार करने योग्य होते हैं॥७॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कीरिश्चिद्धि त्वामवसे जुहावेशानमिन्द्र सौभगस्य भूरेः।
अवो बभूथ शतमूते अस्मे अभिक्षत्तुस्त्वावतो वरूता॥८॥

कीरिः। चित्। हि। त्वाम्। अवसे। जुहाव। ईशानम्। इन्द्र। सौभगस्य। भूरेः। अवः। बभूथ। शतम्ऽऊते। अस्मे इति। अभिऽक्षत्तुः। त्वाऽवतः। वरूता॥८॥

पदार्थः-**(कीरिः)** सद्यः स्तोता। **कीरिरिति स्तोतृनाम**। (निघं०३.१६) **(चित्)** इव **(हि)** निश्चये **(त्वाम्)** **(अवसे)** **(जुहाव)** आह्वयेत् **(ईशानम्)** समर्थम् **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद **(सौभगस्य)** सुभगस्यैश्वर्यस्य भावस्य **(भूरेः)** **(अवः)** रक्षणम् **(बभूथ)** भवति **(शतमूते)** असंख्यरक्षाकर्त्तः **(अस्मे)** अस्मान् **(अभिक्षत्तुः)** अभितः क्षयकर्त्तुर्हिंस्रस्य **(त्वावतः)** त्वया सदृशस्य **(वरूता)** स्वीकर्त्ता॥८॥

अन्वयः-हे शतमूत इन्द्र! यो हि कीरिश्चिदवसे [ईशानं त्वाम्] जुहाव तस्य भूरेः सौभगस्याऽवः कर्त्ता त्वं बभूथ। योऽस्मे त्वावतोऽभिक्षत्तुर्वरूता भवेत्तस्यापि रक्षको भव॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजञ्छूरवीर! ये पीडिता प्रजाजनास्त्वामाह्वयेयुस्तद्वचस्त्वं सद्यः शृणु सर्वेषां रक्षको भूत्वा दुष्टानां हिंस्रो भव॥८॥

पदार्थः-हे **(शतमूते)** सैकड़ों प्रकार की रक्षा करने वा **(इन्द्र)** परम ऐश्वर्य के देने वाले! जो **(हि)** ही **(कीरिः)** स्तुति करने वाले **(चित्)** के समान **(अवसे)** रक्षा के लिये **(ईशानम्)** समर्थ **(त्वाम्)** आपको **(जुहाव)** बुलावे उसके **(भूरेः)** बहुत **(सौभगस्य)** उत्तम भाग्य के होने की **(अवः)** रक्षा करने वाले आप **(बभूथ)** हूजिये। जो **(अस्मे)** हम लोगों को **(त्वावतः)** आपके सदृश **(अभिक्षत्तुः)** सब ओर से नाशकर्त्ता हिंसक के **(वरूता)** स्वीकार करने वाला हो, उसके भी रक्षक

हूजिये॥८॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन् शूरवीर! जो पीड़ित प्रजाजन तुमको आह्वान दें उनके वचन को आप शीघ्र सुनें और सब की रक्षा करने वाले होकर दुष्टों की हिंसा करने वाले हूजिये॥८॥

पुन: कस्य मित्रता कार्येत्याह॥

फिर किसकी मित्रता करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सखायस्त इन्द्र विश्वह स्याम नमोवृधासो महिना तरुत्र।
वन्वन्तु स्मा तेऽवसा समीके३भीतिमर्यो वनुषां शवांसि॥९॥

सखाय:। ते। इन्द्र। विश्वह। स्याम। नम:ऽवृधास:। महिना। तरुत्र। वन्वन्तु। स्म। ते। अवसा। सम्ऽईके। अभिऽइतिम्। अर्य:। वनुषाम्। शवांसि॥९॥

पदार्थ:-(**सखाय:**) सुहृद: सन्त: (**ते**) तव (**इन्द्र**) राजन् (**विश्वह**) सर्वाणि दिनानि (**स्याम**) (**नमोवृधास:**) अन्नस्य वर्धका अन्नेन वृद्धा वा (**महिना**) महिम्ना (**तरुत्र**) दु:खात्तारक (**वन्वन्तु**) याचन्ताम् (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घ:। (**ते**) तव (**अवसा**) रक्षणादिना (**समीके**) समीपे (**अभीतिम्**) अभयम् (**अर्य:**) स्वामी वैश्य: (**वनुषाम्**) याचकानाम् (**शवांसि**) बलानि॥९॥

अन्वय:-हे तरुतेन्द्र! नमोवृधासो वयं महिना विश्वह ते सखाय: स्याम ये ते समीकेऽवसाऽभीतिं वनुषां शवांसि च वन्वन्तु स्मार्यस्त्वमेतदेषां दध्या:॥९॥

भावार्थ:-ये धार्मिकस्य राज्ञो नित्यं सख्यमिच्छन्ति ते महिम्ना सत्क्रियन्ते ये प्रजाऽभ्योऽभयं ददति ते प्रत्यहं बलिष्ठा जायन्ते॥९॥

पदार्थ:-हे (**तरुत्र**) दु:ख से तारने वाले (**इन्द्र**) राजा! (**नमोवृधास:**) अन्न के बढ़ाने वा अन्न से बढ़े हुए हम लोग (**महिना**) बड़प्पन से (**विश्वह**) सब दिनों (**ते**) आपके (**सखाय:**) मित्र (**स्याम**) हों जो (**ते**) आपके (**समीके**) समीप में (**अवसा**) रक्षा आदि से (**अभीतिम्**) अभय और (**वनुषाम्**) मंगता जनों के (**शवांसि**) बलों को (**वन्वन्तु, स्म**) हीं मांगे (**अर्य:**) वैश्यजन आप इनके इस पदार्थ को धारण करो॥३॥

भावार्थ:-जो धार्मिक राजा से नित्य मित्रता करने की इच्छा करते हैं वे बड़प्पन से सत्कार पाते हैं, जो प्रजा को अभय देते हैं, वे प्रतिदिन बलिष्ठ होते हैं॥९॥

पुन: राजप्रजाजना: परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा-प्रजाजन परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति।
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभि: सदा न:॥१०॥४॥

स:। न:। इन्द्र। त्वऽयतायै। इषे। धा:। त्मना। च। ये। मघऽवान:। जुनन्ति। वस्वी। सु। ते। जरित्रे।

अ॒स्तु। श॒क्तिः। यू॒यम्। पा॒त। स्व॒स्तिऽभिः॑। सदा॑। नः॒॥ १०॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्मान् (**इन्द्र**) दुःखविदारक (**त्वयतायै**) त्वया प्रयत्नेन साधितायै (**इषे**) इच्छासिद्धयेऽन्नप्राप्तये वा (**धाः**) धेहि (**त्मना**) आत्मना (**च**) (**ये**) (**मघवानः**) नित्यं धनाढ्याः (**जुनन्ति**) प्रेरयन्ति (**वस्वी**) धनकारिणी (**सु**) (**ते**) तव (**जरित्रे**) स्तावकाय (**अस्तु**) (**शक्तिः**) सामर्थ्यम् (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**)॥ १०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! स त्वं त्मना त्वयताया इषे नो धाः। ये च मघवानो जुनन्ति तांश्चास्यै धाः। येन ते जरित्रे वस्वी शक्तिरस्तु। हे अमात्या! यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा सु पात॥ १०॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं प्रयत्नेन सर्वान् पुरुषार्थयित्वा धनाढ्यान् सततं कुर्याः धनाढ्यांश्च सत्कर्मसु प्रेरय यतो भवतस्त्व भृत्यानां चाऽलौकिकी शक्तिः स्यादेते च भवन्तं सदा रक्षेयुरिति॥ १०॥

अत्र राजप्रजाविद्वदिन्द्रमित्रसत्यगुणयाच्ञादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकविंशतितमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुःख के विदीर्ण करने वाले! (**सः**) सो आप (**त्वयतायै**) आपने जो बड़े यत्न से सिद्ध की उस (**इषे**) इच्छा सिद्धि वा अन्न की प्राप्ति के लिये (**नः**) हम लोगों को (**धाः**) धारण कीजिये (**ये, च**) और जो (**मघवानः**) नित्य धनाढ्य जन (**जुनन्ति**) प्रेरणा देते हैं उनको भी उक्त इच्छासिद्धि वा अन्न की प्राप्ति के लिये धारण कीजिये जिससे (**ते**) आपकी (**जरित्रे**) स्तुति करने वाले के लिये (**वस्वी**) धन करने वाली (**शक्तिः**) सामर्थ्य (**अस्तु**) हो। हे मन्त्री जनो! (**यूयम्**) तुम लोग (**स्वस्तिभिः**) सुखों से (**नः**) हम लोगों को (**सदा**) सब कभी **[**=सदा**]** (**सु, पात**) अच्छे प्रकार रक्षा करो॥ १०॥

भावार्थः-हे राजा! आप प्रयत्न से सबको पुरुषार्थी कर निरन्तर धनाढ्य कीजिये और अच्छे कामों में प्रेरणा दीजिये जिससे आपकी भृत्यों की अलौकिक शक्ति हो और ये आपकी सर्वदा रक्षा करें॥ १०॥

इस सूक्त में राजा, प्रजा, विद्वान्, इन्द्र, मित्र, सत्य, गुण और याच्ञा आदि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह इक्कीसवां सूक्त और चौथा वर्ग पूरा हुआ॥

अथ नवर्चस्य द्वाविंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ भुरिगुष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः। २, ७ निचृदनुष्टुप्। ३ भुरिगनुष्टुप्। ५ अनुष्टुप्। ६, ८ विराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ४ आर्ची पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ९ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यः किं कृत्वा कीदृशो भवेदित्याह॥

अब नव ऋचा वाले बाईसवें सूक्त का प्रारम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य क्या करके कैसा हो, इस विषय को उपदेश करते हैं॥

पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः।
सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा॥१॥

पिब। सोमम्। इन्द्र। मन्दतु। त्वा। यम्। ते। सुसाव। हरिऽअश्व। अद्रिः। सोतुः। बाहुऽभ्याम्। सुऽयतः। न। अर्वा॥१॥

पदार्थः-(**पिबा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सोमम्**) महौषधिरसम् (**इन्द्र**) रोगविदारक वैद्य (**मन्दतु**) आनन्दयतु (**त्वा**) त्वाम् (**यम्**) (**ते**) तव (**सुषाव**) (**हर्यश्व**) कमनीयाश्व (**अद्रिः**) मेघः (**सोतुः**) अभिषवकर्त्तुः (**बाहुभ्याम्**) (**सुयतः**) सुन्वतो निष्पादयतः (**न**) (**अर्वा**) वाजी॥१॥

अन्वयः-हे हर्यश्वेन्द्र! त्वमर्वा न सोमं पिब यमद्रिः सुषाव यः सोतुः सुयतस्ते बाहुभ्यां सुषाव स त्वा मन्दतु॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे भिषजो! यूयं यथा वाजिनो तृणान्नजलादिकं संसेव्य पुष्टा भवन्ति तथैव सोमं पीत्वा बलवन्तो भवत॥१॥

पदार्थः-हे (**हर्यश्व**) मनोहर घोड़े वाले (**इन्द्र**) रोग नष्टकर्त्ता वैद्यजन! आप (**अर्वा**) घोड़े के (**न**) समान (**सोमम्**) बड़ी ओषधियों के रस को (**पिब**) पीओ (**यम्**) जिसको (**अद्रिः**) मेघ (**सुषाव**) उत्पन्न करता है और जो (**सोतुः**) सार निकालने वा (**सुयतः**) सार निकालने की और सिद्धि करने वाले (**ते**) आपकी (**बाहुभ्याम्**) बाहुओं से कार्य सिद्धि करता है वह (**त्वा**) आपको (**मन्दतु**) आनन्दित करे॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे वैद्यो! तुम जैसे घोड़े तृण, अन्न और जलादिकों का अच्छे प्रकार सेवन कर पुष्ट होते हैं, वैसे ही बड़ी ओषधियों के रसों को पीकर बलवान् होओ॥१॥

पुनः स राजा किंवत्किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा किसके तुल्य क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्ते मदो युज्यश्चारुरस्ति येन वृत्राणि हर्यश्व हंसि।
स त्वामिन्द्र प्रभूवसो ममत्तु॥२॥

यः। ते। मदः। युज्यः। चारुः। अस्ति। येन। वृत्राणि। हरिऽअश्व। हंसि। सः। त्वाम्। इन्द्र। प्रभुऽवसो इति प्रभुऽवसो। ममत्तु॥२॥

पदार्थः-(**यः**) (**ते**) तव (**मद्रः**) आनन्दः (**युज्यः**) योक्तुमर्हः (**चारुः**) सुन्दरः (**अस्ति**) (**येन**) (**वृत्राणि**) मेघाङ्गानीव शत्रुसेनाङ्गानि (**हर्यश्व**) हरयो हरणशीलो अश्वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (**हंसि**) विनाशयसि (**सः**) (**त्वाम्**) (**इन्द्र**) (**प्रभूवसो**) यः समर्थश्चासौ वासिता च तत्सम्बुद्धौ (**ममत्तु**) आनन्दयतु॥२॥

अन्वयः-हे प्रभूवसो हर्यश्वेन्द्र! यस्ते युज्यश्चारुर्मदोऽस्ति येन सूर्यो वृत्राणि शत्रुसेनाङ्गानि हंसि स त्वां ममत्तु॥२॥

भावार्थः-येन येनोपायेन दुष्टा बलहीना भवेयुस्तं तमुपायं राजाऽनुतिष्ठेत्॥२॥

पदार्थः-हे (**प्रभूवसो**) समर्थ और वसाने वाले (**हर्यश्व**) हरणशील घोड़ों से युक्त (**इन्द्र**) परमैश्वर्यवान् राजा! (**यः**) जो (**ते**) आप का (**युज्यः**) योग करने योग्य (**चारुः**) सुन्दर (**मदः**) आनन्द (**अस्ति**) है वा (**येन**) जिससे सूर्य (**वृत्राणि**) मेघ के अङ्गों को, वैसे शत्रुओं की सेना के अङ्गों का (**हंसि**) विनाश करते हो (**सः**) वह (**त्वाम्**) तुम्हें (**ममत्तु**) आनन्दित करे॥२॥

भावार्थः-जिस-जिस उपाय से दुष्ट बलहीन हों उस-उस उपाय का राजा अनुष्ठान करे अर्थात् आरम्भ करे॥२॥

पुनर्मनुष्येषु कथं वर्तेतेत्याह॥

फिर मनुष्यों में कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बोधा॒ सु मे॑ मघव॒न् वाच॒मेमां यां ते॒ वसि॑ष्ठो॒ अर्च॑ति॒ प्रश॑स्तिम्।
इ॒मा ब्रह्म॑ सध॒मादे॑ जुषस्व॥३॥

बोध॑। सु॒। मे॒। म॒घ॒ऽव॒न्। वाच॑म्। आ। इ॒माम्। याम्। ते॒। वसि॑ष्ठः। अर्च॑ति। प्रऽश॑स्तिम्। इ॒मा। ब्रह्म॑। स॒ध॒ऽमादे॑। जु॒ष॒स्व॒॥३॥

पदार्थः-(**बोध**) जानीहि (**सु**) (**मे**) मम (**मघवन्**) प्रशंसितधनयुक्त (**वाचम्**) (**आ**) (**इमाम्**) (**याम्**) (**ते**) तव (**वसिष्ठः**) (**अर्चति**) (**प्रशस्तिम्**) प्रशंसिताराम् (**इमा**) इमानि (**ब्रह्म**) धनान्यन्नानि वा (**सधमादे**) समानस्थाने (**जुषस्व**)॥३॥

अन्वयः-हे मघवन्विद्वँस्त्वं यां ते प्रशस्तिं वसिष्ठ आर्चति तामिमां मे वाचं त्वं सु बोध सधमाद इमा ब्रह्म जुषस्व॥३॥

भावार्थः-स एव विद्वानुत्तमोऽस्ति यो यादृशीं प्रज्ञां शास्त्रविषयेषु प्रवीणां स्वार्थमिच्छेत्तामेवाऽन्यार्थमिच्छेत् यद्यदुत्तमं वस्तु स्वार्थं तत्परार्थे च जानीयात्॥३॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) प्रशंसित धन वाले विद्वान्! आप (**याम्**) जिस (**ते**) आपके विषय की (**प्रशस्तिम्**) प्रशंसित वाणी को (**वसिष्ठः**) अतीव वसनेवाला (**आ, अर्चति**) अच्छे प्रकार सत्कृत करता है (**इमाम्**) इस (**मे**) मेरी (**वाचम्**) वाणी को आप (**सु, बोध**) अच्छे प्रकार जानो उससे (**सधमादे**) एक से स्थान में (**इमा**) इन (**ब्रह्म**) धन वा अन्नों का (**जुषस्व**) सेवन करो॥३॥

भावार्थः-वही विद्वान् उत्तम है जो जिस प्रकार की उत्तम शास्त्र विषय में बुद्धि अपने लिये

चाहे उसी को औरों के लिये चाहे और जो-जो उत्तम अपने लिये पदार्थ हो, उसे पराये के लिये भी जाने॥३॥

पुनरध्यापकाऽध्येतारः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर पढ़ने-पढ़ाने वाले परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

श्रुधी हवं विपिपानस्याद्रेर्बोधा विप्रस्यार्चतो मनीषाम्।
कृष्वा दुवांस्यन्तमा सचेमा॥४॥

श्रुधि। हवम्। विऽपिपानस्य। अद्रेः। बोध। विप्रस्य। अर्चतः। मनीषाम्। कृष्व। दुवांसि। अन्तमा। सचा। इमा॥४॥

पदार्थः-(**श्रुधि**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हवम्**) शब्दसमूहम् (**विपिपानस्य**) विविधानि पानानि यस्मात् तस्य (**अद्रेः**) मेघस्येव (**बोध**) विजानीहि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**विप्रस्य**) मेधाविनः। (**अर्चतः**) सत्क्रियां कुर्वतः (**मनीषाम्**) प्रज्ञाम् (**कृष्व**) कुरुष्व। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**दुवांसि**) परिचरणानि (**अन्तमा**) समीपस्थानि (**सचा**) सम्बन्धेन (**इमा**) इमानि॥४॥

अन्वयः-हे परमविद्वँस्त्वं विपिपानस्याद्रेरिवार्चतो विप्रस्य हवं श्रुधि मनीषां बोधेमान्तमा दुवांसि सचा कृष्व॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे जिज्ञासवो! यूयं स्वकीयं पठितं परीक्षकाय विदुषे श्रावयन्तु तत्र ते यदुपदिशेयुस्तानि सततं सेवध्वम्॥४॥

पदार्थः-हे परम विद्वान्! आप (**विपिपानस्य**) विविध प्रकार के पीने जिस से बनें उस (**अद्रेः**) मेघ के समान (**अर्चतः**) सत्कार करते हुए (**विप्रस्य**) उत्तम बुद्धि वाले जन के (**हवम्**) शब्दसमूह को (**श्रुधि**) सुनो (**मनीषाम्**) उत्तम बुद्धि को (**बोध**) जानो और (**इमा**) इन (**अन्तमा**) समीपस्थ (**दुवांसि**) सेवनों को (**सचा**) सम्बन्ध करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे जिज्ञासु विद्यार्थी जनो! तुम अपना पढ़ा हुआ परीक्षा लेने वाले विद्वान् को सुनाओ, वहाँ वे जो उपदेश करें, उनका निरन्तर सेवन करो॥४॥

पुनः परीक्षकाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर परीक्षक जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न ते गिरो अपि मृष्ये तुरस्य न सुष्टुतिमसुर्यस्य विद्वान्।
सदा ते नाम स्वयशो विवक्मि॥५॥५॥

न। ते। गिरः। अपि। मृष्ये। तुरस्य। न। सुऽस्तुतिम्। असुर्यस्य। विद्वान्। सदा। ते। नाम। स्वऽयशः। विवक्मि॥५॥

पदार्थः-(**न**) (**ते**) तव (**गिरः**) वाचः (**अपि**) (**मृष्ये**) विचारये (**तुरस्य**) क्षिप्रं कुर्वतः (**न**)

(सुष्टुतिम्) शोभनां प्रशंसाम् **(असुर्यस्य)** असुरेषु मूर्खेषु भवस्य **(विद्वान्)** **(सदा)** **(ते)** **(नाम)** संज्ञाम् **(स्वयशः)** स्वकीयकीर्तिम् **(विवक्मि)** विवेकेन परीक्षयामि॥५॥

अन्वयः-हे विद्यार्थिन! अनभ्यस्तविद्यस्य ते तुरस्य गिरो विद्वानहं न मृष्येऽपि त्वसुर्यस्य सुष्टुतिं न मृष्ये ते तव नाम स्वयशश्च सदा विवक्मि॥५॥

भावार्थः-विद्वान् परीक्षायां यानलसान् प्रमादिनो निर्बुद्धीन् पश्येत्तान्न परीक्षयेन्नाप्यध्यापयेत्। ये चोद्यमिनः सुबुद्धयो विद्याभ्यासे तत्परा बोधयुक्ताः स्युस्तान् सु परीक्ष्य प्रोत्साहयेत्॥५॥

पदार्थः-हे विद्यार्थी! नहीं है विद्या में अभ्यास जिसको ऐसे **(ते)** तेरे **(तुरस्य)** शीघ्रता करने वाले की **(गिरः)** वाणियों को **(विद्वान्)** विद्वान् मैं **(न, मृष्ये)** नहीं विचारता **(अपि)** अपितु **(असुर्यस्य)** मूर्खों में प्रसिद्ध हुए जन की **(सुष्टुतिम्)** उत्तम प्रशंसा को **(न)** नहीं विचारता **(ते)** तेरे **(नाम)** नाम और **(स्वयशः)** अपनी कीर्त्ति की **(सदा)** सदा **(विवक्मि)** विवेक से परीक्षा करता हूँ॥५॥

भावार्थः-विद्वान् जन परीक्षा में जिनको आलसी, प्रमादी और निर्बुद्धि देखे, उनकी न परीक्षा करे और न पढ़ावे। और जो उद्यमी अर्थात् परिश्रमी उत्तम बुद्धि, विद्याभ्यास में तत्पर बोधयुक्त हों, उनकी उत्तम परीक्षा कर उन्हें अच्छा उत्साह दे॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किमेष्टव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या इच्छा करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भूरि॒ हि ते॒ सव॑ना॒ मानु॑षेषु॒ भूरि॑ मनी॒षी ह॑वते॒ त्वामित्।

मारे अ॒स्मन् म॑घवन् ज्योक् कः॑॥६॥

भूरि॑। हि। ते॒। सव॑ना॒। मानु॑षेषु। भूरि॑। म॒नी॒षी। ह॒व॒ते॒। त्वाम्। इत्। मा। आ॒रे। अ॒स्मत्। म॒घ॒ऽव॒न्। ज्योक्। क॒रिति॑ कः॥६॥

पदार्थः-**(भूरि)** बहूनि **(हि)** खलु **(ते)** तव **(सवना)** सवनानि यज्ञसाधककर्माण्यैश्वर्याणि कर्माणि प्रेरणानि वा **(मानुषेषु)** मनुष्येषु **(भूरि)** बहु **(मनीषी)** मेधावी **(हवते)** गृह्णाति स्तौति वा **(त्वाम्)** **(इत्)** एव **(मा)** **(आरे)** दूरे समीपे वा **(अस्मत्)** **(मघवन्)** बह्वैश्वर्ययुक्त **(ज्योक्)** निरन्तरम् **(कः)** कुर्याः॥६॥

अन्वयः-हे मघवन् बहुविद्यैश्वर्ययुक्त! यो मानुषेषु भूरि मनीषी ते सवना भूरि हवते ये हि त्वामित् स्तौति तं ह्यस्मदारे ज्योग्मा कः किन्तु सदाऽस्मत्समीपे रक्षेः॥६॥

भावार्थः-यो हि मनुष्याणां मध्य उत्तमो विद्वानाप्तः परीक्षको भवेत्तमन्यानध्यापकांश्च सततं प्रार्थयेयुर्भवद्भिरस्माकं निकटे यो धार्मिको विद्वान् भवेत् स एव निरन्तरं रक्षणीयो यश्च मिथ्या प्रियवादी न स्यात्॥६॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुत विद्यारूपी ऐश्वर्य्ययुक्त! जो **(मानुषेषु)** मनुष्यों में **(भूरि)** बहुत **(मनीषी)** बुद्धिवाला जन **(ते)** आपके **(सवना)** यज्ञसिद्धि कराने वाले कर्मों वा प्रेरणाओं को **(भूरि)**

बहुत **(हवते)** ग्रहण करता तथा जो **(त्वाम्)** आप की **(इत्)** ही स्तुति प्रशंसा करता **(हि)** उसी को **(अस्मत्)** हम लोगों से **(आरे)** दूर **(ज्योक्)** निरन्तर **(मा, कः)** मत करो, किन्तु सदा हमारे समीप रक्खो॥६॥

भावार्थः-जो निश्चय से मनुष्यों के बीच उत्तम विद्वान् आप्त परीक्षा करने वाला हो उसकी तथा अन्य अध्यापकों की निरन्तर प्रार्थना करो आप लोगों को हमारे निकट जो धार्मिक, विद्वान् हो, यही निरन्तर रखने योग्य है, जो मिथ्या प्यारी वाणी बोलने वाला न हो॥६॥

पुनस्सेनाऽधिष्ठातृभिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर सेनापतियों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तुभ्येदि॒मा सव॑ना शूर॒ विश्वा॒ तुभ्यं॒ ब्रह्मा॑णि॒ वर्ध॑ना कृणोमि।
त्वं नृभि॒र्हव्यो॑ वि॒श्वधा॑सि॥७॥

तुभ्य॑। इत्। इ॒मा। सव॑ना। शू॒र॒। विश्वा॑। तुभ्य॑म्। ब्रह्मा॑णि। वर्ध॑ना। कृ॒णो॒मि॒। त्वम्। नृऽभिः॑। हव्यः॑। वि॒श्वधा॑। अ॒सि॒॥७॥

पदार्थः-**(तुभ्य)** तुभ्यम् **(इत्)** एव **(इमा)** इमानि **(सवना)** ओषधिनिर्माणानि प्रेरणानि वा **(शूर)** निर्भयतया शत्रूणां हिंसक **(विश्वा)** सर्वाणि **(तुभ्यम्)** **(ब्रह्माणि)** धनान्यन्नानि वा **(वर्धना)** उन्नतिकराणि कर्माणि **(कृणोमि)** करोमि **(त्वम्)** **(नृभिः)** नायकैर्मनुष्यैः **(हव्यः)** स्तोतुमादातुमर्हः **(विश्वधा)** यो विश्वं दधाति सः। अत्र **छान्दसो वर्णलोपः** इति सलोपः। **(असि)**॥७॥

अन्वयः-हे शूर राजन् सेनेश वा! यो विश्वधास्त्वं नृभिर्हव्योऽसि तस्मात्तुभ्येदिमा सवना कृणोमि तुभ्यं विश्वा ब्रह्माणि वर्धना च कृणोमि॥७॥

भावार्थः-सेनाधिष्ठातारः सेनास्थान् योद्धॄन् भृत्यान् सुपरीक्ष्याऽधिकारेषु कार्येषु च नियोजयेयुस्तेषां यथावत्पालनं विधाय सुशिक्षया वर्धयेयुः॥७॥

पदार्थः-हे **(शूर)** निर्भयता से शत्रुजनों की हिंसा करने वाले राजा वा सेनापति! जो **(विश्वधा)** विश्व को धारण करने वाले **(त्वम्)** आप **(नृभिः)** नायक मनुष्यों से **(हव्यः)** स्तुति वा ग्रहण करने योग्य **(असि)** हैं इससे **(तुभ्य)** तुम्हारे लिये **(इत्)** ही **(इमा)** यह **(सवना)** ओषधियों के बनाने वा प्रेरणाओं को **(कृणोमि)** करता हूँ और **(तुभ्यम्)** तुम्हारे लिये **(विश्वा)** समस्त **(ब्रह्माणि)** धन वा अन्नों और **(वर्धना)** उन्नति करने वाले कर्मों को करता हूँ॥७॥

भावार्थः-सेनाधिष्ठाता जन सेनास्थ योद्धा भृत्यजनों की अच्छे प्रकार परीक्षा कर अधिकार और कार्य्यों में नियुक्त करें यथावत् उनकी पालना करके उत्तम शिक्षा से बढ़ावें॥७॥

पुनः स राजा कीदृशान् पुरुषान् रक्षेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसे पुरुषों को रक्खे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू चि॒न्नु ते॒ मन्य॑मानस्य द॒स्मोद॑श्नुवन्ति महि॒मान॑मुग्र।

न वीर्यमिन्द्र ते न राधः॥८॥

नु। चित्। नु। ते। मन्यमानस्य। दस्म। उत्। अश्नुवन्ति। महिमानम्। उग्र। न। वीर्यम्। इन्द्र। ते। न। राधः॥८॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**चित्**) अपि (**नु**) (**ते**) तव (**मन्यमानस्य**) (**दस्म**) दुःखोपक्षयितः (**उत्**) (**अश्नुवन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**महिमानम्**) (**उग्र**) तेजस्विन् (**न**) निषेधे (**वीर्यम्**) पराक्रमम् (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त राजन् (**ते**) तव (**न**) निषेधे (**राधः**) धनम्॥८॥

अन्वयः-हे दस्मोग्रेन्द्र! मन्यमानस्य ते महिमानं नु सज्जना उदश्नुवन्ति तेषु विद्यमानेषु सत्सु ते तव वीर्यं शत्रवो हिंसितुं न शक्नुवन्ति न चित् तत्र नु राधो ग्रहीतुं शक्नुवन्ति॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! यदि भवान् सुपरीक्षितान् धार्मिकाञ्छूरान् विदुषस्सत्कृत्य सन्निकटे रक्षेत्तर्हि कोऽपि शत्रुर्भवन्तं पीडयितुं न शक्नुयात् सदा वीयैश्वर्येण वर्धेत॥८॥

पदार्थः-हे (**दस्म**) दुःख के विनाशने वाले (**उग्र**) तेजस्वी (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त राजा! (**मन्यमानस्य**) माननीय के मानने वाले (**ते**) आपके (**महिमानम्**) बड़प्पन को (**नु**) शीघ्र सज्जन (**उत्, अश्नुवन्ति**) उन्नति पहुँचाते हैं उनके विद्यमान होते (**ते**) आपके (**वीर्यम्**) पराक्रम को शत्रुजन नष्ट (**न**) न कर सकते हैं (**चित्**) और (**न**) न वहाँ (**नु**) शीघ्र (**राधः**) धन ले सकते हैं॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! आप अच्छी परीक्षा कर सुपरीक्षित, धार्मिक, शूर, विद्वान् जनों को अपने निकट रक्खें तो कोई भी शत्रुजन आपको पीड़ा न दे सके सदा वीर्य और ऐश्वर्य से बढ़ो॥८॥

राजादिभिः कैस्सह मैत्री विधेयेत्याह॥

राजादिकों को किनके साथ मैत्री विधान करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये च पूर्व ऋषयो ये च नूत्ना इन्द्र ब्रह्माणि जनयन्त विप्राः।
अस्मे ते सन्तु सख्या शिवानि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥९॥६॥

ये। च। पूर्वे। ऋषयः। ये। च। नूत्नाः। इन्द्र। ब्रह्माणि। जनयन्त। विप्राः। अस्मे इति। ते। सन्तु। सख्या। शिवानि। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥९॥

पदार्थः-(**ये**) (**च**) (**पूर्वे**) अधीतवन्तः (**ऋषयः**) वेदार्थविदः (**ये**) (**च**) (**नूत्नाः**) अधीयते (**इन्द्र**) राजन् (**ब्रह्माणि**) धनान्यन्नानि वा (**जनयन्त**) जनयन्ति (**विप्राः**) मेधाविनः (**अस्मे**) अस्मभ्यमस्माकं वा (**ते**) तव (**सन्तु**) (**सख्या**) सख्युः कर्माणि (**शिवानि**) मङ्गलप्रदानि (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) सदा (**नः**)॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये पूर्व ऋषयो धार्मिकाश्च ये नूत्ना धीमन्तश्च विप्रास्ते अस्मे च ब्रह्माणि जनयन्त तैस्सहाऽस्माकं तव च शिवानि सख्या सन्तु यथा यूयमस्मत्सखाय सन्तः स्वस्तिभिर्नः सदा पात तथा वयमपि युष्मान् स्वस्तिभिः सदा रक्षेम॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन् ये वेदार्थविदर्थविदो योगिन आप्ता उपदेशका अध्यापकाश्च ये धर्म्येण विद्याध्ययने रताः प्राज्ञाश्चास्मत्कल्याणेच्छुका भवेयुस्तैस्सहैव मैत्रीं कृत्वा धनधान्यानि वर्धयित्वैतैरेतान् सततं रक्ष रक्षिताश्च ते भवन्तं सदा रक्षयिष्यन्तीति॥९॥

अत्रेन्द्रराजशूरसेनेशाध्यापकाऽध्येतृपरीक्षकोपदेशककृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य सूक्तस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वाविंशतितमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः- हे **(इन्द्र)** राजन् **(ये)** जो **(पूर्वे)** विद्या पढ़े हुए **(ऋषयः)** वेदार्थवेत्ता जन **(च)** और धार्मिक अन्य जन **(ये)** जो **(नूत्नाः)** नवीन पढ़ने वाले जन **(च)** और बुद्धिमान् अन्य जन **(विप्राः)** उत्तम बुद्धि वाले जन **(ते)** तुम्हारे और **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(ब्रह्माणि)** धन वा अन्नों को **(जनयन्त)** उत्पन्न करते हैं उनके साथ हमारे और आपके **(शिवानि)** मङ्गल देने वाले **(सख्या)** मित्र के कर्म **(सन्तु)** हों जैसे **(यूयम्)** तुम हमारे मित्र हुए **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो, वैसे हम लोग भी तुम को सुखों से सदा पालें॥९॥

भावार्थः- इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजा! जो वेदार्थवेत्ता और अर्थ पदार्थों को जानने वाले योगी जन विद्याध्ययन में निरत बुद्धिमान् हमारे कल्याण की इच्छा करने वाले हों उनके साथ ऐसी मित्रता कर धनधान्यों को बढ़ा इनसे इनकी सदा रक्षा कर और रक्षा किये हुए वह जन आप की सदा रक्षा करेंगे॥९॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, शूर, सेनापति, पढ़ाने, पढ़ने, परीक्षा करने और उपदेश देने वालों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह बाईसवां सूक्त और छठा वर्ग पूरा हुआ॥

अथ षड्चस्य त्रयोविंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ६, भुरिक् पङ्क्तिः। ४ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ३ विराट् त्रिष्टुप्। ५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ उपस्थित सङ्ग्रामे प्रबन्धकर्तारः किं किं कुर्य्युरित्याह॥

अब छः ऋचावालें तेईसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में प्रबन्धकर्ता जन क्या क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

उदु ब्रह्माण्यैरत श्रवस्येन्द्रं समर्ये महया वसिष्ठ।
आ यो विश्वानि शवसा ततानोपश्रोता म ईवतो वचांसि॥१॥

उत्। ऊँ इति। ब्रह्माणि। ऐरत। श्रवस्या। इन्द्रम्। सऽमर्ये। महय। वसिष्ठ। आ। यः। विश्वानि। शवसा। ततान। उपऽश्रोता। मे। ईवतः। वचांसि॥ १॥

पदार्थः-(**उत्**) (**उ**) (**ब्रह्माणि**) धनधान्यानि (**ऐरत**) प्रेरयन्ति (**श्रवस्या**) श्रवःस्वन्नेषु श्रवणेषु भवानि (**इन्द्रम्**) शूरवीरम् (**समर्ये**) स-मे (**महया**) पूजय। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**वसिष्ठ**) अतिशयेन वसो (**आ**) समन्तात् (**यः**) (**विश्वानि**) सर्वाणि (**शवसा**) बलेन (**ततान**) तनोति (**उपश्रोता**) य उपद्रष्टा सञ्छृणोति (**मे**) मम (**ईवतः**) सामीप्यं गच्छतः (**वचांसि**) वचनानि॥१॥

अन्वयः-हे वसिष्ठ विद्वन् राजन्! यथा विद्वांसः श्रवस्या ब्रह्माण्युदैरत तथेन्द्रमु समर्ये महय। य उपश्रोता शवसेवतो मे विश्वानि वचांस्या ततान तमप्युपदेष्टारं समर्ये महय॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यदा सङ्ग्राम उपतिष्ठेत्तदा पुष्कलं धनं धान्यं शस्त्रादिकं सेनाङ्गानि चैतेषां रक्षकान् सुप्रबन्धकर्तॄन् भवान् प्रेरयतु तत्राप्तानुपदेष्टॄँश्च रक्षयत योद्धार उत्साहिताः सुरक्षिताः सन्तः क्षिप्रं विजयं कुर्य्युः॥१॥

पदार्थः-हे (**वसिष्ठ**) अतीव बसने वाले विद्वान् राजा! जैसे विद्वान् जन (**श्रवस्या**) अन्न वा श्रवणों के बीच उत्पन्न हुए (**ब्रह्माणि**) धन-धान्यों को (**उत्, ऐरत**) प्रेरणा देते हैं, वैसे (**इन्द्रम्**) शूरवीरजन का (**उ**) तर्क वितर्क से (**समर्ये**) समर में (**महय**) सत्कार करो (**यः**) जो (**उपश्रोता**) ऊपर से देखने वाला अच्छे सुनता है वह (**शवसा**) बल से (**ईवतः**) समीप जाते हुए (**मे**) मेरे (**विश्वानि**) सब (**वचांसि**) वचनों को (**आ, ततान**) अच्छे प्रकार विस्तारता है, उस उपदेशक का भी समर में सत्कार करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जब संग्राम उपस्थित हो तब बहुत धन अन्न शस्त्र अस्त्र सेनाओं के अङ्ग और इनकी रक्षा करने तथा अच्छे प्रबन्ध करने वालों को आप प्रेरणा देओ, आप्त और उपदेष्टा जनों को रक्खो, योद्धा जन उत्साहित और सुरक्षित हुए शीघ्र विजय करें॥१॥

पुनः स राजाऽमात्याश्चाऽन्योऽन्यं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर वह राजा और मन्त्री जन परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयामि घोष इन्द्र देवजामिरिरज्यन्त यच्छुरुधो विवाचि।
नहि स्वमायुश्चिकिते जनेषु तानीदंहांस्यति पर्ष्यस्मान्॥ २॥

अयामि। घोषः। इन्द्र। देवऽजामिः। इरज्यन्त। यत्। शुरुधः। विऽवाचि। नहि। स्वम्। आयुः। चिकिते। जनेषु। तानि। इत्। अंहांसि। अति। पर्षि। अस्मान्॥ २॥

पदार्थः-(**अयामि**) प्राप्नोति (**घोषः**) सुवक्तृत्वयुक्ता वाक्। **घोष इति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**देवजामिः**) यो देवैस्सह जमति सः (**इरज्यन्त**) प्राप्नुवन्तु (**यत्**) ये (**शुरुधः**) ये सद्यो रुन्धन्ति ते (**विवाचि**) विविधासु विद्यासु प्रवृत्ता वाक् तस्याम् (**नहि**) निषेधे (**स्वम्**) स्वकीयम् (**आयुः**) जीवनम् (**चिकिते**) जानाति (**जनेषु**) मनुष्येषु (**तानि**) (**इत्**) एव (**अंहांसि**) अधर्मयुक्तानि कर्माणि (**अति**) (**पर्षि**) पूरयसि (**अस्मान्**)॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्र यद्ये शुरुधो विवाचीरज्यन्त यैः सह देवजामिर्घोषः प्रवर्तते यो जनेषु स्वमायुश्चिकिते तान्यंहांसि दूरेऽति पर्ष्यस्माँश्च सुरक्षति तमहमयामि एते सर्वे वयं पुरुषार्थेन कदाचित् पराजिता इन्नहि भवेम॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा विद्वांसो धर्म्ये वर्त्तेरँस्तथा यूयमपि वर्त्तध्वम् ब्रह्मचर्यादिना स्वकीयमायुर्वर्धयत॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परम ऐश्वर्य के देने वाले! (**यत्**) जो (**शुरुधः**) शीघ्र रूंधने वाले (**विवाचि**) नाना प्रकार की विद्याओं में जो प्रवृत्त वाणी उसमें (**इरज्यन्त**) प्राप्त होते हैं वा जिनके साथ (**देवजामिः**) विद्वानों के संग रहने वाली (**घोषः**) अच्छी वक्तृता से युक्त वाणी प्रवृत्त हो वा जो (**जनेषु**) मनुष्यों में (**स्वम्**) अपनी (**आयुः**) उमर को (**चिकिते**) जानता है वा (**तानि**) उन (**अंहांसि**) अधर्मयुक्त कामों को दूर (**अति, पर्षि**) आप अति पार पहुँचाते वा (**अस्मान्**) हम लोगों की अच्छे प्रकार रक्षा करता है उसकी मैं (**अयामि**) रक्षा करता हूँ ये समस्त हम लोग पुरुषार्थ से पराजित (**इत्, नहि**) कभी न हों॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन धर्मयुक्त व्यवहार में वर्तें, वैसे तुम भी वर्तो, ब्रह्मचर्य्य आदि से अपनी आयु को बढ़ाओ॥ २॥

पुनः किं कृत्वा वीराः सङ्ग्रामे गच्छेयुरित्याह॥

फिर क्या करके वीर संग्राम में जावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

युजे रथं गवेषणं हरिभ्यामुप ब्रह्माणि जुजुषाणमस्थुः।
वि बाधिष्ट स्य रोदसी महित्वेन्द्रो वृत्राण्यप्रती जघन्वान्॥ ३॥

युजे। रथम्। गोऽएषणम्। हरिऽभ्याम्। उप। ब्रह्माणि। जुजुषाणम्। अस्थुः। वि। बाधिष्ट। स्यः। रोदसी इति। महिऽत्वा। इन्द्रः। वृत्राणि। अप्रति। जघन्वान्॥ ३॥

पदार्थः-(**युजे**) युनज्मि (**रथम्**) प्रशस्तं यानम् (**गवेषणम्**) गां भूमिं प्रापकम् (**हरिभ्याम्**)

अश्वाभ्याम् **(उप)** धनधान्यानि **(जुजुषाणम्)** सेवमानम् **(अस्थुः)** तिष्ठन्तु **(वि) (बाधिष्ट)** बाधयन्तु **(स्यः)** सः **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(महित्वा)** महिम्ना **(इन्द्रः)** सूर्यः **(वृत्राणि)** धनानि **(अप्रति)** अप्रत्यक्षेऽपि **(जघन्वान्)** हन्ता॥३॥

अन्वयः-हे सेनेश! यथेन्द्रो महित्वा रोदसी प्रकाशयति तथायं ब्रह्माणि जुजुषाणं रथं वीरा उपास्थुर्येन शूरवीराः शत्रून् विबाधिष्ट तमप्रति जघन्वान् स्योऽहं गवेषणं रथं हरिभ्यां युजे वृत्राणि प्राप्नुयाम्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे शूरवीरा! यदा भवन्तो युद्धाय गच्छेयुस्तदा सर्वा सामग्रीमलंकृत्य यान्तु येन शत्रूणां बाधा सद्यः स्याद्विजयैश्वर्यं च प्राप्नुयात्॥३॥

पदार्थः-हे सेनेश! जैसे **(इन्द्रः)** सूर्य **(महित्वा)** अपने महान् परिमाण से **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी को प्रकाशित करता है, वैसे जिस **(ब्रह्माणि)** धन धान्य पदार्थों को **(जुजुषाणाम्)** सेवते हुए **(रथम्)** प्रशंसनीय रथ को वीरजन **(उपास्थुः)** उपस्थित होते हैं जिससे शूरवीर जन शत्रुओं को **(वि, बाधिष्ट)** विविध प्रकार से विलोवें पीड़ा दें उसको **(अप्रति)** अप्रत्यक्ष अर्थात् पीछे भी **(जघन्वान्)** मारने वाला **(स्यः)** वह मैं **(गवेषणम्)** भूमि पर पहुँचाने वाले रथ को **(हरिभ्याम्)** हरणशील घोड़ों से **(युजे)** जोड़ता हूँ जिससे **(वृत्राणि)** धनों को प्राप्त होऊँ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे शूरवीरो! जब आप लोग युद्ध के लिये जावें तब सामग्री को पूरी करके जावें, जिससे शत्रुओं को शीघ्र बाधा पीड़ा हो और विजय को भी प्राप्त हो॥३॥

पुनः सेनापतीशः कीदृशान् योद्धॄन् रक्षेदित्याह॥

फिर सेनापति का ईश वीर कैसे युद्ध करने वालों को रक्खे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आपश्चित्पिप्युः स्तर्यो३ न गावो नक्षन्नृतं जरितारस्त इन्द्र।
याहि वायुर्न नियुतो नो अच्छा त्वं हि धीभिर्दयसे वि वाजान्॥४॥

आपः। चित्। पिप्युः। स्तर्यः। न। गावः। नक्षन्। ऋतम्। जरितारः। ते। इन्द्र। याहि। वायुः। न। निऽयुतः। नः। अच्छ। त्वम्। हि। धीभिः। दयसे। वि। वाजान्॥४॥

पदार्थः-**(आपः)** जलानि **(चित्)** इव **(पिप्युः)** वर्धयेयुः **(स्तर्यः)** आच्छादिताः **(न)** इव **(गावः)** किरणाः **(नक्षन्)** व्याप्नुवन्ति **(ऋतम्)** सत्यम् **(जरितारः)** स्तावकाः **(ते)** तव **(इन्द्र)** सर्वसेनेश **(याहि)** **(वायुः)** पवनः **(न)** इव **(नियुतः)** निश्चितान् **(नः)** अस्मान् **(अच्छ)** अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(त्वम्)** **(हि)** यतः **(धीभिः)** प्रज्ञाभिः **(दयसे)** कृपां करोषि **(वि)** **(वाजान्)** वेगवतः॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये वीरा आपश्चिद्गमयन्तस्तर्यो गावो न पिप्युस्ते जरितार ऋतं नक्षंस्तैस्सह वायुर्न त्वं याहि हि त्वं धीभिर्नियुतो वाजान्नोऽच्छ विदयसे तस्माद्वयं तवाज्ञां नोल्लङ्घयामः॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे सेनाध्यक्षेश! यदि भवान्सुपरीक्षिताञ्छूरवीरान् संरक्ष्य सुशिक्षाय

कृपयोन्नीय शत्रुभिस्सह योधयेत्तर्ह्येत सूर्यकिरणवत्तेजस्विनो भूत्वा वायुवत्सद्यो गत्वा शत्रूँस्तूर्णं विनाशयेयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सर्व सेनापति! जो वीरजन **(आपः)** जलों के **(चित्)** समान सेनाजनों को चलाते हुए **(स्तर्यः)** ढँपी हुई **(गावः)** किरणों के **(न)** समान **(पिप्युः)** बढ़ावें और **(ते)** आप की **(जरितारः)** स्तुति करने वाले जन **(ऋतम्)** सत्य को **(नक्षन्)** व्याप्त होते हैं उनके साथ **(वायुः)** पवन के **(न)** समान **(त्वम्)** आप **(याहि)** जाइये **(हि)** जिससे **(धीभिः)** उत्तम क्रियाओं से **(नियुतः)** निश्चित किये हुए **(वाजान्)** वेगवान् **(नः)** हम लोगों की **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(वि, दयसे)** विशेषता से दया करते हो, इससे हम लोग तुम्हारी आज्ञा को न उल्लंघन करें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे सेनाध्यक्ष पति! यदि आप सुरक्षित शूरवीर जनों की अच्छे प्रकार रक्षा कर अच्छी शिक्षा देकर और कृपा से उन्नति कर शत्रुओं के साथ युद्ध करावें तो ये सूर्य की किरणों के समान तेजस्वी होकर पवन के समान शीघ्र जा शत्रुओं को शीघ्र विनाशें॥४॥

पुनस्ते सर्वसेनेशाः सर्वे सेनाजनाः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर वे सब सेनापति और सब सेनाजन परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते त्वा मदा इन्द्र मादयन्तु शुष्मिणं तुविराधसं जरित्रे।
एको देवत्रा दयसे हि मर्तानस्मिञ्छूर सवने मादयस्व॥५॥

ते। त्वा। मदाः। इन्द्र। मादयन्तु। शुष्मिणम्। तुविऽराधसम्। जरित्रे। एकः। देवऽत्रा। दयसे। हि। मर्तान्। अस्मिन्। शूर। सवने। मादयस्व॥५॥

पदार्थः-**(ते)** **(त्वा)** त्वाम् **(मदाः)** आनन्दयुक्ताः सुभटाः **(इन्द्र)** सर्वसेनास्वामिन् **(मादयन्तु)** हर्षयन्तु **(शुष्मिणम्)** बहुबलयुक्तम् **(तुविराधसम्)** बहुधनधान्यम् **(जरित्रे)** सत्यस्तावकाय **(एकः)** असहायः **(देवत्रा)** देवेषु विद्वत्सु **(दयसे)** **(हि)** यतः **(मर्त्तान्)** मनुष्यान् **(अस्मिन्)** वर्त्तमाने **(शूर)** निर्भय **(सवने)** युद्धाय प्रेरणे **(मादयस्व)** आनन्दयस्व॥५॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! हि यतस्त्वमेको देवत्रा यस्मै जरित्रे येभ्यो भृत्येभ्यश्च दयसे ते मदाः सन्तः शुष्मिणं तुविराधसं त्वा मादयन्तु त्वमस्मिन् सवने तान् मर्तान् मादयस्व॥५॥

भावार्थः-हे सर्वसेनाऽधिकारिपते! त्वं सदा सर्वेषामुपरि पक्षपातं विहाय कृपां विदध्याः सर्वांश्च समभावेनानन्दय यतस्ते सुरक्षिताः सत्कृताः सन्तो दुष्टान्निवार्य श्रेष्ठान् रक्षित्वा राज्यं सततं वर्धयेयुः॥५॥

पदार्थः-हे **(शूर)** निर्भय **(इन्द्र)** सर्व सेना स्वामी! **(हि)** जिस कारण आप **(एकः)** अकेले **(देवत्रा)** विद्वानों में जिस **(जरित्रे)** सत्य की स्तुति करने वाले के लिये जिन भृत्य जनों से **(दयसे)** दया करते हो **(ते)** वे **(मदाः)** आनन्दयुक्त होते हुए अच्छे भट योद्धाजन **(शुष्मिणम्)** बलयुक्त **(तुविराधसम्)** बहुत धन-धान्य वाले **(त्वा)** आप को **(मादयन्तु)** हर्षित करें आप **(अस्मिन्)** इस वर्तमान **(सवने)** युद्ध के लिये प्रेरणा में उन **(मर्त्तान्)** मनुष्यों को **(मादयस्व)** आनन्दित करो॥५॥

भावार्थः-हे सर्व सेनाधिकारियों के पति! आप सर्वदैव सब पक्षपात को छोड़ कृपा करो और सब को समान भाव से आनन्दित करो जिससे वे अच्छी रक्षा और सत्कार पाये हुए दुष्टों का निवारण और श्रेष्ठों की रक्षा करके निरन्तर राज्य बढ़ावें॥५॥

पुनः सर्वसेनेशं सेनाजनाः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर सर्व सेनापति को सेनाजन परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासो अभ्यर्चन्त्यर्कैः।
स नः स्तुतो वीरवत्पातु गोमद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥६॥७॥

एव। इत्। इन्द्रम्। वृषणम्। वज्रऽबाहुम्। वसिष्ठासः। अभि। अर्चन्ति। अर्कैः। सः। नः। स्तुतः। वीरऽवत्। पातु। गोऽमत्। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥६॥

पदार्थः-(**एव**) (**इत्**) अपि (**इन्द्रम्**) सर्वसेनाधिपतिम् (**वृषणम्**) सुखानां वर्षयितारम् (**वज्रबाहुम्**) शस्त्रास्त्रपाणिम् (**वसिष्ठासः**) अतिशयेन वासयितारः (**अभि**) (**अर्चन्ति**) सत्कुर्वन्ति (**अर्कैः**) सुविचारैः (**सः**) (**नः**) अस्मान् (**स्तुतः**) प्रशंसितः (**वीरवत्**) वीरा विद्यन्ते यस्मिँस्तत्सैन्यम् (**पातु**) (**गोमत्**) प्रशस्ता गौर्वाग् विद्यते यस्मिँस्तत् (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**) अस्माकम्॥६॥

अन्वयः-ये वसिष्ठासोऽर्कैर्वृषणं वज्रबाहुमिन्द्रमभ्यर्चन्ति स एव स्तुतः सन्नः पातु। सर्वे यूयं स्वस्तिभिर्नो गोमद्वीरवदित्सैन्यं सदा पात॥६॥

भावार्थः-येषां योऽधिष्ठाता भवेत्तदाज्ञायां सर्वैर्यथावद्वर्तितव्यमधिष्ठाता च पक्षपातं विहाय सुविचार्याज्ञां प्रदद्यादेवं परस्परस्मिन् प्रीताः सन्तोऽन्योऽन्येषां रक्षणं विधाय राज्यधनयशांसि वर्धयित्वा सदा वर्धमाना भवन्त्विति॥६॥

अत्रेन्द्रसेनायोद्धृसर्वसेनेशकृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयोविंशतितमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो (**वसिष्ठासः**) अतीव बसाने वाले जन (**अर्कैः**) उत्तम विचारों से (**वृषणम्**) सुखों की वर्षा करने और (**वज्रबाहुम्**) शस्त्र अस्त्रों को हाथों में रखने वाले (**इन्द्रम्**) सर्व सेनाधिपति का (**अभि, अर्चन्ति**) सत्कार करते हैं (**सः, एवः**) वही (**स्तुतः**) स्तुति को प्राप्त हुआ (**नः**) हम लोगों की (**पातु**) रक्षा करे। सब (**यूयम्**) तुम लोग (**स्वस्तिभिः**) सुखों से (**नः**) हम लोगों की तथा (**गोमत्**) प्रशंसित गौएं जिसमें विद्यमान वा (**वीरवत्**) वीरजन जिसमें विद्यमान वा (**इत्**) उस सेना

समूह की भी **(सदा)** **[**सदा**]** **(पात)** रक्षा करो॥६॥

भावार्थः-जिनका जो अधिष्ठाता हो उसकी आज्ञा में सब को यथावत् वर्तना चाहिये। अधिष्ठाता भी पक्षपात को छोड़ अच्छे प्रकार विचार कर आज्ञा दे, ऐसे परस्पर की रक्षा कर राज्य, धन और यशों को बढ़ा सदा बढ़ते हुए होओ॥६॥

इस सूक्त में इन्द्र, सेना, योद्धा और सर्व सेनापतियों के कार्य्यों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह तेईसवां सूक्त और सातवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्चस्य चतुर्विंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ५ त्रिष्टुप्। ४ विराट् त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। ६ विराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब छः ऋचीवाले चौबसीवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

योनिष्ट इन्द्र सदने अकारि तमा नृभिः पुरुहूत प्र याहि।
असो यथा नोऽविता वृधे च ददो वसूनि ममदश्च सोमैः॥ १॥

योनिः। ते। इन्द्र। सदने। अकारि। तम्। आ। नृऽभिः। पुरुऽहूत। प्र। याहि। असः। यथा। नः। अविता। वृधे। च। ददः। वसूनि। ममदः। च। सोमैः॥ १॥

पदार्थः-(**योनिः**) गृहम् (**ते**) तव (**इन्द्र**) नरेश (**सदने**) उत्तमे स्थले (**अकारि**) क्रियते (**तम्**) (**आ**) (**नृभिः**) नायकैर्मनुष्यैः (**पुरुहूत**) बहुभिः स्तुत (**प्र**) (**याहि**) (**असः**) भवेः (**यथा**) (**नः**) अस्माकम् (**अविता**) रक्षकः (**वृधे**) वर्धनाय (**च**) (**ददः**) ददासि (**वसूनि**) द्रव्याणि (**ममदः**) आनन्द (**च**) आनन्दमय (**सोमैः**) ऐश्वर्योत्तमौषधिरसैः॥ १॥

अन्वयः-हे पुरुहूत इन्द्र राजंस्ते सदने यो योनिस्त्वयाऽकारि तं नृभिस्सह प्र याहि यथा नोऽविताऽसो नो वृधे च वसून्या ददः सोमैश्च ममदस्तथा सर्वेषां सुखाय भव॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्निवासस्थानमुत्तमजलस्थलवायुके देशे गृहं निर्माय तत्र निवसितव्यम्। सर्वैः सर्वेषां सुखवर्धनाय धनादिभिः संरक्षणं कृत्वाऽखिलैरानन्दितव्यम्॥ १॥

पदार्थः-(**पुरुहूत**) बहुतों से स्तुति पाये हुए (**इन्द्र**) मनुष्यों के स्वामी राजा! (**ते**) आपके (**सदने**) उत्तम स्थान में जो (**योनिः**) घर तुम से (**अकारि**) किया जाता है (**तम्**) उसको (**नृभिः**) नायक मनुष्यों के साथ (**प्र, याहि**) उत्तमता से जाओ (**यथा**) जैसे (**नः**) हमारी (**अविता**) रक्षा करने वाला (**असः**) होओ और हमारी (**वृधे**) वृद्धि के लिये (**च**) भी (**वसूनि**) द्रव्य वा उत्तम पदार्थों को (**आ, ददः**) ग्रहण करो (**सोमैः, च**) और ऐश्वर्य वा उत्तमोत्तम ओषधियों के रसों से (**ममदः**) हर्ष को प्राप्त होओ, वैसे सब के सुख के लिये होओ॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि निवासस्थान उत्तम जल, स्थल और पवन जहाँ हो उस देश में घर बना कर वहाँ बसें, सब के सुखों के बढ़ाने के लिये धनादि पदार्थों से अच्छी रक्षा कर सबों को आनन्दित करें॥ १॥

पुनः स्त्रीपुरुषौ किं कृत्वा विवाहं कुर्यातामित्याह॥

फिर वे स्त्री-पुरुष क्या करके विवाह करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गृभीतं ते मन इन्द्र द्विबर्हाः सुतः सोमः परिषिक्ता मधूनि।
विसृष्टधेना भरते सुवृक्तिरियमिन्द्रं जोहुवती मनीषा॥ २॥

गृभीतम्। ते। मनः। इन्द्र। द्विऽबर्हाः। सुतः। सोमः। परिऽसिक्ता। मधूनि। विसृष्टऽधेना। भरते। सुऽवृक्तिः। इयम्। इन्द्रम्। जोहुवती। मनीषा॥ २॥

पदार्थः-(**गृभीतम्**) गृहीतम् (**ते**) तव (**मनः**) अन्तःकरणम् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**द्विबर्हाः**) द्वाभ्यां विद्यापुरुषार्थाभ्यां यो वर्धते सः (**सुतः**) निष्पादितः (**सोमः**) ओषधिरसः (**परिषिक्ता**) सर्वतः सिक्तानि (**मधूनि**) क्षौद्रादीनि (**विसृष्टधेना**) विविधविद्यायुक्ता धेना वाग्यस्याः सा (**भरते**) धरति (**सुवृक्तिः**) शोभना वृक्तिः वर्त्तनं यस्याः सा (**इयम्**) (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यप्रदं पुरुषम् (**जोहुवती**) या भृशमाह्वयति (**मनीषा**) प्रिया॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्र! या विसृष्टधेना सुवृक्तिरियं मनीषेन्द्रं जोहुवती भरते यया ते मनो गृभीतं यो द्विबर्हाः सुतः सोमोऽस्ति यत्र परिषिक्तानि मधूनि सन्ति तं सेवस्व॥ २॥

भावार्थः-या स्त्री सुविचारेण स्वप्रियं पतिं प्राप्य गर्भं बिभर्ति सा पत्युश्चित्ताकार्षिका वशकारिणी भूत्वा वीरसुतं जनयित्वा सर्वदाऽऽनन्दति॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परमैश्वर्य के देने वाले जो (**विसृष्टधेना**) नाना प्रकार की विद्यायुक्त वाणी और (**सुवृक्तिः**) सुन्दर चाल ढाल जिसकी ऐसी (**इयम्**) यह (**मनीषा**) प्रिया स्त्री (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य देने वाले पुरुष को (**जोहुवति**) निरन्तर बुलाती है उसको (**भरते**) धारण करती है जिसने (**ते**) तेरा (**मनः**) मन (**गृभीतम्**) ग्रहण किया तथा जो (**द्विबर्हाः**) दो से अर्थात् विद्या और पुरुषार्थ से बढ़ता वह (**सुतः**) उत्पन्न किया हुआ (**सोमः**) ओषधियों का रस है और जहाँ (**परिषिक्ता**) सब ओर से सींचे हुए (**मधूनि**) दाख वा सहत आदि पदार्थ हैं, उन्हें सेवो॥ २॥

भावार्थः-जो स्त्री सुविचार से अपने प्रिय पति को प्राप्त होके गर्भ को धारण करती है वह पति के चित्त को खींचने और वश [में] करने वाली होकर वीर सुत को उत्पन्न कर सर्वदा आनन्दित होती है॥ २॥

पुनर्मनुष्यैः किं वर्त्तयित्वा किं पेयमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या वर्त्त कर क्या पीना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

आ नो दिव आ पृथिव्या ऋजीषिन्निदं बर्हिः सोमपेयाय याहि।
वहन्तु त्वा हरयो मद्र्यञ्चमाङ्गूषमच्छा तवसं मदाय॥ ३॥

आ। नः। दिवः। आ। पृथिव्याः। ऋजीषिन्। इदम्। बर्हिः। सोमऽपेयाय। याहि। वहन्तु। त्वा। हरयः। मद्र्यञ्चम्। आङ्गूषम्। अच्छ। तवसम्। मदाय॥ ३॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**नः**) अस्माकम् (**दिवः**) प्रकाशम् (**आ**) (**पृथिव्याः**) भूमेः (**ऋजीषिन्**) सरलस्वभाव (**इदम्**) वर्त्तमानम् (**बर्हिः**) उत्तमं स्थानमवकाशं वा (**सोमपेयाय**) उत्तमौषधिरसपानाय (**याहि**) आगच्छ (**वहन्तु**) प्रापयन्तु (**त्वा**) त्वाम् (**हरयः**) (**मद्र्यञ्चम्**) मामञ्चतम् (**आङ्गूषम्**) प्राप्नुवन्तम् (**अच्छा**) सम्यक्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**तवसम्**) बलम् (**मदाय**) आनन्दाय॥ ३॥

अन्वयः:-हे ऋजीषिंस्त्वं सोमपेयाय दिवः पृथिव्याः न इदं बर्हिरायाहि मदाय मद्र्यञ्चमाङ्गूषं तवसं त्वा सोमपेयाय हरयोऽच्छा वहन्तु॥३॥

भावार्थः:-त एवारोगाः शिष्टा धार्मिका चिरायुषः परोपकारिणो भवेयुर्ये मद्यबुद्ध्यादिप्रलम्पकं विहाय बलबुद्ध्यादिवर्धकं सोमादिमहौषधिरसं पातुं सज्जनैः सह स्वाप्तस्थानं [वा] गच्छेयुः॥३॥

पदार्थः-हे **(ऋजीषिन्)** सरल स्वभाव वाले आप **(सोमपेयाय)** उत्तम ओषधियों के रस के पीने के लिये **(दिवः)** प्रकाश और **(पृथिव्याः)** भूमि से **(नः)** हमारे **(इदम्)** इस वर्त्तमान **(बर्हिः)** उत्तम स्थान वा अवकाश को **(आ, याहि)** आओ **(मदाय)** आनन्द के लिये **(मद्र्यञ्चम्)** मेरा सत्कार करते **(आङ्गूषम्)** और प्राप्त होते हुए **(तवसम्)** बलवान् **(त्वाम्)** आपको उत्तम ओषधियों के रस पीने के लिये **(हरयः)** हरणशील **(अच्छ)** अच्छे **(आ, वहन्तु)** पहुँचावें॥३॥

भावार्थः-वे ही नीरोग, शिष्ट, धार्मिक, चिरायु और परोपकारी हों जो मद्यरूप और अच्छे प्रकार बुद्धि के नष्ट करने वाले पदार्थ को छोड़ बल, बुद्धि आदि को बढ़ाने वाले सोम आदि बड़ी ओषधियों के रस के पीने को अपने वा आप्त के स्थान को जावें॥३॥

पुनः क आप्ता भवन्तीत्याह॥

फिर कौन आप्त विद्वान् होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नो विश्वाभिरूतिभिः सजोषा ब्रह्म जुषाणो हर्यश्व याहि।
वरीवृजत्स्थविरेभिः सुशिप्रास्मे दधद् वृषणं शुष्ममिन्द्र॥४॥

आ। नः। विश्वाभिः। ऊतिऽभिः। सऽजोषाः। ब्रह्म। जुषाणः। हरिऽअश्व। याहि। वरीऽवृजत्। स्थविरेभिः। सुऽशिप्र। अस्मे इति। दधत्। वृषणम्। शुष्मम्। इन्द्र॥४॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(नः)** अस्मान् **(विश्वाभिः)** सर्वाभिः **(ऊतिभिः)** रक्षणादिक्रियाभिः **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेवी **(ब्रह्म)** धनमन्नं वा **(जुषाणः)** सेवमानः **(हर्यश्वः)** हरयो मनुष्या अश्वा महान्त आसन् यस्य तत् सम्बुद्धौ **(याहि)** प्राप्नुहि **(वरीवृजत्)** भृशं वर्जय **(स्थविरेभिः)** विद्यावयोवृद्धैः सह **(सुशिप्र)** सुशोभितमुखावयव **(अस्मे)** अस्मासु **(दधत्)** धेहि **(वृषणम्)** सुखवर्षकम् **(शुष्मम्)** बलम् **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद॥४॥

अन्वयः:-हे सुशिप्र हर्यश्वेन्द्र! विश्वाभिरूतिभिः सजोषा ब्रह्म जुषाणः स्थविरेभिरस्मे वृषणं शुष्मं दधत् त्वं दुःखानि वरीवृजन्नोऽस्मानायाहि॥४॥

भावार्थः:-त एव मनुष्या महाशया भवन्ति ये पापानि परोपघातान् वर्जयित्वा स्वात्मवत्सर्वेषु मनुष्येषु वर्त्तमानाः सर्वेषां सुखाय स्वकीयं शरीरं वाग्धनुमात्मानं च वर्त्तयन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(सुशिप्र)** उत्तम शोभायुक्त ठोढ़ी वाले **(हर्यश्व)** हरणशील मनुष्य वा घोड़े बड़े-बड़े जिसके हुए वह **(इन्द्र)** परम ऐश्वर्य देने वाले! **(विश्वाभिः)** समस्त **(ऊतिभिः)** रक्षा आदि क्रियाओं से **(सजोषाः)** समानप्रीति सेवने वाले **(ब्रह्म)** धन वा अन्न को **(जुषाणः)** सेवने वा **(स्थविरेभिः)** विद्या और अवस्था में वृद्धों के साथ **(अस्मे)** हम लोगों में **(वृषणम्)** सुख वर्षाने वाले

(शुष्मम्) बल को **(दधत्)** धारण करते हुए आप दु:खों को **(वरीवृजत्)** निरन्तर छोड़ो और **(न:)** हम लोगों को **(आ, याहि)** आओ, प्राप्त होओ॥४॥

भावार्थ:-वे ही मनुष्य महाशय होते हैं जो पाप और परोपघात अर्थात् दूसरों को पीड़ा देने के कामों को छोड़ के अपने आत्मा के तुल्य सब मनुष्यों में वर्त्तमान सब के सुख के लिये अपना शरीर, वाणी और ठोढ़ी को वर्तते हैं॥४॥

पुनर्विद्वान् किंवत् किं कुर्यादित्याह॥

फिर विद्वान् किसके तुल्य क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एष स्तोमो मह उग्राय वाहे धुरी३वात्यो न वाजयन्नधायि।
इन्द्र त्वाऽयमर्क ईट्टे वसूनां दिवीव द्यामधि न: श्रोमतं धा:॥५॥

एष:। स्तोम:। महे। उग्राय। वाहे। धुरिऽइव। अत्य:। न। वाजयन्। अधायि। इन्द्र। त्वा। अयम्। अर्क:। ईट्टे। वसूनाम्। दिविऽइव। द्याम्। अधि। न:। श्रोमतम्। धा:॥५॥

पदार्थ:-**(एष:)** **(स्तोम:)** श्लाध्यो व्यवहार: **(महे)** महते **(उग्राय)** तेजस्विने **(वाहे)** सर्वान्सुखं प्रापयित्रे **(धुरीव)** सर्वे यानावयवा लग्ना: सन्तो गच्छन्ति **(अत्य:)** अश्व: **(न)** इव **(वाजयन्)** वेगं कारयन् **(अधायि)** ध्रियते **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद **(त्वा)** त्वाम् **(अयम्)** विद्वान् **(अर्क:)** सत्कर्त्तव्य: **(ईट्टे)** ऐश्वर्यं प्रयच्छति **(वसूनाम्)** पृथिव्यादीनां मध्ये **(दिवीव)** सूर्यज्योतिषीव **(द्याम्)** प्रकाशम् **(अधि)** **(न:)** अस्माकम् **(श्रोमतम्)** श्रोतव्य विज्ञानमन्नादिकं वा **(धा:)** धेहि॥५॥

अन्वय:-हे इन्द्र! येन त्वया वाहे मह उग्राय धुरीवात्यो न वाजयन्नेष स्तोमोऽधायि योऽयमर्को वसूनां दिवीव त्वेट्टे स त्वं नो द्यां श्रोमतं चाधि धा:॥५॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। हे मनुष्या! यो विद्वान् तेजस्विभ्य: प्रशंसां धरति स धूर्वत्सर्वसुखाधारो वाजिवद्वेगवान् भूत्वा पुष्कलां श्रियं प्राप्य सूर्य इवात्र भ्राजते॥५॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्य के देने वाले! जिन आपने **(वाहे)** सब को सुख की प्राप्ति कराने वाले **(महे)** महान् **(उग्राय)** तेजस्वी के लिये **(धुरीव)** धुरी में जैसे रथ आदि के अवयव लगे हुए जाते हैं, वैसे **(अत्य:)** शीघ्र चलने वाले घोड़े के **(न)** समान **(वाजयन्)** वेग कराते हुए **(एष:)** यह **(स्तोम:)** श्लाघनीय स्तुति करने योग्य व्यवहार **(अधायि)** धारण किया जो **(अयम्)** यह **(अर्क:)** सत्कार करने योग्य **(वसूनाम्)** पृथिवी आदि के बीच **(दिवीव)** वा सूर्य ज्योति के बीच **(त्वा)** आपको **(ईट्टे)** ऐश्वर्य देता है वह आप **(न:)** हम लोगों को **(द्याम्)** प्रकाश और **(श्रोमतम्)** सुनने योग्य को **(अधि, धा:)** अधिकता से धारण करो॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो विद्वान् तेजस्वियों के लिये प्रशंसा धारण करता वह धुरी के समान सुख का आधार और घोड़े के समान वेगवान् हो बहुत लक्ष्मी पाकर सूर्य के समान इस संसार में प्रकाशित होता है॥५॥

पुनर्मनुष्यै: परस्पर कथं वर्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को परस्पर कैसे वर्तना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा न इन्द्र वार्यस्य पूर्धि प्र ते महीं सुमतिं वेविदाम।
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥६॥८॥

एव। नः। इन्द्र। वार्यस्य। पूर्धि। प्र। ते। महीम्। सुऽमतिम्। वेविदाम। इषम्। पिन्व। मघवत्ऽभ्यः। सुऽवीराम्। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥६॥

पदार्थः-(**एवा**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**इन्द्र**) शत्रुदुःखविदारक (**वार्यस्य**) वरितुं योग्यस्य (**पूर्धि**) पूरय (**प्र**) (**ते**) तव (**महीम्**) महतीम् (**सुमतिम्**) शोभनां प्रज्ञाम् (**वेविदाम**) यथावल्लभेमहि (**इषम्**) अन्नम् (**पिन्व**) सेवस्व (**मघवद्भ्यः**) बहुधनयुक्तेभ्यः (**सुवीराम्**) शोभना वीरा यस्यास्ताम् (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**) अस्मान्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं वार्यस्य ते यां महीं सुमतिं वयं वेविदाम तामेव नः प्र पूर्धि यां मघवद्भ्यः सुवीरामिषं वयं वेविदाम तां त्वं पिन्व तया सुमत्येषेण च स्वस्तिभिर्यूयं नः सदा पात॥६॥

भावार्थः-हे विद्वँस्त्वमस्मभ्यं धर्म्यां प्रज्ञां देहि यया वयं शुभान् गुणकर्मस्वभावान् प्राप्य सर्वाञ्जनान् सदा सुरक्षेम॥६॥

अत्रेन्द्रराजस्त्रीपुरुषविद्वद्गुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्विंशतितमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) शत्रुओं के विदीर्ण करने वाले! आप (**वार्यस्य**) ग्रहण करने योग्य (**ते**) आप की जिस (**महीम्**) बड़ी (**सुमतिम्**) उत्तम बुद्धि को हम लोग (**वेविदाम**) यथावत् पावें (**एव**) उसी को और (**नः**) हमको (**प्र, पूर्धि**) अच्छे प्रकार पूर्ण करो जिसको (**मघवद्भ्यः**) बहुत धनयुक्त पदार्थों से (**सुवीराम्**) उत्तम वीर हैं जिससे उस (**इषम्**) अन्न को हम लोग यथावत् प्राप्त हों। और उसको आप (**पिन्व**) सेवो उस सुमति और अन्न तथा (**स्वस्तिभिः**) सुखों से (**यूयम्**) तुम लोग (**नः**) हम लोगों की (**सदा**) सर्वदा (**पात**) रक्षा करो॥६॥

भावार्थः-हे विद्वान्! आप हम लोगों के लिये धर्मयुक्त उत्तम बुद्धि को देओ जिससे हम लोग अच्छे गुण-कर्म-स्वभावों को प्राप्त होकर सब मनुष्यों की अच्छे प्रकार रक्षा करें॥६॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, स्त्री-पुरुष और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चौबीसवां सूक्त और आठवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ षड्चस्य पञ्चविंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ निचृत्पङ्क्तिः। २ विराट्पङ्क्तिः। ४ पङ्क्तिः। ६ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३ विराट्त्रिष्टुप्। ५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ कीदृशी सेना वरा स्यादित्याह॥

अब छः ऋचावाले पच्चीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में कैसी सेना उत्तम होती है, इस विषय को कहते हैं॥

आ ते मह इन्द्रोत्युग्र समन्यवो यत्समरन्त सेनाः।
पताति दिद्युन्नर्यस्य बाह्वोर्मा ते मनो विष्वद्र्यग्वि चारीत्॥ १॥

आ। ते। महः। इन्द्र। ऊती। उग्र। सऽमन्यवः। यत्। सम्ऽअरन्त। सेनाः। पताति। दिद्युत्। नर्यस्य। बाह्वोः। मा। ते। मनः। विष्वद्र्यक्। वि। चारीत्॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**ते**) तव (**महः**) महतः (**इन्द्र**) सेनापते (**ऊती**) ऊत्या रक्षणाद्यया क्रियया (**उग्र**) शत्रूणां हनने कठिनस्वभाव (**समन्यवः**) मन्युना क्रोधेन सह वर्त्तमानाः (**यत्**) यस्य (**समरन्त**) सम्यग् गच्छन्ति (**सेनाः**) (**पताति**) पतेत् (**दिद्युत्**) देदीप्यमानाः (**नर्यस्य**) नृषु साधोः (**बाह्वोः**) भुजयोः (**मा**) (**ते**) तव (**मनः**) चित्तम् (**विष्वद्र्यक्**) यद्विष्वगञ्चति व्याप्नोति तत् (**वि**) (**चारीत्**) विशेषेण चरति॥ १॥

अन्वयः-हे उग्रेन्द्र! यद्यस्य नर्यस्य महस्ते समन्यवः सेना ऊती आ समरन्त तस्य ते बाह्वोर्दिद्युन्मा पताति ते मनो विष्वद्र्यग्विचारीत्॥ १॥

भावार्थः-हे सेनाधिपते! यदा सङ्ग्रामसमय आगच्छेत्तदा या क्रोधेन प्रज्वलिताः सेनाः शत्रूणामुपरि पतेयुस्तदा ता विजयं लभेरन् यावत्तव बाहुबलं न ह्रष्येत मनश्चान्याये न प्रवर्तेत तावत्तवोन्नतिर्जायत इति विजानीहि॥ १॥

पदार्थः-हे (**उग्र**) शत्रुओं के मारने में कठिन स्वभाव वाले (**इन्द्र**) सेनापति! (**यत्**) जिस (**नर्यस्य**) मनुष्यों में साधु (**महः**) महान् (**ते**) आप के (**समन्यवः**) क्रोध के साथ वर्त्तमान (**सेनाः**) सेना (**ऊती**) रक्षण आदि क्रिया से (**आ, समरन्त**) सब ओर से अच्छी जाती हैं उन (**ते**) आप की (**बाह्वोः**) भुजाओं में (**दिद्युत्**) निरन्तर प्रकाशमान युद्धक्रिया (**मा**) मत (**पताति**) गिरे, मत नष्ट हो और तुम्हारा (**मनः**) चित्त (**विष्वद्र्यक्**) सब ओर से प्राप्त होता हुआ (**वि, चारीत्**) विचरता है॥ १॥

भावार्थः-हे सेनाधिपति! जब संग्राम समय में आओ तब जो क्रोध प्रज्वलित क्रोधाग्नि से जलती हुई सेना शत्रुओं के ऊपर गिरें, उस समय वे विजय को प्राप्त हों, जब तक तुम्हारा बाहुबल न फैले मन भी अन्याय में न प्रवृत्त हो, तब तक तुम्हारी उन्नति होती है, यह जानो॥ १॥

पुना राज्ञा के दण्डनीया निवारणीयाश्चेत्याह॥

फिर राजा को कौन दण्ड देने योग्य और निवारने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नि दुर्ग इन्द्र श्नथिह्यमित्राँ॑नभि ये नो मर्तासो अमन्ति।
आरे तं शंसं कृणुहि निनित्सोरा नो भर संभरणं वसूनाम्॥२॥

नि। दुःगे। इन्द्र। श्नथिहि। अमित्रान्। अभि। ये। नः। मर्तासः। अमन्ति। आरे। तम्। शंसम्। कृणुहि। निनित्सोः। आ। नः। भर। सम्ऽभरणम्। वसूनाम्॥२॥

पदार्थः-(**नि**) नितराम् (**दुर्गे**) शत्रुभिर्दुःखेन गन्तव्ये प्रकोटे (**इन्द्र**) दुष्टशत्रुविदारक (**श्नथिहि**) हिंसय (**अमित्रान्**) सर्वैः सह द्रोहयुक्तान् (**अभि**) (**ये**) (**नः**) अस्मान् (**मर्त्तासः**) मनुष्याः (**अमन्ति**) प्रापयन्ति रोगान् (**आरे**) दूरे (**तम्**) (**शंसम्**) प्रशंसनीयं विजयम् (**कृणुहि**) (**निनित्सोः**) निन्दितुमिच्छोः (**आ**) (**नः**) अस्मान् (**भर**) (**सम्भरणम्**) सम्यग् धारणं पोषणं वा (**वसूनाम्**) द्रव्याणाम्॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये मर्त्तासो नो दुर्गेऽमन्ति तानमित्राँस्त्वं न्यभि श्नथिह्यस्मदारे प्रक्षिप निनित्सोरस्मानारे कृत्वा नस्तं शंसं कृणुहि वसूनां संभरणमाभर॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! ये धूर्त्ता मनुष्या ब्रह्मचर्यादिनिवारेण मनुष्यान् रुग्णान् कुर्वन्ति तान् कारागृहे बध्नीहि ये च स्वप्रशंसायै सर्वान्निन्दन्ति तान् सुशिक्ष्य भद्रिकायाः प्रजाया दूरे रक्षैव कृते भवतो महती प्रशंसा भविष्यति॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुष्ट शत्रुओं के निवारने वाले राजा! (**ये**) जो (**मर्त्तासः**) मनुष्य (**नः**) हम लोगों को (**दुर्गे**) शत्रुओं को दुःख से पहुँचने योग्य परकोटा में (**अमन्ति**) रोगों को पहुँचाते हैं उन (**अमित्रान्**) सब के साथ द्रोहयुक्त रहने वालों को [आप] (**नि, अभि, श्नथिहि**) निरन्तर सब ओर से मारो हम लोगों से (**आरे**) दूर उनको फेंको (**निनित्सोः**) और निन्दा की इच्छा करने वाले से हम लोगों को दूर कर (**नः**) हम लोगों के (**तम्**) उस (**शंसम्**) प्रशंसनीय विजय को (**कृणुहि**) कीजिये तथा (**वसूनाम्**) द्रव्यादि पदार्थों के (**संभरणम्**) अच्छे प्रकार पोषण को (**आ, भर**) सब ओर से स्थापित कीजिये॥२॥

भावार्थः-हे राजा! जो धूर्त मनुष्य ब्रह्मचर्य आदि के निवारण से मनुष्यों को रोगी करते हैं, उनको काराघर में बांधो और जो अपनी प्रशंसा के लिये सब की निन्दा करते हैं, उनको समझा कर उत्तम प्रजाजनों से अलग रक्खो, ऐसे करने से आपकी बड़ी प्रशंसा होगी॥२॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शतं ते शिप्रिन्नूतयः सुदासे सहस्रं शंसा उत रातिरस्तु।
जहि वधर्वनुषो मर्त्यस्यास्मे द्युम्नमधि रत्नं च धेहि॥३॥

शतम्। ते। शिप्रिन्। ऊतयः। सुऽदासे। सहस्रम्। शंसाः। उत। रातिः। अस्तु। जहि। वधः। वनुषः। मर्त्यस्य। अस्मे इति। द्युम्नम्। अधि। रत्नम्। च। धेहि॥३॥

पदार्थः-(**शतम्**) (**ते**) तव (**शिप्रिन्**) सुमुख (**ऊतयः**) रक्षाद्याः क्रियाः (**सुदासे**) यः सुष्ठु

ददाति तस्मै **(सहस्रम्)** असंख्याः **(शंसाः)** प्रशंसाः **(उत)** **(रातिः)** दानम् **(अस्तु)** **(जहि)** **(वधः)** ताडनम् **(वनुषः)** याचमानस्य **(मर्त्यस्य)** मनुष्यस्य पीडितस्य मर्तस्य **(अस्मे)** अस्मासु **(द्युम्नम्)** धर्म्यं यशः **(अधि)** उपरि **(रत्नम्)** रमणीयं धनम् **(च)** धेहि॥३॥

अन्वयः-हे शिप्रिन् राजँस्ते तव वनुषो मर्त्तस्य शतमूतयः सहस्रं शंसाः सन्तूत सुदासे रातिरस्तु त्वमधर्म्येण वनुषः पाखण्डिनो मर्त्यस्य वधो जह्यस्मे द्युम्नं रत्नं चाधि धेहि॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! भवाञ्छतशः सहस्रशः प्रकारैः प्रजापालनं सुपात्रदानं दुष्टवधं प्रजासु कीर्त्तिवर्धनं धनं च सततं त्वं विधेहि यतः सर्वे सुखिनः स्युः॥३॥

पदार्थः-हे **(शिप्रिन्)** अच्छे मुख वाले राजा **(ते)** आपके **(वनुषः)** याचना करते हुए पीड़ित मनुष्य की **(शतम्)** सैकड़ों **(ऊतयः)** रक्षा आदि क्रिया और **(सहस्रम्)** असंख्य **(शंसाः)** प्रशंसा हों **(उत)** और **(सुदासे)** जो उत्तमता से देता है उसके लिये **(रातिः)** दान **(अस्तु)** हो आप **(वनुषः)** अधर्म से मांगने वाले पाखण्डी **(मर्त्यस्य)** मनुष्य की **(वधः)** ताड़ना को **(जहि)** हनो, नष्ट करो तथा **(अस्मे)** हम लोगों में **(द्युम्नम्)** धर्मयुक्त यश और **(रत्नं च)** रमणीय धन भी **(अधि, धेहि)** अधिकता से धारण करो॥३॥

भावार्थः-हे राजा! आप सैकड़ों वा सहस्रों प्रकारों से प्रजा की पालना और सुपात्रों को देना, दुष्टों का बंधन, प्रजाजनों में कीर्ति बढ़ाना और धन को निरन्तर विधान करो जिससे सब सुखी हों॥३॥

पुनस्ते राजप्रजाजनाः परस्परस्मिन् कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर वे राजा और प्रजाजन परस्पर में कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वावतो हीन्द्र क्रत्वे अस्मि त्वावतोऽवितुः शूर रातौ।

विश्वेदहानि तविषीव उग्रँ ओकः कृणुष्व हरिवो न मर्धीः॥४॥

त्वाऽवतः। हि। इन्द्र। अस्मि। त्वाऽवतः। अवितुः। शूर। रातौ। विश्वा। इत्। अहानि। तविषीऽवः। उग्रः। ओकः। कृणुष्व। हरिऽवः। न। मर्धीः॥४॥

पदार्थः-**(त्वावतः)** त्वया सदृशस्य **(हि)** खलु **(इन्द्र)** **(क्रत्वे)** प्रज्ञायै कर्मणे वा **(अस्मि)** **(त्वावतः)** त्वत्तुल्यस्य **(अवितुः)** रक्षकस्य **(शूर)** निर्भय **(रातौ)** दाने **(विश्वा)** सर्वाणि **(इत्)** एव **(अहानि)** दिनानि **(तविषीवः)** प्रशंसिता तविषी सेना विद्यते तस्य तत्सम्बुद्धौ **(उग्रः)** तेजस्वी **(ओकः)** गृहम् **(कृणुष्व)** **(हरिवः)** प्रशस्ता हरयो मनुष्या विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ **(न)** निषेधे **(मर्धीः)** अभिकाङ्क्षे॥४॥

अन्वयः-हे तविषीवो हरिवः शूरेन्द्र सेनेश! हि यतोऽहं विश्वेदहानि त्वावतः क्रत्वे प्रवृत्तोऽस्मि त्वावतोऽवितू रातावुद्यतोऽस्मि तस्मै मह्यमुग्रस्त्वमोकः कृणुष्याधार्मिकमित्कंचन न मर्धीः॥४॥

भावार्थः-हे धार्मिक नृप! यतस्त्वं सर्वेषां रक्षणाय सदा प्रवृत्तो भवति तस्मात्तव रक्षणे वयं सर्वदा प्रवृत्ताः स्मः॥४॥

पदार्थः-हे **(तविषीवः)** प्रशंसित सेना वा **(हरिवः)** प्रशंसित हरणशील मनुष्यों वाले **(शूर)** निर्भय **(इन्द्र)** सेनापति! **(हि)** जिस कारण मैं **(विश्वा, इत्)** सभी **(अहानि)** दिनों **(त्वावतः)** तुम्हारे समान के **(क्रत्वे)** बुद्धि वा कर्म के लिये प्रवृत्त हूँ **(त्वावतः)** और आपके सदृश **(अवितुः)** रक्षा करने वाले के **(रातौ)** दान के निमित्त उद्यत **(अस्मि)** हूँ उस मेरे लिये **(उग्रः)** तेजस्वी आप **(ओकः)** घर **(कृणुष्व)** सिद्ध करो, बनाओ और अधार्मिक किसी जन को **(न)** न **(मर्धीः)** चाहो॥४॥

भावार्थः-हे धार्मिक राजा! जिससे आप सबकी रक्षा के लिये सदा प्रवृत्त होते हो, इससे तुम्हारी रक्षा में हम लोग सर्वदा प्रवृत्त हैं॥४॥

पुनस्तेन राज्ञा किमवश्यं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर उस राजा को क्या अवश्य करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कुत्सा॑ एते हर्य॑श्वाय शू॒षमिन्द्रे॒ सहो॑ दे॒वजू॑तमिया॒नाः।

स॒त्रा कृ॑धि सु॒हना॑ शूर वृ॒त्रा॑ व॒यं तरु॑त्राः सनुयाम॒ वाज॑म्॥५॥

कुत्सा॑ः। ए॒ते। हरि॑ऽअश्वाय। शू॒षम्। इन्द्रे॑। सह॑ः। दे॒वऽजू॑तम्। इ॒या॒नाः। स॒त्रा। कृ॒धि। सु॒ऽहना॑। शू॒र॒। वृ॒त्रा। व॒यम्। तरु॑त्राः। स॒नु॒या॒म॒। वाज॑म्॥५॥

पदार्थः-**(कुत्साः)** वज्राऽस्त्राद्या शस्त्राऽस्त्रसमूहाः **(एते)** **(हर्यश्वाय)** प्रशंसितनराश्वाय **(शूषम्)** बलम् **(इन्द्रे)** परमैश्वर्ययुक्ते **(सहः)** सहनम् **(देवजूतम्)** देवैः प्राप्तम् **(इयानाः)** प्राप्नुवन्तः **(सत्रा)** सत्येन **(कृधि)** **(सुहना)** सुहनानि हन्तुं सुगमानि **(शूर)** निर्भय **(वृत्रा)** वृत्राणि **(वयम्)** **(तरुत्राः)** दुःखात्सर्वेषां सन्तारकाः **(सनुयाम)** याचेम **(वाजम्)** विज्ञानम्॥५॥

अन्वयः-हे शूर! यस्मिँस्त्वयीन्द्रे हर्यश्वायैते कुत्साः सन्तु तान्देवजूतं शूषं सह इयानास्तरुत्रा वयं वाजं सनुयाम त्वं सत्रा [वृत्रा] सुहना कृधि॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि राज्यं पालयितुं वर्धयितुं भवानिच्छेत्तर्हि शस्त्राऽस्त्रसेनाः सततं गृहाण पुनः सत्याऽऽचारं विज्ञानवृद्धिं याचमानः सन् सततं वर्धस्वास्मान्वर्धय॥५॥

पदार्थः-हे **(शूर)** निर्भय जिन **(इन्द्रे)** परमैश्वर्य्ययुक्त आप में **(हर्यश्वाय)** प्रशंसित जिसके मनुष्य वा घोड़े उसके लिये **(एते)** ये **(कुत्साः)** वज्र अस्त्र और शस्त्र आदि समूह हों उनको और **(देवजूतम्)** देवों से पाये हुए **(शूषम्)** बल तथा **(सहः)** क्षमा **(इयानाः)** प्राप्त होते हुए **(तरुत्राः)** दुःख से सबको अच्छे प्रकार तारने वाले **(वयम्)** हम लोग **(वाजम्)** विज्ञान को **(सनुयाम)** याचें आप **(सत्रा)** सत्य से **(वृत्रा)** दुःखों को **(सुहना)** नष्ट करने के लिये सुगम **(कृधि)** करो॥५॥

भावार्थः-हे राजा! यदि राज्य पालने वा बढ़ाने को आप चाहें तो शस्त्र अस्त्र और सेना जनों को निरन्तर ग्रहण करो फिर सत्य आचार को मांगते हुए निरन्तर बढ़ो और हम लोगों को बढ़ाओ॥५॥

पुनरुपदेष्ट्र्युपदेश्यगुणानाह॥

फिर उपदेशक और उपदेश करने योग्यों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा न इन्द्र वार्यस्य पूर्धि प्र ते महीं सुमतिं वेविदाम।
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥६॥९॥

एव। नः। इन्द्र। वार्यस्य। पूर्धि। प्र। ते। महीम्। सुऽमतिम्। वेविदाम। इषम्। पिन्व। मघवत्ऽभ्यः। सुऽवीराम्। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥६॥

पदार्थः-(**एवा**) अवधारणे। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**वार्यस्य**) वरणीयस्य (**पूर्धि**) (**प्र**) (**ते**) तव (**महीम्**) महतीं वाचम् (**सुमतिम्**) शोभना मतिः प्रज्ञा यया ताम् (**वेविदाम**) प्राप्नुयाम (**इषम्**) विद्याम् (**पिन्व**) (**मघवद्भ्यः**) बहुधनयुक्तेभ्यः (**सुवीराम्**) शोभना वीरा विज्ञानवन्तो यस्यां ताम् (**यूयम्**) विज्ञानवन्तः (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) सुखादिभिः (**सदा**) (**नः**) अस्मान्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं नो विद्यया सुशिक्षया प्र पूर्धि यतो वयं वार्यस्य ते सुमतिं महीं वेविदाम मघवद्भ्यः सुवीरामिषं प्राप्नुयामाऽत्र त्वमस्मान्पिन्व यूयं स्वस्तिभिर्नः सदैव पात॥६॥

भावार्थः-त एवाऽध्यापका धन्यवादार्हा भवन्ति ये विद्यार्थिनः सद्यो विदुषो धार्मिकान्कुर्वन्ति सदैव रक्षायां वर्त्तमानाः सन्तः सर्वानुन्नयन्तीति॥६॥

अत्रेन्द्रसेनेशराजशस्त्राऽस्त्रग्रहणार्थवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चविंशतितमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्य के देने वाले! आप (**नः**) हम लोगों को विद्या और उत्तम शिक्षा से (**प्र, पूर्धि**) अच्छे प्रकार पूरा करो जिससे हम लोग (**वार्यस्य**) स्वीकार करने योग्य (**ते**) आपकी (**सुमतिम्**) उत्तम मति और (**महीम्**) अत्यन्त वाणी को (**वेविदाम**) प्राप्त हों तथा (**मघवद्भ्यः**) बहुत धन से युक्त सज्जनों से (**सुवीराम्**) उत्तम विज्ञानवान् वीर जिसमें होते उस (**इषम्**) विद्या को प्राप्त होवें यहाँ आप हम लोगों की (**पिन्व**) रक्षा करो और (**यूयम्**) तुम (**स्वस्तिभिः**) सुखों से (**नः**) हम लोगों की (**सदा, एव**) सर्वदैव (**पात**) रक्षा करो॥६॥

भावार्थः-वे ही पढ़ाने वाले धन्यावद के योग्य होते हैं जो विद्यार्थियों को शीघ्र विद्वान् और धार्मिक करते हैं और सर्वदैव रक्षा में वर्त्तमान होते हुए सब की उन्नति करते हैं॥६॥

इस सूक्त में सेनापति, राजा और शस्त्र अस्त्रों को ग्रहण करना इन अर्थों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह पच्चीसवां सूक्त और नवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य षड्विंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ३, ४ त्रिष्टुप्। ५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ जीवमुपकर्तुं किं न शक्नोतीत्याह॥

अब पांच ऋचा वाले छब्बीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में जीव का उपकार कौन नहीं कर सकता, इस विषय को कहते हैं॥

न सोम॒ इन्द्र॒मसु॑तो ममाद॒ नाब्र॑ह्माणो म॒घवा॑नं सु॒तासः॑।
तस्मा॑ उ॒क्थं जन॑ये॒ यज्जुजो॑षन्नृ॒वन्नवी॑यः शृ॒णव॒द्यथा॑ नः॥ १॥

न। सोमः॑। इन्द्र॑म्। असु॑तः। म॒मा॒द॒। न। अब्र॑ह्माणः। म॒घऽवा॑नम्। सु॒तासः॑। तस्मै॑। उ॒क्थम्। ज॒न॒ये॒। यत्। जु॒जोष॑त्। नृ॒ऽवत्। नवी॑यः। शृ॒णव॑त्। यथा॑। नः॒॥ १॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**सोमः**) महौषधिरसः (**इन्द्रम्**) इन्द्रियस्वामिनं जीवम् (**असुतः**) अनुत्पन्नः (**ममाद**) हर्षयति (**न**) (**अब्रह्माणः**) अचतुर्वेदविदः (**मघवानम्**) परमपूजितधनवन्तम् (**सुतासः**) उत्पन्नाः (**तस्मै**) (**उक्थम्**) प्रशंसनीयमुपदेशम् (**जनये**) उत्पादये (**यत्**) (**जुजोषत्**) सेवते (**नृवत्**) बहवो नायका विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (**नवीयः**) अतिशयेन नवीनम् (**शृणवत्**) शृणोति (**यथा**) (**नः**) अस्मान्॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथाऽसुतः सोमो यमिन्द्रं न ममाद यथाऽब्रह्माणं सुतासो मघवानं नानन्दयन्ति स इन्द्रो यन्नृवन्नवीय उक्थं जुजोषन्नोऽस्माञ्छृणवत्तस्मै सर्वं विधानमहं जनये॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विपश्चितो! यथोत्पन्नः पदार्थो जीवमानन्दयति यथा यथा वेदविद्या आप्ता जना धार्मिकं धनाढ्यं विपश्चितं कुर्वन्ति तथोत्पन्ना विद्याऽऽत्मानं सुखयति शुभा गुणा धनाढ्यं वर्धयन्ति सत्सङ्गेनैव मनुष्यत्वं प्राप्नोति॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यथा**) जैसे (**असुतः**) न उत्पन्न हुआ (**सोमः**) महौषधियों का रस यह (**इन्द्रम्**) इन्द्रियों के स्वामी जीव को (**न**) नहीं (**ममाद**) हर्षित करता वा जैसे (**अब्रह्माणः**) चार वेदों का वेत्ता जो नहीं वे (**सुतासः**) उत्पन्न हुए (**मघवानम्**) परमपूजित धनवान् को (**न**) नहीं आनन्दित करते हैं वह इन्द्रियस्वामी जीव (**यत्**) जिस (**नृवत्**) नृवत् अर्थात् जिसमें बहुत नायक मनुष्य विद्यमान और (**नवीयः**) अत्यन्त नवीन (**उक्थम्**) उपदेश को (**जुजोषत्**) सेवता है (**नः**) हम लोगों को (**शृणवत्**) सुनता है (**तस्मै**) उसके लिये सब प्रकार के विधानों को मैं (**जनये**) उत्पन्न करता हूँ॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे बुद्धिमान् मनुष्यो! जैसे उत्पन्न हुआ पदार्थ जीव को आनन्द देता है जैसे यथावत् वेदविद्या और आप्तजन धार्मिक धनाढ्य को विद्वान् करते हैं, वैसे उत्पन्न हुई विद्या आत्मा को सुख देती है और शुभगुण धनाढ्य को बढ़ाते हैं और सत्संग से ही मनुष्यत्व को जीव प्राप्त होता है॥ १॥

पुनः किंवत्कः किं करोतीत्याह॥

फिर किसके तुल्य कौन क्या करता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उक्थउक्थे सोम इन्द्रं ममाद नीथेनीथे मघवानं सुतासः।
यदीं सबाधः पितरं न पुत्राः समानदक्षा अवसे हवन्ते॥ २॥

उक्थेऽउक्थे। सोमः। इन्द्रम्। ममाद। नीथेऽनीथे। मघऽवानम्। सुतासः। यत्। ईम्। सऽबाधः। पितरम्। न। पुत्राः। समानऽदक्षाः। अवसे। हवन्ते॥ २॥

पदार्थः-(**उक्थेउक्थे**) धर्म्ये उपदेष्टव्ये व्यवहारे व्यवहारे (**सोमः**) महौषधिरस ऐश्वर्यं वा (**इन्द्रम्**) जीवात्मानम् (**ममाद**) हर्षयति (**नीथेनीथे**) प्रापणीये प्रापणीये सत्ये व्यवहारे (**मघवानम्**) धर्म्येण बहुजातधनम् (**सुतासः**) विद्यैश्वर्ये प्रादुर्भूताः (**यत्**) ये (**ईम्**) सर्वतः (**सबाधः**) बाधसा सह वर्त्तमानम् (**पितरम्**) जनकम् (**न**) इव (**पुत्राः**) (**समानदक्षाः**) स्पर्धन्त आददति वा॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यद्य ईं सबाधः पितरं समानदक्षाः पुत्रा नावसे सुतासो मघवानं हवन्ते यथा सोम उक्थउक्थे नीथेनीथ इन्द्रं ममाद तैस्तथा चरत॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये विद्यार्थिनो यथा सत्पुत्राः क्लेशयुक्तौ मातापितरौ प्रीत्या सेवन्ते तथा गुरुं सेवन्ते यथा विद्याविनयपुरुषार्थजातमैश्वर्यं कर्त्तारमानन्दयति तथा यूयं वर्त्तध्वम्॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यत्**) जो (**ईम्**) सब ओर से (**सबाधः**) पीड़ा के साथ वर्त्तमान (**पितरम्**) पिता को (**समानदक्षाः**) समान बल, विद्या और चतुरता जिनके विद्यमान वे (**पुत्राः**) पुत्र जन (**न**) जैसे (**अवसे**) रक्षा आदि के लिये (**सुतासः**) विद्या और ऐश्वर्य में प्रकट हुए (**मघवानम्**) धर्म कर्म बहुत धन जिसके उसको (**हवन्ते**) स्पर्द्धा करते वा ग्रहण करते हैं और जैसे (**सोमः**) बड़ी-बड़ी ओषधियों का रस वा ऐश्वर्य्य (**उक्थे-उक्थे**) धर्मयुक्त उपदेश करने योग्य व्यवहार तथा (**नीथे-नीथे**) पहुँचाने-पहुँचाने योग्य सत्य व्यवहार में (**इन्द्रम्**) जीवात्मा को (**ममाद**) हर्षित करता है, उनके साथ वैसा ही आचरण करो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो विद्यार्थी जन जैसे अच्छे पुत्र क्लेशयुक्त माता पिता को प्रीति से सेवते हैं, वैसे गुरु की सेवा करते हैं वा जैसे विद्या, विनय और पुरुषार्थों से उत्पन्न हुआ, उत्पन्न करने वाले को आनन्दित करता है, वैसे तुम लोग वर्त्तो॥ २॥

पुनर्मनुष्याः किंवत्किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

चकार ता कृणवन्नूनमन्या यानि ब्रुवन्ति वेधसः सुतेषु।
जनीरिव पतिरेकः समानो नि मामृजे पुर इन्द्रः सुसर्वाः॥ ३॥

चकार। ता। कृणवत्। नूनम्। अन्या। यानि। ब्रुवन्ति। वेधसः। सुतेषु। जनीःऽइव। पतिः। एकः। समानः। नि। ममृजे। पुरः। इन्द्रः। सु। सर्वाः॥ ३॥

पदार्थः-(**चकार**) करोतु (**ता**) तानि (**कृणवत्**) कुर्यात् (**नूनम्**) निश्चितम् (**अन्या**) अन्यानि

(यानि) उपदेशवचनानि **(ब्रुवन्ति)** उपदिशन्ति **(वेधस:)** मेधाविन: **(सुतेषु)** उत्पन्नेषु जातेषु विज्ञानबलेषु **(जनीरिव)** जायमाना: प्रजा इव **(पति:)** स्वामी राजा **(एक:)** असहाय: **(समान:)** पक्षपातरहित: **(नि)** नितराम् **(मामृजे)** मृजति शोधयति। अत्र **तुजीदीनामि**त्यभ्यासदीर्घ:। **(पुर:)** पुरस्तात् **(इन्द्र:)** परमैश्वर्यवान् **(सु सर्वा:)** सम्यगखिला:॥३॥

अन्वय:-हे विद्वन्! यथा वेधस: सुतेषूपदेश्यान् यान्यन्या ब्रुवन्ति ता भवान्नूनं कृणवद्यथा समान: पतिरेक इन्द्रो जनीरिव सुसर्वा: प्रजा: पुरो नि मामृजे तथैतद्भवाञ्चकार॥३॥

भावार्थ:-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे मनुष्या! यूयं विद्वदुपदिष्टानुकूलमेवाचरत यथा धार्मिको जितेन्द्रियो विद्वान् राजा पक्षपातं विहाय स्वा: प्रजा न्यायेन रक्षति तथा प्रजा अप्येनं सततं रक्षन्त्वेवं कृते सर्वेषां ध्रुव: सुखलाभो जायते॥३॥

पदार्थ:-हे विद्वान्! जैसे **(वेधस:)** मेधावी जन **(सुतेषु)** उत्पन्न हुए विज्ञान और बलों में उपदेश करने योग्यों को **(यानि)** जिन उपदेश-वचनों को तथा **(अन्या)** और वचनों को **(ब्रुवन्ति)** कहते हैं **(ता)** उनको आप **(नूनम्)** निश्चित **(कृणवत्)** करें वा जैसे **(समान:)** पक्षपात रहित **(पति:)** स्वामी राजा **(एक:)** अकेला **(इन्द्र:)** परमैश्वर्य्यवान् **(जनीरिव)** उत्पन्न हुई प्रजा के समान **(सु, सर्वा:)** सम्यक् समस्त प्रजा को **(पुर:)** पहिले **(नि, मामृजे)** निरन्तर पवित्र करता है, वैसे इसको आप **(चकार)** करो॥३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है।[२] हे मनुष्यो! तुम विद्वानों के उपदेश के अनुकूल ही आचरण करो जैसे धार्मिक, जितेन्द्रिय, विद्वान् राजा पक्षपात छोड़ के अपनी प्रजा न्याय से रखता है, वैसे प्रजाजन इस राजा की निरन्तर रक्षा करें, ऐसे करने से निरन्तर सब को निश्चल सुखलाभ होता है॥३॥

पुन: कोऽत्र राजा भवितुं योग्यो भवतीत्याह॥

२. संस्कृतभावार्थ में उपमा भी दिया हुआ है।

फिर कौन इस जगत् में राजा होने योग्य होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

एवा तमाहुरुत शृण्व इन्द्र एको विभक्ता तरणिर्मघानाम्।
मिथस्तुरं ऊतयो यस्य पूर्वीरस्मे भद्राणि सश्चत प्रियाणि॥४॥

एव। तम्। आहुः। उत। शृण्वे। इन्द्रः। एकः। विऽभक्ता। तरणिः। मघानाम्। मिथःऽतुरः। ऊतयः। यस्य। पूर्वीः। अस्मे इति। भद्राणि। सश्चत। प्रियाणि॥४॥

पदार्थः-(**एवा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**तम्**) (**आहुः**) कथयन्ति (**उत**) अपि (**शृण्वे**) (**इन्द्रः**) परमैश्वर्ययुक्तः (**एकः**) असहायः (**विभक्ता**) सत्याऽसत्ययोः विभाजकः (**तरणिः**) तारयिता (**मघानाम्**) धनानाम् (**मिथस्तुरः**) या मिथस्त्वरयन्ति ताः (**ऊतयः**) रक्षाः (**यस्य**) (**पूर्वीः**) पुरातन्यः (**अस्मे**) अस्मासु (**भद्राणि**) कल्याणकराणि कर्माणि (**सश्चत**) सेवन्तां सम्बध्नन्तु (**प्रियाणि**) कमनीयानि॥४॥

अन्वयः-यस्य पूर्वीर्मिथस्तुर ऊतयोऽस्मे प्रियाणि भद्राणि सश्चत य एको मघानां विभक्ता तरणिरिन्द्रो जीवो धर्मं सेवते तमेवाऽऽप्ता धार्मिकमाहुरुत तस्यैवोपदेशमहं शृण्वे॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्य प्रशंसामाप्ता विद्वांसः कुर्य्युर्यस्य धर्म्याणि कर्माणि सर्वाः प्रजा इच्छेयुर्यो हि सत्यानृतयोर्यथावद्विभागं कृत्वा न्यायं कुर्य्यात् स एवाऽस्माकं राजा भवतु॥४॥

पदार्थः-(**यस्य**) जिसकी (**पूर्वीः**) पुरातन (**मिथस्तुरः**) परस्पर शीघ्रता करती हुई (**ऊतयः**) रक्षायें (**अस्मे**) हम लोगों में (**प्रियाणि**) मनोहर (**भद्राणि**) कल्याण करने वाले काम (**सश्चत**) सम्बन्ध करें जो (**एकः**) एक (**मघानाम्**) धनों के (**विभक्ता**) सत्य असत्य का विभाग करने वा (**तरणिः**) तारने वाला (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्य युक्त जीव धर्म की सेवा करता है (**तम्, एव**) उसी को आप्त शिष्ट धर्मशील सज्जन धर्मात्मा (**आहुः**) कहते हैं (**उत**) निश्चय उसी का उपदेश मैं (**शृण्वे**) सुनता हूँ॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसकी प्रशंसा आप्त विद्वान् जन करें वा जिसके धर्मयुक्त कर्मों को समस्त प्रजा प्रीति से चाहे, जो सत्य झूठ को यथावत् अलग कर न्याय करे, वही हमारा राजा हो॥४॥

पुनर्विद्वान् राजादीन् मनुष्यान् धर्म्ये पथि नित्यं संरक्षेदित्याह॥

फिर विद्वान् जन राजा आदि मनुष्यों को धर्म-मार्ग में नित्य अच्छे प्रकार रक्खे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा वसिष्ठ इन्द्रमूतये नॄन् कृष्टीनां वृषभं सुते गृणाति।
सहस्रिण उप नो माहि वाजान् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥५॥१०॥

एव। वसिष्ठः। इन्द्रम्। ऊतये। नॄन्। कृष्टीनाम्। वृषभम्। सुते। गृणाति। सहस्रिणः। उप। नः। माहि। वाजान्। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥५॥

पदार्थः-(**एवा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**वसिष्ठः**) अतिशयेन विद्यासु कृतवासः (**इन्द्रम्**)

परमैश्वर्यवन्तम् **(ऊतये)** रक्षाद्याय **(नॄन्)** नायकान् **(कृष्टीनाम्)** मनुष्यादिप्रजानां मध्ये **(वृषभम्)** अत्युत्तमम् **(सुते)** उत्पन्नेऽस्मिञ्जगति **(गृणाति)** सत्यमुपदिशति **(सहस्त्रिणः)** सहस्त्राण्यसङ्ख्याताः पदार्था विद्यन्ते येषां तान् **(उप)** **(नः)** अस्मान् **(माहि)** सत्कुरु **(वाजान्)** विज्ञानाऽन्नादियुक्तान् **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** सदा **(नः)**॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन् वसिष्ठस्त्वं कृष्टीनां वृषभमिन्द्रं नॄँश्चोतय एव माहि सुते सहस्त्रिणो वाजान्नोऽस्मान् यो भवानुपगृणाति सततं माहि। हे विद्वांसो! जना यूयं स्वस्तिभिर्नः सदैव पात॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयमेवं प्रयतध्वं येन राजादयो जना धार्मिका भूत्वाऽसंख्यं धनमतुलमानन्दं प्राप्नुयुर्यथा भवन्तस्तेषां रक्षां कुर्वन्ति तथैते भवतः सततं रक्षन्त्विति॥५॥

अत्रेन्द्रशब्देन जीवराजकृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षड्विंशतितमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वान् **(वसिष्ठः)** अत्यन्त विद्या में वास जिन्होंने किया ऐसे! आप **(कृष्टीनाम्)** मनुष्यादि प्रजाजनों के बीच **(वृषभम्)** अत्युत्तम **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्यवान् जीव और **(नॄन्)** नायक मनुष्यों की **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(एव)** ही **(माहि)** सत्कार कीजिये **(सुते)** उत्पन्न हुए इस जगत् में **(सहस्त्रिणः)** सहस्त्रों पदार्थ जिनके विद्यमान उन **(वाजान्)** विज्ञान वा अन्नादियुक्त **(नः)** हम लोगों को जो आप **(उप, गृणाति)** सत्य उपदेश देते हैं सो निरन्तर मान कीजिये। हे विद्वानो! **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** कल्याणों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदा **(पात)** रक्षा करो॥५॥

भावार्थः-विद्वान् जनो! तुम ऐसा प्रयत्न करो जिससे राजा आदि जन धार्मिक होकर असंख्य धन वा अतुल आनन्द को प्राप्त हों, जैसे आप उनकी रक्षा करते हैं, वैसे ये आपकी निरन्तर रक्षा करें॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र शब्द शब्द से जीव, राजा के कर्म और गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह छब्बीसवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य सप्तविंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ५ विराट् त्रिष्टुप्। २ निचृत्त्रिष्टुप्। ३, ४ त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ सर्वैः कीदृशो विद्वान् राजा कमनीयोऽस्तीत्याह॥

अब पांच ऋचा वाले सत्ताईसवें सूक्त का प्रारम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में सबको कैसा विद्वान् राजा इच्छा करने योग्य है, इस विषय को कहते है॥

इन्द्रं नरो नेमधिता हवन्ते यत्पार्या युनजते धियस्ताः।
शूरो नृषाता शवसश्चकान आ गोमति व्रजे भजा त्वं नः॥ १॥

इन्द्रम्। नरः। नेमऽधिता। हवन्ते। यत्। पार्याः। युनजते। धियः। ताः। शूरः। नृऽसाता। शवसः। चकानः। आ। गोऽमति। व्रजे। भज। त्वम्। नः॥ १॥

पदार्थः-(**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यप्रदं राजानम् (**नरः**) विद्यासु नेतारः (**नेमधिता**) नेमधितौ स-ग्रामे (**हवन्ते**) आह्वयन्ति (**यत्**) या (**पार्याः**) पालनीयाः (**युनजते**) युञ्जते। अत्र **बहुलं छन्दसी**त्यलोपो न। (**धियः**) प्रज्ञाः (**ताः**) (**शूरः**) शत्रूणां हिंसकः (**नृषाता**) नरः सीदन्ति यस्मिंस्तस्मिन् नृसातौ (**शवसः**) बलात् (**चकानः**) कामयमानः (**आ**) (**गोमति**) गावो विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मिन् (**व्रजे**) व्रजन्ति यं तस्मिन् (**भजा**)। सेवस्व अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**त्वम्**) (**नः**)॥ १॥

अन्वयः-हे राजन्! यः शूरो शवसश्चकानस्त्वं नृषाता गोमति व्रजे न आ भज [हे राजन्!] यमिन्द्रं त्वा यद्या पार्या धियो युनजते तास्त्वमाभज ये नरो नेमधिता त्वां हवन्ते ताँस्त्वमा भज॥ १॥

भावार्थः-यो ह्यत्र प्रशस्तप्रज्ञा सर्वदा बलवृद्धिमिच्छञ्छिष्टसम्मतो विद्वानुद्योगी धार्मिकः प्रजापालनतत्परो नरः स्यात्तमेव सर्वे कामयन्ताम्॥ १॥

पदार्थः-हे राजन्! जो (**शूरः**) शत्रुओं की हिंसा करने वाले (**शवसः**) बल से (**चकानः**) कामना करते हुए (**त्वम्**) आप (**नृसाता**) मनुष्य जिसमें बैठते वा (**गोमति**) गौयें जिसमें विद्यमान ऐसे (**व्रजे**) जाने के स्थान में (**नः**) हम लोगों को (**आ, भज**) अच्छे प्रकार सेविये, हे राजन्! जिन (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य देने वाले आप को (**यत्**) जो (**पार्याः**) पालना करने योग्य (**धियः**) उत्तम बुद्धि (**युनजते**) युक्त होती हैं (**ताः**) उनको आप अच्छे प्रकार सेवो। जो (**नरः**) विद्याओं में उत्तम नीति देने वाले (**नेमधिता**) संग्राम में आप को (**हवन्ते**) बुलाते हैं, उनको आप अच्छे प्रकार सेवो॥ १॥

भावार्थः-जो निश्चय से इस संसार में प्रशंसित बुद्धिवाला, सर्वदा बल वृद्धि की इच्छा करता हुआ, शिष्ट जनों की सम्मति वर्तने वाला, विद्वान्, उद्योगी, धार्मिक और प्रजा पालन में तत्पर जन हो, उसी की सब कामना करो॥ १॥

पुनः स राजा कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

य इन्द्र शुष्मो मघवन् ते अस्ति शिक्षा सखिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः।
त्वं हि दृळ्हा मघवन् विचेता अपा वृधि परिवृतं न राधः॥ २॥

यः। इन्द्र। शुष्मः। मघऽवन्। ते। अस्ति। शिक्षा। सखिऽभ्यः। पुरुऽहूत। नृऽभ्यः। त्वम्। हि। दृळ्हा। मघऽवन्। विऽचेताः। अप। वृधि। परिऽवृतम्। न। राधः॥ २॥

पदार्थः-(**यः**) (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**शुष्मः**) पुष्कलबलयुक्तः (**मघवन्**) परमपूजितधनवत् (**ते**) तव (**अस्ति**) (**शिक्षा**) शासनम् (**सखिभ्यः**) मित्रेभ्यः (**पुरुहूत**) बहुभिः प्रशंसित (**नृभ्यः**) स्वराज्ये नायकेभ्यः (**त्वम्**) (**हि**) (**दृळ्हा**) दृढानि शत्रुसैन्यानि (**मघवन्**) बलधनयुक्त (**विचेताः**) विविधा विशिष्टा वा चेतः प्रज्ञा यस्य सः (**अपा**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**वृधि**) दूरीकुरु (**परिवृतम्**) सर्वतः स्वीकृतम् (**न**) इव (**राधः**) धनम्॥ २॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! यस्ते शुष्मोऽस्ति। हे पुरुहूत! या ते सखिभ्यो नृभ्यः शिक्षाऽस्ति। हे मघवन्! यानि ते दृळ्हा सैन्यानि सन्ति तैर्विचेतास्त्वं हि परिवृतं राधो न दृळ्हा शत्रुसैन्यान्यपा वृधि॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। स एव राजा सदा वर्धते यो प्राप्ताऽपराधिमित्राण्यपि दण्डदानेन विना न त्यजति यो हि सदैवं प्रयतते येन स्वस्य मित्रोदासीनशत्रवोऽधिका न भवेयुर्यः सदैव विद्याशिक्षावृद्धये प्रयतते स एव सर्वान् दुष्टाँल्लोककण्टकान् दस्य्यादीन्निवार्य्य राज्यं कर्त्तुमर्हति॥ २॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) परम पूजित धनवान् (**इन्द्र**) परमैश्वर्य देने वाले! (**यः**) जो (**ते**) आपका (**शुष्मः**) पुष्कल बलयुक्त व्यवहार (**अस्ति**) है। हे (**पुरुहूत**) बहुतों से प्रशंसा को प्राप्त! जो आपकी (**सखिभ्यः**) मित्रों के लिये वा (**नृभ्यः**) अपने राज्य में नायक मनुष्यों के लिये (**शिक्षा**) सिखावट है। हे (**मघवन्**) बहुधनयुक्त! जो आपके (**दृळ्हा**) दृढ़ शत्रु सैन्यजन हैं उनसे (**विचेताः**) विविध प्रकार वा विशिष्ट बुद्धि जिनकी वह (**त्वम्**) आप (**हि**) (**परिवृतम्**) सब ओर से स्वीकार किये (**राधः**) धन को (**न**) जैसे वैसे दृढ़ शत्रुसेनाजनों को (**अपा, वृधि**) दूर कीजिये॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। वही राजा सदा बढ़ता है जो अपराधी मित्रों को भी दण्ड देने के बिना नहीं छोड़ता, जो ऐसा सदैव उत्तम यत्न करता है जिससे कि अपने मित्र उदासीन वा शत्रु अधिक न हों और जो सदैव विद्या और शिक्षा की वृद्धि के लिये प्रयत्न करता है, वही सब दुष्ट और लोककण्टक डाकुओं को निवार के राज्य करने के योग्य होता है॥ २॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधि क्षमि विषुरूपं यदस्ति।
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद्राध उपस्तुतश्चिदर्वाक्॥ ३॥

इन्द्रः। राजा। जगतः। चर्षणीनाम्। अधि। क्षमि। विषुऽरूपम्। यत्। अस्ति। ततः। ददाति। दाशुषे। वसूनि। चोदत्। राधः। उपऽस्तुतः। चित्। अर्वाक्॥ ३॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) शत्रूणां विदारकः (**राजा**) विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमानः (**जगतः**) संसारस्य मध्ये (**चर्षणीनाम्**) मनुष्याणाम् (**अधि**) उपरि (**क्षमि**) पृथिव्याम् (**विषुरूपम्**) व्याप्तस्वरूपम् (**यत्**) (**अस्ति**) (**ततः**) तस्मात् (**ददाति**) (**दाशुषे**) दात्रे (**वसूनि**) धनानि (**चोदत्**) प्रेरयेत् (**राधः**) धनम्

(उपस्तुतः) समीपे प्रशंसितः **(चित्)** इव **(अर्वाक्)** योऽधोऽञ्चति सः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सूर्यो जगतोऽधि क्षमि प्रकाशते तथेन्द्रो राजा चर्षणीनां मध्ये प्रकाशते यदत्र विषुरूपं व्याप्तस्वरूपं धनमस्ति ततो दाशुषे वसूनि ददाति उपस्तुतश्चिदिवार्वाक्सर्वान् राधः प्रति चोदत् स एव राज्यं कर्त्तुमर्हेत्॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये हि राजादयः सूर्यवद्राष्ट्रे प्रकाशितदण्डाः सुखप्रदातारः सन्ति ते हि सर्वं सुखं प्राप्नुवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे सूर्य **(जगतः)** संसार के बीच **(अधि, क्षमि)** पृथिवी पर प्रकाशित होता है, वैसे **(इन्द्रः)** शत्रुओं का विदीर्ण करने वाला **(राजा)** विद्या और नम्रता से प्रकाशमान राजा **(चर्षणीनाम्)** मनुष्यों के बीच प्रकाशित होता **(यत्)** जो **[जो]** **(विषुरूपम्)** व्याप्तरूप धन **(अस्ति)** है **(ततः)** उससे **(दाशुषे)** देने वाले के लिये **(वसूनि)** धनों को **(ददाति)** देता और **(उपस्तुतः)** समीप में प्रशंसा को प्राप्त हुए **(चित्)** के समान **(अर्वाक्)** नीचे प्राप्त होने वाला सबको **(राधः)** धन के प्रति **(चोदत्)** प्रेरणा देवे वही राज्य करने के योग्य होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है।[३] जो राजा आदि जन सूर्य के सम्मान राज्य में दण्ड प्रकाश किये और सुख के देने वाले होते हैं, वे ही सब सुख पाते हैं॥३॥

पुनः स राजा कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू चिन्न इन्द्रो मघवा सहूती दानो वाजं नि यमते न ऊती।
अनूना यस्य दक्षिणा पीपाय वामं नृभ्यो अभिवीता सखिभ्यः॥४॥

नु। चित्। नः। इन्द्रः। मघऽवा। सऽहूती। दानः। वाजम्। नि। यमते। नः। ऊती। अनूना। यस्य। दक्षिणा। पीपाय। वामम्। नृऽभ्यः। अभिऽवीता। सखिऽभ्यः॥४॥

---

३. संस्कृतभावार्थ में उपमा भी दिया हुआ है।

पदार्थः-(**नु**) क्षिप्रम्। अत्र **ऋचि तनुघेति** दीर्घः। (**चित्**) अपि (**नः**) अस्मभ्यम् (**इन्द्रः**) विद्युदिव (**मघवा**) बहुधनः (**सहूती**) समानप्रशंसया (**दानः**) यो ददाति (**वाजम्**) धनमन्नं वा (**नि**) नितराम् (**यमते**) यच्छति (**नः**) अस्मान् (**ऊती**) ऊत्या रक्षणाद्यया क्रियया (**अनूना**) पूर्णा यस्य (**दक्षिणा**) (**पीपाय**) वर्धते (**वामम्**) प्रशस्यं कर्म (**नृभ्यः**) मनुष्येभ्यः (**अभिवीता**) अभितस्सर्वतो व्याप्ता अभयाख्या (**सखिभ्यः**) सुहृद्भ्यः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मघवा दान इन्द्रो नस्सहूत्यूत्या नो वाजं नि यमते यस्य चित्सखिभ्यो नृभ्योऽनूनाऽभिवीता दक्षिणा वामं पीपाय स सर्वेभ्यो नु क्षिप्रं सुखदो भवति॥४॥

भावार्थः-ये राजादयो जना यथावत्पुरुषार्थेन सर्वान्मनुष्यानधर्मान्निरोध्य धर्मे प्रवर्त्तयित्वाऽभयं जनयन्ति ते प्रशंसनीया जायन्ते॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**मघवा**) बहुत धन युक्त (**दानः**) देने वाला (**इन्द्रः**) बिजुली के समान विद्या में व्याप्तः (**नः**) हम लोगों को (**सहूती**) एकसी प्रशंसा (**ऊत्या**) तथा रक्षा आदि क्रिया से (**नः**) हम लोगों के लिये (**वाजम्**) धन वा अन्न को (**नि, यमते**) निरन्तर देता है (**यस्य**) जिसकी (**चित्**) निश्चित (**सखिभ्यः**) मित्र (**नृभ्यः**) मनुष्यों के लिये (**अनूना**) पूरी (**अभिवीता**) सब ओर से व्याप्त समय (**दक्षिणा**) दक्षिणा और (**वामम्**) प्रशंसा करने योग्य कर्म (**पीपाय**) बढ़ता है वह सब के लिये (**नु**) शीघ्र सुख देने वाला होता है॥४॥

भावार्थः-जो राजा आदि जन यथावत् पुरुषार्थ से सब मनुष्यों को अधर्म से धर्म में प्रवृत्त करा अभय उत्पन्न कराते हैं, वे प्रशंसनीय होते हैं॥४॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजा प्रजाजन परस्पर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू इ॑न्द्र रा॒ये वरि॑वस्कृधी न॒ आ ते॒ मनो॑ ववृत्याम म॒घाय॑।
गोम॒दश्वा॑व॒द् रथ॑व॒द् व्यन्तो॑ यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभि॒: सदा॑ नः॥५॥११॥

नु। इ॒न्द्र॒। रा॒ये। वरि॑वः। कृ॒धि॒। न॒:। आ। ते॒। मन॑:। व॒वृ॒त्या॒म॒। म॒घाय॑। गोऽम॑त्। अश्व॑ऽवत्। रथ॑ऽवत्। व्यन्त॑:। यू॒यम्। पा॒त॒। स्व॒स्तिऽभि॑:। सदा॑। न॒:॥५॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**इन्द्र**) धनोन्नतये प्रेरक (**राये**) धनाय (**वरिवः**) परिचरणम् (**कृधि**) कुरु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नः**) अस्माकमस्मभ्यं वा (**आ**) (**ते**) तव (**मनः**) चित्तम् (**ववृत्याम**) वर्त्तयेम (**मघाय**) धनाय (**गोमत्**) बहुगवादियुक्तम् (**अश्वावत्**) बह्वश्वसहितम् (**रथवत्**) प्रशस्तरथादियुक्तम् (**व्यन्तः**) प्राप्नुवन्तः (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**)॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं राये नो वरिवस्कृधि यत्ते मनोऽस्ति तन्मघाय वयं न्वाववृत्याम। गोमदश्वावद् रथवद् व्यन्तो यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥१५॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा वयं भवन्तं राज्योन्नतये प्रवर्त्तयेम तथा त्वमस्मान् धनप्राप्ये प्रवर्त्तय। सर्वे

भवन्तः परमैश्वर्यं प्राप्यास्माकं रक्षणे सततं प्रयतन्तामिति॥५॥

अत्रेन्द्रसेनेशराजोपदेशकदातृरक्षकप्रवर्त्तकगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तविंशतितमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** धन की उन्नति के लिये प्रेरणा देने वाले! आप **(राये)** धन के लिये **(नः)** हमारी **(वरिवः)** सेवा **(कृधि)** करो जो **(ते)** आप का **(मनः)** चित् है उसको **(मघाय)** धन के लिये हम लोग **(नु)** शीघ्र **(आ, ववृत्याम)** सब ओर से वर्तें **(गोमत्)** बहुत गो आदि वा **(अश्वावत्)** बहुत घोड़ों से युक्त वा **(रथवत्)** प्रशंसित रथ आदि युक्त धन को **(व्यन्तः)** प्राप्त होते हुए **(यूयम्)** तुम लोग **(स्वस्तिभिः)** उत्तम सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदा **(पात)** रक्षा करो॥५॥

भावार्थः-हे राजा! जैसे हम लोग आपको राज्य की उन्नति के लिये प्रवृत्त करावें, वैसे हम लोगों को धन प्राप्ति के लिये प्रवृत्त कराओ। सब आप लोग परमैश्वर्य्य को प्राप्त होकर हमारी रक्षा में निरन्तर प्रयत्न करो॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, सेनापति, राजा, दाता, रक्षा करने वाले और प्रवृत्ति कराने वाले के गुणों का और कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह सत्ताईसवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्याष्टविंशतितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतस्स्वरः। ३ भुरिक्पङ्क्तिः। ४ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ स राजा किं कुर्यादित्याह॥

अब पांच ऋचा वाले अट्ठाईसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

ब्रह्मा ण इन्द्रोप याहि विद्वान्वर्वाञ्चस्ते हरयः सन्तु युक्ताः।
विश्वे चिद्धि त्वा विहवन्त मर्ता अस्माकमिच्छृणुहि विश्वमिन्व॥ १॥

ब्रह्म। नः। इन्द्र। उप। याहि। विद्वान्। अर्वाञ्चः। ते। हरयः। सन्तु। युक्ताः। विश्वे। चित्। हि। त्वा। विऽहवन्त। मर्ताः। अस्माकम्। इत्। शृणुहि। विश्वम्ऽइन्व॥ १॥

पदार्थः-(**ब्रह्म**) धनमन्नं वा। अत्र च **संहितायामिति** दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यविद्याप्रापक (**उप**) (**याहि**) (**विद्वान्**) (**अर्वाञ्चः**) येऽर्वागधोऽञ्चन्ति (**ते**) तव (**हरयः**) मनुष्याः। अत्र **वाच्छन्दसी**ति रोः स्थान उकारादेशः। (**सन्तु**) (**युक्ताः**) कृतयोगाः (**विश्वे**) सर्वे (**चित्**) (**हि**) (**त्वा**) त्वाम् (**विहवन्त**) विशेषेणाऽऽहूयन्ति (**मर्ताः**) मनुष्याः (**अस्माकम्**) (**इत्**) एव (**शृणुहि**) शृणु (**विश्वमिन्व**) यो विश्वं मिनोति तत्सम्बुद्धौ॥ १॥

अन्वयः-हे विश्वमिन्वेन्द्र विद्वांस्त्वं नो ब्रह्मोप याहि यस्य तेऽर्वाञ्चो हरयो युक्ताः सन्तु ये चिद्धि विश्वे मर्त्तास्त्वा वि हवन्त तैस्सहाऽस्माकं वाक्यमिच्छृणुहि॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सत्यं न्यायवृत्त्या राज्यभक्ताः स्युस्ते राज्ये सत्कृताः सन्तो निवसन्तु॥ १॥

पदार्थः-हे (**विश्वमिन्व**) सब को फेंकने वा (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्य और विद्या की प्राप्ति कराने वाले (**विद्वान्**) विद्यावान्! आप (**नः**) हम लोगों को (**ब्रह्म**) धन वा अन्न (**उप, याहि**) प्राप्त कराओ जिन (**ते**) आपके (**अर्वाञ्चः**) नीचे को जाने वाले (**हरयः**) मनुष्य (**युक्ताः**) किये योग (**सन्तु**) हों (**चित्**) और जो (**हि**) ही (**विश्वे**) सब (**मर्त्ताः**) मनुष्य (**त्वा**) आपको (**वि, हवन्त**) विशेषता से बुलाते हैं, उनके साथ (**अस्माकम्**) हमारे वाक्य को (**इत्**) ही (**शृणुहि**) सुनिये॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य सत्य न्यायवृत्ति से राज्य भक्त हों, वे राज्य में सत्कार किये हुए निरन्तर बसें॥ १॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हवं त इन्द्र महिमा व्यानड् ब्रह्म यत्पासि शवसिन्नृषीणाम्।
आ यद्वज्रं दधिषे हस्त उग्र घोरः सन् क्रत्वा जनिष्ठा अषाळ्हाः॥ २॥

हवम्। ते। इन्द्र। महिमा। वि। आनट्। ब्रह्म। यत्। पासि। शवसिन्। ऋषीणाम्। आ। यत्। वज्रम्। दधिषे। हस्ते। उग्र। घोरः। सन्। क्रत्वा। जनिष्ठाः। अषाळ्हाः॥ २॥

पदार्थः-(**हवम्**) प्रशंसनीयं वाग्व्यवहारम् (**ते**) तव (**इन्द्र**) दुष्ट विदारक (**महिमा**) प्रशंसा समूहः (**वि**) विशेषेण (**आनट्**) अश्नोति व्याप्नोति (**ब्रह्म**) धनम् (**यत्**) यः (**पासि**) (**शवसिन्**) बहुविधं शवो बलं विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**ऋषीणाम्**) वेदार्थविदाम् (**आ**) (**यत्**) यम् (**वज्रम्**) (**दधिषे**) दधसि (**हस्ते**) करे (**उग्र**) तेजस्विस्वभाव (**घोरः**) यो हन्ति सः (**सन्**) (**क्रत्वा**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**जनिष्ठाः**) जनय (**अषाळहाः**) असोढव्याः शत्रुसेनाः॥२॥

अन्वयः-हे शवसिन्नुग्रेन्द्र! यद्यन्ते महिमा हवं ब्रह्म व्यानड् येन त्वमृषीणां हवं पासि यद्यं वज्रं हस्ते आ दधिषे घोरः सन् क्रत्वाऽषाळ्हो जनिष्ठाः स त्वमस्माभिः सत्कर्त्तव्योऽसि॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः शस्त्राऽस्त्रप्रयोगकर्त्ता धनुर्वेदादिशास्त्रवित्प्रशस्तसेनो भवेद्यस्य पुण्या कीर्तिर्वर्त्तेत स एव शत्रुहनने प्रजापालने समर्थो भवति॥२॥

पदार्थः-हे (**शवसिन्**) बहुत प्रकार के बल और (**उग्र**) तेजस्वी स्वभाव युक्त (**इन्द्र**) दुष्टों के विदारने वाला राजा! (**यत्**) जो (**ते**) आप का (**महिमा**) प्रशंसा समूह (**हवम्**) प्रशंसनीय वाणियों के व्यवहार को और (**ब्रह्म**) धन को (**व्यानट्**) व्याप्त होता है तथा आप (**ऋषीणाम्**) वेदार्थवेत्ताओं के **[(हवम्)]** प्रशंसनीय वाणी व्यवहार की (**पासि**) रक्षा करते हो और (**यत्**) जिस (**वज्रम्**) शस्त्रसमूह को (**हस्ते**) हाथ में (**आ, दधिषे**) अच्छे प्रकार धारण करते हो और (**घोरः**) मारने वाले (**सन्**) होकर (**क्रत्वा**) प्रज्ञा वा कर्म से (**अषाळहाः**) न सहने योग्य शत्रु सेनाओं को (**जनिष्ठाः**) प्रगट करो अर्थात् ढिठाई उन की दूर करो सो तुम हम लोगों से सत्कार पाने योग्य हो॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो शस्त्र और अस्त्रों के प्रयोगों का करने धनुर्वेदादिशाओं का जानने और प्रशंसायुक्त सेना वाला हो और जिस की पुण्यरूपी कीर्त्ति वर्त्तमान है, वही शत्रुओं के मारने और प्रजाजनों के पालने में समर्थ होता है॥२॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तव॒ प्रणी॑तीन्द्र॒ जोहु॑वाना॒न्त्सं यन्नॄन्न रोद॑सी नि॒नेथ॑।

म॒हे क्ष॒त्राय॒ शव॑से॒ हि ज॒ज्ञेऽतू॑तुजिं चि॒त्तूतु॑जिरशिश्नत्॥३॥

तव॑। प्रऽनी॑ती। इ॒न्द्र॒। जोहु॑वानान्। सम्। यत्। नॄन्। न। रोद॑सी इति॑। नि॒नेथ॑। म॒हे। क्ष॒त्राय॑। शव॑से। हि। ज॒ज्ञे। अतू॑तुजिम्। चि॒त्। तूतु॑जिः। अ॒शि॒श्न॒त्॥३॥

पदार्थः-(**तव**) (**प्रणीती**) प्रकृष्टनीत्या (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**जोहुवानान्**) भृशमाहूयमानान् (**सम्**) (**यत्**) (**नॄन्**) नायकान् (**न**) इव (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**निनेथ**) नयसि (**महे**) (**क्षत्राय**) राज्याय धनाय वा (**शवसे**) बलाय (**हि**) यतः (**जज्ञे**) जायते (**अतूतुजिम्**) भृशमहिंस्रम् (**चित्**) अपि (**तूतुजिः**) बलवान् (**अशिश्नत्**) हिनस्ति॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! हि त्वं महे क्षत्राय शवसे जज्ञे तूतुजिः सन् हिंस्राँश्चिद्बलवानशिश्नद्यज्जोहुवानान् नॄन्नतूतुजिं रोदसी न त्वं सन्निनेथ तस्य तव प्रणीती सह वयं राज्य पालयेम॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजपुरुषाः सूर्यपृथिवीवत् सर्वाः प्रजा धृत्वा धर्मं नयेयुस्ते नीतिज्ञा वेदितव्याः॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त! **(हि)** जिस कारण आप **(महे)** महान् **(क्षत्राय)** राज्य धन और **(शवसे)** बल के लिये **(जज्ञे)** उत्पन्न होते **(तूतुजिः)** बलवान् होते हुए हिंसक लोगों को **(चित्)** भी आप **(अशिश्नत्)** मारते और **(यत्)** जो **(जोहुवानान्)** निरन्तर बुलाये हुए **(नॄन्)** जन और **(अतूतुजिम्)** निरन्तर न हिंसा करने वाले को **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी के **(न)** समान आप **(सम्, निनेथ)** अच्छे प्रकार पहुँचाते हो उन **(तव)** आप की **(प्रणीती)** उत्तम नीति के साथ हम लोग राज्य पालें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजपुरुष सूर्य और पृथिवी के समान समस्त प्रजाजनों को धारण कर धर्म को पहुँचावें, वे नीति जानने वाले समझने चाहियें॥३॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसे वर्त्तना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एभिर्न इन्द्राहभिर्दशस्य दुर्मित्रासो हि क्षितयः पवन्ते।
प्रति यच्चष्टे अनृतमनेना अव द्विता वरुणो मायी नः सात्॥४॥

एभिः। नः। इन्द्र। अहऽभिः। दशस्य। दुःऽमित्रासः। हि। क्षितयः। पवन्ते। प्रति। यत्। चष्टे। अनृतम्। अनेनाः। अव। द्विता। वरुणः। मायी। नः। सात्॥४॥

पदार्थः-**(एभिः)** वर्त्तमानैः **(नः)** अस्मान् **(इन्द्र)** दोषविदारक **(अहभिः)** दिवसैस्सह **(दशस्य)** देहि **(दुर्मित्रासः)** दुष्टानि तानि मित्राणि **(हि)** **(क्षितयः)** मनुष्याः **(पवन्ते)** पवित्रा भवन्ति **(प्रति)** **(यत्)** **(चष्टे)** वदति **(अनृतम्)** मिथ्याभाषणम् **(अनेनाः)** निष्पापः **(अव)** **(द्विता)** द्वयोर्भावः **(वरुणः)** वरणीयः **(मायी)** उत्तमा प्रज्ञा विद्यते यस्य सः **(नः)** अस्मान् **(सात्)** निश्चिनुयात्॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! येऽनृतं वदन्ति ते दुर्मित्रासः सन्ति यो हि क्षितयः सत्यं वदन्ति त एभिरहभिः पवन्त एतैः स त्वं नो दशस्यानेना भवान् यत्प्रति चष्टे द्विता वरुणो मायी सन् नः सत्यमव सात्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येऽत्राऽसत्यं वदन्ति तेऽधर्मात्मानो ये सत्यं ब्रुवन्ति ते धार्मिका इति निश्चिन्वन्तु॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दोषों के विदीर्ण करने वाले! जो **(अनृतम्)** झूंठ कहते हैं वे **(दुर्मित्रासः)** दुष्ट मित्र हैं और जो **(हि)** निश्चित **(क्षितयः)** मनुष्य सत्य कहते हैं वे **(एभिः)** इन वर्त्तमान **(अहभिः)** दिवसों के साथ **(पवन्ते)** पवित्र होते हैं इनके साथ आप **(नः)** हम लोगों को **(दशस्य)** दीजिये और **(अनेनाः)** निष्पाप आप **(यत्)** जिसके **(प्रति)** प्रति **(चष्टे)** कहते हैं **(द्विता)** तथा दो का होना **(वरुणः)** जो स्वीकार करने योग्य वह और **(मायी)** उत्तम बुद्धिमान् होता हुआ जन **(नः)** हम लोगों को सत्य का **(अव, सात्)** निश्चय कर देवे॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो यहाँ झूंठ कहते हैं, वे अधर्मात्मा पुरुष हैं और जो सत्य कहते हैं वे

धर्मात्मा हैं, ऐसा निश्चय करो॥५॥

पुनर्विद्वांसः किमुपदिशेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या उपदेश करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्ददन्नः।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥५॥१२॥

वोचेम। इत्। इन्द्रम्। मघऽवानम्। एनम्। महः। रायः। राधसः। यत्। ददत्। नः। यः। अर्चतः। ब्रह्मऽकृतिम्। अविष्ठः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥५॥

पदार्थः-(**वोचेम**) उपदिशेम (**इत्**) (**इन्द्रम्**) दुष्टशत्रुविदारकम् (**मघवानम्**) परमैश्वर्यवन्तम् (**एनम्**) (**महः**) महतः (**रायः**) धनस्य (**राधसः**) समृद्धस्य (**यत्**) (**ददत्**) दद्यात् (**नः**) अस्मान् (**यः**) (**अर्चतः**) सत्कुर्वतः (**ब्रह्मकृतिम्**) ब्रह्मणो धनस्य कृतिः क्रिया यस्य तम् (**अविष्ठः**) अतिशयेन यविता (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**)॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! योऽर्चतो नो महो राधसो रायोऽविष्ठो ब्रह्मकृतिमेनं मघवानमिन्द्रं यद्ददत्तमिद्वयं वोचेम यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यथा वयं राजादीन् मनुष्यान् प्रति सत्यं सर्वदोपदिशेम तथा यूयमप्युपदिशतैवं परस्परेषां रक्षां विधायोन्नतिर्विधेयेति॥५॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टाविंशतितमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यः**) जो (**अर्चतः**) सत्कार करते हुए (**नः**) हम लोगों के (**महः**) महान् (**राधसः**) समृद्ध (**रायः**) धन सम्बन्ध के (**अविष्ठः**) प्राप्त होने वाला (**ब्रह्मकृतिम्**) जिसके धन की क्रिया हैं (**एनम्**) इस (**मघवानम्**) परमैश्वर्यवान् (**इन्द्रम्**) दुष्ट शत्रुओं के विदीर्ण करने वाले को (**यत्**) जो (**ददत्**) देवें (**इत्**) उसी को हम लोग (**वोचेम**) कहें (**यूयम्**) तुम लोग (**स्वस्तिभिः**) सुखों से (**नः**) हमारी (**सदा**) सर्वदैव (**पात**) रक्षा करो॥५॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जैसे हम लोग राजा आदि मनुष्यों के प्रति सत्य का सर्वदा उपदेश करें, वैसे तुम भी उपदेश करो, ऐसे परस्पर की रक्षा कर उन्नति विधान करनी चाहिये॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, राजगुणों और कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह अट्ठाईसवां सूक्त और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्यैकोनत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ स्वराट्पङ्क्तिः। ३ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २ विराट् त्रिष्टुप्। ४, ५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ कस्मै को निर्मातव्य इत्याह॥

अब पांच ऋचा वाले उनतीसवें सूक्त का आरम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में किसको कौन बनाना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अयं सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्व आ तु प्र याहि हरिवस्तदोकाः।
पिबा त्व१स्य सुषुतस्य चारोर्ददो मघानि मघवन्नियानः॥ १॥

अयम्। सोमः। इन्द्र। तुभ्यम्। सुन्वे। आ। तु। प्र। याहि। हरिऽवः। तत्ऽओकाः। पिब। तु। अस्य। सुऽसुतस्य। चारोः। ददः। मघानि। मघऽवन्। इयानः॥ १॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**सोमः**) ओषधिरसः (**इन्द्र**) दारिद्र्यविदारक (**तुभ्यम्**) (**सुन्वे**) (**आ**) (**तु**) (**प्र**) (**याहि**) गच्छ (**हरिवः**) प्रशस्तैर्मनुष्यैर्युक्त (**तदोकाः**) तच्छ्रेष्ठमोको गृहं यस्य सः (**पिब**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**तु**) (**अस्य**) (**सुषुतस्य**) सुष्ठु निमित्तस्य (**चारोः**) सुन्दरस्य (**ददः**) देहि (**मघानि**) धनानि (**मघवन्**) बहुधनयुक्त (**इयानः**) प्राप्नुवन्॥ १॥

अन्वयः-हे मघवन् हरिव इन्द्र! योऽयं सोमोऽस्ति यमहं तु तुभ्यं प्र सुन्वे तं त्वं पिब तदोकाः सन्नायाहि अस्य सुषुतस्य चारोस्तु मघवनीयान अस्मभ्यं ददः॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्या वैद्यकशास्त्ररीत्या निष्पादितं सर्वरोगहरं बुद्धिबलप्रदं महौषधिरसं पिबन्ति ते सुखैश्वर्यमाप्नुवन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) बहुधन और (**हरिवः**) प्रशस्त मनुष्ययुक्त (**इन्द्र**) दारिद्र्य विनाशने वाले! जो (**अयम्**) यह (**सोमः**) ओषधियों का रस है जिसको मैं (**तु**) तो (**तुभ्यम्**) तुम्हारे लिये (**प्र, सुन्वे**) खींचता हूँ उसको तुम (**पिब**) पीओ (**तदोकाः**) वह श्रेष्ठ गृह जिसका है ऐसे होते हुए (**आ, याहि**) आओ (**अस्य**) इस (**सुषुतस्य**) सुन्दर निर्माण किये और (**चारोः**) सुन्दर जन के (**मघानि**) धनों को (**इयानः**) प्राप्त होते हुए हमारे लिये (**ददः**) देओ॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य वैद्यकशास्त्र की रीति से उत्पन्न किये हुए सर्वरोग हरने और बुद्धि बल के देने वाले, बड़ी-बड़ी ओषधियों के रस को पीते हैं, वे सुख और ऐश्वर्य पाते हैं॥ १॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ब्रह्मन् वीर ब्रह्मकृतिं जुषाणोऽर्वाचीनो हरिभिर्याहि तूयम्।
अस्मिन्नू षु सवने मादयस्वोप ब्रह्माणि शृणव इमा नः॥ २॥

ब्रह्मन्। वीर। ब्रह्मऽकृतिम्। जुषाणः। अर्वाचीनः। हरिऽभिः। याहि। तूयम्। अस्मिन्। ऊँ इति। सु। सवने। मादयस्व। उप। ब्रह्माणि। शृणवः। इमा। नः॥ २॥

पदार्थः-(**ब्रह्मन्**) चतुर्वेदवित् (**वीर**) सकलशुभगुणव्यापिन् (**ब्रह्मकृतिम्**) ब्रह्मणः परमेश्वरस्य कृतिं संसारम् (**जुषाणः**) सेवमानः (**अर्वाचीनः**) इदानीन्तनः (**हरिभिः**) सद्गुणकर्षकैर्मनुष्यैस्सह (**याहि**) (**तूयम्**) शीघ्रम्। **तूयमिति क्षिप्रनाम।** (निघं०२.१५) (**अस्मिन्**) (**उ**) (**सु**) (**सवने**) सुन्वन्ति निष्पादयन्ति येन कर्मणा तस्मिन् (**मादयस्व**) आनन्दयस्व (**उप**) (**ब्रह्माणि**) अधीतानि वेदवचांसि (**शृणवः**) शृणु (**इमा**) इमानि (**नः**) अस्माकम्॥२॥

अन्वयः-हे ब्रह्मन् वीर! ब्रह्मकृतिं जुषाणोऽर्वाचीनस्त्वं हरिभिस्सह तूयं याहि अस्मिन् सवनेऽस्मान् नु मादयस्व न इमा ब्रह्माणि सूप शृणवः॥२॥

भावार्थः-हे विद्वन्! त्वं सृष्टिक्रमं विज्ञायास्मान् प्रबोधयास्मिन्नध्यापनाऽध्ययने कर्मण्यस्माकमधीतं परीक्ष्य विद्याप्रदानेन सर्वान् सद्यः प्रमोदय॥२॥

पदार्थः-हे (**ब्रह्मन्**) चार वेदों के जानने वाले (**वीर**) समस्त शुभगुणों में व्याप्त! (**ब्रह्मकृतिम्**) परमेश्वर की कृति जो संसार इसको (**जुषाणः**) सेवते हुए (**अर्वाचीनः**) वर्त्तमान समय में प्रसिद्ध हुए आप (**हरिभिः**) अच्छे गुणों के आकर्षण करने वाले मनुष्यों के साथ (**तूयम्**) शीघ्र (**याहि**) जाओ (**अस्मिन्**) इस (**सवने**) सवन में अर्थात् जिस कर्म से पदार्थों को सिद्ध करते हैं उसमें हम लोगों को (**मादयस्व**) आनन्दित कीजिये (**नः**) हमारे (**इमा**) इन (**ब्रह्माणि**) पढ़े हुए वेदवचनों को (**सु, उ, उप, शृणवः**) उत्तम प्रकार तर्क-वितर्क से समीप में सुनिये॥२॥

भावार्थः-हे विद्वन्! आप सृष्टि के क्रम को जान कर हमको जतलाओ, इसमें पढ़ाना पढ़ना काम और पढ़े हुए की परीक्षा करो और विद्यादान से शीघ्र प्रमोद देओ॥२॥

केऽध्यापकाऽध्येतारः परीक्षकाः प्रशंसनीया इत्याह॥

कौन पढ़ाने और पढ़ने वाले प्रशंसा करने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

का ते अस्त्यरङ्कृतिः सूक्तैः कदा नूनं ते मघवन् दाशेम।
विश्वा मतीरा ततने त्वायाधा म इन्द्र शृणवो हवेमा॥३॥

का। ते। अस्ति। अरम्ऽकृतिः। सुऽउक्तैः। कदा। नूनम्। ते। मघऽवन्। दाशेम। विश्वाः। मतीः। आ। ततने। त्वाऽया। अध। मे। इन्द्र। शृणवः। हवा। इमा॥३॥

पदार्थः-(**का**) (**ते**) तव (**अस्ति**) (**अरङ्कृतिः**) अलङ्कारः (**सूक्तैः**) सुष्ठूक्तार्थैर्वेदवचोभिः (**कदा**) (**नूनम्**) निश्चितम् (**ते**) तुभ्यम् (**मघवन्**) (**दाशेम**) दद्याम (**विश्वाः**) अखिलाः (**मतीः**) प्रज्ञाः (**आ**) (**ततने**) विस्तृणीयाम् (**त्वाया**) त्वदीयया (**अध**) अथ। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**मे**) मम (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्यसम्पन्न (**शृणवः**) शृणु (**हवा**) हवानि श्रुतानि (**इमा**) इमानि॥३॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! का तेऽरङ्कृतिरस्ति सूक्तैस्ते नूनं विश्वा मतीर्वयं कदा दाशेम त्वायाऽहमा ततनेऽध त्वं मे ममेमा हवा शृणवः॥३॥

भावार्थः-तेऽध्यापकाः श्रेष्ठा भवन्ति य इमान् स्वकीयान् विद्यार्थिनः कदा विद्वांसः करिष्यामेतीच्छन्ति सर्वेभ्यः सत्यानि प्रज्ञानानि प्रयच्छन्ति त एव विद्यार्थिनः श्रेष्ठाः सन्ति य उत्साहेन

स्वाधीतस्योत्तमास्परीक्षां प्रददति त एव परीक्षकाः श्रेष्ठाः सन्ति ये परीक्षायां कस्यापि पक्षपातं न कुर्वन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(इन्द्र)** विद्या और ऐश्वर्य्य सम्पन्न! **(का)** कौन **(ते)** आपका **(अरङ्कृतिः)** अलङ्कार **(अस्ति)** है **(सूक्तैः)** और अच्छे प्रकार कहा है अर्थ जिनका उन वेद-वचनों से **(ते)** आपको **(नूनम्)** निश्चित **(विश्वाः)** सब **(मतीः)** बुद्धियों को हम लोग **(कदा)** कब **(दाशेम)** देवें **(त्वाया)** आपकी बुद्धि से मैं **(आ, ततने)** विस्तार करूं **(अध)** इसके अनन्तर आप **(मे)** मेरे **(इमा)** इन **(हवा)** सुने वाक्यों को **(शृणवः)** सुनो॥९॥

भावार्थः-वे अध्यापक श्रेष्ठ होते हैं जो इन अपने विद्यार्थियों को कब विद्वान् करें ऐसी इच्छा करते हैं और सब के लिये सत्य उत्तम ज्ञानों को देते हैं और वे ही विद्यार्थी श्रेष्ठ हैं जो उत्साह से अपने पढ़े हुए की उत्तम परीक्षा देते हैं तथा वे ही परीक्षा करने वाले श्रेष्ठ हैं जो परीक्षा में किसी का पक्षपात नहीं करते हैं॥३॥

केऽध्यापका वरतमाः सन्तीत्याह॥

कौन पढ़ाने वाले अतिश्रेष्ठ हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं

उतो घा ते पुरुष्या३ इदासन् येषां पूर्वेषामशृणोर्ऋषीणाम्।
अधाहं त्वा मघवञ्जोहवीमि त्वं न इन्द्रासि प्रमतिः पितेव॥४॥

उतो इति। घ। ते। पुरुष्याः। इत्। आसन्। येषाम्। पूर्वेषाम्। अशृणोः। ऋषीणाम्। अध। अहम्। त्वा। मघऽवन्। जोहवीमि। त्वम्। नः। इन्द्र। असि। प्रऽमतिः पिताऽइव॥४॥

पदार्थः-**(उतो)** अपि **(घ)** एव। अत्र ऋचि तुनुघेति दीर्घः। **(ते)** **(पुरुष्याः)** पुरुषेषु साधवः **(इत्)** एव **(आसन्)** भवन्ति **(येषाम्)** **(पूर्वेषाम्)** पूर्वमधीतविद्यानाम् **(अशृणोः)** शृणुयाः **(ऋषीणाम्)** वेदार्थशब्दसम्बन्धविदाम् **(अध)** अथ **(अहम्)** **(त्वा)** त्वाम् **(मघवन्)** विद्यैश्वर्यसम्पन्न **(जोहवीमि)** भृशं प्रशंसामि **(त्वम्)** **(नः)** अस्माकम् **(इन्द्र)** विद्यैश्वर्यप्रद **(असि)** **(प्रमतिः)** प्रकृष्टप्रज्ञः **(पितेव)** जनकवत्॥४॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! यस्त्वं येषां पूर्वेषामृषीणां सकाशाद्वेदानशृणोरुतो ये पुरुष्या घासँस्ते नोऽस्माकमध्यापकाः सन्तु यतस्त्वं नोऽस्माकं पितेव प्रमतिरसि तस्मादधाहं त्वेज्जोहवीमि॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये विद्वांसः पितरः पुत्रानिव विद्यार्थिनः पालयन्ति त एव सत्कर्तव्याः प्रशंसनीया भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** विद्या ऐश्वर्य से सम्पन्न **(इन्द्र)** विद्या ऐश्वर्य देने वाले विद्वान्! जो आप **(येषाम्)** जिन **(पूर्वेषाम्)** पहिले जिन्होंने विद्या पढ़ी उन **(ऋषीणाम्)** ऋषिजनों से वेदों को **(अशृणोः)** सुनो **(उतो)** और जो **(पुरुष्याः)** पुरुषों में सत्पुरुष **(घा)** ही **(आसन्)** होते हैं **(ते)** वे **(नः)** हमारे अध्यापक हों जिससे **(त्वम्)** आप हमारे **(पितेव)** पिता के समान **(प्रमतिः)** उत्तम बुद्धि वाले **(असि)** हैं इससे **(अध)** इसके अनन्तर **(अहम्)** मैं **(त्वा)** आपकी **(इत्)** ही **(जोहवीमि)** निरन्तर प्रशंसा करूं॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्वान् पितृजन पुत्रों के समान विद्यार्थियों की पालना करते हैं, वे ही सत्कार करने और प्रशंसा करने योग्य होते हैं॥४॥

पुन: केऽत्र सर्वेषां रक्षका: सन्तीत्याह॥

फिर कौन यहाँ संसार में सब की रक्षा करने वाले होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्दन्न:।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभि: सदा न:॥५॥१३॥

वोचेम। इत्। इन्द्रम्। मघऽवानम्। एनम्। मह:। राय:। राधस:। यत्। ददत्। न:। य:। अर्चत:। ब्रह्मऽकृतिम्। अविष्ठ:। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभि:। सदा। न:॥५॥

पदार्थ:-(**वोचेम**) वदेम (**इत्**) इव (**इन्द्रम्**) अविद्यान्धकारविदारकमध्यापकम् (**मघवानम्**) प्रशस्तविद्याधनवन्तम् (**एनम्**) (**मह:**) महत: (**राय:**) विद्याधनस्य (**राधस:**) शरीरात्मबलवर्धकस्य (**यत्**) यम् (**ददत्**) दद्यात् (**न:**) अस्मभ्यम् (**य:**) (**अर्चत:**) सत्कृतस्य (**ब्रह्मकृतिम्**) वेदोक्तां सत्यक्रियाम् (**अविष्ठ:**) अतिशयेन रक्षक: (**यूयम्**) विद्यावृद्धा: (**पात**) (**स्वस्तिभि:**) सुशिक्षाभि: (**सदा**) (**न:**) (**अस्मान्**)॥५॥

अन्वय:-हे विद्वांसो! यूयं स्वस्तिभिर्न: सदा पात हे परीक्षक! योऽविष्ठो ब्रह्मकृतिं नो ददद्यद्यमर्चतो महो राधसो राय: प्रदातारमेनं मघवानमिन्द्रम् [इत्] वयं वोचेम तं यूयमपि प्रशंसत॥५॥

भावार्थ:-येऽक्षयस्य सर्वत्र सत्कारहेतोर्विद्याधनस्य दातार: सन्ति त एव सर्वेषां यथावत्पालका वर्त्तन्त इति॥५॥

अत्रेन्द्रसोमपानाध्यापकाऽध्येतृपरीक्षकविद्यादातृगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनत्रिंशत्तमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे विद्वान् जनो (**यूयम्**) विद्यावृद्ध तुम (**स्वस्तिभि:**) उत्तम शिक्षओं से (**न:**) हम लोगों की (**सदा**) सदा (**पात**) रक्षा करो। हे परीक्षा करने वाले! (**य:**) जो (**अविष्ठ:**) अतीव रक्षा करने वाला (**ब्रह्मकृतिम्**) वेदोक्त सत्य क्रिया को (**न:**) हम लोगों के लिये (**ददत्**) देवे वा (**यत्**) जिसको (**अर्चत:**) सत्कार किये हुए जन का (**मह:**) महान् (**राधस:**) शरीर और आत्मा के बल का बढ़ाने वाला (**राय:**) विद्यारूपी धन का उत्तम प्रकार से देने वाले (**एनम्**) इस (**मघवानम्**) प्रशस्त

विद्या धनयुक्त **(इन्द्रम्, इत्)** अविद्यान्धकार विदीर्ण करने वाले अध्यापक की हम लोग **(वोचेम)** प्रशंसा कहें, उसकी तुम भी प्रशंसा करो॥५॥

भावार्थः-जो जन नाश न होने वाले सर्वत्र सत्कार के हेतु विद्याधन के देने वाले हैं, वे ही सबके यथावत् पालने वाले हैं॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, सोमपान, अध्यापक, अध्येता, परीक्षक और विद्या देने वालों के गुण और कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥५॥

यह उनतीसवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथा पञ्चर्चस्य त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषि:। इन्द्रो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। २ निचृत्त्रिष्टुप्छन्द:। धैवत: स्वर:। ३ निचृत्पङ्क्ति:। ४, ५ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्द:। पञ्चम: स्वर:॥

अथ को राजा प्रशंसनीयो भवतीत्याह॥

अब पांच ऋचा वाले तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में कौन राजा प्रशंसा करने योग्य होता है, इस विषय को कहते हैं॥

आ नो देव शवसा याहि शुष्मिन् भवा वृध इन्द्र रायो अस्य।
महे नृम्णाय नृपते सुवज्र महि क्षत्राय पौंस्याय शूर॥ १॥

आ। नः। देव। शवसा। याहि। शुष्मिन्। भव। वृधः। इन्द्र। रायः। अस्य। महे। नृम्णाय। नृऽपते। महि। क्षत्राय। पौंस्याय। शूर॥ १॥

पदार्थ:-(**आ**) समन्तात् (**न:**) अस्मान् (**देव**) दिव्यगुणसम्पन्न (**शवसा**) उत्तमेन बलेन (**याहि**) प्राप्नुहि (**शुष्मिन्**) प्रशंसितबलयुक्त (**भव**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घ:। (**वृध:**) वर्धनस्य (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**राय:**) धनस्य राज्यस्य वा (**अस्य**) (**महे**) महते (**नृम्णाय**) धनाय (**नृपते**) नृणां पालक (**सुवज्र**) शोभनशस्त्रास्त्रप्रयोगकुशल (**महि**) महते (**क्षत्राय**) राष्ट्राय (**पौंस्याय**) पुंसु भवाय बलाय (**शूर**) निर्भय॥ १॥

अन्वय:-हे शूर सुवज्र नृपते शुष्मिन् देवेन्द्र! त्वं शवसा नोऽस्मानायाह्यस्य रायो वृधो भव महे नृम्णाय महि क्षत्राय पौंस्याय च प्रयतस्व॥ १॥

भावार्थ:-स एव राजा श्रेष्ठो भवति यो राष्ट्ररक्षणे सततं प्रयतेत धनविद्यावृद्ध्या प्रजा: सम्पोष्य सुखयेत्॥ १॥

पदार्थ:-हे (**शूर**) निर्भय (**सुवज्र**) उत्तम शस्त्र और अस्त्रों के चलाने में कुशल (**नृपते**) मनुष्यों की पालना करने वाले (**शुष्मिन्**) प्रशंसित बलयुक्त (**देव**) विद्या गुण सम्पन्न (**इन्द्र**) परम ऐश्वर्यवान् राजन्! आप (**शवसा**) उत्तम बल से (**न:**) हम लोगों को (**आ, याहि**) प्राप्त होओ (**अस्य**) इस (**राय:**) धन वा राज्य की (**वृध:**) वृद्धि सम्बन्धी (**भव**) हूजिये और (**महे**) महान् (**नृम्णाय**) धन के तथा (**महि**) महान् (**क्षत्राय**) राज्य के और (**पौंस्याय**) पुरुष विषयक बल के लिये प्रयत्न करो॥ १॥

भावार्थ:-वही राजा श्रेष्ठ होता है जो राज्य की रक्षा में निरन्तर उत्तम यत्न करे और धनविद्या की वृद्धि से प्रजा को अच्छे प्रकार पुष्टि देकर सुखी करे॥ १॥

पुन: स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हवन्त उ त्वा हव्यं विवाचि तनूषु शूरा: सूर्यस्य सातौ।
त्वं विश्वेषु सेन्यो जनेषु त्वं वृत्राणि रन्धया सुहन्तु॥ २॥

हवन्ते। ऊँ इति। त्वा। हव्यम्। विऽवाचि। तनूषु। शूराः। सूर्यस्य। सातौ। त्वम्। विश्वेषु। सेन्यः। जनेषु। त्वम्। वृत्राणि। रन्धय। सुऽहन्तु॥ २॥

पदार्थः-(**हवन्ते**) आह्वयन्तु (उ) (**त्वा**) त्वाम् (**हव्यम्**) आह्वानयोग्यम् (**विवाचि**) विरुद्धा वाचो यस्मिन् संग्रामे भवन्ति तस्मिन् (**तनूषु**) विस्तृतबलेषु शरीरेषु (**शूराः**) शत्रूणां हिंसकाः (**सूर्यस्य**) सवितृमण्डलस्येव राज्यस्य मध्ये (**सातौ**) संविभागे (**त्वम्**) (**विश्वेषु**) (**सेन्यः**) सेनासु साधुः (**जनेषु**) मनुष्येषु (**त्वम्**) (**वृत्राणि**) शत्रुसैन्यानि (**रन्धय**) हिंसय (**सुहन्तु**)॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्त्वं विश्वेषु जनेषु सेन्यः सन् वृत्राणि रन्धय त्वं यथा वीरः सन् शत्रून् सुहन्तु तथैतान् हिन्धि सूर्यस्य किरणा इव तनूषु प्रकाशमानाः शूराः यं हव्यं त्वा सातौ विवाच्यु हवन्ते ताँस्त्वमाह्वय॥ २॥

भावार्थः-स एव राजा सर्वप्रियो भवति यो न्यायेन प्रजाः सम्पाल्य संग्रामान्विजयते॥ २॥

पदार्थः-हे परमैश्वर्ययुक्त! जो (**त्वम्**) आप (**विश्वेषु**) सब (**जनेषु**) मनुष्यों में (**सेन्यः**) सेना में उत्तम होते हुए (**वृत्राणि**) शत्रु सैन्य जन आदि को (**रन्धय**) मारो (**त्वम्**) आप जैसे वीर होता हुआ जन शत्रुओं को अच्छे प्रकार हने, वैसे उनको आप (**सुहन्तु**) मारो (**सूर्यस्य**) सवितृमण्डल की किरणों के समान राज्य के बीच और (**तनूषु**) फैला है बल जिनमें उन शरीरों में प्रकाशमान (**शूराः**) शत्रुओं के मारने वाले जन जिन (**हव्यम्**) बुलाने योग्य (**त्वा**) आपको (**सातौ**) संविभाग में अर्थात् बांट चूंट में वा (**विवाचि, उ**) विरुद्ध वाणी जिसमें होती है उस संग्राम में (**हवन्ते**) बुलावें उनको आप बुलावें॥ २॥

भावार्थः-वही राजा सर्वप्रिय होता है जो न्याय से प्रजा की अच्छी पालना कर संग्राम जीतता है॥ २॥

पुनः स राजा कीदृशः सन् किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होता हुआ क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अहा यदिन्द्र सुदिना व्युच्छान् दधो यत्केतुमुपमं समत्सु।
न्यग्निः सीददसुरो न होता हुवानो अत्र सुभगाय देवान्॥ ३॥

अहा। यत्। इन्द्र। सुऽदिना। विऽउच्छान्। दधः। यत्। केतुम्। उपऽमम्। समत्ऽसु। नि। अग्निः। सीदत्। असुरः। न। होता। हुवानः। अत्र। सुऽभगाय। देवान्॥ ३॥

पदार्थः-(**अहा**) अहानि दिनानि (**यत्**) यान् (**इन्द्र**) सूर्य इव वर्त्तमान (**सुदिना**) सुखकराणि दिनानि (**व्युच्छान्**) विवासितान् (**दधः**) देहि (**यत्**) यम् (**केतुम्**) प्रज्ञाम् (**उपमम्**) येन उपमिमीते तम् (**समत्सु**) संग्रामेषु (**नि**) नितराम् (**अग्निः**) पावक इव तेजस्वी (**सीदत्**) निषीदति (**असुरः**) योऽसुषु रमते सः (**न**) इव (**होता**) हवनकर्त्ता (**हुवानः**) स्पर्धमानः (**अत्र**) (**सुभगाय**) सुष्ठ्वैश्वर्याय (**देवान्**) विदुषः॥ ३॥

अन्वयः-हे इन्द्रात्र समत्सु यद्यान् देवान् सुभगायाऽसुरो होता न शत्रून् युद्धाग्नौ हुवानः सन्नग्निरिव

भवान्नि सीदद्यदुपमं केतुं महा सुदिना व्युच्छाँश्च देवान् समत्सु दधः स त्वं विजेतुं शक्नोषि॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। स एव राजा विजयते य उत्तमाञ्छूरवीरान्विदुषः स्वसेनायां सत्कृत्य रक्षेद्यथा होताऽग्नौ साकल्यं जुहोति तथा शस्त्राऽस्त्राग्नौ शत्रूञ्जुहुयात्॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य के समान वर्त्तमान! **(अत्र)** इन **(समत्सु)** संग्रामों में **(यत्)** जिन **(देवान्)** विद्वानों को **(सुभगाय)** सुन्दर ऐश्वर्य्य के लिये **(असुरः)** जो प्राणों में रमता है उस **(होता)** होम करने वाले के **(न)** समान शत्रुओं को युद्ध की आग में **(हुवानः)** होमते अर्थात् उनकी स्पर्द्धा से चाहते हुए **(अग्निः)** अग्नि के समान आप **(नि, सीदत्)** निरन्तर स्थिर होते हो और **(यत्)** जिस **(उपमम्)** उपमा दिलाने वाली **(केतुम्)** बुद्धि के विषय को **(अहा)** साधारण दिन वा **(सुदिना)** सुख करने वाले दिनों दिन **(व्युच्छान्)** विविध प्रकार से वसाये हुए विद्वानों को संग्रामों में **(दधः)** धारण करो सो आप जीत सकते हो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालंङ्कार हैं। वही राजा जीतता है जो उत्तम शूरवीर विद्वानों को अपनी सेना में सत्कार का रक्खे जैसे होम करने वाले अग्नि में साकल्य होमता है, वैसे शस्त्र और अस्त्रों की अग्नि में शत्रुओं को होमें॥३॥

पुनः कस्योत्तमे विजयप्रशंसे भवेतामित्याह॥

फिर किसकी उत्तम जीत और प्रशंसा होती है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वयं ते त इन्द्र ये च देव स्तवन्त शूर ददतो मघानि।

यच्छा सूरिभ्य उपमं वरूथं स्वाभुवो जरणामश्नवन्त॥४॥

वयम्। ते। ते। इन्द्र। ये। च। देव। स्तवन्त। शूर। ददतः। मघानि। यच्छ। सूरिऽभ्यः। उपऽमम्। वरूथम्। सुऽआभुवः। जरणाम्। अश्नवन्त॥४॥

पदार्थः-**(वयम्)** **(ते)** **(ते)** तव **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद **(ये)** **(च)** **(देव)** विद्वन् **(स्तवन्त)** प्रशंसन्ति **(शूर)** शत्रूणां हिंसक **(ददतः)** दानं कुर्वतः **(मघानि)** धनानि **(यच्छा)** देहि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(सूरिभ्यः)** विद्वद्भ्यः **(उपमम्)** उपमिमीते येन तम् **(वरूथम्)** गृहम् **(स्वाभुवः)** ये सुष्ठु समन्तादुत्तमा भवन्ति ते **(जरणाम्)** जरावस्थाम् **(अश्नवन्त)** अश्नुवते॥४॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र देव! ये सूरिभ्यो मघानि ददतस्त उपमं स्तवन्त ये च स्वाभुवो वरूथं जरणामश्नवन्त ते वयं त्वां प्रशंसेम त्वं नो मघानि यच्छा॥४॥

भावार्थः-यो राजा सुपरीक्ष्य विद्वद्भ्यो धनादिकं दत्वा सत्कृत्यैतान् विद्यावयोवृद्धान् धार्मिकान् सेनाद्यधिकारेषु नियोजयति तस्य सर्वदा विजयप्रशंसे जायेते॥४॥

पदार्थः-हे **(शूर)** शत्रुओं के मारने और **(इन्द्र)** परम ऐश्वर्य देने वाले **(देव)** विद्वान् जन! **(ये)** जो **(सूरिभ्यः)** विद्वानों के लिये **(मघानि)** धनों को **(ददतः)** देते हुए **(ते)** आपके **(उपमम्)** जिससे उपमा दी जाती है उस कर्म की **(स्तवन्त)** प्रशंसा करते हैं **(च)** और जो **(स्वाभुवः)** अच्छे प्रकार सब ओर से उत्तम होते हैं वे जन **(वरूथम्)** घर और **(जरणाम्)** जरावस्था को **(अश्नवन्त)**

प्राप्त होते हैं **(ते)** वे **(वयम्)** हम लोग आपकी प्रशंसा करें आप हम लोगों के लिये धनों को **(यच्छत)** देओ॥४॥

भावार्थः-जो राजा अच्छी परीक्षा कर विद्वानों के लिये धन आदि दे और सत्कार कर इन विद्या अवस्था वृद्ध धार्मिक जनों को सेना आदि के अधिकारों में नियुक्त करता है, उसकी सर्वदा जीत और प्रशंसा होती है॥४॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्ददन्नः।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥५॥१४॥

वोचेम। इत्। इन्द्रम्। मघऽवानम्। एनम्। महः। रायः। राधसः। यत्। ददत्। नः। यः। अर्चतः। ब्रह्मऽकृतिम्। अविष्ठः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥५॥

पदार्थः-**(वोचेम)** सत्यं प्रशंसेम **(इत्)** एव **(इन्द्रम्)** भयविदारकम् **(मघवानम्)** बहुधनैश्वर्योपपन्नम् **(एनम्)** **(महः)** महतः **(रायः)** धनस्य **(राधसः)** सुसमृद्धिकरस्य **(यत्)** यम् **(ददत्)** ददाति **(नः)** अस्मभ्यम् **(यः)** **(अर्चतः)** सत्कुर्वतः **(ब्रह्मकृतिम्)** परमेश्वरोपदिष्टां प्रियां गाम् **(अविष्ठः)** अतिशयेन रक्षकः **(यूयम्)** राजाद्याः **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)**॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽविष्ठोऽर्चतो नो ब्रह्मकृतिं ददद्यद्यमेनं मघवानं महो राधसो रायो वर्धकमिन्द्रं वोचेम तमिद्यूयमपि सत्यमुपदिशत हे राजादयो जना! यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥५॥

भावार्थः-यदि सर्वे सत्योपदेशकाः स्युस्तर्हि राजा कदाचिदपि प्रमादीनो न स्याद्यदा राजा धर्मिष्ठो भवेत्तदा सर्वे मनुष्याः धर्मात्मानो भवेयुरेवं परस्परेषां रक्षणेन सदैव सुखं यूयं प्राप्नुतेति॥५॥

अत्रेन्द्रराजप्रजाभृत्योपदेशककृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो **(यः)** जो **(अविष्ठः)** अतीव रक्षा करने वाला **(अर्चतः)** सत्कार करते हुए **(नः)** हम लोगों को प्राप्त होकर **(ब्रह्मकृतिम्)** परमेश्वर ने उपदेश की हुई प्रिय वाणी **(ददत्)** देता है **(यत्)** जिस **(एनम्)** इस **(मघवानम्)** बहुत धन और ऐश्वर्य से युक्त तथा **(महः)** महान् **(राधसः)** उत्तम समृद्धि करने वाले **(रायः)** धन की वृद्धि करने और **(इन्द्रम्)** भय विदीर्ण करने वाले विषय को **(वोचेम)** सत्य कहें **(इत्)** उसी को तुम भी सत्य उपदेश करो। हे राजन्! आदि जनो **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सर्वसुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदा **(पात)** रक्षा करो॥५॥

भावार्थः-यदि सब मनुष्य सत्य के उपदेश करने वाले हों तो राजा कभी ज्ञानहीन न हो, जब राजा धर्मिष्ठ हो तब सब मनुष्य धर्मात्मा हों, ऐसे परस्पर की रक्षा से सदैव सुख तुम लोग पाओ॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, प्रजा, भृत्य और उपदेशक के काम का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह तीसवां सूक्त और चौदहवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ द्वादशर्चस्यैकत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः इन्द्रो देवता। १ विराड्गायत्री। २, ८ गायत्री। ६, ७, ९ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ३, ४, ५ आर्च्युष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। १०, ११ भुरिगनुष्टुप्। १२ अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ सखिभिर्मित्राय किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब बारह ऋचा वाले इकतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मित्रों को मित्र के लिये क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वाय गायत। सखायः सोमपाव्ने॥१॥

प्र। वः। इन्द्राय। मादनम्। हरिऽअश्वाय। गायत। सखायः। सोमऽपाव्ने॥१॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वः**) युष्माकम् (**इन्द्राय**) परमैश्वर्याय (**मादनम्**) आनन्दनम् (**हर्यश्वाय**) हरयो मनुष्या हरणशीला वा अश्वा यस्य सः (**गायत**) प्रशंसत (**सखायः**) सुहृदः (**सोमपाव्ने**) यः सोमं पिबति तस्मै॥१॥

अन्वयः-हे सखायो! वो युष्माकं हर्यश्वाय सोमपाव्न इन्द्राय मादनं यूयं प्र गायत॥१॥

भावार्थः-ये सखायः स्वसखीनामानन्दं जनयन्ति ते सखायो भवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**सखायः**) मित्रो! (**वः**) तुम्हारे (**हर्यश्वाय**) मनुष्य वा हरणशील घोड़े जिसके विद्यमान हैं उस (**सोमपाव्ने**) सोम पीने वाले (**इन्द्राय**) परमैश्वर्यवान् के लिये (**मादनम्**) आनन्द तुम (**प्र, गायत**) अच्छे प्रकार गाओ॥१॥

भावार्थः-जो मित्रजन अपने मित्रजनों को आनन्द उत्पन्न करते हैं, वे मित्र होते हैं॥१॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शंसेदुक्थं सुदानव उत द्युक्षं यथा नरः। चकृमा सत्यराधसे॥२॥

शंस। इत्। उक्थम्। सुऽदानवे। उत। द्युक्षम्। यथा। नरः। चकृम। सत्यऽराधसे॥२॥

पदार्थः-(**शंसे**) प्रशंस (**इत्**) एव (**उक्थम्**) प्रशंसनीयम् (**सुदानवे**) उत्तमदानाय (**उत**) अपि (**द्युक्षम्**) कमनीयम् (**यथा**) (**नरः**) मनुष्याः (**चकृम**) कुर्याम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**सत्यराधसे**) सत्यं राधो धनं यस्य तस्मै॥२॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा नरो वयं सुदानवे सत्यराधसे द्युक्षमुक्थं चकृम तथा त्वमिच्छंस उत॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यस्य धर्मजं धनं सुपात्रेभ्यो दानं च वर्त्तते तमेवोत्तमं विजानीत॥२॥

पदार्थः-हे विद्वान्! (**यथा**) जैसे (**नरः**) मनुष्य हम लोग (**सुदानवे**) उत्तम दान के लिये वा (**सत्यराधसे**) सत्य जिसका धन है उसके लिये (**द्युक्षम्**) मनोहर (**उक्थम्**) प्रशंसनीय काम (**चकृम**) करें, वैसे आप (**इत्**) ही (**शंसे**) प्रशंसा करें (**उत**) ही॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जिसका धर्म से उत्पन्न हुआ धन है और

सुपात्रों के लिये दान वर्त्तमान है, उसी को उत्तम जानो॥२॥

पुनः स विद्वान् कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह विद्वान् कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं न इन्द्र वाजुयुस्त्वं गुव्युः शतक्रतो। त्वं हिरण्ययुर्वसो॥३॥

त्वम्। नुः। इन्द्र। वाजुऽयुः। त्वम्। गुव्युः। शुतक्रुतो इति शतऽक्रतो। त्वम्। हिुरण्युऽयुः। वुसो इति॥३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**नः**) अस्माकम् (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**वाजयुः**) वाजं प्रशस्तमन्नं धनं वाऽऽत्मन इच्छति (**त्वम्**) (**गव्युः**) गां पृथिवीमुत्तमां वाचं वा कामयमानः (**शतक्रतो**) असंख्यप्रज्ञ (**त्वम्**) (**हिरण्ययुः**) हिरण्यं सुवर्णं कामयमानः (**वसो**) वासयितः॥३॥

अन्वयः-हे शतक्रतो वसविन्द्र वाजयुस्त्वं गव्युस्त्वं हिरण्ययुस्त्वं नोऽस्माकं रक्षकोऽध्यापको वा भव॥३॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैरिदमेष्टव्यं यो धर्मात्माऽऽप्तो विद्वान् राजाऽध्यापकः परीक्षको वा स सततमुन्नेता स्यात्॥३॥

पदार्थः-हे (**शतक्रतो**) असंख्यप्रज्ञावान् (**वसो**) वसाने वाले (**इन्द्र**) परम ऐश्वर्ययुक्त (**वाजयुः**) प्रशंसित अन्न वा धन अपने को चाहने वाले! (**त्वम्**) आप (**गव्युः**) पृथिवी वा उत्तम वाणी की कामना करने वाले (**त्वम्**) आप (**हिरण्ययुः**) सुवर्ण की कामना करने वाले (**त्वम्**) आप (**नः**) हमारी रक्षा करने और पढ़ाने वाले हूजिये॥३॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को यही इच्छा करनी चाहिये जो धर्मात्मा आप्त विद्वान् राजा अध्यापक वा परीक्षा करने वाला है सो निरन्तर उन्नति करनेहारा हो॥३॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वुयमिन्द्र त्वायवोऽभि प्र णोनुमो वृषन्। विुद्धि त्व१्स्य नो वसो॥४॥

वुयम्। इन्द्र। त्वाऽयवः। अभि। प्र। नोनुमुः। वृषुन्। विुद्धि। तु। अुस्य। नुः। वुसो इति॥४॥

पदार्थः-(**वयम्**) (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्ययुक्त राजन्नध्यापक वा (**त्वायवः**) त्वां कामयमानः (**अभि**) (**प्र**) (**नोनुमः**) भृशन्नमेम (**वृषन्**) बलवन् बलप्रद (**विद्धि**) विजानीहि (**तु**) (**अस्य**) (**नः**) अस्मान् (**वसो**) वासयितः॥४॥

अन्वयः-हे वसो वृषन्निन्द्र! त्वायवो वयं त्वामभि प्र णोनुमस्त्वं नस्त्वस्य राज्यस्य रक्षितॄन् विद्धि॥४॥

भावार्थः-यथा धार्मिक्यः प्रजा धार्मिकं राजानं कामयन्ते नमस्यन्ति तथैव राजैता धार्मिकीः प्रजाः कामयेत सततं नमस्येत्॥४॥

पदार्थः-हे (**वसो**) वसाने (**वृषन्**) बल रखने और बल के देने वाले (**इन्द्र**) विद्या और

ऐश्वर्ययुक्त राजा वा अध्यापक! **(त्वायवः)** आपकी कामना करने वाले **(वयम्)** हम लोग आपको **(अभि, प्र, णोनुमः)** सब ओर से अच्छे प्रकार निरन्तर प्रणाम करें आप **(नः)** हमको **(तु)** तो **(अस्य)** इस राज्य के रक्षा करने वाले **(विद्धि)** जानो॥४॥

भावार्थः-जैसे धार्मिक प्रजाजन धार्मिक राजा की कामना करते और उस को नमते हैं, वैसे ही राजा इस धार्मिकी प्रजा की कामना करे और निरन्तर नमें॥४॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा नो निदे च वक्तवेऽर्यो रन्धीरराव्णे। त्वे अपि क्रतुर्मम॥५॥

मा। नः। निदे। च। वक्तवे। अर्यः। रन्धीः। अराव्णे। त्वे इति। अपि। क्रतुः। मम॥५॥

पदार्थः-**(मा)** निषेधे **(नः)** अस्माकम् **(निदे)** निन्दकाय **(च)** **(वक्तवे)** वक्तव्याय **(अर्यः)** स्वामी सन् **(रन्धीः)** हिंस्याः **(अराव्णे)** अदात्रे **(त्वे)** त्वयि **(अपि)** **(क्रतुः)** प्रज्ञा **(मम)**॥५॥

अन्वयः-हे राजन्नर्यस्त्वं यो मम त्वे क्रतुरस्ति तं मा रन्धीरपि तु नो वक्तवे अराव्णे निदे च भृशं दण्डं दद्याः॥५॥

भावार्थः-राजा सदैव विद्याधर्मसुशीलतां वर्धयित्वा निन्दकारीन् दुष्टान् मनुष्यान्निवार्य्य प्रजाः सततं रञ्जयेत्॥५॥

पदार्थः-हे राजन्! **(अर्यः)** स्वामी होते हुए जो **(मम, त्वे)** मेरी तुम्हारे बीच **(क्रतुः)** उत्तम बुद्धि है उसको **(मा)** मत **(रन्धीः)** नष्ट करो **(अपि)** किन्तु **(नः)** हमारे **(वक्तवे)** कहने योग्य **(अराव्णे)** न देने वाले के लिये और **(निदे)** निन्दक के लिये **(च)** भी निरन्तर दण्ड देओ॥५॥

भावार्थः-राजा सदैव विद्या, धर्म और सुशीलता बढ़वाने के लिये निन्दक, दुष्ट मनुष्यों को निवार के प्रजा को निरन्तर प्रसन्न करे॥५॥

पुनः स कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं वर्मासि सप्रथः पुरोयोधश्च वृत्रहन्। त्वया प्रति ब्रुवे युजा॥६॥१५॥

त्वम्। वर्म। असि। सऽप्रथः। पुरःऽयोधः। च। वृत्रऽहन्। त्वया। प्रति। ब्रुवे। युजा॥६॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(वर्म)** कवचमिव **(असि)** **(सप्रथः)** सप्रख्यातिः **(पुरः)** पुरस्तात् **(योधः)** योद्धा **(च)** **(वृत्रहन्)** दुष्टानां हन्तः **(त्वया)** **(प्रति)** **(ब्रुवे)** उपदिशामि **(युजा)** यो न्यायेन युनक्ति तेन॥६॥

अन्वयः-हे वृत्रहन् राजन्! यस्त्वं योधः सप्रथो वर्मेव चासि येन युजा त्वयाऽहं प्रति ब्रुवे स त्वं पुरो रक्षको भव॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि राजा सत्कीर्तिः सुशीलो निरभिमानो विद्वान् स्यात्तर्हि तं प्रति सर्वे सत्यं ब्रूयुः स च श्रुत्वा प्रसन्नः स्यात्॥६॥

पदार्थः-हे **(वृत्रहन्)** दुष्टों के हनने वाला राजा! जो **(त्वम्)** आप **(योधः)** युद्ध करने वाले **(सप्रथः)** प्रख्याति प्रशंसा के सहित **(वर्म, च)** और कवच के समान **(असि)** हैं जिस **(युजा)** न्याय से युक्त होने वाले **(त्वया)** आपके साथ मैं **(प्रति, ब्रुवे)** प्रत्यक्ष उपदेश करता हूँ सो आप **(पुरः)** आगे रक्षा करने वाले हूजिये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा सत्कीर्ति, सुशील, निरभिमान, विद्वान् हो तो उसके प्रति सब सत्य बोलें और वह सुनकर प्रसन्न हो॥६॥

पुनस्तस्य विद्याविनये किं कुर्यातामित्याह॥

फिर उसकी विद्या और विनय क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

म॒हाँ उ॒तासि॒ यस्य॒ तेऽनु॑ स्व॒धाव॑री॒ सहः॑। म॒म्नाते॑ इन्द्र॒ रोद॑सी॥७॥

म॒हान्। उ॒त। अ॒सि॒। यस्य॑। ते॒। अनु॑। स्व॒धाव॑री॒ इति॑ स्व॒धाऽव॑री। सहः॑। म॒म्नाते॒ इति॑। इ॒न्द्र॒। रोद॑सी॒ इति॑॥७॥

पदार्थः-**(महान्)** **(उत)** अपि **(असि)** **(यस्य)** **(ते)** तव **(अनु)** **(स्वधावरी)** बह्वन्नादिप्रदे **(सहः)** बलम् **(मम्नाते)** अभ्यासाते **(इन्द्र)** राजन् **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा महान् सूर्योऽस्ति तथा यस्य सकाशात् स्वधावरी रोदसी अनु मम्नाते तस्य ते तथैव सेनाराष्ट्रे स्यातामुताऽपि यतस्त्वं महानसि तस्मात् सहो गृहीत्वा निर्बलान् पालय॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यस्य राज्ञः प्रजासेने धार्मिके सुरक्षिते स्तस्तस्य सूर्यवत्प्रतापो भवति॥७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजा! जैसे **(महान्)** बड़ा सूर्य है, वैसे **(यस्य)** जिनके सकाश से **(स्वधावरी)** बहुत अन्न की देने वाली **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी **(अनु, मम्नाते)** अनुकूलता से अभ्यास करते हैं उन **(ते)** आपके, वैसे ही सेना और राज्य हों **(उत)** और जिससे आप महान् **(असि)** हैं इससे **(सहः)** बल को ग्रहण कर निर्बलों को पालो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिस राजा की प्रजा और सेना धार्मिक और सुरक्षित हों, उसका सूर्य के समान प्रताप होता है॥७॥

कः प्रशंसनीयः स्यादित्याह॥

कौन प्रशंसा करने योग्य हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तं त्वा॑ म॒रुत्व॑ती॒ परि॒ भुव॒द्वाणी॑ स॒याव॑री। नक्ष॑माणा स॒ह द्युभिः॑॥८॥

तम्। त्वा॒। म॒रुत्व॑ती। परि॑। भुव॑त्। वाणी॑। स॒ऽयाव॑री। नक्ष॑माणा। स॒ह। द्युभिः॑॥८॥

पदार्थः-**(तम्)** **(त्वा)** त्वाम् **(मरुत्वती)** प्रशस्ता मरुतो मनुष्या विद्यन्ते यस्यां सा **(परि)** **(भुवत्)** भवेत् **(वाणी)** वाक् **(सयावरी)** या सहैव याति **(नक्षमाणा)** सर्वासु विद्यासु व्याप्नुवती **(सह)** **(द्युभिः)** विज्ञानादिप्रकाशैः॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यं त्वा मरुत्वती सयावरी नक्षमाणा वाणी द्युभिः सह परि भुवत्तं त्वा वयं सर्वतो

भूषयेम॥८॥

भावार्थः-यस्य विदुषो राज्ञ उपदेशकस्य वा सकलविद्यायुक्ता वाणी उत्तमा कार्यकरा उपदेश्या वा स्यात् स एव सर्वा प्रशंसामर्हति॥८॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जिन **(त्वा)** आपको **(मरुत्वती)** जिसमें प्रशंसायुक्त मनुष्य विद्यमान **(सयावरी)** जो साथ जाती **(नक्षमाणा)** और सब विद्याओं में व्याप्त होती हुई **(वाणी)** वाणी **(द्युभिः)** विज्ञानादि प्रकाशों के **(सह)** साथ **(परि, भुवत्)** सब ओर से प्रसिद्ध हो **(तम्)** उन आपको हम लोग सब ओर से भूषित करें॥८॥

भावार्थः-जिस विद्वान् राजा वा उपदेशक विद्वान् की सकलविद्यायुक्त वाणी उत्तम और कार्य करने वाले उपदेश के योग्य हो, वही सब प्रशंसा को योग्य होता है॥८॥

पुनः कं नरं सर्वे नमन्तीत्याह॥

फिर किस मनुष्य को सब नमते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऊर्ध्वासस्त्वान्विन्दवो भुवन् दस्ममुप द्यवि। सन्ते नमन्त कृष्टयः॥९॥

ऊर्ध्वासः। त्वा। अनु। इन्दवः। भुवन्। दस्मम्। उप। द्यवि। सम्। ते। नमन्त। कृष्टयः॥९॥

पदार्थः-**(ऊर्ध्वासः)** उत्कृष्टाः **(त्वा)** त्वाम् **(अनु)** **(इन्दवः)** ऐश्वर्ययुक्ता आनन्दिताः **(भुवन्)** भवन्ति **(दस्मम्)** **(उप)** **(द्यवि)** समीपस्थे प्रकाशितेऽप्रकाशिते वा **(सम्)** **(ते)** तव **(नमन्त)** नमन्ति **(कृष्टयः)** मनुष्याः॥९॥

अन्वयः-हे विद्वन्! य ऊर्ध्वास इन्दवोऽनु भुवँस्ते कृष्टयः उपद्यवि दस्मं त्वा सन्नमन्त॥९॥

भावार्थः-यस्य राज्ञः समीपे भद्रा धार्मिका जनाः सन्ति तस्य विनयेन सर्वाः प्रजाः नम्रा भवन्ति॥९॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जो **(ऊर्ध्वासः)** उत्कृष्ट **(इन्दवः)** ऐश्वर्ययुक्त आनन्दित **(अनु, भुवन्)** अनुकूल होते हैं **(ते)** वे **(कृष्टयः)** मनुष्य **(उपद्यवि)** समीपस्थ प्रकाशित वा अप्रकाशित विषय में **(दस्मम्)** शत्रुओं का उपक्षय विनाश करने **(त्वा)** आपको **(सम्, नमन्त)** अच्छे प्रकार नमते हैं॥९॥

भावार्थः-जिस राजा के समीप में भद्र, धार्मिक जन हैं, उसकी नम्रता से सब प्रजा नम्र होती है॥९॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजप्रजाजन परस्पर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र वो महे महिवृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम्।
विशः पूर्वीः प्र चरा चर्षणिप्राः॥१०॥

प्र। वः। महे। महिऽवृधे। भरध्वम्। प्रऽचेतसे। प्र। सुऽमतिम्। कृणुध्वम्। विशः। पूर्वीः। प्र। चर। चर्षणिऽप्राः॥१०॥

पदार्थः-**(प्र)** **(वः)** युष्मभ्यम् **(महे)** महते **(महिवृधे)** महतां वर्धकाय **(भरध्वम्)** **(प्रचेतसे)**

प्रकृष्टं चेतः प्रज्ञा यस्य तस्मै **(प्र) (सुमतिम्)** शोभनां प्रज्ञाम् **(कृणुध्वम्) (विशः)** प्रजाः **(पूर्वीः)** प्राचीनाः पितापितामहादिभ्यः प्राप्ताः **(प्र) (चर)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङः** इति दीर्घः। **(चर्षणिप्राः)** यश्चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति व्याप्नोति सः॥१०॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा वयं वो युष्मभ्यमुत्तमान् पदार्थान् प्रयच्छेम तथा यूयं नो महे महिवृधे प्रचेतसे सुमतिं प्र भरध्वमस्मान् पूर्वीर्विशो विदुषीः प्र कृणुध्वम्। चर्षणिप्रास्त्वं राजँस्त्वं न्याये प्र चर॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्वांसो युष्मदर्थं शुभान् गुणान् पुष्कलमैश्वर्यं विदधति तथा यूयमेतदर्थं श्रेष्ठां नीतिं धत्त॥१०॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे हम लोग **(वः)** तम्हारे लिये उत्तम पदार्थों को दें, वैसे तुम हम लोगों के **(महे)** महान् व्यवहार के लिये **(महिवृधे)** तथा बड़ों के बढ़ने और **(प्रचेतसे)** उत्तम प्रज्ञा रखने वाले के लिये **(सुमतिम्)** सुन्दर मति को **(प्र, भरध्वम्)** उत्तमता से धारण करो हम लोगों को **(पूर्वीः)** प्राचीन पिता पितामहादिकों से प्राप्त **(विशः)** प्रजाजनों को **(प्र, कृणुध्वम्)** विद्वान् अच्छे प्रकार करो **(चर्षणिप्राः)** जो मनुष्यों को व्याप्त होता वह राजा आप न्याय में **(प्र, चर)** प्रचार करो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन तुम लोगों के लिये शुभगुण और पुष्कल ऐश्वर्य विधान करते हैं, वैसे तुम इनके लिये श्रेष्ठ नीति धारण करो॥१०॥

पुनस्ते विद्वांसः किमुत्पादयेयुरित्याह॥

फिर वे विद्वान् जन क्या उत्पन्न करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उरुव्यचसे महिने सुवृक्तिमिन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः।
तस्य व्रतानि न मिनन्ति धीराः॥११॥

उरुऽव्यचसे। महिने। सुऽवृक्तिम्। इन्द्राय। ब्रह्म। जनयन्त। विप्राः। तस्य। व्रतानि। न। मिनन्ति। धीराः॥११॥

पदार्थः-**(उरुव्यचसे)** बहुषु विद्यासु व्यापकाय **(महिने)** सत्कर्त्तव्याय **(सुवृक्तिम्)** सुष्ठु वर्जन्त्यन्यायं यया ताम् **(इन्द्राय)** परमैश्वर्याय **(ब्रह्म)** धनमन्नं वा **(जनयन्त)** जनयन्ति **(विप्राः)** मेधाविनः **(तस्य) (व्रतानि)** सत्यभाषणादीनि कर्माणि **(न)** निषेधे **(मिनन्ति)** हिंसन्ति **(धीराः)** ध्यानवन्तः॥११॥

अन्वयः-हे धीरा विप्रा! भवन्त उरुव्यचसे महिन इन्द्राय सुवृक्तिं ब्रह्म च जनयन्त तस्य व्रतानि केऽपि न मिनन्ति॥११॥

भावार्थः-ये राज्ञे महद्धनं जनयन्त्यसत्याचारं वर्जयित्वा सत्याचारं प्रसेधयन्ति ते पूज्या जायन्ते॥११॥

पदार्थः-हे **(धीराः)** ध्यानवान् **(विप्राः)** विद्वानो! आप लोग **(उरुव्यचसे)** बहुत विद्याओं में व्यापक **(महिने)** सत्कार करने योग्य **(इन्द्राय)** परमैश्वर्यवान् के लिये **(सुवृक्तिम्)** उत्तमता से अन्याय

को वर्जते हैं जिससे उसको और **(ब्रह्म)** धन वा अन्न को **(जनयन्त)** उत्पन्न करते हैं **(तस्य)** उनके **(व्रतानि)** सत्य भाषण आदि कर्म कोई **(न)** नहीं **(मिनन्ति)** नष्ट करते हैं॥११॥

भावार्थः-जो राजा के लिये बहुत धन उत्पन्न करते और असत्य आचरण को निवृत्त कर सत्य आचरण प्रसिद्ध करते हैं, वे पूज्य होते हैं॥११॥

पुनः कीदृशं नरं सत्या वाक्सेवत इत्याह॥

फिर कैसे मनुष्य को सत्य वाणी सेवती है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रं वाणीरनुत्तमन्युमेव सत्रा राजानं दधिरे सहध्यै।

हर्यश्वाय बर्हया समापीन्॥१२॥१६॥

इन्द्रम्। वाणीः। अनुत्तऽमन्युम्। एव। सत्रा। राजानम्। दधिरे। सहध्यै। हरिऽअश्वाय। बर्हय। सम्। आपीन्॥१२॥

पदार्थः-(इन्द्रम्) अविद्याविदारकमाप्तविद्वांसम् **(वाणीः)** सकलविद्यायुक्ता वाचः **(अनुत्तमन्युम्)** न उत्तो न प्रेरितो मन्युः क्रोधो यस्य तम् **(एव)** **(सत्रा)** सत्येन **(राजानम्)** **(दधिरे)** दधति **(सहध्यै)** सोढुम् **(हर्यश्वाय)** प्रशंसितमनुष्याश्वादियुक्ताय **(बर्हय)** वर्धय। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(सम्)** **(आपीन्)** य आप्नुवन्ति तान्॥१२॥

अन्वयः-हे विद्वन्! या वाणीः सत्राऽनुत्तमन्युं राजानमिन्द्रं सहध्यै दधिरे आपीन् सन् दधिरे तस्मा एव हर्यश्वाय सर्वा विद्या बर्हय॥१२॥

भावार्थः-यमजातक्रोधं जितेन्द्रियं राजानं सकलशास्त्रयुक्ता वागाप्नोति स एव सत्येन न्यायेन प्रजाः पालयितुमर्हतीति॥१२॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकत्रिंशत्तमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जो **(वाणीः)** सकल विद्यायुक्त वाणी **(सत्रा)** सत्य से **(अनुत्तमन्युम्)** जिसका प्रेरणा नहीं किया गया क्रोध उस **(राजानम्)** प्रकाशमान **(इन्द्रम्)** अविद्या विदीर्ण करने वाले विद्वान् को **(सहध्यै)** सहने को **(दधिरे)** धारण करते तथा **(आपीन्)** जो व्याप्त होते हैं उनको **(सम्)** अच्छे प्रकार धारण करते हैं **(एव)** उसी **(हर्यश्वाय)** प्रशंसित मनुष्य और घोड़ों वाले के लिये सब विद्याओं को **(बर्हय)** बढ़ाओ॥१२॥

भावार्थः-जिस न उत्पन्न हुए क्रोध वाले, जितेन्द्रिय राजा को सकल शास्त्रयुक्त वाणी व्याप्त होती है, वही सत्य न्याय से प्रजा पालने योग्य होते हैं॥१२॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान् और राजा के काम का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह इकतीसवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तविंशत्यृचस्य द्वात्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य। १-२५, २६ २७ वसिष्ठः। २६ वसिष्ठः शक्तिर्वा ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ४, २४ विराड् बृहती। ६, ८, १२,१६, १८, २६, निचृद् बृहती। ११, २७ बृहती। १७,२५ भुरिग्बृहती। २१ स्वराड्बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। २, ९ पङ्क्तिः। ५.१३.१५, १९, २३ निचृत्पंक्तिः। ३ साम्नी पङ्क्तिः। ७ विराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। १०, १४ भुरिगनुष्टुप्। २०, २२ स्वराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ के दूरे समीपे च रक्षणीया इत्याह॥

अब सत्ताईस ऋचावाले बत्तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में कौन दूर और समीप में रक्षा करने योग्य होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

मो षु त्वा वाघतश्चनारे अस्मन्नि रीरमन्।
आरात्ताच्चित्सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि॥ १॥

मो इति। सु। त्वा। वाघतः। चन। आरे। अस्मत्। नि। रीरमन्। आरात्तात्। चित्। सधऽमादम्। नः। आ। गहि। इह। वा। सन्। उप। श्रुधि॥ १॥

पदार्थः-(**मो**) निषेधे (**सु**) (**त्वा**) त्वाम् (**वाघतः**) मेधाविनः। **वाघत इति मेधाविनाम**। (निघं०३.१५) (**चन**) अपि (**आरे**) समीपे दूरे वा (**अस्मत्**) (**नि**) (**रीरमन्**) रमन्ताम् (**आरात्तात्**) दूरे (**चित्**) अपि (**सधमादम्**) यत्र सह माद्यन्त्यानन्दन्ति तम् (**नः**) अस्माकम् (**आ**) (**गहि**) आगच्छ प्राप्नुहि वा (**इह**) (**वा**) (**सन्**) (**उप**) (**श्रुधि**)॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन् राजन्! वाघतस्त्वारे चनाप्यस्मदारे मो सुरीरमन्। सततं तवारे सन्तस्त्वा रमयन्तु। आरात्ताच्चित्वं नः सधमादमा गहीह वा प्रसन्नः सन्नस्माकं वचांसि न्युप श्रुधि॥ १॥

भावार्थः-येषां मनुष्याणां समीपे मेधाविनो धार्मिका विद्वांसो वसन्ति दुष्टांश्च दूरे तिष्ठन्ति ते सदैव सुखं लभन्ते॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान् राजा! (**वाघतः**) मेधावी जन आपके (**आरे**) दूर (**चन**) और (**अस्मत्**) हम से दूर (**मो, सु, रीरमन्**) मत रमें। निरन्तर आपके समीप होते हुए (**त्वा**) आपको रमावें। (**आरात्तात्**) दूर में (**चित्**) भी आप (**नः**) हमारे (**सधमादम्**) उस स्थान को कि जिसमें एक साथ आनन्द करते हैं (**आ, गहि**) आओ (**इह, वा**) यहाँ प्रसन्न (**सन्**) होते हुए हमारे वचनों को (**नि, उप, श्रुधि**) समीप में सुनो॥ १॥

भावार्थः-जिन मनुष्यों के समीप बुद्धिमान् धार्मिक, विद्वान्जन और दूर में दुष्ट जन हैं, वे सदैव सुख पाते हैं॥ १॥

पुनः कस्य समीपे के वसेयुरित्याह॥

फिर किसके समीप कौन बसें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमे हि ते ब्रह्मकृतः सुते सचा मधौ न मक्ष आसते।

इन्द्रे कामं जरितारो वसूयवो रथे न पादमा दधुः॥ २॥

इमे। हि। ते। ब्रह्मऽकृतः। सुते। सचा। मधौ। न। मक्षः। आसते। इन्द्रे। कामम्। जरितारः। वसुऽयवः। रथे। न। पादम्। आ। दधुः॥ २॥

पदार्थः-(**इमे**) (**हि**) खलु (**ते**) तत्र (**ब्रह्मकृतः**) ये ब्रह्म धनमन्नं वा कुर्वन्ति ते (**सुते**) निष्पादिते (**सचा**) समवायेन (**मधौ**) मधुरादिगुणयुक्ते (**न**) इव (**मक्षः**) मक्षिकाः (**आसते**) उपतिष्ठन्ति (**इन्द्रे**) परमैश्वर्यवति विदुषि राजनि (**कामम्**) (**जरितारः**) सत्यस्तावकाः (**वसूयवः**) वसूनि धनानि कामयमानाः (**रथे**) रमणीये याने (**न**) इव (**पादम्**) चरणम् (**आ**) समन्तात् (**दधुः**) धरन्ति॥ २॥

अन्वयः-हे राजंस्ते य इमे ब्रह्मकृतो वसूयवो जरितारः सुते मधौ मक्षो न सचासते। इन्द्रे त्वयि रथे पादं न कामम् दधुस्ते हि सुखिनो जायन्ते॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो विद्वान्राजा धर्मात्मा न्यायकारी स्यात्तर्ह्यस्य समीपे बहवो धार्मिका विद्वांसो भवेयुः॥ २॥

पदार्थः-हे राजन्! (**ते**) आपके जो (**इमे**) यह (**ब्रह्मकृतः**) धन वा अन्न को सिद्ध करने (**वसूयवः**) धनों की कामना करने (**जरितारः**) और सत्य की स्तुति करने वाले जन (**सुते**) उत्पन्न किये हुए (**मधौ**) मधुरादिगुणयुक्त स्थान में (**मक्षः**) मक्खियों के (**न**) समान (**सचा**) सम्बन्ध से (**आसते**) उपस्थित होते हैं (**इन्द्रे**) परमैश्वर्यवान् आप में (**रथे**) रमणीय यान में (**पादम्**) पैर जैसे धरें (**न**) वैसे (**कामम्**) कामना को (**आ, दधुः**) सब ओर से धारण करते हैं, वे (**हि**) ही सुखी होते हैं॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्वान् राजा धर्मात्मा न्यायकारी हो तो इसके समीप में बहुत धार्मिक विद्वान् हों॥ २॥

पुनः केन कः किंवदुपासनीय इत्याह॥

फिर किसको कौन किसके तुल्य उपासना करने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रायस्कामो वज्रहस्तं सुदक्षिणं पुत्रो न पितरं हुवे॥ ३॥

रायऽकामः। वज्रऽहस्तम्। सुऽदक्षिणम्। पुत्रः। न। पितरम्। हुवे॥ ३॥

पदार्थः-(**रायस्कामः**) यो धनानि कामयते सः (**वज्रहस्तम्**) शस्त्रास्त्रपाणिम् (**सुदक्षिणम्**) शोभना दक्षिणा यस्य तम् (**पुत्रः**) (**न**) इव (**पितरम्**) जनकम् (**हुवे**)॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा रायस्कामोऽहं पुत्रः पितरं न वज्रहस्तं सदक्षिणं राजानं हुवे तथैनं यूयमप्याह्वयत॥ ३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या यथा पुत्राः पितरमुपासते तथा राजानं ये परिचरन्ति ते सकलैश्वर्यमश्नुवते॥ ३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**रायस्कामः**) धनों की कामना करने वाला मैं (**पुत्रः**) पुत्र (**पितरम्**)

पिता को जैसे **(न)** वैसे **(वज्रहस्तम्)** शस्त्र और अस्त्रों के पार जाने और **(सुदक्षिणम्)** शुभ दक्षिणा रखने वाला राजा को **(हुवे)** बुलाता हूँ, वैसे तुम भी बुलाओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य जैसे पुत्र पिता की उपासना करते हैं, वैसे राजा की जो सेवा करते हैं, वे समस्त ऐश्वर्य पाते हैं॥३॥

पुना राजादयः किमाचरेयुरित्याह॥

फिर राजा आदि क्या आचरण करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इम इन्द्राय सुन्विरे सोमासो दध्याशिरः।

ताँ आ मदाय वज्रहस्त पीतये हरिभ्यां याह्योक आ॥४॥

इमे। इन्द्राय। सुन्विरे सोमासः। दधिऽआशिरः। तान्। आ। मदाय। वज्रऽहस्त। पीतये। हरिऽभ्याम्। याहि। ओकः। आ॥४॥

पदार्थः-**(इमे)** **(इन्द्राय)** परमैश्वर्याय **(सुन्विरे)** सुन्वन्त्युत्पादयन्ति **(सोमासः)** प्रेरकाः **(दध्याशिरः)** ये दधत्यश्नन्ति ते **(तान्)** **(आ)** **(मदाय)** आनन्दाय **(वज्रहस्त)** शस्त्रास्त्रपाणे **(पीतये)** पानाय **(हरिभ्याम्)** सुशिक्षिताभ्यामश्वाभ्यां युक्ते रथेन **(याहि)** प्राप्नुहि **(ओकः)** गृहम् **(आ)** समन्तात्॥४॥

अन्वयः-हे वज्रहस्त! य इमे दध्याशिरः सोमासो जना मदायेन्द्राय पीतये सुन्विरे महौषधिरसान् सुन्विरे तान् हरिभ्यां युक्तेन रथेनाऽऽयाहि शुभमोक आयाहि॥४॥

भावार्थः-ये पुरुषार्थेन विद्याः प्राप्योद्यमं कुर्वन्ति ते राज्यश्रियं लभन्ते॥४॥

पदार्थः-हे **(वज्रहस्त)** शस्त्र और अस्त्रों को हाथ में रखने वाले! जो **(इमे)** यह **(दध्याशिरः)** धारण करने और व्याप्त होने वाले **(सोमासः)** प्रेरक जन **(मदाय)** आनन्द और **(इन्द्राय)** परमैश्वर्य के लिये तथा **(पीतये)** पीने को **(सुन्विरे)** अच्छे रसों को उत्पन्न करते हैं **(तान्)** उनको **(हरिभ्याम्)** अच्छी सीख पाये हुए घोड़ों से युक्त रथ से **(आ, याहि)** आओ शुभ **(ओकः)** स्थान को **(आ)** प्राप्त होओ॥४॥

भावार्थः-जो पुरुषार्थ से विद्याओं को प्राप्त होकर उद्यम करते हैं, वे राज्यश्री को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

श्रवच्छ्रुत्कर्ण ईयते वसूनां नू चिन्नो मर्धिषद्गिरः।

सद्यश्चिद्यः सहस्राणि शता ददन्नकिर्दित्सन्तमा मिनत्॥५॥१७॥

श्रवत्। श्रुत्ऽकर्णः। ईयते। वसूनाम्। नु। चित्। नः। मर्धिषत्। गिरः। सद्यः। चित्। यः। सहस्राणि। शता। ददत्। नकिः। दित्सन्तम्। आ। मिनत्॥५॥

पदार्थः-(**श्रवत्**) शृणुयात् (**श्रुत्कर्णः**) श्रुतौ कर्णे यस्य सः (**ईयते**) गच्छति (**वसूनाम्**) धनानाम् (**नु**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**चित्**) अपि (**नः**) अस्माकम् (**मर्धिषत्**) अभिकाङ्क्षेत् (**गिरः**) सुशिक्षिता वाचः (**सद्यः**) (**चित्**) अपि (**यः**) (**सहस्राणि**) (**शता**) असंख्यानि (**ददत्**) ददाति (**नकिः**) निषेधे (**दित्सन्तम्**) दातुमिच्छन्तम् (**आ**) (**मिनत्**) हिंस्यात्॥५॥

अन्वयः-यः श्रुत्कर्णः सद्यः श्रवन्नो वसूनां गिरश्चिन्नु मर्धिषत्सहस्राणि शतां ददन्नीयते दित्सन्तं नकिरामिनत् स चित्सर्वदा सुखी भवति॥५॥

भावार्थः-ये दीर्घेण ब्रह्मचर्येण सर्वा विद्या शृण्वन्ति विद्यासुशिक्षिता वाच इच्छन्त्यन्येभ्योऽतुलं विज्ञानं ददति ते दुःखं नाप्नुवन्ति॥५॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**श्रुत्कर्णः**) श्रुति में कान रखने वाला (**सद्यः**) शीघ्र (**श्रवत्**) सुने (**नः**) हमारे (**वसूनाम्**) धनों के सम्बन्ध में (**गिरः**) अच्छी शिक्षा की भरी हुई वाणियों को (**चित्**) भी (**नु**) शीघ्र (**मर्धिषत्**) चाहे (**सहस्राणि**) हजारों (**शता**) सैकड़ों पदार्थों को (**ददत्**) देता और (**ईयते**) पहुँचाता है (**दित्सन्तम्**) देना चाहते हुए को (**नकिः**) नहीं (**आ, मिनत्**) विनाशे (**चित्**) वही सर्वदा सुखी होता है॥५॥

भावार्थः-जो दीर्घ ब्रह्मचर्य्य से सब विद्याओं को सुनते, अच्छी शिक्षायुक्त वाणियों को चाहते और औरों को अतुल विज्ञान देते हैं, वे दुःख नहीं पाते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यः कैः सह किं कुर्यादित्याह॥

फिर मनुष्य किनके साथ क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स वी॒रो अप्र॑तिष्कुत॒ इन्द्रे॑ण शूशु॒वे नृभिः॑।
यस्ते॑ गभी॒रा सव॑नानि वृत्रहन्त्सु॒नोत्या च॒ धाव॑ति॥६॥

सः। वी॒रः। अप्र॑तिऽस्कुतः। इन्द्रे॑ण। शू॒शु॒वे। नृऽभिः॑। यः। ते॒। ग॒भी॒रा। सव॑नानि। वृ॒त्र॒ऽह॒न्। सु॒नोति॑। आ। च॒। धाव॑ति॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**वीरः**) निर्भयः (**अप्रतिष्कुतः**) इतस्ततः कम्परहितः (**इन्द्रेण**) परमैश्वर्येण (**शूशुवे**) उपगच्छति (**नृभिः**) नायकैर्मनुष्यैः (**यः**) (**ते**) तव (**गभीरा**) गभीराणि (**सवनानि**) प्रेरणानि (**वृत्रहन्**) शत्रुहन्तः (**सुनोति**) (**आ**) (**च**) (**धावति**)॥६॥

अन्वयः-हे वृत्रहन्! यस्तेऽप्रतिष्कुतो वीरो इन्द्रेण नृभिः सह शूशुवे गभीरा सवनानि सुनोति सद्य आधावति च स एव शत्रून् विजेतुं शक्नोति॥६॥

भावार्थः-य उत्तमैः पुरुषैः सहाऽभिसन्धिं दुष्टैः सह वैमनस्यं रक्षन्ति तेऽसंख्यमैश्वर्यमाप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे (**वृत्रहन्**) शत्रुओं को मारने वाले (**यः**) जो (**ते**) आपका (**अप्रतिष्कुतः**) इधर उधर से निष्कंप (**वीरः**) निर्भय पुरुष (**इन्द्रेण**) परमैश्वर्य और (**नृभिः**) नायक मनुष्यों के साथ (**शूशुवे**) समीप आता है (**गभीरा**) गम्भीर (**सवनानि**) प्रेरणाओं को (**सुनोति**) उत्पन्न करता है शीघ्र (**आ, धावति, च**) दौड़ता है (**सः**) वही शत्रुओं को जीत सकता है॥६॥

भावार्थ:-जो उत्तम पुरुषों के साथ सब ओर से मित्रता और दुष्टों के साथ वैमनस्य रखते हैं, वे असंख्य ऐश्वर्य पाते हैं॥६॥

पुन: स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भवा॒ वरू॑थं मघवन् म॒घोनां॒ यत्स॒मजा॑सि॒ शर्धत॑:।

वि त्वाह॑तस्य॒ वेद॑नं भजेम॒ह्या दू॒णाशो॑ भरा॒ गय॑म्॥७॥

भव॑। वरू॑थम्। म॒घ॒ऽव॒न्। म॒घोना॑म्। यत्। स॒म्ऽअजा॑सि। शर्ध॑त:। वि। त्वाऽह॑तस्य। वेद॑नम्। भ॒जे॒म॒हि॒। आ। दु॒:ऽनश॑:। भ॒र॒। गय॑म्॥७॥

पदार्थ:-(**भव**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घ:। (**वरूथम्**) प्रशस्तं गृहम् (**मघवन्**) बहुधनयुक्त (**मघोनाम्**) धनाढ्यानाम् (**यत्**) (**समजासि**) सम्यक्प्राप्नुया: (**शर्धत:**) बलवत: (**वि**) (**त्वाहतस्य**) त्वया हतस्य (**वेदनम्**) प्रापणम् (**भजेमहि**) सेवेमहि (**आ**) (**दूणाश:**) दुर्लभो नाशो यस्य स: (**भर**) धर। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घ:। (**गयम्**) प्रजाम्॥७॥

अन्वय:-हे मघवन्निन्द्र राजँस्त्वं यन्मघोनां वरूथमस्ति तत्समजासि त्वाहतस्य शर्धतो वरूथं प्राप्तो भव शर्धतो गयं भर दूणाश: सन् वि भव येन वेदनं वयमा भजेमहि॥७॥

भावार्थ:-हे राजन्! दुष्टहन्तुस्ते प्रजायां या नीतिस्तदनुकूलानि कर्माणि वयं कुर्याम यतस्त्वमस्मदनुकूलो भवे:॥७॥

पदार्थ:-हे (**मघवन्**) बहुधनयुक्त राजा! आप (**यत्**) जो (**मघोनाम्**) धनवानों का (**वरूथम्**) प्रशंसित घर है उसे (**समजासि**) अच्छे प्राप्त होओ (**त्वाहतस्य**) तुम्हारे नष्ट किये हुए (**शर्धत:**) बलवान् के घर को प्राप्त (**भव**) होओ बलवान् के (**गयम्**) प्रजाजनों को (**भर**) धारण पोषण करो और (**दूणाश:**) दुर्लभ है नाश जिसका ऐसे होते हुए (**वि**) विशेषता से प्रसिद्ध हूजिये जिससे (**वेदनम्**) पदार्थों की प्राप्ति को हम लोग (**आ, भजेमहि**) अच्छे सेवें॥७॥

भावार्थ:-हे राजा! दुष्टों के मारने वाले आपकी प्रजा में जो नीति उसी के अनुकूल कर्म हम लोग करें, जिससे हमारे अनुकूल आप होओ॥७॥

पुना राज्ञा वैद्यै: किं कारयितव्यमित्याह॥

फिर राजा को वैद्यों से क्या कराना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सुनोता॑ सोम॒पाव्ने॒ सोम॒मिन्द्रा॑य व॒ज्रिणे॑।

पच॑ता प॒क्तीरव॑से कृणु॒ध्वमित्पृ॒णन्नित्पृ॒णते॒ मय॑:॥८॥

सु॒नोत॑। सो॒म॒ऽपाव्ने॑। सोम॑म्। इन्द्रा॑य। व॒ज्रिणे॑। पच॑त। प॒क्ती:। अव॑से। कृ॒णु॒ध्वम्। इत्। पृ॒णन्। इत्। पृ॒ण॒ते। मय॑:॥८॥

पदार्थ:-(**सुनोत**) निष्पादयत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घ:। (**सोमापाव्ने**) महौषधिरसम् पात्रे

(सोमम्) ऐश्वर्यम् **(इन्द्राय)** दुष्टशत्रुविदारकाय **(वज्रिणे)** **(पचत)** अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(पक्तीः)** पाकान् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(कृणुध्वम्)** **(इत्)** एव **(पृणन्)** पालयन् **(इत्)** एव **(पृणते)** पालयति **(मयः)** सुखम्॥८॥

अन्वयः-हे वैद्यशास्त्रविदो विद्वांसो! यूयं सोमपाव्ने सोमं सुनोता वज्रिण इन्द्राय सोमं सुनोत सर्वेषामवसे पक्तीः पचत कृणुध्वमिद् यथा पृणन् विद्वान् मयः पृणते तथेत्प्रजाभ्यो मयः पृणत॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये वैद्याः स्युस्त उत्तमान्यौषधानि प्रशस्तान् रोगनाशकान् रसानुत्तमानन्नपाकाँश्च सर्वान् मनुष्यान् प्रतिशिक्षेरन् येन पूर्णं सुखं स्यात्॥८॥

पदार्थः-हे वैद्यशास्त्रवेत्ता विद्वानो! तुम **(सोमपाव्ने)** बड़ी-बड़ी ओषधियों के रस को पीने वाले के लिये **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य को **(सुनोता)** उत्पन्न करो **(वज्रिणे)** शस्त्र और अस्त्रों को धारण करने और **(इन्द्राय)** दुष्ट शत्रुओं को विदीर्ण करने वाले के लिये ऐश्वर्य्य को उत्पन्न करो सब की **(अवसे)** रक्षा के लिये **(पक्तीः)** पाकों को **(पचत)** पकाओ **(कृणुध्वम्, इत्)** करो ही जैसे **(पृणन्)** पालना करता हुआ विद्वान् **(मयः)** सुख को **(पृणते)** पालता है, वैसे **(इत्)** ही प्रजाजनों के लिये सुख पालो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो वैद्य हों वे उत्तम ओषधि, प्रशंसायुक्त रोगनाशक रस और उत्तम अन्न पाकों की सब मनुष्यों के प्रति शिक्षा दें, जिससे पूर्ण सुख हो॥८॥

पुनर्मनुष्याः किंवद्वर्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य किसके तुल्य वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा स्रेधत सोमिनो दक्षता महे कृणुध्वं राय आतुजे।
तरणिरिज्जयति क्षेति पुष्यति न देवासः कवत्नवे॥९॥

मा। स्रेधत। सोमिनः। दक्षत। महे। कृणुध्वम्। राये। आऽतुजे। तरणिः। इत्। जयति। क्षेति। पुष्यति। न। देवासः। कवत्नवे॥९॥

पदार्थः-**(मा)** निषेधे **(स्रेधत)** हिंसत **(सोमिनः)** ओषध्यादियुक्तस्यैश्वर्यवतो वा **(दक्षत)** बलं प्राप्नुत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(महे)** महते **(कृणुध्वम्)** **(राये)** धनाय **(आतुजे)** बलकारकाय **(तरणिः)** पुरुषार्थी **(इत्)** इव **(जयति)** **(क्षेति)** निवसति **(पुष्यति)** **(न)** निषेधे **(देवासः)** विद्वांसः **(कवत्नवे)** कुत्सितकर्मव्यापनाय॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा देवासः कवत्नवे न प्रवर्तन्ते तथा सोमिन आतुजे महे राय मा स्रेधत दक्षत सुकर्माणि कृणुध्वं यस्तरणिरिदिव जयति क्षेति पुष्यति ते दक्षत॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। येऽन्यायेन कञ्चिन्न हिंसन्ति धर्मात्मानां वृद्धिं सततं कुर्वन्ति ते विद्वांसः सदा विजयन्ते धर्मे निवसन्ति पुष्टाश्च जायन्ते॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(देवासः)** विद्वान् जन **(कवत्नवे)** कुत्सित कर्म में व्याप्ति के लिये **(न)** नहीं प्रवृत्त होते हैं, वैसे **(सोमिनः)** ओषधी आदि युक्त वा ऐश्वर्यवान् के **(आतुजे)** करने वाले

(महे) महान् **(राये)** धन के लिये **(मा)** मत **(स्रेधत)** विनाशो **(दक्षत)** बल पाओ सुकर्म **(कृणुध्वम्)** करो जो **(तरणिः)** पुरुषार्थी जन **(इत्)** ही **(जयति)** जीतता **(क्षेति)** जो निरन्तर वसता वा **(पुष्यति)** जो पुष्ट होता, वे सब बल पावें॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अन्याय से किसी की हिंसा नहीं करते और धर्मात्माओं की वृद्धि करते हैं, वे विद्वान् जन सर्वदा जीतते, धर्म में निवास करते और पुष्ट होते हैं॥९॥

पुनः कस्य केन किं स्यादित्याह॥

फिर किसका किससे क्या हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नकिः सुदासो रथं पर्यास न रीरमत्।

इन्द्रो यस्याविता यस्य मरुतो गमत्स गोमति व्रजे॥१०॥१८॥

नकिः। सुऽदासः। रथम्। परि। आस। न। रीरमत्। इन्द्रः। यस्य। अविता। यस्य। मरुतः। गमत्। सः। गोऽमति। व्रजे॥१०॥

पदार्थः-**(नकिः)** **(सुदासः)** श्रेष्ठा दासाः सेवका दानानि वा यस्य सः **(रथम्)** **(परि)** सर्वतः **(आस)** अस्यति **(न)** निषेधे **(रीरमत्)** रमयति **(इन्द्रः)** दुष्टानां विदारकः **(यस्य)** **(अविता)** रक्षकः **(यस्य)** **(मरुतः)** प्राणा इव मनुष्याः **(गमत्)** गच्छति **(सः)** **(गोमति)** गावो बहवो धेनवो विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मिन् **(व्रजे)** व्रजन्ति यस्मिँस्तस्मिन् स्थाने॥१०॥

अन्वयः-यस्येन्द्रोऽविता गमद्यस्य मरुतो रक्षकाः सन्ति गोमति व्रजे गमत् यस्येन्द्रो रक्षिता नास्ति स सुदासो रथं नकिः पर्यास स न रीरमत्॥१०॥

भावार्थः-यदि राजा प्रजाया रक्षको न स्यात्तर्हि कस्यापि सुखं न भवेत्॥१०॥

पदार्थः-**(यस्य)** जिसका **(इन्द्रः)** दुष्टों को विदीर्ण करने वाला **(अविता)** रक्षक **(गमत्)** जाता है वा **(यस्य)** जिसके **(मरुतः)** प्राण के मनुष्य रक्षा करने वाले हैं जो **(गोमति)** जिसमें बहुत सी गौयें विद्यमान और **(व्रजे)** जिसमें जाते हैं उस स्थान में जाता है, जिसका दुष्टों का विदीर्ण करने वाला रक्षक नहीं वह **(सुदासः)** श्रेष्ठ सेवक वा दोनों वाला जन **(रथम्)** रथ को **(नकिः)** नहीं **(परि, आस)** सब ओर से अलग करता और **(सः)** वह **(न)** नहीं **(रीरमत्)** दूसरों को रमाता है॥१०॥

भावार्थः-यदि राजा प्रजा का रक्षक न हो तो किसी को सुख न हो॥१०॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गमद्वाजं वाजयन्निन्द्र मर्त्यो यस्य त्वमविता भुवः।

अस्माकं बोध्यविता रथानामस्माकं शूर नृणाम्॥११॥

गमत्। वाजम्। वाजयन्। इन्द्र। मर्त्यः। यस्य। त्वम्। अविता। भुवः। अस्माकम्। बोधि। अविता।

रथा॑नाम्। अ॒स्माक॑म्। शू॒र॒। नृ॒णाम्॥ ११॥

पदार्थः-(**गमत्**) प्राप्नोति (**वाजम्**) विज्ञानमन्नादिकं वा (**वाजयन्**) प्राप्तुमिच्छन् (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त राजन् (**मर्त्यः**) मनुष्यः (**यस्य**) (**त्वम्**) (**अविता**) रक्षकः (**भुवः**) भवेः (**अस्माकम्**) (**बोधि**) बुध्यस्व (**अविता**) रक्षकः (**रथानाम्**) यानादीनाम् (**अस्माकम्**) (**शूर**) निर्भयः (**नृणाम्**) मनुष्याणाम्॥ ११॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! यस्य त्वमविता भुवः स मर्त्यो वाजयन् सन् वाजं गमदेषामस्माकं रथानामेषामस्माकं नृणां चाऽविता संस्त्वं बोधि ते वयं वाजं प्राप्नुयाम॥ ११॥

भावार्थः-यदा राजा प्रजाः प्रजा राजानञ्च रक्षेत्तदा सर्वेषां यथावद्रक्षा संभवेत्॥ ११॥

पदार्थः-हे (**शूर**) निर्भय (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त राजा! (**यस्य**) जिसके आप (**अविता**) रक्षक (**भुवः**) हों वह (**मर्त्यः**) मनुष्य (**वाजयन्**) पाने की इच्छा करता हुआ (**वाजम्**) विज्ञान वा अन्नादि को (**गमत्**) प्राप्त होता है जिन (**अस्माकम्**) हम लोगों के (**रथानाम्**) रथ आदि के तथा जिन (**अस्माकम्**) हम लोगों के (**नृणाम्**) मनुष्यों के भी (**अविता**) रक्षा करने वाले (**त्वम्**) आप (**बोधि**) समझें वे हम लोग विज्ञान वा अन्न आदि को प्राप्त हों॥ ११॥

भावार्थः-जब राजा प्रजाओं की और प्रजाजन राजाओं की रक्षा करें, तब सब की यथावत् रक्षा का संभव हो॥ ११॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उदिन्न्व॑स्य रिच्य॒तेंऽशो॒ धनं॒ न जि॒ग्युषः॑।

य इन्द्रो॒ हरि॑वा॒न्न द॑भन्ति॒ तं रिपो॒ दक्षं॑ दधाति सो॒मिनि॑॥ १२॥

उत्। इत्। नु। अ॒स्य॒। रि॒च्य॒ते॒। अंशः॑। धन॑म्। न। जि॒ग्युषः॑। यः। इन्द्रः॑। हरि॑ऽवान्। न। द॒भ॒न्ति॒। तम्। रिपः॑। दक्ष॑म्। द॒धा॒ति॒। सो॒मिनि॑॥ १२॥

पदार्थः-(**उत्**) (**इत्**) (**नु**) (**अस्य**) (**रिच्यते**) अधिको भवति (**अंशः**) भागः (**धनम्**) (**न**) इव (**जिग्युषः**) जयशीलस्य (**यः**) (**इन्द्रः**) समर्थो राजा (**हरिवान्**) बहुप्रशस्तमनुष्ययुक्तः (**न**) निषेधे (**दभन्ति**) हिंसन्ति (**तम्**) (**रिपः**) शत्रवः (**दक्षम्**) बलम् (**दधाति**) (**सोमिनि**) ऐश्वर्यवति॥ १२॥

अन्वयः-यो हरिवानिन्द्रः सोमिनि दक्षं दधाति तं रिपो न दभन्ति यस्याऽस्य जिग्युषस्तमिदंश उद्रिच्यते तमंशो धनं नेव नु दधाति॥ १२॥

भावार्थः-यो राजा धनिष्वैश्वर्यं दरिद्रेषु च वर्धयति तं हिंसितुं कोऽपि न शक्नोति यस्याऽधिकः पुरुषार्थो भवति तमेव धनप्रतिष्ठे प्राप्नुतः॥ १२॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**हरिवान्**) बहुत प्रशंसित मनुष्य युक्त (**इन्द्रः**) समर्थ राजा (**सोमिनि**) ऐश्वर्यवान् में (**दक्षम्**) बल (**दधाति**) धारण करता है (**तम्**) उसको (**रिपः**) शत्रुजन (**न**) नहीं (**दभन्ति**) नष्ट करते हैं जिस (**अस्य**) इस (**जिग्युषः**) जयशील के (**इत्**) उस के प्रति (**अंशः**) भाग

(उत् रिच्यते) अधिक होता है उसको वह भाग **(धनम्)** धन के **(न)** समान **(नु)** शीघ्र धारण करता है॥१२॥

भावार्थः-जो राजा धनियों में जो ऐश्वर्य हैं उसे दरिद्रियों में भी बढ़ाता है उसको कोई नष्ट नहीं कर सकता है, जिसका अधिक पुरुषार्थ होता है उसी को धन और प्रतिष्ठा प्राप्त होती है॥१२॥

पुनः प्रजाः कीदृशं राजानमनुकूला भवन्तीत्याह॥

फिर प्रजा कैसे राजा के अनुकूल होती है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मन्त्रमखर्वं सुधितं सुपेशसं दधात यज्ञियेष्वा।

पूर्वीश्चन प्रसितयस्तरन्ति तं य इन्द्रे कर्मणा भुवत्॥१३॥

मन्त्रम्। अखर्वम्। सुऽधितम्। सुऽपेशसम्। दधात। यज्ञियेषु। आ। पूर्वीः। चन। प्रऽसितयः। तरन्ति। तम्। यः। इन्द्रे। कर्मणा। भुवत्॥१३॥

पदार्थः-**(मन्त्रम्)** विचारम् **(अखर्वम्)** अनल्पं पूर्णम् **(सुधितम्)** सुष्ठुहितम् **(सुपेशसम्)** सुरूपम् **(दधात)** **(यज्ञियेषु)** राजपालनादिसङ्गतेषु व्यवहारेषु **(आ)** **(पूर्वीः)** प्राचीनाः **(चन)** अपि **(प्रसितयः)** प्रकृष्टानि प्रेमबन्धनानि **(तरन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(तम्)** **(यः)** **(इन्द्रे)** राजनि **(सति)** **(कर्मणा)** सत्क्रियया **(भुवत्)** भवेत्॥१३॥

अन्वयः-ये यज्ञियेष्वखर्वं सुधितं सुपेशसं मन्त्रं दधात यः कर्मणेन्द्रे भुवत्तं पूर्वीः प्रसितयश्चना तरन्ति॥१३॥

भावार्थः-येषां राज्ञां गूढो विचारः सर्वहितकरणं श्रेष्ठप्रयत्नश्च भवति ते सत्क्रियया सर्वाः प्रजाः प्रेमास्पदेन रञ्जयितुं शक्नुवन्ति॥१३॥

पदार्थः-जो **(यज्ञियेषु)** राजपालनादि कामों से संग रखते हुए व्यवहारों में **(अखर्वम्)** पूर्ण **(सुधितम्)** सुन्दरता से स्थापित **(सुपेशसम्)** सुरूपम् **(मन्त्रम्)** विचार को **(दधात)** धारण करें। **(यः)** जो **(कर्मणा)** उत्तम क्रिया से **(इन्द्रे)** राजा के निमित्त **(भुवत्)** प्रसिद्ध हो **(तम्)** उसको **(पूर्वीः)** प्राचीन **(प्रसितयः)** प्रकृष्ट प्रेमबन्धन **(चन)** भी **(आ, तरन्ति)** प्राप्त होते हैं॥१३॥

भावार्थः-जिन राजाओं का गूढ़ विचार सर्वहित करना और श्रेष्ठ यत्न होता है, वे अच्छी क्रिया से सब प्रजाजनों को प्रेमास्पद से प्रसन्न कर सकते हैं॥१३॥

पुनर्मनुष्यः केन रक्षितः कीदृशो भवतीत्याह॥

फिर मनुष्य किससे रक्षा पाया हुआ कैसा होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कस्तमिन्द्र त्वावसुमा मर्त्यो दधर्षति।

श्रद्धा इत्ते मघवन् पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति॥१४॥

कः। तम्। इन्द्र। त्वाऽवसुम्। आ। मर्त्यः। दधर्षति। श्रद्धा। इत्। ते। मघऽवन्। पार्ये। दिवि। वाजी। वाजम्। सिसासति॥१४॥

पदार्थः-(**कः**) (**तम्**) (**इन्द्र**) धार्मिक राजन् (**त्वावसुम्**) त्वया प्राप्तधनम् (**आ**) (**मर्त्यः**) (**दधर्षति**) तिरस्करोति (**श्रद्धा**) सत्ये प्रीतिः (**इत्**) एव (**ते**) तव (**मघवन्**) बह्वैश्वर्य (**पार्ये**) पालनीये पूर्णे वा (**दिवि**) प्रकाशे (**वाजी**) विज्ञानवान् (**वाजम्**) विज्ञानम् (**सिषासति**) विभक्तुमिच्छति॥१४॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र को मर्त्यो तं त्वावसुं दधर्षति ते पार्ये दिवि को वाजी वाजं श्रद्धा श्रदामिदासिषासति॥१४॥

भावार्थः-यस्य रक्षां धार्मिको राजा करोति तं तिरस्कर्तुं कः शक्नोति॥१४॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) बहुत ऐश्वर्य वाले (**इन्द्र**) धार्मिक राजा! (**कः**) कौन (**मर्त्यः**) मनुष्य (**तम्**) उस (**त्वावसुम्**) तुम से पाये हुए धन वाले का (**दधर्षति**) तिरस्कार करता है (**ते**) आपके (**पार्ये**) पालना करने योग्य वा पूर्ण (**दिवि**) प्रकाश में कौन (**वाजी**) विज्ञानवान् (**वाजम्**) विज्ञान को तथा (**श्रद्धा**) सत्य में प्रीति श्रद्धा (**इत्**) ही को (**आ, सिषासति**) अलग करना चाहता है॥१४॥

भावार्थः-जिसकी रक्षा धार्मिक राजा करता है, उसका तिरस्कार कौन कर सकता है॥१४॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

म॒घोनः॑ स्म वृत्र॒हत्ये॑षु चोदय॒ ये दद॑ति प्रि॒या वसु॑।
तव॒ प्रणी॑ती हर्यश्व सू॒रिभि॒र्विश्वा॑ तरेम दुरि॒ता॥१५॥१९॥

म॒घोनः॑। स्म॒। वृ॒त्र॒ऽहत्ये॑षु। चो॒द॒य॒। ये। दद॑ति। प्रि॒या। वसु॑। तव॑। प्रऽनी॑ती। ह॒रि॒ऽअ॒श्व॒। सू॒रिऽभिः॑। विश्वा॑। त॒रे॒म॒। दुः॒ऽइ॒ता॥१५॥

पदार्थः-(**मघोनः**) धनाढ्यान् (**स्म**) एव (**वृत्रहत्येषु**) वृत्राणां शत्रूणां हत्या येषु स- ग्रामेषु तेषु (**चोदय**) प्रेरय (**ये**) (**ददति**) (**प्रिया**) प्रियाणि कमनीयानि (**वसु**) धनानि (**तव**) (**प्रणीति**) प्रकृष्टया नीत्या रक्षिताः सन्तः (**हर्यश्व**) हरयोऽश्वा महान्तो मनुष्या यस्य तत्सम्बुद्धौ (**सूरिभिः**) विद्वद्भिः सह (**विश्वा**) सर्वाणि (**तरेम**) (**दुरिता**) दुःखानि॥१५॥

अन्वयः-हे हर्यश्व! सूरिभिस्सह ये तव प्रणीती प्रिया वसु ददति तान् ये च तव प्रणीती सूरिभिः सह वयं विश्वा दुरिता तरेम ताँश्च त्वं वृत्रहत्येषु मघोनः स्म चोदय॥१५॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् यदि पक्षपातं विहाय सर्वान् रक्षेदुदारान् धनाढ्यान् सङ्ग्रामेषु प्रेरयेत्तर्हि सर्वे वयं सर्वाणि दुःखानि तरेम॥१५॥

पदार्थः-हे (**हर्यश्व**) हरणशील महान् घोड़ों वाले मनुष्य! (**सूरिभिः**) विद्वानों के साथ (**ये**) जो (**तव**) आपकी (**प्रणीती**) उत्तम नीति से (**प्रिया**) प्रिय मनोहर (**वसु**) धनों को (**ददति**) देते हैं उनको और जो आपकी उत्तम नीति और विद्वानों के साथ हम लोग (**विश्वा**) सब (**दुरिता**) दुःखों को (**तरेम**) तरें उन्हें भी आप (**वृत्रहत्येषु**) शत्रुओं की हिंसा जिनमें होती है उनमें (**मघोनः**) धनाढ्य करने (**स्म**) ही को (**चोदय**) प्रेरणा देओ॥१५॥

भावार्थः-हे राजा! आप यदि पक्षपात को छोड़ के सबकी रक्षा करें और उदार धनाढ्यों को

संग्राम में प्रेरणा दें तो सब हम लोग सब दु:खों को तरें॥१५॥

पुनः स राजा कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तवेदिन्द्रावमं वसु त्वं पुष्यसि मध्यमम्।

सत्रा विश्वस्य परमस्य राजसि नकिष्ट्वा गोषु वृण्वते॥१६॥

तव। इत्। इन्द्र। अवमम्। वसु। त्वम्। पुष्यसि। मध्यमम्। सत्रा। विश्वस्य। परमस्य। राजसि। नकिः। त्वा। गोषु। वृण्वते॥१६॥

पदार्थः-(**तव**) (**इत्**) (**इन्द्र**) (**अवमम्**) निकृष्टं रक्षकं वा (**वसु**) द्रव्यम् (**त्वम्**) (**पुष्यसि**) (**मध्यमम्**) मध्ये भवम् (**सत्रा**) सत्यम् (**विश्वस्य**) समग्रस्य (**परमस्य**) उत्कृष्टस्य (**राजसि**) (**नकिः**) निषेधे (**त्वा**) त्वाम् (**गोषु**) पृथिवीषु (**वृण्वते**) स्वीकुर्वन्ति॥१६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यत्तवाऽवमं मध्यमं वस्वस्ति येन त्वं पुष्यसि यस्य विश्वस्य परमस्य धनस्य मध्ये सत्रा त्वं राजसि तत्र गोषु च त्वा केऽपि शत्रवो नकिरिद् वृण्वते॥१६॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं सदैव निकृष्टमध्यमोत्तमानां धनानां न्यायेनैव सञ्चयं कुर्याः यस्य धर्मजत्वात् सत्यं धनं वर्तते तं किमपि दु:ख नाप्नोति॥१६॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परमैश्वर्यवान्! जो (**तव**) आपका (**अवमम्**) निकृष्ट वा रक्षा करने वाला और (**मध्यमम्**) मध्यम (**वसु**) धन है जिससे (**त्वम्**) आप (**पुष्यसि**) पुष्ट होते जिस (**विश्वस्य**) समग्र (**परमस्य**) उत्तम धन के बीच (**सत्रा**) सत्य आप (**राजसि**) प्रकाशित होते हैं उसमें और (**गोषु**) पृथिवियों में (**त्वा**) आपको कोई भी शत्रु जन (**नकिः**) न (**इत्**) ही (**वृण्वते**) स्वीकार करते हैं॥१६॥

भावार्थः-हे राजा! आप सदैव निकृष्ट, मध्यम और उत्तम धनों का न्याय से ही संचय करो, जिसका धर्म्म से उत्पन्न होने से सत्य धन वर्त्तमान है, उसको कोई दु:ख नहीं प्राप्त होता है॥१६॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं विश्वस्य धनदा असि श्रुतो य ईं भवन्त्याजयः।

तवायं विश्वः पुरुहूत पार्थिवोऽवस्युर्नाम भिक्षते॥१७॥

त्वम्। विश्वस्य। धनऽदाः। असि। श्रुतः। ये। ईम्। भवन्ति। आजयः। तव। अयम्। विश्वः। पुरुऽहूत। पार्थिवः। अवस्युः। नाम। भिक्षते॥१७॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**विश्वस्य**) समग्रस्य राष्ट्रस्य (**धनदाः**) यो धनं ददाति सः (**असि**) (**श्रुतः**) प्रसिद्धकीर्तिः (**ये**) (**ईम्**) सर्वतः (**भवन्ति**) (**आजयः**) स- ामाः (**तव**) (**अयम्**) (**विश्वः**) सर्वो जनः (**पुरुहूत**) बहुभिः प्रशंसित स्वीकृत (**पार्थिवः**) पृथिव्यां विदितः (**अवस्युः**) आत्मनोऽवो रक्षामिच्छुः (**नाम**) प्रसिद्धं रक्षणम् (**भिक्षते**) याचते॥१७॥

अन्वयः-हे पुरुहूत! यः श्रुतः पार्थिवस्त्वं विश्वस्य धनदा असि यस्य तवायं विश्वोऽवस्युर्जनो नाम त्वद्रक्षणं भिक्षते य ईमाजयो भवन्ति तत्र सर्वे त्वत्सहायमिच्छन्ति ताँस्त्वं सततं रक्ष॥१७॥

भावार्थः-यो राजा सङ्ग्रामे विजयकर्तृभ्यः पुष्कलं धनं ददाति तस्य पराजयः कदापि न भवति यः प्रजाजनो रक्षणमिच्छेत्तस्य रक्षां यः सततं करोति स एव पुण्यकीर्तिर्भवति॥१७॥

पदार्थः-हे **(पुरुहूत)** बहुतों से प्रशंसा को प्राप्त स्वीकार किये हुए राजन्! जो **(श्रुतः)** प्रसिद्ध कीर्तियुक्त **(पार्थिवः)** पृथिवी पर विदित **(त्वम्)** आप **(विश्वस्य)** समग्र राज्य के **(धनदाः)** धन देने वाले **(असि)** हैं जिन **(तव)** आपका **(अयम्)** यह **(विश्वः)** सर्व **(अवस्युः)** अपने को रक्षा चाहने वाला जन **(नाम)** प्रसिद्ध तुम से रक्षा को **(भिक्षते)** मांगता है **(ये)** जो **(ईम्)** सब ओर से **(आजयः)** संग्राम **(भवन्ति)** होते हैं, उनमें सब तुम्हारे सहाय को चाहते हैं, उनकी आप निरन्तर रक्षा करें॥१७॥

भावार्थः-जो राजा संग्राम में विजय करने वालों को बहुत धन देता है, उसका पराजय कभी नहीं होता है, जो प्रजाजन रक्षा चाहें उसकी रक्षा जो निरन्तर करता है, वही पुण्यकीर्ति होता है॥१७॥

पुना राजपुरुषैः किमेष्टव्यमित्याह॥

फिर राजपुरुषों को क्या चाहना योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय।
स्तोतारमिद्दिधिषेय रदावसो न पापत्वाय रासीय॥१८॥

यत्। इन्द्र। यावतः। त्वम्। एतावत्। अहम्। ईशीय। स्तोतारम्। इत्। दिधिषेय। रदवसो इति रदऽवसो। न। पापऽत्वाय। रासीय॥१८॥

पदार्थः-**(यत्)** यः **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रदातः **(यावतः)** **(त्वम्)** **(एतावत्)** **(अहम्)** **(ईशीय)** ईश्वरः समर्थो भवेयम् **(स्तोतारम्)** **(इत्)** एव **(दिधिषेय)** धरेयम् **(रदावसो)** यो रदेषु विलेखनेषु वसति तत्सम्बुद्धौ **(न)** निषेधे **(पापत्वाय)** पापस्य भावाय **(रासीय)** दद्याम्॥१८॥

अन्वयः-हे रदावस इन्द्र! यद्यस्त्वं यावत ईशिषे एतावदहमपीशीय स्तोतारमिद्दिधिषेय पापत्वाय नाहं रासीय॥१८॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवानस्मान्सततं रक्षेत् तर्हि वयं भवतो राष्ट्रस्य च रक्षां विधाय पापाचारं त्यक्त्वाऽन्यानप्यधर्माचारात् पृथग्रक्ष्य सततमानन्देम॥१८॥

पदार्थः-हे **(रदावसो)** करोदनों में वसने वाले **(इन्द्र)** परम ऐश्वर्य्य के देने वाले! **(यत्)** जो **(त्वम्)** आप **(यावतः)** जितने के ईश्वर हों **(एतावत्)** इतने का मैं **(ईशीय)** ईश्वर हूँ समर्थ होऊँ **(स्तोतारम्)** प्रशंसा करने वाले को **(इत्)** ही **(दिधिषेय)** धारण करूं और **(पापत्वाय)** पाप होने के लिए पदार्थ **(न)** न **(अहम्)** मैं **(रासीय)** देऊं॥१८॥

भावार्थः-हे राजा! यदि आप हम लोगों की निरन्तर रक्षा करें तो हम आपके राज्य को रक्षा कर पापाचरण त्याग औरों को भी अधर्माचरण से अलग रख कर निरन्तर आनन्द करें॥१८॥

पुनः प्रजाजनैः किमेष्टव्यमित्याह॥

फिर प्रजाजनों को क्या चाहने योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शिक्षेयमिन्महयते दिवेदिवे राय आ कुहचिद्विदे।
नहि त्वदन्यन्मघवन्न आप्यं वस्यो अस्ति पिता चन॥१९॥

शिक्षेयम्। इत्। महऽयते। दिवेऽदिवे। रायः। आ। कुहचित्ऽविदे। नहि। त्वत्। अन्यत्। मघऽवन्। नः। आप्यम्। वस्यः। अस्ति। पिता। चन॥१९॥

पदार्थः-(**शिक्षेयम्**) सुशिक्षां कुर्याम् (**इत्**) एव (**महयते**) महते (**दिवेदिवे**) (**राये**) धनाय (**आ**) समन्तात् (**कुहचिद्विदे**) यः कुह क्वचिदपि विन्दति तस्मै (**नहि**) (**त्वत्**) (**अन्यत्**) (**मघवन्**) पूजितधनयुक्त (**नः**) अस्माकम् (**आप्यम्**) आप्तुं योग्यम् (**वस्यः**) वशीयः (**अस्ति**) (**पिता**) (**चन**) अपि॥१९॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! योऽहं दिवेदिव आ कुहचिद्विदे महयते राये शिक्षेयं त्वदन्यद्रक्षकं न जानीयां यस्त्वं पिता चनासि स त्वमिन्नो वस्य आप्यमन्यन्नह्यस्ति॥१९॥

भावार्थः-त एव भृत्या उत्तमाः सन्ति ये राजानं स्वस्वामिनं विहायाऽन्यं न याचन्ते नादत्तं गृह्णन्ति प्रतिदिनं पुरुषार्थेन प्रजारक्षणं धनवृद्धिं च चिकीर्षन्ति॥१९॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) पूजित धनयुक्त परमैश्वर्यवान्! जो मैं (**दिवेदिवे**) प्रकाश प्रकाश के लिये (**आ, कुहचिद्विदे**) जो कहीं भी प्राप्त होता उस (**महयते**) महान् (**राये**) धन के लिये (**शिक्षेयम्**) अच्छी शिक्षा करूं (**त्वत्**) तुम से (**अन्यत्**) और रक्षक को न जानूं जो आप (**पिता**) पिता रक्षा करने वाले (**चन**) भी हैं इस कारण सो आप (**इत्**) ही (**नः**) हमारे (**वस्यः**) अत्यन्त वश (**आप्यम्**) प्राप्त होने के योग्य हैं और (**नहि**) नहीं (**अस्ति**) है॥१९॥

भावार्थः-वे ही भृत्य उत्तम हैं जो राजा वा स्वामी को छोड़ के दूसरे को **[=से]** नहीं जांचते **[=मांगते]** न विना दिये लेते, प्रतिदिन पुरुषार्थ से प्रजा की रक्षा कर और धनवृद्धि करना चाहते हैं॥१९॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तरणिरित्सिषासति वाजं पुरंध्या युजा।
आ व इन्द्रं पुरुहूतं नमे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्रुवम्॥२०॥२०॥

तरणिः। इत्। सिसासति। वाजम्। पुरम्ऽध्या। युजा। आ। वः। इन्द्रम्। पुरुऽहूतम्। नमे। गिरा। नेमिम्। तष्टाऽइव। सुऽद्रुवम्॥२०॥

पदार्थः-(**तरणिः**) तारकः (**इत्**) एव (**सिषासति**) सम्भक्तुमिच्छति (**वाजम्**) धनं विज्ञानं वा (**पुरन्ध्या**) या पुरूनर्थान् दधाति तया प्रज्ञया (**युजा**) योगयुक्तया (**आ**) (**वः**) युष्माकम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यम् (**पुरुहूतम्**) बहुभिः स्तुतम् (**नमे**) नमामि (**गिरा**) वाण्या (**नेमिम्**) चक्रम् (**तष्टेव**) तक्षेव

(सुद्रवम्) यः सुष्ठु द्रवति गच्छति धावति तम्॥२०॥

अन्वयः-यस्तरणिरिद्राजा युजा पुरन्ध्या वाजं सिषासति तं वः पुरहूतमिन्द्रं सुद्रवं नेमिं तष्टेव गिरा आ नमे॥२०॥

भावार्थः-यो राजा पूर्णाभ्यां विद्याविनयाभ्यां धर्म्येण च सत्यासत्ये विभज्य न्यायं करोति तं वयं सर्वे नमेम यथा तक्षा रथादिकं रचयति तथैव वयं सर्वाणि कार्याणि रचयेम॥२०॥

पदार्थः-जो **(तरणिः)** तारने वाला **(इत्)** ही राजा **(युजा)** योगयुक्त **(पुरन्ध्या)** बहुत अर्थों को धारण करने वाली बुद्धि से **(वाजम्)** धन वा विज्ञान को **(सिषासति)** अच्छे प्रकार बांटने की इच्छा करता है उस **(वः)** तुम्हारे **(पुरुहूतम्)** बहुतों से स्तुति को पाये हुए **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यवान् को **(सुद्रवम्)** अच्छे प्रकार दौड़ने वाले **(नेमिम्)** पहिये को **(तष्टेव)** बढ़ई जैसे, वैसे **(गिरा)** वाणी से **(आ, नमे)** अच्छे प्रकार नमता हूँ॥२०॥

भावार्थः-जो राजा पूर्ण विद्या और विनय तथा धर्मयुक्त व्यवहार से सत्य और असत्य को अलग कर न्याय करता है, उसको हम सब लोग नमते हैं जैसे बढ़ई रथादि को बनाता है, वैसे हम लोग सब कामों को रचें॥२०॥

पुनर्मनुष्या धनप्राप्तये किं किं कर्म कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य धन की प्राप्ति के लिये क्या-क्या कर्म करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न दुष्टुती मर्त्यो विन्दते वसु न स्रेधन्तं रयिर्नशत्।
सुशक्तिरिन्मघवन्तुभ्यं मावते देष्णं यत्पार्ये दिवि॥२१॥

न। दुःऽस्तुती। मर्त्यः। विन्दते। वसु। न। स्रेधन्तम्। रयिः। नशत्। सुऽशक्तिः। इत्। मघऽवन्। तुभ्यम्। माऽवते। देष्णम्। यत्। पार्ये। दिवि॥२१॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(दुष्टुती)** दुष्टया प्रशंसया **(मर्त्यः)** मनुष्यः **(विन्दते)** प्राप्नोति **(वसु)** धनम् **(न)** निषेधे **(स्रेधन्तम्)** हिंसन्तम् **(रयिः)** श्रीः **(नशत्)** प्राप्नोति **(सुशक्तिः)** शोभना चासौ शक्तिश्च सुशक्तिः **(इत्)** एव **(मघवन्)** परमपूजितधनयुक्त **(तुभ्यम्)** **(मावते)** मत्सदृशाय **(देष्णम्)** दातुं योग्यम् **(यत्)** **(पार्ये)** पालयितुं पूरयितुं योग्ये **(दिवि)** कामे॥२१॥

अन्वयः-हे मघवन्! यथा मर्त्यो दुष्टुती वसु न विन्दते स्रेधन्तं नरं रयिः सुशक्तिरिन्न नशदेवं मावते तुभ्यं पार्ये दिवि यद्देष्णं न नशत् तदन्यमपि न प्राप्नोति॥२१॥

भावार्थः-येऽधर्माचारा दुष्टा हिंस्रा मनुष्याः सन्ति तान् धनं राज्यं श्रीरुत्तमं सामर्थ्यं च न प्राप्नोति तस्मात् सर्वैर्न्यायाचारेणैव धनमन्वेषणीयम्॥२१॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** परमपूजित धनयुक्त! जैसे **(मर्त्यः)** मनुष्य **(दुष्टुती)** दुष्ट प्रशंसा से **(वसु)** धन को **(न)** न **(विन्दते)** प्राप्त होता है **(स्रेधन्तम्)** और हिंसा करने वाले मनुष्य को **(रयिः)** लक्ष्मी और **(सुशक्तिः)** सुन्दर शक्ति **(इत्)** ही **(न)** नहीं **(नशत्)** प्राप्त होती है इस प्रकार **(मावते)**

मेरे समान **(तुभ्यम्)** तुम्हारे लिये **(पार्ये)** पालना वा पूर्णता करने के योग्य **(दिवि)** काम में **(यत्)** जो **(देष्णम्)** देने योग्य को न प्राप्त होता वह और को भी नहीं प्राप्त होता है॥२१॥

भावार्थः-जो अधर्माचरण से युक्त दुष्ट, हिंसक मनुष्य हैं उनको धन, राज्य, और उत्तम सामर्थ्य नहीं प्राप्त होता है, इससे सबको न्याय के आचरण से ही धन खोजना चाहिये॥२१॥

पुनरस्य जगतः कः स्वामीत्याह॥

फिर इस जगत् का स्वामी कौन है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः।

ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः॥२२॥

अभि। त्वा। शूर। नोनुमः। अदुग्धाःऽइव। धेनवः। ईशानम्। अस्य। जगतः। स्वःऽदृशम्। ईशानम्। इन्द्र। तस्थुषः॥२२॥

पदार्थः-(न) **(अभि)** **(त्वा)** त्वाम् **(शूर)** पापाचाराणां हिंसक: **(नोनुमः)** भृशं नमामः **(अदुग्धाइव)** दुग्धरहिता इव **(धेनवः)** गावः **(ईशानम्)** ईषणशीलम् **(अस्य)** **(जगतः)** संसारस्य **(स्वर्दृशम्)** सुखं द्रष्टुम् **(ईशानम्)** निर्मातारम् **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त **(तस्थुषः)** स्थावरस्य॥२२॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र परमात्मन्नस्य जगत ईशानमस्य तस्थुष ईशानं त्वा त्वां स्वर्दृशं धेनवोऽदुग्धा इव वयमभि नोनुमः॥२२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यदि सततं सुखेच्छा स्यात्तर्हि परमात्मानमेव भवन्त उपासीरन्॥२२॥

पदार्थः-हे **(शूर)** पापाचरणों के हिंसक **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त परमात्मा! **(अस्य)** इस **(जगतः)** जङ्गम के **(ईशानम्)** चेष्टा कराने और **(तस्थुषः)** स्थावर संसार के **(ईशानम्)** निर्माण करने वाले **(त्वा)** आपको **(स्वर्दृशम्)** सुखपूर्वक देखने को **(धेनवः)** गौवें **(अदुग्धाइव)** दूधरहित हों जैसे, वैसे हम लोग **(अभि, नोनुमः)** सब ओर से निरन्तर नमते प्रणाम करते हैं॥२२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्य! यदि निरन्तर सुखेच्छा हो तो परमात्मा ही की आप लोग उपासना करें॥२२॥

परमेश्वरेण तुल्योऽधिको वा कोऽपि नास्तीत्याह॥

परमेश्वर के तुल्य वा अधिक कोई नहीं है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न त्वावाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते।

अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे॥२३॥

न। त्वाऽवान्। अन्यः। दिव्यः। न। पार्थिवः। न। जातः। न। जनिष्यते। अश्वऽयन्तः। मघऽवन्। इन्द्र। वाजिनः। गव्यन्तः। त्वा। हवामहे॥२३॥

पदार्थः-(न) निषेधे **(त्वावान्)** त्वया सदृशः **(अन्यः)** **(दिव्यः)** शुद्धस्वरूपः **(नः)**

(पार्थिव:) पृथिव्यां विदित: **(न)** **(जात:)** उत्पन्न: **(न)** **(जनिष्यते)** उत्पत्स्यते **(अश्वायन्त:)** महतो विदुष: कामयमाना: **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद जगदीश्वर **(वाजिन:)** विज्ञानाऽन्नवन्त: **(गव्यन्त:)** आत्मनो गां सुशिक्षितां वाचमुत्तमां भूमिं वेच्छन्त: **(त्वा)** त्वाम् **(हवामहे)** प्रशंसामहे॥२३॥

अन्वय:-हे मघवन्निन्द्र! यत: कोऽपि पदार्थो न त्वावानन्यो दिव्य: पदार्थोऽस्ति न पार्थिवोऽस्ति न जातोऽस्ति न जनिष्यते तस्मात्त्वाऽश्वायन्तो वाजिनो गव्यन्तो वयं हवामहे॥२३॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यस्मात्परमेश्वरेण तुल्योऽधिकोऽन्य: पदार्थ: कोऽपि नास्ति नोत्पन्न आसीन्न चैव कदाचिदुत्पत्स्यते तस्मादेव तस्योपासनं प्रशंसां च वयं नित्यं कुर्याम॥२३॥

पदार्थ:-हे **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(इन्द्र)** परम ऐश्वर्य देने वाले जगदीश्वर! जिससे कोई पदार्थ **(न)** न **(त्वावान्)** आपके सदृश **(अन्य:)** और **(दिव्य:)** शुद्धस्वरूप पदार्थ है **(न)** न **(पार्थिव:)** पृथिवी पर जाना हुआ है **(न)** न **(जात:)** उत्पन्न हुआ है **(न)** न **(जनिष्यते)** उत्पन्न होगा इससे **(त्वा)** आपकी **(अश्वायन्त:)** महान् विद्वानों की कामना करने वाले **(वाजिन:)** विज्ञान और अन्न वाले और **(गव्यन्त:)** अपने को उत्तम वाणी वा उत्तम भूमि की इच्छा करने वाले हम लोग **(हवामहे)** प्रशंसा करते हैं॥२३॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिस कारण परमेश्वर से तुल्य अधिक अन्य पदार्थ कोई नहीं न उत्पन्न हुआ न कभी भी उत्पन्न होगा, इससे ही उसकी उपासना और प्रशंसा हम लोग नित्य करें॥२३॥

पुन: स परमेश्वर: कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह परमेश्वर कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒भी ष॒तस्तदा भ॒रेन्द्र॒ ज्याय॒: कनी॑यस:।
पु॒रु॒व॒सुर्हि म॑घवन्त्स॒नाद॑सि॒ भरे॑भरे च॒ हव्य॑:॥२४॥

अ॒भि। स॒त:। तत्। आ। भ॒र। इन्द्र॑। ज्याय॑:। कनी॑यस:। पु॒रु॒ऽव॒सु:। हि। म॒घ॒ऽव॒न्। स॒नात्। असि॑। भरे॑ऽभरे। च॒। हव्य॑:॥२४॥

पदार्थ:-**(अभि)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घ:। **(सत:)** विद्यमानस्य **(तत्)** चेतनं ब्रह्म **(आ)** **(भर)** **(इन्द्र)** ऐश्वर्ययुक्तजीव **(ज्याय:)** अतिशयेन ज्येष्ठम् **(कनीयस:)** अतिशयेन कनिष्ठात् **(पुरुवसु:)** पुरूणां बहूनां वासयिता **(हि)** यत: **(मघवन्)** सकलैश्वर्यधनयुक्त **(सनात्)** सनातन **(असि)** **(भरेभरे)** पालनीये व्यवहारे **(च)** **(हव्य:)** स्तोतुमर्ह:॥२४॥

अन्वय:-हे मघवन्निन्द्र! हि यतस्त्वं भरेभरे सनाद्धव्य: पुरुवसुरसि तस्मात्सतस्तत्कनीयसो ज्यायो ब्रह्म भरेभरे चाऽभि भर॥२४॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! य: परमात्मा अणोरणीयान् महतो महीयान् सनातन: सर्वाधार: सर्वव्यापकस्सर्वैरुपासनीयोऽस्ति तदाऽऽश्रयमेव सर्वे कुर्वन्तु॥२४॥

पदार्थ:-हे **(मघवन्)** सकलैश्वर्य और धनयुक्त **(इन्द्र)** साधारणतया ऐश्वर्ययुक्त **(हि)** जिससे

आप **(भरेभरे)** पालना करने योग्य व्यवहार में **(सनात्)** सनातन **(हव्यः)** स्तुति करने योग्य **(पुरूवसुः)** बहुतों के वसाने वाले **(असि)** हैं इससे **(सतः)** विद्यमान **(तत्)** उस चेतन ब्रह्म **(कनीयसः)** अतीव कनिष्ठ के **(ज्यायः)** अत्यन्त ज्येष्ठ प्रशंसनीय ब्रह्म को **[(भरे)]** पालनीय व्यवहार में **(च)** भी **(आ, अभि, भर)** सब ओर से धारण करो॥२४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमात्मा अणु से अणु, सूक्ष्म से सूक्ष्म, बड़े से बड़ा सनातन सर्वाधार सर्वव्यापक सब की उपासना करने योग्य है, उसी का आश्रय सब करें॥२४॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

परा णुदस्व मघवन्नमित्रान्त्सुवेदा नो वसू कृधि।
अस्माकं बोध्यविता महाधने भवा वृधः सखीनाम्॥२५॥

परा। नुदस्व। मघऽवन्। अमित्रान्। सुऽवेदाः। नः। वसु। कृधि। अस्माकम्। बोधि। अविता। महाऽधने। भव। वृधः। सखीनाम्॥२५॥

पदार्थः-**(परा)** **(णुदस्व)** प्रेरय **(मघवन्)** बहुधनयुक्त राजन् **(अमित्रान्)** शत्रून् **(सुवेदाः)** धर्मोपार्जितैश्वर्यः **(नः)** अस्माकमस्मभ्यं वा **(वसु)** अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(कृधि)** कुरु **(अस्माकम्)** **(बोधि)** बुध्यस्व **(अविता)** रक्षकः **(महाधने)** महान्ति धनानि प्राप्नुवन्ति यस्मिँस्तस्मिन् स- ामे **(भव)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(वृधः)** वर्धकः **(सखीनाम्)** सर्वसुहृदाम्॥२५॥

अन्वयः-हे मघवन् राजन् सुवेदास्त्वं नोऽस्माकमित्रान् परा णुदस्व नो वसु कृधि महाधनेऽस्माकं सखीनामविता बोधि वृधो भव॥२५॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं धार्मिकाञ्छूरान्सत्कृत्य शिक्षयित्वा युद्धविद्यायां कुशलान्कृत्वा दस्य्वादीन्दुष्टान्निवार्य्य सर्वोपकारकाणां मनुष्याणां रक्षको भव॥२५॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुधनयुक्त राजा **(सुवेदाः)** धर्म से उत्पन्न किये हुए ऐश्वर्ययुक्त आप **(नः)** हमारे **(अमित्रान्)** शत्रुओं को **(परा, णुदस्व)** प्रेरो हमारे लिये **(वसु)** धन को **(कृधि)** सिद्ध करो **(महाधने)** बड़े वा बहुत धन जिसमें प्राप्त होते हैं उस संग्राम में **(अस्माकम्)** हमारे **(सखीनाम्)** सर्व मित्रों के **(अविता)** रक्षा करने वाले **(बोधि)** जानिये और **(वृधः)** बढ़ने वाले **(भव)** हूजिये॥२५॥

भावार्थः-हे राजा! आप धार्मिक, शूरजनों का सत्कार कर उनको शिक्षा देकर युद्धविद्या में कुशल कर डाकू आदि दुष्टों को निवृत्त कर सर्वोपकारी मनुष्यों के रक्षा करने वाले हूजिये॥२५॥

परमेश्वरो मनुष्यैः किंवत्प्रार्थनीय इत्याह॥

परमेश्वर मनुष्यों को किसके तुल्य प्रार्थना करने योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा।

शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि॥२६॥

इन्द्र। क्रतुम्। नः। आ। भर। पिता। पुत्रेभ्यः। यथा। शिक्ष। नः। अस्मिन्। पुरुऽहूत। यामनि। जीवाः। ज्योतिः। अशीमहि॥२६॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद जगदीश्वर (**क्रतुम्**) धर्म्यां प्रज्ञाम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**आ**) (**भर**) (**पिता**) (**पुत्रेभ्यः**) (**यथा**) (**शिक्षा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**अस्मिन्**) (**पुरुहूत**) बहुभिः प्रशंसित (**यामनि**) यान्ति यस्मिँस्तस्मिन् वर्त्तमाने समये (**जीवाः**) (**ज्योतिः**) प्रकाशस्वरूपं परमात्मानं त्वाम् (**अशीमहि**) प्राप्नुयाम॥२६॥

अन्वयः-हे पुरुहूतेन्द्र भगवन्! यथा पुत्रेभ्यः पिता तथा नः क्रतुमाभराऽस्मिन् यामनि नोऽस्माञ्छिक्ष यतो जीवा वयं ज्योतिर्विज्ञानं त्वां चाशीमहि॥२६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे जगदीश्वर! यथा जनकोऽस्मान् पोष्यति तथा त्वं पालय यथाऽऽप्तो विद्वानध्यापको विद्यार्थिभ्यः शिक्षां दत्वा सत्यां प्रज्ञां ग्राहयति तथैवास्मान् सत्यं विज्ञानं ग्राहय यतो वयं सृष्टिविद्यां भवन्तं च प्राप्य सदैवानन्देम॥२६॥

पदार्थः-हे (**पुरुहूत**) बहुतों से प्रशंसा को प्राप्त (**इन्द्र**) परमैश्वर्य के देने वाले जगदीश्वर भगवन्! (**यथा**) जैसे (**पुत्रेभ्यः**) पुत्रों के लिये (**पिता**) पिता, वैसे (**नः**) हम लोगों के लिये (**क्रतुम्**) धर्मयुक्त बुद्धि को (**आ, भर**) अच्छे प्रकार धारण कीजिये (**अस्मिन्**) इस (**यामनि**) वर्त्तमान समय में (**नः**) हम लोगों को (**शिक्ष**) सिखलाओ जिससे (**जीवाः**) जीव हम लोग (**ज्योतिः**) विज्ञान को और आपको (**अशीमहि**) प्राप्त होवें॥२६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे जगदीश्वर! जैसे पिता हम लोगों को पुष्ट करता है, वैसे आप पालना कीजिये जैसे आप्त विद्वान् जन विद्यार्थियों के लिये शिक्षा देकर सत्य बुद्धि का ग्रहण कराता है, वैसे ही हमको सत्य विज्ञान ग्रहण कराओ जिससे हम लोग सृष्टिविद्या और आपको पाकर सर्वदैव आनन्दित हों॥२६॥

मनुष्याः समुद्रादिकं केन तरेयुरित्याह॥

मनुष्य समुद्रादिकों को किससे तरें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा नो अज्ञाता वृजना दुराध्यो३ माशिवासो अव क्रमुः।
त्वया वयं प्रवतः शश्वतीरपोऽति शूर तरामसि॥२७॥२१॥

मा। नः। अज्ञाताः। वृजनाः। दुःआध्यः। मा। अशिवासः। अव। क्रमुः। त्वया। वयम्। प्रऽवतः। शश्वतीः। अपः। अति। शूर। तरामसि॥२७॥

पदार्थः-(**मा**) निषेधे (**नः**) अस्मान् (**अज्ञाताः**) (**वृजनाः**) वृजन्ति येषु यैस्सह वा ते (**दुराध्यः**) दुःखेनाऽऽध्यातुं योग्यः (**मा**) (**अशिवासः**) असुखप्रदाः (**अव**) (**क्रमुः**) अवक्राम्यन्तु (**त्वया**) [त्वया] सह (**वयम्**) (**प्रवतः**) निम्नान् (**शश्वतीः**) अनादिभूताः (**अपः**) जलानि (**अति**)

(शूर) निर्भय **(तरामसि)** उल्लङ्घेमहि॥ २७॥

अन्वयः-हे शूर! नाऽज्ञाता वृजना दुराध्यो नोऽस्मान्माव क्रमुरशिवासोऽस्मान्माऽव क्रमुर्यतस्त्वया सह वयं प्रवतो देशाञ्शश्वतीरपोऽति तरामसि॥ ७॥

भावार्थः-राजा राजजनाः सेनाः सभाध्यक्षाश्चेदृशीर्नावो रचयेयुर्याभिस्समुद्रान् सुखेन सर्वे तरेयुस्तत्र समुद्रेषु नौचालकानां मार्गविज्ञानं यथार्थं स्यादिति॥ २७॥

अत्रेन्द्रमेधाविधनविद्याकामिरक्षकराजेश्वरजीवधनसंचयेश्वरनौयायिगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वात्रिंशत्तमं सूक्तमेकविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(शूर)** निर्भय! **(नः)** हम लोगों को **(अज्ञाताः)** छिपे हुये **(वृजनाः)** जिनमें जाते हैं वा जिनसे जाते हैं वे **(दुराध्यः)** और दुःख से चिंतने योग्य **(नः)** हम लोगों को **(मा)** मत **(अव, क्रमुः)** उल्लंघन करें **(अशिवासः)** दुःख देने वाले हम लोगों को **(मा)** मत उल्लंघन करें जिससे **(त्वया)** तुम्हारे साथ **(वयम्)** हम लोग **(प्रवतः)** नीचे देशों को तथा **(शश्वतीः)** अनादिभूत **(अपः)** जलों को **(अति, तरामसि)** अतीव उतरें॥ २७॥

भावार्थः-राजा और राजजन, सेना और सभाध्यक्ष ऐसी नावें रचें जिनसे समुद्रों को सुख से सब तरें उन समुद्रों में नौकाओं के चलाने वालों को मार्गविज्ञान यथार्थ हों॥ २७॥

इस सूक्त में इन्द्र, मेधावी, धन, विद्या की कामना करने वाले, रक्षक, राजा, ईश्वर, जीव, धनसंचय फिर ईश्वर और नौकाओं के जाने वालों के गुण और कर्म का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

वह बत्तीसवां सूक्त और इक्कीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ चतुर्दशर्चस्य त्रयस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य १-१४ संस्तवो वसिष्ठस्य सपुत्रस्येन्द्रेण वा संवादः। १-९ वसिष्ठपुत्राः। १०-१४ वसिष्ठ ऋषिः त एव देवताः। १, २, ६, १२, १३ त्रिष्टुप्। ३, ४, ५, ७, ९, १४ निचृत्त्रिष्टुप्। ८, ११ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। १० भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाऽध्यापकाऽध्येतारः किं किं कुर्य्युरित्याह॥

अब चौदह ऋचा वाले तेतीसवें सूक्त का आरम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में पढ़ाने और पढ़ने वाले क्या करें, इस विषय का वर्णन करते हैं।

श्वित्यञ्चो मा दक्षिणतस्कपर्दा धियंजिन्वासो अभि हि प्रमन्दुः।
उत्तिष्ठन् वोचे परि बर्हिषो नॄन्न मे दूरादवितवे वसिष्ठाः॥ १॥

श्वित्यञ्चः। मा। दक्षिणतःऽकपर्दाः। धियम्ऽजिन्वासः। अभि। हि। प्रऽमन्दुः। उत्ऽतिष्ठन्। वोचे। परि। बर्हिषः। नॄन्। न। मे। दूरात्। अवितवे। वसिष्ठाः॥ १॥

पदार्थः-(**श्वित्यञ्चः**) ये श्वितिं वृद्धिमञ्चन्ति प्राप्नुवन्ति ते (**मा**) माम् (**दक्षिणतस्कपर्दाः**) दक्षिणतः कपर्दा जटाजूटा येषां ब्रह्मचारिणां ते (**धियम्**) प्रज्ञाम् (**जिन्वासः**) प्राप्नुवन्तः (**अभि**) (**हि**) (**प्रमन्दुः**) प्रकुष्टमानन्दमाप्नुवन्ति (**उत्तिष्ठन्**) उद्यमाय प्रवर्त्तमानः (**वोचे**) वदामि (**परि**) सर्वतः (**बर्हिषः**) विद्यावर्धकान् (**नॄन्**) नायकान् (**न**) इव (**मे**) मम (**दूरात्**) (**अवितवे**) अवितुम् (**वसिष्ठाः**) अतिशयेन विद्यासु वसन्तः॥ १॥

अन्वयः-ये श्वित्यञ्चो दक्षिणतस्कपर्दा धियं जिन्वासो वसिष्ठा हि मा अभि प्र मन्दुर्मे ममाऽवितवे दूरादागच्छेयुस्तान् बर्हिषो नॄन्नुत्तिष्ठन् परि वोचे॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये विद्यासु प्रवीणा मनुष्याणां सत्याचारे बुद्धिवर्धका अध्यापकाः अध्येतार उपदेशकाश्च स्युस्तान् प्रविद्याधर्मप्रचाराय सततं शिक्षोत्साहसत्कारान् कुर्य्युः॥ १॥

पदार्थः-जो (**श्वित्यञ्चः**) बुद्धि को प्राप्त होते (**दक्षिणतस्कपर्दाः**) दाहिनी ओर को जटाजूट रखने वाले (**धियम्**) बुद्धि को (**जिन्वासः**) प्राप्त हुए (**वसिष्ठाः**) अतीव विद्याओं में वसने वाले (**हि**) ही (**मा**) मुझे (**प्र, मन्दुः**) आनन्दित करते हैं (**मे**) मेरे (**अवितवे**) पालने का (**दूरात्**) दूर से आवें उन (**बर्हिषः**) विद्या धर्म बढ़ाने वाले (**नॄन्**) नायक मनुष्यों को (**उत्तिष्ठन्**) उठता हुआ अर्थात् उद्यम के लिये प्रवृत्त हुआ (**परि, वोचे**) सब ओर से कहता हूँ॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो विद्याओं में प्रवीण, मनुष्यों की सत्य आचार में बुद्धि बढ़ाने वाले, पढ़ाने-पढ़ने और उपदेश करने वाले हों उनको विद्या और धर्म के प्रचार के लिये निरन्तर शिक्षा, उत्साह और सत्कारयुक्त करें॥ १॥

पुनः स राजा कीदृशान् विदुषः स्वीकुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसे विद्वानों को स्वीकार करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दूरादिन्द्रमनयन्ना सुतेन तिरो वैशन्तमति पान्तमुग्रम्।

पाशद्युम्नस्य वायतस्य सोमात् सुतादिन्द्रो अवृणीता वसिष्ठान्॥ २॥

दूरात्। इन्द्रम्। अनयन्। आ। सुतेन। तिरः। वैशन्तम्। अति। पान्तम्। उग्रम्। पाशऽद्युम्नस्य। वायतस्य। सोमात्। सुतात्। इन्द्रः। अवृणीत। वसिष्ठान्॥ २॥

पदार्थः-(**दूरात्**) (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यम् (**अनयन्**) नयन्ति (**आ**) (**सुतेन**) निष्पन्नेन पुत्रेण वा (**तिरः**) तिरस्कारे (**वैशन्तम्**) वेशन्तस्य विशतो जनस्येमम् (**अति**) (**पान्तम्**) रक्षन्तम् (**उग्रम्**) तेजस्विनम् (**पाशद्युम्नस्य**) पाशात्प्राप्तं द्युम्नं यशो धनं येन तस्य (**वायतस्य**) विज्ञानवतः (**सोमात्**) ऐश्वर्यात् (**सुतात्**) धर्म्येण निष्पादितात् (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यो राजा (**अवृणीत**) वृणुयात्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**वसिष्ठान्**) अतिशयेन विद्यासु कृतवासान्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये सुतेन वैशन्तं पान्तमुग्रमिन्द्रं दूरादनयन् दारिद्र्यं तिरो नयन्ति तैः पाशद्युम्नस्य वायतस्य सुतात्सोमादिन्द्रो वसिष्ठानत्यावृणीत॥ २॥

भावार्थः-राजादयो जनाः। ये दूरादैश्वर्यं स्वदेशं प्रापयन्ति दारिद्र्यं विनाश्य श्रियं जनयन्ति तानुत्तमाञ्जनान्सर्वन्तो सततं रक्षेयुः॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**सुतेन**) उत्पन्न हुए पदार्थ वा पुत्र से (**वैशन्तम्**) प्रवेश होते हुए जन के सम्बन्धी (**पान्तम्**) पालना करते हुए (**उग्रम्**) तेजस्वी (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यवान् को (**दूरात्**) दूर से (**अनयन्**) पहुँचाते और दारिद्र्य को (**तिरः**) तिरस्कार करते हैं उनसे (**पाशद्युम्नस्य**) जिसने धन यश पाया है उस (**वायतस्य**) विज्ञानवान् के (**सुतात्**) धर्म से उत्पन्न किये (**सोमात्**) ऐश्वर्य से (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य राजा (**वसिष्ठान्**) अतीव विद्याओं में किया निवास जिन्होंने उन को (**अति, आ, अवृणीत**) अत्यन्त स्वीकार करे॥ २॥

भावार्थः-हे राजन् आदि जनो! जो दूर से अपने देश को ऐश्वर्य पहुँचाते और दारिद्र्य का विनाश कर लक्ष्मी को उत्पन्न करते हैं, उन उत्तम जनों की निरन्तर रक्षा कीजिये॥ २॥

पुनर्मनुष्याः किं किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या-क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवेन्नु कं सिन्धुमेभिस्ततारेवेन्नु कं भेदमेभिर्जघान।
एवेन्नु कं दाशराज्ञे सुदासं प्रावदिन्द्रो ब्रह्मणा वो वसिष्ठाः॥ ३॥

एव। इत्। नु। कम्। सिन्धुम्। एभिः। ततार। एव। इत्। नु। कम्। भेदम्। एभिः। जघान। एव। इत्। नु। कम्। दाशऽराज्ञे। सुऽदासम्। प्र। आवत्। इन्द्रः। ब्रह्मणा। वः। वसिष्ठाः॥ ३॥

पदार्थः-(**एव**) (**इत्**) अपि (**नु**) क्षिप्रम् (**कम्**) (**सिन्धुम्**) नदीम् (**एभिः**) उत्तमैर्विद्वद्भिः (**ततार**) तरेत (**एव**) (**इत्**) (**नु**) (**कम्**) (**भेदम्**) भेदनीयं विदारणीयम् (**एभिः**) (**जघान**) हन्यात् (**एव**) (**इत्**) (**नु**) (**कम्**) (**दाशराज्ञे**) यो दाशति सुखं ददाति राजा तस्मै (**सुदासम्**) सुष्ठु दातारं सेवकं वा (**प्र**) (**आवत्**) प्रकर्षेण रक्षेत् (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यो जनः (**ब्रह्मणा**) धनेन (**वः**) युष्मान् (**वसिष्ठाः**)

अतिशयेन ब्रह्मचर्ये कृतवासाः॥३॥

अन्वयः-हे वसिष्ठा! इन्द्रोऽयमेभिः कमेवेत्सिन्धुं नु ततार एभिः कमेवेन्नु जघान दाशराज्ञे कमेवेद् भेदं ब्रह्मणा नु प्रावत् सुदासं वो युष्माँश्च नु प्रावत्॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्या नौकाभिः समुद्रादिकं सद्यस्तरेयुर्वीरैः शत्रून् क्षिप्रं विनाशयेयू राज्ञो राष्ट्रस्य च रक्षाः सर्वदा कुर्य्युस्ते माननीया भवेयुः॥३॥

पदार्थः- **(वसिष्ठाः)** अत्यन्त ब्रह्मचर्य के बीच जिन्होंने वास किया वह हे विद्वानो! **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् यह जन **(एभिः)** उत्तम विद्वानों के साथ **(कम्, एव, इत्)** किसी **(सिन्धुम्)** नदी को भी **(नु)** शीघ्र **(ततार)** तरे **(एभिः)** इन उत्तम विद्वानों के साथ **(कम्, एव, इत्)** किसी को भी **(नु)** शीघ्र **(जघान)** मारे **(दाशराज्ञे)** जो सुख देता है उस के लिये **(कम्, एव, इत्)** किसी **(भेदम्)** विदीर्ण करने योग्य को भी **(ब्रह्मणा)** धन से **(नु)** शीघ्र **(प्र, आवत्)** अच्छे प्रकार रक्खे और **(सुदासम्)** अच्छे देने वाले वा सेवक को तथा **(वः)** तुम लोगों को भी **(नु)** शीघ्र रक्खे॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य नौकादिकों से समुद्रादिकों को अच्छे प्रकार शीघ्र तरें, वीरों से शत्रुओं को शीघ्र विनाशें, राजा और राज्य की रक्षा करें, वे मान करने योग्य हों॥३॥

पुनर्मनुष्याः किं कृत्वा किन्न कुर्वन्तीत्याह॥

फिर मनुष्य क्या करके क्या नहीं करते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितॄणामक्षमव्ययं न किला रिषाथ।
यच्छक्वरीषु बृहता रवेणेन्द्रे शुष्ममदधाता वसिष्ठाः॥४॥

जुष्टी। नरः। ब्रह्मणा। वः। पितॄणाम्। अक्षम्। अव्ययम्। न। किल। रिषाथ। यत्। शक्वरीषु। बृहता। रवेण। इन्द्रे। शुष्मम्। अदधात। वसिष्ठाः॥४॥

पदार्थः-**(जुष्टी)** जुष्ट्या प्रीत्या सेवया वा **(नरः)** नेतारः **(ब्रह्मणा)** धनेन **(वः)** युष्माकम् **(पितॄणाम्)** जनकादीनाम् **(अक्षम्)** व्याप्तम् **(अव्ययम्)** नाशरहितम् **(न)** निषेधे **(किल)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(रिषाथ)** हिंसथ **(यत्)** येन **(शक्वरीषु)** शक्तिमतीषु सेनासु **(बृहता)** महता **(रवेण)** शब्देन **(इन्द्रे)** परमैश्वर्ये **(शुष्मम्)** बलम् **(अदधात)** धर्त। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वसिष्ठाः)** धनेऽत्यन्तं वासं कुर्वन्तः॥४॥

अन्वयः-हे वसिष्ठा नरो! यूयं यद् बृहता रवेण शक्वरीष्विन्द्रे शुष्ममदधात जुष्टी ब्रह्मणा वः पितॄणामव्ययमक्षं किल यूयं न रिषाथ तेन सर्वस्य रक्षणं विधत्त॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्याः स्वशक्तिं वर्धयित्वा दुष्टान् हिंसित्वा धनवृद्ध्या सर्वार्थमक्षीणं सुखं प्रीत्या वर्धयन्ति ते बृहतीं कीर्तिमाप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(वसिष्ठाः)** धन में अत्यन्त वास करते हुए **(नरः)** नायक मनुष्यो! तुम **(यत्)** जिस **(बृहता)** महान् **(रवेण)** शब्द से **(शक्वरीषु)** शक्तियुक्त सेनाओं में और **(इन्द्रे)** परमैश्वर्य में **(शुष्मम्)** बल को **(अदधात)** धारण करते हो **(जुष्टी)** प्रीति वा सेवा से तथा **(ब्रह्मणा)** धन से **(वः)**

आप के **(पितॄणाम्)** जनक अर्थात् पिता आदि का जो **(अव्ययम्)** नाशरहित **(अक्षम्)** व्याप्त बल उसे **(किल)** निश्चय कर तुम **(न, रिषाथ)** नहीं नष्ट करते हो, उससे सब की रक्षा करो॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य अपनी शक्ति को बढ़ा के दुष्टों को मार धन की वृद्धि से सब के अर्थ जो नष्ट नहीं उस सुख को प्रीति से बढ़ाते, वे बढ़ी कीर्ति को पाते हैं॥४॥

पुनः के मनुष्याः सूर्य्यवद्भवन्तीत्याह॥

फिर कौन मनुष्य सूर्य के तुल्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उद्यामिवेत्तृष्णजों नाथितासोऽदीधयुर्दाशराज्ञे वृतासः॥
वसिष्ठस्य स्तुवत इन्द्रों अश्रोदुरुं तृत्सुभ्यो अकृणोदु लोकम्॥५॥२२॥

उत्। द्याम्ऽइव। इत्। तृष्णऽजः। नाथितासः। अदीधयुः। दाशऽराज्ञे। वृतासः। वसिष्ठस्य। स्तुवतः। इन्द्रः। अश्रोत्। उरुम्। तृत्सुऽभ्यः। अकृणोत्। ऊँ इति। लोकम्॥५॥

पदार्थः-(उत) **(द्यामिव)** सूर्यमिव **(इत्)** एव **(तृष्णजः)** प्राप्ततृष्णाः **(नाथितासः)** याचमानाः **(अदीधयुः)** दीपयेयुः **(दाशराज्ञे)** दाशानां दातॄणां राज्ञे **(वृतासः)** स्वीकृताः **(वसिष्ठस्य)** अतिशयेन विदुषः **(स्तुवते)** स्तुवतः **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान्राजा **(अश्रोत्)** शृणुयात् **(उरुम्)** बहुसुखकारकम् **(तृत्सुभ्यः)** शत्रूणां हिंसकेभ्यः **(अकृणोत्)** करोति (उ) **(लोकम्)**॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये द्यामिव नाथितासस्तृष्णजो वृतास इत् दाशराज्ञे उददीधयुर्य इन्द्रो वसिष्ठस्य स्तुवत उरुं वाक्यमश्रोत् तृत्सुभ्य उ लोकमकृणोत्तान् सर्वे सत्कुर्वन्तु॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सूर्य्य इव विद्याविनयप्रकाशिता तृषिता जलमिवैश्वर्य्यमन्वेषमाणाः सकलविद्यायुक्तेभ्य आनन्दं दधति शूरवीरेभ्यो धनं च प्रयच्छन्ति ते बहुसुखं लभन्ते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(द्यामिव)** सूर्य के समान **(नाथितासः)** मांगते हुए और **(तृष्णजः)** तृष्णा को प्राप्त **(वृतासः)** स्वीकार किये हुए **(इत्)** ही **(दाशराज्ञे)** देने वालों के राजा के लिये **(उत्, अदीधयुः)** ऊपर को प्रकाशित करें जो **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् राजा **(वसिष्ठस्य)** अतीव विद्वान् की **(स्तुवतः)** स्तुति करने वाले के लिये [=वाले] की **(उरुम्)** बहुत सुख करने वाले वाक्य को **(अश्रोत्)** सुने **(तृत्सुभ्यः)** और शत्रुओं के मारने वाले के लिये (उ) ही **(लोकम्)** लोक को **(अकृणोत्)** प्रसिद्ध करता है, उनको सब सत्कार करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य के समान विद्या और नम्रता से प्रकाशित और तृषित जल के समान ऐश्वर्य के ढूढ़ने वाले सकल विद्यायुक्त विद्वानों के लिये आनन्द को धारण करते और शूरवीरों के लिये धन भी देते हैं, वे बहुत सुख पाते हैं॥५॥

पुनः केऽध्याप्या अनध्याप्याश्च भवन्तीत्याह॥

फिर कौन पढ़ाने और कौन न पढ़ाने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दण्डाइवेद् गोअजनास आसन् परिच्छिन्ना भरता अर्भकासः।

अभवच्च पुरएता वसिष्ठ आदित्तृत्सूनां विशो अप्रथन्त॥६॥

दण्डाःऽइव। इत्। गोऽअजनासः। आसन्। परिऽछिन्नाः। भरताः। अर्भकासः। अभवत्। च। पुरःऽएता। वसिष्ठः। आत्। इत्। तृत्सूनाम्। विशः। अप्रथन्त॥६॥

पदार्थः-(**दण्डाइव**) यष्टिका इव शुष्कहृदयाऽभिमानिनः (**इत्**) (**गोअजनासः**) गवि सुशिक्षितायां वाच्यप्रादुर्भूताः (**आसन्**) सन्ति (**परिच्छिन्नाः**) छिन्नभिन्नविज्ञानाः (**भरताः**) देहधारकपोषकाः (**अर्भकासः**) अल्पवयसो बालका इव क्षुद्राशयाः (**अभवत्**) भवति (**च**) (**पुरएता**) यः पुर एति (**वसिष्ठः**) अतिशयेन वसुमान् धनाढ्यः (**आत्**) आनन्तर्ये (**इत्**) (**तृत्सूनाम्**) अनादृतानाम् (**विशः**) प्रजा मनुष्यान् (**अप्रथन्त**) प्रथयन्ति॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! ये गोअजनासः परिच्छिन्ना भरता अर्भकासो दण्डा इवेदासँस्तेषां तृत्सूनां विशोऽप्रथन्त। आदिदेषां यः पुरएता वसिष्ठोऽभवत् स चैतान् सुशिक्षयेत्॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या दण्डयज्जडबुद्धयः स्युस्ते सुपरीक्ष्याऽनध्यापनीया भवन्ति ये च धीमन्तः स्युस्ते पाठनीया यो विद्याव्यवहारे प्रधानः स्यात्स एव विद्याविभागस्य सुष्ठु प्रबन्धेन शिक्षां प्रापयेत्॥६॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो (**गोअजनासः**) सुशिक्षित वाणी में [अ]प्रसिद्ध हुए (**परिच्छिन्नाः**) छिन्न-भिन्न विज्ञान वाले (**भरताः**) देह धारण ओर पुष्टि करने से युक्त (**अर्भकासः**) थोड़ी-थोड़ी आयु के बालक (**दण्डाइव**) लट्ठ से सूखे हृदय में अभिमान करने वाले (**इत्**) ही (**आसन्**) हैं उन (**तृत्सूनाम्**) अनादर किये हुओं के बीच (**विशः**) प्रजा मनुष्यों को (**अप्रथन्त**) प्रख्यात करते हैं (**आत्, इत्**) और ही इनके जो (**पुरएता**) आगे जाने वाला (**वसिष्ठः**) अतीव धनाढ्य (**अभवत्**) हो (**च**) वही इन को अच्छी प्रकार शिक्षा दे॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य दण्ड के समान जड़बुद्धि हों, वे अच्छी परीक्षा कर न पढ़ाने योग्य और जो बुद्धिमान् हों वे पढ़ाने योग्य होते हैं, जो विद्या व्यवहार में प्रधान हो, वही विद्याविभाग की उत्तम प्रबन्ध से शिक्षा पहुँचावे॥६॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रयः कृण्वन्ति भुवनेषु रेतस्तिस्रः प्रजा आर्या ज्योतिरग्राः।
त्रयो घर्मास उषसं सचन्ते सर्वां इत्ताँ अनु विदुर्वसिष्ठाः॥७॥

त्रयः। कृण्वन्ति। भुवनेषु। रेतः। तिस्रः। प्रऽजाः। आर्याः। ज्योतिःऽअग्राः। त्रयः। घर्मासः। उषसम्। सचन्ते। सर्वान्। इत्। तान्। अनु। विदुः। वसिष्ठाः॥७॥

पदार्थः-(**त्रयः**) विद्युद्भौमसूर्याख्याऽग्नयो भूम्यप्तेजांसि वा (**कृण्वन्ति**) (**भुवनेषु**) लोकेषु (**रेतः**) वीर्यम् (**तिस्रः**) विद्याराजधर्मसभास्थाः (**प्रजाः**) (**आर्याः**) उत्तमगुणकर्मस्वभावाः (**ज्योतिः**)

विद्याप्रकाशादिकम् **(अग्राः)** अग्रगण्याः **(त्रयः)** **(घर्मासः)** पापानि **(उषसम्)** प्रभातवेलाम् **(सचन्ते)** सम्बध्नन्ति **(सर्वान्)** **(इत्)** एव **(तान्)** **(अनु)** **(विदुः)** जानन्ति **(वसिष्ठाः)**॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा त्रयो भुवनेषु रेतः कृण्वन्ति यथा त्रयो घर्मास उषसं ज्योतिः सचन्ते तथा तिस्रो वसिष्ठा आर्या अग्रा प्रजास्तान् सर्वान्निदनु विदुर्ज्योतिः सचन्ते॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा कार्यकारणकार्यस्था विद्युतः सूर्यादिकं ज्योतिः प्रकाशयन्त्युषसं दिनं च जनयन्ति तथा तिस्रः सभा धर्मार्थकाममोक्षसाधनप्रकाशान् कुर्वन्ति॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(त्रयः)** तीन **(भुवनेषु)** लोकों में **(रेतः)** वीर्य **(कृण्वन्ति)** करते हैं जैसे **(त्रयः)** तीन **(घर्मासः)** पाप **(उषसम्)** प्रभातवेला और **(ज्योतिः)** विद्याप्रकाश आदि का **(सचन्ते)** सम्बन्ध करते हैं, वैसे **(तिस्रः)** तीन अर्थात् विद्या, राजा और धर्मसभास्थ **(वसिष्ठाः)** अतीव धन में स्थिर **(आर्याः)** उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव वाले पुरुष **(अग्राः)** अग्रगण्य **(प्रजाः)** प्रजा जन **(तान्)** उन **(सर्वान्)** सब को **(इत्, अनु, विदुः)** ही अनुकूल जानते हैं और विद्या प्रकाश आदि को सम्बन्ध करते हैं॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे कार्य्य और कारण को कार्य में स्थिर बिजुलियां सूर्य आदि ज्योति को प्रकाशित करती हैं, प्रभातवेला और दिन को उत्पन्न करती हैं, वैसे तीन सभा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष साधन देने वाले प्रकाशों को करती हैं॥७॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिरेषां समुद्रस्येव महिमा गभीरः।
वातस्येव प्रजवो नान्येन स्तोमो वसिष्ठा अन्वेतवे वः॥८॥

सूर्यस्यऽइव। वक्षथः। ज्योतिः। एषाम्। समुद्रस्यऽइव। महिमा। गभीरः। वातस्यऽइव। प्रऽजवः। न। अन्येन। स्तोमः। वसिष्ठाः। अनुऽएतवे। वः॥८॥

पदार्थः-**(सूर्यस्येव)** **(वक्षथः)** रोषः **(ज्योतिः)** प्रकाशः **(एषाम्)** विद्युदादीनाम् **(समुद्रस्येव)** **(महिमा)** महतो भावः **(गभीरः)** अगाधः **(वातस्येव)** **(प्रजवः)** प्रकृष्टो वेगः **(न)** **(अन्येन)** तुल्यः **(स्तोमः)** प्रशंसा **(वसिष्ठाः)** अतिशयेन विद्यावासाः **(अन्वेतवे)** अन्वेतुं विज्ञातुं प्राप्तुं गन्तुं वा **(वः)** युष्माकम्॥८॥

अन्वयः-हे वसिष्ठा! योऽन्वेतवे आप्ता विद्वांस एषां वोऽन्वेतवे सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिः समुद्रस्येव महिमा गभीरो वातस्येव प्रजवः स्तोमोऽस्ति सोऽन्येन तुल्यो नास्ति॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येषां धार्मिकाणां विदुषां सूर्यवद्विद्याधर्मप्रकाशो दुष्टाचारे क्रोधः समुद्रवद्गाम्भीर्यं वायुवत्सत्कर्मसु वेगो भवेत्त एव सङ्गन्तुमर्हाः सन्तीति वेद्यम्॥८॥

पदार्थः-हे **(वसिष्ठाः)** अतीव विद्या में वास करने वालो! जो **(अन्वेतवे)** विशेष जानने को, प्राप्त होने को वा गमन को आप्त अत्यन्त धर्मशील विद्वान् हैं **(एषाम्)** इन बिजुली आदि पदार्थों के

और **(वः)** तुम्हारे विशेष जानने को प्राप्त होने को वा गमन के **(सूर्यस्येव)** सूर्य के समान **(वक्षथः)** रोष वा **(ज्योतिः)** प्रकाश **(समुद्रस्येव)** समुद्र के समान **(महिमा)** महिमा **(गभीरः)** गम्भीर **(वातस्येव)** पवन के समान **(प्रजवः)** उत्तम वेग और **(स्तोमः)** प्रशंसा है वह **(अन्येन)** और के समान **(न)** नहीं है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिन धार्मिक विद्वानों का सूर्य के समान विद्या और धर्म का प्रकाश, दुष्टाचार पर क्रोध, समुद्र के समान गम्भीरता, पवन के समान अच्छे कर्मों में वेग हो वे मिलने योग्य हैं, यह जानना चाहिये॥८॥

के सत्यं निश्चयं कर्त्तुमर्हन्तीत्याह॥

कौन सत्य का निश्चय करने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त इन्निण्यं हृदयस्य प्रकेतैः सहस्रवल्शमभि संचरन्ति।
यमेन ततं परिधिं वयन्तोऽप्सरस उप सेदुर्वसिष्ठाः॥ ९॥

ते। इत्। निण्यम्। हृदयस्य। प्रऽकेतैः। सहस्रऽवल्शम्। अभि। सम्। चरन्ति। यमेन। ततम्। परिऽधिम्। वयन्तः। अप्सरसः। उप। सेदुः। वसिष्ठाः॥ ९॥

पदार्थः-(ते) विद्वांसः **(इत्)** एव **(निण्यम्)** निर्णीतान्तर्गतम् **(हृदयस्य)** आत्मनो मध्ये **(प्रकेतैः)** प्रकृष्टाभिः प्रज्ञाभिः **(सहस्रवल्शम्)** सहस्राण्यसंख्या वल्शा अङ्कुरा इव शास्त्रबोधा यस्मिंस्तं विज्ञानमयं व्यवहारम् **(अभि)** आभिमुख्ये **(सम्)** **(चरन्ति)** सम्यगाचरन्ति **(यमेन)** नियन्त्रा जगदीश्वरेण **(ततम्)** व्याप्तम् **(परिधिम्)** सर्वलोकावरणम् **(वयन्तः)** व्याप्नुवन्तः **(अप्सरसः)** या अप्स्वन्तरिक्षे सरन्ति गच्छन्ति ताः **(उप)** **(सेदुः)** सीदन्ति **(वसिष्ठाः)** अतिशयेन विद्यावन्तः॥९॥

अन्वयः-ये अप्सरसो यमेन सह ततं परिधिं वयन्तो वसिष्ठाः प्रकेतैर्हृदयस्य निण्यं सहस्रवल्शमुपसेदुस्त इत्पूर्णविद्या अभि सं चरन्ति॥९॥

भावार्थः-त एव विद्वांसो जगदुपकारिणो भवन्ति ये दीर्घेण ब्रह्मचर्येणाप्तानां विदुषां सकाशाच्छिक्षां प्राप्याऽखिलां विद्याम् अधीत्य परमात्मना व्याप्तं सर्वं सृष्टिक्रमं विशन्ति॥९॥

पदार्थः- (अप्सरसः) जो अन्तरिक्ष में जाते हैं वे और **(यमेन)** नियन्ता जगदीश्वर से **(ततम्)** व्याप्त **(परिधिम्)** सर्व लोकों के परकोटे को **(वयन्तः)** व्याप्त होते हुए **(वसिष्ठाः)** अतीव विद्यावान् जन **(प्रकेतैः)** उत्तम बुद्धियों से **(हृदयस्य)** आत्मा के बीच **(निण्यम्)** निर्णीत अन्तर्गत **(सहस्रवल्शम्)** हजारों असंख्य अंकुरों के समान शास्त्रबोध जिसमें उस विद्या व्यवहार को **(उप, सेदुः)** उपस्थित होते अर्थात् स्थिर होते हैं **(ते, इत्)** वे ही पूर्ण विद्याओं का **(अभि,सम्, चरन्ति)** सब ओर से संचार करते हैं॥९॥

भावार्थः-वे ही विद्वान् जन संसार के उपकारी होते हैं जो दीर्घ ब्रह्मचर्य्य से और आप्त विद्वानों की उत्तेजना से शिक्षा पाय समस्त विद्या पढ़ परमात्मा से व्याप्त सर्व सृष्टिक्रम को प्रवेश करते हैं॥९॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विद्युतो ज्योतिः परि संजिहानं मित्रावरुणा यदपश्यतां त्वा।
तत्ते जन्मोतैकं वसिष्ठागस्त्यो यत्त्वा विश आजभार॥ १०॥ २३॥

विऽद्युतः। ज्योतिः। परि। सम्ऽजिहानम्। मित्रावरुणा। यत्। अपश्यताम्। त्वा। तत्। ते। जन्म। उत। एकम्। वसिष्ठ। अगस्त्यः। यत्। त्वा। विशः। आऽजभार॥ १०॥

पदार्थः-(**विद्युतः**) (**ज्योतिः**) प्रकाशम् (**परि**) सर्वतः (**संजिहानम्**) अधिकरणं त्यजन् (**मित्रावरुणा**) अध्यापकोपदेशकौ (**यत्**) यः (**अपश्यताम्**) पश्यतः (**त्वा**) त्वाम् (**तत्**) (**ते**) तव (**जन्म**) (**उत**) अपि (**एकम्**) (**वसिष्ठ**) प्रशस्त विद्वन् (**अगस्त्यः**) अस्तदोषः (**यत्**) यम् (**त्वा**) त्वाम् (**विशः**) प्रजाः (**आ, जभार**) समन्ताद्बिभर्त्ति॥ १०॥

अन्वयः-हे वसिष्ठ! योऽगस्त्यस्ते विश आ जभार उताप्येकं जन्मा जभार उताऽपि त्वाऽऽजभार यद्विद्युतस्संजिहानं ज्योतिर्मित्रावरुणा पर्यपश्यतां त्वैतद्विद्यां प्रापयतस्तदेतत्सर्वं त्वं गृहाण॥ १०॥

भावार्थः-यस्य मनुष्यस्य विद्यायां जन्मप्रादुर्भावो भवति तत्प्रज्ञा विद्युज्ज्योतिरिव सकलाविद्या बिभर्त्ति॥ १०॥

पदार्थः-हे (**वसिष्ठ**) प्रशंसायुक्त विद्वान्! जो (**अगस्त्यः**) निर्दोष जन (**ते**) आपकी (**विशः**) प्रजाओं को (**आ, जभार**) सब ओर से धारण करता (**उत**) और (**एकम्**) एक (**जन्म**) जन्म को सब ओर से धारण करता और (**त्वा**) आप को सब ओर से धारण करता तथा (**यत्**) जिस (**विद्युतः**) बिजुली को (**संजिहानम्**) अधिकार त्याग करते हुए (**ज्योतिः**) प्रकाश को (**मित्रावरुणा**) अध्यापक और उपदेशक (**परि, अपश्यताम्**) [सब ओर] देखते हैं (**त्वा**) आपको इस विद्या की प्राप्ति कराते हैं, उस समस्त विषय को आप ग्रहण करें॥ १०॥

भावार्थः-जिस मनुष्य का विद्या में जन्म प्रादुर्भाव होता है, उसकी बुद्धि बिजुली की ज्योति के समान सकल विद्याओं को धारण करती है॥ १०॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन् मनसोऽधि जातः।
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्येन विश्वे देवाः पुष्करे त्वाऽददन्त॥ ११॥

उत। असि। मैत्रावरुणः। वसिष्ठ। उर्वश्याः। ब्रह्मन्। मनसः। अधि। जातः। द्रप्सम्। स्कन्नम्। ब्रह्मणा। दैव्येन। विश्वे। देवाः। पुष्करे। त्वा। अददन्त॥ ११॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**असि**) (**मैत्रावरुणः**) मित्रावरुणयोः प्राणोदानयोरयं वेत्ता (**वसिष्ठ**) पूर्णविद्वन् (**उर्वश्याः**) विशेषविद्यायाः। **उर्वशीति पदनाम।** (निघं०४.२) (**ब्रह्मन्**) सकलवेदवित्

(मनसः) अन्तःकरणपुरुषार्थात् **(अधि)** **(जातः)** प्रादुर्भूतः **(द्रप्सम्)** कमनीयम् **(स्कन्नम्)** प्राप्तम् **(ब्रह्मणा)** बृहता धनेन **(दैव्येन)** देवैर्विद्वद्भिः कृतेन **(विश्वे)** सर्वे **(देवाः)** विद्वांसः **(पुष्करे)** अन्तरिक्षे। **पुष्करमित्यन्तरिक्षनाम।** (निघं०१.३) **(त्वा)** त्वाम् **(अददन्त)** दद्युः॥११॥

अन्वयः-हे ब्रह्मन् वसिष्ठ! यो मैत्रावरुणस्त्वमुर्वश्या उत मनसोऽधिजातोऽसि तं त्वा विश्वे देवा ब्रह्मणा दैव्येन पुष्करे स्कन्नं द्रप्समददन्त॥११॥

भावार्थः-ये मनुष्याः शुद्धान्तःकरणेन प्राणोदानवत्सततं पुरुषार्थेन कमनीयां विद्यां गृह्णन्ति ते विद्वद्वदानन्दिता भवन्ति॥११॥

पदार्थः-हे **(ब्रह्मन्)** समस्त वेदों को जानने वाले **(वसिष्ठ)** पूर्ण विद्वान्! जो **(मैत्रावरुणः)** प्राण और उदान के वेत्ता आप **(उर्वश्याः)** विशेष विद्या से **(उत)** और **(मनसः)** मन से **(अधि, जातः)** अधिकतर उत्पन्न **(असि)** हुए हो उन **(त्वा)** आपको **(विश्वे)** समस्त **(देवाः)** विद्वान् जन **(ब्रह्मणा)** बहुत धन से और **(दैव्येन)** विद्वानों ने किये हुए व्यवहार से **(पुष्करे)** अन्तरिक्ष में **(स्कन्नम्)** प्राप्त **(द्रप्सम्)** मनोहर पदार्थ को **(अददन्त)** देवें॥११॥

भावार्थः-जो मनुष्य शुद्धान्तःकरण से प्राण और उदान के तुल्य और निरन्तर मनोहर विद्या को ग्रहण करते हैं, वे विद्वानों के समान आनन्दित होते हैं॥११॥

पुनः स विद्वान् कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह विद्वान् कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स प्रकेत उभयस्य प्रविद्वान्त्सहस्रदान उत वा सदानः।
यमेन ततं परिधिं वयिष्यन्नप्सरसः परि जज्ञे वसिष्ठः॥१२॥

सः। प्रऽकेतः। उभयस्य। प्रऽविद्वान्। सहस्रऽदानः। उत। वा। सऽदानः। यमेन। ततम्। परिऽधिम्। वयिष्यन्। अप्सरसः। परि। जज्ञे। वसिष्ठः॥१२॥

पदार्थः-**(सः)** **(प्रकेतः)** प्रकृष्टप्रज्ञः **(उभयस्य)** जन्मद्वयस्य **(प्रविद्वान्)** प्रकृष्टो विद्वान् **(सहस्रदानः)** असंख्यप्रदः **(उत)** **(वा)** **(सदानः)** दानेन सह वर्त्तमानः **(यमेन)** वायुना विद्युता वा सह **(ततम्)** व्याप्तम् **(परिधिम्)** **(वयिष्यन्)** व्ययं करिष्यन् **(अप्सरसः)** अन्तरिक्षचराद्वायोः **(परि)** सर्वतः **(जज्ञे)** जायते **(वसिष्ठः)** अतिशयेन वसुमान्॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य उभयस्य प्रविद्वान् प्रकेतः सहस्रदान उत वा सदानो यमेन सह ततं परिधिं वयिष्यन् वसिष्ठोऽप्सरसः परि जज्ञे स सर्वैस्सेवनीयोऽस्ति॥१२॥

भावार्थः-यस्य मनुष्यस्य मातुः पितुरादिमं जन्म द्वितीयमाचार्याद्विद्यायाः सकाशज्जन्म भवति स एवाऽऽकाशस्थपदार्थानां वेत्ता प्रादुर्भूतः पूर्णो विद्वानतुलसुखप्रदो भवति॥१२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(उभयस्य)** जन्म और विद्या-जन्म दोनों का **(प्रविद्वान्)** उत्तम विद्वान् **(प्रकेतः)** उत्तम बुद्धियुक्त **(सहस्रदानः)** हजारों पदार्थ देने वाला **(उत, वा)** अथवा **(सदानः)** दानियुक्त **(यमेन)** वायु वा बिजुली के साथ वर्त्तमान **(ततम्)** विस्तृत **(परिधिम्)** परिधि को

(वयिष्यन्) खर्च करता हुआ **(वसिष्ठः)** अतीव धनवान् **(अप्सरसः)** अन्तरिक्ष में चलने वाले वायु से **(परि, जज्ञे)** सर्वतः प्रसिद्ध होता है **(सः)** वह सब को सेवा करने योग्य है॥१२॥

भावार्थः-जिस मनुष्य का माता पिता से प्रथम जन्म, दूसरा आचार्य से विद्या द्वारा होता है, वही आकाश के पदार्थों को जानने वाला उत्पन्न हुआ पूर्ण विद्वान् अतुल सुख का देने वाला है॥१२॥

पुनः कथं विद्वांसो जायन्त इत्याह॥

फिर कैसे विद्वान् होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒त्रे ह॑ जा॒तावि॑षि॒ता नमो॑भिः कु॒म्भे रेतः॑ सिषिचतुः समा॒नम्।
ततो॑ ह॒ मान॒ उदि॑याय॒ मध्या॒त्ततो॑ जा॒तमृषि॑माहु॒र्वसि॑ष्ठम्॥१३॥

स॒त्रे। ह॒। जा॒तौ। इ॒षि॒ता। नमः॑ऽभिः। रेतः॑। सि॒सि॒च॒तुः। स॒मा॒नम्। ततः॑। ह॒। मानः॑। उत्। इ॒या॒य॒। मध्या॑त्। ततः॑। जा॒तम्। ऋषि॑म्। आ॒हुः॒। वसि॑ष्ठम्॥१३॥

पदार्थः-**(सत्रे)** दीर्घे यज्ञे **(ह)** खलु **(जातौ)** **(इषिता)** इषितावध्यापकोपदेशकौ **(नमोभिः)** **(कुम्भे)** कलशे **(रेतः)** उदकमिव विज्ञानम् **(सिषिचतुः)** सिञ्चेताम् **(समानम्)** तुल्यम् **(ततः)** **(ह)** प्रसिद्धम् **(मानः)** यो मन्यते सः **(उत्)** **(इयाय)** एति **(मध्यात्)** **(ततः)** तस्मात् **(जातम्)** प्रादुर्भूतम् **(ऋषिम्)** वेदार्थवेत्तारम् **(आहुः)** **(वसिष्ठम्)** उत्तमं विद्वांसम्॥१३॥

अन्वयः-यदि जाताविषिता नमोभिः सत्रे हाऽध्यापनाध्ययनाख्ये यज्ञे कुम्भे रेत इव समानं विज्ञानं सिषिचतुस्ततो ह यो मान उदियाय ततो मध्याज्जातं वसिष्ठमृषिमाहुः॥१३॥

भावार्थः-अत्रवाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा स्त्रीपुरुषाभ्यामपत्यं जायते तथाऽध्यापकोपदेशकाऽध्ययनोपदेशैर्विद्वांसो जायन्ते॥१३॥

पदार्थः-यदि **(जातौ)** प्रसिद्ध हुए **(इषिता:)** अध्यापक और उपदेशक **(नमोभिः)** अन्नादिकों से **(सत्रे)** दीर्घ **(ह)** ही पढ़ाने पढ़नेरूप यज्ञ में **(कुम्भे)** कलश में **(रेतः)** जल के **(समानम्)** समान विज्ञान को **(सिषिचतुः)** सीचें छोड़ें **(ततः, ह)** उसी से जो **(मानः)** मानने वाला **(उत्, इयाय)** उदय को प्राप्त होता है **(ततः)** उस **(मध्यात्)** मध्य से **(जातम्)** उत्पन्न हुए **(वसिष्ठम्)** उत्तम **(ऋषिम्)** वेदार्थवेत्ता विद्वान् को **(आहुः)** कहते हैं॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे स्त्री और पुरुषों से सन्तान उत्पन्न होता है, वैसे अध्यापक और उपदेशकों के पढ़ाने और उपदेश करने से विद्वान् होते हैं॥१३॥

पुनरध्यापकाऽध्येतारः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर पढ़ाने और पढ़ने वाले जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उ॒क्थ॒भृतं॑ साम॒भृतं॑ बिभर्ति॒ ग्रावा॑णं॒ बिभ्र॒त् प्र व॑दा॒त्यग्रे॑।
उपै॑नमाध्वं सुमन॒स्यमा॑ना॒ आ वो॑ गच्छाति प्रतृ॒दो॒ वसि॑ष्ठः॥१४॥२४॥२॥

उ॒क्थ॒ऽभृत॑म्। सा॒म॒ऽभृत॑म्। बि॒भ॒र्ति॒। ग्रावा॑णम्। बिभ्र॑त्। प्र। व॒दा॒ति॒। अग्रे॑। उप॑। ए॒न॒म्। आ॒ध्व॒म्।

सुऽमनस्यमा॑नाः। आ। वः। गच्छा॑ति। प्रऽतृदः। वसि॑ष्ठः॥ १४॥

पदार्थः-(**उक्थभृतम्**) य ऋग्वेदं बिभर्ति (**सामभृतम्**) यो सामवेदं दधाति (**बिभर्ति**) (**ग्रावाणम्**) सूर्यो मेघमिव (**बिभ्रत्**) विद्यां धरन् (**प्र**) (**वदाति**) वदेत् (**अग्रे**) पूर्वम् (**उप**) (**एनम्**) (**आध्वम्**) (**सुमनस्यमानाः**) सुष्ठु विचारयन्तः (**आ**) (**वः**) युष्मान् (**गच्छाति**) गच्छेत् प्राप्नुयात् (**प्रतृदः**) प्रकर्षेणाविद्यादिदोषहिंसकः (**वसिष्ठः**) अतिशयेन विद्यादिधनयुक्तः॥ १४॥

अन्वयः-हे सुमनस्यमाना मनुष्या! यः प्रतृदो ग्रावाणं सूर्य इव विद्यां बिभ्रद्वसिष्ठोऽग्र उक्थभृतं सामभृतं बिभर्ति सोऽन्यान् प्र वदाति यो व आगच्छाति तमेनं यूयमुपाध्वम्॥ १४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो विद्यार्थी सकलवेदविदं कुशिक्षाऽविद्याहिंसकमाप्तं विद्वांसं पुरः संसेव्य विद्याः पुनरध्यापयति तं सर्वे जिज्ञासवो विद्याप्राप्तये उपासत इति॥ १४॥

अत्राऽऽध्यापकाऽध्येत्रुपदेशकोपदेश्यगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदे सप्तमे मण्डले द्वितीयोऽनुवाकस्त्रयस्त्रिंशं सूक्तं पञ्चमेऽष्टके तृतीयाध्याये चतुर्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**सुमनस्यमानाः**) सुन्दर विचार वाले मनुष्यो! जो (**प्रतृदः**) अतीव अविद्यादि दोष के नष्ट करने वाले (**ग्रावाणम्**) मेघ को सूर्य जैसे वैसे विद्या को (**बिभ्रत्**) धारता हुआ (**वसिष्ठः**) अत्यन्त विद्या आदि धन से युक्त (**अग्रे**) पूर्व (**उक्थभृतम्**) ऋग्वेद को और (**सामभृतम्**) सामवेद को धारण करने वाले को (**बिभर्ति**) धारण करता वह औरों को (**प्र, वदाति**) कहे जो (**वः**) तुम लोगों को (**आ, गच्छाति**) प्राप्त हो (**एनम्**) उस की तुम (**उप, आध्वम्**) उपासना करो॥ १४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्यार्थी सकल वेदवेत्ता कुशिक्षा और अविद्या को नष्ट करने वाले आप्त विद्वान् की पूर्व अच्छे प्रकार सेवा कर विद्या पाय फिर पढ़ाता है, उसकी सब ज्ञान चाहने वाले जन विद्या पाने के लिये उपासना करते हैं॥ १४॥

इस सूक्त में पढ़ाने-पढ़ने और उपदेश सुनाने और सुनने वालों के गुण और कार्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये।

यह ऋग्वेद के सातवें मण्डल में दूसरा अनुवाक, तेतीसवां सूक्त और पञ्चम अष्टक के तीसरे अध्याय में चौबीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चविंशत्यृचस्य चतुस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। १-१५, १८-२५ विश्वेदेवाः। १६ अहिः। १७ अहिर्बुध्न्यो देवता। १, २, ५, १२, १३, १४, १६, १९, २० भुरिगार्ची गायत्री। ३, ४, १७ आर्ची गायत्री। ६, ७, ८, ९, १०, ११, १५, १८, २१ निचृत्त्रिपादगायत्री। २२, २४ निचृदार्षी त्रिष्टुप् छन्दः। षड्जः स्वरः। २३ आर्षी त्रिष्टुप्। २५ विराडार्षी त्रिष्टुप् च छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ कन्याः काभ्यो विद्याः प्राप्नुयुरित्याह॥

अब कन्याजन किनसे विद्या को पावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र शुक्रैतु देवी मनीषा अस्मत्सुतष्टो रथो न वाजी॥१॥

प्र। शुक्रा। एतु। देवी। मनीषाः। अस्मत्। सुऽतष्टः। रथः। न। वाजी॥१॥

पदार्थः-(**प्र**) (**शुक्रा**) शुद्धान्तःकरणा आशुकारिणी (**एतु**) प्राप्नोतु (**देवी**) विदुषी (**मनीषाः**) प्रज्ञाः (**अस्मत्**) अस्माकं सकाशात् (**सुतष्टः**) उत्तमेन शिल्पिना निर्मितः (**रथः**) (**न**) इव (**वाजी**)॥१॥

अन्वयः-शुक्रा देवी कन्याऽस्मत्सुतष्टो वाजी रथो न मनीषाः प्रैतु॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। सर्वाः कन्या विदुषीभ्यः स्त्रीभ्यो ब्रह्मचर्येण सर्वा विद्या अधीयीरन्॥१॥

पदार्थः- (**शुक्रा**) शुद्ध अन्तःकरणयुक्त शीघ्रकारिणी (**देवी**) विदुषी कन्या (**अस्मत्**) हमारे से (**सुतष्टः**) उत्तम कारू अर्थात् कारीगर के बनाये हुए (**वाजी**) वेगवान् (**रथः**) रथ के (**न**) समान (**मनीषाः**) उत्तम बुद्धियों को (**प्र, एतु**) प्राप्त होवे॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। सब कन्या विदुषियों से ब्रह्मचर्य्य नियम से सब विद्या पढ़ें॥१॥

पुनस्ताः कन्याः कां कां विद्यां जानीयुरित्याह॥

फिर वे कन्या किस-किस विद्या को जानें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विदुः पृथिव्या दिवो जनित्रं शृण्वन्त्यापो अधः क्षरन्तीः॥२॥

विदुः। पृथिव्याः। दिवः। जनित्रम्। शृण्वन्ति। आपः। अधः। क्षरन्तीः॥२॥

पदार्थः-(**विदुः**) जानीयुः (**पृथिव्याः**) भूमेः (**दिवः**) सूर्यस्य (**जनित्रम्**) जनकं कारणम् (**शृण्वन्ति**) (**आपः**) जलानीव (**अधः**) (**क्षरन्तीः**) वर्षन्त्यः॥२॥

अन्वयः-याः कन्या अधः क्षरन्तीराप इव विद्याः शृण्वन्ति ताः पृथिव्या दिवो जनित्रं विदुः॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा मेघमण्डलादापो वेगेन पृथिवीं प्राप्य प्रजा आनन्दन्ति तथैव याः कन्या अध्यापिकाभ्यो भूगर्भादिविद्याः प्राप्य पत्यादीन् सततं सुखयन्ति ताः श्रेष्ठतरा भवन्ति॥२॥

पदार्थः-जो कन्या (**अधः, क्षरन्तीः**) नीचे को गिरते वर्षते हुए जलों के समान विद्या (**शृण्वन्ति**) सुनती हैं वे (**पृथिव्याः**) पृथिवी और (**दिवः**) सूर्य के (**जनित्रम्**) कारण को (**विदुः**) जानें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे मेघमण्डल से जल वेग से पृथिवी को पाकर प्रजा आनन्दित होते हैं, वैसे जो कन्या पढ़ाने वाली से भूगर्भादि विद्या को पाकर पति आदि को निरन्तर सुख देती हैं, वे अत्यन्त श्रेष्ठ होती हैं॥२॥

पुनस्ताः कीदृशो भवेयुरित्याह॥

फिर वे कैसी हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आपश्चिदस्मै पिन्वन्त पृथ्वीर्वृत्रेषु शूरा मंसन्त उग्राः॥३॥

आपः। चित्। अस्मै। पिन्वन्त। पृथ्वीः। वृत्रेषु। शूराः। मंसन्ते। उग्राः॥३॥

पदार्थः-(**आपः**) जलानि (**चित्**) इव (**अस्मै**) विद्याव्यवहाराय (**पिन्वन्त**) सिञ्चन्ति (**पृथ्वीः**) भूमीः (**वृत्रेषु**) धनेषु (**शूराः**) (**मंसन्ते**) परिणमन्ते (**उग्राः**) तेजस्विनः॥३॥

अन्वयः-याः कन्याः पृथ्वीरापश्चिदस्मै पिन्वन्त वृत्रेषु उग्राः शूरा इव मंसन्ते ता विदुष्यो जायन्ते॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। याः कन्या जलवत्कोमलत्वादिगुणाः पृथिवीवत्क्षमाशीलाः शूरवदुत्साहिन्यो विद्या गृह्णन्ति ताः सौभाग्यवत्यो जायन्ते॥३॥

पदार्थः-जो कन्या (**पृथ्वीः**) भूमि और (**आपः**) जल (**चित्**) ही के समान (**अस्मै**) इस विद्याव्यवहार के लिये (**पिन्वन्त**) सिंचन करती और (**वृत्रेषु**) धनों के निमित्त (**उग्राः**) तेजस्वी (**शूराः**) शूरवीरों के समान (**मंसन्ते**) मान करती है, वे विदुषी होती हैं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो कन्या जल के समान कोमलत्वादि गुणयुक्त हैं, पृथिवी के समान सहनशील और शूरों के समान उत्साहिनी विद्याओं को ग्रहण करती हैं, वे सौभाग्यवती होती हैं॥३॥

पुनस्ताः कन्या विद्यायै कं यत्नं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे कन्या विद्या के लिये क्या यत्न करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ धूर्ष्वस्मै दधाताश्वानिन्द्रो न वज्री हिरण्यबाहुः॥४॥

आ। धूःऽसु। अस्मै। दधात। अश्वान्। इन्द्रः। न। वज्री। हिरण्यऽबाहुः॥४॥

पदार्थः-(**आ**) (**धूर्षु**) रथाधारेषु (**अस्मै**) विद्याग्रहणाय (**दधात**) (**अश्वान्**) शीघ्रगामितुरङ्गान् (**इन्द्रः**) सूर्य इव राजा (**न**) इव (**वज्री**) शस्त्रास्त्रयुक्तः (**हिरण्यबाहुः**) हिरण्यं बाह्वोर्दानाय यस्य सः॥४॥

अन्वयः-हे कन्या! यूयमस्मै धूर्ष्वश्वान् हिरण्यबाहुर्वज्रीन्द्रो न ब्रह्मचर्यमा दधात॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सारथिरश्वान् रथे संयोज्य नियमेन चालयति तथा कन्या आत्मान्तःकरणेन्द्रियाणि विद्याप्रापणे व्यवहारे नियोज्य नियमेन चालयन्तु॥४॥

पदार्थः-हे कन्याओ! तुम (**अस्मै**) इस विद्याग्रहण करने के लिये (**धूर्षु**) रथों के आधार धुरियों में (**अश्वान्**) घोड़े और (**हिरण्यबाहुः**) जिसकी भुजाओं में दान के लिये हिरण्य विद्यमान उस (**वज्री**) शस्त्र अस्त्रों से युक्त (**इन्द्रः**) सूर्यतुल्य राजा के (**न**) समान ब्रह्मचर्य को (**आ, दधात**) अच्छे

प्रकार धारण करो॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सारथी घोड़ों को रथ में जोड़ कर नियम से चलाता है, वैसे कन्या आत्मा अन्त:करण और इन्द्रियों को विद्या की प्राप्ति से व्यवहार में निरन्तर जोड़ कर नियम से चलावें॥४॥

पुन: कन्या: कथं विद्यां वर्धयेयुरित्याह॥

फिर कन्याजन कैसे विद्या को बढ़ावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि प्र स्थाताहेव यज्ञं यातेव पत्मन्त्मना हिनोत॥५॥

अभि। प्र। स्थात। अहःऽइव। यज्ञम्। याताऽइव। पत्मन्। त्मना। हिनोत॥५॥

पदार्थ:-(**अभि**) (**प्र**) (**स्थात**) (**अहेव**) अहानीव (**यज्ञम्**) अध्ययनाध्यापनाख्यम् (**यातेव**) गच्छन्निव (**पत्मन्**) मार्गे (**त्मना**) आत्मना (**हिनोत**) वर्धयत॥५॥

अन्वय:-हे कन्या! यूयं विद्याप्राप्तयेऽहेव यज्ञमभि प्र स्थात त्मना पत्मन् यातेव हिनोत॥५॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। हे कन्या! यथा दिनान्यनुक्रमेण गच्छन्त्याऽऽगच्छन्ति यथा च पथिका नित्यं चलन्ति तथैवानुक्रमेण विद्याप्राप्तिमार्गेण विद्याप्राप्तिरूपं यज्ञं वर्धयत॥५॥

पदार्थ:-हे कन्याओ! तुम विद्याप्राप्ति के लिये (**अहेव**) दिनों के समान (**यज्ञम्**) पढ़ने पढ़ाने रूप यज्ञ के (**अभि, प्र, स्थात**) सब ओर से जाओ (**त्मना**) अपने से (**पत्मन्**) मार्ग में (**यातेव**) जाते हुए के समान (**हिनोत**) बढ़ाओ॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे कन्याओ! जैसे दिन अनुकूल क्रम से जाते और आते हैं और जैसे बटोही जन नित्य चलते हैं, वैसे ही अनुकूल क्रम से विद्याप्राप्ति मार्ग से विद्याप्राप्तिरूप यज्ञ को बढ़ाओ॥५॥

पुन: कन्या विद्याप्राप्तिव्यवहारं वर्धयन्त्वित्याह॥

फिर कन्या विद्याप्राप्ति व्यवहार को बढ़ावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्मना समत्सु हिनोत यज्ञं दधात केतुं जनाय वीरम्॥६॥

त्मना। समत्ऽसु। हिनोत। यज्ञम्। दधात। केतुम्। जनाय। वीरम्॥६॥

पदार्थ:-(**त्मना**) आत्मना (**समत्सु**) स-ग्रामेषु (**हिनोत**) वर्धयत (**यज्ञम्**) सङ्गन्तव्यं विद्याबोधम् (**दधात**) (**केतुम्**) प्रज्ञाम् (**जनाय**) राज्ञे (**वीरम्**) दोग्धारम्॥६॥

अन्वय:-हे कन्या! यथा जनाय समत्सु वीरं प्रेरयन्ति तथा त्मना केतुं दधात यज्ञं हिनोत॥६॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। यथा शूरवीरा धीमन्तो राजपुरुषा: प्रयत्नेन संग्रामान् विजयन्ते तथा कन्याभिरिन्द्रियाणि जित्वा विद्या: प्राप्य विजयो विभावनीय:॥६॥

पदार्थ:-हे कन्याओ! जैसे (**जनाय**) राजा के लिये (**समत्सु**) संग्रामों में (**वीरम्**) पूरा करने वाले जन को प्रेरणा देते हैं, वैसे (**त्मना**) अपने से (**केतुम्**) बुद्धि को (**दधात**) धारण करो और (**यज्ञम्**) संग करने योग्य विद्याबोध को (**हिनोत**) बढ़ाओ॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे शूरवीर धीमान् बुद्धिमान् राजा पुरुष उत्तम यत्न से संग्रामों को विशेषता से जीतते हैं, वैसे कन्याओं को इन्द्रियाँ जीत और विद्याओं को पाकर विजय की विशेष भावना करनी चाहिये॥६॥

पुनस्ताः कन्या विद्याः कथं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर वे कन्या विद्या कैसे पावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उदस्य शुष्माद्भानुर्नार्त बिभर्ति भारं पृथिवी न भूम॥७॥

उत्। अस्य। शुष्मात्। भानुः। न। आर्त। बिभर्ति। भारम्। पृथिवी। न। भूम॥७॥

पदार्थः-(**उत्**) (**अस्य**) (**शुष्मात्**) बलात् (**भानुः**) किरणयुक्तः सूर्यः (**न**) इव (**आर्त**) प्राप्नोति (**बिभर्ति**) (**भारम्**) (**पृथिवी**) भूमिः (**न**) इव (**भूम**) भवेम॥७॥

अन्वयः-हे कन्या! यथा वयं भारं पृथिवी न भानुर्नास्य शुष्माद्विदुष्यो भूम यथाऽयं भानुः पृथिव्यादिभारमुद्बिभर्ति सकलं तदार्त्त तथा यूयं भवत॥७॥

भावार्थः-यथा विद्वांसोऽस्य विद्याबोधस्य बलात् सर्वं सुखं बिभ्रति तथैव कन्या विद्याबलात् समग्रमानन्दं प्राप्नुवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे कन्याजनो! जैसे हम (**भारम्**) भार को (**पृथिवी**) भूमि (**न**) जैसे और (**भानुः**) किरणयुक्त सूर्य जैसे (**न**) वैसे (**अस्य**) इस विद्याव्यवहार के (**शुष्मात्**) बल से विदुषी (**भूम**) हों वा जैसे यह भानु पृथिवी आदि के भार को (**उद्, बिभर्ति**) उत्कृष्टता से धारण करता है, समस्त उस व्यवहार को (**आर्त्त**) प्राप्त होता है, वैसे तुम होओ॥७॥

भावार्थः-जैसे विद्वान् जन इस विद्याबोध के बल से सब सुख को धारण करते हैं, वैसे ही कन्याजन विद्याबल से सब आनन्द को प्राप्ती हैं॥७॥

पुनरध्यापका अध्येतॄन् किमुपदिशेयुरित्याह॥

फिर अध्यापक, अध्येताओं को क्या उपदेश करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ह्वयामि देवाँ अयातुरग्ने साधन्नृतेन धियं दधामि॥८॥

ह्वयामि। देवान्। अयातुः। अग्ने। साधन्। ऋतेन। धियम्। दधामि॥८॥

पदार्थः-(**ह्वयामि**) (**देवान्**) विदुषः (**अयातुः**) यो न याति तस्मात् (**अग्ने**) विद्वन् (**साधन्**) (**ऋतेन**) सत्येन व्यवहारेण (**धियम्**) प्रज्ञां शुभं कर्म वा (**दधामि**)॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथाऽहं देवान् ह्वयाम्यृतेन साधन्धियं दधाम्ययातुः स्थिराद्विद्यां गृह्णामि तथा त्वं कन्यापाठनस्य निबन्धं कुरु॥८॥

भावार्थः-ये विदुष आहूय सत्कृत्य सत्याचारेण विद्यां धरन्ति ते विद्वांसो भवन्ति॥८॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वान्! जैसे मैं (**देवान्**) विद्वानों को (**ह्वयामि**) बुलाता हूँ (**ऋतेन**) सत्य व्यवहार से (**साधन्**) सिद्ध करता हुआ (**धियम्**) उत्तम बुद्धि वा शुभ कर्म को (**दधामि**) धारण करता हूँ और (**अयातुः**) जो नहीं जाता उस स्थिर से विद्या ग्रहण करता हूँ, वैसे आप कन्या पढ़ाने का

निबन्ध करो॥८॥

भावार्थ:-जो विद्वानों को बुला के और उनका सत्कार कर सत्य आचार से विद्या को धारण करते हैं, वे विद्वान् होते हैं॥८॥

सर्वैर्मनुष्यैः किमेष्टव्यमित्याह॥

सब मनुष्यों को क्या इच्छा करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि वो देवीं धियं दधिध्वं प्र वो देवत्रा वाचं कृणुध्वम्॥९॥

अभि। वः। देवीम्। धियम्। दधिध्वम्। प्र। वः। देवऽत्रा। वाचम्। कृणुध्वम्॥९॥

पदार्थः-(**अभि**) आभिमुख्ये (**वः**) युष्माकम् (**देवीम्**) दिव्याम् (**धियम्**) प्रज्ञाम् (**दधिध्वम्**) (**प्र**) (**वः**) युष्माकम् (**देवत्रा**) विद्वत्सु (**वाचम्**) (**कृणुध्वम्**)॥९॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यान् देवत्रा वर्त्तमानां देवीं धियं यूयमभि दधिध्वं तां वो वयमपि दधीमहि। यान् देवत्रा वाचं यूयं प्र कृणुध्वं तां वो वयमपि प्र कुर्याम॥९॥

भावार्थः-मनुष्यैर्विद्वदनुकरणेन प्रज्ञा विद्या वाक् च धर्त्तव्या॥९॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे (**देवत्रा**) विद्वानों में वर्त्तमान (**देवीम्**) दिव्य (**धियम्**) बुद्धि को तुम (**अभि, दधिध्वम्**) सब ओर से धारण करो उस (**वः**) आपकी बुद्धि को हम लोग भी धारण करें, विद्वानों में जिस (**वाचम्**) वाणी को तुम (**प्र, कृणुध्वम्**) प्रसिद्ध करो उस (**वः**) आपकी वाणी को हम लागे भी (**प्र**) प्रसिद्ध करें॥६॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि विद्वानों का अनुकरण कर बुद्धि, विद्या और वाणी को धारण करें॥९॥

पुनस्स विद्वान् कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह विद्वान् कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ चष्ट आसां पाथो नदीनां वरुण उग्रः सहस्रचक्षाः॥१०॥२५॥

आ। चष्टे। आसाम्। पाथः। नदीनाम्। वरुणः। उग्रः। सहस्रऽचक्षाः॥१०॥

पदार्थः-(**आ**) (**चष्टे**) समन्तात्कथयति (**आसाम्**) (**पाथः**) उदकम् (**नदीनाम्**) (**वरुणः**) सूर्य इव (**उग्रः**) तेजस्वी (**सहस्रचक्षाः**) सहस्रं चक्षांसि दर्शनानि यस्माद्यस्य वा॥१०॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा वरुण उग्रः सहस्रचक्षास्सूर्य आसां नदीनां पाथ आकर्षति पूरयति च तथाभूतो भवान् मनुष्यचित्तान्याकृष्य यतो विद्यामाचष्टे तस्मात्सत्कर्तव्योऽस्ति॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो विद्वान् सूर्यवदविद्यां निवार्य विद्याप्रकाशं जनयति स एवात्र माननीयो भवति॥१०॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जैसे (**वरुणः**) सूर्य के समान (**उग्रः**) तेजस्वी जन (**सहस्रचक्षाः**) जिसके वा जिससे हजार दर्शन होते हैं वह सूर्य (**आसाम्**) इन (**नदीनाम्**) नदियों के (**पाथः**) जल को खींचता और पूरा करता है, वैसे हुए आप मनुष्यों के चित्तों को खींच के जिस कारण विद्या को (**आ,**

चष्टे) कहते हैं, इससे सत्कार करने योग्य हैं॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् सूर्य के तुल्य अविद्या को निवार के विद्या के प्रकाश को उत्पन्न करता है, वही यहाँ माननीय होता है॥१०॥

पुनस्स राजा किंवत् किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा किसके तुल्य क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

राजा राष्ट्रानां पेशो नदीनामनुत्तमस्मै क्षत्रं विश्वायु॥११॥

राजा। राष्ट्रानाम्। पेशः। नदीनाम्। अनुत्तम्। अस्मै। क्षत्रम्। विश्वऽआयु॥११॥

पदार्थः-**(राजा)** प्रकाशमानः **(राष्ट्रानाम्)** राज्यानाम्। अत्र **वा छन्दसी**ति णत्वाभावः। **(पेशः)** रूपम् **(नदीनाम्)** **(अनुत्तम्)** अनुकूलं शत्रुभिरबाधितम् **(अस्मै)** **(क्षत्रम्)** धनं राज्यं वा **(विश्वायु)** विश्वं सम्पूर्णमायु यस्मात्तत्॥११॥

अन्वयः-यो राजा नदीनां पेश इव राष्ट्रानां रक्षां विधत्तेऽस्मा अनुत्तं विश्वायु क्षत्रं भवति॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा न्यायकारी विद्वान् भवति तम्प्रति समुद्रं नद्य इव प्रजा अनुकूला भूत्वैश्वर्यं जनयन्ति पूर्णमायुश्चास्य भवति॥११॥

पदार्थः-जो **(राजा)** प्रकाशमान **(नदीनाम्)** नदियों के **(पेशः)** रूप के समान **(राष्ट्रानाम्)** राज्यों की रक्षा का विधान करता है **(अस्मै)** इसके लिये **(अनुत्तम्)** शत्रुओं से अपीड़ित **(विश्वायु)** जिससे समस्त आयु होती है वह **(क्षत्रम्)** धन वा राज्य होता है॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा न्यायकारी विद्वान् होता है, उसके प्रति समुद्र को नदी जैसे, वैसे प्रजा अनुकूल होकर ऐश्वर्य्य को उत्पन्न कराती हैं और इस राजा को पूरी आयु भी होती है॥११॥

पुना राजजनाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर राजजन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अविष्टो अस्मान् विश्वासु विक्ष्वद्युं कृणोत शंसं निनित्सोः॥१२॥

अविष्टो इति। अस्मान्। विश्वासु। विक्षु। अद्युम्। कृणोत। शंसम्। निनित्सोः॥१२॥

पदार्थः-**(अविष्टो)** दोषेष्वप्रविष्टाः सन्तो रक्षतः **(अस्मान्)** तदनुकूलान् राज्यादिकारिणः **(विश्वासु)** अखिलासु **(विक्षु)** प्रजासु **(अद्युम्)** प्रकाशरहितं व्यवहारम् **(कृणोत)** **(शंसम्)** प्रशंसनम् **(निनित्सोः)** निन्दितुमिच्छतः॥१२॥

अन्वयः-हे राजजना! यूयं विश्वासु विक्ष्वस्मान्नविष्टो सततं रक्षत अस्माकं शसं कृणोत अस्मान्निनित्सोर्व्यवहारमद्युं कृणोत॥१२॥

भावार्थः-राजजनाः प्रजासु वर्त्तमानान् निन्दकान् जनान् निवार्य प्रशंसकान् संरक्ष्य प्रजासु पितृवद्वर्तित्वा अविद्यान्धकारं निवारयन्तु॥१२॥

पदार्थः-हे राजजनो! तुम **(विश्वासु)** समस्त **(विक्षु)** प्रजाओं में **(अस्मान्)** उनके अनुकूल

राज्याधिकारी हम जनों को **(अविष्टो)** दोषों में न प्रवेश किये हुए निरन्तर रक्षा करो हमारी **(शंसम्)** प्रशंसा **(कृणोत)** करो हम लोगों की **(निनित्सोः)** निन्दा करना चाहते हुए के **(अद्युम्)** प्रकाशरहित व्यवहार को प्रकाश करो॥१२॥

भावार्थः-राजजन प्रजाओं में वर्त्तमान निन्दक जनों का निवारण कर प्रशंसा करने वालों की रक्षा कर और प्रजाजनों में पिता के समान वर्त्त कर अविद्यान्धकार को निवारण करें॥१२॥

पुनस्ते राजजनाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे राजजन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

व्यैतु दिद्युद् द्विषामशेवा युयोत विष्वग्रपस्तनूनाम्॥१३॥

वि। एतु। दिद्युत्। द्विषाम्। अशेवा। युयोत। विष्वक्। रपः। तनूनाम्॥१३॥

पदार्थः-**(वि)** विशेषेण **(एतु)** प्राप्नोतु **(दिद्युत्)** भृशं द्योतमानम् **(द्विषाम्)** द्वेष्टॄणाम् **(अशेवा)** असुखानि **(युयोत)** **(विष्वक्)** व्याप्तम् **(रपः)** अपराधम् **(तनूनाम्)** शरीराणाम्॥१३॥

अन्वयः-हे राजजना विद्वांसो! यूयं द्विषामशेवा कुरु तनूनां दिद्युद्विष्वग्रपो युयोत पृथक्कुरुत यतः भद्रान् सर्वान् सुखं व्येतु॥१३॥

भावार्थः-हे राजजना! यूयं ये धार्मिकान् पीडयेयुस्तान् दण्डेन पवित्रान् कुरुत यतो सर्वतस्सर्वान् सुखं प्राप्नुयात्॥१३॥

पदार्थः-हे राजजन विद्वानो! तुम **(द्विषाम्)** द्वेष करने वालों को **(अशेवा)** असुख अर्थात् दुःख को करो **(तनूनाम्)** शरीरों के **(दिद्युत्)** निरन्तर प्रकाशमान **(विष्वक्)** और व्याप्त **(रपः)** अपराध को **(युयोत)** अलग करो जिसमें भद्र उत्तम सब मनुष्यों को सुख **(वि, एतु)** व्याप्त हो॥१३॥

भावार्थः-हे राजजनो! तुम, जो धार्मिक सज्जनों को पीड़ा देवें उनको दण्ड से पवित्र करो, जिससे सब ओर से सबको सुख प्राप्त हो॥१३॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अवीन्नो अग्निर्हव्यान्नमोभिः प्रेष्ठो अस्मा अधायि स्तोमः॥१४॥

अवीत्। नः। अग्निः। हव्यऽअत्। नमःऽभिः। प्रेष्ठः। अस्मै। अधायि। स्तोमः॥१४॥

पदार्थः-**(अवीत्)** रक्षेत् **(नः)** अस्मान् **(अग्निः)** पावक इव **(हव्यात्)** यो हव्यान्यत्ति सः **(नमोभिः)** अन्नादिभिः **(प्रेष्ठः)** अतिशयेन प्रियः **(अस्मै)** **(अधायि)** ध्रियते **(स्तोमः)** प्रशंसाव्यवहारः॥१४॥

अन्वयः-येन राज्ञाऽस्मै राष्ट्राय प्रेष्ठः स्तोमोऽधायि यो हव्यादाग्निरिव राजा नमोभिर्नोऽस्मान् अवीत् स एवास्माभिः सत्कर्तव्योऽस्ति॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यस्स्वप्रकाशेन सर्वान्रक्षति तथा राजा न्यायप्रकाशेन सर्वाः प्रजा रक्षेत्॥१४॥

पदार्थः-जिस राजा ने (**अस्मै**) इस राज्य के लिये (**प्रेष्ठः**) अतीव प्रिय (**स्तोमः**) प्रशंसा व्यवहार (**अधायि**) धारण किया गया जो (**हव्यात्**) होम करने योग्य अन्न भोजन करने वाले (**अग्निः**) अग्नि के समान वर्त्तमान [राजा] (**नमोभिः**) अन्नादि पदार्थों से (**नः**) हम लोगों की (**अर्वीत्**) रक्षा करे, वही हम लोगों को सत्कार करने योग्य है॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य स्वप्रकाश से सब की रक्षा करता है, वैसे राजा न्याय के प्रकाश से सब प्रजा की रक्षा करे॥१४॥

पुनस्ते राजजनाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे राजजन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒जूर्दे॒वेभि॑र॒पां नपा॑तं॒ सखा॑यं कृध्वं शि॒वो नो॑ अस्तु॥१५॥

स॒ऽजूः। दे॒वेभिः॑। अ॒पाम्। नपा॑तम्। सखा॑यम्। कृ॒ध्व॒म्। शि॒वः। नः॒। अ॒स्तु॒॥१५॥

पदार्थः-(**सजूः**) सह वर्त्तमानः (**देवेभिः**) विद्वद्भिर्दिव्यैः पृथिव्यादिभिर्वा (**अपाम्**) जलानाम् (**नपातम्**) यो न पतति न नश्यति तं मेघमिव (**सखायम्**) सुहृदम् (**कृध्वम्**) कुरुध्वम् (**शिवः**) मङ्गलकारी (**नः**) अस्मभ्यमस्माकं वा (**अस्तु**)॥१५॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा देवेभिस्सजूस्सूर्योऽपां नपातं करोति तथा भवान् नः शिवोऽस्तु हे विद्वांस! ईदृशं राजानं नस्सखायं यूयं कृध्वम्॥१५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्यादयः पदार्थाः जगति मित्रवद्वर्तित्वा सुखकारिणो भवन्ति तथैव राजजनाः सर्वेषां सखायो भूत्वा मङ्गलकारिणो भवन्ति॥१५॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे (**देवेभिः**) विद्वानों से वा पृथिवी आदि दिव्य पदार्थों के (**सजूः**) साथ वर्त्तमान सूर्यमण्डल (**अपां नपातम्**) जलों के उस व्यवहार को जो नहीं नष्ट होता मेघ के समान करता है, वैसे आप (**नः**) हमारे वा हमारे लिये (**शिवः**) मंगलकारी (**अस्तु**) हों हे विद्वानो! ऐसे राजा को हमारा (**सखायम्**) मित्र (**कृध्वम्**) कीजिये॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य आदि पदार्थ जगत् में मित्र के समान वर्त कर सुखकारी होते हैं, वैसे ही राजजन सब के मित्र होकर मंगलकारी होते हैं॥१५॥

पुनस्ते राजजना किंवत् किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे राजजन किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒ब्जामु॒क्थैरहिं॑ गृणीषे बु॒ध्ने न॒दीनां॒ रजः॑सु॒ षीद॑न्॥१६॥

अ॒प्ऽजाम्। उ॒क्थैः। अहि॑म्। गृ॒णी॒षे॒। बु॒ध्ने। न॒दीना॑म्। रजः॑ऽसु। सीद॑न्॥१६॥

पदार्थः-(**अब्जाम्**) अप्सु जातम् (**उक्थैः**) ये तद्गुणप्रशंसकैर्वचोभिः (**अहिम्**) मेघमिव (**गृणीषे**) (**बुध्ने**) अन्तरिक्षे (**नदीनाम्**) सरिताम् (**रजःसु**) लोकेष्वैश्वर्येषु वा (**सीदन्**) तिष्ठन्॥१६॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा सूर्यो बुध्ने वर्त्तमानो नदीनां रजःसु सीदन् अब्जामहिं जनयति तथोक्थै राष्ट्रे

रज:सु सीदन् नदीनां प्रवाहमिव यतो विद्या गृणीषे तस्मात् सत्कर्तव्योऽसि॥१६॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजपुरुषा! यथा सूर्यो वर्षाभिर्नदीः पूरयति तथा धनधान्यैः प्रजा यूयं पूरयत॥१६॥

पदार्थ:-हे राजन्! जैसे सूर्य **(बुध्ने)** अन्तरिक्ष में वर्त्तमान **(नदीनाम्)** नदियों के सम्बन्धी **(रज:सु)** लोकों में **(सीदन्)** स्थिर होता हुआ **(अब्जाम्)** जलों में उत्पन्न हुए **(अहिम्)** मेघ को उत्पन्न करता है, वैसे **(उक्थैः)** उसके गुणों के प्रशंसक वचनों से राज्य में जो ऐश्वर्य उसमें स्थिर होते हुए आप नदियों के प्रवाह के समान जिससे विद्या को **(गृणीषे)** कहते हो, इससे सत्कार करने योग्य हो॥१६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजपुरुषो! जैसे सूर्य वर्षा से नदियों को पूर्ण करता है, वैसे धन-धान्यों से तुम प्रजाओं को पूर्ण करो॥१६॥

पुनस्ते राजजनाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे राजजन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा नोऽहिर्बुध्न्यो रिषे धान्मा यज्ञो अस्य स्रिधदृतायोः॥१७॥

मा। नः। अहिः। बुध्न्यः। रिषे। धात्। मा। यज्ञः। अस्य। स्रिधत्। ऋतऽयोः॥१७॥

पदार्थ:-**(मा)** निषेधे **(नः)** अस्मान् **(अहिः)** मेघः **(बुध्न्यः)** बुध्नेऽन्तरिक्षे भवः **(रिषे)** हिंसनाय **(धात्)** दध्यात् **(मा)** निषेधे **(यज्ञः)** राजपालनीयो व्यवहारः **(अस्य)** राज्ञः **(स्रिधत्)** हिंसितः स्यात् **(ऋतायोः)** ऋतं सत्यं न्यायधर्मं कामयमानस्य॥१७॥

अन्वय:-हे विद्वांसो! यथा बुध्न्योऽहिर्नो रिषे मा धात् यथाऽस्यर्तायो राज्ञो यज्ञो मा स्रिधत् तथाऽनुतिष्ठत॥१७॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजादयो मनुष्या! यथाऽवृष्टिर्न स्यात् न्यायव्यवहारो न नश्येत्तथा तथा यूयं विधत्त॥१७॥

पदार्थ:-हे विद्वानो! जैसे **(बुध्न्यः)** अन्तरिक्ष में उत्पन्न हुआ **(अहिः)** मेघ **(नः)** हम लोगों को **(रिषे)** हिंसा के लिये **(मा)** मत **(धात्)** धारण करे वा जैसे **(अस्य)** इस **(ऋतायोः)** सत्य न्याय धर्म की कामना करने वाला राजा का **(यज्ञः)** प्रजा पालन करने योग्य व्यवहार **(मा)** मत **(स्रिधत्)** नष्ट हो वैसा अनुष्ठान करो॥१७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन् आदि मनुष्यो! जैसे अवर्षण न हो, न्यायव्यवहार न नष्ट हो, वैसा तुम विधान करो॥१७॥

पुनस्ते राजजनाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे राजजन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत न एषु नृषु श्रवो धुः प्र राये यन्तु शर्धन्तो अर्यः॥१८॥

उत। नः। एषु। नृषु। श्रवः। धुः। प्र। राये। यन्तु। शर्धन्तः। अर्यः॥१८॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**नः**) अस्माकम्। अत्र **वा छन्दसी**त्यवसानम्। (**एषु**) (**नृषु**) नायकेषु मनुष्येषु (**श्रवः**) अन्नं श्रवणं वा (**धुः**) दध्युः (**प्र**) (**राये**) धनाय (**यन्तु**) गच्छन्तु (**शर्धन्तः**) बलवन्तः (**अर्यः**) अरयश्शत्रवः॥१८॥

अन्वयः-हे राजन्! ये न एषु राये श्रवो धुस्तेऽस्मान् प्राप्नुवन्तूत ये नः शर्धन्तो नृष्वर्योऽस्माकं राज्यादिकमिच्छेयुस्ते दूरं प्र यन्तु॥१८॥

भावार्थः-मनुष्यैः सज्जनानां निकटे दुष्टानां दूरे स्थित्वा श्रीरुन्नेया॥१८॥

पदार्थः-हे राजन्! जो (**नः**) हमारे (**एषु**) इन व्यवहारों में (**राये**) धन के लिये (**अवः**) अन्न वा श्रवण को (**धुः**) धारण करें वे हम लोगों को प्राप्त होवें (**उत**) और जो (**नः**) हम लोगों को (**शर्धन्तः**) बली करते हुए (**नृषु**) नायक मनुष्यों में (**अर्यः**) शत्रुजन हमारे राज्य आदि ऐश्वर्य को चाहें वे दूर (**प्र, यन्तु**) पहुँचें॥१८॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सज्जनों के निकट और दुष्टों के दूर रह कर लक्ष्मी की उन्नति करें॥१८॥

के शत्रुनिवारणे समर्था भवन्तीत्याह॥

कौन शत्रुओं के निवारण में समर्थ होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तपन्ति शत्रुं स्व१र्णभूमा महासेनासो अमेभिरेषाम्॥१९॥

तपन्ति। शत्रुम्। स्वः। न। भूम। महाऽसेनासः। अमेभिः। एषाम्॥१९॥

पदार्थः-(**तपन्ति**) (**शत्रुम्**) (**स्वः**) सुखम् (**न**) इव (**भूम**) भवेम। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**महासेनासः**) महती सेना येषान्ते (**अमेभिः**) बलादिभिः (**एषाम्**) वीराणाम्॥१९॥

अन्वयः-ये महासेनास एषाममेभिः शत्रुं तपन्ति तैस्सह राजादयो वयं स्वर्न भूम॥१९॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवता योद्धृणां शूरवीराणां सेना सत्कृत्य रक्ष्येत तर्हि ते शत्रवो निलीयेरन् सुखं च सततं वर्धेत॥१९॥

पदार्थः- (**महासेनासः**) जिनकी बड़ी सेना है वे जन (**एषाम्**) इन वीरों के (**अमेभिः**) बलादिकों से (**शत्रुम्**) शत्रु को (**तपन्ति**) तपाते हैं उनसे साथ राजा आदि हम लोग (**स्वः**) सुख (**न**) जैसे हो वैसे (**भूम**) प्रसिद्ध हों॥१९॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि आपसे योद्धा शूरवीर जनों की सेना सत्कार कर रक्खी जाय तो आप के शत्रुजन बिला जायें और सुख निरन्तर बढ़े॥१९॥

पुना राजामात्यभृत्याः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और अन्य भृत्य परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ यन्नः पत्नीर्गमन्त्यच्छा त्वष्टा सुपाणिर्दधातु वीरान्॥२०॥२६॥

आ। यत्। नः। पत्नीः। गमन्ति। अच्छ। त्वष्टा। सुऽपाणिः। दधातु। वीरान्॥२०॥

पदार्थः-(**आ**) (**यत्**) याः (**नः**) अस्मानस्माकं वा (**पत्नीः**) भार्याः (**गमन्ति**) प्राप्नुवन्ति

(अच्छा) सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(त्वष्टा)** दुःखच्छेदकः **(सुपाणिः)** शोभनहस्तो राजा **(दधातु)** **(वीरान्)** शौर्यादिगुणोपेतान्नमात्यादिभृत्यान्॥२०॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा यद्याः पत्नीर्नोऽच्छाऽऽगमन्ति रक्षन्ति यथा च वयं ता रक्षेम तथा त्वष्टा सुपाणिर्भवान् वीरान् दधातु॥२०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा पतिव्रताः स्त्रियः स्त्रीव्रताः पतयश्च परस्परेषां प्रीत्या रक्षां विदधति तथा राजा धार्मिकानमात्यभृत्याश्च धार्मिकं राजानं सततं रक्षन्तु॥२०॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे **(यत्)** जो **(पत्नीः)** भार्या **(नः)** हम लोगों को **(अच्छा)** अच्छे प्रकार **(आ, गमन्ति)** प्राप्त होती और रक्षा करती हैं और जैसे हम लोग उनकी रक्षा करें, वैसे **(त्वष्टा)** दुःख विच्छेद करने वाला **(सुपाणिः)** सुन्दर हाथों से युक्त राजा आप **(वीरान्)** शूरता आदि गुणों से युक्त मन्त्री और भृत्यों को **(दधातु)** धारण करो॥२०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे पतिव्रता स्त्री स्त्रीव्रत पति जन परस्पर की प्रीति से रक्षा करते हैं, वैसे राजा धार्मिकों की, अमात्य और भृत्यजन धार्मिक राजा की निरन्तर रक्षा करें॥२०॥

पुनस्ते राजामात्यादयः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर वे राजा और मन्त्री आदि परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रति नः स्तोमं त्वष्टा जुषेत स्यादस्मे अरमतिर्वसूयुः॥२१॥

प्रति। नः। स्तोमम्। त्वष्टा। जुषेत। स्यात्। अस्मे इति। अरमतिः। वसुऽयुः॥२१॥

पदार्थः-**(प्रति)** **(नः)** अस्मानस्माकं वा **(स्तोमम्)** प्रशंसाम् **(त्वष्टा)** दुःखविच्छेदको राजा **(जुषेत)** प्रीत्या सेवेत **(स्यात्)** भवेत् **(अस्मे)** अस्मासु **(अरमतिः)** अरं अलं मतिः प्रज्ञा यस्य सः **(वसूयुः)** वसूनि धनानि कामयमानः॥२१॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा वयं राजानं प्रीत्या सेवेमहि तथाऽरमतिर्वसूयुस्त्वष्टा राजा नोऽस्मान् प्रति जुषेत यथाऽयं राजा नः स्तोमं जुषेत तथा वयमस्य कीर्तिं सेवेमहि यथाऽयमस्मे प्रीतः स्यात् तथा वयमप्यस्मिन् प्रीताः स्याम॥२१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यत्र राजामात्यभृत्यप्रजाजना अन्योऽन्येषामुन्नतिं चिकीर्षन्ति तत्र सर्वमैश्वर्यं सुखं वर्धनं च प्रजायते॥२१॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे हम लोग राजा की प्रीति से सेवा करें, वैसे **(अरमतिः)** पूर्ण मति है जिस की **(वसूयुः)** धनों की कामना करता हुआ **(त्वष्टा)** दुःखविच्छेद करने वाला राजा **(नः)** हम लोगों को **(प्रति, जुषेत)** प्रीति से सेवे जैसे यह राजा हमारी **(स्तोमम्)** प्रशंसा को सेवे, वैसे हम लोग इसकी कीर्ति को सेवें जैसे यह **(अस्मे)** हम लोगों में प्रसन्न **(स्यात्)** हो, वैसे हम लोग भी इस में प्रसन्न हों॥२१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जहाँ राजा अमात्यभृत्य और प्रजाजन एक-

दूसरे की उन्नति को करना चाहते हैं, वहाँ समस्त ऐश्वर्य, सुख और वृद्धि होती है॥२१॥

पुनस्ते राजादयः प्रजासु कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर वे राजादि प्रजाजनों में कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता नो रासन्रातिषाचो वसून्या रोदसी वरुणानी शृणोतु।
वरूत्रीभिः सुशरणो नो अस्तु त्वष्टा सुदत्रो वि दधातु रायः॥२२॥

ता। नः। रासन्। रातिऽसाचः। वसूनि। आ। रोदसी इति। वरुणानी। शृणोतु। वरूत्रीभिः। सुऽशरणः। नः। अस्तु। त्वष्टा। सुऽदत्रः। वि। दधातु। रायः॥२२॥

पदार्थः-(**ता**) तानि (**नः**) अस्मभ्यम् (**रासन्**) प्रदद्युः (**रातिषाचः**) ये रातिं सचन्ते सम्बध्नन्ति ते (**वसूनि**) धनानि (**आ**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**वरुणानी**) जलादिपदार्थयुक्ते (**शृणोतु**) (**वरूत्रीभिः**) वरणीयाभिर्विद्याभिः (**सुशरणः**) शोभनं शरणमाश्रयो यस्य सः (**नः**) अस्मभ्यम् (**अस्तु**) (**त्वष्टा**) दुःखविच्छेदकः (**सुदत्रः**) सुष्ठुदानः (**वि, दधातु**) (**रायः**) धनानि॥२२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! भवन्तो वरूत्रीभिर्वरुणानी रोदसी इव रातिषाचः सन्तो नस्ता वसून्या रासन् हे राजन्! सुदत्रस्त्वष्टा सुशरणो भवान् नो रक्षकोऽस्तु नो रायो वि दधातु अस्माकं वार्ताः शृणोतु॥२२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजपुरुषाः सूर्यभूमिवत् प्रजाः धनयन्ति तासां न्यायकरणाय वार्ताः शृण्वन्ति यथावत्पुरुषार्थेन श्रीमतीः प्रकुर्वन्ति त एवात्रालंसुखा भवन्ति॥२२॥

पदार्थः-हे विद्वानो! आप (**वरूत्रीभिः**) वरणसम्बन्धो विद्याओं से (**वरुणानी**) जलादि पदार्थयुक्त (**रोदसी**) प्रकाश और पृथिवी के समान (**रातिषाचः**) दान सम्बन्ध करते हुए (**नः**) हम लोगों के लिये (**ता**) उन (**वसूनि**) धनों को (**आ, रासन्**) अच्छे प्रकार देवें। हे राजन्! (**सुदत्रः**) अच्छे दानयुक्त (**त्वष्टा**) दुःखविच्छेदक (**सुशरणः**) सुन्दर आश्रम जिनका वह आप (**नः**) हमारे रक्षक (**अस्तु**) हों हमारे लिये (**रायः**) धनों को (**वि, दधातु**) विधान कीजिये। हमारी वार्ता (**शृणोतु**) सुनिये॥२२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजपुरुष सूर्य और भूमि के तुल्य प्रजाजनों को धनी करते, उनके न्याय करने को बातें सुनते और यथावत् पुरुषार्थ से लक्ष्मीवान् करते हैं, वे ही पूर्ण सुख वाले होते हैं॥२२॥

पुनर्विद्वांसोऽन्यान् प्रति किं किं बोधयेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन अन्यों को क्या-क्या ज्ञान देवें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तन्नो रायः पर्वतास्तन्न आपस्तद्रातिषाच ओषधीरुत द्यौः।
वनस्पतिभिः पृथिवी सजोषा उभे रोदसी परि पासतो नः॥२३॥

तत्। नः। रायः। पर्वताः। तत्। नः। आपः। तत्। रातिऽसाचः। ओषधीः। उत। द्यौः। वनस्पतिऽभिः। पृथिवी। सऽजोषाः। उभे इति। रोदसी इति। परि। पासतः। नः॥२३॥

पदार्थः-(**तत्**) तान् (**नः**) अस्मभ्यम् (**रायः**) धनानि (**पर्वताः**) मेघाः शैला वा (**तत्**) तान् (**नः**) अस्मभ्यम् (**आपः**) जलानि (**तत्**) तान् (**रातिषाचः**) या रातिं दानं सचन्ते ताः (**ओषधीः**) यवाद्याः (**उत**) अपि (**द्यौः**) सूर्यः (**वनस्पतिभिः**) वटादिभिस्सह (**पृथिवी**) भूमिः (**सजोषाः**) समानसेवी (**उभे**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**परि**) सर्वतः (**पासतः**) रक्षेताम् (**नः**) अस्मान्॥२३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा पर्वता नस्तद्राया रातिषाच आपो नस्तदोषधीस्तदुत सजोषा द्यौर्वनस्पतिभिः पृथिवी उभे रोदसी च नः परि पासतस्तथाऽस्मान् भवन्तो शिक्षयन्तु॥२३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। अध्येतारः श्रोतरश्च चाध्यापकानुपदेशकान् प्रत्येवं प्रार्थयेयुरस्मान् भवन्त एवं बोधयन्तु येन वयं सर्वस्याः सृष्टेः सकाशात् सुखोन्नतिं कर्तुं सततं शक्नुयामेति॥२३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे (**पर्वताः**) मेघ वा शैल (**नः**) हमारे लिये (**तत्**) उन (**रायः**) धनों को (**रातिषाचः**) जो दान का सम्बन्ध करते हैं वा (**आपः**) जलों को वा [हमारे] (**तत्**) उन (**ओषधीः**) यवादि ओषधियों को वा (**तत्**) उन अन्य पदार्थों को (**उत**) निश्चय करके (**सजोषाः**) समान सेवनेवाला जन वा (**द्यौः**) सूर्य (**वनस्पतिभिः**) वटादिकों के साथ (**पृथिवी**) पृथिवी वा (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) प्रकाश और पृथिवी भी (**नः**) हम लोगों की (**परि, पासतः**) रक्षा करें, वैसे हम लोगों की आप लोग रक्षा करें॥२३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। पढ़ने और सुनने वाले जन पढ़ाने और उपदेश कराने वालों के प्रति ऐसी प्रार्थना करें हम लोगों को आप ऐसा बोध करावें कि जिससे हम लोग सब सृष्टि के सकाश से सुख की उन्नति कर सकें॥२३॥

पुनर्विद्वांसः किंवत्किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अनु तदुर्वी रोदसी जिहातामनु द्युक्षो वरुण इन्द्रसखा।
अनु विश्वे मरुतो ये सहासो रायः स्याम धरुणं धियध्यै॥२४॥

अनु। तत्। उर्वी इति। रोदसी इति। जिहाताम्। अनु। द्युक्षः। वरुणः। इन्द्रऽसखा। अनु। विश्वे। मरुतः। ये। सहासः। रायः। स्याम। धरुणम्। धियध्यै॥२४॥

पदार्थः-(**अनु**) (**तत्**) तानि (**उर्वीः**) बहुपदार्थयुक्ते (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**जिहाताम्**) प्राप्नुतः (**अनु**) (**द्युक्षः**) यो दिवः प्रकाशान् वासयति (**वरुणः**) श्रेष्ठः (**इन्द्रसखा**) इन्द्रः परमैश्वर्यो राजा सखा यस्य सः (**अनु**) (**विश्वे**) सर्वे (**मरुतः**) मनुष्याः (**ये**) (**सहासः**) सहनशीलाः बलवन्तः (**रायः**) धनस्य (**स्याम**) (**धरुणम्**) (**धियध्यै**) धर्तुं समर्थाः॥२४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथोर्वी रोदसी तदनु जिहातामिन्द्रसखा द्युक्षो वरुणोऽनुजिहातां ये विश्वे सहासो मरुतोऽनुजिहातान्तथा वयं रायो धरुणं धियध्यै शक्तिमन्तः स्याम॥२४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा सृष्टिस्था भूम्यादयः पदार्थास्सर्वान् धृत्वा सुखं प्रयच्छन्ति तथैव यूयं

भवत॥२४॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जैसे **(उर्वीः)** बहुपदार्थयुक्त **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी **(तत्)** उन पदार्थों को **(अनु, जिहाताम्)** अनुकूल प्राप्त हों वा **(इन्द्रसखा)** परमैश्वर्य राजा सखा मित्र जिस का **(द्युक्षः)** प्रकाशों को वसाता **(वरुणः)** और श्रेष्ठ जन **(अनु)** पीछे जावे वा **(ये)** जो **(विश्वे)** सब **(सहासः)** सहनशील और बलवान् **(मरुतः)** मनुष्य अनुकूलता से प्राप्त हों, वैसे हम लोग **(रायः)** धन के **(धरुणम्)** धारण करने वाले को **(धियध्यै)** धारण करने को समर्थ **(स्याम)** हों॥२४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे सृष्टिस्थ भूमि आदि पदार्थ सब को धारण कर सुख देते हैं, वैसे ही आप हों॥२४॥

पुनः सेव्यसेवकाध्यापकाध्येतारः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर सेव्य-सेवक और अध्यापक-अध्येता जन परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥२५॥२७॥

तत्। नः। इन्द्रः। वरुणः। मित्रः। अग्निः। आपः। ओषधीः। वनिनः। जुषन्त। शर्मन्। स्याम। मरुताम्। उपऽस्थे। यूयम्। पात। स्वस्तिभिः। सदा। नः॥२५॥

पदार्थः-**(तत्)** सुखम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(इन्द्रः)** विद्युदिव राजा **(वरुणः)** श्रेष्ठः **(मित्रः)** सखा **(अग्निः)** पावकः **(आपः)** जलानि **(ओषधीः)** यवाद्याः **(वनिनः)** किरणवन्तः **(जुषन्त)** सेवन्ते **(शर्मन्)** शर्मणि सुखे गृहे वा **(स्याम)** भवेम **(मरुताम्)** मनुष्याणाम् **(उपस्थे)** समीपे **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** सुखादिभिः **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥२५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! ये वनिन इन्द्रो वरुणो मित्रोऽग्निराप ओषधीश्च नस्तज्जुषन्त येन यूयं स्वस्तिभिर्न सदा पात तेषां युष्माकं मरुतामुपस्थे शर्मन् वयं स्थिराः स्याम॥२५॥

भावार्थः-मनुष्यैरिदमेष्टव्यं विदुषां सङ्गेन यथा विद्युदादयः पदार्थास्स्वकार्याणि सेवेरन् तथा वयमनुतिष्ठेमेति॥२५॥

अत्राध्येत्रध्यापकस्त्रीपुरुषराजप्रजासेनाभृत्यविश्वेदेवगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुस्त्रिंशत्तमं सूक्तं सप्तविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो **(वनिनः)** किरणवान् **(इन्द्रः)** बिजुली के समान राजा **(वरुणः)** श्रेष्ठ **(मित्रः)** मित्रजन **(अग्निः)** पावक **(आपः)** जल और **(ओषधीः)** यवादि ओषधी **(नः)** हमारे लिये **(तत्)** उस सुख को **(जुषन्त)** सेवते हैं जिससे **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदैव **(पात)** रक्षा करो उन तुम **(मरुताम्)** लोगों के **(उपस्थे)** समीप **(शर्मन्)** सुख में हम लोग स्थिर **(स्याम)** हों॥२५॥

भावार्थः-मनुष्यों को ऐसी इच्छा करनी चाहिये कि विद्वानों के संग से जैसे बिजुली आदि पदार्थ अपने कामों को सेवें, वैसे हम लोग अनुष्ठान करें॥२५॥

इस सूक्त में अध्येता, अध्यापक, स्त्री, पुरुष, राजा, प्रजा, सेना, भृत्य और विश्वेदेवों के गुण और कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चौतीसवां सूक्त और सत्ताईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चत्रिंशत्तमस्य पञ्चदशर्चस्य सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। विश्वेदेवा देवताः। १, २, ३, ४, ५, ११, १२ त्रिष्टुप्। ६, ८, १०, १५ निचृत्त्रिष्टुप्। ७, ९ विराट्त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। १३, १४ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः।

मनुष्यैः सृष्टिपदार्थेभ्यः किं किं गृहीतव्यमित्याह॥

अब पन्द्रह ऋचा वाले पैंतीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को सृष्टिपदार्थों से क्या-क्या ग्रहण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ॥ १॥

शम्। नः। इन्द्राग्नी इति। भवताम्। अवःऽभिः। शम्। नः। इन्द्रावरुणा। रातऽहव्या। शम्। इन्द्रासोमा। सुविताय। शम्। योः। शम्। नः। इन्द्रापूषणा। वाजऽसातौ॥ १॥

पदार्थः-(**शम्**) सुखकारकौ (**नः**) अस्मभ्यम् (**इन्द्राग्नी**) विद्युत्पावकौ (**भवताम्**) (**अवोभिः**) रक्षणादिभिः (**शम्**) मङ्गलकारकौ (**नः**) (**अस्मभ्यम्**) (**इन्द्रावरुणा**) विद्युज्जले (**रातहव्या**) रातं दत्तं हव्यं गृहीतुं योग्यं वस्तु याभ्यां तौ (**शम्**) सुखवर्धकौ (**इन्द्रासोमा**) विद्युदोषधिगणौ (**सुविताय**) ऐश्वर्याय (**शम्**) (**योः**) सुखनिमित्तौ (**शम्**) आनन्दप्रदौ (**नः**) अस्मभ्यम् (**इन्द्रापूषणा**) विद्युद्वायू (**वाजसातौ**) स- ामे॥ १॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर! वाजसातौ सुविताय नोऽवोभिस्सहेन्द्राग्नी शं शं रातहव्येन्द्रावरुणा नश्शमिन्द्रासोमा शं योरिन्द्रापूषणा नः शं च भवतां तथा वयं प्रयतेमहि॥ १॥

भावार्थः-हे जगदीश्वर! भवत्कृपया विद्वत्संगेन स्वपुरुषार्थेन भवद्रचितायां सृष्टौ वर्त्तमानेभ्यो विद्युदादिपदार्थेभ्यो वयमुपकारं ग्रहीतुं ग्राहयितुमिच्छामस्सोऽयमस्माकं प्रयत्नः सफलः स्यात्॥ १॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर! (**वाजसातौ**) संग्राम में (**सुविताय**) ऐश्वर्य होने के लिये (**नः**) हम लोगों को (**अवोभिः**) रक्षा आदि के साथ (**इन्द्राग्नी**) बिजुली और साधरण अग्नि (**शम्**) सुख करने वाले (**शम्**) मंगल करने वाले (**रातहव्या**) दीनी है ग्रहण करने को वस्तु जिन्होंने ऐसे (**इन्द्रावरुणा**) बिजुली और जल (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुख करने वाले (**इन्द्रासोमा**) बिजुली ओषधिगण (**शम्**) सुखकारक (**योः**) सुख के निमित्त और (**इन्द्रापूषणा**) बिजुली और वायु (**नः**) हमारे लिये (**शम्**) आनन्द देने वाले (**भवताम्**) हों वैसा हम लोग प्रयत्न करें॥ १॥

भावार्थः-हे जगदीश्वर! आप की कृपा से, विद्वानों के संग से और अपने पुरुषार्थ से आप की रची हुई सृष्टि में वर्त्तमान बिजुली आदि पदार्थों से हम लोग उपकार करना कराना चाहते हैं, सो यह हम लोगों का प्रयत्न सफल हो॥ १॥

मनुष्यैर्यथैश्वर्यादीनि सुखकराणि स्युस्तथा विधेयमित्याह॥

मनुष्यों को जैसे ऐश्वर्य आदि सुख करने वाले हों, वैसे विधान करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरंधिः शमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु॥२॥

शम्। नः। भगः। शम्। ऊँ इति। नः। शंसः। अस्तु। शम्। नः। पुरम्ऽधिः। शम्। ऊँ इति। सन्तु। रायः। शम्। नः। सत्यस्य। सुऽयमस्य। शंसः। शम्। नः। अर्यमा। पुरुऽजातः। अस्तु॥२॥

पदार्थः-(**शम्**) सुखकरः (**नः**) अस्मभ्यम् (**भगः**) ऐश्वर्यम् (**शम्**) सुखकरः (**उ**) वितर्के (**नः**) अस्मभ्यम् (**शंसः**) अनुशासनं प्रशंसा वा (**अस्तु**) भवतु (**शम्**) सुखकरः (**नः**) अस्मभ्यम् (**पुरन्धिः**) पुरवः बहवः पदार्था ध्रियन्ते यस्मिन् स आकाशः (**शम्**) सुखकराः (**उ**) (**सन्तु**) (**रायः**) धनानि (**शम्**) सुखप्रदः (**नः**) अस्मभ्यम् (**सत्यस्य**) यथार्थस्य धर्मस्य परमेश्वरस्य (**सुयमस्य**) सुष्ठु नियमेन प्रापणीयस्य (**शंसः**) प्रशंसा (**शम्**) आनन्दकरः (**नः**) अस्मभ्यम् (**अर्यमा**) न्यायकारी (**पुरुजातः**) पुरुषु बहुषु नरेषु प्रसिद्धः (**अस्तु**) भवतु॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा नो भगः शं नः शंसः शमु पुरन्धिः शमस्तु नः रायः शमु सन्तु नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं पुरुजातोऽर्यमा नः शमस्तु तथा वयं प्रयतेमहि॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं यथैश्वर्यं पुण्या कीर्तिरवकाशो धनानि धर्मो योगः न्यायाधीशश्च सुखकराः स्युस्तथाऽनुतिष्ठत॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**नः**) हम लोगों के लिये (**भगः**) ऐश्वर्य (**शम्**) सुख करने वाला (**नः**) हम लोगों के लिये (**शंसः**) शिक्षा वा प्रशंसा (**शम्**) सुख करने वाली (**उ**) और (**पुरन्धिः**) बहुत पदार्थ जिस में रक्खे जाते हैं वह आकाश (**शम्**) सुख करने वाला (**अस्तु**) हो (**नः**) हम लोगों के लिये (**रायः**) धन (**शम्**) सुख करने वाले (**उ**) ही (**सन्तु**) हों (**नः**) हम लोगों के लिये (**सत्यस्य**) यथार्थ धर्म वा परमेश्वर की (**सुयमस्य**) सुन्दर नियम से प्राप्त करने योग्य व्यवहार की (**शंसः**) प्रशंसा (**शम्**) सुख देनेवाली और (**पुरुजातः**) बहुत मनुष्यों में प्रसिद्ध (**अर्यमा**) न्यायकारी (**नः**) हमारे लिये (**शम्**) आनन्द देने वाला (**अस्तु**) होवे वैसा हम लोग प्रयत्न करें॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम जैसे ऐश्वर्य, पुण्यकीर्त्ति, अवकाश, धन, धर्म, योग और न्यायाधीश सुख करने वाले हों, वैसा अनुष्ठान करो॥३॥

पुनर्मनुष्यैः सृष्ट्या कीदृगुपकारो गृहीतव्य इत्याह॥

फिर मनुष्यों को सृष्टि से कैसा उपकार लेना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु॥३॥

शम्। नः। धाता। शम्। ऊँ इति। धर्ता। नः। अस्तु। शम्। नः। उरूची। भवतु। स्वधाभिः। शम्। रोदसी इति। बृहती इति। शम्। नः। अद्रिः। शम्। नः। देवानाम्। सुऽहवानि। सन्तु॥३॥

पदार्थः-(**शम्**) शमित्यस्य सर्वत्रैव पूर्वोक्तरीत्यार्थो वेदितव्यः (**नः**) अस्मभ्यम् (**धाता**) धर्ता

(शम्) **(उ)** **(धर्ता)** पोषकः **(नः)** अस्याप्येवमेव चतुर्थीबहुवचनान्तस्यार्थो वेदितव्यः **(अस्तु)** **(शम्)** **(नः)** **(उरूची)** या बहूनञ्चति प्राप्नोति सा पृथिवी **(भवतु)** **(स्वधाभिः)** अन्नादिभिः **(शम्)** **(रोदसी)** द्यावान्तरिक्षे **(बृहती)** महत्यौ **(शम्)** **(नः)** **(अद्रिः)** मेघः **(शम्)** **(नः)** **(देवानाम्)** विदुषाम् **(सुहवानि)** सुष्ठु आह्वानानि प्रशंसनानि वा **(सन्तु)**॥३॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर विद्वन् वा! भवत्कृपया सङ्गेन च नो धाता शमु धर्ता नः शमस्तु स्वधाभिः सहोरूची नः शं भवतु बृहती रोदसी नः शं भवतां अद्रिर्नः शं भवतु नो देवानां सुहवानि शं सन्तु॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्याः पोषकादिभ्य उपकारान् ग्रहीतुं विजानन्ति ते सर्वाणि सुखानि लभन्ते॥३॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर वा विद्वान्! आप की कृपा और संग से **(नः)** हम लोगों के लिये **(धाता)** धारण करने वाला **(शम्)** सुखरूप **(उ)** और **(धर्ता)** पुष्टि करने वाला **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(अस्तु)** हो **(स्वधाभिः)** अन्नादिकों के साथ **(उरूची)** जो बहुत पदार्थों को प्राप्त होती वह पृथिवी **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुख देने वाली **(भवतु)** हो **(बृहती)** महान् **(रोदसी)** प्रकाश और अन्तरिक्ष **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप होवें **(अद्रिः)** मेघ **(नः)** हमारे लिये **(शम्)** सुखकारक हो **(नः)** हम लोगों के लिये **(देवानाम्)** विद्वानों के **(सुहवानि)** सुन्दर आवाहन प्रशंसा से बुलावे **(शम्)** सुखरूप **(सन्तु)** हों॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य पुष्टि करने वालों से उपकार लेना जानते हैं, वे सब सुखों को पाते हैं॥३॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

शं नो॑ अ॒ग्निर्ज्योति॑रनीको अस्तु॒ शं नो॑ मि॒त्रावरु॑णाव॒श्विना॒ शम्।
शं न॑ सु॒कृतां॑ सु॒कृता॑नि सन्तु॒ शं न॑ इषि॒रो अ॒भि वा॑तु॒ वात॑ः॥४॥

शम्। नः॒। अ॒ग्निः। ज्योतिः॑ऽअनीकः। अ॒स्तु। शम्। नः॒। मि॒त्रावरु॑णौ। अ॒श्विना। शम्। शम्। नः॒। सु॒ऽकृता॑म्। सु॒ऽकृता॑नि। स॒न्तु। शम्। नः॒। इ॒षि॒रः। अ॒भि। वा॒तु। वात॑ः॥४॥

पदार्थः-**(शम्)** **(नः)** **(अग्निः)** पावकः **(ज्योतिरनीकः)** ज्योतिरेवानीकं सैन्यमिव यस्य सः **(अस्तु)** **(शम्)** **(नः)** **(मित्रावरुणौ)** प्राणोदानौ **(अश्विना)** व्यापिनौ **(शम्)** **(शम्)** **(नः)** **(सुकृताम्)** ये सुष्ठु धर्ममेव कुर्वन्ति तेषाम् **(सुकृतानि)** धर्माचरणानि **(सन्तु)** **(शम्)** **(नः)** **(इषिरः)** सद्यो गन्ता **(अभि)** **(वातु)** **(वातः)** वायुः॥४॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर विद्वन् वा! भवत्कृपया ज्योतिरनीकोऽग्निर्नः शमस्त्वश्विना शं मित्रावरुणौ नः शं भवतां न सुकृतां सुकृतानि शम् [सन्तु] इषिरो वातो नः शमभि वातु॥४॥

भावार्थः-ये अग्निवाय्वादिभ्यः कार्याणि साध्नुवन्ति ते समग्रैश्वर्यमश्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर वा विद्वान्! आप की कृपा से **(ज्योतिरनीकः)** ज्योति ही सेना के समान जिस की **(अग्निः)** वह अग्नि **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(अस्तु)** हो **(अश्विना)**

व्यापक पदार्थ **(शम्)** सुखरूप और **(मित्रावरुणौ)** प्राण और उदान **(नः)** हमारे लिये **(शम्)** सुखरूप होवें **(नः)** हम **(सुकृताम्)** सुन्दर धर्म करने वालों के **(सुकृतानि)** धर्माचरण **(शम्)** सुखरूप **(सन्तु)** हों और **(इषिरः)** शीघ्र जाने वाला **(वातः)** वायु **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(अभि, वातु)** सब ओर से बहे॥४॥

भावार्थः-जो अग्नि और वायु आदि पदार्थों से कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वे समग्र ऐश्वर्य्य को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः॥५॥२८॥

शम्। नः। द्यावापृथिवी इति। पूर्वऽहूतौ। शम्। अन्तरिक्षम्। दृशये। नः। अस्तु। शम्। नः। ओषधीः। वनिनः। भवन्तु। शम्। नः। रजसः। पतिः। अस्तु। जिष्णुः॥५॥

पदार्थः-**(शम्) (नः) (द्यावापृथिवी)** विद्युद्भूमी **(पूर्वहूतौ)** पूर्वेषां हूतिः प्रशंसा यस्मिन् येन वा तस्याम् **(शम्) (अन्तरिक्षम्)** भूमिसूर्ययोर्मध्यमाकाशम् **(दृशये)** दर्शनाय **(नः) (अस्तु) (शम्) (नः) (ओषधीः)** यवसोमलताद्याः **(वनिनः)** वनानि सन्ति येषु ते वृक्षाः **(भवन्तु) (शम्) (नः) (रजसः)** लोकजातस्य **(पतिः)** स्वामी **(अस्तु) (जिष्णुः)** जयशीलः॥५॥

अन्वयः-हे जगदीश्वरशिक्षकौ! भवत्कृपोपदेशाभ्यां पूर्वहूतौ द्यावापृथिवी नश्शं दृशयेऽन्तरिक्षं नश्शमस्त्वोषधीर्वनिनो नश्शं भवन्तु रजसस्पतिर्जिष्णुर्नश्शमस्तु॥५॥

भावार्थः-ये सर्वान् सृष्टिस्थान् पदार्थान् सुखाय संयोक्तुमर्हन्ति त एवोत्तमा विद्वांसस्सन्ति॥५॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर और शिक्षा देने वाले! आप की कृपा और उपदेश से **(पूर्वहूतौ)** जिसमें पिछलों की प्रशंसा विद्यमान वा जिससे पिछलों की प्रशंसा होती है उस में **(द्यावापृथिवी)** बिजुली और भूमि **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुख **(दृशये)** देखने को **(अन्तरिक्षम्)** भूमि और सूर्य्य के बीच का आकाश **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(अस्तु)** हो और **(ओषधीः)** ओषधि तथा **(वनिनः)** वन जिसमें विद्यमान वे वृक्ष **(नः)** हमारे लिये **(शम्)** सुखरूप **(भवन्तु)** होवें **(रजसः)** लोकों में उत्पन्न हुओं को **(पतिः)** स्वामी **(जिष्णुः)** जयशील **(नः)** हमारे लिये **(शम्)** सुखरूप **(अस्तु)** हो॥५॥

भावार्थः-जो सब सृष्टिस्थ पदार्थों को सुख के **[लिये]** संयुक्त करने को योग्य होते हैं, वे ही उत्तम विद्वान् होते हैं॥५॥

पुनर्विद्वद्भिः किं विज्ञाय सम्प्रयुज्य किं प्राप्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या जान के और संयुक्त कर क्या पाने योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु॥६॥

शम्। नः। इन्द्रः। वसुऽभिः। देवः। अस्तु। शम्। आदित्येभिः। वरुणः। सुऽशंसः। शम्। नः। रुद्रः। रुद्रेभिः। जलाषः। शम्। नः। त्वष्टा। ग्नाभिः। इह। शृणोतु॥६॥

पदार्थः-(**शम्**) (**नः**) (**इन्द्रः**) विद्युत्सूर्यो वा (**वसुभिः**) पृथिव्यादिभिस्सह (**देवः**) दिव्यगुणकर्मस्वभावयुक्तः (**अस्तु**) (**शम्**) (**आदित्येभिः**) संवत्सरस्य मासैः (**वरुणः**) जलसमुदायः (**सुशंसः**) प्रशस्तप्रशंसनीयः (**शम्**) (**नः**) (**रुद्रः**) परमात्मा जीवो वा (**रुद्रेभिः**) जीवैः प्राणैर्वा (**जलाषः**) दुःखनिवारकः (**शम्**) (**नः**) (**त्वष्टा**) सर्ववस्तुविच्छेदकोऽग्निरिव परीक्षको विद्वान् (**ग्नाभिः**) वाग्भिः। **ग्नेति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) (**इह**) अस्मिन् संसारे (**शृणोतु**)॥६॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर विद्वन् वा! भवत्सहायपरीक्षाभ्यामिह वसुभिस्सह देव इन्द्रो नः शमादित्येभिस्सह सुशंसो वरुणो नः शमस्तु रुद्रेभिस्सह जलाषो रुद्रो नश्शमस्तु ग्नाभिस्सह त्वष्टा नश्शं शृणोतु॥६॥

भावार्थः-ये पृथिव्यादित्यवायुविद्ययेश्वरजीवप्राणान् विज्ञायेहैतद्विद्यामध्याप्य परीक्षां कृत्वा सर्वान् विदुष उद्योगिनः कुर्वन्ति तेऽत्र किं किमैश्वर्यं नाप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर वा विद्वान् आपके सहाय से और परीक्षा से (**इह**) यहाँ (**वसुभिः**) पृथिव्यादिकों के साथ (**देवः**) दिव्य गुणकर्मस्वभावयुक्त (**इन्द्रः**) बिजुली या सूर्य (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप और (**आदित्येभिः**) संवत्सर के महीनों के साथ (**सुशंसः**) प्रशंसित प्रशंसा करने योग्य (**वरुणः**) जल समुदाय (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) हो (**रुद्रेभिः**) जीव प्राणों के साथ (**जलाषः**) दुःख निवारण करने वाला (**रुद्रः**) परमात्मा वा जीव (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप हो (**ग्नाभिः**) वाणियों के साथ (**त्वष्टा**) सर्व वस्तुविच्छेद करने वाला अग्नि के समान परीक्षक विद्वान् (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुख (**शृणोतु**) सुने॥६॥

भावार्थः-जो पृथिवी, आदित्य और वायु की विद्या से ईश्वर, जीव और प्राणों को जान यहाँ इनकी विद्या को पढ़ा परीक्षा कर सब को विद्वान् और उद्योगी करते हैं, वे इस संसार में किस-किस ऐश्वर्य को नहीं प्राप्त होते हैं॥६॥

पुनर्विद्वद्भिः कैरुपायैर्जगदुपकारः कर्तव्य इत्याह॥

फिर विद्वानों को किन उपायों से जगत् का उपकार करना योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्व१ः शम्वस्तु वेदिः॥७॥

शम्। नः। सोमः। भवतु। ब्रह्म। शम्। नः। शम्। नः। ग्रावाणः। शम्। ॐ इति। सन्तु। यज्ञाः। शम्।

नः। स्वरूणाम्। मितयः। भवन्तु। शम्। नः। प्रऽस्वः। शम्। ऊँ इति। अस्तु। वेदिः॥७॥

पदार्थः-(**शम्**) (**नः**) (**सोमः**) चन्द्रः (**भवतु**) (**ब्रह्म**) धनमन्नं वा (**शम्**) (**नः**) (**शम्**) (**नः**) (**ग्रावाणः**) मेघाः (**शम्**) (**उ**) (**सन्तु**) (**यज्ञाः**) अग्निहोत्रादयः शिल्पान्ताः (**शम्**) (**नः**) (**स्वरूणाम्**) यज्ञशालास्तम्भशब्दानाम् (**मितयः**) (**भवन्तु**) (**शम्**) (**नः**) (**प्रस्वः**) याः प्रसूयन्ते ता ओषधयः (**शम्**) (**उ**) (**अस्तु**) (**वेदिः**) कुण्डादिकम्॥७॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर वा विद्वन्! भवत्कृपाध्यापनाभ्यां सोमो नश्शं भवतु ब्रह्म नः शं भवतु ग्रावाणो नः शं सन्तु यज्ञा नः शमु सन्तु स्वरूणां मितयो नः शं भवन्तु प्रस्वो नश्शं भवन्तु वेदिर्नः शम्वस्तु॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्यौषधीधनयज्ञादिभ्यः जगत्सुखेनोपकुर्वन्ति तेप्यतुलं सुखं लभन्ते॥७॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर वा विद्वान्! आपकी कृपा और पढ़ाने से (**सोमः**) चन्द्रमा (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**भवतु**) हो (**ब्रह्म**) धन वा अन्न (**नः**) हमारे लिये (**शम्**) सुखरूप हो (**ग्रावाणः**) मेघ (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**सन्तु**) हों (**यज्ञाः**) अग्निहोत्र को आदि ले [=अग्निहोत्र से लेकर] शिल्प यज्ञ पर्य्यन्त (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्, च**) सुखरूप ही हों (**स्वरूणाम्**) यज्ञशाला के स्तम्भ शब्दों के (**मितयः**) प्रमाण हमारे लिये (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) हों (**प्रस्वः**) जो उत्पन्न होती है वह ओषधि (**नः**) हमारे लिये (**शम्**) सुखरूप हों और (**वेदिः**) कुण्ड आदि हमारे लिये (**शम्, उ**) सुख ही (**अस्तु**) हो॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्या, ओषधी, धन और यज्ञादि से जगत् का सुख के साथ उपकार करते हैं, वे अतुल सुख पाते हैं॥७॥

पुनर्विद्वद्भिः किमेष्टव्यमित्याह॥

फिर विद्वान् जनों को क्या इच्छा करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥८॥

शम्। नः। सूर्यः। उरुऽचक्षाः। उत्। एतु। शम्। नः। चतस्रः। प्रऽदिशः। भवन्तु। शम्। नः। पर्वताः। ध्रुवयः। भवन्तु। शम्। नः। सिन्धवः। शम्। ऊँ इति। सन्तु। आपः॥८॥

पदार्थः-(**शम्**) (**नः**) (**सूर्यः**) सविता (**उरुचक्षाः**) उरूणि बहूनि चक्षांसि दर्शनानि यस्मात् सः (**उत्**) (**एतु**) (**शम्**) (**नः**) (**चतस्रः**) (**प्रदिशः**) पूर्वाद्या ऐशान्याद्या वा (**भवन्तु**) (**शम्**) (**नः**) (**पर्वताः**) शैलाः (**ध्रुवयः**) स्वस्वस्थाने स्थिराः (**भवन्तु**) (**शम्**) (**नः**) (**सिन्धवः**) नद्यः समुद्रा वा (**शम्**) (**उ**) (**सन्तु**) (**आपः**) जलानि प्राणा वा॥८॥

अन्वयः-हे परेश विद्वन् वा! भवच्छिक्षया उरुचक्षास्सूर्यः नः शमुदेतु चतस्रः प्रदिशः नः शं भवन्तु ध्रुवयः पर्वताः नः शं भवन्तु सिन्धवो नः शमापः शमु सन्तु॥८॥

भावार्थः-ये जगदीश्वरनिर्मितेभ्यः सूर्यादिभ्यः उपकारानादातुं शक्नुवन्ति तेऽत्र श्री राज्यसत्कीर्तिमन्तो जायन्ते॥८॥

पदार्थ:-हे परमेश्वर वा विद्वान्! आपकी शिक्षा से **(उरुचक्षा:)** जिससे बहुत दर्शन होते हैं वह **(सूर्य:)** सूर्य **(न:)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुख रूप **(उत्, एतु)** उदय हो **(चतस्र:)** चार **(प्रदिश:)** पूर्वादि वा रोशनी आदि दिशा वा विदिशा **(न:)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(भवन्तु)** हों **(ध्रुवय:)** अपने-अपने स्थान में स्थिर **(पर्वता:)** पर्वत **(न:)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(भवन्तु)** होवें **(सिन्धव:)** नदी वा समुद्र **(न:)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप और **(आप:)** जल वा प्राण **(शम्)** सुखरूप **(उ)** ही **(सन्तु)** हों॥८॥

भावार्थ:-जो जगदीश्वर ने बनाये हुए सूर्यादिकों से उपकार ले सकते हैं, वे इस जगत् में श्री, राज्य और कीर्ति वाले होते हैं॥८॥

पुन: शिक्षकै: शिष्यान् संशिक्ष्य कीदृशा: सम्पादनीया इत्याह॥

फिर शिक्षकजनों को शिष्यजन अच्छी शिक्षा दे कैसे सिद्ध करने चाहियें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभि: शं नो भवन्तु मरुत: स्वर्का:।
शं नो विष्णु: शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायु:॥९॥

शम्। न:। अदिति:। भवतु। व्रतेभि:। शम्। न:। भवन्तु। मरुत:। सुऽअर्का:। शम्। न:। विष्णु:। शम्। ऊँ इति। पूषा। न:। अस्तु। शम्। न:। भवित्रम्। शम्। ऊँ इति। अस्तु। वायु:॥९॥

पदार्थ:-**(शम्) (न:) (अदिति:)** विदुषी माता **(भवतु) (व्रतेभि:)** सत्कर्मभि: **(शम्) (न:) (भवन्तु) (मरुत:)** प्राणा इव प्रिया मनुष्या: **(स्वर्का:)** शोभना अर्का मन्त्रा विचारा येषान्ते **(शम्) (न:) (विष्णु:)** व्यापको जगदीश्वर: **(शम्) (उ) (पूषा)** पुष्टिकरब्रह्मचर्यादिव्यवहार: **(न:) (अस्तु) (शम्) (न:) (भवित्रम्)** भवितव्यम् **(शम्) (उ) (अस्तु) (वायु:)** पवन:॥९॥

अन्वय:-हे अध्यापकोपदेशका विद्वांसो! यूयं यथाऽदितिर्व्रतेभिस्सह नश्शं भवतु स्वर्का मरुतो व्रतेभिस्सह न: शं भवन्तु विष्णुर्न: शं भवतु पूषा न: शम्वस्तु भवित्रं न: शं भवतु वायुर्न: शमु अस्तु तथा शिक्षध्वम्॥९॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। मात्रादिभिर्विदुषीभि: कन्या पित्रादिभिर्विद्वद्भि: पुत्रास्सम्यक् शिक्षणीया यदेते भूमिमारभ्येश्वरपर्यन्तपदार्थानां विद्या: प्राप्य धर्मिष्ठा भूत्वा सर्वान् मनुष्यादीन् सततमानन्दयेयु:॥९॥

पदार्थ:-हे अध्यापक और उपदेशक विद्वानो! तुम जैसे **(अदिति:)** विदुषी माता **(व्रतेभि:)** अच्छे कामों के साथ **(न:)** हम लोगों को **(शम्)** सुखरूप **(भवतु)** हो और **(स्वर्का:)** सुन्दर मन्त्र विचार हैं जिनके वे **(मरुत:)** प्राणों के समान प्रियजन अच्छे कामों के साथ **(शम्)** सुखरूप **(भवन्तु)** होवें **(विष्णु:)** व्यापक जगदीश्वर **(न:)** हम लोगों के **[=को]** **(शम्)** सुखरूप हो **(पूषा)** पुष्टि करने वाला ब्रह्मचर्य्यादि व्यवहार **(न:)** हमारे लिये **(शम्)** सुखरूप **(उ)** ही **(अस्तु)** हो **(भवित्रम्)** होनहार काम **(न:)** हमारे लिये **(शम्)** सुखरूप होवे और **(वायु:)** पवन **(न:)** हमारे लिये **(शम्)** सुखरूप

(उ) ही (**अस्तु**) हो वैसी शिक्षा देओ॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। माता आदि विदुषियों को कन्या और विद्वान् पिता आदि को पुत्र अच्छे प्रकार शिक्षा देने योग्य हैं जिससे यह भूमि से ले के ईश्वर पर्यन्त पदार्थों की विद्याओं को पाके धार्मिक होकर सब मनुष्यों को निरन्तर आनन्दित करें॥९॥

पुनर्विद्वद्भिः कीदृशी शिक्षा कार्येत्याह॥

फिर विद्वानों को कैसी शिक्षा करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नो॑ दे॒वः स॑वि॒ता त्राय॑माणः॒ शं नो॑ भवन्तू॒षसो॑ विभा॒तीः।
शं नः॑ प॒र्जन्यो॑ भवतु प्र॒जाभ्यः॒ शं नः॒ क्षेत्र॑स्य॒ पति॑रस्तु श॒म्भुः॥१०॥२९॥

शम्। नः॒। दे॒वः। स॒वि॒ता। त्राय॑माणः। शम्। नः॒। भ॒व॒न्तु। उ॒षसः॑। वि॒ऽभा॒तीः। शम्। नः॒। प॒र्जन्यः॑। भ॒व॒तु। प्र॒जाऽभ्यः॑। शम्। नः॒। क्षेत्र॑स्य। पतिः॑। अ॒स्तु। श॒म्ऽभुः॥१०॥

पदार्थः-(**शम्**) (**नः**) (**देवः**) सर्वसुखप्रदाता स्वप्रकाशः (**सविता**) सकलजगदुत्पादक ईश्वरः (**त्रायमाणः**) रक्षन् (**शम्**) (**नः**) (**भवन्तु**) (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**विभातीः**) विशेषेण दीप्तिमत्यः (**शम्**) (**नः**) (**पर्जन्यः**) मेघः (**भवतु**) (**प्रजाभ्यः**) (**शम्**) (**नः**) (**क्षेत्रस्य**) क्षयन्ति निवसन्ति यस्मिन् जगति तस्य (**पतिः**) स्वामीश्वरो राजा वा (**अस्तु**) (**शम्भुः**) यः शं सुखं भावयति सः॥१०॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयन्तथास्मान् शिक्षध्वं यथा त्रायमाणः सविता देवो नः शं भवतु विभातीरुषसो नश्शं भवन्तु पर्जन्यः प्रजाभ्यो नश्शं भवतु क्षेत्रस्य पतिश्शम्भुर्नश्शमस्तु॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। विद्वद्भिर्वेदादिविद्याभिः परमेश्वरादिपदार्थगुणकर्मस्वभावाः विद्यार्थिनः प्रति यथावत् प्रकाशनीया येन सर्वेभ्य उपकारं ग्रहीतुं शक्नुयुः॥१०॥

पदार्थ:-हे विद्वानो! तुम वैसे हम लोगों को शिक्षा देओ जैसे (**त्रायमाणः**) रक्षा करता हुआ (**सविता**) सकल जगत् की उत्पत्ति करने वाला ईश्वर (**देवः**) जो कि सब सुखों का देने वाला आप ही प्रकाशमान वह (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**भवतु**) हो (**विभातीः**) विशेषता से दीप्तिवाली (**उषसः**) प्रभात वेला (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) हों (**पर्जन्यः**) मेघ (**नः**) हम (**प्रजाभ्यः**) प्रजाजनों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**भवतु**) हो और (**क्षेत्रस्य, पतिः**) जिसके बीच में निवास करते हैं उस जगत् का स्वामी ईश्वर वा राजा (**शम्भुः**) सुख की भावना कराने वाला (**नः**) हमारे लिये (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) हो॥१०॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्वानों को वेदादि विद्याओं से परमेश्वर आदि पदार्थों के गुण-कर्म-स्वभाव विद्यार्थियों के प्रति यथावत् प्रकाश करने चाहियें, जिससे सबों से उपकार ले सकें॥१०॥

पुनर्मनुष्याः कान् प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किनको प्राप्त हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नो॑ दे॒वा वि॒श्वदे॑वा भवन्तु॒ शं सर॑स्वती स॒ह धी॒भिर॑स्तु।

शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः॥११॥

शम्। नः। देवाः। विश्वऽदेवाः। भवन्तु। शम्। सरस्वती। सह। धीभिः। अस्तु। शम्। अभिऽसाचः। शम्। ऊँ इति। रातिऽसाचः। शम्। नः। दिव्याः। पार्थिवाः। शम्। नः। अप्याः॥११॥

पदार्थः-(**शम्**) (**नः**) (**देवाः**) विद्यादिशुभगुणानां दातारः (**विश्वदेवाः**) सर्वे विद्वांसः (**भवन्तु**) (**शम्**) (**सरस्वती**) विद्यासुशिक्षायुक्ता वाक् (**सह**) (**धीभिः**) प्रज्ञाभिः सह (**अस्तु**) (**शम्**) (**अभिषाचः**) य आभ्यन्तर आत्मनि सचन्ते सम्बध्नन्ति ते (**शम्**) (**उ**) (**रातिषाचः**) ये रातिं विद्यादिदानं सचन्ते ते (**शम्**) (**नः**) (**दिव्याः**) शुद्धगुणकर्मस्वभावाः (**पार्थिवाः**) पृथिव्यां विदिता राजानः बहुमूल्याः पदार्था वा (**शम्**) (**नः**) (**अप्याः**) अप्सु भवा नौयायिनो मुक्ताद्याः पदार्था वा॥११॥

अन्वयः-अस्मच्छुभाचारेण देवा विश्वदेवा नः शं भवन्तु सरस्वती धीभिः सह नः शमस्त्वभिषाचः नः शं भवन्तु रातिषाचो नः शमु भवन्तु दिव्याः पार्थिवाः शमप्याश्च नः शं भवन्तु॥११॥

भावार्थः-मनुष्यैरीदृशः श्रेष्ठाऽऽचारः कर्त्तव्यो येन सर्वान् सर्वे विद्वांसः शोभना प्रज्ञा वाक् च योगिनो विद्यादातारः राजानः शिल्पिनश्च तथा दिव्याः पदार्थाः प्राप्नुयुः॥११॥

पदार्थः-हमारे शुभ गुणों के आचार से (**देवाः**) विद्यादि शुभ गुणों के देने वाले (**विश्वदेवाः**) सब विद्वान् जन (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) होवें (**सरस्वती**) विद्या सुशिक्षायुक्त वाणी (**धीभिः**) उत्तम बुद्धियों के (**सह**) साथ (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) हो (**अभिषाचः**) जो आभ्यन्तर आत्मा में सम्बन्ध करते हैं वे (**नः**) हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप हों और (**रातिषाचाः**) विद्यादि दान का सम्बन्ध करने वाले हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप (**उ**) ही होवें तथा (**दिव्याः**) शुभ गुण-कर्म-स्वभावयुक्त (**पार्थिवाः**) पृथिवी में विदित राजजन वा बहुमूल्य पदार्थ (**शम्**) सुखरूप और (**अप्याः**) जलों में उत्पन्न हुए नौकाओं से जाने वाले वा मोती आदि पदार्थ हम लोगों के लिये (**शम्**) सुखरूप हों॥११॥

भावार्थः-मनुष्यों को ऐसा आचार करना चाहिये जिससे सब को सब विद्वान् जन, सुन्दर बुद्धि और वाणी, विद्या देने वाले योगीजन राजा और शिल्पी जन तथा दिव्य पदार्थ प्राप्त हों॥११॥

पुनर्मनुष्याः किमिच्छेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किसकी इच्छा करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु॥१२॥

शम्। नः। सत्यस्य। पतयः। भवन्तु। शम्। नः। अर्वन्तः। शम्। ऊँ इति। सन्तु। गावः। शम्। नः। ऋभवः। सुऽकृतः। सुऽहस्ताः। शम्। नः। भवन्तु। पितरः। हवेषु॥१२॥

पदार्थः-(**शम्**) (**नः**) (**सत्यस्य**) सत्यभाषणादिव्यवहारस्य (**पतयः**) पालकाः (**भवन्तु**)

(शम्) (नः) (अर्वन्तः) उत्तमा अश्वाः **(शम्) (उ) (सन्तु) (गावः)** धेनवः **(शम्) (नः) (ऋभवः)** मेधाविनः **(सुकृतः)** धर्मात्मानः **(सुहस्ताः)** शोभनेषु कर्मसु हस्ता येषां ते **(शम्) (नः) (भवन्तु) (पितरः) (हवेषु)** हवनादिसत्कर्मसु॥१२॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर विद्वन् वा! यथा हवेषु सत्यस्य पतयो नः शं भवन्त्वर्वन्तो नः शं भवन्तु गावो नः शमु सन्तु सुकृतस्सुहस्ता ऋभवो नः शं सन्तु पितरो नः शं भवन्तु तथा विधेहि॥१२॥

भावार्थः-मनुष्यैरेवं शीलं वर्तव्यं येन आप्ताः प्रीताः स्युः येषां प्रीत्या सर्वे पशवो विद्वांसः पितरश्च प्रसन्नाः सुखकरा भवेयुः॥१२॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर वा विद्वान्! जैसे **(हवेषु)** हवन आदि अच्छे कामों में **(सत्यस्य)** सत्यभाषण आदि व्यवहार के **(पतयः)** पति **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(भवन्तु)** होवें **(अर्वन्तः)** उत्तम घोड़े **(नः)** हमारे लिये **(शम्)** सुखरूप होवें **(गावः)** दूध देती हुई गौवें **(नः)** हम लोगों को **(शम्)** सुखरूप **(उ)** ही **(सन्तु)** हों **(सुकृतः)** धर्मात्मा **(सुहस्ताः)** सुन्दर अच्छे कामों में हाथ डालने वाले **(ऋभवः)** बुद्धिमान् जन **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप हों **(पितरः)** पितृजन **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(भवन्तु)** होवें वैसा विधान करो॥१२॥

भावार्थः-मनुष्यों को ऐसे शील की धारणा करनी चाहिये जिससे आप्त सज्जन प्रसन्न हों, जिनकी प्रीति से सब पशु और विद्वान् पितृजन प्रसन्न और सुख करने वाले होवें॥१२॥

पुनर्विद्वद्भिः का शिक्षा कार्येत्याह॥

फिर विद्वान् जनों को क्या शिक्षा करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नो॑ अ॒ज एक॑पाद्दे॒वो अ॑स्तु॒ शं नोऽहि॑र्बु॒ध्न्य॑: १॒ शं स॑मु॒द्रः।
शं नो॑ अ॒पां नपा॑त् पे॒रुर॑स्तु॒ शं न॒: पृश्नि॑र्भवतु दे॒वगो॑पाः॥१३॥

शम्। न॒:। अ॒जः। एक॑ऽपात्। दे॒वः। अ॒स्तु॒। शम्। न॒:। अहि॑:। बु॒ध्न्य॑:। शम्। स॒मु॒द्रः। शम्। न॒:। अ॒पाम्। नपा॑त्। पे॒रुः। अ॒स्तु॒। शम्। न॒:। पृश्नि॑:। भ॒व॒तु॒। दे॒वऽगो॑पाः॥१३॥

पदार्थः-**(शम्) (नः) (अजः)** यः कदाचिन्न जायते जगदीश्वरः **(एकपात्)** सर्वं जगदेकस्मिन् पादे यस्य सः **(देवः)** सर्वसुखप्रदाता **(अस्तु) (शम्) (नः) (अहिः)** मेघः **(बुध्न्यः)** बुध्नेऽन्तरिक्षे भवः **(शम्) (समुद्रः)** समुद्रवन्त्यापो यस्मिन् स सागरः **(शम्) (नः) (अपाम्) (नपात्)** न विद्यन्ते पादा यस्यां सा नौ **(पेरुः)** पारयिता **(अस्तु) (शम्) (नः) (पृश्निः)** अन्तरिक्षमवकाशः **(भवतु) (देवगोपाः)** सर्वेषां रक्षकः॥१३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयं तथा शिक्षध्वं यथा न अज एकपाद्देवश्शमस्तु बुध्न्योऽहिर्नश्शमस्तु समुद्रो नश्शमस्त्वपां पेरुर्नपान्नः शमस्तु देवगोपाः पृश्निर्नः शं भवतु॥१३॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकाः! यूयमस्माञ्जन्ममरणादिदोषरहितेश्वरमेघसमुद्रनौविद्या ग्राहयन्तु यतो वयं सर्वेषां रक्षका भवेम॥१३॥

पदार्थः- हे विद्वानो! तुम वैसी शिक्षा देओ जैसे **(नः)** हम लोगों को **(अजः)** जो कभी नहीं

उत्पन्न होता वह जगदीश्वर **(एकपात्)** जिसके पैर में सब जगत् विद्यमान है **(देवः)** सब सुख देने वाला विद्वान् **(शम्)** सुखरूप **(अस्तु)** हो **(बुध्न्यः)** अन्तरिक्ष में प्रसिद्ध होने वाला **(अहिः)** मेघ **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप हो **(समुद्रः)** जिसमें अच्छे प्रकार जल उछलते हैं वह सागर **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप हो **(अपाम्)** जलों का **(पेरुः)** पार करने वाला और **(नपात्)** पैर जिसके नहीं है वह नौका **(नः)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(अस्तु)** हो **(देवगोपाः)** और सब की रक्षा करने वाला **(पृश्निः)** अन्तरिक्ष अवकाश हम लोगों के लिये **(शम्)** सुखरूप **(भवतु)** हो॥१३॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! तुम हम लोगों को जन्ममरणादि दोषरहित ईश्वर, मेघ, समुद्र और नौका की विद्या का ग्रहण कराइये जिससे हम लोग सब के रक्षक हों॥१३॥

पुनर्मनुष्याः किमवश्यं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या अवश्य करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्तेदं ब्रह्म क्रियमाणं नवीयः।
शृण्वन्तु नो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता उत ये यज्ञियासः॥१४॥

आदित्याः। रुद्राः। वसवः। जुषन्त। इदम्। ब्रह्म। क्रियमाणम्। नवीयः। शृण्वन्तु। नः। दिव्याः। पार्थिवासः। गोऽजाताः। उत। ये। यज्ञियासः॥१४॥

पदार्थः-**(आदित्याः)** अष्टाचत्वारिंशद्वर्षकृतेन ब्रह्मचर्येण पूर्णविद्याः **(रुद्राः)** चतुश्चत्वारिंशद्वर्षप्रमितेन ब्रह्मचर्येणाधीतविद्याः **(वसवः)** चत्वारिंशद्वर्षपरिमाणेन ब्रह्मचर्येण पठितवेदशास्त्राः **(जुषन्त)** सेवन्ताम् **(इदम्)** प्रत्यक्षम् **(ब्रह्म)** बृहद्धनमन्नं वा **(क्रियमाणम्)** वर्त्तमाने सम्पाद्यमानम् **(नवीयः)** अतिशयेन नूतनम् **(शृण्वन्तु)** **(नः)** अस्माकं विद्याः **(दिव्याः)** दिवि शुद्धे कमनीये गुणादौ भवाः **(पार्थिवासः)** पृथिव्यां विदिताः **(गोजाताः)** गवा सुशिक्षितया वाचा प्रादुर्भूताः **(उत)** **(ये)** **(यज्ञियासः)** यज्ञसम्पादकाः॥१४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! ये भवन्त आदित्या रुद्रा वसवो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता उत ये यज्ञियासः सन्ति ते न इदं नवीयः क्रियमाणं ब्रह्म जुषन्तास्माभिरधीतं शृण्वन्तु॥१४॥

भावार्थः-मनुष्यैः धार्मिकान् विदुष आहूय सत्कृत्यान्नादिना सन्तर्प्य स्वश्रुतं संश्राव्य शेषमेभ्यः शृण्वन्तु यतो निर्भ्रमाः सर्वे स्युः॥१४॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो आप लोग **(आदित्याः)** अड़तालीस वर्ष प्रमाण से ब्रह्मचर्य सेवन से विद्या पढ़े हुए हों वा **(रुद्राः)** चवालीस वर्ष प्रमाण ब्रह्मचर्य से विद्या पढ़े हुए हों वा **(वसवः)** चालीस वर्ष परिमाण जिसका है ऐसे ब्रह्मचर्य्य से विद्या पढ़े हुए हैं वा **(दिव्याः)** शुद्ध मनोहर गुण आदि में प्रसिद्ध वा **(पार्थिवासः)** पृथिवी में विदित वा **(गोजाताः)** सुशिक्षित वाणी से उत्पन्न हुए **(उत)** और **(ये)** जो **(यज्ञियासः)** यज्ञ सम्पादन करने वाले हैं वे **(नः)** हम लोगों के लिये **(इदम्)** इस प्रत्यक्ष **(नवीयः)** अत्यन्त नवीन **(क्रियमाणम्)** वर्त्तमान में सिद्ध होते हुए **(ब्रह्म)** बहुत धन वा

अन्न को **(जुषन्त)** सेवें और हम लोगों का पढ़ा हुआ **(शृण्वन्तु)** सुनें॥१४॥

भावार्थ:-मनुष्यों को चाहिये कि धार्मिक विद्वानों को बुलाय सत्कार कर अन्नादिकों से अच्छे प्रकार तृप्त कर अपना पढ़ा अच्छे प्रकार सुना, शेष इन से सुनें, जिससे भ्रम रहित सब हों॥१४॥

मनुष्यै: केषां सकाशादध्ययनमुपदेशश्च श्रोतव्य इत्याह॥

मनुष्यों को किसकी ओर से [=को किनसे] विद्याध्ययन और उपदेश सुनने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥१५॥३०॥३॥

ये। देवानाम्। यज्ञियाः। यज्ञियानाम्। मनोः। यजत्राः। अमृताः। ऋतऽज्ञाः। ते। नः। रासन्ताम्। उरुऽगायम्। अद्य। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥१५॥

पदार्थ:-(ये) (देवानाम्) विदुषां मध्ये विद्वांसः **(यज्ञियाः)** ये यज्ञं कर्तुमर्हन्ति ते **(यज्ञियानाम्) (मनोः)** मननशीलस्य **(यजत्राः)** संगन्तारः **(अमृताः)** स्वस्वरूपेण नित्या जीवन्मुक्ता वा **(ऋतज्ञाः)** य ऋतं सत्यं जानन्ति **(ते) (नः)** अस्मभ्यम् **(रासन्ताम्)** ददतु **(उरुगायम्)** बहुभिर्गीयमानं विद्याबोधम् **(अद्य)** इदानीम् **(यूयम्) (पात) (स्वस्तिभिः)** विद्यादिदानैः **(सदा) (नः)** अस्मान्॥१५॥

अन्वय:-ये देवानां देवा यज्ञियानां यज्ञिया मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञास्सन्ति तेऽद्य न उरुगायं रासन्तां हे विद्वांसो! यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥१५॥

भावार्थ:-हे मनुष्याः ये विद्वत्तमाशिल्पितमास्सत्याचारा जीवनमुक्ता ब्रह्मविदो जना अस्मान् विद्यासुशिक्षाभ्यां सततमुन्नयन्ति तान् वयं संरक्ष्य सदा सेवेमहीति॥१५॥

अत्र सर्वसुखप्राप्तये सृष्टिविद्याविद्वत्संगमाहात्म्यं चोक्तमत एतत्सूक्तस्यार्थेन सह पूर्वसूक्तार्थस्य सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदे पञ्चमाष्टके तृतीयेऽध्यायस्त्रिंशो वर्गः सप्तमे मण्डले पञ्चत्रिंशत्तमं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थ:-(ये) जो **(देवानाम्)** विद्वानों के बीच विद्वान् **(यज्ञियानाम्)** यज्ञ करने के योग्यों में **(यज्ञियाः)** यज्ञ करने योग्य **(मनोः)** विचारशील के **(यजत्राः)** संग करने **(अमृताः)** अपने स्वरूप से नित्य वा जीवन्मुक्त रहने **(ऋतज्ञाः)** और सत्य के जानने वाले हैं **(ते)** वे **(अद्य)** आज **(नः)** हम लोगों के लिये **(उरुगायम्)** बहुतों ने गाये हुए विद्याबोध को **(रासन्ताम्)** देवें, हे विद्वानो! **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** विद्यादि दानों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदा **(पात)** रक्षा करो॥१५॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो अत्यन्त विद्वान् अत्यन्त शिल्पी सत्य आचरण करने वाले जीवन्मुक्त ब्रह्मवेत्ता जन हम लोगों को विद्या और सुन्दर शिक्षा से निरन्तर उन्नति देते हैं, उनको हम लोग रखकर सदा सेवें॥१५॥

इस सूक्त में सर्व सुखों की प्राप्ति के लिये सृष्टिविद्या और विद्वानों के संग का उपदेश किया, इससे इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह ऋग्वेद के पंचमाष्टक में तीसरा अध्याय ओर तीसवां वर्ग, सप्तम मण्डल में पैंतीसवां सूक्त समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्य षट्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। विश्वेदेवा देवताः। २ त्रिष्टुप्। ३, ४, ६ निचृत्त्रिष्टुप्। ८, ९ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ पङ्क्तिः। १, ७ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्यः किं कुर्यादित्याह॥

अब नव ऋचावाले छत्तीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य क्या करे इस विषय को कहते हैं॥

प्र ब्रह्मैतु सदनादृतस्य वि रश्मिभिः ससृजे सूर्यो गाः।

वि सानुना पृथिवी सस्र उर्वी पृथु प्रतीकमध्येधे अग्निः॥१॥

प्र। ब्रह्म। एतु। सदनात्। ऋतस्य। वि। रश्मिऽभिः। ससृजे। सूर्यः। गाः। वि। सानुना। पृथिवी। सस्रे। उर्वी। पृथु। प्रतीकम्। अधि। आ। ईधे। अग्निः॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**ब्रह्म**) धनम् (**एतु**) प्राप्नोतु (**सदनात्**) स्थानात् (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**वि**) (**रश्मिभिः**) किरणैः (**ससृजे**) सृजति (**सूर्यः**) सविता (**गाः**) रश्मीन् (**वि**) (**सानुना**) शिखरेण सह (**पृथिवी**) (**सस्रे**) सरति गच्छति (**उर्वी**) बहुपदार्थयुक्ता (**पृथु**) विस्तीर्णम् (**प्रतीकम्**) प्रतीतिकरम् (**अधि**) (**आ**) (**ईधे**) प्रकाशयति (**अग्निः**) अग्निरिव विद्वान्॥१॥

अन्वयः-अग्निरिव विद्वान् यथा सूर्यो रश्मिभिः पृथु प्रतीकं गाश्च वि ससृजे अध्येधे यथोर्वी पृथिवी सानुना वि सस्रे तथा भवान् ऋतस्य सदनात् ब्रह्म प्रैतु॥१॥

भावार्थः-यो जगदीश्वरः स्वप्रकाशः सूर्यादीनां प्रकाशको निर्माता जगत्प्रकाशनार्थमग्निं सूर्यलोकञ्च रचयति तमुपास्य सत्याचारेण मनुष्या ऐश्वर्यं प्राप्नुवन्तु॥१॥

पदार्थः- (**अग्निः**) अग्नि के समान विद्वान् जन जैसे (**सूर्यः**) सूर्य (**रश्मिभिः**) किरणों से (**पृथु**) विस्तृत (**प्रतीकम्**) प्रतीति करने वाले पदार्थ (**गाः**) किरणों को (**वि, सृसजे**) विविध प्रकार रचता वा छोड़ता वा (**अधि, आ, ईधे**) अधिकता से प्रकाशित होता है और जैसे (**उर्वी**) बहुपदार्थयुक्त (**पृथिवी**) पृथिवी (**सानुना**) शिखर के साथ (**वि, सस्रे**) विशेषता से चलती है, वैसे आप (**ऋतस्य**) सत्य के (**सदनात्**) स्थान से (**ब्रह्म**) धन को (**प्र, एतु**) अच्छे प्रकार प्राप्त हो॥१॥

भावार्थः-जो जगदीश्वर आप ही प्रकाशमान और सूर्यादिकों का प्रकाश करने वा बनाने वाला जगत् के प्रकाश के लिये अग्नि और सूर्यलोक को रचता है, उसाकी उपासना कर सत्य आचरण से मनुष्य ऐश्वर्य को प्राप्त होवें॥१॥

पुनर्मनुष्याः कं भजेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किसको सेवें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

इमां वां मित्रावरुणा सुवृक्तिमिषं न कृण्वे असुरा नवीयः।

इनो वामन्यः पदवीरदब्धो जनं च मित्रो यतति ब्रुवाणः॥२॥

इमाम्। वाम्। मित्रावरुणा। सुऽवृक्तिम्। इषम्। न। कृण्वे। असुरा। नवीयः। इनः। वाम्। अन्यः।

प॒द॒ऽवी:। अद॑ब्ध:। जन॑म्। च॒। मि॒त्र:। य॒त॒ति॒। ब्रु॒वा॒ण:॥ २॥

पदार्थ:-(**इमाम्**) (**वाम्**) युवयो: (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानाविवाध्यापकोपदेशकौ (**सुवृक्तिम्**) सुष्ठु वर्जन्ति दु:खानि यया ताम् वाचं (**इषम्**) इच्छामन्नं वा (**न**) इव (**कृण्वे**) करोमि (**असुरा**) यावसुषु रमेते तौ (**नवीय:**) अतिशयेन नवीनम् (**इन:**) ईश्वर: (**वाम्**) युवयो: (**अन्य:**) (**पदवी:**) य: पदं व्येति स: (**अदब्ध:**) अहिंसित: (**जनम्**) (**च**) (**मित्र:**) सखा (**यतति**) यतते। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् (**ब्रुवाण:**) उपदिशन्॥ २॥

अन्वय:-हे असुरा मित्रावरुणा! योऽन्य: पदवीरदब्धो मित्र इनो ब्रुवाण: सन् वां जनञ्च नवीय: प्रापयितुं यतति वामिमां सुवृक्तिं सत्यां वाचमिषन्न प्र यच्छति यामहं परोपकाराय कृण्वे तां युवामहं च नित्यं भजेम॥ २॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! भवन्तो यस्सर्वेभ्य: पृथक् सर्वव्यापी सर्वसुहृज्जगदीश्वर: सर्वेषां हिताय सदा वर्तते तमेवोपास्य मोक्षपदवीं प्राप्नुवन्तु॥ २॥

पदार्थ:-हे (**असुरा**) प्राणों में रमते हुए (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान के समान अध्यापक और उपदेशको! जो (**अन्य:**) और जन (**पदवी**) पद को प्राप्त होता और (**अदब्ध:**) अहिंसित (**मित्र:**) सखा (**इन:**) ईश्वर (**ब्रुवाण:**) उपदेश करता हुआ (**वाम्**) तुम दोनों को (**जनम्, च**) और जन को भी (**नवीय:**) अत्यन्त नवीन व्यवहार की प्राप्ति कराने का (**यतति**) यत्न कराता तथा (**वाम्**) तुम दोनों की (**इमाम्**) इस प्रत्यक्ष (**सुवृक्तिम्**) जिससे सुन्दरता से दु:खों की निवृत्ति करते हैं उस सत्य वाणी को (**इषम्**) इच्छा वा अन्न के (**न**) समान देता है, जिसको कि मैं परोपकार के लिये (**कृण्वे**) सिद्ध करता हूँ, उस को मैं **[और]** तुम नित्य सेवें॥ २॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! आप जो सब के लिये अलग सर्वव्यापी सब का मित्र जगदीश्वर सब के हित के लिये सदैव प्रवृत्त है, उसी की उपासना कर मोक्ष पद को प्राप्त होवें॥ २॥

पुनर्मनुष्यै: किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ वात॑स्य॒ ध्रज॑तो र॒न्त इ॒त्या अपी॑पयन्त धे॒नवो॒ न सूदा॑:।
म॒हो दि॒व: सद॑ने॒ जाय॑मा॒नोऽचि॑क्रदद् वृ॒ष॒भ: सस्मि॒न्नूध॑न्॥ ३॥

आ। वात॑स्य। ध्रज॑त:। र॒न्ते। इ॒त्या:। अपी॑पयन्त। धे॒नव॑:। न। सूदा॑:। म॒ह:। दि॒व:। सद॑ने। जाय॑मान:। अचि॑क्रदत्। वृ॒ष॒भ:। सस्मि॑न्। ऊध॑न्॥ ३॥

पदार्थ:-(**आ**) समन्तात् (**वातस्य**) वायो: (**ध्रजत:**) गच्छत: (**रन्ते**) रमते (**इत्या:**) एतुं प्राप्तुं योग्या: (**अपीपयन्त**) प्याययन्ति (**धेनव:**) गाव: (**न**) इव (**सूदा:**) पाककर्त्तार: (**मह:**) महत: (**दिव:**) प्रकाशस्य (**सदने**) सीदन्ति यस्मिंस्तस्मिन् (**जायमान:**) उत्पद्यमान: (**अचिक्रदत्**) आह्वयति (**वृषभ:**) बलिष्ठ: (**सस्मिन्**) अन्तरिक्षे (**ऊधन्**) ऊधन्युषसि॥ ३॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यो महो दिवस्सदने जायमानो वृषभ: सस्मिन्नूधन्नचिक्रदत् यस्मिन् ध्रजतो

वातस्य सूदा न धेनव इत्या रन्ते सर्वानापीपयन्त तं सूर्यं संयुक्त्या सम्प्रयाजयन्तु॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा प्रकाशवता जायमानो रविरन्तरिक्षे प्रकाशते यस्मिन्नन्तरिक्षे सर्वे प्राणिनो रमन्ते तस्मिन्नेव सर्वे सुखमश्नुवते॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(महः)** महान् **(दिवः)** प्रकाश के **(सदने)** घर में **(जायमानः)** उत्पन्न होता हुआ **(वृषभः)** बलिष्ठ **(सस्मिन्)** अन्तरिक्ष में और **(ऊधन्)** उषाकाल में **(अचिक्रदत्)** आह्वान करता जिस में **(ध्रजतः)** जाते हुए **(वातस्य)** पवन के सम्बन्धी **(सूदाः)** पाप करने वालों के **(न)** समान **(धेनवः)** गायें **(इत्याः)** जो कि पाने योग्य हैं उन को **(रन्ते)** रमता और सब को **(आ, अपीपयन्त)** सब ओर से बढ़ाता है, उस सूर्य को युक्ति के साथ उत्तम प्रयोग में लाओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे प्रकाशमान पदार्थों में उत्पन्न हुआ रवि अन्तरिक्ष में प्रकाशित होता है वा जिस अन्तरिक्ष में सब प्राणी रमते हैं, उसी में सब सुख को प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनस्स राजा कं सत्कृत्य रक्षेदित्याह॥

फिर वह राजा किस का सत्कार करके और उसकी रक्षा करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गिरा य एता युनजद्धरी त इन्द्र प्रिया सुरथा शूर धायू।
प्र यो मन्युं रिरिक्षतो मिनात्या सुक्रतुमर्यमणं ववृत्याम्॥४॥

गिरा। यः। एता। युनजत्। हरी इति। ते। इन्द्र। प्रिया। सुऽरथा। शूर। धायू इति। प्र। यः। मन्युम्। रिरिक्षतः। मिनाति। आ। सुऽक्रतुम्। अर्यमणम्। ववृत्याम्॥४॥

पदार्थः-**(गिरा)** वाण्या **(यः)** **(एता)** एतौ **(युनजत्)** युनक्ति **(हरी)** अश्वौ **(ते)** तव **(इन्द्र)** राजन् **(प्रिया)** कमनीयौ **(सुरथा)** सुष्ठु रथौ ययोस्तौ **(शूर)** शत्रूणां हिंसक **(धायू)** धारकौ **(प्र)** **(यः)** **(मन्युम्)** क्रोधम् **(रिरिक्षतः)** हन्तुमिच्छतो दुष्टाच्छत्रोः **(मिनाति)** हिनस्ति **(आ)** **(सुक्रतुम्)** प्रशस्तप्रज्ञम् **(अर्यमणम्)** न्यायकारिणम् **(ववृत्याम्)** वर्तयेयम्॥४॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! यस्त एता सुरथा धायू प्रिया हरी गिरा युनजत् यो रिरिक्षतो मन्युं प्रमिणाति तं सुक्रतुमर्यमणमहमा ववृत्याम्॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! ये यानचालने कुशला राजप्रियाः विद्वांसः स्युस्ताँस्त्वं न्यायकारिणः कुर्याः॥४॥

पदार्थः-हे **(शूर)** शत्रुओं की हिंसा करने वाले **(इन्द्र)** राजा! **(यः)** जो **(ते)** आपके **(एता)** यह दोनों **(सुरथा)** सुन्दर रथ वाले **(धायू)** धारणकर्त्ता **(प्रिया)** मनोहर **(हरी)** घोड़ों को **(गिरा)** वाणी से **(युनजत्)** युक्त करता है वा **(यः)** जो **(रिरिक्षतः)** हिंसा करने की इच्छा किये हुए दुष्ट शत्रु से **(मन्युम्)** क्रोध को **(प्र, मिनाति)** नष्ट करता है उस **(सुक्रतुम्)** प्रशंसित बुद्धियुक्त **(अर्यमणम्)** न्यायकारी सज्जन को मैं **(आ, ववृत्याम्)** अच्छे प्रकार वर्त्तूँ॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! जो रथ आदि के चलाने में कुशल, राजप्रिय, विद्वान् हों, उनको आप

न्यायकारी करो॥४॥

के संगन्तुमर्हा भवन्तीत्याह॥

कौन संग करने योग्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यजन्ते अस्य सख्यं वयश्च नमस्विनः स्व ऋतस्य धामन्।
वि पृक्षो बाबधे नृभिः स्तवान इदं नमो रुद्राय प्रेष्ठम्॥५॥ १॥

यजन्ते। अस्य। सख्यम्। वयः। च। नमस्विनः। स्वे। ऋतस्य। धामन्। वि। पृक्षः। बाबधे। नृऽभिः। स्तवानः। इदम्। नमः। रुद्राय। प्रेष्ठम्॥५॥

पदार्थः-(**यजन्ते**) संगच्छन्ते (**अस्य**) (**सख्यम्**) मित्रत्वम् (**वयः**) जीवनम् (**च**) (**नमस्विनः**) बह्वन्नादियुक्तः (**स्वे**) स्वकीयाः (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**धामन्**) धामनि (**वि**) (**पृक्षः**) सम्पर्चनीयमन्नम् (**बाबधे**) बध्नाति (**नृभिः**) नायकैर्मनुष्यैः (**स्तवानः**) स्तूयमानः (**इदम्**) सुसंस्कृतम् (**नमः**) अन्नादिकम् (**रुद्राय**) (**प्रेष्ठम्**) अतिशयेन प्रियम्॥५॥

अन्वयः-ये स्वे नमस्विन ऋतस्य धामन् वर्तमानस्यास्य सख्यं वयः पृक्षश्च यजन्ते यो हि नृभिस्सह स्तवानो रुद्राय इदं प्रेष्ठं नमो वि बाबधे तं ताँश्च वयं संगमयेम॥५॥

भावार्थः-ये सत्पुरुषा अभिसंधिनः सर्वस्य सुहृदस्सर्वेषां दीर्घं जीवनं अन्नाद्यैश्वर्यं चिकीर्षन्ति त एव लोके प्रियतमा जायन्ते॥५॥

पदार्थः-जो (**स्वे**) अपने (**नमस्विनः**) बहुत अन्नयुक्त जन (**ऋतस्य**) सत्य के (**धामन्**) धाम में वर्त्तमान (**अस्य**) इस की (**सख्यम्**) मित्रता को (**वयः**) जीवन को तथा (**पृक्षः**) अच्छे प्रकार संग करने योग्य अन्न को (**यजन्ते**) सग करते हैं जो निश्चय से (**नृभिः**) नायक मनुष्यों के साथ (**स्तवानः**) स्तुति किया हुआ (**रुद्राय**) रुलाने वाले के लिये (**इदम्**) इस (**प्रेष्ठम्**) अत्यन्त प्रिय और (**नमः**) अन्न आदि पदार्थ को (**वि, बाबधे**) विशेषता से बांधता है उस (**च**) और उन को हम लोग संग करावें॥५॥

भावार्थः-जो अच्छे पुरुष संग करने वाले, सब के मित्र और सब का दीर्घ जीवन अन्नादि ऐश्वर्य्य को करना चाहते हैं, वे ही लोक में अत्यन्त प्यारे होते हैं॥५॥

पुनः कीदृश्यः स्त्रियो वरा भवन्तीत्याह॥

फिर कैसी स्त्रियाँ श्रेष्ठ होती हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ यत्साकं यशसो वावशानाः सरस्वती सप्तथी सिन्धुमाता।
याः सुष्वयन्त सुदुघाः सुधारा अभि स्वेन पयसा पीप्यानाः॥६॥

आ। यत्। साकम्। यशसः। वावशानाः। सरस्वती। सप्तथी। सिन्धुऽमाता। याः। सुष्वयन्त। सुऽदुघाः। सुऽधाराः। अभि। स्वेन। पयसा। पीप्यानाः॥६॥

पदार्थः-(**आ**) (**यत्**) याः (**साकम्**) सह (**यशसः**) कीर्तेः (**वावशानाः**) कामयमानाः

(सरस्वती) उत्तमा वाणी **(सप्तथी)** सप्तमी। अत्र **वा छन्दसी**ति मस्य स्थाने थः। **(सिन्धुमाता)** सिन्धूनां नदीनां परिमाणकर्त्री **(याः)** **(सुष्वयन्त)** गच्छन्ति **(सुदुघाः)** सुष्ठु कामान् पूरयित्र्यः **(सुधाराः)** शोभना धारा यासां ताः **(अभि)** **(स्वेन)** स्वकीयेन **(पयसा)** उदकेन। **पय इत्युदकनाम।** (निघं०१.१२) **(पीप्यानाः)** वर्धमानाः॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यासां सिन्धुमातेव यद्या सप्तथी सरस्वती वर्त्तते याः स्वेन पयसा साकं पीप्याना नद्य इव सुदुघाः सुधाराः यशसो वावशाना विदुष्यः स्त्रियोऽभ्या सुष्वयन्त ताः सततं माननीया भवन्ति॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे पुरुषाः! यथा षण्णां ज्ञानेन्द्रियमनसां मध्ये कर्मेन्द्रियं वाक् सुशोभिता वर्तते यथा जलेन पूर्णा नद्यः शोभन्ते तथा विद्यासत्ये कामयमाना अलंकामाः सत्यवाचः स्त्रियः श्रेष्ठा माननीयाश्च भवन्तीति विजानीत॥६॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जिन की **(सिन्धुमाता)** नदियों का परिमाण करने वाली सी **(यत्)** जो **(सप्तथी)** सातवीं **(सरस्वती)** उत्तम वाणी वर्त्तमान **(याः)** जो **(स्वेन)** अपने **(पयसा)** जल के **(साकम्)** साथ **(पीप्यानाः)** बढ़ती हुई नदियों के समान **(सुदुघाः)** सुन्दर कामों को पूरी करने वाली **(सुधाराः)** सुन्दर धाराओं से युक्त **(यशसः)** कीर्त्ति की **(वावशानाः)** कामना करती हुई विदुषी स्त्री **(अभि, आ, सुष्वयन्त)** सब ओर से जाती हैं, वे निरन्तर मान करने योग्य होती हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे छः अर्थात् पांच ज्ञानेन्द्रिय और मन के बीच कर्मेन्द्रिय वाणी सुन्दर शोभायुक्त है और जैसे जल से पूर्ण नदी शोभा पाती है, वैसे विद्या और सत्य की कामना करती हुई पूर्ण कामना वाली स्त्री श्रेष्ठ और मान करने योग्य हीती है॥६॥

के विद्वांसो वरा भवन्तीत्याह॥

कौन विद्वान् जन श्रेष्ठ होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत त्ये नो मरुतो मन्दसाना धियं तोकं च वाजिनोऽवन्तु।
मा नः परि ख्यदक्षरा चरन्त्यवीवृधन् युज्यं ते रयिं नः॥७॥

उत। त्ये। नः। मरुतः। मन्दसानाः। धियम्। तोकम्। च। वाजिनः। अवन्तु। मा। नः। परि। ख्यत्। अक्षरा। चरन्ती। अवीवृधन्। युज्यम्। ते। रयिम्। नः॥७॥

पदार्थः-**(उत)** **(त्ये)** **(नः)** अस्माकम् **(मरुतः)** विद्वांसो मनुष्याः **(मन्दसानाः)** कामयमाना आनन्दितास्सन्तः **(धियम्)** प्रज्ञाम् **(तोकम्)** अपत्यम् **(च)** **(वाजिनः)** प्रशस्तविज्ञानवन्तः **(अवन्तु)** वर्धयन्तु **(मा)** **(नः)** अस्मान् **(परि)** सर्वतः **(ख्यत्)** वर्जयेत् **(अक्षरा)** अविनाशिनी सकलविद्याव्यापिनी **(चरन्ती)** प्राप्नुवन्ती **(अवीवृधन्)** वर्धयन्तु **(युज्यम्)** योक्तुमर्हम् **(ते)** तव **(रयिम्)** धनम् **(नः)** अस्माकम्॥७॥

अन्वयः-त्ये वाजिनो मन्दसाना मरुतो नो धियमुत तोकं चावन्तु यथा चरन्त्यक्षरा वाक् नो मा परि

ख्यत् तथा नस्ते तव च युज्यं रयिमवीवृधन्॥७॥

भावार्थः-त एव विद्वांसोऽत्युत्तमास्सन्ति ये सर्वेषां पुत्रान् पुत्रीश्च ब्रह्मचर्येण संरक्ष्य वर्धयित्वा प्राज्ञाः कुर्वन्ति॥७॥

पदार्थः- **(त्ये)** वे **(वाजिनः)** प्रशंसित विज्ञान वाले **(मन्दसानाः)** कामना करते हुए **(मरुतः)** विद्वान् जन **(नः)** हमारी **(धियम्)** बुद्धि को **(उत)** और **(तोकम्)** सन्तान को **(च)** भी **(अवन्तु)** बढ़ावें जैसे **(चरन्ती)** प्राप्त होती हुई **(अक्षरा)** अविनाशिनी वाणी **(नः)** हम लोगों को **(मा)** मत **(परि, ख्यत्)** सब ओर से वर्जे, वैसे **(नः)** हम लोगों के सम्बन्ध में **(ते)** आप के **(युज्यम्)** योग्य **(रयिम्)** धन को **(अवीवृधन्)** बढ़ावें॥७॥

भावार्थः-वे ही विद्वान् जन अति उत्तम हैं, जो सब के पुत्र और कन्याओं को ब्रह्मचर्य्य से रक्षा कर और बढ़ा कर उत्तम ज्ञाता करते हैं॥७॥

पुनर्विद्वद्विद्यार्थिनः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर विद्वान् जन और विद्यार्थी परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र वो॑ म॒हीम॒रम॑तिं कृणुध्व॒ं प्र पू॒षण॑ं विद॒थ्य॑१ं न वी॒रम्।
भग॑ं धि॒योऽवि॒तार॑ं नो अ॒स्याः सा॒तौ वाज॑ं रा॒तिषा॑चं॒ पुर॑न्धिम्॥८॥

प्र। व॒ः। म॒हीम्। अ॒रम॑तिम्। कृ॒णु॒ध्व॒म्। प्र। पू॒षण॑म्। वि॒द॒थ्य॑म्। न। वी॒रम्। भग॑म्। धि॒यः। अ॒वि॒तार॑म्। न॒ः। अ॒स्याः। सा॒तौ। वाज॑म्। रा॒ति॒ऽसाच॑म्। पुर॑म्ऽधिम्॥८॥

पदार्थः-**(प्र)** **(वः)** युष्माकम् **(महीम्)** महतीं वाचम् **(अरमतिम्)** अलं प्रज्ञाम् **(कृणुध्वम्)** **(प्र)** **(पूषणम्)** **(विदथ्यम्)** विदथेषु संग्रामेषु साधुम् **(न)** इव **(वीरम्)** शौर्यादिगुणोपेतम् **(भगम्)** ऐश्वर्यम् **(धियः)** प्रज्ञाः **(अवितारम्)** वर्धयितारम् **(नः)** अस्माकम् **(अस्याः)** **(सातौ)** संभक्तौ **(वाजम्)** विज्ञानम् **(रातिषाचम्)** दानसम्बन्धिनम् **(पुरन्धिम्)** बहुसुखधरम्॥८॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा यूयं नः पूषणं विदथ्यं वीरं न वोऽरमतिं महीं भगं धियोऽवितारमस्याः

सातौ पुरन्धिं रातिषाचं वाजं च प्र कृणुध्वं तथा चैतान् वयमपि प्रकुर्याम॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्वांसोऽध्यापका उपदेशकाश्च सर्वेषां बुद्ध्यायुर्विद्यावृद्धिं शूरवीरवत् सर्वदा रक्षणं च कुर्वन्ति तथा तेषां सेवासत्कारौ सर्वैस्सदा कार्यौ॥८॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे तुम **(नः)** हमारी **(पूषणम्)** पुष्टि करने वाले **(विदथ्यम्)** संग्रामों में उत्तम **(वीरम्)** शूरता आदि गुणों से युक्त जन के **(न)** समान **(वः)** तुम्हारी **(अरमतिम्)** पूर्णमति **(महीम्)** बड़ी वाणी **(भगम्)** ऐश्वर्य्य **(धियः)** बुद्धियों और **(अवितारम्)** बढ़ाने वाले **(अस्याः)** इस बुद्धिमात्र के तथा **(सातौ)** अच्छे भाग में **(पुरन्धिम्)** बहुत सुख धारण करने वाले **(रातिषाचम्)** दानसम्बन्धि **(वाजम्)** विज्ञान को **(प्र, कृणुध्वम्)** अच्छे प्रकार सिद्ध करो, वैसे इन को हम लोग भी **(प्र)** सिद्ध करें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है।[४] जैसे विद्वान् जन अध्यापक और उपदेशक सब की बुद्धि आयु विद्या की वृद्धि और शूरवीरों के समान सर्वदा रक्षा करते हैं, वैसे उन की सेवा और सत्कार सब को सदा करने योग्य हैं॥८॥

के विद्वांसस्सेवनीया इत्याह॥

कौन विद्वान् सेवा करने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अच्छायं वो मरुतः श्लोक एत्वच्छा विष्णुं निषिक्तपामवोभिः।
उत प्रजायै गृणते वयो धुर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥९॥२॥

अच्छ। अयम्। वः। मरुतः। श्लोकः। एतु। अच्छ। विष्णुम्। निसिक्तऽपाम्। अवःऽभिः। उत। प्रऽजायै। गृणते। वयः। धुः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥९॥

पदार्थः-**(अच्छ)** **(अयम्)** **(वः)** युष्माकम् **(मरुतः)** विद्वांसो मनुष्याः **(श्लोकः)** शिक्षिता वाक्। **श्लोक इति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) **(एतु)** प्राप्नोतु **(अच्छा)** सम्यक्। अत्र **संहितायामिति**

४. संस्कृतभावार्थ में उपमावाचकलुप्तोपमा अलङ्कार दिया हुआ है।

दीर्घः। **(विष्णुम्)** व्यापकं परमेश्वरम् **(निषिक्तपाम्)** यो धर्मे निषिक्तानभिषेकप्राप्तान् पाति रक्षति तम् **(अवोभिः)** रक्षादिभिः **(उत)** **(प्रजायै)** **(गृणते)** स्तावकाय **(वयः)** जीवनम् **(धुः)** दधति **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)**॥९॥

अन्वयः-हे मरुतः! यथाऽयं वश्श्लोकोऽवोभिस्सह निषिक्तपां विष्णुमच्छैतूत ये गृणते प्रजायै महाँ च वयोऽच्छ धुः यथा यूयं स्वस्तिभिर्नस्सदा पात तथा युष्मान् वयं सततं रक्षेम॥९॥

भावार्थः-जिज्ञासुभिः श्रोत्रियान् ब्रह्मविदोऽध्यापकानुपदेशकांश्च प्राप्य परमेश्वरादिविद्याः सङ्गृह्य सर्वदा सर्वेषां रक्षणोन्नतिर्वर्धयितव्येति॥९॥

अत्र विश्वेदेवकृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति षट्त्रिंशत्तमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** विद्वान् मनुष्यो! जैसे **(अयम्)** यह **(वः)** तुम्हारी **(श्लोकः)** शिक्षायुक्त वाणी **(अवोभिः)** रक्षाओं के साथ **(निषिक्तपाम्)** जो धर्म के बीच अभिषेक पाये हुए **[**हैं उन के रक्षक**]** **(विष्णुम्)** व्यापक परमेश्वर को **(अच्छ, एतु)** अच्छे प्रकार प्राप्त हो **(उत)** और जो **(गृणते)** स्तुति करने वाली **(प्रजायै)** प्रजा के लिये **(वयः)** जीवन को **(अच्छा)** अच्छे प्रकार **(धुः)** धारण करते हैं जैसे **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों के साथ **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदैव **(पात)** रक्षा करो, **[**वैसे हम तुम्हारी रक्षा करें**]**॥९॥

भावार्थः-जानने की इच्छा वालों को वेदवेत्ता ब्रह्म के जानने वाले अध्यापक और उपदेशकों को प्राप्त होकर परमेश्वर आदि की विद्याओं का संग्रह कर सर्वदैव सब प्रकार से सब की रक्षा और उन्नति बढ़ानी चाहिये॥९॥

इस सूक्त मे विश्वेदेवों के कर्म और गुणों का गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की संगति इस से पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ जाननी चाहिये।

यह छत्तीसवां सूक्त और दूसरा वर्ग पूरा हुआ॥

अथाष्टर्चस्य [सप्तत्रिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः विश्वेदेवा देवताः। १ त्रिष्टुप् २, ३, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। ५, ८ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ निचृत्पङ्क्तिः। ६ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किं प्रापयन्त्वित्याह॥

अब सैंतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् जन क्या प्राप्त करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ वो वाहिष्ठो वहतु स्तवध्यै रथो वाजा ऋभुक्षणो अमृक्तः।
अभि त्रिपृष्ठैः सवनेषु सोमैर्मदे सुशिप्रा महभिः पृणध्वम्॥ १॥

आ। वः। वाहिष्ठः। वहतु। स्तवध्यै। रथः। वाजाः। ऋभुक्षणः। अमृक्तः। अभि। त्रिऽपृष्ठैः। सवनेषु। सोमैः। मदे। सुऽशिप्राः। महऽभिः। पृणध्वम्॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) (**वः**) युष्माकम् (**वाहिष्ठः**) अतिशयेन वोढा (**वहतु**) (**स्तवध्यै**) स्तोतुम् (**रथः**) रमणीयं यानम् (**वाजाः**) विज्ञानवन्तः (**ऋभुक्षणः**) मेधाविनः (**अमृक्तः**) अहिंसितः (**अभि**) आभिमुख्ये (**त्रिपृष्ठैः**) त्रीणि पृष्ठानि ज्ञीप्सितव्यानि येषां तैः (**सवनेषु**) उत्तमकर्मसु (**सोमैः**) ऐश्वर्यौषध्यादिभिः पदार्थैः (**मदे**) आनन्दाय (**सुशिप्राः**) शोभनहनुनासिकाः (**महभिः**) सत्कारैः (**पृणध्वम्**) पूरयत॥ १॥

अन्वयः-हे सुशिप्रा वाजा ऋभुक्षणो यो वोऽमृतो वाहिष्ठो रथो मदे त्रिपृष्ठैर्महभिस्सोमैः सवनेषु स्तवध्या अस्मानभ्यावहति स एव युष्मानप्यभ्या वहतु यूयं तं पृणध्वम्॥ १॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयमस्मान् रथेनाभीष्टं स्थानमिवाध्यापनेन विद्याः प्रापयन्तु॥ १॥

पदार्थः-हे (**सुशिप्राः**) सुन्दर ठोढ़ी और नासिका वाले (**वाजाः**) विज्ञानवान् (**ऋभुक्षणः**) मेधावी बुद्धिमान्! जो (**वः**) तुम्हारा (**अमृक्तः**) न नष्ट हुआ (**वाहिष्ठः**) अत्यन्त पहुँचाने वाला (**रथः**) रमण करने योग्य यान (**मदे**) आनन्द के लिये (**त्रिपृष्ठैः**) तीन जानने योग्य रूप जिन के विद्यमान उन (**महभिः**) सत्कार और (**सोमैः**) ऐश्वर्य्य वा ओषधि आदि पदार्थों से (**सवनेषु**) उत्तम कामों में (**स्तवध्यै**) स्तुति करने को हम को सब ओर से पहुँचाता है वही तुम को (**अभि, आ, वहतु**) सब ओर पहुँचावे उस को तुम (**पृणध्वम्**) पूरो, सिद्ध करो॥ १॥

भावार्थः-हे विद्वानो! तुम हम लोगों को रथ से चाहे हुए स्थान को पहुँचने के समान पढ़ाने से विद्या को पहुँचाओ॥ १॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यूयं ह रत्नं मघवत्सु धत्थ स्वर्दृश ऋभुक्षणो अमृक्तम्।
सं यज्ञेषु स्वधावन्तः पिबध्वं वि नो राधांसि मतिभिर्दयध्वम्॥ २॥

यूयम्। ह। रत्नम्। मघवत्ऽसु। धत्थ। स्वऽदृशः। ऋभुक्षणः। अमृक्तम्। सम्। यज्ञेषु। स्वधाऽवन्तः।

पिबध्वम्। वि। नः। राधांसि। मतिऽभिः। दयध्वम्॥ २॥

पदार्थः-(**यूयम्**) (**ह**) खलु (**रत्नम्**) रमणीयधनम् (**मघवत्सु**) बहुधनयुक्तेषु (**धत्थ**) धरत (**स्वर्दृशः**) ये स्वः सुखं यन्ति (**ऋभुक्षणः**) मेधाविनः (**अमृक्तम्**) अहिंसितम् (**सम्**) (**यज्ञेषु**) संगन्तव्येषु व्यवहारेषु (**स्वधावन्तः**) बह्वन्नादिपदार्थयुक्ताः (**पिबध्वम्**) (**वि**) (**नः**) अस्माकम् (**राधांसि**) धनानि (**मतिभिः**) प्रज्ञाभिः (**दयध्वम्**) दयां कुरुत॥ २॥

अन्वयः-हे स्वधावन्तः स्वर्दृश ऋभुक्षणो विद्वांसो! यूयं मतिभिः मघवत्सु रत्नं सं धत्थ यज्ञेष्वमृक्तं रत्नमहौषधिरसं पिबध्वं नो राधांसि वि दयध्वम्॥ २॥

भावार्थः-ये विद्वांसस्ते प्रजासु ब्रह्मचर्य्यविद्यासत्क्रियामहौषधधनानि च वर्धयित्वा सुखिनः सन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे (**स्वधावन्तः**) बहुत अन्नादि पदार्थयुक्त (**स्वर्दृशः**) सुख देखते हुए (**ऋभुक्षणः**) मेधावी विद्वान् जनो! (**यूयम्, ह**) तुम्हीं (**मतिभिः**) बुद्धियों से (**मघवत्सु**) बहुत धनयुक्त व्यवहारों में (**रत्नम्**) रमणीय धन को (**सम्, धत्थ**) अच्छे प्रकार धारण करो (**यज्ञेषु**) संग करने योग्य व्यवहार में (**अमृक्तम्**) विनाश को नहीं प्राप्त ऐसे बड़ी ओषधियों के रस को (**पिबध्वम्**) पीओ और (**नः**) हमारे (**राधांसि**) धनों को (**वि, दयध्वम्**) विशेष दया से चाहो॥ २॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन हैं वे प्रजाओं में ब्रह्मचर्य्य विद्या उत्तम क्रिया बड़ी-बड़ी ओषधियों और धनों को बढ़वाकर सुखी हों॥ २॥

पुनर्धनाढ्याः कस्मै दानं दद्युरित्याह॥

फिर धनाढ्य किस को दान देवें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उवोचिथ हि मघवन् देष्णं महो अर्भस्य वसुनो विभागे।

उभा ते पूर्णा वसुना गभस्ती न सूनृता नि यमते वसव्या॥ ३॥

उवोचिथ। हि। मघऽवन्। देष्णम्। महः। अर्भस्य। वसुनः। विऽभागे। उभा। ते। पूर्णा। वसुना। गभस्ती इति। न। सूनृता। नि। यमते। वसव्या॥ ३॥

पदार्थः-(**उवोचिथ**) उपदिश (**हि**) (**मघवन्**) बहुधनयुक्त (**देष्णम्**) दातुं योग्यम् (**महः**) (**अर्भस्य**) अल्पस्य (**वसुनः**) धनस्य (**विभागे**) विभजन्ति यस्मिँस्तस्मिन् (**उभा**) उभौ (**ते**) तव (**पूर्णा**) पूर्णौ (**वसुना**) धनेन (**गभस्ती**) हस्तौ (**न**) निषेधे (**सूनृता**) सत्यप्रियवाणी (**नि**) (**यमते**) (**वसव्या**) वसुषु धनेषु साध्वी॥ ३॥

अन्वयः-हे मघवन्! हि यतस्त्वं महोऽर्भस्य वसुनो विभागे देष्णमुवोचिथ यस्य त उभा गभस्ती वसुना पूर्णा वर्त्तेते तस्य तव वसव्या सूनृता वाक् केनापि न नि यमते॥ ३॥

भावार्थः-ये धनाढ्याः महतोऽल्पस्य धनस्य सुपात्रकुपात्रयोर्धर्माधर्मयोर्विभागेन सुपात्रधर्मवृद्धये च धनदानं कुर्वन्ति तेषा कीर्तिश्चिरन्तनी भवति॥ ३॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) बहुधनयुक्त! (**हि**) जिस से आप (**महः**) बहुत वा (**अर्भस्य**) थोड़े

(वसुनः) धन के **(विभागे)** विभाग में **(देष्णम्)** देने योग्य को **(उवोचिथ)** कहो जिन **(ते)** आप के **(उभा)** दोनों **(गभस्ती)** हाथ **(वसुना)** धन से **(पूर्णा)** पूर्ण वर्त्तमान हैं उन आपकी **(वसव्या)** धनों में उत्तम **(सूनृता)** सत्य और प्रिय वाणी किसी से भी **(न)** नहीं **(नि, यमते)** नियम को प्राप्त होती अर्थात् रुकती है॥३॥

भावार्थ:-जो धनाढ्य जन बहुत वा थोड़े धन वा सुपात्र और कुपात्र वा धर्म और अधर्म के विभाग में सुपात्र और धर्म की वृद्धि के लिये धन दान करते हैं, उन की कीर्ति चिरकाल तक ठहरने वाली होती है॥३॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वमिन्द्र स्वयशा ऋभुक्षा वाजो न साधुरस्तमेष्यृक्वा।
वयं नु ते दाश्वांसः स्याम ब्रह्म कृण्वन्तो हरिवो वसिष्ठाः॥४॥३॥

त्वम्। इन्द्र। स्वऽयशाः। ऋभुक्षाः। वाजः। न। साधुः। अस्तम्। एषि। ऋक्वा। वयम्। नु। ते। दाश्वांसः। स्याम। ब्रह्म। कृण्वन्तः। हरिऽवः। वसिष्ठाः॥४॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(इन्द्र)** योगैश्वर्ययुक्त **(स्वयशाः)** स्वकीयं यशः कीर्तिर्यस्य सः **(ऋभुक्षाः)** मेधावी **(वाजः)** ज्ञानवान् **(न)** इव **(साधुः)** सत्कर्मसेवी **(अस्तम्)** गृहम् **(एषि)** प्राप्नोषि **(ऋक्वा)** सत्कर्त्ता **(वयम्)** **(नु)** क्षिप्रम् **(ते)** तव **(दाश्वांसः)** दातारः **(स्याम)** भवेम **(ब्रह्म)** धनमन्नं वा **(कृण्वन्तः)** कुर्वन्तः **(हरिवः)** प्रशस्तमनुष्ययुक्त **(वसिष्ठाः)** अतिशयेन सद्गुणकर्मसु निवासिनः॥४॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! य ऋभुक्षाः स्वयशा ऋक्वा वाजो न साधुस्त्वमस्तमेषि तस्य ते ब्रह्म न कृण्वन्तो वसिष्ठा वयं दाश्वांसः स्याम॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये सन्मार्गस्थाः साधव इव धर्मानाचरन्ति ते सहैश्वर्या भूत्वा दातारो भवन्ति॥४॥

पदार्थ:-हे **(हरिवः)** प्रशंसित मनुष्यों **(इन्द्र)** और योगैश्वर्यों से युक्त जन! जो **(ऋभुक्षाः)** मेधावी **(स्वयशाः)** अपनी कीर्ति से युक्त **(ऋक्वाः)** सत्कार करने वाले **(वाजः)** ज्ञानवान् के **(न)** समान **(साधुः)** सत्कर्म सेवने हारे **(त्वम्)** आप **(अस्तम्)** घर को **(एषि)** प्राप्त होते हैं उन **(ते)** आप के **(ब्रह्म)** धन वा अन्न को **(नु)** शीघ्र **(कृण्वन्तः)** सिद्ध करते हुए **(वसिष्ठाः)** अतीव अच्छे गुण कर्मों के बीच निवास करने वाले **(वयम्)** हम लोग **(दाश्वांसः)** दानशील **(स्याम)** हों॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अच्छे मार्ग में स्थिर, साधु जनों के समान धर्मों का आचरण करते हैं, वे ऐश्वर्य के साथ हो अर्थात् ऐश्वर्य्यवान् होकर दानशील होते हैं॥४॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सनितासि प्रवतो दाशुषे चिद्याभिर्विवेषो हर्यश्व धीभिः।

व॒व॒न्मा नु ते॒ युज्या॑भिरू॒ती क॒दा न॑ इन्द्र रा॒य आ द॑शस्येः॥५॥३॥

सनि॑ता। अ॒सि॒। प्र॒ऽव॑तः। दा॒शुषे॑। चि॒त्। याभि॑ः। विवे॑षः। ह॒रि॒ऽअ॒श्व॒। धी॒भिः। व॒व॒न्म। नु। ते॒। युज्या॑भिः। ऊ॒ती। क॒दा। न॒ः। इ॒न्द्र॒। रा॒यः। आ। द॒श॒स्येः॥५॥

पदार्थः-(**सनिता**) विभाजकः (**असि**) (**प्रवतः**) नम्रत्वादिगुणप्रदानाम् (**दाशुषे**) दात्रे (**चित्**) अपि (**याभिः**) (**विवेषः**) व्याप्नोति (**हर्यश्व**) सद्गुणहरणशीला हरयोऽश्वा महान्तो यस्य तत्सम्बुद्धौ (**धीभिः**) प्रज्ञाभिः (**ववन्मा**) याचामहे। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नु**) चित्रम् (**ते**) तव (**युज्याभिः**) योजनीयाभिः (**ऊती**) ऊत्या रक्षणाद्यया (**कदा**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**इन्द्र**) परमसुखप्रद (**रायः**) धनानि (**आ**) (**दशस्येः**) आदद्याः॥५॥

अन्वयः-हे हर्यश्वेन्द्र! यतस्त्वं याभिर्युज्याभिर्विद्याभिश्चिद्धीभिरूती दाशुषे सनिताऽसि प्रवतो रायो विवेषः यान् वयं ते ववन्मा तान्नु त्वं नः कदा आ दशस्येः॥५॥

भावार्थः-मनुष्यैः विद्वद्भ्यस्सदा उत्तमा विद्या याचनीयाः विद्वांसश्च यथावत् प्रदद्युः॥५॥

पदार्थः-हे (**हर्यश्व**) सद्गुण और हरणशील घोड़ों वाले (**इन्द्र**) परम सुखप्रद विद्वान्! जिस से आप (**याभिः**) जिन (**युज्याभिः**) युक्त करने योग्य विद्याओं (**चित्**) और (**धीभिः**) बुद्धियों से (**ऊती**) तथा रक्षा आदि क्रिया से (**दाशुषे**) देने वाले के लिये (**सनिता**) विभाग करने वाले (**असि**) हैं (**प्रवतः**) नम्रत्व आदि गुणों के देने वालों के (**रायः**) धनों को (**विवेषः**) प्राप्त होते हैं हम लोग (**ते**) आप के जिन पदार्थों को (**ववन्म**) मांगते हैं उन को (**नु**) आश्चर्य्य है आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**कदा**) कब (**आ, दशस्ये**) देओगे॥५॥

भावार्थः-मनुष्यों को विद्वानों से सदा उत्तम विद्या लेनी चाहिये और विद्वान् भी यथावत् अच्छे प्रकार देवें॥५॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वा॒सय॑सीव वे॒धस॒स्त्वं नः॑ क॒दा न॑ इन्द्र॒ वच॑सो बुबोधः।
अस्तं॑ ता॒त्या धि॒या र॒यिं सु॒वीरं॑ पृ॒क्षो नो॒ अर्वा॒ न्यु॑हीत वा॒जी॥६॥

वा॒सय॑सीऽइव। वे॒धसः॑। त्वम्। न॒ः। क॒दा। न॒ः। इ॒न्द्र॒। वच॑सः। बु॒बो॒ध॒ः। अस्त॑म्। ता॒त्या। धि॒या। र॒यिम्। सु॒ऽवीर॑म्। पृ॒क्षः। न॒ः। अर्वा॑। नि। उ॒ही॒त॒। वा॒जी॥६॥

पदार्थः-(**वासयसीव**) (**वेधसः**) मेधाविनः (**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**कदा**) (**नः**) अस्माकम् (**इन्द्र**) सुखप्रद (**वचसः**) वचनस्य (**बुबोधः**) बुद्ध्याः (**अस्तम्**) गृहम् (**तात्या**) या तते परमेश्वरे साध्वी तया (**धिया**) प्रज्ञया (**रयिम्**) धनम् (**सुवीरम्**) शोभना वीरा यस्मात्तम् (**पृक्षः**) सम्पर्चनीयमन्नम् (**नः**) अस्मान् (**अर्वा**) अश्व इव (**नि**) (**उहीत**) वहेत् (**वाजी**) विज्ञानवान्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं तात्या धिया नोऽस्मान् वेधसो वासयसीव नोऽस्माकं वचसः कदा बुबोधः

वाज्यर्वा स नु नोऽस्मान् सुवीरं रयिं कदा न्युहीतास्माकमस्तं प्राप्य पृक्षः कदा सेवये:॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। सर्वे मनुष्या विदुषः प्रत्येवं प्रार्थयेयुर्भवन्तोऽस्मान् कदा विदुषः कृत्वा धनधान्यस्थानाद्यैश्वर्यं प्रापयिष्यन्तीति॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सुख देने वाले! **(त्वम्)** आप **(तात्या)** व्याप्त परमेश्वर में उत्तमता से स्थिर होने वाली **(धिया)** बुद्धि से **(नः)** हम **(वेधसः)** बुद्धिमान् जनों को **(वासयसीव)** वसाते हुए से **(नः)** हमारे **(वचसः)** वचन को **(कदा)** कब **(बुबोधः)** जानोगे **(वाजी)** विज्ञानवान् आप **(अर्वा)** घोड़े के समान **(नः)** हम लोगों को **(सुवीरम्)** जिससे अच्छे-अच्छे वीर जन होते हैं उस **(रयिम्)** धन को कब **(नि, उहीत)** प्राप्त करियेगा और हमारे **(अस्तम्)** घर को प्राप्त होकर **(पृक्षः)** सम्पर्क करने योग्य अन्न कब सेवोगे॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। सब मनुष्य विद्वानों के प्रति ऐसी प्रार्थना करें आप लोग हमें कब विद्वान् करके धन-धान्य, स्थान आदि पदार्थ और ऐश्वर्य्य को प्राप्त करावेंगे॥६॥

पुनर्मनुष्याः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि यं देवी निर्ऋतिश्चिदीशे नक्षन्त इन्द्रं शरदः सुपृक्षः।
उप त्रिबन्धुर्जरदष्टिमेत्यस्ववेशं यं कृणवन्त मर्ताः॥७॥

अभि। यम्। देवी। निःऽऋतिः। चित्। ईशे। नक्षन्ते। इन्द्रम्। शरदः। सुऽपृक्षः। उप। त्रिऽबन्धुः। जरत्ऽअष्टिम्। एति। अस्वऽवेशम्। यम्। कृणवन्त। मर्ताः॥७॥

पदार्थः-**(अभि)** **(यम्)** **(देवी)** विदुषी **(निर्ऋतिः)** भूमिः। **निर्ऋतीति पृथिवीनाम।** (निघं०१.१) **(चित्)** इव **(ईशे)** ईष्टे। **अत्र तलोप आत्मनेपदेष्विति** तकारलोपः। **(नक्षन्ते)** व्याप्नुवन्ति **(इन्द्रम्)** सूर्यम् **(शरदः)** शरदाद्या ऋतवः **(सुपृक्षः)** शोभनं पृक्षोऽन्तं यस्य सः **(उप)** **(त्रिबन्धुः)** त्रयाणां बन्धुः **(जरदष्टिम्)** वृद्धावस्थाम् **(एति)** प्राप्नोति **(अस्ववेशम्)** न स्वकीयो वेशो यस्य तम् **(यम्)** **(कृणवन्त)** कुर्वन्ति **(मर्ताः)** मनुष्याः॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! **[यथा]** यं निर्ऋतिश्चिदिव देव्यभ्येति यस्सुपृक्षस्त्रिबन्धुर्यां जरदष्टिमीशे यमिन्द्रं शरदो नक्षन्ते यमस्ववेशं मर्ता उप कृणवन्त तान् सर्वान् वयमुप कुर्याम॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं यथा शरीरवाङ्मनोजं त्रिविधं सुखं प्राप्तो विद्वान् हृद्यां भार्यां प्राप्नोति स्त्री च प्रियं पतिं प्राप्य मोदते यथर्तवः स्वं स्वं समयं प्राप्य सर्वानानन्दयन्ति यथा स्वभावेनैव कौमाराद्या अवस्था आगच्छन्ति तथैव परस्परस्मिन् प्रीतिं कृत्वा प्रयतेत॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(यम्)** जिस पदार्थ को **(निर्ऋतिः)** भूमि **(चित्)** वैसे **(देवी)** विदुषी स्त्री उसको **(अभि, एति)** सब ओर से प्राप्त होती वा **(सुपृक्षः)** जो सुन्दर अन्न वाला **(त्रिबन्धुः)** तीन जनों का बन्धु जिस **(जरदिष्टम्)** वृद्धावस्था को **(ईशे)** ऐश्वर्ययुक्त करता है जिस **(इन्द्रम्)** सूर्य को **(शरदः)** शरद् आदि ऋतु **(नक्षन्ते)** व्याप्त होती हैं जिस **(अस्ववेशम्)** अपने रूप को न धारण किये

हुए का **(मर्ताः)** मनुष्य **(उप, कृणवन्त)** उपकार करते हैं, उन सब का हम भी उपकार करें॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम जैसे शरीर वाणी और मन से उत्पन्न हुए तीन प्रकार के सुख को प्राप्त विद्वान् जन हृदय से चाही हुई भार्या को प्राप्त होता है, स्त्री भी प्रिय पति को प्राप्त होकर आनन्दित होती वा जैसे ऋतु अपने-अपने समय को प्राप्त होकर सबको आनन्दित करती वा जैसे स्वभाव से ही कौमार आदि अवस्था आती हैं, वैसे ही परस्पर में प्रीति कर प्रयत्न करो॥७॥

मनुष्याः परमेश्वराज्ञापालनस्वपुरुषार्थाभ्यां श्रियमुन्नयेयुरित्याह॥

मनुष्य परमेश्वर की आज्ञा पालने से और पुरुषार्थ से लक्ष्मी की उन्नति करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नो राधांसि सवितः स्तवध्या आ रायो यन्तु पर्वतस्य रातौ।
सदा नो दिव्यः पायुः सिषक्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥८॥४॥

आ। नः। राधांसि। सवितरिति। स्तवध्यै। आ। रायः। यन्तु। पर्वतस्य। रातौ। सदा। नः। दिव्यः। पायुः। सिसक्तु। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥८॥

पदार्थः-**(आ)** **(नः)** अस्मान् **(राधांसि)** धनानि **(सवितः)** सकलजगदुत्पादकेश्वर **(स्तवध्यै)** स्तोतुम् **(आ)** **(रायः)** धनानि **(यन्तु)** प्राप्नुवन्तु **(पर्वतस्य)** मेघस्य **(रातौ)** दाने **(सदा)** **(नः)** अस्मान् **(दिव्यः)** शुद्धगुणकर्मस्वभावेषु भवः **(पायुः)** रक्षकः **(सिषक्तु)** सुखैः संयोजयतु **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥८॥

अन्वयः-हे सवितर्जगदीश्वर! त्वां स्तवध्यै नोऽस्मान् राधांस्यायन्तु पर्वतस्य रातौ राय आ यान्तु दिव्यः पायुर्भवान् नः सदा आ सिषक्तु हे विद्वांस! एतद्विज्ञानेन सहिता यूयं स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥८॥

भावार्थः-ये सत्यभावेन परमेश्वरमुपास्य न्याय्येन व्यवहारेण धनं प्राप्तुमिच्छन्ति ये च सदाप्तसङ्गं सेवन्ते ते कदाचिद्दारिद्र्यं न सेवन्त इति॥८॥

अत्र विश्वेदेवगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति सप्तत्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सवितः)** सकल जगत् के उत्पन्न करने वाले जगदीश्वर! आप की **(स्तवध्यै)** स्तुति करने को **(नः)** हम लोगों को **(राधांसि)** धन **(आ, यन्तु)** मिलें **(पर्वतस्य)** मेघ के **(रातौ)** देने में **(रायः)** धन आवें **(दिव्यः)** शुद्ध गुण-कर्म-स्वभाव में प्रसिद्ध हुए **(पायुः)** रक्षा करने वाले आप **(नः)** हम लोगों को सदा **(आ, सिषक्तु)** सुखों से संयुक्त करें हे विद्वानो! इस विज्ञान से सहित **(यूयम्)** तुम लोग **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदैव **(पात)** रक्षा करो॥८॥

भावार्थः-जो सत्य भाव से परमेश्वर की उपासना कर न्याययुक्त व्यवहार से धन पाने को चाहते हैं और जो सदा आप्त अति सज्जन विद्वान् का संग सेवते हैं, वे दारिद्र्य कभी नहीं सेवते हैं॥८॥

इस सूक्त में विश्वेदेवों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह सैंतीसवां सूक्त और चौथा वर्ग पूरा हुआ॥

अथाष्टर्चस्य [अष्टात्रिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। १-६ सविता देवता। ६ सविता भगो वा। ७, ८ वाजिनः। १, ३, ८ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ विराट्त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ४, ६ स्वराट्पङ्क्तिः। ७ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः क उपासनीय इत्याह॥

अब अड़तीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को किसकी उपासना करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

उदु ष्य देवः सविता ययाम हिरण्ययीममतिं यामशिश्रेत्।
नूनं भगो हव्यो मानुषेभिर्वि यो रत्ना पुरूवसुर्दधाति॥ १॥

उत्। ॐ इति। स्यः। देवः। सविता। ययाम। हिरण्ययीम्। अमतिम्। याम्। अशिश्रेत्। नूनम्। भगः। हव्यः। मानुषेभिः। वि। यः। रत्ना। पुरुऽवसुः। दधाति॥ १॥

पदार्थः-(**उत्**) (**उ**) (**स्यः**) स पूर्वोक्तः जगदीश्वरः (**देवः**) दाता (**सविता**) सकलैश्वर्यप्रदः (**ययाम**) प्राप्नुयाम (**हिरण्ययीम्**) हिरण्यादिप्रचुराम् (**अमतिम्**) सुरूपां श्रियम् (**याम्**) (**अशिश्रेत्**) आश्रयेत् (**नूनम्**) निश्चितम् (**भगः**) भजनीयः सकलैश्वर्ययुक्तः (**हव्यः**) स्तोतुमर्हः (**मानुषेभिः**) मनुष्यैः (**वि**) विशेषेण (**यः**) (**रत्ना**) रमणीयानि धनानि (**पुरूवसुः**) पुरूणि बहूनि वसूनि धनानि यस्य स। अत्र **संहितायामि**त्याद्यपदस्य दैर्घ्यम्। (**दधाति**) निष्पादयति॥ १॥

अन्वयः-यो भगो पुरूवसुः सविता देव ईश्वरो मानुषेभिर्नूनं हव्योऽस्ति योऽस्माकं कामान् विदधाति स्य उ यां हिरण्ययीममतिं रत्ना चास्मदर्थमशिश्रेत् तं वयमुद्ययाम॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्याः परमेश्वरमुपासते श्रेष्ठां श्रियं लभन्ते॥ १॥

पदार्थः- (**यः**) जो (**भगः**) सेवन करने योग्य सकलैश्वर्ययुक्त (**पुरूवसुः**) बहुत धनों वाला (**सविता**) सकलैश्वर्य देने हारा (**देवः**) दाता ईश्वर (**मानुषेभिः**) मनुष्यों से (**नूनम्**) निश्चय से (**हव्यः**) स्तुति करने योग्य है जो हम लोगों के कामों को (**वि, दधाति**) सिद्ध करता है (**स्यः**) वह जगदीश्वर (**उ**) ही (**याम्**) जिस (**हिरण्ययीम्**) हिरण्यादि रत्नों वाली (**अमतिम्**) सुन्दर रूपवती लक्ष्मी को तथा (**रत्ना**) रमण करने योग्य धनों को [**हमारे लिये**] (**अशिश्रेत्**) आश्रय करता है, उसका हम लोग (**उत्, ययाम**) उत्तम नियम पालें॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य परमेश्वर की उपासना करते हैं वे श्रेष्ठ लक्ष्मी को प्राप्त होते हैं॥ १॥

पुनस्स जगदीश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह जगदीश्वर कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उदु तिष्ठ सवितः श्रुध्य१स्य हिरण्यपाणे प्रभृतावृतस्य।
व्यु१र्वीं पृथ्वीममतिं सृजान आ नृभ्यो मर्तभोजनं सुवानः॥ २॥

उत्। ॐ इति। तिष्ठ। सवितरिति। श्रुधि। अस्य। हिरण्यऽपाणे। प्रऽभृतौ। ऋतस्य। वि। उर्वीम्। पृथ्वीम्। अमतिम्। सृजानः। आ। नृऽभ्यः। मर्तऽभोजनम्। सुवानः॥ २॥

पदार्थः-(**उत्**) (**उ**) (**तिष्ठ**) प्रकाशितो भव (**सवितः**) अन्तर्यामिन् (**श्रुधि**) शृणु (**अस्य**) जीवस्य हृदये (**हिरण्यपाणे**) हिरण्यं हितरमणं पाणिर्व्यवहारो यस्य तत्सम्बुद्धौ (**प्रभृतौ**) प्रकृष्टतया धारणे (**ऋतस्य**) सत्यस्य कारणस्य (**वि**) (**उर्वीम्**) बहुपदार्थयुक्ताम् (**पृथ्वीम्**) भूमिम् (**अमतिम्**) सुखरूपाम् (**सृजानः**) उत्पादयन् (**आ**) समन्तात् (**नृभ्यः**) मनुष्येभ्यः (**मर्तभोजनम्**) मर्तेभ्य इदं भोजनं मर्तभोजनम् (**सुवानः**) प्रेरयन्॥२॥

अन्वयः-हे हिरण्यपाणे सवितर्जगदीश्वर! त्वमस्य स्तुतिं श्रुधि उ अस्य हृदय उत्तिष्ठ उत्कृष्टतया प्राप्नुहि ऋतस्य प्रभृतावमतिमुर्वीं पृथ्वीं वि सृजानः मा नृभ्यो मर्तभोजनमा सुवानः सन् कृपस्व॥२॥

भावार्थः-ये सत्यभावेन धर्ममनुष्ठाय योगमभ्यस्यन्ति तेषामात्मनि परमात्मा प्रकाशितो बवति येनेश्वरेण सकलं जगदुत्पाद्य मनुष्यादीनामन्नादिना हितं सम्पादितं तं विहाय कस्याप्यन्यस्योपासनां मनुष्याः कदापि मा कुर्युः॥२॥

पदार्थः- (**हिरण्यपाणे**) हित से रमणरूप व्यवहार जिसका (**सवितः**) वह अन्तर्यामी है जगदीश्वर! आप (**अस्य**) इस जीव की किई स्तुति (**श्रुधि**) सुनिये (**उ**) और इसके हृदय में (**उत्, तिष्ठ**) उठिये अर्थात् उत्कर्ष से प्राप्त हूजिये और (**ऋतस्य**) सत्य कारण की (**प्रभृतौ**) अत्यन्त धारणा में (**अमतिम्**) अच्छे अपने रूप वाली (**उर्वीम्**) बहुत पदार्थयुक्त (**पृथ्वीम्**) पृथिवी को (**वि, सृजानः**) उत्पन्न करते हुए (**नृभ्यः**) मनुष्यों के लिये (**मर्तभोजनम्**) मनुष्यों को जो भोजन है उसे (**आ, सुवानः**) प्रेरणा देते हुए कृपा कीजिये॥२॥

भावार्थः-जो सत्यभाव से धर्म का अनुष्ठान कर योग का अभ्यास करते हैं, उनके आत्मा में परमात्मा प्रकाशित होता है, जिस ईश्वर ने समस्त जगत् उत्पन्न कर मनुष्यादिकों का अन्नादि से हित सिद्ध किया उसको छोड़ किसी और की उपासना मनुष्य कभी न करें॥२॥

पुनः कस्सर्वैः प्रशंसनीय इत्याह॥

फिर कौन सब को प्रशंसा करने योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अपि ष्टुतः सविता देवो अस्तु यमा चिद्विश्वे वसवो गृणन्ति।

स नः स्तोमान्नमस्य१श्चनो धाद्विश्वेभिः पातु पायुभिर्नि सूरीन्॥३॥

अपि। स्तुतः। सविता। देवः। अस्तु। यम्। आ। चित्। विश्वे। वसवः। गृणन्ति। सः। नः। स्तोमान्। नमस्यः। चनः। धात्। विश्वेभिः। पातु। पायुऽभिः। नि। सूरीन्॥३॥

पदार्थः-(**अपि**) पदार्थसंभावनायाम् (**स्तुतः**) प्रशंसितः (**सविता**) सर्वोत्पादकः (**देवः**) सूर्यादीनामपि प्रकाशकः (**अस्तु**) (**यम्**) (**आ**) समन्तात् (**चित्**) अपि (**विश्वे**) सर्वे (**वसवः**) वसन्ति विद्या येषु तेषु ते विद्वांसः (**गृणन्ति**) स्तुवन्ति (**सः**) (**नः**) अस्माकम् (**स्तोमान्**) प्रशंसाः (**नमस्यः**) नमस्करणीयः (**चनः**) अन्नादिकमैश्वर्यम् (**धात्**) दधातु (**विश्वेभिः**) सर्वैस्सह (**पातु**) रक्षतु (**पायुभिः**) रक्षाभिः (**नि**) नितराम् (**सूरीन्**) विदुषः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं चिद्विश्वे वसवो गृणन्ति स सविता देवोऽस्माभिरा स्तुतोऽस्तु सोऽपि

नमस्योऽस्तु नोऽस्माकं स्तोमान् चनश्च धात् स विश्वेभिः पायुभिस्सूरीन्नि पातु॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! यस्येश्वरस्य सर्व आप्ताः प्रशंसां कुर्वन्ति योऽस्मान् सततं रक्षत्यस्मदर्थं सर्वं विश्वं विधत्ते तमेव वयं सर्वे सदा प्रशंस्येम॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यम्, चित्)** जिस परमेश्वर की **(विश्वे)** सब **(वसवः)** वे विद्वान् जन जिन में विद्या वसती है **(गृणन्ति)** स्तुति कराते हैं वह **(सविता)** सब को उत्पन्न करने वाला **(देवः)** सूर्यादिकों का भी प्रकाशक ईश्वर हम लोगों से **(आ, स्तुतः)** अच्छे प्रकार स्तुति को प्राप्त **(अस्तु)** हो और वह **(अपि)** भी **(नमस्यः)** नमस्कार करने योग्य हो **(नः)** हमारी **(स्तोमान्)** प्रशंसाओं को और **(चनः)** अन्नादि ऐश्वर्य को भी **(धात्)** धारण करे तथा **(सः)** वह **(विश्वेभिः)** सब के साथ **(पायुभिः)** रक्षाओं से **(सूरीन्)** विद्वानों की **(नि, पातु)** निरन्तर रक्षा करे॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस ईश्वर की सब धर्मात्मा सज्जन प्रशंसा करते हैं, जो हम लोगों की निरन्तर रक्षा करता, हम लोगों के लिये समस्त विश्व का विधान करता है, उसी की हम लोग सदा प्रशंसा करें॥३॥

पुनर्मनुष्यैः कस्य प्रशंसा कार्येत्याह॥

फिर मनुष्यों को किसकी प्रशंसा करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒भि यं दे॒व्यदि॑तिर्गृ॒णाति॑ स॒वं दे॒वस्य॑ सवि॒तुर्जु॑षा॒णा।

अ॒भि स॒म्राजो॒ वरु॑णो गृणन्त्य॒भि मि॒त्रासो॑ अर्य॒मा स॒जोषाः॑॥४॥

अ॒भि। यम्। दे॒वी। अदि॑तिः। गृ॒णाति॑। स॒वम्। दे॒वस्य॑। स॒वि॒तुः। जु॒षा॒णा। अ॒भि। स॒म्ऽराजः॑। वरु॑णः। गृ॒ण॒न्ति॒। अ॒भि। मि॒त्रासः॑। अ॒र्य॒मा। स॒ऽजोषाः॑॥४॥

पदार्थः-**(यम्)** **(देवी)** विदुषी **(अदितिः)** माता **(गृणाति)** **(सवम्)** प्रसूतं जगत् **(देवस्य)** सर्वसुखप्रदातुः **(सवितुः)** प्रेरकस्यान्तर्यामिणः **(जुषाणा)** सेवमाना **(अभि)** **(सम्राजः)** सम्यग्राजमानश्चक्रवर्तिनो राजानः **(वरुणः)** वरो विद्वान् **(गृणन्ति)** स्तुवन्ति **(अभि)** **(मित्रासः)** सर्वस्य सुहृदः **(अर्यमा)** न्यायधीशः **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेवी॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्याः सवितुर्देवस्य सवं जुषाणा देव्यदितिर्यमभि गृणाति वरुणस्सजोषा अर्यमा यमभिगृणाति यं मित्रासस्सम्राजोऽभिगृणन्ति तमेव सर्वे सततं स्तुवन्तु॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! यूयं तस्यैव प्रशंसनीयस्य परमेश्वरस्यैव स्तुतिं कुरुत यं स्तुत्वा विदुष्यः स्त्रियः राजानो विद्वांसश्चाऽभीष्टं प्राप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(सवितुः)** प्रेरणा देने वाला अन्तर्यामी **(देवस्य)** सर्व सुखदाता जगदीश्वर के **(सवम्)** उत्पन्न किये जगत् की **(जुषाणा)** सेवा करती हुई **(देवी)** विदुषी **(अदितिः)** माता जिस को **(अभि, गृणाति)** सम्मुख कहती है वा **(वरुणः)** श्रेष्ठ विद्वान् जन **(सजोषाः)** समान प्रीति सेवने वाला **(अर्यमा)** न्यायाधीश और **(मित्रासः)** सब के सुहृद **(सम्राजः)** अच्छे प्रकार प्रकाशमान चक्रवर्ती राजजन **(यम्)** जिसकी **(अभि, गृणन्ति)** सब ओर से स्तुति करते हैं, उसी की सब निरन्तर

स्तुति करें॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम उसी प्रशंसा करने योग्य परमेश्वर की स्तुति करो, जिस की स्तुति करके विदुषी स्त्री राजा और विद्वान् जन चाहा हुआ फल पाते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्याः परस्परं किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य परस्पर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि ये मिथो वनुषः सपन्ते रातिं दिवो रातिषाचः पृथिव्याः।
अहिर्बुध्न्य उत नः शृणोतु वरूत्र्येकधेनुभिर्नि पातु॥५॥

अभि। ये। मिथः। वनुषः। सपन्ते। रातिम्। दिवः। रातिऽसाचः। पृथिव्याः। अहिः। बुध्न्यः। उत। नः। शृणोतु। वरूत्री। एकधेनुऽभिः। नि। पातु॥५॥

पदार्थः-(**अभि**) (**ये**) (**मिथः**) परस्परम् (**वनुषः**) याचमानान् (**सपन्ते**) आक्रुष्यन्ति (**रातिम्**) (**दिवः**) कमनीयस्य (**रातिषाचः**) दानस्य दातुः (**पृथिव्याः**) भूमेरन्तरिक्षस्य वा मध्ये (**अहिः**) मेघः (**बुध्न्यः**) बुध्न्येऽन्तरिक्षे भवः (**उत**) अपि (**नः**) अस्मान् (**शृणोतु**) (**वरूत्री**) वरणीया नीतियुक्ता माता (**एकधेनुभिः**) एकैव धेनुर्वाक् सहायभूता येषां तैः सह (**नि**) पातु॥५॥

अन्वयः-ये दिवो रातिषाच एकधेनुभिस्सह मिथो वनुषो नो रातिमाभि सपन्ते उतापि वरूत्री बुध्न्योऽहिरिवास्मान् पृथिव्या नि पातु स सर्वोजनोऽस्माकमधीतं शृणोतु॥५॥

भावार्थः-येऽस्मान् विद्याहीनान् दृष्ट्वा निन्दन्ति विदुषो दृष्ट्वा प्रशंसन्त्यैकमत्याय प्रेरयन्ति त एवास्माकं कल्याणकरा भवन्ति॥५॥

पदार्थः- (**ये**) जो (**दिवः**) मनोहर (**रातिषाचः**) दान देने वाले के (**एकधेनुभिः**) एक वाणी ही है सहायक जिनकी उनके साथ (**मिथः**) परस्पर (**वनुषः**) मांगते हुए (**नः**) हम लोगों की (**रातिम्**) देने को (**अभि, सपन्ते**) अच्छे प्रकार सब ओर से नियम करते हैं (**उत**) और (**वरूत्री**) स्वीकार करने योग्य माता (**बुध्न्यः**) अन्तरिक्ष में प्रसिद्ध हुए (**अहिः**) मेघ के समान हम लोगों को (**पृथिव्याः**) भूमि और अन्तरिक्ष के बीच (**नि, पातु**) निरन्तर रक्षा करे, वह समस्त जनमात्र हमारा पढ़ा हुआ (**शृणोतु**) सुने॥५॥

भावार्थः-जो हम लोगों को विद्याहीन देख निन्दा करते और विद्वान् देख प्रशंसा करते और एकता के लिये प्रेरणा देते हैं, वे ही हमारे कल्याण करने वाले होते हैं॥५॥

पुना राजादिमनुष्यैः किं कृत्वा किं प्रापणीयमित्याह॥

फिर राजा आदि मनुष्यों को क्या करके क्या प्राप्त करने योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अनु तन्नो जास्पतिर्मंसीष्ट रत्नं देवस्य सवितुरियानः।
भगमुग्रोऽवसे जोहवीति भगमनुग्रो अध याति रत्नम्॥६॥

अनु। तत्। नः। जाःपतिः। मंसीष्ट। रत्नम्। देवस्य। सवितुः। इयानः। भगम्। उग्रः। अवसे। जोहवीति। भगम्। अनुग्रः। अध। याति। रत्नम्॥६॥

पदार्थः-(**अनु**) (**तत्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**जास्पतिः**) प्रजापालकः (**मंसीष्ट**) मन्यताम् (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**देवस्य**) सर्वप्रकाशकस्य (**सवितुः**) सर्वान्तर्यामिणः (**इयानः**) प्राप्नुवन् (**भगम्**) ऐश्वर्यम् (**उग्रः**) तेजस्वी (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**जोहवीति**) भृशमाददाति (**भगम्**) ऐश्वर्यम् (**अनुग्रः**) अतेजस्वी (**अधः**) हीनताम् (**याति**) प्राप्नोति (**रत्नम्**) रमणीयं धनम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथोग्रो जास्पतिस्सवितुर्देवस्य भगमियानः यद्रत्नं स्वार्थं मंसीष्ट तन्नोऽनु मंसीष्ट यं भगमवसेऽनुग्रो जनो जोहवीति तद्रत्नमध याति॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो राजा परमेश्वरस्य सृष्टौ सर्वेषां रक्षणाय प्रवर्त्तते स एव सर्वमैश्वर्यं लब्ध्वा सर्वानानन्दयति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**उग्रः**) तेजस्वी (**जास्पतिः**) प्रजा पालने वाला (**सवितुः**) सर्वान्तर्यामी (**देवस्य**) सब प्रकाश करने वाले के (**भगम्**) ऐश्वर्य्य को (**इयानः**) प्राप्त होता हुआ जिस (**रत्नम्**) रमणीय धन को स्वार्थ (**मंसीष्ट**) मानता है (**तत्**) उस को (**नः**) हम लोगों के लिये (**अनु**) अनुकूल माने जिस (**भगम्**) ऐश्वर्य्य को (**अवसे**) रक्षा आदि के (**अनुग्रः**) तेजरहित जन (**जोहवीति**) निरन्तर ग्रहण करता है वह (**रत्नम्**) रमणीय धन (**अधः**) हीन दशा को (**याति**) प्राप्त होता है॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो राजा परमेश्वर की सृष्टि में सब की रक्षा के लिये प्रवृत्त होता है, वही सब ऐश्वर्य को पाकर सब को आनन्दित कराता है॥६॥

पुनः केऽत्र कल्याणकरा भवन्तीत्याह॥

फिर कौन इस संसार में कल्याण करने वाले होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शं नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः।
जम्भयन्तोऽहिं वृकं रक्षांसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः॥७॥

शम्। नः। भवन्तु। वाजिनः। हवेषु। देवऽताता। मितऽद्रवः। सुऽअर्काः। जम्भयन्तः। अहिम्। वृकम्। रक्षांसि। सनेमि। अस्मत्। युयवन्। अमीवाः॥७॥

पदार्थः-(**शम्**) सुखाय (**नः**) अस्माकम् (**भवन्तु**) (**वाजिनः**) वेगवन्तोऽश्वाः ज्ञानवन्तो योद्धारो वा (**हवेषु**) संग्रामेषु (**देवताता**) विद्वद्भिरनुष्ठातव्ये यज्ञे (**मितद्रवः**) ये मितं द्रवन्ति गच्छन्ति ते (**स्वर्काः**) शोभनोऽर्कोऽन्नादिकमैश्वर्यं येषान्ते (**जम्भयन्तः**) विनामयन्तः (**अहिम्**) सर्पमिव वर्तमानम् (**वृकम्**) स्तेनम् (**रक्षांसि**) दुष्टान् प्राणिनः (**सनेमि**) पुरातने। **सनेमीति पुराणनाम।** (निघं०३.२७) (**अस्मत्**) अस्माकं सकाशात् (**युयवन्**) वियुज्यन्ताम् (**अमीवाः**) रोगाः॥७॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! वाजिनो मितद्रवः स्वर्का हवेषु देवताताहिमिव वृकं रक्षांसि च जम्भयन्तो नोऽस्माकं शं भवन्तु यतोऽस्मत् सनेम्यमीवा युयवन्॥७॥

भावार्थः-ये दुष्टाचारान् प्राणिनो रोगान् शत्रूँश्च निवर्त्य सर्वेषां कल्याणकरा भवन्ति त एव

जगत्पूज्यास्सन्ति॥७॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(वाजिनः)** वेगवान् घोड़ा वा ज्ञानवान् योद्धा पुरुष **(मितद्रवः)** जो प्रमाण भर जाते हैं **(स्वर्काः)** जिन का शुभ अन्नादि है **(हवेषु)** वे संग्रामों में **(देवताता)** वा विद्वानों के अनुष्ठान करने योग्य यज्ञ में **(अहिम्)** सर्प के समान वर्तमान **(वृकम्)** चोर को और **(रक्षांसि)** दुष्ट प्राणियों को **(जम्भयन्तः)** जम्भाई दिलाते हुए **(नः)** हम लोगों को **(शम्)** सुख के लिये **(भवन्तु)** होवें जिस से **(अस्मत्)** हम लोगों से **(सनेमि)** पुराने व्यवहार में **(अमीवाः)** रोग **(युयवन्)** अलग हों॥७॥

भावार्थः-जो दुष्ट आचार वाले प्राणी, रोग और शत्रुओं को निवार के सब के सुख करने वाले होते हैं, वे ही जगत् पूज्य होते हैं॥७॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वाजेवाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः।
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः॥८॥५॥

वाजेऽवाजे। अवत। वाजिनः। नः। धनेषु। विप्राः। अमृताः। ऋतऽज्ञाः। अस्य। मध्वः। पिबत। मादयध्वम्। तृप्ताः। यात। पथिऽभिः। देवऽयानैः॥८॥

पदार्थः-**(वाजेवाजे)** संग्रामे संग्रामे **(अवत)** रक्षत **(वाजिनः)** बहुविज्ञानान्नबलवेगयुक्ताः **(नः)** अस्मान् **(धनेषु)** **(विप्राः)** मेधाविनः **(अमृताः)** मृत्युरहिताः **(ऋतज्ञाः)** य ऋतं सत्यं जानन्ति ते सत्यं व्यवहारं ब्रह्म वा जानन्ति ते **(अस्य)** **(मध्वः)** मधुरादिगुणयुक्तस्य **(पिबत)** **(मादयध्वम्)** आनन्दयत **(तृप्ताः)** प्रीणिताः **(यात)** **(पथिभिः)** **(देवयानैः)** विद्वन्मार्गैः॥८॥

अन्वयः-हे अमृता ऋतज्ञा वाजिनो विप्रा! यूयं धनेषु वाजेवाजे च नोऽस्मानवत अस्य मध्वः पिबत अस्मान् मादयध्वम् तृप्ताः सन्तो देवयानैः पथिभिर्यात॥८॥

भावार्थः-विदुषः प्रतीश्वरस्येयमाज्ञाऽस्ति यूयं विद्वांसो धार्मिका भूत्वा सर्वेषां रक्षां सततं विधत्त स्वयमानन्दिता महौषधरसेनारोगास्सन्तस्सर्वानानन्द्य तर्पयित्वाऽऽप्तमार्गैः स्वयं गच्छन्तोऽन्यान् सततं गमयत॥८॥

अत्र सवित्रैश्वर्यविद्वद्विदुषीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या।

इत्यष्टात्रिंशत्तमं सूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अमृताः)** मृत्युरहित **(ऋतज्ञाः)** सत्य व्यवहार वा ब्रह्म के जानने वाले **(वाजिनः)** बहु विज्ञान अन्न बल और वेगयुक्त **(विप्राः)** मेधावी सज्जनो! तुम **(धनेषु)** धनों में **(वाजेवाजे)** और संग्राम संग्राम में **(नः)** हम लोगों की **(अवत)** रक्षा करो **(अस्य)** इस **(मध्वः)** मधुरादि गुणयुक्त रस को **(पिबत)** पीओ, हम लोगों को **(मादयध्वम्)** आनन्दित करो और **(तृप्ताः)** तृप्त होते हुए **(देवयानैः)** विद्वानों के मार्ग जिन से जाना होता उन **(पथिभिः)** मार्गों से **(यात)**

जाओ॥८॥

भावार्थः-विद्वानों के प्रति ईश्वर की यह आज्ञा है कि तुम धार्मिक विद्वान् होकर सब की रक्षा निरन्तर करो और आनन्दित तथा बड़ी ओषधियों के रस से नीरोग हुए सब को आनन्दित और तृप्त कर धर्मात्माओं के मार्गों से आप चलते हुए औरों को निरन्तर उन्हीं मार्गों से चलावें॥८॥

इस सूक्त मे सविता, ऐश्वर्य, विद्वान् और विदुषियों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह अड़तीसवां सूक्त और पांचवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य [एकोनचत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। विश्वेदेवा देवताः। १, २, ५, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। ३ स्वराट् त्रिष्टुप्। ४, ६ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वांसौ स्त्रीपुरुषौ किं कुर्यातामित्याह॥

अब सात ऋचा वाले उनतालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् स्त्री-पुरुष क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ऊर्ध्वो अग्निः सुमतिं वस्वो अश्रेत् प्रतीची जूर्णिर्देवतातिमेति।
भेजाते अद्री रथ्येव पन्थामृतं होता न इषितो यजाति॥१॥

ऊर्ध्वः। अग्निः। सुऽमतिम्। वस्वः। अश्रेत्। प्रतीची। जूर्णिः। देवऽतातिम्। एति। भेजाते इति। अद्री इति। रथ्याऽइव। पन्थाम्। ऋतम्। होता। नः। इषितः। यजाति॥१॥

पदार्थः-(**ऊर्ध्वः**) ऊर्ध्वगामी (**अग्निः**) पावक इव (**सुमतिम्**) श्रेष्ठां प्रज्ञाम् (**वस्वः**) धनस्य (**अश्रेत्**) आश्रयेत् (**प्रतीची**) या प्रत्यगञ्चती (**जूर्णिः**) जीर्णा (**देवतातिम्**) देवैरनुष्ठितं यज्ञम् (**एति**) प्राप्नोति (**भेजाते**) भजतः (**अद्री**) अनिन्दितौ पत्नीयजमानौ (**रथ्येव**) यथा रथेषु साधू अश्वौ (**पन्थाम्**) मार्गम् (**ऋतम्**) सत्यम् (**होता**) दाता (**नः**) अस्मान् (**इषितः**) इष्टः (**यजाति**) यजेत् संगच्छेत्॥१॥

अन्वयः-या जूर्णिः प्रतीची विदुषी पत्नी ऊर्ध्वोऽग्निरिव देवतातिं सुमतिमश्रेत् रथ्येवर्तं पन्थामेति यथाऽद्री वस्वो भेजाते यथेषितो होता नो यजाति तान् तं च सर्वे सत्कुर्वन्तु॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यत्र स्त्रीपुरुषौ कृतबुद्धी पुरुषार्थिनौ सत्कर्मण्याचरतस्तत्र सर्वा श्रीर्विराजते॥१॥

पदार्थः-जो (**जूर्णिः**) जीर्ण (**प्रतीची**) वा कार्य के प्रति सत्कार करने वाली विदुषी पत्नी (**ऊर्ध्वः**) ऊपर जाने वाले (**अग्निः**) अग्नि के समान (**देवतातिम्**) विद्वानों ने अनुष्ठान किये हुए यज्ञ को और (**सुमतिम्**) श्रेष्ठमति को (**अश्रेत्**) आश्रय करे वा (**रथ्येव**) जैसे रथों में उत्तम घोड़े, वैसे (**ऋतम्**) सत्य (**पन्थाम्**) मार्ग को (**एति**) प्राप्त होती वा जैसे (**अद्री**) निन्दारहित पत्नी यजमान (**वस्वः**) धन को (**भेजाते**) भजते हैं वा जैसे (**इषितः**) इच्छा को प्राप्त (**होता**) देने वाला (**नः**) हम लोगों को (**यजाति**) संग करे उन सब को और उस का, वैसे ही सब सत्कार करें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जहाँ स्त्री-पुरुष ऐसे हैं कि जिन्होंने बुद्धि उत्पन्न की है, अच्छे काम में आचरण करते हैं, वहाँ सब लक्ष्मी विराजमान है॥१॥

पुनस्तौ स्त्रीपुरुषौ किं कुर्यातामित्याह॥

फिर वे स्त्री-पुरुष क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र वावृजे सुप्रया बर्हिरेषामा विश्पतीव बीरिट इयाते।
विशामक्तोरुषसः पूर्वहूतौ वायुः पूषा स्वस्तये नियुत्वान्॥२॥

प्र। वावृजे। सुऽप्रयाः। बर्हिः। एषाम्। आ। विश्पती इवेति विश्पतीऽइव। बीरिटे। इयाते इति। विशाम्। अक्तोः। उषसः। पूर्वऽहूतौ। वायुः। पूषा। स्वस्तये। नियुत्वान्॥२॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वावृजे**) व्रजति (**सुप्रयाः**) यस्सर्वान् सुष्ठु प्रीणाति (**बर्हिः**) उत्तमं सर्वेषां वर्धकं कर्म (**एषाम्**) मनुष्याणां मध्ये (**आ**) समन्तात् (**विश्पतीव**) विशां प्रजानां पालको राजेव (**बीरिटे**) अन्तरिक्षे (**इयाते**) गच्छतः (**विशाम्**) प्रजानाम् (**अक्तोः**) रात्रेः (**उषसः**) दिवसस्य (**पूर्वहूतौ**) पूर्वैर्विद्वद्भिः कृतायां स्तुतौ (**वायुः**) प्राण इव (**पूषा**) पुष्टिकर्त्ता (**स्वस्तये**) सुखाय (**नियुत्वान्**) नियन्तेश्वरः॥२॥

अन्वयः-यौ स्त्रीपुरुषौ बीरिटे सूर्याचन्द्रमसाविवेयाते विश्पतीवाक्तोरुषसः पूर्वहूताविंयाते पूषा वायुरिव नियुत्वानीश्वरो विशां स्वस्तयेऽस्तु एषां मध्यात् यः कश्चित्सुप्रया बर्हिरा प्र वावृजे तान् सर्वान् सर्वे सत्कुर्वन्तु॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। सदैव यौ स्त्रीपुरुषौ न्यायकारिराजवत् प्रजापालनमीश्वरवन्न्यायाचरणं वायुवत् प्रियप्रापणं संन्यासिवत्पक्षपातमोहादिदोषरहितौ स्यातां तौ सर्वार्थसिद्धौ भवेताम्॥२॥

पदार्थः-जो स्त्री-पुरुष (**बीरिटे**) अन्तरिक्ष में सूर्य और चन्द्रमा के समान (**इयाते**) जाते है (**विश्पतीव**) वा प्रजा पालने वाले राजा के समान (**अक्तोः**) रात्रि की (**उषसः**) और दिन की (**पूर्वहूतौ**) अगले विद्वानों ने की स्तुति के निमित्त जाते हैं वा (**पूषा**) पुष्टि करने वाले (**वायुः**) प्राण के समान (**नियुत्वान्**) नियमकर्ता ईश्वर (**विशाम्**) प्रजाजनों के (**स्वस्तये**) सुख के लिये हो (**एषाम्**) इन में से जो कोई (**सुप्रयाः**) सब को अच्छे प्रकार तृप्त करता है वा (**बर्हिः**) उत्तम सब का बढ़ाने वाला कर्म (**आ, प्र, वावृजे**) सब ओर से अच्छे प्रकार प्राप्त होता है, उन सब का सब सत्कार करें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। सदैव जो स्त्री-पुरुष न्यायकारी राजा के समान प्रजा पालना, ईश्वर के समान न्यायाचरण, पवन के समान प्रिय पदार्थ पहुँचाता और संन्यासी के तुल्य पक्षपात और मोहादिदोष त्याग करने वाले होते हैं, वे सर्वार्थ सिद्ध हों॥२॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ज्मया अत्र वसवो रन्त देवा उरावन्तरिक्षे मर्जयन्त शुभ्राः।
अर्वाक्पथ उरुज्रयः कृणुध्वं श्रोता दूतस्य जग्मुषो नो अस्य॥३॥

ज्मयाः। अत्र। वसवः। रन्त। देवाः। उरौ। अन्तरिक्षे। मर्जयन्त। शुभ्राः। अर्वाक्। पथः। उरुऽज्रयः। कृणुध्वम्। श्रोत। दूतस्य। जग्मुषः। नः। अस्य॥३॥

पदार्थः-(**ज्मयाः**) भूमेर्मध्ये (**अत्र**) अस्मिन् संसारे (**वसवः**) विद्यायां कृतवासाः (**रन्त**) रमन्ताम् (**देवाः**) विद्वांसः (**उरौ**) बहुव्यापके (**अन्तरिक्षे**) आकाशे (**मर्जयन्त**) शोधयन्तु (**शुभ्राः**) शुद्धाचाराः (**अर्वाक्**) (**पथः**) मार्गान् (**उरुज्रयः**) बहुगन्तारः (**कृणुध्वम्**) (**श्रोता**) शृणुत। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**दूतस्य**) (**जग्मुषः**) गन्तॄन् प्राप्तान् वेदितॄन् (**नः**) अस्माकं अस्मान् वा (**अस्य**)॥३॥

अन्वयः-हे उरुज्रयः शुभ्रा वसवो देवा! यूयमुरावन्तरिक्षेऽत्र ज्मया रन्तार्वाक् पथो मर्जयन्तास्य दूतस्य नो जग्मुषः कृणुध्वमस्माकं विद्याः श्रोता॥३॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयं धर्ममार्गान् शुद्धान् प्रचार्य्य दूतवत् सर्वत्र भ्रमणं कृत्वा धर्मं विस्तार्य सर्वान् मनुष्यान् प्राप्तविद्यासुखान् कुरुत॥३॥

पदार्थः-हे **(उरुज्रयः)** बहुत जाने और **(शुभ्राः)** शुद्ध आचरण करने वाले **(वसवः)** विद्या में वास किये हुए **(देवाः)** विद्वान् जनो! तुम **(उरौ)** बहुव्यापक **(अन्तरिक्षे)** आकाश में **(अत्र)** इस संसार में **(ज्मयाः)** भूमि के बीच **(रन्त)** रमें **(अर्वाक्)** पीछे **(पथः)** मार्गों को **(मर्जयन्त)** शुद्ध करो **(अस्य)** इस **(दूतस्य)** दूत को **(नः)** हम लोगों को **(जग्मुषः)** जाने, प्राप्त होने वा जानने वाले **(कृणुध्वम्)** करो और हमारी विद्याओं को **(श्रोता)** सुनो॥३॥

भावार्थः-हे विद्वानो! तुम धर्ममार्गों को शुद्ध प्रकाशित कर दूत के समान सब जगह घूम, धर्म का विस्तार कर सब मनुष्यों को विद्या सुखयुक्त करो॥३॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् कैसे हों और क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः सधस्थं विश्वे अभि सन्ति देवाः।
ताँ अध्वर उशतो यक्ष्यग्ने श्रुष्टी भगं नासत्या पुरन्धिम्॥४॥

ते। हि। यज्ञेषु। यज्ञियासः। ऊमाः। सधऽस्थम्। विश्वे। अभि। सन्ति। देवाः। तान्। अध्वरे। उशतः। यक्षि। अग्ने। श्रुष्टी। भगम्। नासत्या। पुरम्ऽधिम्॥४॥

पदार्थः-**(ते)** **(हि)** यतः **(यज्ञेषु)** विद्यादानाऽदानादिव्यवहारेषु **(यज्ञियासः)** यज्ञसिद्धिकराः **(ऊमाः)** रक्षादिकर्तारः **(सधस्थम्)** समानस्थानम् **(विश्वे)** सर्वे **(अभि)** आभिमुख्ये **(सन्ति)** **(देवाः)** विद्वांसः **(तान्)** **(अध्वरे)** अहिंसनीये व्यवहारे **(उशतः)** कामयमानान् **(यक्षि)** संगमयेयम् **(अग्ने)** विद्वन् **(श्रुष्टी)** क्षिप्रम् **(भगम्)** ऐश्वर्यम् **(नासत्या)** अविद्यमानासत्यव्यवहारावध्यापकोपदेशकौ **(पुरन्धिम्)** बहूनां सुखानां धर्तारम्॥४॥

अन्वयः-ते हि यज्ञियास ऊमा विश्वे देवा यज्ञेष्वभि सन्ति तानध्वरे सधस्थमुशतो विदुषोऽहं यक्षि यौ नासत्या पुरन्धिं भगं श्रुष्टी दद्यातां तौ यथाऽहं यक्षि तथा हे अग्ने! त्वमप्येतान् यज॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये सत्यविद्याधर्मप्रकाशका वेदविदः अध्यापकोपदेशका विद्वांसो जगति सर्वान् मनुष्यादीन्नुन्नयन्ति ते हि सर्वदा सर्वथा सर्वैस्सत्कर्तव्या भवन्ति॥४॥

पदार्थः-**(ते)** वे **(हि)** ही **(यज्ञियासः)** यज्ञ सिद्ध करने **(ऊमाः)** और रक्षा करने वाले **(विश्वे)** सब **(देवाः)** विद्वान् **(यज्ञेषु)** विद्या देने न देने के व्यवहारों में **(अभि, सन्ति)** सम्मुख वर्त्तमान हैं **(तान्)** उन **(अध्वरे)** अहिंसनीय व्यवहार में **(सधस्थम्)** एक स्थान को **(उशतः)** चाहने वाले विद्वानों को मैं **(यक्षि)** मिलूं जो **(नासत्या)** असत्यव्यवहाररहित अध्यापक और उपदेशक **(पुरन्धिम्)** बहुत सुखों के धारण करने वाले **(भगम्)** ऐश्वर्य को **(श्रुष्टी)** शीघ्र देवें, जैसे मैं मिलूं, वैसे

ही हे **(अग्ने)** विद्वान्! आप भी इन को मिलो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सत्यविद्या और धर्म के प्रकाश करने वाले वेदवेत्ता अध्यापक, उपदेशक, विद्वान् सब मनुष्य आदि की उन्नति करते हैं, वे ही सर्वदा सर्वथा सब को सत्कार करने योग्य होते हैं॥४॥

पुनर्विद्वांसः किं विज्ञाय किं ज्ञापयेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या जान कर क्या दूसरों को जतलावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आग्ने गिरो दिव आ पृथिव्या: मित्रं वह वरुणमिन्द्रमग्निम्।
आर्यमणमदितिं विष्णुमेषां सरस्वती मरुतो मादयन्ताम्॥५॥

आ। अग्ने। गिरः। दिवः। आ। पृथिव्याः। मित्रम्। वह। वरुणम्। इन्द्रम्। अग्निम्। आ। अर्यमणम्। अदितिम्। विष्णुम्। एषाम्। सरस्वती। मरुतः। मादयन्ताम्॥५॥

पदार्थः-**(आ)** **(अग्ने)** विद्वन् **(गिरः)** सुशिक्षिता वाचः **(दिवः)** विद्युत् सूर्यादेर्विद्याप्रकाशिकाः **(आ)** **(पृथिव्याः)** भूम्यादेः **(मित्रम्)** सखायम् **(वह)** **(वरुणम्)** अतिश्रेष्ठम् **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्यवन्तं राजानम् **(अग्निम्)** पावकम् **(आ)** **(अर्यमणम्)** न्यायाधीशम् **(अदितिम्)** अन्तरिक्षम् **(विष्णुम्)** व्यापकं वायुम् **(एषाम्)** **(सरस्वती)** विद्यायुक्ता वाणी **(मरुतः)** मनुष्याः **(मादयन्ताम्)** आनन्दयन्तु॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने त्वं दिवः पृथिव्या गिर आ वह मित्रं वरुणमिन्द्रमग्निमर्यमणमदितिं विष्णुमावहैषां सरस्वती तां च विदित्वाऽस्मदर्थमा वह, हे विद्वांसो! मरुत एतद्विद्यां दत्वाऽस्मान् भवन्तो मादयन्ताम्॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्युदादिविद्यां प्राप्यान्यान् प्रापयन्ति ते सर्वेषामानन्दकरा भवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! आप **(दिवः)** बिजुली और सूर्यादि प्रकाशवान् पदार्थों की विद्या का प्रकाश करने वाली वा **(पृथिव्याः)** भूमि आदि पदार्थों का प्रकाश करने वाली **(गिरः)** सुन्दर शिक्षित वाणियों को **(आ, वह)** प्राप्त कीजिये **(मित्रम्)** मित्र **(वरुणम्)** अतिश्रेष्ठ **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्यवान् राजा **(अग्निम्)** अग्नि **(अर्यमणम्)** न्यायाधीश **(अदितिम्)** अन्तरिक्ष **(विष्णुम्)** व्यापक वायु को **(आ)** प्राप्त कीजिये और जो **(एषाम्)** इनकी **(सरस्वती)** विद्यायुक्त वाणी उस को जान कर हमारे अर्थ **(आ)** प्राप्त कीजिये, हे **(मरुतः)** विद्वान् मनुष्यो! उक्त विद्या को देकर हम लोगों को आप **(मादयन्ताम्)** आनन्दित कीजिये॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य बिजुली आदि की विद्या को प्राप्त होकर औरों को प्राप्त कराते हैं, वे सब का आनन्द करने वाले होते हैं॥५॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रेरे हव्यं मतिभिर्यज्ञियानां नक्षत्कामं मर्त्यानामसिन्वन्।

धाता र॒यिम॑वि॒दस्यं॑ स॒दासां॑ स॒क्षीमहि यु॒ज्येभि॒र्नु दे॒वैः॥६॥

र॒रे। ह॒व्यम्। म॒तिऽभिः॑। य॒ज्ञियाना॑म्। नक्षत्। काम॑म्। मर्त्या॑नाम्। असि॑न्वन्। धात॑। र॒यिम्। अ॒वि॒ऽद॒स्यम्। स॒दा॒ऽसाम्। स॒क्षी॒महि॑। यु॒ज्येभि॑ः। नु। दे॒वैः॥६॥

पदार्थः-(**ररे**) दद्याम् (**हव्यम्**) गृहीतुमर्हम् (**मतिभिः**) प्राज्ञैर्मनुष्यैः सह (**यज्ञियानाम्**) यज्ञसम्पादकानाम् (**नक्षत्**) प्राप्नोति (**कामम्**) (**मर्त्यानाम्**) मनुष्याणाम् (**असिन्वन्**) बध्नन्ति (**धाता**) दधाति। अत्र **द्व्यच०** इति दीर्घः। (**रयिम्**) धनम् (**अविदस्यम्**) अक्षीणम् (**सदासाम्**) सदा संसेवनीयम् (**सक्षीमहि**) प्राप्नुयाम (**युज्येभिः**) योक्तुमर्हैः (**नु**) क्षिप्रम् (**देवैः**) विद्वद्भिः सह॥६॥

अन्वयः-ये मतिभिर्युज्येभिर्देवैस्सह यज्ञियानां मर्त्यानां हव्यं काममसिन्वन् यमविदस्यं सदासां रयिं धात य एतैस्सहैतं नक्षत् तमहं ररे वयमेतैस्सहैतं नु सक्षीमहि॥६॥

भावार्थः-ये विद्वांसोऽन्येषां मनुष्याणां काममलं कुर्वन्ति ते पूर्णकामा भवन्ति॥६॥

पदार्थः-जो (**मतिभिः**) प्राज्ञ मनुष्यों के साथ वा (**युज्येभिः**) योग करने योग्य (**देवैः**) विद्वानों के साथ (**यज्ञियानाम्**) यज्ञ सम्पादन करने वाले (**मर्त्यानाम्**) मनुष्यों के (**हव्यम्**) ग्रहण करने योग्य (**कामम्**) काम को (**असिन्वन्**) निबन्ध करते हैं जिस (**अविदस्यम्**) अक्षीण विनाशरहित (**सदासाम्**) सदैव अच्छे प्रकार सेवने योग्य (**रयिम्**) धन को (**धात**) धारण करते हैं वा जो इन के साथ उस को (**नक्षत्**) व्याप्त होता है उस को मैं (**ररे**) देऊं हम सब लोग इन के साथ उस को (**नु**) शीघ्र (**सक्षीमहि**) व्याप्त होवें॥६॥

भावार्थः-जो विद्वान् जिन मनुष्यों का काम पूरा करते हैं, वे पूर्णकाम होते हैं॥६॥

पुनर्विद्वांसोऽन्येभ्यः किं प्रदद्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन औरों के लिये क्या देवें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू रोद॑सी अ॒भिष्टु॑ते वसि॑ष्ठैर्ऋ॒तावा॑नो॒ वरु॑णो मि॒त्रो अ॒ग्निः।
यच्छ॑न्तु च॒न्द्रा उ॑प॒मं नो॑ अ॒र्कं यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभि॒ः सदा॑ नः॥७॥६॥

नु। रोद॑सी इति॑। अ॒भिस्तु॑ते इत्य॒भिऽस्तु॑ते। वसि॑ष्ठैः। ऋ॒तऽवा॑नः। वरु॑णः। मि॒त्रः। अ॒ग्निः। यच्छ॑न्तु। च॒न्द्राः। उ॒प॒ऽमम्। नः॒। अ॒र्कम्। यू॒यम्। पा॒त। स्व॒स्तिऽभिः॑। सदा॑। नः॒॥७॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**अभिष्टुते**) अभितः प्रशंसनीये (**वसिष्ठैः**) अतिशयेन वायसितृभिः (**ऋतावानः**) सत्यं याचमानाः (**वरुणः**) वरः (**मित्रः**) सुहृत् (**अग्निः**) पावक इव विद्यादिशुभगुणप्रकाशितः (**यच्छन्तु**) ददतु (**चन्द्राः**) आह्लादकराः (**उपमम्**) येनोपमीयते तम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**अर्कम्**) सत्कर्तव्यमन्नं विचारं वा (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**)॥७॥

अन्वयः-यथा वरुणो मित्रोऽग्निश्चर्तावानश्चन्द्रा वसिष्ठैस्सहाभिष्टुते रोदसी उपममर्कं नो नु यच्छन्तु तथा हे विद्वांसो! यूयं स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥७॥

भावार्थः-ये विद्वांस आप्तैस्सहानुपमं विज्ञानं प्रयच्छन्ति तेऽस्मान् सदा रक्षितुं शक्नुवन्तीति॥७॥

अत्र विश्वेदेवगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनचत्वारिंशत्तमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जैसे **(वरुणः)** श्रेष्ठ **(मित्रः)** मित्र **(अग्निः)** अग्नि के समान विद्यादि शुभ गुणों से प्रकाशित और **(ऋतावानः)** सत्य को याचने वा **(चन्द्राः)** हर्ष करने वाले जन **(वसिष्ठैः)** बसाने वाले के साथ **(अभिष्टुते)** सब ओर से प्रशंसित **(रोदसी)** प्रकाश और पृथिवी **(उपमम्)** जिस से उपमा दी जावे उस **(अर्कम्)** सत्कार करने योग्य अन्न वा विचार को **(नः)** हम लोगों के लिये **(नु)** शीघ्र **(यच्छन्तु)** देवें, वैसे हे विद्वानो! **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हमारी **(सदा)** सदैव **(पात)** रक्षा कीजिये॥७॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन धर्मात्मा, विद्वानों के साथ जिसकी उपमा नहीं उस विज्ञान को देते हैं, वे हम लोगों की रक्षा कर सकते हैं॥७॥

इस सूक्त में विश्वेदेवों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह उनतालीसवां सूक्त और छठा वर्ग पूरा हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य [चत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। विश्वेदेवा देवताः। १ पङ्क्तिः। ३ भुरिक्पङ्क्तिः। ६ विराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ४ विराट्त्रिष्टुप्। ५, ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

अब सात ऋचा वाले चालीसवें सूक्त का प्रारम्भ किया जाता है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ओ श्रुष्टिर्विदथ्या३ समेतु प्रति स्तोमं दधीमहि तुराणाम्।

यदुद्य देवः सविता सुवाति स्यामास्य रत्निनो विभागे॥ १॥

ओ इति। श्रुष्टिः। विदथ्या। सम्। एतु। प्रति। स्तोमम्। दधीमहि। तुराणाम्। यत्। अद्य। देवः। सविता। सुवाति। स्याम। अस्य। रत्निनः। विऽभागे॥ १॥

पदार्थः- **(ओ)** सम्बोधने **(श्रुष्टिः)** आशुकारी **(विदथ्या)** विदथेषु संग्रामादिषु व्यवहारेषु भवा **(सम्)** **(एतु)** सम्यक् प्राप्नोतु **(प्रति)** **(स्तोमम्)** **(दधीमहि)** **(तुराणाम्)** सद्यः कारिणाम् **(यत्)** यः **(अद्य)** इदानीम् **(देवः)** विद्वान् **(सविता)** सत्कर्मसु प्रेरकः **(सुवाति)** जनयति **(स्याम)** भवेम **(अस्य)** विदुषः **(रत्निनः)** बहूनि रत्नानि धनानि विद्यन्ते येषु तान् **(विभागे)** विशेषेण भजनीये व्यवहारे॥ १॥

अन्वयः-ओ विद्वन्! यथा श्रुष्टिर्विदथ्या तुराणां प्रतिस्तोमं समेतु तथैतं स्तोमं वयं दधीमहि यदद्य देवस्सविता विभागेऽस्य रत्निनः स्तोमं सुवाति तथा वयं स्याम॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विदुषी माताऽपत्यानि संरक्ष्य सुशिक्ष्य वर्द्धयति तथा विद्वांसोऽस्मान् वर्द्धयन्तु॥ १॥

पदार्थः- **(ओ)** ओ विद्वान्! जैसे **(श्रुष्टिः)** शीघ्र करने वाला **(विदथ्या)** संग्रामादि व्यवहारों में हुई **(तुराणाम्)** शीघ्रकारियों के **(प्रति, स्तोमम्)** समूह-समूह के प्रति **(सम्, एतु)** अच्छे प्रकार प्राप्त होवे, वैसे इस समूह को हम लोग **(दधीमहि)** धारण करे **(यत्)** जो **(अद्य)** अब **(देवः)** विद्वान् **(सविता)** अच्छे कामों में प्रेरणा देने वाला **(विभागे)** विशेष कर सेवने योग्य व्यवहार में **(अस्य)** इस विद्वान् के **(रत्निनः)** उन व्यवहारों को जिन में बहुत रत्न विद्यमान और स्तुति समूह को **(सुवाति)** उत्पन्न करता है, वैसे हम लोग उत्पन्न करने वाले **(स्याम)** हों॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे विदुषी माता सन्तानों की रक्षा कर और अच्छी शिक्षा देकर बढ़ाती है, वैसे विद्वान् जन हम को बढ़ावें॥ १॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मित्रस्तन्नो वरुणो रोदसी च द्युभक्तमिन्द्रो अर्यमा ददातु।

दिदेष्टु देव्यदिती रेक्णो वायुश्च यन्नियुवैते भगश्च॥ २॥

मित्रः। तत्। नः। वरुणः। रोदसी इति। च। द्युऽभक्तम्। इन्द्रः। अर्यमा। ददातु। दिदेष्टु। देवी।

अदि॑तिः। रेक्णः॑। वा॒युः। च॒। यत्। नि॒यु॒वैते॑ इति॑ नि॒ऽयु॒वैते॑। भगः॑। च॒॥ २॥

पदार्थः-(**मित्रः**) सखा (**तत्**) तम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**वरुणः**) जलसमुदायः (**रोदसी**) द्यावापृथिवी (**च**) (**द्युभक्तम्**) यो दिवं भजति तम् (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यो राजा (**अर्यमा**) न्यायकारी (**ददातु**) (**दिदेष्टु**) उपदिशतु (**देवी**) विदुषी (**अदितिः**) स्वरूपेणखण्डिता (**रेक्णः**) अधिकं धनम् (**वायुः**) पवनः (**च**) (**यत्**) यत् (**नियुवैते**) योजयेताम् (**भगः**) (**च**)॥ २॥

अन्वयः-ये रोदसीव मित्रोऽर्यमेन्द्रो वरुणो वायुश्च द्युभक्तं तन्नो ददातु देव्यदितिर्भगश्च यद्रेक्णो नियुवैते तत् विद्वानस्माँश्च दिदेष्टु॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यास्सर्वदा पुरुषार्थेन सर्वानैश्वर्ययुक्तान् कारयन्तु॥ २॥

पदार्थः-जो (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी के समान (**मित्रः**) मित्र (**अर्यमा**) न्यायकारी (**इन्द्रः**) परम ऐश्वर्यवान् राजा (**वरुणः**) जलसमूह (**वायुः**) और पवन (**च**) भी (**द्युभक्तम्**) जो प्रकाश को सेवता है (**तत्**) उस को (**नः**) हम लोगों के लिये (**ददातु**) देओ और (**देवी**) विदुषी (**अदितिः**) स्वरूप से अखण्डित (**भगः**) और ऐश्वर्यवान् (**च**) भी (**यत्**) जिस (**रेक्णः**) अधिक धन को (**नियुवैते**) निरन्तर जोड़े उस का विद्वान् जन हमें (**च**) भी (**दिदेष्टु**) उपदेश करें॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्य सर्वदा पुरुषार्थ से सब को ऐश्वर्ययुक्त करावें॥ २॥

कः सुरक्षितो विद्वान् भवतीत्याह॥

कौन सुरक्षित विद्वान् होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सेदु॒ग्रो अ॑स्तु मरुतः स शु॒ष्मी यं मर्त्यं॑ पृषदश्वा॒ अवा॑थ।
उ॒तेम॒ग्निः सर॑स्वती जु॒नन्ति॒ न तस्य॑ रा॒यः प॑र्ये॒तास्ति॑॥ ३॥

सः। इत्। उ॒ग्रः। अ॒स्तु॒। म॒रु॒तः॒। सः। शु॒ष्मी। यम्। मर्त्य॑म्। पृष॑त्ऽअश्वाः। अवा॑थ। उ॒त। ई॒म्। अ॒ग्निः। सर॑स्वती। जु॒नन्ति॑। न। तस्य॑। रा॒यः। प॒रि॒ऽए॒ता। अ॒स्ति॒॥ ३॥

पदार्थः-(**सः**) (**इत्**) एव (**उग्रः**) तेजस्वी (**अस्तु**) (**मरुतः**) विद्वांसो मनुष्याः (**सः**) (**शुष्मी**) बहुबली (**यम्**) (**मर्त्यम्**) मनुष्यम् (**पृषदश्वाः**) सिक्तजलाग्निनाऽऽशुगामिनो महान्तः (**अवाथ**) रक्षेत (**उत**) (**ईम्**) सर्वतः (**अग्निः**) पावक इव (**सरस्वती**) शुद्धा वाणी (**जुनन्ति**) प्रेरयन्ति (**न**) (**तस्य**) (**रायः**) धनानि (**पर्येता**) वर्जिता (**अस्ति**)॥ ३॥

अन्वयः-हे मरुतः! पृषदश्वा यं मर्त्यमवाथ स इदेव उग्रः स शुष्म्यस्तु यं विद्वांसो जुनन्ति तस्य रायः पर्येता न जायत उतेमग्निरिव सरस्वती तस्योत्तमाऽस्ति॥ ३॥

भावार्थः-यान् मनुष्यान् विद्वांसो रक्षन्ति ते विद्वांसो भूत्वा धनैश्वर्यं प्राप्याऽन्यानपि रक्षितुं शक्नुवन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) विद्वान् मनुष्यो! (**पृषदश्वाः**) सींचे हुए जल और अग्नि से जल्दी चलने वाले बड़े (**यम्**) जिस (**मर्त्यम्**) मनुष्य को (**अवाथ**) रक्खें (**स, इत्**) वही (**उग्रः**) तेजस्वी (**सः**) वह

(शुष्मी) बहुत बलवान् **(अस्तु)** हो जिस को विद्वान् **(जुनन्ति)** प्रेरणा देते हैं **(तस्य)** उस के **(रायः)** धनों को **(पर्येता)** वर्जन करने वाला **(न)** नहीं होता है **(उत, ईम्)** और सब ओर से **(अग्निः)** अग्नि के समान **(सरस्वती)** शुद्ध वाणी उस की उत्तम **(अस्ति)** है॥३॥

भावार्थः-जिन मनुष्यों की विद्वान् जन रक्षा करते हैं, वे विद्वान् हो धन और ऐश्वर्य को पाकर औरों की भी रक्षा कर सकते हैं॥३॥

के राजानो भवितुमर्हन्तीत्याह॥

कौन राजा होने योग्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं हि नेता वरुण ऋतस्य मित्रो राजानो अर्यमापो धुः।
सुहवा देव्यदितिरनर्वा ते नो अंहो अति पर्षन्नरिष्टान्॥४॥

अयम्। हि। नेता। वरुणः। ऋतस्य। मित्रः। राजानः। अर्यमा। अपः। धुरिति धुः। सुऽहवा। देवी। अदितिः। अनर्वा। ते। नः। अंहः। अति। पर्षन्। अरिष्टान्॥४॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**हि**) (**नेता**) नयनकर्ता (**वरुणः**) श्रेष्ठः (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**मित्रः**) सखा (**राजानः**) (**अर्यमा**) न्यायेशः (**अपः**) सुकर्म (**धुः**) दध्युः (**सुहवा**) सुष्ठुदानादानाः (**देवी**) देदीप्यमाना (**अदितिः**) अखण्डिता (**अनर्वा**) अविद्यमानाश्वगमनेव (**ते**) (**नः**) अस्मान् (**अंहः**) अपराधात् (**अति**) (**पर्षन्**) उल्लङ्घयेयुः (**अरिष्टान्**) अहिंसितान्॥४॥

अन्वयः-येऽयं नेता वरुणो मित्रोऽर्यमा च सुहवा राजानो ह्यृतस्यापो धुस्तेऽनर्वा देव्यदितिरिव नोऽरिष्टानंहोऽति पर्षन्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव राजानो भवन्ति ये न्यायं शुभान् गुणान् सर्वेषु मैत्रीं च भावयन्ति त एवापराधाचरणाज्जनान् पृथग्रक्षितुमर्हन्ति त एव राजानो भवितुमर्हन्ति॥४॥

पदार्थः-जो (**अयम्**) यह (**नेता**) न्यायकर्त्ता (**वरुणः**) श्रेष्ठ (**मित्रः**) मित्र (**अर्यमा**) और न्यायाधीश (**सुहवा**) सुन्दर देने लेने वाले (**राजानः**) राजजन (**हि**) ही (**ऋतस्य**) सत्य के (**अपः**) कर्म को (**धुः**) धारण करें (**ते**) वे (**अनर्वा**) नहीं है घोड़े की चाल जिस की उस (**देवी**) देदीप्यमान (**अदितिः**) अखण्डित नीति के समान (**नः**) हम लोगों को (**अंहः**) अपराध से (**अरिष्टान्**) न विनाश किये हुए (**अति, पर्षन्**) उल्लंघे अर्थात् छोड़े॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही राजा होते हैं, जो न्याय, श्रेष्ठ गुण और सबों में मित्रता की भावना कराते हैं, वे ही अपराध के आचरण से लोगों को दूर रखने योग्य होते हैं और राजा होने योग्य होते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्य देवस्य मीळ्हुषो वया विष्णोरेषस्य प्रभृथे हविर्भिः।

विदे हि रुद्रो रुद्रियं महित्वं यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत्॥५॥

अस्य। देवस्य। मीळ्हुषः। वयाः। विष्णोः। एषस्य। प्रऽभृथे। हविःऽभिः। विदे। हि। रुद्रः। रुद्रियम्। महिऽत्वम्। यासिष्टम्। वर्तिः। अश्विनौ। इराऽवत्॥५॥

पदार्थः-(**अस्य**) (**देवस्य**) देदीप्यमानस्य सकलसुखदातुः (**मीळ्हुषः**) जलेनेव सुखसेचकस्य (**वयाः**) प्रापकः (**विष्णोः**) विद्युदिव व्यापकस्येश्वरस्य (**एषस्य**) सर्वत्र प्राप्तव्यस्य (**प्रभृथे**) प्रकर्षेण धारिते जगति (**हविर्भिः**) होतव्यैः पदार्थैरिवादत्तैः शान्तैश्चित्तादिभिः (**विदे**) प्राप्नोमि (**हि**) (**रुद्रः**) दुष्टानां रोदयिता (**रुद्रियम्**) प्राणसम्बन्धि (**महित्वम्**) महत्त्वम् (**यासिष्टम्**) प्राप्नुतः (**वर्तिः**) मार्गम् (**अश्विनौ**) सूर्याचन्द्रमसौ (**इरावत्**) अन्नाद्यैश्वर्ययुक्तम्॥५॥

अन्वयः-यथाश्विना अस्य मीळ्हुषो विष्णोरेषस्य देवस्य हविर्भिः प्रभृथे जगतीरावद्वर्तिर्महित्वं यासिष्टं तस्य रुद्रियं वया रुद्रोऽहं हि विदे॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यस्येश्वरस्य महिमानं प्राप्य सूर्यादयो लोकाः प्रकाशयन्ति तस्यैवोपासनं सर्वस्वेन कर्तव्यम्॥५॥

पदार्थः-जैसे (**अश्विना**) सूर्य और चन्द्रमा (**अस्य**) इस (**मीळ्हुषः**) जल के समान सुख सींचने वाला (**विष्णोः**) बिजुली के समान व्यापक ईश्वर (**एषस्य**) जो कि सर्वत्र प्राप्त होने (**देवस्य**) और निरन्तर प्रकाशमान सकल सुख देनेवाला उसके (**हविर्भिः**) होमने योग्य पदार्थों के समान ग्रहण किये शान्त चितादिकों से (**प्रभृथे**) उत्तमता से धारण किये हुए जगत् में (**इरावत्**) अन्नादि ऐश्वर्य्य युक्त (**वर्तिः**) मार्ग को और (**महित्वम्**) महत्व को (**यासिष्टम्**) प्राप्त होते हैं, उस ईश्वर की (**रुद्रियम्**) प्राणसम्बन्धी महिमा को (**वयाः**) प्राप्त करने (**रुद्रः**) दुष्टों को रुलाने वाला मैं (**हि**) ही (**विदे**) प्राप्त होता हूँ॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिस ईश्वर की महिमा को पाकर सूर्य आदि प्रकाश करते हैं, उसी की उपासना सर्वस्व से करनी चाहिये॥५॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्वन्तीत्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मात्र पूषन्नाघृण इरस्यो वरूत्री यद्रातिषाचश्च रासन्।
मयोभुवो नो अर्वन्तो नि पान्तु वृष्टिं परिज्मा वातो ददातु॥६॥

मा। अत्र। पूषन्। आऽघृणे। इरस्यः। वरूत्री। यत्। रातिऽसाचः। च। रासन्। मयःऽभुवः। नः। अर्वन्तः। नि। पान्तु। वृष्टिम्। परिऽज्मा। वातः। ददातु॥६॥

पदार्थः-(**मा**) (**अत्र**) अस्मिन् (**जगति**) (**पूषन्**) पुष्टिकर्तः (**आघृणे**) सर्वतो दीप्ते (**इरस्यः**) प्राप्तुं योग्यः (**वरूत्री**) वर्तुमर्हा (**यत्**) याः (**रातिषाचः**) दानकर्तारः (**च**) (**रासन्**) प्रयच्छन्ति (**मयोभुवः**) शुभं भावुकाः (**नः**) अस्मान् (**अर्वन्तः**) प्राप्नुवन्तः (**नि**) नितराम् (**पान्तु**) रक्षन्तु (**वृष्टिम्**)

(परिज्मा) यः परितस्सर्वतो गच्छति सः **(वातः)** वायुः **(ददातु)**॥६॥

अन्वयः-हे आघृणे पूषन्! यथा परिज्मा वातो वृष्टिं ददातु तथा मयोभुवोऽर्वन्तो रातिषाचः आप्ता नो नि पान्तु यद्या वरूत्री वरणीया विद्यास्ति तां च रासन् तथेरस्यस्त्वं कुर्याः माऽत्र विद्वेषी भवेः॥६॥

भावार्थः-ये विद्वांस आप्तवद्वर्तित्वा सर्वेभ्यः सुखं विद्यां च प्रयच्छन्ति ते सर्वाभिरक्षकास्सन्ति॥६॥

पदार्थः-हे **(आघृणे)** सब ओर से प्रकाशित **(पूषन्)** पुष्टि करने वाले! जैसे **(परिज्मा)** सब ओर से जो जाता है वह **(वातः)** वायु **(वृष्टिम्)** वर्षा को **(ददातु)** देवे वैसे **(मयोभुवः)** श्रेष्ठता हुवाने वाले **(अर्वन्तः)** प्राप्त होते हुए **(रातिषाचः)** दानकर्ता जन **(नः)** हम लोगों की **(नि, पान्तु)** निरन्तर रक्षा करें और **(यत्)** जो **(वरूत्री)** स्वीकार करने योग्य विद्या है **(च)** उसी को भी **(रासन्)** देते हैं, वैसे **(इरस्यः)** प्राप्त होने योग्य आप करें **(मा)** और मत **(अत्र)** इस जगत् में विद्वेषी होओ॥६॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन श्रेष्ठ जनों के तुल्य वर्त कर सब के लिये सुख वा विद्या देते हैं, वे सब के सब ओर से रक्षक हैं॥६॥

पुनरध्यापकोपदेशिका स्त्रियः किं कुर्युरित्याह॥

फिर पढ़ाने और उपदेश करने वाली स्त्रियाँ क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥७॥७॥

नु। रोदसी इति। अभिस्तुते इत्यभिऽस्तुते। वसिष्ठैः। ऋतऽवानः। वरुणः। मित्रः। अग्निः। यच्छन्तु। चन्द्राः। उपऽमम्। नः। अर्कम्। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥७॥

पदार्थः-**(नु)** क्षिप्रम्। अत्र ऋचि तुनुघेति दीर्घः। **(रोदसी)** द्यावापृथिव्या इव **(अभिष्टुते)** आभिमुख्येनाध्यापयन्त्यावुपदिशन्त्यावध्यापकोपदेशिके **(वसिष्ठैः)** अतिशयेन धनाढ्यैः सह **(ऋतावानः)** सत्यस्य प्रकाशिकाः **(वरुणः)** जलमिव शान्तिप्रदः **(मित्रः)** सखेव प्रियाचारः **(अग्निः)** पावक इव प्रकाशितयशाः **(यच्छन्तु)** ददतु **(चन्द्राः)** आनन्ददाः **(उपमम्)** उपमेयसाधकतमम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(अर्कम्)** सत्कर्तव्यं धनधान्यम् **(यूयम्) (पात) (स्वस्तिभिः) (सदा) (नः)**॥७॥

अन्वयः-ये अध्यापकोपदेशिके रोदसी इवाभिष्टुते वसिष्ठैस्सह यथा मित्रो वरुण अग्निश्च चन्द्रा न उपममर्कं न यच्छन्तु तथाऽस्मानृतावानः कन्या सततं विद्याः प्रयच्छन्तु हे विदुष्यः स्त्रियो! यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। या भूमिवत् क्षमाशीलाः श्रीवच्छोभमाना जलवच्छान्ताः सखीवदुपकारिण्यः विदुष्योऽध्यापिका स्युस्ताः सकलाः कन्या अध्यापनेन सर्वास्त्रियश्चोपदेशेनान्दयन्त्विति॥७॥

अत्र विश्वेदेवगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति चत्वारिंशत्तमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो पढ़ाने और उपदेश करने वाली **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी के समान **(अभिष्टुते)** सामने पढ़ाती वा उपदेश करती वे **(वसिष्ठैः)** अतीव धनाढ्यों के साथ जैसे **(मित्रः)** मित्र के समान प्यारे आचरण करने वाला **(वरुणः)** जल के समान शान्ति देने वाली और **(अग्निः)** अग्नि के समान प्रकाशित यश जन तथा **(चन्द्राः)** आनन्द देने वाले **(नः)** हमारे लिये **(उपमम्)** उपमा जिस को दी जाती उस को अतीव सिद्ध कराने वाले **(अर्कम्)** सत्कार करने योग्य धन धान्य को **(नु)** शीघ्र **(यच्छन्तु)** देवें, वैसे हम लोगों को **(ऋतावानः)** सत्य की प्रकाश करने वाली कन्या जन निरन्तर विद्या देवें, हे विदुषी स्त्रियो! **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदैव **(पात)** रक्षा करो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो भूमि के तुल्य क्षमाशील, लक्ष्मी के तुल्य शोभती हुई, जल के तुल्य शान्त, सहेली के तुल्य उपकार करने वाली विदुषी पढ़ाने वाली हों वे सब कन्याओं को पढ़ा के और सब स्त्रियों को उपदेश से आनन्दित करें॥७॥

इस सूक्त में विश्वेदेवों के गुण और कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चालसीवाँ सूक्त और सातवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य [एकचत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य १-७ वसिष्ठर्षिः। १ लिङ्गोक्तदेवताः। २-६ भगः। ७ उषाः। १ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। २, ३, ५, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। ६ त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ प्रातरुत्थाय यावच्छयनं तावन्मनुष्यैः किं किं कर्तव्यमित्याह॥

अब सात ऋचा वाले इक्तालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में प्रातःकाल उठ के जब तक सोवें तब तक मनुष्यों को क्या-क्या करना चाहिये इसविषय को कहते हैं॥

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम॥ १॥

प्रातः। अग्निम्। प्रातः। इन्द्रम्। हवामहे। प्रातः। मित्रावरुणा। प्रातः। अश्विना। प्रातः। भगम्। पूषणम्। ब्रह्मणः। पतिम्। प्रातरिति। सोमम्। उत। रुद्रम्। हुवेम॥ १॥

पदार्थः-(**प्रातः**) प्रभाते (**अग्निम्**) पावकम् (**प्रातः**) (**इन्द्रम्**) विद्युतं सूर्यं वा (**हवामहे**) होमेन विचारेण प्रशंसेम (**प्रातः**) (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानाविव सखिराजानौ (**प्रातः**) (**अश्विना**) सूर्याचन्द्रमसौ वैद्यावध्यापकौ वा (**प्रातः**) (**भगम्**) ऐश्वर्यम् (**पूषणम्**) पुष्टिकरं वायुम् (**ब्रह्मणस्पतिम्**) ब्रह्मणो वेदस्य ब्रह्माण्डस्य सकलैश्वर्यस्य वा स्वामिनं जगदीश्वरम् (**प्रातः**) (**सोमम्**) सर्वौषधिगणम् (**उत**) (**रुद्रम्**) पापफलदानेन पापिनां रोदयितारं पापफलभोगेन रोदकं जीवं वा (**हुवेम**) प्रशंसेम॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयं प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना हवामहे प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं सोममुत प्राता रुद्रं हुवेम तथा यूयमप्याह्वयत॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यैः रात्रेः पश्चिमे यामउत्थायावश्यकं कृत्वा ध्यानेन शरीरस्थं ब्रह्माण्डस्य वाऽग्निं विद्युतं प्राणोदानौ मित्राणि सूर्याचन्द्रमसावैश्वर्यं पुष्टिः परमेश्वर ओषधिगणः जीवश्च विचारेण वेदितः यः पुनरग्निहोत्रादिभिः कर्मभिः सर्वं जगदुपकृत्य कृतकृत्यैर्भवितव्यम्॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग (**प्रातः**) प्रभात काल में (**अग्निम्**) अग्नि को (**प्रातः**) प्रभात समय में (**इन्द्रम्**) बिजुली वा सूर्य को (**प्रातः**) प्रातः समय (**मित्रावरुणाः**) प्राण और उदान के समान मित्र और राजा को तथा (**प्रातः**) प्रभात काल (**अश्विना**) सूर्य चन्द्रमा वैश्व वा पढ़ाने वालों की (**हवामहे**) विचार से प्रशंसा करें (**प्रातः**) प्रभात समय (**भगम्**) ऐश्वर्य्य को (**पूषणम्**) पुष्टि करने वाले वायु को (**ब्रह्मणस्पतिम्**) वेद ब्रह्माण्ड वा सकलैश्वर्य के स्वामी जगदीश्वर को (**सोमम्**) समस्त ओषधियों को (**उत**) और (**प्रातः**) प्रभात समय (**रुद्रम्**) फल देने से पापियों को रुलाने वाले ईश्वर वा पाप फल भोगने से रोने वाले जीव की (**हुवेम**) प्रशंसा करें, वैसे तुम भी प्रशंसा करो॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यों को रात्रि के पिछले पहर में उठ कर आवश्यक कार्य्य कर ध्यान से शरीरस्थ वा ब्रह्माण्डस्थ वा बिजुली, प्राण, उदान, मित्र, सूर्य, चन्द्रमा, ऐश्वर्य, पुष्टि, परमेश्वर, ओषधिगण और जीव विचार से जानने योग्य हैं, फिर अग्निहोत्रादि कामों से सब जगत् का उपकार कर कृतकृत्य होना चाहिये॥ १॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह॥ २॥

प्रातःऽजितम्। भगम्। उग्रम्। हुवेम। वयम्। पुत्रम्। अदितेः। यः। विऽधर्ता। आध्रः। चित्। यम्। मन्यमानः। तुरः। चित्। राजा। चित्। यम्। भगम्। भक्षि इति। आह॥ २॥

पदार्थः-(**प्रातर्जितम्**) प्रातरेव जेतुमुत्कर्षयितुं योग्यम् (**भगम्**) ऐश्वर्यम् (**उग्रम्**) तेजोमयम् (**हुवेम**) शब्दयेम (**वयम्**) (**पुत्रम्**) पुत्रमिव वर्तमानम् (**अदितेः**) अन्तरिक्षस्थाया भूमेः प्रकाशस्य वा (**यः**) (**विधर्ता**) विविधानां लोकानां धर्ता (**आध्रः**) यः सर्वैस्समन्ताद् ध्रियते (**चित्**) अपि (**यम्**) (**मन्यमानः**) विजानन् (**तुरः**) शीघ्रकारी (**चित्**) इव (**राजा**) प्रकाशमानः (**चित्**) अपि (**यम्**) (**भगम्**) ऐश्वर्यम् (**भक्षि**) भजेयं सेवेय (**इति**) अनेन प्रकारेण (**आह**) उपदिशतीश्वरः॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽदितेर्विधर्ताऽऽध्रश्चिन्मन्यमानस्तुरो राजा चिदिव परमात्मा यं भगं प्राप्तुमाह यत्प्रेरिता वयं पुत्रमिव प्रातर्जितमुग्रं भगं हुवेमेति यं चिदहं भक्षि तं सर्व उपासीरन्॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। मनुष्यैः प्रातरुत्थाय सर्वाधारं परमेश्वरं ध्यात्वा सर्वाणि कर्तव्यानि कार्याणि विचिन्त्य धर्मेण पुरुषार्थेन प्राप्तमैश्वर्यं भोक्तव्यं भोजयितव्यमितीश्वर उपदिशति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**अदितेः**) अन्तरिक्षस्थ भूमि वा प्रकाश का (**विधर्ता**) वा विविध लोकों का धारण करने वाला (**आध्रः, चित्**) जो सब ओर से धारण सा किया जाता (**मन्यमानः**) जानता हुआ (**तुरः**) शीघ्रकारी (**राजा**) प्रकाशमान (**चित्**) निश्चय से परमात्मा (**यम्**) जिस (**भगम्**) ऐश्वर्य्य की प्राप्ति होने को (**आह**) उपदेश देता है, जिसकी प्रेरणा पाये हुए (**वयम्**) हम लोग (**पुत्रम्**) पुत्र के समान (**प्रातर्जितम्**) प्रातःकाल ही उत्तमता से प्राप्त होने को योग्य (**उग्रम्**) तेजोमय तेज भरे हुए (**भगम्**) ऐश्वर्य्य को (**हुवेम**) कहें (**इति**) इस प्रकार (**यम्, चित्**) जिस को निश्चय से मैं (**भक्षि**) सेवूं, उसकी [सब] उपासना करें॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। मनुष्यों को चाहिये कि प्रातः समय उठकर सब के आधार परमेश्वर का ध्यान कर सब करने योग्य कामों को नाना प्रकार से चिंतवन कर धर्म और पुरुषार्थ से पाये हुए ऐश्वर्य को भोगें वा भुगावें, यह ईश्वर उपदेश देता है॥ २॥

पुनर्मनुष्यैरीश्वरः किमर्थं प्रार्थनीय इत्याह॥

फिर मनुष्यों को ईश्वर की प्रार्थना क्यों करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम॥ ३॥

भग। प्रणेतरिति प्रऽनेतः। भग। सत्यऽराधः। भग। इमाम्। धियम्। उत्। अव। ददत्। नः। भग।

प्र। नः। जनय। गोभिः। अश्वैः। भग। प्र। नृऽभिः। नृऽवन्तः। स्याम॥३॥

पदार्थः-(**भग**) सकलैश्वर्ययुक्त (**प्रणेतः**) प्रकर्षेण प्रापक (**भग**) सेवनीयतम (**सत्यराधः**) सत्यं राधः प्रकृत्याख्यं धनं यस्य तत्सम्बुद्धौ (**भग**) सकलैश्वर्यप्रद (**इमाम्**) वर्तमानां प्रशस्ताम् (**धियम्**) प्रज्ञाम् (**उत्**) (**अव**) रक्ष वर्धय वा। अत्र **द्व्यचो०** इति दीर्घः। (**ददत्**) प्रयच्छन् (**नः**) अस्मभ्यम् (**भग**) सर्वसामग्रीप्रद (**प्र**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**जनय**) (**गोभिः**) धेनुभिः पृथिव्यादिभिर्वा (**अश्वैः**) तुरङ्गैर्महद्भिर्विद्युदादिभिर्वा (**भग**) सकलैश्वर्ययुक्त (**प्र**) (**नृभिः**) नायकैः श्रेष्ठैर्मनुष्यैः (**नृवन्तः**) बहूत्तममनुष्ययुक्ताः (**स्याम**) भवेम॥३॥

अन्वयः-हे भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेश्वर! त्वं कृपया न इमां धियं ददत्स्मानुदव हे भग! नो गोभिरश्वैः प्र जनय, हे भग! त्वमस्मान्नृभिः प्र जनय यतो वयं नृवन्तस्स्याम॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्या ईश्वराज्ञाप्रार्थनाध्यानोपासनानुष्ठानपुरःसरं पुरुषार्थं कुर्वन्ति ते धर्मात्मानो भूत्वा सुसहायास्सन्तः सकलैश्वर्यं लभन्ते॥३॥

पदार्थः-हे (**भग**) सकलैश्वर्य्ययुक्त (**प्रणेतः**) उत्तमता से प्राप्ति कराने वाले (**भग, सत्यराधः**) अत्यन्त सेवा करने योग्य प्रकृतिरूप धनयुक्त (**भग**) सकल ऐश्वर्य देने वाले ईश्वर! आप कृपा कर (**नः**) हम लोगों के लिये (**इमाम्**) इस प्रशंसायुक्त (**धियम्**) उत्तम बुद्धि को (**ददत्**) देते हुए हम लोगों की (**उत्, अव**) उत्तमता से रक्षा कीजिये, हे (**भग**) सर्वसामग्री युक्त! (**नः**) हम लोगों के लिये (**गोभिः**) गौवें वा पृथिवी आदि से (**अश्वैः**) वा शीघ्रगामी घोड़ा वा पवन वा बिजुली आदि से (**प्र, जनय**) उत्तमता से उत्पत्ति दीजिये, हे (**भग**) सकलैश्वर्य्य युक्त! आप हम लोगों को (**नृभिः**) नायक श्रेष्ठ मनुष्यों से (**प्र**) उत्तम उत्पत्ति दीजिये जिस से हम लोग (**नृवन्तः**) बहुत उत्तम मनुष्य युक्त (**स्याम**) हों॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य ईश्वर की आज्ञा, प्रार्थना, ध्यान और उपासना का आचरण पहिले करके पुरुषार्थ करते हैं, वे धर्मात्मा होकर अच्छे सहायवान् हुए सकल ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनर्मनुष्यैः केन कीदृशैर्भवितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किससे कैसा होना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम॥४॥

उत। इदानीम्। भगऽवन्तः। स्याम। उत। प्रऽपित्वे। उत। मध्ये। अह्नाम्। उत। उत्ऽइता। मघऽवन्। सूर्यस्य। वयम्। देवानाम्। सुऽमतौ। स्याम॥४॥

पदार्थः-(**उत**) (**इदानीम्**) वर्तमानसमये (**भगवन्तः**) बहूत्तमैश्वर्ययुक्ताः (**स्याम**) (**उत**) (**प्रपित्वे**) प्रकर्षेणैश्वर्यस्य प्राप्तौ (**उत**) (**मध्ये**) (**अह्नाम्**) दिनानाम् (**उत**) (**उदिता**) उदये (**मघवन्**) परमपूजितैश्वर्येश्वर (**सूर्यस्य**) सवितृलोकस्य (**वयम्**) (**देवानाम्**) आप्तानां विदुषाम् (**सुमतौ**) (**स्याम**) भवेम॥४॥

अन्वयः-हे मघवन् जगदीश्वरेदानीमुत प्रपित्व उताह्नां मध्य उत सूर्यस्योदितोतापि सायं भगवन्तो वयं स्याम देवानां सुमतौ स्याम॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या जगदीश्वराश्रयाज्ञापालनेन विद्वत्सङ्गादतिपुरुषार्थिनो भूत्वा धर्मार्थकाममोक्षसिद्धये प्रततन्ते त सकलैश्वर्ययुक्ताः सन्तस्त्रिषु कालेषु सुखिनो भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** परमपूजित ऐश्वर्य्य युक्त जगदीश्वर! **(इदानीम्)** इस समय **(उत)** और **(प्रपित्वे)** उत्तमता से ऐश्वर्य्य की प्राप्ति समय में **(उत)** और **(अह्नाम्)** दिनों में **(मध्ये)** बीच **(उत)** और **(सूर्यस्य)** सूर्य लोक के **(उदिता)** उदय में **(उत)** और सायंकाल में **(भगवन्तः)** बहुत उत्तम ऐश्वर्ययुक्त **(वयम्)** हम लोग **(स्याम)** हों **(देवानाम्)** तथा आप्तविद्वानों की **(सुमतौ)** श्रेष्ठ मति में स्थिर हों॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य जगदीश्वर का आश्रय और आज्ञा पालन से विद्वानों के संग से अति पुरुषार्थी होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिये प्रयत्न करते हैं, वे सकलैश्वर्य युक्त होते हुए भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान इन तीनों कालों में सुखी होते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्याः किं कृत्वा कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करके कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह॥५॥

भगः। एव। भगऽवान्। अस्तु। देवाः। तेन। वयम्। भगऽवन्तः। स्याम। तम्। त्वा। भग। सर्वः। इत्। जोहवीति। सः। नः। भग। पुरःऽएता। भव। इह॥५॥

पदार्थः-**(भगः)** भजनीयः **(एव)** **(भगवान्)** सकलैश्वर्यसम्पन्नः **(अस्तु)** **(देवाः)** विद्वांसः **(तेन)** **(वयम्)** **(भगवन्तः)** सकलैश्वर्ययुक्ताः **(स्याम)** **(तम्)** **(त्वा)** त्वाम् **(भग)** सर्वैश्वर्यप्रद **(सर्वः)** सम्पूर्णः **(इत्)** एव **(जोहवीति)** भृशं प्रशंसति **(सः)** **(नः)** अस्माकम् **(भग)** भजनीय वस्तुप्रद **(पुरएता)** यः पुर एति अग्रगामी भवति सः **(भव)** **(इह)** अस्मिन् वर्तमाने समये॥५॥

अन्वयः-हे भग! यो भवान् भगो भगवानस्तु तेनैव भगवता सह वयं देवा भगवन्तस्स्याम, हे भग! यस्सर्वो जनस्तं त्वा जोहवीति स इह नोऽस्माकं पुरएताऽस्तु हे भग! त्वमिदस्मर्थं पुरएता भव॥५॥

भावार्थः-हे जगदीश्वर! यो भगवान् भवान् सर्वान् सर्वमैश्वर्यं ददाति तत्सहायेन सर्वे मनुष्याः धनाढ्या भवन्तु॥५॥

पदार्थः-हे **(भगः)** सकल ऐश्वर्य्य के देने वाले! जो आप **(भगः)** अत्यन्त सेवा करने योग्य **(भगवान्)** सकलैश्वर्य्यसम्पन्न **(अस्तु)** होओ **(तेनैव)** उन्हीं भगवान् के साथ **(वयम्)** हम **(देवाः)** विद्वान् लोग **(भगवन्तः)** सकलैश्वर्य्य युक्त **(स्याम)** हों, हे सकलैश्वर्य्य देने वाले! जो **(सर्वः)** सर्व मनुष्य **(तम्)** उन **(त्वा)** आपको **(जोहवीति)** निरन्तर प्रशंसा करता है **(सः)** वह **(इह)** इस समय में **(नः)** हमारे **(पुरएता)** आगे जाने वाला हो और हे **(भग)** सेवा करने योग्य वस्तु देने वाले! आप ही

हमारे अर्थ आगे जाने वाले **(भव)** हूजिये॥५॥

भावार्थ:-हे जगदीश्वर जो सकलैश्वर्य्यवान् आप सब को सब ऐश्वर्य्य देते हैं, उन के सहाय से सब मनुष्य धनाढ्य होवें॥५॥

पुनर्मनुष्या: कीदृशा भूत्वा किं प्राप्य किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्यो को कैसे होकर क्या पाकर क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय।
अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु॥६॥

सम्। अध्वराय। उषसः। नमन्त। दधिक्रावाऽइव। शुचये। पदाय। अर्वाचीनम्। वसुऽविदम्। भगम्। नः। रथम्ऽइव। अश्वाः। वाजिनः। आ। वहन्तु॥६॥

पदार्थः-(सम्) (अध्वराय) हिंसारहिताय धर्म्याय व्यवहाराय **(उषसः)** प्रभातवेलायाः **(नमन्त)** नमन्ति **(दधिक्रावेव)** धारकान् क्रमत इव **(शुचये)** पवित्राय **(पदाय)** प्राप्तव्याय **(अर्वाचीनम्)** इदानीन्तनं नूतनम् **(वसुविदम्)** यो वसूनि विन्दति प्राप्नोति तम् **(भगम्)** सर्वैश्वर्ययुक्तम् **(नः)** अस्मान् **(रथमिव)** रमणीयं यानमिव **(अश्वाः)** महान्तो वेगवन्तस्तुरङ्गा आशुगामिनो विद्युदादयो वा **(वाजिनः) (आ) (वहन्तु)**॥६॥

अन्वयः-रथमिवाश्वा ये वाजिनो जनाः शुचयेऽध्वराय पदायोषसो दधिक्रावेव सन्नमन्त तेऽर्वाचीनं वसुविदं भगं न आ वहन्तु॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः प्रातरुत्थाय वेगयुक्ताश्ववत्सद्यो गत्वाऽऽगत्वाऽऽलस्यं विहायैश्वर्यं प्राप्य नम्रा जायन्ते त एव पवित्रं परमात्मानं प्राप्तुं शक्नुवन्ति॥६॥

पदार्थ:- (रथमिव, अश्वाः) रमणीय यान को महान् वेग वाले घोड़े वा शीघ्र जाने वाले बिजुली आदि पदार्थ जैसे वैसे जो **(वाजिनः)** विशेष ज्ञानी जन **(शुचये)** पवित्र **(अध्वराय)** हिंसारहित धर्मयुक्त व्यवहार **(पदाय)** और पाने योग्य पदार्थ के लिये **(उषसः)** प्रभात वेला की **(दधिक्रावेव)** धारणा करने वालों को प्राप्त होते के समान **(सम्, नमन्त)** अच्छे प्रकार नमते हैं वे **(अर्वाचीनम्)** तत्काल प्रसिद्ध हुए नवीन **(वसुविदम्)** धनों को प्राप्त होते हुए **(भगम्)** सर्व ऐश्वर्य्य युक्त जन को और **(नः)** हम लोगों को **(आ, वहन्तु)** सब ओर से उन्नति को पहुँचावें॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य प्रात:काल उठ के वेगयुक्त घोड़ों के समान शीघ्र जाकर आकर आलस्य छोड़ ऐश्वर्य को पाय नम्र होते हैं, वे ही पवित्र परमात्मा को पा सकते हैं॥६॥

पुनर्विदुष्यः स्त्रियः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विदुषी स्त्री क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः।

घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥७॥८॥

अश्वऽवतीः। गोऽमतीः। नः। उषसः। वीरऽवतीः। सदम्। उच्छन्तु। भद्राः। घृतम्। दुहानाः। विश्वतः। प्रऽपीताः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥७॥

पदार्थः-(**अश्वावतीः**) अश्वा महान्तः पदार्था विद्यन्ते यासु ताः (**गोमतीः**) गावो धेनवः किरणा विद्यन्ते यासु ताः (**नः**) अस्माकम् (**उषसः**) प्रभातवेला इव शोभमाना। अत्र **वा छन्दसीत्युपधा** दीर्घः। (**वीरवतीः**) वीरा विद्यन्ते यासु ताः (**सदम्**) सीदन्ति यस्मिन् तम् (**उच्छन्तु**) सेवन्ताम् (**भद्राः**) कल्याणकर्यः (**घृतम्**) उदकम् (**दुहानाः**) प्रपूरयन्त्यः (**विश्वतः**) (**प्रपीताः**) प्रकर्षेण पीता वर्धयित्र्यः (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**)॥७॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशिका विदुष्यस्त्रिय! उषास इवाश्वावतीर्गोमतीर्वीरवतीर्भद्राः प्रपीता विश्वतो घृतं दुहानाः भवत्यो नः सदमुच्छन्तु यूयं स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथोषसस्सर्वान् निद्रास्थान् मृतककल्पान् चेतयित्वा कर्मसु प्रवर्तयन्ति तथैव सत्यो विदुष्यस्त्रियस्सर्वा स्त्रियोऽविद्यानिद्रास्था अध्यापनोपदेशाभ्यां चेतयित्वा सत्कर्मसु प्रेरयन्त्विति॥७॥

अत्र मनुष्याणां दिनचर्याप्रतिपादनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इत्येकचत्वारिंशत्तमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे पढ़ाने और उपदेश करने वाली पण्डिता स्त्रियो! तुम (**उषसः**) प्रभात वेला सी शोभती हुई (**अश्वावतीः**) जिन के समीप बड़े-बड़े पदार्थ विद्यमान (**गोमतीः**) वा किरणें विद्यमान (**वीरवतीः**) वा वीर विद्यमान (**भद्राः**) जो कल्याण करने (**प्रपीताः**) उत्तमता से बढ़ाने और (**विश्वतः**) सब ओर से (**घृतम्**) जल को (**दुहानाः**) पूरा करती हुईं आप (**नः**) हमारे (**सदम्**) स्थान को (**उच्छन्तु**) सेवो वह (**यूयम्**) तुम (**स्वस्तिभिः**) सुखों से (**नः**) हम लोगों की (**सदा**) सर्वदैव (**पात**) रक्षा कीजिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्रभात वेला सब निद्रा में ठहरे हुए मरे हुए जैसों को चैतन्य करा कर्मों में युक्त कराती हैं, वैसे ही होती हुईं विदुषी स्त्रियाँ सब अविद्या निद्रास्थ स्त्रियों को पढ़ाने और उपदेश करने से अच्छे काम में प्रवृत्त करावें॥७॥

इस सूक्त में मनुष्यों की दिनचर्य्या का प्रतिपादन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इकतालीसवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्‌चस्य [द्विचत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य १-६ वसिष्ठर्षिः। विश्वेदेवा देवताः। १, ३ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ५ विराट् त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। ६ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ पूर्णविद्या जनाः किं कुर्युरित्याह॥

अब छः ऋचा वाले बयालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में पूरी विद्या वाले जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र ब्रह्माणो अङ्गिरसो नक्षन्त प्र क्रन्दनुर्नभन्यस्य वेतु।
प्र धेनवं उदप्रुतो नवन्त युज्यातामद्री अध्वरस्य पेशः॥१॥

प्र। ब्रह्माणः। अङ्गिरसः। नक्षन्त। प्र। क्रन्दनुः। नभन्यस्य। वेतु। प्र। धेनवः। उदऽप्रुतः। नवन्त। युज्याताम्। अद्री इति। अध्वरस्य। पेशः॥१॥

पदार्थः-(**प्र**) (**ब्रह्माणः**) चतुर्वेदविदः (**अङ्गिरसः**) प्राणा इव सद्विद्यासु व्याप्ताः (**नक्षन्त**) व्याप्नुवन्तु (**प्र**) (**क्रन्दनुः**) आह्वाता (**नभन्यस्य**) नभस्यन्तरिक्षे पृथिव्यां सुखे वा भवस्य। **नभ इति साधारण नाम।** (निघं०१.४)। (**वेतु**) व्याप्नोतु प्राप्नोतु (**प्र**) (**धेनवः**) दुग्धदात्र्यो गाव इव वाचः (**उदप्रुतः**) उदकं प्राप्ता नद्य इव (**नवन्त**) स्तुवन्ति (**युज्याताम्**) युक्तौ भवतः (**अद्री**) मेघविद्युतौ (**अध्वरस्य**) अहिंसनीयस्य व्यवहारस्य (**पेशः**) सुरूपम्॥१॥

अन्वयः-हे ब्रह्माणोऽङ्गिरसो विद्वांसः यथा क्रन्दनुर्नभन्यस्याध्वरस्य पेशः प्र वेत्वुदप्रुत इव धेनवोऽध्वरस्य पेशो नवन्त यथाऽद्री अध्वरस्य पेशः प्र युज्यातां तथा विद्यासु भवन्तः प्र नक्षन्त॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये चतुर्वेदविदो विद्वांसोऽहिंसादिलक्षणस्य धर्मस्य स्वरूपं बोधयन्ति ते स्तुत्या भवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**ब्रह्माणः**) चारों वेदों के जानने वाले जनो! (**अङ्गिरसः**) प्राणों के समान विद्वान् जन जैसे (**क्रन्दनुः**) बुलाने वाला (**नभन्यस्य**) अन्तरिक्ष पृथिवी वा सुख में उत्पन्न हुए (**अध्वरस्य**) न नष्ट करने योग्य व्यवहार के (**पेशः**) सुन्दर रूप को (**प्र, वेतु**) अच्छे प्रकार प्राप्त हो वा (**उदप्रुतः**) उदक जल को प्राप्त हुईं नदियों के समान (**धेनवः**) और दूध देने वाली गौओं के समान वाणी अहिंसनीय व्यवहार के रूप की (**नवन्त**) स्तुति करती हैं और जैसे (**अद्री**) मेघ और बिजुली अहिंसनीय व्यवहार के रूप को (**प्र, युज्याताम्**) प्रयुक्त हों आप लोग वैसी विद्याओं में (**प्र, नक्षन्त**) व्याप्त होओ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो चारों वेद के जानने वाले विद्वान् जन, अहिंसादिलक्षण है जिसके ऐसे धर्म के स्वरूप का बोध कराते हैं, वे स्तुति करने योग्य होते हैं॥१॥

के विद्वांसः श्रेष्ठास्सन्तीत्याह॥

कौन विद्वान् जन श्रेष्ठ होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सुगस्ते अग्ने सनवित्तो अध्वा युक्ष्वा सुते हरितो रोहितश्च।

ये वा सद्मन्नरुषा वीरवाहो हुवे देवानां जनिमानि सत्तः॥२॥

सुऽगः। ते। अग्ने। सनऽवित्तः। अध्वा। युक्ष्व। सुते। हरितः। रोहितः। च। ये। वा। सद्मन्। अरुषाः। वीरऽवाहः। हुवे। देवानाम्। जनिमानि। सत्तः॥२॥

पदार्थः-(**सुगः**) सुष्ठु गच्छन्ति यस्मिन्सः (**ते**) तव (**अग्ने**) पावक इव विद्याप्रकाशित (**सनवित्तः**) यः सनातनेन वेगेन वित्तः लब्धः (**अध्वा**) मार्गः (**युङ्क्ष्वा**) युक्तो भव (**सुते**) उत्पन्नेऽस्मिन् जगति (**हरितः**) दिश इव। **हरित इति दिङ्नाम।** (निघं०१.६) (**रोहितः**) नद्य इव। **रोहित इति नदीनाम।** (निघं०१.१३) (**च**) (**ये**) (**वा**) (**सद्मन्**) सद्मनि स्थाने (**अरुषाः**) रक्तादिगुणविशिष्टाः (**वीरवाहः**) ये वीरान् वहन्ति प्रापयन्ति ते (**हुवे**) प्रशंसेयम् (**देवानाम्**) विदुषाम् (**जनिमानि**) जन्मानि (**सत्तः**) निषण्णः॥२॥

अन्वयः-हे अग्ने! सुतेऽस्मिन् जगति ये हरितो रोहितश्चेव सद्मन्नरुषा वीरवाहो वा सन्ति तेषां देवानां जनिमानि सत्तोऽहं हुवे तथा यस्ते सुगः सनवित्तोऽध्वास्ति यमहं हुवे तं त्वं युङ्क्ष्व॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव विद्वांसः श्रेष्ठास्सन्ति ये सनातनं वेदप्रतिपाद्यं धर्मनुष्ठायानुष्ठापयन्ति तेषामेव विदुषां जन्म सफलं भवति ये पूर्णा विद्याः प्राप्य धर्मात्मानो भूत्वा प्रीत्या सर्वान् सुशिक्षयन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान विद्याप्रकाशित! (**सुते**) उत्पन्न हुए इस जगत् में (**ये**) जो (**हरितः**) दिशाओं के समान (**च**) और (**रोहितः**) नदियों के समान (**सद्मन्**) स्थान में (**अरुषाः**) लालगुणयुक्त (**वीरवाहः**) वीरों को पहुँचाने वाले हैं उन (**देवानाम्**) विद्वानों के (**जनिमानि**) जन्मों को (**सत्तः**) आसत्त हुआ मैं (**हुवे**) प्रशंसा करता हूँ, वैसे जो आप का (**सुगः**) अच्छे जाते हैं जिस में वह (**सनवित्तः**) सनातन वेग से प्राप्त (**अध्वा**) मार्ग है जिसकी कि मैं प्रशंसा करूं उसको आप (**युङ्क्ष्व**) युक्त करो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही विद्वान् जन श्रेष्ठ हैं जो सनातन वेदप्रतिपादित धर्म का अनुष्ठान करके कराते हैं, उन्हीं विद्वानों का जन्म सफल होता है, जो पूर्ण विद्या को पाकर धर्मात्मा होकर प्रीति के साथ सब को अच्छी शिक्षा दिलाते हैं॥२॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

समु वो यज्ञं महयन्नमोभिः प्र होता मन्द्रो रिरिच उपाके।
यजस्व सु पुर्वणीक देवाना यज्ञियामरमतिं ववृत्याः॥३॥

सम्। ऊँ इति। वः। यज्ञम्। महयन्। नमःऽभिः। प्र। होता। मन्द्रः। रिरिचे। उपाके। यजस्व। सु। पुरुऽअनीक। देवान्। आ। यज्ञियाम्। अरमतिम्। ववृत्याः॥३॥

पदार्थः-(**सम्**) (**उ**) (**वः**) युष्माकम् (**यज्ञम्**) विद्याप्रचारमयम् (**महयन्**) सत्कुर्वन्ति

(नमोभिः) अन्नादिभिः **(प्र)** **(होता)** दाता **(मन्द्रः)** आनन्दप्रदः **(रिरिचे)** अन्यायात् पृथग्भव **(उपाके)** समीपे **(यजस्व)** सङ्गच्छस्व **(सु)** **(पुर्वणीक)** पुरूण्यनीकानि सैन्यानि यस्य तत्सम्बुद्धौ **(देवान्)** विदुषः **(आ)** **(यज्ञियाम्)** या यज्ञमर्हति ताम् **(अरमतिम्)** पूर्णां प्रज्ञाम् **(ववृत्याः)** प्रवर्त्तय॥३॥

अन्वयः-हे पुर्वणीक राजन्! त्वं देवान् सुयजस्व यज्ञियामरमतिमा ववृत्याः मन्द्रो होता सन्नुपाके प्र रिरिचे, हे विद्वांसो! ये नमोभिर्वो यज्ञं सम्महयन् तानु यूयं सत्कुरुत॥३॥

भावार्थः-ये विद्वांसः सत्कर्मानुष्ठानाख्यं यज्ञमनुतिष्ठन्ति ते पुष्कलवीरसेनास्सन्तः सर्वेषामानन्दप्रदा भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(पुर्वणीक)** बहुत सेनाओं वाले राजा! आप **(देवान्)** विद्वानों को **(सु, यजस्व)** अच्छे प्रकार प्राप्त होओ **(यज्ञियाम्)** जो यज्ञ के योग्य होती उस **(अरमतिम्)** पूरी मति को **(आ, ववृत्याः)** प्रवृत्त कराओ **(मन्द्रः)** आनन्द देने वा **(होता)** दान करने वाले होते हुए **(उपाके)** समीप में **(प्र, रिरिचे)** अन्याय से अलग रहिये, हे विद्वानो! जो **(नमोभिः)** अन्नादिकों से **(वः)** तुम लोगों के **(यज्ञम्)** विद्याप्रचारमय यज्ञ का **(सम्, महयन्)** सम्मान करते हैं **(उ)** उन्हीं का तुम सत्कार करो॥३॥

भावार्थः-जो विद्वन् जन सत्कर्मानुष्ठानयज्ञ का अनुष्ठान करते हैं, वे पुष्कल वीर सेना वाले होते हुए सबको आनन्द देने वाले होते हैं॥३॥

पुनरतिथिगृहस्थाः परस्परं किं कुर्युरित्याह॥

फिर अतिथि और गृहस्थ परस्पर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यदा वीरस्य रेवतो दुरोणे स्योनशीरतिथिराचिकेतत्।

सुप्रीतो अग्निः सुधितो दम आ स विशे दाति वार्यमियत्यै॥४॥

यदा। वीरस्य। रेवतः। दुरोणे। स्योनऽशीः। अतिथिः। आऽचिकेतत्। सुऽप्रीतः। अग्निः। सुऽधितः। दमे। आ। सः। विशे। दाति। वार्यम्। इयत्यै॥४॥

पदार्थः-**(यदा)** **(वीरस्य)** **(रेवतः)** बहुधनयुक्तस्य **(दुरोणे)** गृहे **(स्योनशीः)** यः सुखेन शेते सः **(अतिथिः)** सत्योपदेशकः **(आचिकेतत्)** समन्ताद्विजानाति **(सुप्रीतः)** सुष्ठु प्रसन्नः **(अग्निः)** पावक इव पवित्रतेजस्वी **(सुधितः)** सुष्ठु हितकारी **(दमे)** गृहे **(आ)** **(सः)** **(विशे)** प्रजायै **(दाति)** ददाति **(वार्यम्)** वरणीयं विज्ञानं **(इयत्यै)** सुखप्राप्तीच्छायै॥४॥

अन्वयः-यदा स्योनशीरतिथी रेवतो वीरस्य दुरोण आ चिकेतत्तदा सोऽग्निरिव सुधितः सुप्रीतो गृहस्थस्य दमे इयत्यै विशे वार्यमा दाति॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यदा विद्वान् धार्मिक उपदेशकोऽतिथिर्युष्माकं गृहाण्यागच्छेत्तदा सम्यगेनं सत्कुरुत। हे अतिथे! यदा यत्र यत्र भवान् रमणं कुर्यात्तत्र सर्वेभ्यः सत्यमुपदिशेत्॥४॥

पदार्थः- **(यदा)** जब **(स्योनशीः)** सुख से सोने वाला **(अतिथिः)** सत्य उपदेशक **(रेवतः)**

बहुत धन वाले **(वीरस्य)** वीर के **(दुरोणे)** घर में **(आ, चिकेतत्)** सब ओर से जानता है तब **(सः)** वह **(अग्निः)** अग्नि के समान पवित्र **(सुधितः)** अच्छा हित करने वाला **(सुप्रीतः)** सुन्दर प्रसन्न गृहस्थ के **(दमे)** घर में **(इयत्यै)** सुखप्राप्ति की इच्छा के लिये **(विशे)** और प्रजा सन्तान के लिये **(वार्यम्)** स्वीकार करने योग्य विज्ञान को **(आ, दाति)** सब ओर से देता है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जब विद्वान् धार्मिक उपदेश करने वाला अतिथि जन तुम्हारे घरों को आवे तब अच्छे प्रकार उसका सत्कार करो, हे अतिथि! जब जहाँ-जहाँ आप रमण भ्रमण करें, वहाँ-वहाँ सब के लिये सत्य उपदेश करें॥४॥

पुनस्ते गृहस्थातिथयः परस्परस्मै किं किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे गृहस्थ अतिथि परस्पर के लिये क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमं नो अग्ने अध्वरं जुषस्व मरुत्स्विन्द्रे यशसं कृधी नः।
आ नक्ता बर्हिः संदतामुषासोशन्ता मित्रावरुणा यजेह॥५॥

इमम्। नः। अग्ने। अध्वरम्। जुषस्व। मरुत्ऽसु। इन्द्रे। यशसम्। कृधि। नः। आ। नक्ता। बर्हिः। सदताम्। उषसा। उशन्ता। मित्रावरुणा। यज। इह॥५॥

पदार्थः-**(इमम्)** **(नः)** अस्माकम् **(अग्ने)** पावक इव विद्याप्रकाशितातिथे **(अध्वरम्)** उपदेशाख्यं यज्ञम् **(जुषस्व)** **(मरुत्सु)** मनुष्येषु **(इन्द्रे)** राजनि **(यशसम्)** कीर्तिम् **(कृधि)** अत्र **द्व्यच०** इति दीर्घः। **(नः)** अस्माकम् **(आ)** **(नक्ता)** रात्रिम् **(बर्हिः)** उत्तमासनम् **(सदताम्)** आसीदेत् **(उषसा)** दिनेन **(उशन्ता)** कामयमानौ **(मित्रावरुणा)** प्राणोदानाविव स्त्रीपुरुषौ **(यज)** **(इह)** अस्मिन् जगति॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं मरुत्स्विन्द्रे न इममध्वरं सततं जुषस्व नोऽस्माकं यशसं कृधि नक्तोषासा बर्हिरासदतामिहोशन्ता मित्रावरुणा त्वं यज॥५॥

भावार्थः-यदाऽतिथिरागच्छेत्तदा गृहस्थाः अर्घ्यपाद्यासनमधुपर्कप्रियवचनान्नादिभिः सत्कृत्य पृष्ट्वा सत्यासत्यनिर्णयं कुर्वन्त्वतिथिश्च प्रश्नान् समादधातु॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान विद्या से प्रकाशित अतिथि! आप **(मरुत्सु)** मनुष्यों के **(इन्द्रे)** और राजा के निमित्त **(नः)** हम लोगों के **(इमम्)** इस **(अध्वरम्)** उपदेशरूपी यज्ञ को निरन्तर **(जुषस्व)** सेवो **(नः)** हमारी **(यशसम्)** कीर्ति की वृद्धि **(कृधि)** करो **(नक्तोषासा)** रात्रि को दिन के साथ **(बर्हिः)** तथा उत्तम आसन को **(आ, सदताम्)** स्वीकार करो स्थिर होओ और **(इह)** इस जगत् में **(उशन्ता)** कामना करते हुए **(मित्रावरुणा)** प्राण और उदान के समान स्त्री-पुरुषों को आप **(यज)** मिलो॥५॥

भावार्थः-जब अतिथि आवें तब गृहस्थ अर्घ्य, पाद्य, आसन, मधुपर्क, वचन और अन्नादिकों से उनका सत्कार कर और पूछ कर सत्य और असत्य का निर्णय करें और अतिथि भी प्रश्नों के समाधान देवें॥५॥

धनकामाः पुरुषाः किं कुर्युरित्याह॥

धन की कामना करने वाले क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवाग्निं सहस्यं१ वसिष्ठो रायस्कामो विश्वप्स्न्यस्य स्तौत्।
इषं रयिं पप्रथद्वाजमस्मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥६॥९॥

एव। अग्निम्। सहस्यम्। वसिष्ठः। रायःऽकामः। विश्वप्स्न्यस्य। स्तौत्। इषम्। रयिम्। पप्रथत्। वाजम्। अस्मे इति। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥६॥

पदार्थः-(**एव**) (**अग्निम्**) पावकम् (**सहस्यम्**) सहसि भवम् (**वसिष्ठः**) अतिशयेन वसुः (**रायस्कामः**) रायो धनस्य काम इच्छा यस्य सः (**विश्वप्स्न्यस्य**) विश्वेषु समग्रेषु स्नुषु स्वरूपेषु भवस्य (**स्तौत्**) स्तौति (**इषम्**) अन्नादिकम् (**रयिम्**) श्रियम् (**पप्रथत्**) प्रथयति (**वाजम्**) विज्ञानमन्नं वा (**अस्मे**) अस्माकम् (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**)॥६॥

अन्वयः-यो रायस्कामो वसिष्ठो विश्वप्स्न्यस्य सहस्यमग्निं स्तौत् स एवास्मे इषं रयिं वाजं पप्रथत्, हे अतिथयः ! यूयं स्वस्तिभिर्नोऽस्मान् सदा पात॥६॥

भावार्थः-यस्य धनस्य कामना स्यात् स मनुष्योऽग्न्यादि विद्यां गृह्णीयात् येऽतिथिसेवां कुर्वन्ति तानतिथयोऽधर्माचरणात् पृथक्सदा रक्षन्तीति॥६॥

अत्र विश्वेदेवगुणकृत्यवर्णानादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति द्विचत्वारिंशत्तमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो (**रायस्कामः**) धन की कामना वाला (**वसिष्ठः**) अतीव निवासकर्ता जन (**विश्वप्स्न्यस्य**) समग्र रूपों में और (**सहस्यम्**) बल में हुए (**अग्निम्**) अग्नि की (**स्तौत्**) स्तुति करता है (**एव**) वही (**अस्मे**) हमारी (**इषम्**) अन्नादि सामग्री (**रयिम्**) लक्ष्मी (**वाजम्**) विज्ञान वा अन्न को (**पप्रथत्**) प्रसिद्ध करता है, हे अतिथि जनो ! (**यूयम्**) तुम (**स्वस्तिभिः**) सुखों से (**नः**) हम लोगों की (**सदा**) सदैव (**पात**) रक्षा करो॥६॥

भावार्थः-जिसको धन की कामना हो, वह मनुष्य अग्न्यादि विद्या को ग्रहण करे, जो अतिथियों की सेवा करते हैं, उनको अतिथि लोग अधर्म के आचरण से सदा अलग रखते हैं॥६॥

इस सूक्त में विश्वेदेवों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह बयालीसवां सूक्त और नवम वर्ग पूरा हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य [त्रिचत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। विश्वेदेवा देवताः। १ निचृत्त्रिष्टुप्। ४ त्रिष्टुप्। ३ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ५ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनरतिथिगृहस्थाः परस्परस्मै किं किं प्रदद्युरित्याह॥

अब पांच ऋचा वाले तेतालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर अतिथि और गृहस्थ एक दूसरे के लिये क्या क्या देवें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र वो॑ य॒ज्ञेषु॑ देव॒यन्तो॑ अर्च॒न् द्यावा॒ नमो॑भिः पृथि॒वी इ॒षध्यै॑।
येषां॒ ब्रह्मा॒ण्यस॑मानि॒ विप्रा॒ विष्व॑ग्वि॒यन्ति॑ व॒निनो॒ न शाखाः॑॥ १॥

प्र। वः॒। य॒ज्ञेषु॑। दे॒व॒ऽयन्तः॑। अ॒र्च॒न्। द्यावा॑। नमः॑ऽभिः। पृ॒थि॒वी इति॑। इ॒षध्यै॑। येषा॑म्। ब्रह्मा॑णि। अस॑मानि। विप्राः॑। विष्व॑क्। वि॒ऽयन्ति॑। व॒निनः॑। न। शाखाः॑॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वः**) युष्मान् (**यज्ञेषु**) विद्याप्रचारादिव्यवहारेषु (**देवयन्तः**) कामयमानाः (**अर्चन्**) अर्चन्ति सत्कुर्वन्ति (**द्यावा**) सूर्यम् (**नमोभिः**) अन्नादिभिः (**पृथिवी**) भूमिम् (**इषध्यै**) एष्टुं ज्ञातुम् (**येषाम्**) (**ब्रह्माणि**) धनान्यन्नानि वा (**असमानि**) अन्येषां धनैरतुल्यान्यधिकानीति यावत् (**विप्राः**) मेधाविनः (**विष्वक्**) विषु व्याप्तं अञ्चतीति (**वि, यन्ति**) व्याप्नुवन्ति (**वनिनः**) वनसम्बन्धो विद्यते येषां ते (**न**) इव (**शाखाः**) याः खेऽन्तरिक्षे शेरते ताः॥ १॥

अन्वयः-हे विप्राः! येषामसमानि ब्रह्माणि वनिनः शाखा न विष्वग्वि यन्ति ये नमोभिरिषध्यै द्यावापृथिवी यज्ञेषु देवयन्तो वो युष्मान् प्रार्चंस्तान् भवन्तोऽपि सत्कुर्वन्तु॥ १॥

भावार्थः-हे अतिथयो विद्वांसो! यथा गृहस्था अन्नादिभिर्युष्मान् सत्कुर्युस्तथा यूयं विज्ञानदानेन गृहस्थान् सततं प्रीणन्तु॥ १॥

पदार्थः-हे (**विप्राः**) बुद्धिमानो! (**येषाम्**) जिनको (**असमानि**) औरों के धनों से न समान किन्तु अधिक (**ब्रह्माणि**) धन वा अन्न (**वनिनः**) वन सम्बन्ध रखने और (**शाखाः**) अन्तरिक्ष में सोनेवाली शाखाओं के (**न**) समान (**विष्वक्**) अनुकूल व्याप्ति जैसे हो, वैसे (**वि, यन्ति**) व्याप्त होते हैं वा जो (**नमोभिः**) अन्नादिकों से (**इषध्यै**) इच्छा करने वा जानने को (**द्यावापृथिवी**) सूर्य और भूमि की (**यज्ञेषु**) विद्याप्रचारदि व्यवहारों में (**देवयन्तः**) कामना करते हुए (**वः**) तुम लोगों का (**प्रार्चन्**) अच्छा सत्कार करते हैं, उनका तुम भी सत्कार करो॥ १॥

भावार्थः-हे अतिथि विद्वानो! जैसे गृहस्थ जन अन्नादि पदार्थों के साथ आपका सत्कार करें, वैसे तुम विज्ञानदान से गृहस्थों को निरन्तर प्रसन्न करो॥ १॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहेत हैं॥

प्र य॒ज्ञ ए॑तु॒ हेत्वो॒ न सप्ति॒रुद्य॑च्छध्वं॒ सम॑नसो घृ॒ताचीः॑।
स्तृ॒णी॒त ब॒र्हिर॑ध्व॒राय॑ सा॒धूर्ध्वा शो॒चींषि॑ देव॒यून्य॑स्थुः॥ २॥

प्र। यज्ञः। एतु। हेत्वः। न। सप्तिः। उत्। यच्छध्वम्। सऽमनसः। घृताचीः। स्तृणीत। बर्हिः। अध्वराय। साधु। ऊर्ध्वा। शोचींषि। देवऽयूनि। अस्थुः॥ २॥

पदार्थः-(**प्र**) प्रकर्षे (**यज्ञः**) विज्ञानमयः संगन्तुमर्हः (**एतु**) प्राप्नोतु (**हेत्वः**) प्रवृद्धो वेगवान् (**न**) इव (**सप्तिः**) अश्वः (**उत्**) (**यच्छध्वम्**) उद्यमिनः कुरुत (**समनसः**) सज्ञानाः समानमनसः (**घृताचीः**) या घृतमुदकमञ्चन्ति ता रात्रीः। **घृताचीति रात्रिनाम।** (निघं १.७) (**स्तृणीत**) आच्छादयत (**बर्हिः**) अन्तरिक्षम् (**अध्वराय**) अहिंसामयाय यज्ञाय (**साधु**) समीचीनतया (**ऊर्ध्वा**) ऊर्ध्वं गन्तृणि (**शोचींषि**) तेजांसि (**देवयूनि**) देवान् दिव्यान् गुणान् कुर्वन्ति (**अस्थुः**) तिष्ठन्ति॥ २॥

अन्वयः-हे समनसो विद्वांसो! यान् युष्मान् यज्ञ एतु ते यूयं हेत्वस्सप्तिर्न सर्वान् प्रोद्यच्छध्वं यस्योर्ध्वा देवयूनि शोचींष्यस्थुस्तस्मादध्वराय यूयं घृताचीर्बहिश्च साधु स्तृणीत॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे गृहस्था! येन वायूदकौषधयः पवित्रा जायन्ते तं यज्ञं सततमनुतिष्ठन्तु यज्ञधूमेनान्तरिक्षमाच्छादयत, हे अतिथयो! यूयं सर्वान् मनुष्यान् सारथिरश्वानिव धर्मकृत्येषूद्यमिनः कृत्वैषामालस्यं दूरीकुरुत यदेतान् सकला श्रीः प्राप्नुयात्॥ २॥

पदार्थः-हे (**समनसः**) समान ज्ञान वा समान मन वाले विद्वानो! जिन आप लोगों को (**यज्ञः**) विज्ञानमय संग करने योग्य व्यवहार (**एतु**) प्राप्त हो वे आप लोग (**हेत्वः**) अच्छे बड़े हुए वेगवान् (**सप्तिः**) घोड़ा के (**न**) समान सब को (**प्र, उत्, यच्छध्वम्**) अतीव उद्यमी करो जिसके (**ऊर्ध्वा**) ऊपर जाने वाले (**देवयूनि**) दिव्य उत्तम गुणों को करते हुए (**शोचींषि**) तेज (**अस्थुः**) स्थिर होते हैं उससे (**अध्वराय**) अहिंसामय यज्ञ के लिये आप (**घृताचीः**) रात्रियों और (**बर्हिः**) अन्तरिक्ष को (**साधु**) समीचीनता से (**स्तृणीत**) आच्छादित करो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे गृहस्थो! जिससे वायु, जल और ओषधि पवित्र होती हैं, उस यज्ञ का निरन्तर अनुष्ठान करो, यज्ञ धूम से अन्तरिक्ष को ढांपो। हे अतिथियो! तुम सब मनुष्यों को सारथि, घोड़ों को जैसे, वैसे धर्म कामों में उद्यमी कर इनका आलस्य दूर करो, जिससे इनको समस्त लक्ष्मी प्राप्त हो॥ २॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ पुत्रासो न मातरं विभृत्राः सानौ देवासो बर्हिषः सदन्तु।
आ विश्वाची विदथ्यामनक्त्वग्ने मा नो देवताता मृधस्कः॥ ३॥

आ। पुत्रासः। न। मातरम्। विऽभृत्राः। सानौ। देवासः। बर्हिषः। सदन्तु। आ। विश्वाची। विदथ्याम्। अनक्तु। अग्ने। मा। नः। देवऽताता। मृधः। करिति कः॥ ३॥

पदार्थः-(**आ**) (**पुत्रासः**) पुत्राः (**न**) इव (**मातरम्**) (**विभृत्राः**) विशेषेण पोषकाः (**सानौ**) ऊर्ध्वे देशे (**देवासः**) विद्वांसः (**बर्हिषः**) प्रवृद्धाः (**सदन्तु**) आसीदन्तु (**आ**) (**विश्वाची**) या विश्वमञ्चति (**विदथ्याम्**) विदथेषु गृहेषु साध्वीं नीतिम् (**अनक्तु**) कामयताम् (**अग्ने**) विद्वन् (**मा**) (**नः**) अस्माकम्

(देवताता) दिव्यगुणप्रापके यज्ञे **(मृध्रः)** हिंस्रान् **(कः)** कुर्याः॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा विश्वाची विदथ्यामानक्तु तदुपदेशेन त्वं नो देवताता मृधो मा कः ये देवासो सानौ विभृत्राः पुत्रासो मातरन्न बर्हिषः आ सदन्तु ताँस्त्वं कामयस्व॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। सैव मातोत्तमा या ब्रह्मचर्येण विदुषी भूत्वा सन्तानान् सुशिक्ष्य विद्ययैषामुन्नतिं कुर्यात् स एव पिता श्रेष्ठोऽस्ति यो हिंसादिदोषरहितान् सन्तानान् कुर्यात् त एव विद्वांसः प्रशस्ताः सन्ति येऽन्यान् मनुष्यान् मातृवत् पालयन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान्! जैसे **(विश्वाची)** विश्व को प्राप्त होने वाली **(विदथ्याम्)** घरों में नीति को **(आ, अनक्तु)** सब ओर से चाहे उसके उपदेश से आप **(नः)** हमारे **(देवताता)** दिव्य गुणों की प्राप्ति कराने वाले यज्ञ में **(मृधः)** हिंसकों को **(मा)** मत **(कः)** करें जो **(देवासः)** विद्वान् जन **(सानौ)** ऊपर ले देश स्थान में **(विभृत्राः)** विशेष कर पुष्टि करने वाले **(पुत्रासः)** पुत्र जैसे **(मातरम्)** माता को **(न)** वैसे **(बर्हिषः)** उत्तम वृद्ध जन **(आ, सदन्तु)** स्थिर हों, उनकी आप कामना करें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। वही माता उत्तम है जो ब्रह्मचर्य से विदुषी होकर सन्तानों को अच्छी शिक्षा देकर विद्या से इनकी उन्नति करे, वही पिता श्रेष्ठ हैं जो हिंसादि दोषरहित सन्तान करे, वे ही विद्वान् प्रशंसा पाये हैं जो और मनुष्यों को माँ के समान पालते हैं॥३॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते सीषपन्त जोषमा यजत्रा ऋतस्य धाराः सुदुघा दुहानाः।
ज्येष्ठं वो अद्य मह आ वसूनामा गन्तन समनसो यति ष्ठ॥४॥

ते। सीषपन्त। जोषम्। आ। यजत्राः। ऋतस्य। धाराः। सुऽदुघाः। दुहानाः। ज्येष्ठम्। वः। अद्य। महः। आ। वसूनाम्। आ। गन्तन। सऽमनसः। यति। स्थ॥४॥

पदार्थः-**(ते)** **(सीषपन्त)** शपथान् कुरुत **(जोषम्)** पूर्णम् **(आ)** **(यजत्रा)** संगन्तारः **(ऋतस्य)** सत्यस्य **(धाराः)** वाचः **(सुदुघाः)** कामानां पूरयित्रीः **(दुहानाः)** पूर्णशिक्षाविद्याः **(ज्येष्ठम्)** **(वः)** युष्मान् **(अद्य)** **(महः)** महत् **(आ)** **(वसूनाम्)** धनानाम् **(आ)** **(गन्तन)** प्राप्नुत **(समनसः)** समानविज्ञानाः **(यति)** प्रयतन्ते यस्मिन् तस्मिन् **(स्थ)** भवत॥४॥

अन्वयः-ये यजत्रा जोषमासीषपन्त ते समनस ऋतस्य सुदुघा दुहाना धारा आ गन्तन यत्यास्थ हे धार्मिका! वो युष्मान् वसूनां महो ज्येष्ठमद्य प्राप्नोतु॥४॥

भावार्थः-ये सत्यवादिनः सत्यकर्तारः सत्यमन्तारो भवन्ति ते पूर्णकामा भूत्वा सर्वान् मनुष्यान् विदुषः कर्तुं शक्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-जो **(यजत्राः)** संग करने वाले **(जोषम्)** पूरी **(आ, सीषपन्त)** शौ **[**=शपथों को**]** करें **(ते)** वे **(समनसः)** एक से विज्ञान वाले जन **(ऋतस्य)** सत्य की **(सुदुघाः)** कामनाओं की पूरी करने वाली **(दुहानाः)** पूर्ण शिक्षा शिक्षायुक्त **(धाराः)** वाणियों को **(आ, गन्तन)** प्राप्त हों और **(यति)**

जिनमें यत्न करते हैं उस व्यवहार में **(आ, स्थ)** स्थिर हों, हे धार्मिक सज्जनो! **(वः)** तुम लोगों को **(वसूनाम्)** धनों का **(महः)** महान् **(ज्येष्ठम्)** प्रशंसित भाग **(अद्य)** आज प्राप्त हो॥४॥

भावार्थः-जो सत्य कहने, सत्य करने और सत्य मानने वाले होते हैं वे पूर्णकाम होकर सब मनुष्यों को विद्वान् कर सकते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा नो अग्ने विक्ष्वा दशस्य त्वया वयं सहसावन्नास्क्राः।
राया युजा सधमादो अरिष्टा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥५॥१०॥

एव। नः। अग्ने। विक्षु। आ। दशस्य। त्वया। वयम्। सहसाऽवन्। आस्क्राः। राया। युजा। सधऽमादः। अरिष्टाः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥५॥

पदार्थः-**(एवा)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(अग्ने)** विद्वन् **(विक्षु)** प्रजासु **(आ)** **(दशस्य)** देहि **(त्वया)** [त्वया] सह **(वयम्)** **(सहसावन्)** बहुबलयुक्त **(आस्क्राः)** समन्तादाहूताः **(राया)** धनेन **(युजा)** युक्तेन **(सधमादः)** समानस्थानाः **(अरिष्टाः)** अहिंसिताः **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥५॥

अन्वयः-हे सहसावन्नग्ने! त्वं विक्षु नो धनं दशस्य यतस्त्वया सह युजा वयं राया सधमाद आस्क्रा अरिष्टास्स्याम यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात तानेव वयमपि रक्षेमहि॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयमस्मान् विद्याः प्रदत्त येन वयं प्रजासूत्तमानि धनादीनि प्राप्य युष्मान् सततं रक्षेम॥५॥

अत्र विश्वेदेवगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति त्रिचत्वारिंशत्तमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सहसावन्)** बहुबलयुक्त **(अग्ने)** विद्वान्! आप **(विक्षु)** प्रजाजनों में **(नः)** हम लोगों को धन **(दशस्य)** देओ जिससे **(त्वया)** तुम्हारे साथ **(युजा)** युक्त **(वयम्)** हम लोग **(राया)** धन से **(सधमादः)** तुल्य स्थान वाले **(आस्क्राः)** सब ओर से बुलावें और **(अरिष्टाः)** अविनष्ट हों **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदा **(पात)** रक्षा करो **(एव)** उन्हीं की हम लोग भी रक्षा करें॥५॥

भावार्थः-हे विद्वानो! तुम हम को विद्या देओ, जिससे हम लोग प्रजाजनों में उत्तम धन आदि पाकर तुम्हारी सदैव रक्षा करें॥५॥

इस सूक्त में विश्वेदेवों के गुण और कामों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह तयालीसवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य [चतुश्चत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। लिङ्गोक्ता देवताः। १ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। २, ३ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४, ५ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

मनुष्यैः सृष्टिविद्यया सुखं वर्धनीयमित्याह॥

अब चवालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को सृष्टिविद्या से सुख बढ़ाना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

द॒धि॒क्रां व॑ः प्रथ॒मम॒श्विनो॒षस॑म॒ग्निं समि॑द्धं॒ भग॑मू॒तये॑ हुवे।

इन्द्रं॒ विष्णुं॑ पू॒षणं॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॑मादि॒त्यान् द्यावा॑पृथि॒वी अ॒पः स्व॑ः॥ १॥

द॒धि॒ऽक्राम्। व॒ः। प्र॒थ॒मम्। अ॒श्विना॑। उ॒षस॑म्। अ॒ग्निम्। सम्ऽइ॑द्धम्। भग॑म्। ऊ॒तये॑। हु॒वे॒। इन्द्र॑म्। विष्णु॑म्। पू॒षण॑म्। ब्रह्म॑णः। पति॑म्। आ॒दि॒त्यान्। द्यावा॑पृथि॒वी इति॑। अ॒पः। स्व॒रिति॑ स्व॑ः॥ १॥

पदार्थः-(**दधिक्राम्**) यो धारकान् क्रामति (**वः**) युष्मान् (**प्रथमम्**) आदिमम् (**अश्विना**) सूर्याचन्द्रमसौ (**उषसम्**) प्रभातवेलाम् (**अग्निम्**) पावकम् (**समिद्धम्**) प्रदीप्तम् (**भगम्**) ऐश्वर्यम् (**ऊतये**) धनाढ्याय (**हुवे**) आददे (**इन्द्रम्**) विद्युतम् (**विष्णुम्**) व्यापकं वायुम् (**पूषणम्**) पुष्टिकरमोषधिगणम् (**ब्रह्मणस्पतिम्**) ब्रह्माण्डस्य स्वामिनं परमात्मानम् (**आदित्यान्**) सर्वान् मासान् (**द्यावापृथिवी**) सूर्यभूमी (**अपः**) जलम् (**स्वः**) सुखम्॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथोतयेऽहं वः प्रथमं दधिक्रामश्विनोषसं समिद्धमग्निं भगमिन्द्रं विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिमादित्यान् द्यावापृथिवी अपः स्वश्च हुवे तथा मदर्थं यूयमप्येतद्विद्यामादत्त॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यथा विद्वांस आदितः भूम्यादिविद्यां संगृह्य कार्यसिद्धिं कुर्वन्ति तथा यूयमपि कुरुत॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे (**ऊतये**) धनादि के लिए मैं (**वः**) तुम लोगों को और (**प्रथमम्**) पहिले (**दधिक्राम्**) जो धारण करने वालों को क्रम से प्राप्त होता उसे (**अश्विना**) सूर्य और चन्द्रमा (**उषसम्**) प्रभातवेला (**समिद्धम्**) प्रदीप्त (**अग्निम्**) अग्नि (**भगम्**) ऐश्वर्य्य (**इन्द्रम्**) बिजुली (**विष्णुम्**) व्यापक वायु (**पूषणम्**) पुष्टि करने वाले ओषधिगण (**ब्रह्मणस्पतिम्**) ब्रह्माण्ड के स्वामी (**आदित्यान्**) सब महीने (**द्यावापृथिवी**) सूर्य और भूमि (**अपः**) जल और (**स्वः**) सुख को (**हुवे**) ग्रहण करता हूँ, वैसे ही मेरे लिये इस विद्या को आप भी ग्रहण करें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन प्रथम से भूमि आदि की विद्या का संग्रह करके कार्यसिद्धि करते हैं, वैसे तुम भी करो॥ १॥

पुनर्विद्वांसः कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द॒धि॒क्रामु॒ नम॑सा बो॒धय॑न्त उ॒दीरा॑णा य॒ज्ञमु॑पप्र॒यन्त॑ः।

इळां॑ दे॒वीं ब॒र्हिषि॑ सा॒दय॑न्तो॒ऽश्विना॒ विप्रा॑ सु॒हवा॑ हुवेम॥ २॥

दधिऽक्राम्। ॐ इति। नमसा। बोधयन्तः। उत्ऽईराणाः। यज्ञम्। उपऽप्रयन्तः। इळाम्। देवीम्। बर्हिषि। सादयन्तः। अश्विना। विप्रा। सुऽहवा। हुवेम॥ २॥

पदार्थः-(**दधिक्राम्**) पृथिव्यादिधारकाणां क्रमितारम् (उ) (**नमसा**) अन्नाद्येन सत्कारेण वा (**बोधयन्तः**) (**उदीराणाः**) उत्कृष्टं ज्ञानं प्राप्ताः (**यज्ञम्**) संगतिकरणाख्यम् (**यज्ञम्**) (**उपप्रयन्तः**) प्रयत्नेनोपायं कुर्वन्तः (**इळाम्**) प्रशंसनीयां वाचम् (**देवीम्**) दिव्यगुणकर्मस्वभावाम् (**बर्हिषि**) वृद्धिकरे व्यवहारे (**सादयन्तः**) (**अश्विना**) अध्यापकोपदेशकौ (**विप्रा**) मेधाविनौ विपश्चितौ (**सुहवा**) शोभनानि हवान्याह्वानानि ययोस्तौ (**हुवेम**) प्रशंसेम॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा नमसा दधिक्रां बोधयन्त उदीराणा यज्ञमुप प्रयन्त उ देवीमिळां बर्हिषि सादयन्तो वयं सुहवाऽश्विना विप्रा हुवेम तथैतौ यूयमप्याह्वयत॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमलाङ्कारः। त एव विद्वांसो जगद्धितैषिणस्सन्ति ये सर्वत्र विद्याः प्रसारयन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**नमसा**) अन्नादि से वा सत्कार से (**दधिक्राम्**) पृथिवी आदि के धारण करने वालों को (**बोधयन्तः**) बोध दिलाते हुए (**उदीराणाः**) उत्कृष्ट ज्ञान को प्राप्त (**यज्ञम्**) यज्ञ का (**उपप्रयन्तः**) प्रयत्न करते (उ) और (**देवीम्**) दिव्य गुण-कर्म-स्वभाव वाली (**इळाम्**) प्रशंसनीय वाणी को (**बर्हिषि**) वृद्धि करने वाले व्यवहार में (**सादयन्तः**) स्थिर कराते हुए हम लोग (**सुहवा**) शुभ बुलाने जिनके उन (**अश्विना**) पढ़ाने और उपदेश करने वाले (**विप्रा**) बुद्धिमान् पण्डितों की (**हुवेम**) प्रशंसा करें, वैसे उनकी तुम भी प्रशंसा करो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही विद्वान् जन जगत् के हितैषी होते हैं, जो सब जगह विद्या फैलाते हैं॥ २॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दधिक्रावाणं बुबुधानो अग्निमुप ब्रुव उषसं सूर्यं गाम्।
ब्रध्नं मंश्चतोर्वरुणस्य बभ्रुं ते विश्वास्मद्दुरिता यावयन्तु॥ ३॥

दधिऽक्रावाणम्। बुबुधानः। अग्निम्। उप। ब्रुवे। उषसम्। सूर्यम्। गाम्। ब्रध्नम्। मंश्चतोः। वरुणस्य। बभ्रुम्। ते। विश्वा। अस्मत्। दुःऽइता। ययवन्तु॥ ३॥

पदार्थः-(**दधिक्रावाणम्**) धारकाणां यानानां क्रामयितारं गमयितारम् (**बुबुधानः**) विजानन् (**अग्निम्**) वह्निम् (**उप**) (**ब्रुवे**) उपदिशामि (**उषसम्**) प्रभातवेलाम् (**सूर्यम्**) सूर्यलोकम् (**गाम्**) भूमिम् (**ब्रध्नम्**) महान्तम् (**मंश्चतोः**) मन्यमानान् विदुषो याचमानस्य (**वरुणस्य**) प्रेष्ठस्य (**बभ्रुम्**) धारकं पोषकं वा (**ते**) (**विश्वा**) विश्वानि सर्वाणि (**अस्मत्**) अस्माकं सकाशात् (**दुरिता**) दुरितानि दुष्टाचरणानि (**यावयन्तु**) दूरीकुर्वन्तु। अत्र **संहितायामि**त्याद्यचो दीर्घत्वम्॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! दधिक्रावाणमग्निमुषसं ब्रध्नं सूर्यं गां मंश्चतोर्वरुणस्य बभ्रुं च यान् युष्मान्

प्रत्युप ब्रुवे ते भवन्तोऽस्मत्तद्विश्वा दुरिता यावयन्तु॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽऽप्ता विद्वांसस्सर्वेभ्यो विद्याऽभयदाने कृत्वा पापाचरणात् पृथक् कुर्वन्ति तथा सर्वे विद्वांसः कुर्युः॥३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(दधिक्रावाणाम्)** धारण करने वाले यानों को चलाने वाले **(अग्निम्)** आग **(उषसम्)** प्रभातवेला **(ब्रध्नम्)** महान् **(सूर्यम्)** सूर्यलोक **(गाम्)** भूमि को **(मंश्चतोः)** मानते हुए विद्वानों को मांगने वाले **(वरुणस्य)** श्रेष्ठ जन के **(बभ्रुम्)** धारण वा पोषण करने वाले को तथा जिनको आपके प्रति **(उप, ब्रुवे)** उपदेश करता हूँ **(ते)** वे आप लोग **(अस्मत्)** हम से **(विश्वा)** सब **(दुरिता)** दुष्ट आचरणों को **(यावयन्तु)** दूर करें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे आप्त विद्वान् सब के लिए विद्या और अभयदान देकर पाप के आचरण से उन्हें अलग करते हैं, वैसे सब विद्वान् करें॥३॥

पुनर्विद्वान् किं विज्ञाय किं कुर्यादित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या जान कर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दधिक्रावा प्रथमो वाज्यर्वाग्रे रथानां भवति प्रजानन्।
संविदान उषसा सूर्येणादित्येभिर्वसुभिरङ्गिरोभिः॥४॥

दधिऽक्रावा। प्रथमः। वाजी। अर्वा। अग्रे। रथानाम्। भवति। प्रऽजानन्। सम्ऽविदानः। उषसा। सूर्येण। आदित्येभिः। वसुऽभिः। अङ्गिरःऽभिः॥४॥

पदार्थः-**(दधिक्रावा)** धारकाणां गमयिता **(प्रथमः)** आदिमः साधकः **(वाजी)** वेगवान् **(अर्वा)** प्राप्तप्रेरणः **(अग्रे)** पुरस्सरम् **(रथानाम्)** रमणीयानां यानानाम् **(भवति)** **(प्रजानन्)** प्रकर्षेण जानन् **(संविदानः)** सम्यग्विज्ञानं कुर्वन् **(उषसा)** प्रातर्वेलया **(सूर्येण)** सवित्रा **(आदित्येभिः)** संवत्सरस्य मासैः **(वसुभिः)** पृथिव्यादिभिः **(अङ्गिरोभिः)** वायुभिः॥४॥

अन्वयः-यो दधिक्रावा प्रथमो वाज्यर्वाग्निरुषसा सूर्येणादित्येभिर्वसुभिरङ्गिरोभिस्सहितस्सन् रथानामग्रे वोढा भवति तं प्रजानन् संविदानस्सन् विद्वान् सम्प्रयुञ्जीत॥४॥

भावार्थः-येऽग्निविद्या जानन्ति ते यानानां सद्यो गमयितारो भवन्ति॥४॥

पदार्थः-जो **(दधिक्रावा)** धारण करने वालों को पहुँचाने और **(प्रथमः)** प्रथम सिद्ध करने वाला **(वाजी)** वेगवान् **(अर्वा)** प्रेरणा को प्राप्त अग्नि **(उषसा)** प्रातःकाल की बेला **(सूर्येण)** सूर्यलोक **(आदित्येभिः)** संवत्सर के महीनों **(वसुभिः)** पृथिवी आदि लोकों और **(अङ्गिरोभिः)** पवनों के सहित होता हुआ **(रथानाम्)** रमणीय यानों के **(अग्रे)** आगे बहाने वाला **(भवति)** होता है उसको **(प्रजानन्)** उत्तमता से जानता और **(संविदानः)** अच्छे प्रकार उसका विज्ञान करता हुआ विद्वान् जन अच्छा प्रयोग करे॥४॥

भावार्थः-जो अग्निविद्या को जानते हैं, वे रथों के शीघ्र चलाने वाले होते हैं॥४॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नो दधिक्राः पथ्यामनक्त्वृतस्य पन्थामन्वेतवा उ।
शृणोतु नो दैव्यं शर्धो अग्निः शृण्वन्तु विश्वे महिषा अमूराः॥५॥११॥

आ। नः। दधिऽक्राः। पथ्याम्। अनक्तु। ऋतस्य। पन्थाम्। अनुऽएतवै। ऊँ इति। शृणोतु। नः। दैव्यम्। शर्धः। अग्निः। शृण्वन्तु। विश्वे। महिषाः। अमूराः॥५॥

पदार्थः-(**आ**) (**नः**) (**दधिक्राः**) अश्व इव धारकान् क्रामयिता गमयिता (**पथ्याम्**) पथि साध्वीं गतिम् (**अनक्तु**) कामयताम् (**ऋतस्य**) सत्यस्योदकस्य वा (**पन्थाम्**) पन्थानम् (**अन्वेतवै**) अन्वेतुमनुगन्तुम् (**उ**) (**शृणोतु**) (**नः**) अस्माकम् (**दैव्यम्**) देवैर्विद्वद्भिर्निष्पादितम् (**शर्धः**) शरीरात्मबलम् (**अग्निः**) विद्युदिव (**शृण्वन्तु**) (**विश्वे**) सर्वे (**महिषाः**) महान्तः (**अमूराः**) अमूढा विद्वांसः॥५॥

अन्वयः-हे विद्वान्! भवान् दधिक्राः पथ्यामिव नोऽस्मानृतस्य पन्थामन्वेतवा आ अनक्तु अग्निरिव सद्यो गच्छतु नो दैव्यं शर्धः शृणोतु महिषा विश्वेऽमूराः विद्वांसो नो दैव्यं वचः शृण्वन्तु॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यथा परीक्षको न्यायेशो राजा वा सर्वेषां वचांसि श्रुत्वा सत्याऽसत्ये निश्चिनोति अग्न्यादिप्रयोगेण पन्थानं सद्यो गच्छन्ति तथैव यूयं विद्वद्भ्यः श्रुत्वा धर्म्येण मार्गेण व्यवहृत्य मौढ्यं त्यजत त्याजयत॥५॥

अत्राग्न्यश्वादिगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति चतुश्चत्वारिंशत्तमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वान्! आप (**दधिक्राः**) घोड़े के समान धारण करने वालों को चलाने वाले (**पथ्याम्**) मार्ग में सिद्धि करने वाली गति के समान (**नः**) हम लोगों के (**ऋतस्य**) सत्य वा जल (**पन्थाम्**) मार्ग के (**अन्वेतवै**) पीछे जाने को (**आ, अनक्तु**) कामना करें (**उ**) और (**अग्निः**) बिजुली के समान शीघ्र जावे और (**नः**) हमारे (**दैव्यम्**) विद्वानों ने उत्पन्न किये (**शर्धः**) शरीर और आत्मा के बल को (**शृणोतु**) सुने (**महिषाः**) महान् (**विश्वे**) सब (**अमूराः**) अमूढ़ अर्थात् विज्ञानवान् जन हमारे विद्वानों ने **[=के]** सिद्ध किये हुए वचन को (**शृण्वन्तु**) सुनें॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे परीक्षक न्यायधीश वा राजा सब के वचनों को सुन के सत्य और असत्य का निश्चय करता और अग्नि आदि का प्रयोग कर शीघ्र मार्ग को जाता है, वैसे ही तुम लोग विद्वानों से सुन कर धर्मयुक्त मार्ग से अपना व्यवहार कर मूढ़ता छोड़ने और छुड़ाओ॥५॥

इस सूक्त में अग्निरूपी घोड़ों के गुण और कामों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चवालीसवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ चतुर्ऋचस्य पञ्चचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। सविता देवता। २ त्रिष्टुप्। ३, ४ निचृत्त्रिष्टुप्। १ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनर्विद्वांसः किंवत् किं कुर्युरित्याह॥

अब पैंतालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर विद्वान् जन किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

आ देवो यातु सविता सुरत्नोऽन्तरिक्षप्रा वहमानो अश्वैः।
हस्ते दधानो नर्या पुरूणि निवेशयञ्च प्रसुवञ्च भूम॥ १॥

आ। देवः। यातु। सविता। सुऽरत्नः। अन्तरिक्षऽप्राः। वहमानः। अश्वैः। हस्ते। दधानः। नर्या। पुरूणि। निऽवेशयन्। च। प्रऽसुवन्। च। भूम॥ १॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(देवः)** दाता दिव्यगुणः **(यातु)** आगच्छतु **(सविता)** सकलैश्वर्यप्रदः **(सुरत्नः)** शोभनं रत्नं रमणीयं धनं यस्मादस्य वा **(अन्तरिक्षप्राः)** योऽन्तरिक्षं प्राति व्याप्नोति **(वहमानः)** प्राप्नुवन् प्रापयन् **(अश्वैः)** किरणैरिव महद्भिरग्निजलादिभिः **(हस्ते)** करे **(दधानः)** धरन् **(नर्या)** नृभ्यो हितानि **(पुरूणि)** बहूनि **(निवेशयन्)** प्रवेशयन् **(च)** **(प्रसुवन्)** प्रसुवन्ति यस्मिन् तदैश्वर्यम् **(च)** **(भूम)** भवेम॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! सुरत्नस्सविता देवोऽन्तरिक्षप्रा अश्वैर्भूगोलान् वहमानः पुरूणि नर्या दधानो निवेशयन् प्रसुवं याति तथा सर्वमेतत्प्रापयंश्चैश्वर्यं हस्ते दधानो विद्वानायातु तेन सह वयञ्चेदृशा भूम॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सूर्यवच्छुभगुणकर्मप्रकाशिता मनुष्यादिहितं कुर्वन्ति ते बहैश्वर्यं प्राप्नुवन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(सुरत्नः)** जिसके वा जिससे सुन्दर रमणीय धन होता **(सविता)** जो सकलैश्वर्य्य देने वाला **(देवः)** दाता दिव्य गुणवान् **(अन्तरिक्षप्राः)** अन्तरिक्ष को व्याप्त होता **(अश्वैः)** किरणों के समान महान् अग्नि जल आदिकों से भूगोलों को **(वहमानः)** पहुँचता वा पहुँचता **(पुरूणि)** बहुत **(नर्या)** मनुष्यों के लिये हितों को **(दधानः)** धारण करता और **(निवेशयन्)** प्रवेश करता हुआ **(प्रसुवम्)** जिसमें नाना रूप उत्पन्न होते हैं उस ऐश्वर्य को प्राप्त होता है, वैसे इससे प्राप्त कराता हुआ **(च)** और ऐश्वर्य को **(हस्ते)** हाथ में धारण करता हुआ विद्वान् **(आ, यातु)** आवे, उसके साथ हम लोग **(च)** भी वैसे ही **(भूम)** होवें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य के तुल्य शुभ गुण और कर्म से प्रकाशित, मनुष्यादि प्राणियों का हित करते हैं, वे बहुत ऐश्वर्य पाते हैं॥ १॥

पुना राजादिजनः कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर राजादि जन कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

उदस्य बाहू शिथिरा बृहन्ता हिरण्यया दिवो अन्ताँ अनष्टाम्।
नूनं सो अस्य महिमा पनिष्ट सूरश्चिदस्मा अनु दादपस्याम्॥ २॥

उत्। अस्य। बाहू इति। शिथिरा। बृहन्ता। हिरण्यया। दिवः। अन्तान्। अनष्टाम्। नूनम्। सः। अस्य। महिमा। पनिष्ट। सूरः। चित्। अस्मै। अनु। दात्। अपस्याम्॥ २॥

पदार्थः-(**उत्**) (**अस्य**) पूर्णविद्यस्य (**बाहू**) भुजौ (**शिथिरा**) शिथिलौ दृढौ (**बृहन्ता**) महान्तौ (**हिरण्यया**) हिरण्यया भूषणयुक्तौ (**दिवः**) प्रकाशस्य (**अन्तान्**) समीपस्थान् (**अनष्टाम्**) प्रसिद्धाम् (**नूनम्**) निश्चयः (**सः**) (**अस्य**) (**महिमा**) महती प्रशंसा (**पनिष्ट**) पन्यते स्तूयते (**सूरः**) सूर्यः (**चित्**) इव (**अस्मै**) (**अनु**) (**दात्**) (**अपस्याम्**) आत्मनः कर्मेच्छाम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! यः सूरश्चिदिवास्मा अपस्यामनु दात् यस्यास्य स महिमाऽस्माभिर्नूनं पनिष्ट यस्यास्य दिवोऽन्तान् हिरण्यया बृहन्ता शिथिरा बाहू उदनष्टां स एवाऽस्माभिः प्रशंसनीयोऽस्ति॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यस्य सूर्यवन्महिमा प्रतापः सर्वबलयुक्तौ बाहू वर्तेते स एवास्य राष्ट्रस्य मध्ये महीयते॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**सूरः**) सूर्य के (**चित्**) समान (**अस्मै**) इस विद्वान् के लिये (**अपस्याम्**) अपने को कर्म की इच्छा (**अनु, दात्**) अनुकूल दे जिस (**अस्य**) इसकी (**सः**) वह (**महिमा**) अत्यन्त प्रशंसा हम लोगों से (**नूनम्**) निश्चय (**पनिष्ट**) स्तुति की जाती है जिस (**अस्य**) इस (**दिवः**) प्रकाश के (**अन्तान्**) समीपस्थ पदार्थ वा (**हिरण्यया**) हिरण्य आदि आभूषणयुक्त (**बृहन्ता**) महान् (**शिथिरा**) शिथिल दृढ़ (**बाहू**) भुजा (**उत्, अनष्टाम्**) उत्तमता से प्रसिद्ध होती, वही हम लोगों से प्रशंसा करने योग्य है॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिसका सूर्य के समान महिमा, प्रताप, सर्व बलयुक्त बाहू वर्तमान हैं, वही इस राज्य के बीच पूजित होता है॥ २॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स घा नो देवः सविता सहावा साविषद्वसुपतिर्वसूनि।
विश्रयमाणो अमतिमुरूचीं मर्तभोजनमध रासते नः॥ ३॥

सः। घ। नः। देवः। सविता। सहऽवा। आ। साविषत्। वसुऽपतिः। वसूनि। विऽश्रयमाणः। अमतिम्। उरूचीम्। मर्तऽभोजनम्। अध। रासते। नः॥ ३॥

पदार्थः-(**सः**) (**घा**) एव। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**देवः**) कमनीयः (**सविता**) ऐश्वर्यवान् सूर्यवत्प्रकाशमानः (**सहावा**) यः सहैव वनति संभजति (**आ**) समन्तात् (**साविषत्**) सुवेत् (**वसुपतिः**) धनपालकः (**वसूनि**) धनानि (**विश्रयमाणः**) (**अमतिम्**) सुन्दरं रूपम्। **अमतिरिति रूपनाम**। (निघं०३.७) (**उरूचीम्**) उरूणि बहूनि वस्तून्यञ्चन्तीम् (**मर्तभोजनम्**) मर्त्येभ्यो भोजनं मर्तभोजनम् मनुष्याणां पालनं वा (**अध**) अथ (**रासते**) ददाति (**नः**) अस्मभ्यम्॥ ३॥

अन्वयः-यो वसुपतिरुरूचीममतिं विश्रयमाणो नो मर्तभोजनं रासते स घाश्च सविता सहावा देवो नो वसून्या साविषत्॥ ३॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सूर्यवत्सर्वेषां धनानि वर्धयित्वा सुपात्रेभ्यः प्रयच्छन्ति ते धनपतयो भवन्ति॥३॥

पदार्थः-जो **(वसुपतिः)** धनों की पालना करने वाला **(उरूचीम्)** बहुतों वस्तुओं को प्राप्त होता और **(अमतिम्)** सुन्दररूप को **(विश्रयमाणः)** विशेष सेवन करता हुआ **(नः)** हम लोगों को **(मर्तभोजनम्)** मनुष्यों का हितकारक भोजन व मनुष्यों का पालन **(रासते)** देता है **(स, घा, अध)** वही पीछे **(सविता)** ऐश्वर्य्यवान् सूर्य के समान प्रकाशमान **(सहावा)** साथ सेवने वाला **(देवः)** मनोहर विद्वान् **(नः)** हमको **(वसूनि)** धन **(आ, साविषत्)** प्राप्त करे॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य सूर्य के समान सब के धनों को बढ़ा कर सुपात्रों के लिये देते हैं, वे धनपति होते हैं॥३॥

पुनर्धार्मिकाः विद्वांसः काभिः स्तूयन्त इत्याह॥

फिर धार्मिक विद्वान् जन किनसे स्तुति किये जावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमा गिरः सवितारं सुजिह्वं पूर्णगभस्तिमीळते सुपाणिम्।
चित्रं वयो बृहदस्मे दधातु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥४॥१२॥

इमाः। गिरः। सवितारम्। सुऽजिह्वम्। पूर्णऽगभस्तिम्। ईळते। सुऽपाणिम्। चित्रम्। वयः। बृहत्। अस्मे इति। दधातु। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥४॥

पदार्थः-**(इमाः)** **(गिरः)** विद्याशिक्षायुक्ता धर्म्या वाचः **(सवितारम्)** ऐश्वर्यवन्तम् **(सुजिह्वम्)** शोभना जिह्वा यस्य तम् **(पूर्णगभस्तिम्)** पूर्णा गभस्तयो रश्मयो यस्य सूर्यस्य तद्वद्वर्तमानम् **(ईळते)** प्रशंसन्ति **(सुपाणिम्)** शोभनौ पाणी हस्तौ यस्य तम् **(चित्रम्)** अद्भुतम् **(वयः)** जीवनम् **(बृहत्)** महत् **(अस्मे)** अस्मासु **(दधातु)** **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)**॥४॥

अन्वयः-योऽस्मे बृहच्चित्रं वयो दधातु तं सुपाणिं पूर्णगभस्तिमिव सवितारं सुजिह्वं धार्मिकं नरमिमा गिर ईळते, हे विद्वांसो! यूयं विद्यायुक्तवाणीवत्स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥४॥

भावार्थः-सद्भिर्विद्यया धार्मिकाः पुरुषा जायन्ते धर्मात्मानमेव विद्या सर्वसुखानि चाप्नुवन्ति॥४॥

अत्र सवितृवद्विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति पञ्चचत्वारिंशत्तमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो **(अस्मे)** हम लोगों में **(बृहत्)** बहुत **(चित्रम्)** अद्भुत **(वयः)** आयु को **(दधातु)** धारण करे उस **(सुपाणिम्)** सुन्दर हाथों वाले **(पूर्णगभस्तिम्)** पूर्ण रश्मि जिसकी उस सूर्यमण्डल के समान वर्त्तमान **(सवितारम्)** ऐश्वर्ययुक्त **(सुजिह्वम्)** सुन्दर जीभ रखते हुए धार्मिक मनुष्य की **(इमाः)** यह **(गिरः)** विद्या शिक्षा और धर्मयुक्त वाणी **(ईळते)** प्रशंसा करती हैं, हे विद्वानो! **(यूयम्)**

तुम विद्यायुक्त वाणी के समान **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदैव **(पात)** रक्षा करो॥४॥

भावार्थः-अच्छी विद्या से धार्मिक पुरुष होते हैं, धर्मात्मा पुरुष ही को विद्या और सर्व सुख प्राप्त होते हैं॥४॥

इस सूक्त में सविता के तुल्य विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह पैंतालीसवां सूक्त और बारहवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ चतुर्ऋचस्य [षट्चत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। रुद्रो देवता। २ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। १ विराड् जगती। ३ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ४ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनर्योद्धारः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

अब छयालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में योद्धाजन कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

इमा रुद्राय स्थिरधन्वने गिरः क्षिप्रेषवे देवाय स्वधाव्ने।
अषाळ्हाय सहमानाय वेधसे तिग्मायुधाय भरता शृणोतु नः॥ १॥

इमाः। रुद्राय। स्थिरऽधन्वने। गिरः। क्षिप्रऽइषवे। देवाय। स्वधाऽव्ने। अषाळ्हाय। सहमानाय। वेधसे। तिग्मऽआयुधाय। भरत। शृणोतु। नः॥ १॥

पदार्थः-(**इमाः**) (**रुद्राय**) शत्रूणां रोदकाय शूरवीराय (**स्थिरधन्वने**) स्थिरं दृढं धनुर्यस्य तस्मै (**गिरः**) वाचः (**क्षिप्रेषवे**) क्षिप्राः शीघ्रगामिन इषवः शस्त्रास्त्राणि यस्य तस्मै (**देवाय**) विदुषे न्यायं कामयमानाय (**स्वधाव्ने**) यः स्वं वस्त्वेव दधाति यः स्वां धार्मिकां क्रियां दधाति तस्मै (**अषाळ्हाय**) शत्रुभिरसहमानाय (**सहमानाय**) शत्रून् सोढुं समर्थाय (**वेधसे**) मेधाविने (**तिग्मायुधाय**) तिग्मानि तीव्राण्यायुधानि यस्य तस्मै (**भरता**) धरत। अत्र संहितायामिति दीर्घः। (**शृणोतु**) (**नः**) अस्माकम्॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यस्मै स्थिरधन्वने क्षिप्रेषवे स्वधाव्नेऽषाळ्हाय सहमानाय तिग्मायुधाय वेधसे रुद्राय देवायेमा गिरो यूयं भरता स नोऽस्माकमिमा गिरः शृणोतु॥ १॥

भावार्थः-ये दुष्टानां शासितारः शस्त्रास्त्रविदः सोढारो युद्धकुशला विद्वांसः सन्ति तान् सदा धनुर्वेदाध्यापनेन तदर्थगर्भितवक्तृत्वेन विद्वांसः प्रोत्साहयन्तु यश्च सेनेशः स प्रजास्थानां वाचः शृणोतु॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जिस (**स्थिरधन्वने**) स्थिरधनुष् वाले (**क्षिप्रेषवे**) शीघ्र जाने वाले शस्त्र अस्त्रों वाले (**स्वधाव्ने**) तथा अपनी ही वस्तु और अपनी धार्मिक क्रिया को धारण करने वाले (**अषाळ्हाय**) शत्रुओं से न सहे जाते हुए (**सहमानाय**) शत्रुओं के सहने को समर्थ (**तिग्मायुधाय**) तीव्र आयुध शस्त्रयुक्त (**वेधसे**) मेधावी (**रुद्राय**) शत्रुओं को रुलाने वाले शूरवीर (**देवाय**) न्याय की कामना करते हुए विद्वान् के लिये (**इमाः**) इन (**गिरः**) वाणियों को (**भरत**) धारण करो वह (**नः**) हम लोगों की इन वाणियों को (**शृणोतु**) सुने॥ १॥

भावार्थः-जो दुष्टों के शिक्षा देने वाले, शस्त्र और अस्त्रवेत्ता, सहनशील, युद्धकुशल विद्वान् हैं, उनको सर्वदैव धनुर्वेद पढ़ाने से और उसके अर्थ से भरी हुई वक्तृता से विद्वान् जन अत्यन्त उत्साह दें और जो सेनापति है, वह प्रजास्थ पुरुषों की वाणी सुने॥ १॥

पुनस्ते राजादयः कीदृशास्सन्तः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे राजा आदि जन कैसे हुए क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स हि क्षयेण क्षम्यस्य जन्मनः साम्राज्येन दिव्यस्य चेतति।
अवन्नवन्तीरुप नो दुरश्चरानमीवो रुद्र जासु नो भव॥२॥

सः। हि। क्षयेण। क्षम्यस्य। जन्मनः। साम्ऽराज्येन। दिव्यस्य। चेतति। अवन्। अवन्तीः। उप। नः। दुरः। चर। अनमीवः। रुद्र। जासु। नः। भव॥२॥

पदार्थः-(**सः**) (**हि**) यतः (**क्षयेण**) निवासेन (**क्षम्यस्य**) क्षन्तुमर्हस्य (**जन्मनः**) प्रादुर्भावस्य (**साम्राज्येन**) सम्यग्राजमानस्य प्रकाशितेन राष्ट्रेण (**दिव्यस्य**) दिवि शुद्धगुणकर्मस्वभावे भवस्य (**चेतति**) संजानीते (**अवन्**) रक्षन् (**अवन्तीः**) रक्षन्तीः सेनाः प्रजा वा (**उप**) (**नः**) अस्माकम् (**दुरः**) द्वाराणि (**चर**) (**अनमीवः**) अविद्यमानरोगः (**रुद्र**) दुष्टानां रोदक (**जासु**) यासु प्रजासु। अत्र वर्णव्यत्ययेन यस्य स्थाने जः। (**नः**) अस्माकम् (**भव**)॥२॥

अन्वयः-हे रुद्र! यो भवान्नोऽवन्तीरवन् दुर उप चरानमीवस्सन् हि क्षयेण क्षम्यस्य दिव्यस्य जन्मनः साम्राज्येनास्मांश्चेतति स त्वं नो जासु रक्षको भव॥२॥

भावार्थः-यो विद्वान् रक्षिकाः सेनाः प्रजाः रक्षन् प्रतिगृहस्थस्य व्यवहारं विजानन् दुःखानि क्षयन् दिव्यं सुखं जनयन् साम्राज्यं कर्तुं शक्नोति स एव प्रजापालको भवतीति सर्वे निश्चिन्वन्तु॥२॥

पदार्थः-हे (**रुद्र**) दुष्टों को रुलाने वाले! जो आप (**नः**) हमारी (**अवन्तीः**) रक्षा करती हुई सेना वा प्रजाओं की (**अवन्**) पालना करते हुए (**दुरः**) द्वारों के (**उप, चर**) समीप जाओ और (**अनमीवः**) नीरोग होते हुए (**हि**) जिस कारण (**क्षयेण**) निवास से (**क्षम्यस्य**) क्षमा करने योग्य (**दिव्यस्य**) शुद्ध गुण-कर्म-स्वभाव में प्रसिद्ध हुए (**जन्मनः**) जन्म के (**साम्राज्येन**) सुन्दर प्रकाशमान के प्रकाशित राज्य से हम लोगों को (**चेतति**) अच्छे प्रकार चेताते हैं (**सः**) वह आप (**नः**) हम लोगों की (**जासु**) प्रजाओं में रक्षा करने वाला (**भव**) हूजिये॥२॥

भावार्थः-जो विद्वान् रक्षा करने वाली सेना वा प्रजाओं की रक्षा करता हुआ प्रत्येक गृहस्थ के व्यवहार को विशेष जानता, दुःखों को नाश करता और सुखों को उत्पन्न करता हुआ अच्छे प्रकार राज्य कर सकता है, वही प्रजाजनों की पालना करने वाला है, यह सब निश्चय करें॥२॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

या ते दिद्युदवसृष्टा दिवस्परि क्ष्मया चरति परि सा वृणक्तु नः।
सहस्रं ते स्वपिवात भेषजा मा नस्तोकेषु तनयेषु रीरिषः॥३॥

या। ते। दिद्युत्। अवऽसृष्टा। दिवः। परि। क्ष्मया। चरति। परि। सा। वृणक्तु। नः। सहस्रम्। ते। सुऽअपिवात। भेषजा। मा। नः। तोकेषु। तनयेषु। रिरिषः॥३॥

पदार्थः-(**या**) (**ते**) तव (**दिद्युत्**) न्यायदीप्तिः (**अवसृष्टाः**) शत्रुप्रेरिता (**दिवः**) कमनीयस्य (**परि**) सर्वतः (**क्ष्मया**) भूम्या सह। **क्ष्मेति पृथिवीनाम**। (निघं०१.१ (**चरति**) गच्छति (**परि**) (**सा**)

(वृणक्तु) वर्जयतु **(नः)** अस्मान् **(सहस्रम्)** असंख्यम् **(ते)** तव **(स्वपिवात)** वायुरिव वर्तमान **(भेषजा)** ओषधानि **(नः)** अस्मानस्माकं वा **(तोकेषु)** सद्यो जातेष्वपत्येषु **(तनयेषु)** सुकुमारेषु **(रीरिषः)** हिंस्याः॥३॥

अन्वयः-हे स्वपिवात! ते तव या दिवः पर्यवसृष्टा दिद्युत् क्ष्मया चरति सा नोऽधर्माचरणात् परि वृणक्तु यस्य ते सहस्रं भेषजा सन्ति स त्वं तोकेषु तनयेषु वर्तमानो नोऽस्मानस्माकमपत्यान्यपि मा सु रीरिषः॥३॥

भावार्थः-यस्य राज्ञो न्यायप्रकाशः सर्वत्र प्रदीप्यति स एव सर्वानधर्माचरणान्निरोद्धुं शक्नोति यस्य राष्ट्रे सहस्राणि दूताश्चारा वैद्याश्च विचरन्ति तस्य स्वल्पाऽपि राज्यस्य हानिर्न जायेत॥३॥

पदार्थः-हे **(स्वपिवात)** पवन के समान वर्त्तमान! **(ते)** आपकी **(या)** जो **(दिवः)** मनोहर कार्य के सम्बन्ध में **(परि)** सब ओर से **(अवसृष्टा)** शत्रुओं में प्रेरणा देने वाली **(दिद्युत्)** न्यायदीप्ति **(क्ष्मया)** भूमि के साथ **(चरति)** जाती है **(सा)** वह **(नः)** हम लोगों को अधर्माचरण से **(परि, वृणक्तु)** सब ओर से अलग रक्खे जिस **(ते)** आपके **(सहस्रम्)** असंख्य हजारों **(भेषजा)** ओषधियाँ हैं, वह आप **(तोकेषु)** शीघ्र उत्पन्न हुए और **(तनयेषु)** कुमार अवस्था को प्राप्त हुए बालकों में वर्तमान **(नः)** हम लोगों को वा हमारे सन्तानों को **(मा)** मत **(रीरिषः)** नष्ट करो॥३॥

भावार्थः-जिस राजा का न्यायप्रकाश सर्वत्र प्रदीप्त है, वही सबको अधर्माचरण से रोक सकता है, जिसके राज्य में हजारों दूत और चार गुप्तचर मुखबर वैद्यजन विचरते हैं, उसकी थोड़ी भी राज्य की हानि नहीं होती है॥३॥

पुनः स राजा कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा नो॑ वधी रुद्र॒ मा परा॑ दा॒ मा ते॑ भूम॒ प्रसि॑तौ हीळि॒तस्य॑।

आ नो॑ भज ब॒र्हिषि॑ जीवशं॒से यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभि॒: सदा॑ नः॥४॥१३॥

मा। नः॒। व॒धीः॒। रु॒द्र॒। मा। परा॑। दाः॒। मा। ते॒। भू॒म॒। प्रऽसि॑तौ। ही॒ळि॒तस्य॑। आ। नः॒। भ॒ज॒। ब॒र्हिषि॑। जी॒व॒ऽशं॒से। यू॒यम्। पा॒त॒। स्व॒स्तिऽभिः॑। सदा॑। नः॒॥४॥

पदार्थः-**(मा)** **(नः)** अस्मान् **(वधीः)** हन्याः **(रुद्र)** **(मा)** **(परा)** **(दाः)** दूरे भवेः **(मा)** **(ते)** तव **(भूम)** भवेम **(प्रसितौ)** प्रकर्षेण बन्धने **(हीळितस्य)** अनादृतस्य **(आ)** **(नः)** अस्मान् **(भज)** सेवस्व **(बर्हिषि)** अन्तरिक्षे **(जीवशंसे)** जीवैः प्रशंसनीये **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)**॥४॥

अन्वयः-हे रुद्र! त्वं नो मा वधीः मा परा दा हीळितस्य ते प्रसितौ वयं मा भूम त्वं जीवशंसे बर्हिषि नोऽस्माना भज, हे विद्वांसो! यूयं स्वस्तिभिर्नः सदा पात॥४॥

भावार्थः-स एव राजा वीरो वोत्तमः स्यात् यो धार्मिकानदण्ड्यान् कृत्वा दुष्टान् दण्डयेदिति॥४॥

अत्र रुद्रराजपुरुषगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति षट्चत्वारिंशत्तमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(रुद्र)** दुष्टों को रुलाने वाले! आप **(नः)** हम लोगों को **(मा)** मत **(वधीः)** मारो **(मा)** मत **(परा, दाः)** दूर हो और **(हीळितस्य)** अनादर किये हुए **(ते)** आपके **(प्रसितौ)** बन्धन में हम लोग **(मा)** मत **(भूम)** हों आप **(जीवशंसे)** जीवों से प्रशंसा करने योग्य **(बर्हिषि)** अन्तरिक्ष में **(नः)** हम लोगों को **(आ, भज)** अच्छे प्रकार सेवो, हे विद्वानो! **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो॥४॥

भावार्थः-वही राजा वीर वा उत्तम हो जो धार्मिक जनों को अदण्ड **[**=अदण्ड्य**]** कर दुष्टों को दण्ड दे॥४॥

इस सूक्त में रुद्र, राजा और पुरुषों के गुण और कामों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह छयालीसवां सूक्त और तेरहवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ चतुर्ऋचस्य [सप्तचत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठिर्षिः। आपो देवताः। १, ३ त्रिष्टुप्। २ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनर्मनुष्याः प्रथमे वयसि विद्यां गृह्णीयुरित्याह॥

अब सैंतालीसवां सूक्त का आरम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में फिर मनुष्य प्रथम अवस्था में विद्या ग्रहण करें, इस विषय को कहते हैं॥

आपो यं वः प्रथमं देवयन्त इन्द्रपानमूर्मिमकृण्वतेळः।
तं वो वयं शुचिमरिप्रमद्य घृतप्रुषं मधुमन्तं वनेम॥१॥

आपः। यम्। वः। प्रथमम्। देवऽयन्तः। इन्द्रऽपानम्। ऊर्मिम्। अकृण्वत। इळः। तम्। वः। वयम्। शुचिम्। अरिप्रम्। अद्य। घृतऽप्रुषम्। मधुऽमन्तम्। वनेम॥१॥

पदार्थः-(**आपः**) जलानीव विद्वांसः (**यम्**) (**वः**) युष्माकम् (**प्रथमम्**) (**देवयन्तः**) कामयमानाः (**इन्द्रपानम्**) इन्द्रस्य जीवस्य पातुमर्हम् (**ऊर्मिम्**) तरङ्गमिवोच्छ्रितम् (**अकृण्वत**) कुर्वन्तु (**इळः**) वाचः। **इळेति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) (**तम्**) (**वः**) युष्मभ्यम् (**वयम्**) (**शुचिम्**) पवित्रम् (**अरिप्रम्**) निष्पापं निर्दोषम् (**अद्य**) इदानीम् (**घृतप्रुषम्**) घृतेनोदकेनाज्येन वा सिक्तम् (**मधुमन्तम्**) बहुमधुरादिगुणयुक्तम् (**वनेम**) विभजेम॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! देवयन्तो व इळः प्रथममिन्द्रपानमाप ऊर्मिमिव च यमकृण्वत तं शुचिमरिप्रं घृतप्रुषं मधुमन्तं वो वयमद्य वनेम॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्वांसः प्रथमे वयसि विद्यां गृह्णन्ति युक्ताहारविहारेण शरीरमरोगं कुर्वन्ति तानेव सर्वे सेवन्ताम्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**देवयन्तः**) कामना करते हुए जन (**वः**) तुम्हारी (**इळः**) वाणी को (**प्रथमम्**) और प्रथम भाग जो कि (**इन्द्रपानम्**) जीव को प्राप्त होने योग्य उसको (**आपः**) तथा बहुत जलों के समान वा (**ऊर्मिम्**) तरंग के समान (**यम्**) जिसको (**अकृण्वत**) सिद्ध करें (**तम्**) उस (**शुचिम्**) पवित्र (**अरिप्रम्**) निष्पाप निर्दोष (**घृतप्रुषम्**) उदक वा घी से सिंचे (**मधुमन्तम्**) बहुत मधुरादिगुणयुक्त पदार्थ को (**वः**) तुम्हारे लिए (**वयम्**) हम लोग (**अद्य**) आज (**वनेम**) विशेषता से भजें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् जन पहिली अवस्था में विद्या ग्रहण करते और युक्त आहार-विहार से शरीर को नीरोग करते हैं, उन्हीं की सब सेवा करें॥१॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमूर्मिमापो मधुमत्तमं वोऽपां नपादवत्वाशुहेमा।
यस्मिन्निन्द्रो वसुभिर्मादयाते तमश्याम देवयन्तो वो अद्य॥२॥

तम्। ऊर्मिम्। आपः। मधुमत्ऽतमम्। वः। अपाम्। नपात्। अवतु। आशुऽहेमा। यस्मिन्। इन्द्रः।

वसुऽभिः। मादयाते। तम्। अश्याम। देवऽयन्तः। वः। अद्य॥ २॥

पदार्थः-(**तम्**) (**ऊर्मिम्**) तरङ्गम् (**आपः**) जलानीव (**मधुमत्तमम्**) अतिशयेन मधुरादिगुणयुक्तम् (**वः**) युष्मान् (**अपाम्**) जलानाम् (**नपात्**) यो न पतति (**अवतु**) रक्षतु (**आशुहेमा**) शीघ्रं वर्धको गन्ता वा (**यस्मिन्**) (**इन्द्रः**) विद्युदिव राजा (**वसुभिः**) धनैः (**मादयाते**) मादयेः हर्षयेत् (**तम्**) (**अश्याम**) प्राप्नुयाम (**देवयन्तः**) कामयमानाः (**वः**) युष्माकम् (**अद्य**) इदानीम्॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यस्मिन्नाशुहेमेन्द्रो वसुभिस्सह वो युष्मान् मादयाते तमाप ऊर्मिमिव मधुमत्तममपां नपादिन्द्रो यथाऽवतु तथा वयं तं रक्षेम वो देवयन्तो वयमद्याश्याम॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा वायुरपान्तरङ्गानुच्छयति तथा यो राजा धनादिभिः प्रजाजनान् रक्षेत् तस्यैव वयं राजत्वाय सम्मतिं दद्याम॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यस्मिन्**) जिसमें (**आशुहेमा**) शीघ्र बढ़ने वा जाने वाला (**इन्द्रः**) बिजुली के समान राजा (**वसुभिः**) धनों के साथ (**वः**) तुमको (**मादयाते**) हर्षित करे (**तम्**) उसको (**आपः**) जल (**उर्मिम्**) तरङ्गों को जैसे वैसे (**मधुमत्तमम्**) अतीव मधुरादिगुणयुक्त पदार्थ को (**अपांनपात्**) जो जलों के बीच नहीं गिरता है वह बिजुली के समान राजा जैसे (**अवतु**) रक्खे, वैसे हम लोग (**तम्**) उसको रक्खें और (**वः**) तुम लोगों की (**देवयन्तः**) कामना करते हुए हम लोग (**अद्य**) आज (**अश्याम**) प्राप्त होवें॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे वायु जल को तरङ्गों को उछालता है, वैसे जो राजा धनादिकों से प्रजाजनों की रक्षा करे, उसी को हम लोग राजा होने की सम्मति देवें॥ २॥

पुनः स्त्रीपुरुषाः कीदृशा भूत्वा विवाहं कुर्युरित्याह॥

फिर स्त्री-पुरुष कैसे होकर विवाह करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शतपवित्राः स्वधया मदन्तीर्देवीर्देवानामपि यन्ति पाथः।
ता इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि सिन्धुभ्यो हव्यं घृतवज्जुहोत॥ ३॥

शतऽपवित्राः। स्वधया। मदन्तीः। देवीः। देवानाम्। अपि। यन्ति। पाथः। ताः। इन्द्रस्य। न। मिनन्ति। व्रतानि। सिन्धुऽभ्यः। हव्यम्। घृतऽवत्। जुहोत॥ ३॥

पदार्थः-(**शतपवित्राः**) शतैरुपायैर्ये शुद्धाः (**स्वधया**) अन्नाद्येन (**मदन्तीः**) आनन्दतीः (**देवीः**) विदुष्यो ब्रह्मचारिण्यः (**देवानाम्**) विदुषाम् (**अपि**) (**यन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**पाथः**) अन्नाद्यैश्वर्यम् (**ताः**) (**इन्द्रस्य**) समग्रैश्वर्यस्य परमात्मनः (**न**) निषेधे (**मिनन्ति**) हिंसन्ति (**व्रतानि**) सत्यभाषणादीनि कर्माणि (**सिन्धुभ्यः**) नदीभ्य इव (**हव्यम्**) होतुं दातुमर्हम् (**घृतवत्**) बहुघृतयुक्तम् (**जुहोत**) आदद्यात॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो नरा! याः शतपवित्रा मदन्तीर्देवीर्विदुष्यो देवानां स्वधया पाथोऽपि यन्ति ता इन्द्रस्य व्रतानि न मिनन्ति यथा सिन्धुभ्यो घृतवद्धव्यं निर्माय ता जुह्वति तथैता यूयं जुहोत आदद्यात॥ ३॥

भावार्थः-या युवतयः कन्याः सिन्धवः समुद्रानिव हृद्यान् पतीन् प्राप्य न व्यभिचरन्ति तथैव यूयं सर्वे मनुष्याः परस्परेषां संयोगेन सर्वदाऽऽनन्दत॥ ३॥

पदार्थः-हे विद्वान् मनुष्यो! जो **(शतपवित्राः)** सौ उपायों से शुद्ध **(मदन्तीः)** आनन्द करती हुईं **(देवीः)** विदुषी पण्डित ब्रह्मचारिणी कन्या **(देवानाम्)** विद्वानों के **(स्वधया)** अन्नादि पदार्थ से **(पाथः)** अन्नादि ऐश्वर्य को **(अपि, यन्ति)** प्राप्त होती हैं **(ताः)** वे **(इन्द्रस्य)** समग्र ऐश्वर्यवान् परमात्मा के **(व्रतानि)** व्रतों को **(न)** नहीं **(मिनन्ति)** नष्ट करती हैं जैसे **(सिन्धुभ्यः)** नदियों के समान **(घृतवत्)** बहुत घी से युक्त **(हव्यम्)** देने योग्य वस्तु बनाकर वे होमती हैं, वैसे इनको तुम **(जुहोत)** ग्रहण करो॥ ३॥

भावार्थः-जो युवति कन्या, नदियाँ समुद्रों को जैसे, वैसे हृदय के प्यारे पतियों को पाकर छोड़ती नहीं हैं, वैसे ही तुम सब मनुष्य एक-दूसरे के संयोग से सर्वदा आनन्द करो॥ ३॥

पुनः स्त्रीपुरुषाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर स्त्री-पुरुष क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

याः सूर्यो रश्मिभिराततान याभ्य इन्द्रो अरदद् गातुमूर्मिम्।
ते सिन्धवो वरिवो धातना नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ४॥ १४॥

याः। सूर्यः। रश्मिऽभिः। आऽततान। याभ्यः। इन्द्रः। अरदत्। गातुम्। ऊर्मिम्। ते। सिन्धवः। वरिवः। धातन। नः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥ ४॥

पदार्थः-**(याः)** अपः **(सूर्यः)** सविता **(रश्मिभिः)** किरणैः **(आततान)** आतनोति विस्तृणाति **(याभ्यः)** अद्भ्यः **(इन्द्रः)** विद्युत् **(अरदत्)** विलिखति **(गातुम्)** भूमिम्। **गातुरिति पृथिवीनाम।** (निघं०१.१) **(ऊर्मिम्)** तरङ्गम् **(ते)** **(सिन्धवः)** नद्यः **(वरिवः)** परिचरणम् **(धातन)** धर्त **(नः)** अस्माकम् **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** सुखादिभिः **(सदा)** **(नः)**॥ ४॥

अन्वयः-हे पुरुषाः! सूर्यो रश्मिभिर्या आततान इन्द्रो याभ्यो गातुमूर्मिमरदत् ता अनुकृत्य स्त्रीपुरुषाः प्रवर्तन्ताम् यथा ते सिन्धवः समुद्रं पूरयन्ति तथा या स्त्रियः सुखैरस्मान् धातन नोऽस्माकं वरिवः कुर्युस्ता वयमपि सेवेमहि, हे पतिव्रता स्त्रियो! यूयं स्वस्तिभिर्नोऽस्मान् पतीन् सदा पात॥ ४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथा सूर्यः स्वतेजोभिः भूमेर्जलान्याकृष्य विस्तृणाति तथा सत्कर्मभिः प्रजाः यूयं विस्तृणीतेति॥ ४॥

अत्र विद्वत्स्त्रीपुरुषगुणवर्णनादेतदर्थस्य सूक्तस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तचत्वारिंशत्तमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे पुरुषो! **(सूर्यः)** सूर्यमण्डल **(रश्मिभिः)** अपनी किरणों से **(याः)** जिन जलों को **(आ, ततान)** विस्तारता है **(इन्द्रः)** बिजुली **(याभ्यः)** जिन जलों से **(गातुम्)** भूमि को और **(ऊर्मिम्)** तरङ्ग को **(अरदत्)** छिन्न-भिन्न करती है, उनको अनुहारि स्त्री-पुरुष वर्तें जैसे **(ते)** वे **(सिन्धवः)** नदियाँ समुद्र को पूरा करती हैं, वैसे जो स्त्रियाँ सुखों से हम लोगों को **(धातन)** धारण करें **(नः)** हमारी **(वरिवः)** सेवा करें, उनकी हम भी सेवा करें, हे पतिव्रता स्त्रियो! **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम पति लोगों की **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो॥ ४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे सूर्य अपने तेजों से भूमि के जलों को खींच कर विस्तार करता है, वैसे अच्छे कामों से प्रजा को तुम विस्तारो॥४॥

इस सूक्त में विद्वान्, स्त्री-पुरुष के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह सैंतालीसवां सूक्त और चौदहवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ चतुर्ऋचस्य [अष्टचत्वारिंशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। १-३ ऋभवः। ४ ऋभवो विश्वेदेवाः। १ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमःस्वरः। २ निचृत्त्रिष्टुप्। ३ त्रिष्टुप्। ४ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वद्भिः किं कर्तव्यमित्याह॥

अब चार ऋचा वाले अड़तालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

ऋभुक्षणो वाजा मादयध्वमस्मे नरो मघवानः सुतस्य।
आ वोऽर्वाचः क्रतवो न यातां विभ्वो रथं नर्यं वर्तयन्तु॥१॥

ऋभुक्षणः। वाजाः। मादयध्वम्। अस्मे इति। नरः। मघऽवानः। सुतस्य। आ। वः। अर्वाचः। क्रतवः। न। याताम्। विऽभ्वः। रथम्। नर्यम्। वर्तयन्तु॥१॥

पदार्थः-(**ऋभुक्षणः**) महान्तः। **ऋभुक्षा इति महन्नाम।** (निघं० ३.३) (**वाजाः**) विज्ञानवन्तः (**मादयध्वम्**) आनन्दयत (**अस्मे**) अस्मान् (**नरः**) नायकाः (**मघवानः**) बहूत्तमधनयुक्ताः (**सुतस्य**) निष्पन्नस्य (**आ**) (**वः**) युष्माकम् (**अर्वाचः**) येऽर्वाग्गच्छन्ति ते (**क्रतवः**) प्रजाः (**न**) इव (**याताम्**) गच्छताम् (**विभ्वः**) सकलविद्यासु व्यापिनः (**रथम्**) रमणीयम् यानम् (**नर्यम्**) नृषु साधुम् (**वर्त्तयन्तु**)॥१॥

अन्वयः-हे ऋभुक्षणो मघवानो विभ्वोऽर्वाचो वाजा नरो! यूयं क्रतवो न सुतस्य सेवनेनास्मे मादयध्वमा यातां वो युष्माकं अस्माकं च नर्यं रथमस्ये वर्तयन्तु॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये विद्वांसो युष्मानस्मांश्च विद्याबुद्धिप्रदानेन शिल्पविद्यया चानन्दयन्ति ते सर्वदा प्रशंसनीयाः सन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**ऋभुक्षणः**) महात्मा (**मघवानः**) बहुत उत्तम धनयुक्त (**विभ्वः**) सकल विद्याओं में व्याप्त (**अर्वाचः**) जो पीछे जाने वाले (**वाजाः**) विज्ञानवान् (**नरः**) मनुष्यो! तुम (**क्रतवः**) अतीव बुद्धियों के (**न**) समान (**सुतस्य**) उत्पन्न हुए के सेवने से (**अस्मे**) हम लोगों को (**मादयध्वम्**) आनन्दित करो (**आ, याताम्**) आते हुए (**वः**) तुम लोगों के और हमारे (**नर्यम्**) मनुष्यों में उत्तम (**रथम्**) रमणीय यान को और नर (**वर्तयन्तु**) वर्तें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो विद्वान् जन तुम्हें और हमें विद्या और बुद्धि के दान से वा शिल्पविद्या से आनन्दित करते हैं, वे सर्वदा प्रशंसा करने योग्य हैं॥१॥

मनुष्याः कथं विद्वांसो भवन्तीत्याह॥

मनुष्य कैसे विद्वान् होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋभुर्ऋभुभिरभि वः स्याम विभ्वो विभुभिः शवसा शवांसि।
वाजो अस्माँ अवतु वाजसाताविन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम्॥२॥

ऋभुः। ऋभुऽभिः। अभि। वः। स्याम। विऽभ्वः। विभुऽभिः। शवसा। शवांसि। वाजः। अस्मान्।

अवतु। वाजऽसातौ। इन्द्रेण। युजा। तरुषेम। वृत्रम्॥ २॥

पदार्थः-(**ऋभुः**) मेधावी विद्वान् (**ऋभुभिः**) मेधाविभिराप्तैर्विद्वद्भिस्सह। **ऋभुरिति मेधाविनाम।** (निघं०३.१५) (**अभि**) आभिमुख्ये (**वः**) युष्मान् (**स्याम**) (**विभ्वः**) सकलशुभगुणकर्मस्वभाव-व्यापिनः (**विभुभिः**) सद्गुणादिषु व्याप्तैः (**शवसा**) बलेन (**शवांसि**) स- ामे (**इन्द्रेण**) विद्युदाद्यस्त्रेण (**युजा**) युक्तेन (**तरुषेम**) प्राप्नुयाम। **तरुष्यतीति पदनाम।** (निघं०४.२) (**वृत्रम्**) धनम्। **वृत्रमिति धननाम।** (निघं०२.१०)॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वाज ऋभुभिस्सह वाजसातावृभुर्वो युष्मानस्माँश्चावतु युजेन्द्रेण वृत्रं प्राप्नुयात् तथा विभ्वो वयं विभुभिः शवसा च सह शवांस्यभि तरुषेम यतो वयं सुखिनः स्याम॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव विद्वांसो व्याप्तविद्याशुभगुणस्वभावा भवन्ति ये संग्रामेऽपि सर्वान्रक्षयित्वा धनं बलं च दातु शक्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**वाजः**) विज्ञानवान् वा ऐश्वर्ययुक्त जन (**ऋभुभिः**) बुद्धिमान् उत्तम विद्वानों के साथ (**वाजसातौ**) संग्राम में (**ऋभुः**) बुद्धिमान् (**वः**) तुम्हें और (**अस्मान्**) हमें (**अवतु**) पाले रक्खे वा (**युजा**) योग किये हुए (**इन्द्रेण**) बिजुली आदि शस्त्र से (**वृत्रम्**) धन को प्राप्त हो, वैसे (**विभ्वः**) सकल शुभ गुण, कर्म और स्वभावों में व्याप्त हम लोग (**विभुभिः**) अच्छे गुणादिकों में व्याप्त जन और (**शवसा**) बल के साथ (**शवांसि**) बलों को (**अभि, तरुषेम**) प्राप्त हों जिससे हम लोग सुखी (**स्याम**) हों॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही विद्वान् जन विद्याओं में व्याप्त शुभ गुण-कर्म-स्वभाव युक्त हैं, जो संग्राम में भी सब की रक्षा करके धन और बल दे सकते हैं॥ २॥

पुनः को राजा विजयी राज्यवर्धको भवतीत्याह॥

फिर कौन राजा विजयशील राज्य को बढ़ाने वाला होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते चिद्धि पूर्वीरभि सन्ति शासा विश्वाँ अर्य उपरताति वन्वन्।
इन्द्रो विभ्वाँ ऋभुक्षा वाजो अर्यः शत्रोर्मिथत्या कृणवन् वि नृम्णम्॥ ३॥

ते। चित्। हि। पूर्वीः। अभि। सन्ति। शासा। विश्वान्। अर्यः। उपरऽताति। वन्वन्। इन्द्रः। विऽभ्वान्। ऋभुक्षाः। वाजः। अर्यः। शत्रोः। मिथत्या। कृणवन्। वि। नृम्णम्॥ ३॥

पदार्थः-(**ते**) विद्वांसः (**चित्**) अपि (**हि**) यतः (**पूर्वीः**) सनातन्यः प्रजाः (**अभि**) (**सन्ति**) (**शासा**) शासनेन (**विश्वान्**) सर्वान् (**अर्यः**) स्वामी (**उपरताति**) उपरतातौ पलैः मेघास्त्रादिभिः संग्रामे (**वन्वन्**) याचन्ते (**इन्द्रः**) परमैश्वर्ययुक्तः (**विभ्वान्**) विभून् विद्याव्याप्तानमात्यान् (**ऋभुक्षाः**) य ऋभून् मेधाविनः क्षियति निवासयति स महान् (**वाजः**) बलविज्ञानान्नयुक्तः (**अर्यः**) स्वामी (**शत्रोः**) (**मिथत्या**) हिंसया (**कृणवन्**) कुर्वन्ति (**वि**) (**नृम्णम्**) नृणां रमणीयं धनम्॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वाजोऽर्य ऋभुक्षाः स इन्द्रः शत्रोर्मिथत्या नृम्णमिच्छन् यान् विश्वान् विभ्वान्

स्वकीयान् करोति त उपरताति विजयं कृणवन् ते चिद्धि शासा पूर्वीरभि सन्ति सोऽर्यो सुखी विजयी जायते॥३॥

भावार्थः-स एव राजा महान् विजयी भवति यो धार्मिकानुत्तमान् विदुषः संगृह्णाति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो जो **(वाजः)** बल विज्ञान और अन्नयुक्त **(अर्यः)** स्वामी **(ऋभुक्षाः)** उत्तम बुद्धिमानों को निरन्तर बसावे वह **(इन्द्रः)** परमैश्वर्ययुक्त महान् राजा **(शत्रोः)** शत्रु की **(मिथत्या)** हिंसा से **(नृम्णम्)** जो मनुष्यों में रमणीय ऐसे धन की इच्छा करता हुआ जिन **(विश्वान्)** समस्त **(विभ्वान्)** विद्या में व्याप्त अमात्य जनों को अपना करता है **(ते)** वे विद्वान् जन **(उपरताति)** मेघास्त्रादिकों से संग्राम में विजय **(कृणवन्)** करते हैं वे **(चित्)** ही **(हि)** निश्चय कर **(शासा)** शासन से **(पूर्वीः)** सनातन प्रजाजन **(अभि, सन्ति)** सब ओर से विद्यमान हैं तथा वह स्वामी **(वि)** विजयी होता है॥३॥

भावार्थः-वही राजा महान् विजयी होता है, जो धार्मिक उत्तम विद्वानों का संग्रह करता है॥३॥

पुना राजादिभिर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजादिकों से विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू देवासो वरिवः कर्तना नो भूत नो विश्वेऽवसे सजोषाः।

समस्मे इषं वसवो ददीरन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥४॥१५॥

नु। देवासः। वरिवः। कर्तन। नः। भूत। नः। विश्वे। अवसे। सऽजोषाः। सम्। अस्मे इति। इषम्। वसवः। ददीरन्। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥४॥

पदार्थः-**(नु)** क्षिप्रम्। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(देवासः)** विद्वांसः **(वरिवः)** **(कर्तना)** कुर्यात्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(नः)** अस्माकम् **(भूत)** भवत **(नः)** अस्माकम् **(विश्वे)** सर्वे **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेविनः। अत्र वचनव्यत्ययेन जसः स्थाने सुः। **(सम्)** **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(इषम्)** अन्नं विज्ञानं वा **(वसवः)** ये विद्यायां वसन्ति ते **(ददीरन्)** प्रयच्छेयुः **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)**॥४॥

अन्वयः-हे सजोषा वसवो विश्वे देवासो! यूयं नो वरिवः कर्त्तन नोऽवसे नु भूताऽस्मे इषं संददीरन् यूयं स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥४॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! राजजना यूयमस्मान् प्रजाः सततं रक्षत सर्वदा विज्ञानमन्नाद्यैश्वर्यं च प्रयच्छत एवं कृते सति युष्मान् वयं सततं रक्षेमेति॥४॥

अत्र विद्वद्गुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इत्यष्टचत्वारिंशत्तमं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सजोषाः)** समान प्रीति के सेवने वाले **(वसवः)** विद्या में निवासकर्त्ता **(विश्वे)** समस्त **(देवासः)** विद्वान् जनो! तुम **(नः)** हमारा **(वरिवः)** सेवन **(कर्त्तन)** करो **(नः)** हमारी

(अवसे) रक्षा आदि के लिये **(नु)** शीघ्र **(भूत)** संनद्ध होओ **(अस्मे)** हमारे लिये **(इषम्)** अन्न वा विज्ञान को **(सम्, ददरीन्)** अच्छे प्रकार देओ **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हमारी **(सदा)** सर्वदा **(पात)** रक्षा करो॥४॥

भावार्थः-हे विद्वान् राजजनो! तुम हम लोगों की ओर प्रजाजनों की निरन्तर रक्षा करो, सर्वदा विज्ञान और अन्न आदि ऐश्वर्य को देओ, ऐसा करो तो तुम लोगों की हम निरन्तर रक्षा करें॥४॥

इस मन्त्र में विद्वानों के गुण और कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह अड़तालीसवां सूक्त और पन्द्रहवां वर्ग पूरा हुआ॥

अत चतुर्ऋचस्य [एकोनपञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। आपो देवताः। १ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ३ त्रिष्टुप्। ४ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनस्ता आपः कीदृश्यः सन्तीत्याह॥

अब चार ऋचा वाले उनंचासवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में फिर वे जल कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात् पुनाना यन्त्यनिविशमानाः।
इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु॥१॥

समुद्रऽज्येष्ठाः। सलिलस्य। मध्यात्। पुनानाः। यन्ति। अनिऽविशमानाः। इन्द्रः। याः। वज्री। वृषभः। रराद। ताः। आपः। देवीः। इह। माम्। अवन्तु॥१॥

पदार्थः-(**समुद्रज्येष्ठाः**) समुद्रः ज्येष्ठो यासां ताः (**सलिलस्य**) अन्तरिक्षस्य (**मध्यात्**) (**पुनानाः**) पवित्रयन्त्यः (**यन्ति**) (**अनिविशमानाः**) याः कुत्रचिन्न निविशन्ते (**इन्द्रः**) सूर्यो विद्युद्वा (**याः**) (**वज्री**) वज्रतुल्यछेदकबहुकिरणयुक्तः (**वृषभः**) वर्षकः (**रराद**) विलिखति वर्षयति (**ताः**) (**आपः**) जलानि (**देवीः**) प्रमोदिकाः (**इह**) अस्मिन् संसारे (**माम्**) (**अवन्तु**) रक्षन्तु॥१॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यास्समुद्रज्येष्ठाः पुनाना अनिविशमाना आपस्सलिलस्य मध्याद्यन्ति मामिहावन्तु ताः देवीः वृषभो वज्रीन्द्रो रराद तथा यूयं भवत॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! या आप अन्तरिक्षाद्वर्षित्वा सर्वान् पालयन्ति ता यूयं पानादिकार्येषु संप्रयुङ्ग्ध्वम्॥१॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**याः**) जो ऐसी हैं कि (**समुद्रज्येष्ठाः**) जिन में समुद्र ज्येष्ठ है वे (**पुनानाः**) पवित्र करती हुईं (**अनिविशमानाः**) कहीं निवास न करने वाली (**आपः**) जल तरङ्गें (**सलिलस्य**) अन्तरिक्ष के (**मध्यात्**) बीच से (**यन्ति**) जाती हैं वह (**माम्**) मेरी (**इह**) इस संसार में (**अवन्तु**) रक्षा करें और (**ताः**) उन (**देवीः**) प्रमोद कराने वाली जल तरंगों को (**वृषभः**) वर्षा करने वा (**वज्री**) वज्र के तुल्य छिन्न-भिन्न करने वाला बहुत किरणों से युक्त (**इन्द्रः**) सूर्य वा बिजुली (**रराद**) वर्षाता है, वैसे तुम होओ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो जल अन्तरिक्ष से बरस के सब की पालना करते हैं, उन का तुम पान आदि कामों में अच्छे प्रकार योग करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वयंजाः।
समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु॥२॥

याः। आपः। दिव्याः। उत। वा। स्रवन्ति। खनित्रिमाः। उत। वा। याः। स्वयम्ऽजाः। समुद्रऽअर्थाः। याः। शुचयः। पावकाः। ताः। आपः। देवीः। इह। माम्। अवन्तु॥२॥

पदार्थः-(**याः**) (**आपः**) जलानि (**दिव्याः**) शुद्धाः (**उत**) अपि (**वा**) (**स्रवन्ति**) चलन्ति उत वा (**खनित्रिमाः**) याः खनित्रेण संजाताः (**उत**) (**वा**) (**याः**) (**स्वयंजाः**) स्वयंजाताः (**समुद्रार्थाः**) समुद्रायेमाः (**याः**) (**शुचयः**) पवित्राः (**पावकाः**) पवित्रकर्त्र्यः (**ताः**) (**आपः**) (**देवीः**) देदीप्यमानाः (**इह**) (**माम्**) (**अवन्तु**)॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या दिव्या आपस्स्रवन्ति उत वा खनित्रिमा जायन्ते याः स्वयंजा उत वा समुद्रार्थाः याः शुचयः पावकाः सन्ति ता देवीराप इह मामवन्तु॥२॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यथा जलानि प्राणाश्चाऽस्मान् संरक्ष्य वर्धयेयुस्तथा यूयमस्मान् बोधयत॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**याः**) जो (**दिव्याः**) शुद्ध (**आपः**) जल (**स्रवन्ति**) चूते हैं (**उत, वा**) अथवा (**खनित्रिमाः**) खोदने से उत्पन्न होते हैं वा (**याः**) जो (**स्वयंजाः**) आप उत्पन्न हुए हैं (**उत, वा**) अथवा (**समुद्रार्थाः**) समुद्र के लिये हैं वा (**याः**) जो (**शुचयः**) पवित्र (**पावकाः**) पवित्र करने वाले हैं (**ताः**) वह (**देवीः**) देदीप्यमान (**आपः**) जल (**इह**) इस संसार में (**माम्**) मेरी (**अवन्तु**) रक्षा करें॥२॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जैसे जल और प्राण हमारी अच्छे प्रकार रक्षा कर बढ़ावें, वैसे तुम लोग हम को बोध कराओ॥२॥

पुनः स जगदीश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह जगदीश्वर कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम्।
मधुश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु॥३॥

यासाम्। राजा। वरुणः। याति। मध्ये। सत्यानृते इति। अवऽपश्यन्। जनानाम्। मधुश्चुतः। शुचयः। याः। पावकाः। ताः। आपः। देवीः। इह। माम्। अवन्तु॥३॥

पदार्थः-(**यासाम्**) अपाम् (**राजा**) प्रकाशमानः (**वरुणः**) सर्वोत्कृष्ट ईश्वरः (**याति**) प्राप्नोति (**मध्ये**) (**सत्यानृते**) सत्यं चानृतं च ते (**अवपश्यन्**) यथार्थं विजानन् (**जनानाम्**) जीवानाम् (**मधुश्चुतः**) मधुरादिगुणैर्निष्पन्नाः (**शुचयः**) पवित्राः (**याः**) (**पावकाः**) पवित्रकराः (**ताः**) (**आपः**) (**देवीः**) देदीप्यमानाः (**इह**) अस्मिन् संसारे (**माम्**) (**अवन्तु**)॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यासां मध्ये वरुणो राजा जनानां सत्यानृत आचरणे अवपश्यन् याति या मधुश्चुतः शुचयः पावकास्सन्ति ता देवीराप इह मामवन्तु॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरः प्राणादिष्वभिव्याप्तस्सर्वेषां जीवानां धर्माधर्मौ पश्यन् फलेन योजयन् सर्वं रक्षति स एव सर्वैः सततं ध्येयोऽस्ति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यासाम्**) जिन जलों के (**मध्ये**) बीच (**वरुणः**) सब से उत्तम (**राजा**) प्रकाशमान ईश्वर (**जनानाम्**) मनुष्यों के (**सत्यानृते**) सत्य और झूंठ आचरणों को (**अव, पश्यन्**) यथार्थ जानता हुआ (**याति**) प्राप्त होता है वा (**याः**) जो (**मधुश्चुतः**) मधुरादि गुणों से उत्पन्न हुए

(शुचयः) पवित्र **(पावकाः)** और पवित्र करने वाले हैं **(ताः)** वे **(देवीः)** देदीप्यमान **(आपः)** जल **(इह)** इस संसार में **(माम्)** मेरी **(अवन्तु)** रक्षा करें॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर प्राणादिकों में अभिव्याप्त सब जीवों के धर्म-अधर्म को देखता और फल से युक्त करता हुआ सब की रक्षा करता है, वही सब को निरन्तर ध्यान करने योग्य है॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वे देवा यासूर्जं मदन्ति।
वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो देवीरिह मामवन्तु॥४॥१६॥

यासु। राजा। वरुणः। यासु। सोमः। विश्वे। देवाः। यासु। ऊर्जम्। मदन्ति। वैश्वानरः। यासु। अग्निः। प्रऽविष्टः। ताः। आपः। देवीः। इह। माम्। अवन्तु॥४॥

पदार्थः-**(यासु)** अन्तरिक्षे जलेषु प्राणेषु वा **(राजा)** न्यायविनयाभ्यां प्रकाशमानः **(वरुणः)** श्रेष्ठगुणकर्मस्वभावः **(यासु)** **(सोमः)** ओषधिगणः **(विश्वे)** सर्वे **(देवाः)** विद्वांसः पृथिव्यादयो वा **(यासु)** **(ऊर्जम्)** बलं पराक्रमम् **(मदन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(वैश्वानरः)** विश्वेषु नरेषु वा राजमानः परमात्मा **(यासु)** **(अग्निः)** विद्युत् **(प्रविष्टः)** **(ताः)** **(आपः)** **(देवीः)** कमनीयाः **(इह)** अस्मिन् संसारे **(माम्)** **(अवन्तु)**॥४॥

अन्वयः- हे विद्वांसो! यास्वप्सु वरुणो राजा यासु सोमो यासु विश्वे देवाश्चोर्जं मदन्ति यासु वैश्वानरोऽग्निः प्रविष्टस्ता देवीराप इह मामवन्तु तथा बोधयत॥४॥

भावार्थः- हे मनुष्या! यस्मिन्नाकाशे प्राणेषु जले वा सर्वं जगज्जीवति येषु प्राणेषु स्थितो योगी परमात्मानं लभते यत्र विद्युत्प्रविष्टाऽस्ति ता अपो यूयं विज्ञाय रक्षिता भवतेति॥४॥

अत्राबादिगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इत्येकोनपञ्चाशत्तमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(यासु)** जिन अन्तरिक्ष जल वा प्राणों में **(वरुणः)** श्रेष्ठ गुण-कर्म-स्वभावयुक्त **(राजा)** न्याय और विनय नम्रता से प्रकाशमान **(यासु)** वा जिन में **(सोमः)** ओषधिगण और **(यासु)** जिन में **(विश्वे)** समस्त **(देवाः)** विद्वान् जन अथवा पृथिवी आदि लोक **(ऊर्जम्)** बल पराक्रम को **(मदन्ति)** प्राप्त होते हैं या **(यासु)** जिन में **(वैश्वानरः)** सब में वा मनुष्यों में प्रकाशमान परमात्मा वा **(अग्निः)** बिजुलीरूप अग्नि **(प्रविष्टः)** प्रविष्ट है **(ताः)** वे **(देवीः)** मनोहर **(आपः)** जल

(इह) इस संसार में **(माम्)** मेरी **(अवन्तु)** रक्षा करें॥४॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिस आकाश में, प्राणों में वा जल में सब जगत् जीवन धारण करता है वा जिन प्राणों में स्थित योगी जन परमात्मा को प्राप्त होता है वा जहाँ बिजुली प्रविष्ट है, उन जलों को तुम जान कर रक्षायुक्त होओ॥४॥

इस सूक्त में जलादिकों के गुण और कृत्यों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह उनंचासवां सूक्त और सोलहवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ चतुर्ऋचस्य [पञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य १-४ वसिष्ठः। १ मित्रावरुणौ। २ अग्निः। ३ विश्वेदेवाः। ४ नद्यः। १, ३ स्वराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ निचृज्जगती। ४ भुरिगतिजगतीच्छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किमत्रानुष्ठेयमित्याह॥

अब चार ऋचा वाले पचासवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को इस संसार में क्या आचरण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आ मां मित्रावरुणेह रक्षतं कुलाययद्विश्वयन्मा न आ गन्।
अजकावं दुर्दृशीकं तिरो दधे मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः॥१॥

आ। माम्। मित्रावरुणा। इह। रक्षतम्। कुलाययत्। विऽश्वयत्। मा। नः। आ। गन्। अजकाऽवम्। दुःऽदृशीकम्। तिरः। दधे। मा। माम्। पद्येन। रपसा। विदत्। त्सरुः॥१॥

पदार्थः-(**आ**) (**माम्**) (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानाविवाध्यापकोपदेशकौ (**इह**) अस्मिन् संसारे (**रक्षतम्**) (**कुलाययत्**) कुलायं कुलोन्नतिं कामयमानः (**विश्वयत्**) यो विश्वं करोति सः (**मा**) निषेधे (**नः**) अस्मान् (**आ**) (**गन्**) आगच्छेत् प्राप्नुयात् (**अजकावम्**) योऽजान् जीवान् कावयति पीडयति तम् (**दुर्दृशीकम्**) दुःखेन द्रष्टुं योग्यम् (**तिरः**) (**दधे**) निवारयामि (**मा**) निषेधे (**माम्**) (**पद्येन**) प्राप्तुं योग्येन (**रपसा**) पापेन (**विदत्**) प्राप्नुयात् (**त्सरुः**) कुटिलगतिः॥१॥

अन्वयः-हे मित्रावरुणा! युवामिह योऽहं कुलाययद्विश्वयद् दुर्दृशीकमजकावं तिरोदधे त्सरू रोगः पद्येन रपसा मां मा विदत् कापि पीडा नोऽस्मान् मा आगन् तस्मान्मा मां रक्षतम्॥१॥

भावार्थः-मनुष्यैः कदापि पापाचरणं कुपथ्यं च न कार्यं येन कदाचिद् रोगप्राप्तिर्न स्यात् येऽत्र संसारे अध्यापकोपदेशकास्सन्ति तेऽध्यापनोपदेशाभ्यां सर्वान्नीरोगान् कृत्वा सरलानुद्योगिनः कुर्वन्तु॥१॥

पदार्थः-हे (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान के समान अध्यापक और उपदेशक! तुम (**इह**) इस संसार में जो मैं (**कुलाययत्**) कुल की उन्नति चाहता हुआ (**विश्वयत्**) सब काम करने वाला (**दुर्दृशीकम्**) दुःख से देखने योग्य (**अजकावम्**) जीवों को पीड़ा देता उसको (**तिरोदधे**) निवारणे करता हूँ वह (**त्सरूः**) कुटिल गति रोग (**पद्येन**) प्राप्त होने योग्य (**रपसा**) पाप से (**माम्**) मुझे (**मा**) मत (**विदत्**) प्राप्त हो कोई पीड़ा (**नः**) हम लोगों को (**मा**) मत (**आ, गन्**) प्राप्त हो इससे (**माम्**) मेरी (**आ, रक्षतम्**) सब ओर से रक्षा करो॥१॥

भावार्थः-मनुष्यों को पापाचरण वा कुपथ्य कभी न करना चाहिये जिससे कभी रोगप्राप्ति न हो जो, इस संसार में अध्यापक और उपदेशक हैं, वे पढ़ाने और उपदेश करने से सब को अरोगी कर सीधे और उद्योगी करें॥१॥

पुनर्मनुष्यैः रोगनिवारणार्थं किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को रोगनिवारणार्थ क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यद्विजामन् परुषि वन्दनं भुवदष्ठीवन्तौ परि कुल्फौ च देहत्।

अग्निष्टच्छोचन्नप बाधतामितो मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः॥२॥

यत्। विऽजामन्। परुषि। वन्दनम्। भुवत्। अष्ठीवन्तौ। परि। कुल्फौ। च। देहत्। अग्निः। तत्। शोचन्। अप। बाधताम्। इतः। मा। माम्। पद्येन। रपसा। विदत्। त्सरुः॥२॥

पदार्थः-(**यत्**) यस्मिन् (**विजामन्**) विजानन् (**परुषि**) कठोरे व्यवहारे (**वन्दनम्**) (**भुवत्**) भवति (**अष्ठीवन्तौ**) ष्ठीवनं कफादिकमत्यजन्तौ (**परि**) सर्वतः (**कुल्फौ**) गुल्फौ (**च**) (**देहत्**) वर्धयेत् (**अग्निः**) (**तत्**) (**शोचन्**) पवित्रीकुर्वन् (**अप**) (**बाधताम्**) निवारयतु (**इतः**) अस्मात्सः (**मा**) निषेधे (**माम्**) (**पद्येन**) (**रपसा**) अपराधेन (**विदत्**) (**त्सरुः**) कठिनो रोगः॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यस्मिन् परुषि वन्दनं विजामन् भुवत् यत्सरु रोगोऽष्ठीवन्तौ कुल्फौ च परिदेहत् तत्तमग्निः शोचन्नितोऽप बाधतां यः पद्येन रपसा मां रोगः प्राप्नोति स मां मा विदत्॥२॥

भावार्थः-ये मनुष्या ब्रह्मचर्यं विहाय बाल्यविवाहं कुपथ्यं च कुर्वन्ति तेषां शरीरेषु शोथादयो रोगाः प्रभवन्ति तेषां निवारणं वैद्यकरीत्या कार्यम्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो इस (**परुषि**) कठोर व्यवहार में (**वन्दनम्**) वन्दना को (**विजामन्**) विशेषता से जानता हुआ (**भुवत्**) प्रसिद्ध होता है (**यत्**) जिस व्यवहार में (**त्सरुः**) कठिन रोग (**अष्ठीवन्तौ**) कफादि न थूकने वाली (**कुल्फौ**) जङ्घाओं को (**च**) भी (**परि, देहत्**) सब ओर से बढ़ावे पीड़ा दे (**तत्**) उसको (**अग्निः**) अग्नि (**शोचन्**) पवित्र करता हुआ अग्नि (**इत्ः**) इस स्थान से (**अप, बाधताम्**) दूर करें (**पद्येन**) प्राप्त होने योग्य (**रपसा**) अपराध से (**माम्**) मुझको रोग प्राप्त होता है, वह मुझ को (**मा**) मत (**विदत्**) प्राप्त हो॥२॥

भावार्थः-जो मनुष्य ब्रह्मचर्य्य को छोड़ के बालकपन में विवाह वा कुपथ्य करते हैं, उनके शरीर में शोध आदि रोग होते हैं, उनका निवारण वैद्यक-रीति से करना चाहिये॥२॥

मनुष्यै रोगनिवारणं कृत्वैव पदार्थसेवनं कर्तव्यमित्याह॥

मनुष्यों को रोगनिवृत्त करके ही पदार्थ सेवन करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यच्छल्मलौ भवति यन्नदीषु यदोषधीभ्यः परि जायते विषम्।
विश्वे देवा निरितस्तत्सुवन्तु मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः॥३॥

यत्। शल्मलौ। भवति। यत्। नदीषु। यत्। ओषधीभ्यः। परि। जायते। विषम्। विश्वे। देवाः। निः। इतः। तत्। सुवन्तु। मा। माम्। पद्येन। रपसा। विदत्। त्सरुः॥३॥

पदार्थः-(**यत्**) (**शल्मलौ**) शल्मलीवृक्षादौ (**भवति**) (**यत्**) (**नदीषु**) नदीनां प्रवाहेषु (**यत्**) (**ओषधीभ्यः**) यवादिभ्यः (**परि**) सर्वतः (**जायते**) उत्पद्यते (**विषम्**) प्राणहरम् (**विश्वे**) सर्वे (**देवाः**) विद्वांसः (**निः**) निस्तारणे (**इतः**) अस्माच्छरीरात् (**तत्**) (**सुवन्तु**) दूरे प्रेरयन्तु (**मा**) माम् (**पद्येन**) प्राप्तव्येन (**रपसा**) पापचरणेन (**विदत्**) लभेत (**त्सरुः**) कुटिलो रोगः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्विषं शल्मलौ यन्नदीषु भवति यदोषधीभ्यो विषं परिजायते तदितो विश्वे देवा निस्सुवन्तु यतः पद्येन रपसा जातस्त्सरू रोगो मां मा विदत्॥३॥

भावार्थः-हे वैद्यादयो मनुष्याः! सर्वेभ्यः पदार्थेभ्यः पदार्थेषु वा यावद्विषं प्रजायते तावत्सर्वं निवार्यान्नपानादिकं सेवनीयं यतो युष्मान् कश्चिदपि रोगो न प्राप्नुयात्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(विषम्)** प्राण हरने वाला पदार्थ विष **(शल्मलौ)** सेमर आदि वृक्ष में और **(यत्)** जो **(नदीषु)** नदियों के प्रवाहों में **(भवति)** होता है **(यत्)** जो **(ओषधीभ्यः)** यव आदि ओषधियों से विष **(परि, जायते)** उत्पन्न होता है **(तत्)** उसको **(इतः)** इस शरीर से **(विश्वे)** सब **(देवाः)** विद्वान् जन **(निः, सुवन्तु)** निरन्तर दूर करें जिस कारण **(पद्येन)** प्राप्त होने योग्य **(रपसा)** पापाचरण से उत्पन्न हुआ **(त्सरूः)** कुटिल रोग **(माम्)** मुझको **(मा)** मत **(विदत्)** प्राप्त हो॥३॥

भावार्थः-हे वैद्य आदि मनुष्यो! सब पदार्थों से वा पदार्थों में जितना विष उत्पन्न होता है, उतना सब निवार के अन्न पानी आदि सेवन करना चाहिये, जिससे तुम को कोई भी रोग न प्राप्त हो॥३॥

पुनर्मनुष्यैः किं निवार्य किं सेवनीयमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किसका निवारण कर क्या सेवन करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

याः प्रवतो निवत उद्वत उदन्वतीरनुदकाश्च याः।
ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः शिवा देवीरशिपदा भवन्तु
सर्वा नद्यो अशिमिदा भवन्तु॥४॥१७॥

याः। प्रऽवतः। निऽवतः। उत्ऽवतः। उदन्ऽवतीः। अनुदकाः। च। याः। ताः। अस्मभ्यम्। पयसा। पिन्वमानाः। शिवाः। देवीः। अशिपदाः। भवन्तु। सर्वाः। नद्यः। अशिमिदाः। भवन्तु॥४॥

पदार्थः-**(याः)** **(प्रवतः)** गमनार्हान् **(निवतः)** निम्नान् **(उद्वतः)** ऊर्ध्वान् देशान् **(उदन्वतीः)** उदकयुक्ताः **(अनुदकाः)** जलरहिताः **(च)** **(याः)** **(ताः)** **(अस्मभ्यम्)** **(पयसा)** उदकेन। **पय इत्युदकनाम।** (निघं०१.१२) **(पिन्वमानाः)** सिञ्चमानाः प्रीणन्त्यः **(शिवाः)** सुखकर्यः **(देवीः)** आनन्दप्रदाः **(अशिपदाः)** भोजनादिव्यवहाराय प्राप्ताः **(भवन्तु)** **(सर्वाः)** **(नद्यः)** **(अशिमिदाः)** भोजनादिस्नेहकारिकाः **(भवन्तु)**॥४॥

अन्वयः-याः प्रवतो निवत उद्वतो देशान् गच्छन्ति याश्चोदन्वतीरनुदकास्सन्ति ताः सर्वा नद्योऽस्मभ्यं पयसा पिन्वमाना अशिपदा देवीः शिवा भवन्तु अशिमिदा भवन्तु॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! यावज्जलं नद्यादिषु गच्छति यावच्च मेघमण्डलं प्राप्नोति तावत्सर्वं होमेन शोधयित्वा सेवन्ताम्, यतः सर्वदा मङ्गलं वर्धित्वा दुःखप्रणाशो भवेदिति॥४॥

अत्रौषधीविषनिवारणेन शुद्धसेवनमुक्तमत एतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति पञ्चाशत्तमं सूक्तं सप्तदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः– **(याः)** जो **(प्रवतः)** जाने योग्य **(निवतः)** नीचे **(उद्वतः)** वा ऊपरले देशों को जाती हैं **(याश्च)** और जो **(उदन्वतीः)** जल से भरी वा **(अनुदकाः)** जलरहित हैं **(ताः)** वे **(सर्वाः)** सब **(नद्यः)** नदियाँ **(अस्मभ्यम्)** हमारे लिये **(पयसा)** जल से **(पिन्वमानाः)** सींचती हुईं वा तृप्त करती हुईं **(अशिपदाः)** भोजनादि व्यवहारों के लिये प्राप्त होती हुईं **(देवीः)** आनन्द देने और **(शिवाः)** सुख करने वाली **(भवन्तु)** हों और **(अशिमिदाः)** भोजन आदि स्नेह करने वाली **(भवन्तु)** हों॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जितना जल नदी आदि में जाता है और जितना मेघमण्डल में प्राप्त होता है, उतना सब होम से शुद्ध कर सेवो जिससे सर्वदा मंगल बढ़ कर दुःख का अच्छे प्रकार नाश हो॥४॥

इस सूक्त में जल और ओषधी विष के निवारण से शुद्ध सेवन कहा, इससे इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह पचासवां सूक्त और सत्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ त्र्यृचस्य [एकपञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। आदित्या देवताः। १, २ त्रिष्टुप्। ३ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अत्र केषां संगेन किं भवतीत्याह॥

अब तीन ऋचा वाले इक्यावनवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में किनके संग से क्या होता है, इस विषय को कहते हैं॥

आदित्यानामवसा नूतनेन सक्षीमहि शर्मणा शन्तमेन।
अनागास्त्वे अदितित्वे तुरास इमं यज्ञं दधतु श्रोषमाणाः॥१॥

आदित्यानाम्। अवसा। नूतनेन। सक्षीमहि। शर्मणा। शम्ऽतमेन। अनागाःऽत्वे। अदितिऽत्वे। तुरासः। इमम्। यज्ञम्। दधतु। श्रोषमाणाः॥१॥

पदार्थः-(**आदित्यानाम्**) पूर्णविद्यानां विदुषाम् (**अवसा**) रक्षणादिना (**नूतनेन**) नवीनेन (**सक्षीमहि**) सम्बध्नीयाम (**शर्मणा**) विग्रहेण (**शन्तमेन**) अतिशयेन सुखकर्त्रा (**अनागास्त्वे**) अनपराधित्वे (**अदितित्वे**) अखण्डितत्वे (**तुरासः**) शीघ्रकारिणः (**इमम्**) (**यज्ञम्**) (**दधतु**) (**श्रोषमाणाः**) श्रवणं कुर्वन्तः॥१॥

अन्वयः-ये तुरासः श्रोषमाणा अनागास्त्वे अदितित्वे इमं यज्ञं दधतु तेषामादित्यानामवसा शन्तमेन नूतनेन शर्मणा सह वयं सक्षीमहि॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा वयं विद्वत्संगेनात्यन्तं सुखं प्राप्नुमस्तथैव यूयमपीदं प्राप्नुत॥१॥

पदार्थः-जो (**तुरासः**) शीघ्रकारी (**श्रोषमाणाः**) सुनते हुए (**अनागास्त्वे**) अनपराधनपन में (**अदितित्वे**) अखण्डित काम में (**इमम्**) इस (**यज्ञम्**) यज्ञ को (**दधतु**) धारण करें, उन (**आदित्यानाम्**) पूर्ण विद्यायुक्त विद्वानों की (**अवसा**) रक्षा आदि से (**शन्तमेन**) अतीव सुख करने वाले (**नूतनेन**) नवीन (**शर्मणा**) विग्रह के साथ हम लोग (**सक्षीमहि**) बंधें॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग विद्वानों के संग से अत्यन्त सुख पावें, वैसे ही तुम भी इसको पाओ॥१॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आदित्यासो अदितिर्मादयन्तां मित्रो अर्यमा वरुणो रजिष्ठाः।
अस्माकं सन्तु भुवनस्य गोपाः पिबन्तु सोममवसे नो अद्य॥२॥

आदित्यासः। अदितिः। मादयन्ताम्। मित्रः। अर्यमा। वरुणः। रजिष्ठाः। अस्माकम्। सन्तु। भुवनस्य। गोपाः। पिबन्तु। सोमम्। अवसे। नः। अद्य॥२॥

पदार्थः-(**आदित्यासः**) पूर्णा विद्वांसः संवत्सरस्य मासा वा (**अदितिः**) अखण्डिता नीतिः (**मादयन्ताम्**) आनन्दयन्ताम् (**मित्रः**) सखा (**अर्यमा**) व्यवस्थापकः (**वरुणः**) श्रेष्ठः (**रजिष्ठाः**)

अतिशयेन रजितारः **(अस्माकम्) (सन्तु) (भुवनस्य)** जलादेर्लोकसमूहस्य। **भुवनमित्युदकनाम।** (निघं०१.१२ **(गोपाः)** रक्षकाः **(पिबन्तु) (सोमम्)** महौषधिरसम् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(नः)** अस्माकम् **(अद्य)** इदानीम्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! यथा रजिष्ठा अदितिर्मित्रोऽर्यमा वरुणोऽस्माकं भुवनस्य गोपाः सन्ति नोऽवसे मादयन्तामद्य सोमं संपिबन्तु तथा ते आदित्यासोऽस्माकं भुवनस्य गोपास्सन्तु॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यूयमादित्यवत् विद्याप्रकाशेन वैद्यवदौषधसेवनेन नीरोगा भूत्वाऽस्माकमप्यारोग्यं कुर्वन्तु॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(रजिष्ठाः)** अतीव प्रीति करते हुए **(अदितिः)** अखण्डित नीति **(मित्रः)** मित्र **(अर्यमा)** व्यवस्था देने वाला **(वरुणः)** श्रेष्ठ **(अस्माकम्)** हमारे **(भुवनस्य)** जल आदि लोकसमूह की **(गोपाः)** रक्षा करने वाले हैं **(नः)** हमारी **(अवसे)** रक्षा आदि के लिये **(मादयन्ताम्)** आनन्द देते हैं **(अद्य)** आज **(सोमम्)** बड़ी-बड़ी ओषधियों के रस को **(पिबन्तु)** पीवें, वैसे वे **(आदित्यासः)** पूर्ण विद्वान् वा संवत्सर के महीने हमारे जलादि वा लोक-समूह की रक्षा करने वाले **(सन्तु)** हों॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! तुम आदित्य के समान विद्या प्रकाश से, वैद्य के समान ओषधियों के सेवने से नीरोग होकर हमारा भी आरोग्य करो॥२॥

पुनः केषां रक्षणेन सर्वं सुखं संभवतीत्याह॥

फिर किसकी रक्षा से सब सुख होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आदित्या विश्वे मरुतश्च विश्वे देवाश्च विश्वे ऋभवश्च विश्वे।
इन्द्रो अग्निरश्विना तुष्टुवाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥३॥१८॥

आदित्याः। विश्वे। मरुतः। च। विश्वे। देवाः। च। विश्वे। ऋभवः। च। विश्वे। इन्द्रः। अग्निः। अश्विना। तुस्तुवानाः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥३॥

पदार्थः-**(आदित्याः)** संवत्सरस्य मासा इव विद्यावृद्धाः **(विश्वे)** सर्वे **(मरुतः)** मनुष्याः **(च) (विश्वे) (देवाः)** विद्वांसः **(च) (विश्वे)** अखिलाः **(ऋभवः)** मेधाविनः **(च) (विश्वे) (इन्द्रः)** विद्युत् **(अग्निः) (अश्विना)** सूर्याचन्द्रमसौ **(तुष्टुवानाः)** प्रशंसन्तः **(यूयम्) (पात) (स्वस्तिभिः)** समग्रैस्सुखैः **(सदा) (नः)** अस्माकम्॥३॥

अन्वयः-हे विश्व आदित्या विश्वे मरुतश्च विश्वे देवाश्च विश्वे ऋभवश्च इन्द्रोऽग्निरश्विना तुष्टुवाना विद्वांसो यूय स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥३॥

भावार्थः-यस्मिन्देशे सर्वे विद्वांसो धीमन्तः चतुरा धार्मिकाश्च रक्षका विद्याप्रदा उपदेशकास्सन्ति तत्र सर्वतो रक्षिता भूत्वा सर्वे सुखिनो भवन्तीति॥३॥

अत्रादित्यवद् विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इत्येकपञ्चाशत्तमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(विश्वे)** सब **(आदित्याः)** संवत्सर के महीनों के समान विद्यावृद्ध **(विश्वे, मरुतः, च)** और समस्त **(विश्वे, देवाः, च)** और समस्त विद्वान् **(विश्वे, ऋभवः, च)** और बुद्धिमान् जन **(इन्द्रः)** बिजुली **(अग्निः)** साधारण अग्नि **(अश्विना)** सूर्य चन्द्रमा **(तुष्टुवानाः)** प्रशंसा करते हुए विद्वान् जन तथा **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सर्वदा **(पात)** रक्षा करो॥३॥

भावार्थः-जिस देश में सब विद्वान् जन बुद्धिमान् चतुर धार्मिक और रक्षा करने और विद्या देने वाले उपदेशक हैं, वहाँ सब से रक्षायुक्त होकर सब सुखी होते हैं॥३॥

इस सूक्त में सूर्य के समान विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह इक्यावनवां सूक्त और अठारहवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ त्र्यृचस्य [द्विपञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। आदित्या देवताः। १, ३ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

अब बावनवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर मनुष्य कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

आ॒दि॒त्यासो॒ अदि॑तयः स्याम॒ पूर्दे॑व॒त्रा व॑सवो मर्त्य॒त्रा।
सने॑म मित्रावरुणा॒ सन॑न्तो॒ भवे॑म द्यावापृथिवी॒ भव॑न्तः॥ १॥

आ॒दि॒त्यास॑ः। अदि॑तयः। स्या॒म॒। पूः। दे॒व॒ऽत्रा। व॒स॒वः। म॒र्त्य॒ऽत्रा। सने॑म। मि॒त्रा॒व॒रु॒णा॒। सन॑न्तः। भवे॑म। द्या॒वा॒पृ॒थि॒वी॒ इति॑। भव॑न्तः॥ १॥

पदार्थः-(**आदित्यासः**) मासा इव (**अदितयः**) अखण्डिताः (**स्याम**) भवेम (**पूः**) नगरीव (**देवत्रा**) देवेषु वर्तमानाः (**वसवः**) निवसन्तः (**मर्त्यत्रा**) मर्त्येषूपदेशकाः (**सनेम**) विभजेम (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानौ (**सनन्तः**) सेवमानाः (**भवेम**) (**द्यावापृथिवी**) सूर्यभूमी इव (**भवन्तः**)॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयं देवत्राऽऽदित्यासोऽदितयः स्याम यथा मर्त्यत्रा वसवस्सन्तस्सनेम पूरिव मित्रावरुणा सनन्तो द्यावापृथिवी इव भवन्तो भवेम तथा यूयमपि भवत॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं आप्तविद्वद्वद्वर्तित्वा धार्मिकेषु विद्वत्सु न्युष्य सत्यासत्ये विभज्य सूर्यभूमीवत् परोपकारं कृत्वा विश्वसुखाय प्राणोदानवत् सर्वेषामुन्नतये भवत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग (**देवत्रा**) देवों में वर्त्तमान (**आदित्यासः**) महीने के समान (**अदितयः**) अखण्डित (**स्याम**) हों जैसे (**मर्त्यत्रा**) मनुष्यों में उपदेशक (**वसवः**) निवास करते हुए (**सनेम**) विभाग करें (**पूः**) नगरी के समान (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान दोनों (**सनन्तः**) सेवन करते हुए (**द्यावापृथिवी**) सूर्य और भूमि के समान (**भवन्तः**) आप (**भवेम**) हों, वैसे आप भी हों॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! तुम आप्त विद्वान् के समान वर्त कर धार्मिक विद्वानों में निरन्तर बस कर सत्य और असत्य का विभाग कर सूर्य और भूमि के समान परोपकार कर विश्व के सुख के लिये प्राण और उदान के सदृश सब की उन्नति के लिये होओ॥१॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मि॒त्रस्तन्नो॒ वरु॑णो मामहन्त॒ शर्म॑ तो॒काय॒ तन॑याय गो॒पाः।
मा वो॑ भुजेमा॒न्यजा॑त॒मेनो॒ मा तत्कर्म॑ वसवो॒ यच्चय॑ध्वे॥ २॥

मि॒त्रः। तत्। नः॒। वरु॑णः। मा॒म॒ह॒न्त॒। शर्म॑। तो॒काय॑। तन॑याय। गो॒पाः। मा। वः॒। भु॒जे॒म॒। अ॒न्यऽजा॑तम्। एनः॑। मा। तत्। क॒र्म॒। व॒स॒वः॒। यत्। चय॑ध्वे॥ २॥

पदार्थः-(**मित्रः**) प्राण इव सखा (**तत्**) सुखम् (**नः**) अस्माकम् (**वरुणः**) जलमिव पालकः (**मामहन्त**) सत्कुर्वन्तु। अत्र **तुजादीनामित्यभ्यासदैर्घ्यम्**। (**शर्म**) सुखं गृहं वा (**तोकाय**) सद्यो जातायापत्याय (**तनयाय**) सुकुमाराय (**गोपाः**) रक्षकाः (**मा**) (**वः**) युष्मान् (**भुजेम**) अभ्यवहरेम (**अन्यजातम्**) अन्यास्मादुत्पन्नम् (**एनः**) पापम् (**मा**) (**तत्**) (**कर्म**) (**वसवः**) निवसन्तः (**यत्**) (**चयध्वे**) संचिनुत॥२॥

अन्वयः-हे वसवो! यदन्यजातमेनोऽस्ति तत्कर्म यूयं मा चयध्वे यथा गोपाः शर्म मामहन्त तथा नस्तोकाय तनयाय तत् मित्रो वरुणश्च प्रदद्यताम् येन वयं व एनो मा भुजेम॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! भवन्तस्सदैव ब्रह्मचर्यविद्यादानाभ्यां स्वापत्यानि रक्षयित्वा सत्कृत्य वर्धयन्तु स्वयं पापमकृत्वाऽन्येन कृतमपि मा भजन्तु॥२॥

पदार्थः-हे (**वसवः**) निवास करने वालो! (**यत्**) जो (**अन्यजातम्**) और से उत्पन्न (**एनः**) पाप कर्म है (**तत्**) वह (**कर्म**) कर्म तुम (**मा**) मत (**चयध्वे**) इकट्ठा करो जैसे (**गोपाः**) रक्षा करने वाले (**शर्म**) सुख वा घर को (**मामहन्त**) सत्कार से वर्तें, वैसे (**नः**) हमारे (**तोकाय**) शीघ्र उत्पन्न हुए बालक के लिये और (**तनयाय**) सुन्दर कुमार के लिये उसको (**मित्रः**) प्राण के समान मित्र (**वरुणः**) जल के समान पालने वाला देवें, जिससे हम लोग (**वः**) तुम लोगों को और पाप (**मा**) मत (**भुजेम**) भोगें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप सदैव ब्रह्मचर्य्य और विद्यादान से अपने लड़कों की रक्षा और सत्कार कर बढ़ावें और आप पाप न करके और से किये हुए को भी न सेवें॥२॥

पुनर्मनुष्याः किंवद्भूत्वा किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके तुल्य होकर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तु॒र॒ण्यवोऽङ्गि॑रसो नक्षन्त॒ रत्नं॑ दे॒वस्य॑ सवि॒तुरि॑या॒नाः।
पि॒ता च॒ तन्नो॑ म॒हान् यज॑त्रो॒ विश्वे॑ दे॒वाः सम॑नसो जुषन्त॥३॥१९॥

तु॒र॒ण्यव॑ः। अङ्गि॑रसः। न॒क्ष॒न्त॒। रत्न॑म्। दे॒वस्य॑। स॒वि॒तुः। इ॒या॒नाः। पि॒ता। च॒। तत्। न॒ः। म॒हान्। यज॑त्रः। विश्वे॑। दे॒वाः। स॒ऽम॑नसः। जु॒ष॒न्त॒॥३॥

पदार्थः-(**तुरण्यवः**) क्षिप्रं कर्तारः (**अङ्गिरसः**) प्राणा इव (**नक्षन्त**) व्याप्नुवन्तु (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**देवस्य**) प्रकाशमानस्य (**सवितुः**) सकलजगदुत्पादकस्य परमेश्वरस्य (**इयानाः**) अधीयमानाः (**पिता**) जनक इव (**च**) (**तत्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**महान्**) पूजनीयः सर्वेभ्यो महान् (**यजत्रः**) संगन्तव्यो ध्येयः (**विश्वे**) सर्वे (**देवाः**) विद्वांसः (**समनसः**) समानं मनोऽन्तःकरणं येषां ते (**जुषन्त**) सेवन्ताम्॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये तुरण्यवोऽङ्गिरसस्समनस इयाना जनाः सवितुर्देवस्य सृष्टौ यद्रत्नं नक्षन्त तत्पितेव वर्तमानो महान् यजत्र ईश्वरो विश्वे देवाश्च नोऽस्मभ्यं जुषन्त॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्वांसोऽस्यामीश्वरकृतसृष्टौ विद्यापुरुषार्थविद्वत्सेवाद्यैः सर्वाणि सुखानि लभन्ते तथा भवन्तो लभन्तां सर्वे मिलित्वा पितृवत्पालकं परमात्मानं सततमुपासीरन्निति॥३॥

अत्र विश्वेदेवगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति द्विपञ्चाशत्तमं सूक्तमेकोनविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **[जो]** **(तुरण्यवः)** शीघ्र करने वाले **(अङ्गिरसः)** प्राणों के समान **(समनसः)** समान अन्तःकरण युक्त **(इयानाः)** पढ़ते हुए **[जन]** **(सवितुः)** सकल जगत् उत्पन्न करने वाले **(देवस्य)** प्रकाशमान परमेश्वर की सृष्टि में जिस **(रत्नम्)** रमणीय धन को **(नक्षन्त)** व्याप्त हो **(तत्)** वह **(पिता)** उत्पन्न करने वाले के समान वर्त्तमान **(महान्)** सब से सत्कार **(यजत्रः)** संग और ध्यान करने योग्य ईश्वर **(विश्वे, देवाः, च)** और सब विद्वान् जन **(नः)** हम लोगों के लिये **(जुषन्त)** सेवें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन इस ईश्वरकृत सृष्टि में विद्या पुरुषार्थ और विद्वानों की सेवा आदि से सब सुखों को पाते हैं, वैसे आप प्राप्त हों सब मिल कर पिता के समान पालना करने वाला परमात्मा की निरन्तर उपासना करें॥३॥

इस सूक्त में विश्वेदेवों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह बावनवां सूक्त और उन्नीसवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ त्र्यृचस्य [त्रिपञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। द्यावापृथिवी देवते। १ त्रिष्टुप्। २, ३ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

अब तीन ऋचा वाले त्रेपनवें सूक्त का प्रारम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में अब विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र द्यावा॑ य॒ज्ञैः पृ॑थि॒वी नमो॑भिः स॒बाध॑ ईळे बृह॒ती यज॑त्रे।

ते चि॒द्धि पूर्वे॑ क॒वयो॑ गृ॒णन्तः॑ पु॒रो म॒ही द॑धि॒रे दे॒वपु॑त्रे॥ १॥

प्र। द्यावा॑। य॒ज्ञैः। पृ॒थि॒वी इति॑। नमः॑ऽभिः। स॒ऽबाधः॑। ई॒ळे॒। बृ॒ह॒ती इति॑। यज॑त्रे॒ इति॑। ते इति॑। चि॒त्। हि। पूर्वे॑। क॒वयः॑। गृ॒णन्तः॑। पु॒रः। म॒ही इति॑। द॒धि॒रे। दे॒वपु॑त्रे॒ इति॑ दे॒वऽपु॑त्रे॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**द्यावा**) (**यज्ञैः**) संगतिकरणैः कर्मभिः (**पृथिवी**) सूर्यभूमी (**नमोभिः**) अन्नादिभिः (**सबाधः**) बाधेन सह वर्त्तमानः (**ईळे**) गुणैः प्रशंसामि (**बृहती**) महत्यौ (**यजत्रे**) संगन्तव्ये (**ते**) (**चित्**) अपि (**हि**) (**पूर्वे**) (**कवयः**) विद्वांसः (**गृणन्तः**) स्तुवन्तः (**पुरः**) पुराणि (**मही**) महत्यौ (**दधिरे**) धरन्ति (**देवपुत्रे**) देवा विद्वांसः पुत्राः पुत्रवत्पालका ययोस्ते॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सबाधोऽहं नमोभिर्यज्ञैर्ये मही बृहती यजत्रे पुरो धरन्त्यौ देवपुत्रे द्यावापृथिवी पूर्वे कवयो गृणन्तो दधिरे ते चिद्धि प्रेळे॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सर्वधारकौ भूमिसूर्यौ विद्वांसो विज्ञायोपकुर्वन्ति तथा यूयमपि कुरुत॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो जैसे (**सबाधः**) पीड़ा के सहित वर्त्तमान मैं (**नमोभिः**) अन्नादिकों से और (**यज्ञैः**) संगति करने-कराने वालों से जो (**मही**) बड़े (**बृहती**) बड़े (**यजत्रे**) संग करने योग्य (**पुरः**) नगरों को धारण करने वाली (**देवपुत्रे**) देवपुत्र अर्थात् विद्वान् जन जिनकी पुत्र के समान पालना करते वाले हैं उन (**द्यावापृथिवी**) सूर्य और भूमि को (**पूर्वे**) अगले (**कवयः**) विद्वान् जन (**गृणन्तः**) स्तुति करते हुए (**दधिरे**) धारण करते हैं (**ते, चित्**) (**हि**) उन्हीं की (**प्र, ईळे**) अच्छे प्रकार गुणों से प्रशंसा करता हूँ॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सबको धारण करने वाले भूमि और सूर्य को विद्वान् जन जान कर उपकार करते हैं, वैसे तुम भी करो॥ १॥

पुनस्ते भूमिविद्युतौ कीदृश्यौ स्त इत्याह॥

फिर वे भूमि और बिजुली कैसी हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र पू॑र्व॒जे पि॒तरा॒ नव्य॑सीभिर्गी॒र्भिः कृ॑णु॒ध्वं सद॑ने ऋ॒तस्य॑।

आ नो॑ द्यावापृथिवी॒ दैव्ये॑न॒ जने॑न यातं॒ महि॑ वां॒ वरू॑थम्॥ २॥

प्र। पू॒र्व॒जे इति॑ पू॒र्व॒ऽजे। पि॒तरा॑। नव्य॑सीभिः। गी॒ःऽभिः। कृ॒णु॒ध्व॒म्। सद॑ने॒ इति॑। ऋ॒तस्य॑। आ। न॒ः। द्या॒वा॒पृ॒थि॒वी॒ इति॑। दैव्ये॑न। जने॑न। या॒त॒म्। महि॑। वा॒म्। वरू॑थम्॥ २॥

पदार्थः-(**प्र**) (**पूर्वजे**) पूर्वस्माज्जाते (**पितरा**) मातापितृवद्वर्तमाने (**नव्यसीभिः**) अतिशयेन नवीनाभिः (**गीर्भिः**) सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः (**कृणुध्वम्**) कुरुत (**सदने**) सीदन्ति ययोस्ते (**ऋतस्य**) सत्यस्योदकस्य वा (**आ**) (**नः**) अस्माकम् (**द्यावापृथिवी**) भूमिविद्युतौ (**दैव्येन**) देवैर्विद्वद्भिः कृतेन विदुषा (**जनेन**) प्रसिद्धेन मनुष्येण (**यातम्**) प्राप्नुयातम् (**महि**) महत् (**वाम्**) युवयोः स्त्रीपुरुषयोः (**वरूथम्**) वरं गृहम्॥२॥

अन्वयः-हे शिल्पिनो विद्वांसो! यूयं नव्यसीभिर्गीर्भिर्ऋतस्य सम्बन्धे सदने पूर्वजे पितरेव वर्त्तमाने द्यावापृथिवी दैव्येन जनेन वां महि वरूथमा यातं तथेमे नः कृणुध्वम्॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे स्त्रीपुरुषा! यूयं पदार्थविद्यया पृथिव्यादिविज्ञानं कृत्वा सुन्दराणि गृहाणि निर्माय तत्र मनुष्यसुखोन्नतिं कुरुत॥२॥

पदार्थः-हे शिल्पि विद्वानो! तुम (**नव्यसीभिः**) अतीव नवीन (**गीर्भिः**) सुशिक्षित वाणियों से (**ऋतस्य**) सत्य वा जल के सम्बन्ध में (**सदने**) स्थानरूप जिन में स्थिर होते हैं वे (**पूर्वजे**) आगे से उत्पन्न हुए (**पितरा**) माता-पिता के समान वर्त्तमान (**द्यावापृथिवी**) भूमि और बिजुली (**दैव्येन**) विद्वानों ने बनाये हुए विद्वान् (**जनेन**) प्रसिद्ध जन से (**वाम्**) तुम दोनों के (**महि**) बड़े (**वरूथम्**) श्रेष्ठ घर को (**आ, यातम्**) प्राप्त हों, वैसे इनको (**नः**) हमको (**कृणुध्वम्**) सिद्ध करो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे स्त्री-पुरुषो! तुम पदार्थविद्या से पृथिवी आदि का विज्ञान करके सुन्दर घर बना वहाँ मनुष्यों के सुखों की उन्नति करो॥२॥

पुनर्मनुष्यैर्भूम्यादिगुणा वेदितव्या इत्याह॥

फिर मनुष्यों को भूमि आदि के गुण जानने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उतो हि वां रत्नधेयानि सन्ति पुरूणि द्यावापृथिवी सुदासे।
अस्मे धत्तं यदसदस्कृधोयु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥३॥२०॥

उतो इति। हि। वाम्। रत्नऽधेयानि। सन्ति। पुरूणि। द्यावापृथिवी इति। सुऽदासे। अस्मे इति। धत्तम्। यत्। असत्। अस्कृधोयु। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥३॥

पदार्थः-(**उतो**) अपि (**हि**) (**वाम्**) युवयोः (**रत्नधेयानि**) रत्नानि धीयन्ते येषु तानि (**सन्ति**) (**पुरूणि**) बहूनि (**द्यावापृथिवी**) भूमिविद्युतौ (**सुदासे**) शोभना दासाः दातारो ययोस्ते (**अस्मे**) अस्मासु (**धत्तम्**) धरेतम् (**यत्**) (**असत्**) भवेत् (**अस्कृधोयु**) अस्थूलम् (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**)॥३॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! ये सुदासे द्यावापृथिवी वर्त्तेते यत्र वां हि पुरूणि रत्नधेयानि धनाधिकरणानि सन्ति ते अस्मे धत्तं यदुतो अस्कृधोयु असत् येन सहिता यूयं स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्युद्भूमिगुणान् विज्ञाय तत्रस्थानि रत्नानि प्राप्य सर्वार्थं सुखं विदधति ते सर्वतस्सदा सुरक्षिता भवन्तीति॥३॥

अत्र द्यावापृथिवीगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति त्रिपञ्चाशत्तमं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! जो **(सुदासे)** सुन्दर दानशीलों वाले **(द्यावापृथिवी)** भूमि और बिजुली वर्त्तमान हैं अथवा जिनमें **(वाम्)** तुम दोनों के **(हि)** ही **(पुरूणि)** बहुत **(रत्नधेयानि)** रत्न जिनमें भरे जाते **(सन्ति)** हैं वे धन धरने के पदार्थ हैं **(ते)** वे भूमि और बिजुली **(अस्मे)** हम लोगों में **(धत्तम्)** धारण करें **(यत्)** जो **(उतो)** कुछ **[भी]** **(अस्कृधोयु)** कृश हो अर्थात् मोटा न **(असत्)** हो उसके साथ **(युवम्)** तुम लोग **(स्वस्तिभिः)** सुखों से **(वः)** हम लोगों की **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा करो॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य बिजुली और भूमि के गुणों को जान कर वहाँ स्थित जो रत्न उनको पाकर सब के लिये सुख का विधान करते हैं, वे सब ओर से सदा सुरक्षित होते हैं॥३॥

इस सूक्त में द्यावापृथिवी के गुणों और कृत्यों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह त्रेपनवां सूक्त और बीसवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ त्र्यृचस्य [चतुष्पञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठिर्षिः। वास्तोष्पतिर्देवता। १, ३ निचृत्त्रिष्टुप्। २ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

मनुष्याः गृहं निर्माय तत्र किं कुर्वन्तीत्याह॥

अब तीन ऋचा वाले चौवनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य घर बना कर उस में क्या करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान् त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः।
यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे॥१॥

वास्तोः। पते। प्रति। जानीहि। अस्मान्। सुऽआवेशः। अनमीवः। भव। नः। यत्। त्वा। ईमहे। प्रति। तत्। नः। जुषस्व। शम्। नः। भव। द्विऽपदे। शम्। चतुःऽपदे॥१॥

पदार्थः-(**वास्तोः**) वासहेतोर्गृहस्य (**पते**) स्वामिन् (**प्रति**) (**जानीहि**) (**अस्मान्**) (**स्वावेशः**) स्वः आवेशो यस्य सः (**अनमीवः**) रोगरहितः (**भव**) अत्र **द्व्यचो०** इति दीर्घः। (**नः**) अस्माकम् (**यत्**) यत्र (**त्वा**) त्वाम् (**ईमहे**) प्राप्नुयाम (**प्रति**) (**तत्**) सह (**नः**) अस्मान् (**जुषस्व**) सेवस्व (**शम्**) सुखकारी (**नः**) अस्माकम् (**भव**) (**द्विपदे**) मनुष्याद्याय (**शम्**) (**चतुष्पदे**) गवाद्याय॥१॥

अन्वयः-हे वास्तोष्पते गृहस्थ! त्वमस्मान् प्रति जानीहि त्वमत्र नो गृहे स्वावेशोऽनमीवो भव यद्यत्र वयं त्वेमहे तन्नः प्रति जुषस्व त्वन्नो द्विपदे शं चतुष्पदे शं भव॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्यास्सर्वतोद्वारं पुष्कलावकाशं गृहं निर्माय तत्र वसन्ति रोगरहिता भूत्वा स्वेभ्यश्चान्येभ्यश्च सुखं प्रयच्छन्ति ते सर्वेषां मङ्गलप्रदा भवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**वास्तोः**) निवास कराने वाले घर के (**पते**) स्वामी गृहस्थ जन! आप (**अस्मान्**) हम लोगों के (**प्रति, जानीहि**) प्रतिज्ञा से जानो आप (**नः**) हमारे घर में (**स्वावेशः**) सुख में हैं सब ओर से प्रवेश जिनको ऐसे और (**अनमीवः**) नीरोग (**भव**) हूजिये (**यत्**) जहाँ हम लोग (**त्वा**) आपको (**ईमहे**) प्राप्त हों (**तत्**) उसको (**नः**) हमारे (**प्रति, जुषस्व**) प्रति सेवो आप (**नः**) हम लोगों के (**द्विपदे**) मनुष्य आदि जीव (**शम्**) सुख करने वाले और (**चतुष्पदे**) गौ आदि पशु के लिये (**शम्**) सुख करने वाले (**भव**) हूजिये॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य सब ओर द्वार और बहुत अवकाश वाले घर को बना कर उस में वसते और रोगरहित होकर अपने तथा औरों के लिये सुख देते हैं, वे सबको मङ्गल देने वाले होते हैं॥१॥

पुनर्गृहस्थः किं कृत्वा कान् के इव रक्षेदित्याह॥

फिर गृहस्थ क्या करके किनको किसके समान रक्खे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो।
अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रति नो जुषस्व॥२॥

वास्तोः। पते। प्रऽतरणः। नः। एधि। गयऽस्फानः। गोभिः। अश्वेभिः। इन्दो इति। अजरासः। ते।

सुख्ये। स्याम। पिताऽइंव। पुत्रान्। प्रति। नः। जुषस्व॥ २॥

पदार्थः-(**वास्तोः**) गृहस्य (**पते**) पालक (**प्रतरणः**) प्रकर्षेण दुःखात्तारकः (**नः**) अस्माकम् (**एधि**) भव (**गयस्फानः**) गृहस्य वर्धकः (**गोभिः**) गवादिभिः (**अश्वेभिः**) तुरङ्गादिभिः (**इन्दो**) आनन्दप्रद (**अजरासः**) जरारोगरहिताः (**ते**) तव (**सख्ये**) मित्रत्वे (**स्याम**) (**पितेव**) (**पुत्रान्**) (**प्रति**) (**नः**) अस्मान् (**जुषस्व**)॥ २॥

अन्वयः-हे इन्दो वास्तोष्पते! त्वं गोभिरश्वेभिर्गयस्फानः प्रतरणो नोऽस्माकं सुखकार्येधि यस्य ते सख्ये अजरासः वयं स्याम स त्वं नोऽस्मान् पुत्रान् पितेव प्रति जुषस्व॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्या उत्तमं गृहं निर्माय गवादिभिः पशुभिरलंकृत्य शोधयित्वा प्रजाया वर्धका भूत्वाऽक्षयं मित्रत्वं सर्वेषु संभाव्य यथा पिता पुत्रान् रक्षति तथैव सर्वान् रक्षन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्दो**) आनन्द के देने वाले (**वास्तोष्पते**) घर के रक्षक! आप (**गोभिः**) गौ आदि से (**अश्वेभिः**) घोड़े आदि से (**गयस्फानः**) घर की वृद्धि करने (**प्रतरणः**) उत्तमता से दुःख से तारने और (**नः**) हमारे सुख करने वाले (**एधि**) हूजिये जिन (**ते**) आप के (**सख्ये**) मित्रपन में हम लोग (**अजरासः**) शरीर जीर्ण करने वाली वृद्धावस्था से रहित (**स्याम**) हों सो आप (**नः**) हम लोगों को (**पुत्रान्**) पुत्रों को जैसे (**पितेव**) पिता वैसे (**प्रति, जुषस्व**) प्रतीति से सेवो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्य उत्तम घर बना कर गो आदि पशुओं से शोभित कर शुद्ध कर प्रजा के बढ़ाने वाले होकर अक्षय मित्रपन सब में अच्छे प्रकार प्रसिद्ध कराय जैसे पिता पुत्रों की रक्षा करता है, वैसे ही सब की रक्षा करें॥ २॥

पुनस्ते गृहस्थाः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे घर में रहने वाले क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या।
पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ३॥ २१॥

वास्तोः। पते। शग्मया। सम्ऽसदा। ते। सक्षीमहि। रण्वया। गातुऽमत्या। पाहि। क्षेमे। उत। योगे। वरम्। नः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥ ३॥

पदार्थः-(**वास्तोः**) गृहस्य (**पते**) पालक (**शग्मया**) सुखरूपया (**संसदा**) सम्यक् सीदन्ति यस्यां तया (**ते**) तव (**सक्षीमहि**) सम्बध्नीयाम (**रण्वया**) रमणीयया (**गातुमत्या**) प्रशस्तवाग्भूमियुक्तया (**पाहि**) (**क्षेमे**) रक्षणे (**उत**) (**योगे**) अनुपात्तस्योपात्तलक्षणे (**वरम्**) (**नः**) अस्मान् (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) सुखादिभिः (**सदा**) (**नः**)॥ ३॥

अन्वयः-हे वास्तोष्पते! यस्य ते तव शग्मया संसदा रण्वया गातुमत्या सह सक्षीमहि स त्वं योग उत क्षेमे नोऽस्मान् वरं पाहि यूयं स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥ ३॥

भावार्थः-ये गृहस्थाः सज्जनान् सत्कृत्य रक्षन्ति ते तेषां योगक्षेमावुन्नीय सततं तान् पालयन्तीति॥ ३॥

अत्र वास्तोष्पतिगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति चतुष्पञ्चाशत्तमं सूक्तमेकविंशतितमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वास्तोष्पते)** घर की रक्षा करने वाले जिन **(ते)** आप के **(शग्मया)** सुख रूप **(संसदा)** जिस में अच्छे प्रकार स्थिर हों उस **(रण्वया)** रमणीय **(गातुमत्या)** प्रशंसित वाणी वा भूमि से युक्त सभा के साथ **(सक्षीमहि)** सम्बन्ध करें वह आप **(योगे)** न ग्रहण किये हुए पदार्थ के ग्रहण लक्षण विषय में **(उत)** और **(क्षेमे)** रक्षा में **(नः)** हम लोगों की **(वरम्)** उत्तमता जैसे हो, वैसे **(पाहि)** रक्षा करो **(यूयम्)** तुम **(स्वस्तिभिः)** सुखादिकों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सदैव **(पात)** रक्षा करो॥३॥

भावार्थः-जो गृहस्थ सज्जनों का सत्कार कर उनकी रक्षा करते हैं, वे उन के योग-क्षेम की उन्नति कर निरन्तर उनकी पालना करते हैं॥३॥

इस सूक्त में वास्तोष्पति के गुण और कृत्यों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चौपनवां सूक्त और इक्कीसवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथाष्टर्चस्य [पञ्चपञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। [१] वास्तोष्पतिर्देवता। २-८ इन्द्रः। १ निचृद्गायत्रीछन्दः। षड्जः स्वरः। २, ३, ४ बृहतीछन्दः। मध्यमः स्वरः। ५, ७ अनुष्टुप्। ६, ८ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ गृहपतिः किं कुर्यादित्याह॥

अब आठ ऋचा वाले पचपनवें सूक्त का प्रारम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में घर का स्वामी क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अमीवहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्याविशन्। सखा सुशेव एधि नः॥ १॥

अमीवऽहा। वास्तोः। पते। विश्वा। रूपाणि। आऽविशन्। सखा। सुऽशेवः। एधि। नः॥ १॥

पदार्थः-(**अमीवहा**) योऽमीवान् रोगान् हन्ति (**वास्तोः**) गृहस्य (**पते**) स्वामिन् (**विश्वा**) सर्वाणि (**रूपाणि**) (**आविशन्**) आविशन्ति (**सखा**) सुहृत् (**सुशेवः**) सुष्ठुसुखः (**एधि**) भव (**नः**) अस्मभ्यम्॥ १॥

अन्वयः-हे वास्तोष्पते! यत्र गृहे विश्वा रूपाण्याविशन् तत्र नोऽमीवहा सखा सुशेवः सन्नेधि॥ १॥

भावार्थः-हे गृहस्था! यूयं सर्वप्रकाराण्युत्तमानि गृहाणि निर्माय सुखिनो भवत॥ १॥

पदार्थः-हे (**वास्तोष्पते**) घर के स्वामी! जिस घर में (**विश्वा**) सब (**रूपाणि**) रूप (**आविशन्**) प्रवेश करते हैं वहाँ (**नः**) हम लोगों के लिये (**अमीवहा**) रोग हरने वाले (**सखा**) मित्र (**सुशेवः**) सुन्दर सुख वाले होते हुए (**एधि**) प्रसिद्ध हूजिये॥ १॥

भावार्थः-हे गृहस्थो! तुम सर्व प्रकार उत्तम घरों को बना कर सुखी होओ॥ १॥

पुनर्गृहस्थाः कुत्र वासं कुर्युरित्याह॥

फिर गृहस्थ कहाँ वास करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यदर्जुन सारमेय दतः पिशङ्ग यच्छसे।
वीव भ्राजन्त ऋष्टय उप स्रक्वेषु बप्सतो नि षु स्वप॥ २॥

यत्। अर्जुन। सारमेय। दतः। पिशङ्ग। यच्छसे। विऽइव। भ्राजन्ते। ऋष्टयः। उप। स्रक्वेषु। बप्सतः। नि। सु। स्वप॥ २॥

पदार्थः-(**यत्**) (**अर्जुन**) सुखरूप (**सारमेय**) साराणां निर्मातः (**दतः**) दन्तान् (**पिशङ्ग**) पिशङ्गादिवर्णयुक्त (**यच्छसे**) (**वीव**) पक्षीव (**भ्राजन्ते**) प्रकाशन्ते (**ऋष्टयः**) प्रापकः (**उप**) (**स्रक्वेषु**) प्राप्तेषूत्तमेषु गृहेषु (**बप्सतः**) भक्षयतः (**नि**) (**सु**) (**स्वप**) शयस्व॥ २॥

अन्वयः-हे अर्जुन सारमेय! पिशङ्ग यद्यस्त्वं वीव दतो यच्छसे स्रक्वेषु बप्सत ऋष्टय उप भ्राजन्ते स तेषु नि सु स्वप॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यत्रारोग्येन युष्माकं दन्तादयोऽवयवास्सुशोभन्ते तत्रैव निवासं शयनादिव्यवहारं च कुरुत॥ २॥

पदार्थः-हे (**अर्जुन**) अच्छे रूपयुक्त (**सारमेय**) सारवस्तुओं की उत्पत्ति करने वाले (**पिशङ्ग**)

पीछे-पीछे **(यत्)** जो आप **(वीव)** पक्षी के समान **(दतः)** दाँतों को **(यच्छसे)** नियम से रखते हो वह जो **(स्रक्वेषु)** प्राप्त उत्तम घरों में **(बप्सतः)** भक्षण करते हुए **(ऋष्टयः)** पहुँचाने वाले **(उप, भ्राजन्ते)** समीप प्रकाशित होते हैं उन में आप **(नि, सु, स्वप)** निरन्तर अच्छे प्रकार सोओ॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जहाँ आरोग्यपन से तुम्हारे दन्त आदि अवयव अच्छे प्रकार शोभते हैं, वहाँ ही निवास और शयन आदि व्यवहार को करो॥१॥

पुनर्गृहस्थैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर गृहस्थों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्तेनं राय सारमेय तस्करं वा पुनःसर।
स्तोतॄनिन्द्रस्य रायसि किमस्मान् दुच्छुनायसे नि षु स्वप॥३॥

स्तेनम्। राय। सारमेय। तस्करम्। वा। पुनःऽसर। स्तोतॄन्। इन्द्रस्य। रायसि। किम्। अस्मान्। दुच्छुनऽयसे। नि। सु। स्वप॥३॥

पदार्थः-**(स्तेनम्)** चोरम् **(राय)** रासु धनेषु साधो **(सारमेय)** **(तस्करम्)** दस्य्वादिकम् **(वा)** **(पुनःसर)** पुनःपुनः दण्डदानाय प्राप्नुहि **(स्तोतॄन्)** स्तावकान् **(इन्द्रस्य)** परमैश्वर्यस्य **(रायसि)** शब्दयसि **(किम्)** **(अस्मान्)** **(दुच्छुनायसे)** दुष्टेष्वेवाचरसि **(नि)** नितराम् **(सु)** **(स्वप)**॥३॥

अन्वयः-हे राय सारमेय! त्वमिन्द्रस्य स्तेनं वा तस्करं वा पुनस्सर यस्त्वं स्तोतॄन् रायसि सोऽस्मान् किं दुच्छुनायसे स त्वमुत्तमे स्थाने नि सु स्वप॥३॥

भावार्थः-गृहस्थैः स्तेनानां निग्रहं श्रेष्ठानां सत्करणं कृत्वा कदाचिद् श्ववन्नाचरणीयम् सदैव शुद्धवायूदकावकाशे शयितव्यम्॥३॥

पदार्थः-हे **(राय)** धनियों में सज्जन **(सारमेय)** सार वस्तुओं से मान करने योग्य आप **(इन्द्रस्य)** परम ऐश्वर्य्य के **(स्तेनम्)** चोर **(वा)** **(तस्करम्)** डांकू आदि चोर को **(पुनःसर)** फिर फिर दण्ड देने के लिये प्राप्त होओ जो आप **(स्तोतॄन्)** स्तुति करने वालों को **(रायसि)** कहलाते हो **(अस्मान्)** हम लोगों को **(किम्)** क्या **(दुच्छुनायसे)** दुष्टों में, वैसे वैसे आचरण से प्राप्त होंगे सो आप उत्तम स्थान में **(नि, सु, स्वप)** निरन्तर अच्छे प्रकार सोओ॥३॥

भावार्थः-गृहस्थों को चाहिये कि चोरों की रुकावट और श्रेष्ठों का सत्कार कर के कभी कुत्ते के समान न आचरण करें और सदैव शुद्ध वायु, जल और अवकाश में सोवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं सूकरस्य दर्दृहि तव दर्दर्तु सूकरः।
स्तोतॄनिन्द्रस्य रायसि किमस्मान् दुच्छुनायसे नि षु स्वप॥४॥

त्वम्। सूकरस्य। दर्दृहि। तव। दर्दर्तु। सूकरः। स्तोतॄन्। इन्द्रस्य। रायसि। किम्। अस्मान्।

दुच्छुनऽयसे। नि। सु। स्वप॥४॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**सूकरस्य**) यः सुष्ठु करोति (**दर्दृहि**) भृशं वर्धय (**तव**) (**दर्दर्तु**) भृशं वर्द्धताम् (**सूकरः**) यः सम्यक् करोति (**स्तोतॄन्**) विदुषः (**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्यस्य (**रायसि**) रा इवाचरसि (**किम्**) (**अस्मान्**) (**दुच्छुनायसे**) (**नि**) (**सु**) (**स्वप**)॥४॥

अन्वयः-हे गृहस्थ! यस्य सूकरस्येन्द्रस्य तव सूकरो दर्दर्तु त्वं रायसि यत् सर्वान् दर्दृहि स्तोतॄनस्मान् किं दुच्छुनायसे तत्र गृहे सुखेन नि सु स्वप॥४॥

भावार्थः-हे गृहस्थ! त्वमैश्वर्यं संचित्य धर्मे व्यवहारे संवीय विदुषः सत्कृत्य श्रीमानिवाचरास्मान् प्रति किमर्थं श्वेवाचरति नीरोगस्सन् प्रतिसमयं सुखेन शयस्व॥४॥

पदार्थः-हे गृहस्थ! जिस (**सूकरस्य**) सुन्दरता से कार्य करने वाले (**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्य्यवान् (**तव**) तुम्हारे (**सूकरः**) कार्य को अच्छे प्रकार करने वाला (**दर्दर्तु**) निरन्तर बढ़े (**त्वम्**) आप (**रायसि**) लक्ष्मी के समान आचरण करते हो और जो सब को (**दर्दृहि**) निरन्तर उन्नति दें अर्थात् सब की वृद्धि करें (**स्तोतॄन्**) स्तुति करने वाले विद्वान् (**अस्मान्**) हम लोगों को (**किम्**) क्या (**दुच्छुनायसे**) दुष्ट कुत्तों में जैसे वैसे आचरण से प्राप्त होते हो, उस घर में सुख से (**नि, सु, स्वप**) निरन्तर सोओ॥४॥

भावार्थः-हे गृहस्थ! आप ऐश्वर्य का संचय कर, धर्म व्यवहार में अच्छे प्रकार विस्तार कर और विद्वानों का सत्कार कर श्रीमानों के समान आचरण करो, हम लोगों के प्रति किसलिये कुत्ते के समान आचरण करते हैं, नीरोग होते हुए प्रति समय सुख से सोओ॥४॥

पुनर्गृहस्थाः गृहे किं किं कुर्युरित्याह॥

फिर गृहस्थ घर में क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिः।
ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितो जनः॥५॥

सस्तु। माता। सस्तु। पिता। सस्तु। श्वा। सस्तु। विश्पतिः। ससन्तु। सर्वे। ज्ञातयः। सस्तु। अयम्। अभितः। जनः॥५॥

पदार्थः-(**सस्तु**) शयताम् (**माता**) (**सस्तु**) (**पिता**) (**सस्तु**) (**श्वा**) कुक्कुरः (**सस्तु**) (**विश्पतिः**) प्रजापतिः (**ससन्तु**) शयीरन् (**सर्वे**) (**ज्ञातयः**) सम्बन्धिनः (**सस्तु**) (**अयम्**) (**अभितः**) सर्वतः (**जनः**) उत्तमो विद्वान्॥५॥

अन्वयः-ये मनुष्या यथा मद्गृहे मम माताऽभितः सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिस्सस्तु सर्वे ज्ञातयोऽभितः ससन्त्वयं जनः सस्तु तथा युष्माकं गृहेऽपि ससन्तु॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैरीदृशानि गृहाणि निर्मातव्यानि यत्र सर्वेषां सर्वव्यवहारकरणाय पृथक् पृथक् शालागृहाणि च भवेयुः॥५॥

पदार्थः-जो मनुष्य जैसे मेरे घर में मेरी (**माता**) माता (**अभितः**) सब ओर से (**सस्तु**) सोवे

(पिता) पिता **(सस्तु)** सोवे **(श्वा)** कुत्ता **(सस्तु)** सोवे **(विश्पतिः)** प्रजापति **(सस्तु)** सोवे **(सर्वे)** सब **(ज्ञातयः)** सम्बन्धी सब ओर से **(ससन्तु)** सोवें **(अयम्)** यह **(जनः)** उत्तम विद्वान् सोवे, वैसे तुम्हारे घर में भी सोवें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को ऐसे घर रचने चाहियें, जिनमें सब के सर्व व्यवहारों के करने को अलग-अलग शाला और घर होवें॥५॥

पुनर्मनुष्यैः कीदृशानि गृहाणि निर्मातव्यानीत्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसे घर बनाने चाहियें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

य आस्ते यश्च चरति यश्च पश्यति नो जनः।

तेषां स हन्मो अक्षाणि यथेदं हर्म्यं तथा॥६॥

यः। आस्ते। यः। च। चरति। यः। च। पश्यति। नः। जनः। तेषाम्। सम्। हन्मः। अक्षाणि। यथा। इदम्। हर्म्यम्। तथा॥६॥

पदार्थः-**(यः)** **(आस्ते)** उपविशति **(यः)** **(च)** **(चरति)** गच्छति **(यः)** **(च)** **(पश्यति)** **(नः)** अस्मानस्माकं गृहे वा **(जनः)** मनुष्यः **(तेषाम्)** **(सम्)** **(हन्मः)** संहितानि निमीलितान्यादर्शकानि कुर्मः **(अक्षाणि)** इन्द्रियाणि **(यथा)** **(इदम्)** **(हर्म्यम्)** कमनीयं गृहम् **(तथा)**॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेदं हर्म्यमस्ति तथा यो जनो नो गृह आस्ते यश्च चरति यश्च नोऽस्मान् पश्यति तेषामक्षाणि वयं संहन्मस्तथा यूयमप्याचरत॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैरीदृशानि गृहाणि निर्मातव्यानि यत्र सर्वेष्वृतुषु निर्वाहस्स्यात् सर्वं सुखं वर्धेत बहिः स्थाः जना गृहस्थान् सहसा न पश्येयुर्न च गृहस्था बाह्यान् पश्येयुरिति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यथा)** जैसे **(इदम्)** यह **(हर्म्यम्)** मनोहर घर है **(तथा)** वैसे **(यः)** जो **(जनः)** मनुष्य **(नः)** हमारे घर में **(आस्ते)** बैठता है **(यः, चः)** और जो **(चरति)** जाता है **(यः, च)** और जो हम लोगों को **(पश्यति)** देखता है **(तेषाम्)** उन सभों की **(अक्षाणि)** इन्द्रियों को हम लोग **(सम्, हन्मः)** सहित न देखने वाले करें, वैसे तुम भी आचरण करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को ऐसे घर बनाने चाहियें, जिन में सब ऋतुओं में निर्वाह हो, सब सुख, बड़े और बाहर वाले जन गृहस्थों को सहसा न देखें और न घर वाले बाहर वालों को देखें॥६॥

पुनः कीदृशे गृहे गृहस्थैः शयनादिव्यवहाराः कर्तव्य इत्याह॥

फिर कैसे घर में सोना आदि करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सहस्रशृङ्गो वृषभो यः समुद्रादुदाचरत्।

तेना सहस्येना वयं नि जनान्त्स्वापयामसि॥७॥

सहस्रऽशृङ्गः। वृषभः। यः। समुद्रात्। उत्ऽआचरत्। तेन। सहस्येन। वयम्। नि। जनान्।

स्वा॒प॒या॒म॒सि॥७॥

पदार्थः-(**सहस्रशृङ्गः**) सहस्राणि शृङ्गाणि तेजांसि किरणा यस्य सूर्यस्य सः (**वृषभः**) वृष्टिकरः (**यः**) (**समुद्रात्**) अन्तरिक्षात्। **समुद्र इत्यन्तरिक्षनाम।** (निघं०१.३) (**उदाचरत्**) ऊर्ध्वं गच्छति (**तेना**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**सहस्येना**) सहसि बले साधुना। अत्रापि **संहितायामिति** दीर्घः। (**वयम्**) (**नि**) नित्यम् (**जनान्**) (**स्वापयामसि**)॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्सहस्रशृङ्गो वृषभः सूर्यः समुद्राद्यथोदाचरत् तथा तेन सहस्येन गृहेण सह वयं जनान् तत्र नि स्वापयामसि॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! यत्र सूर्यस्य किरणानां स्पर्शस्सर्वतः स्यात् यच्च बलाधिवर्धकं गृहं भवेत् तत्र शुद्धे सर्वान् स्वापयेम वयं च शयीमहि॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**सहस्रशृङ्गः**) हजारों किरण वाला (**वृषभः**) वृष्टि कारण सूर्य (**समुद्रात्**) अन्तरिक्ष से जैसे (**उदाचरत्**) ऊपर जाता है, वैसे (**तेन**) उस के साथ (**सहस्येन**) बल में उत्तम घर से (**वयम्**) हम लोग (**जनान्**) मनुष्यों को (**नि, स्वापयामसि**) निरन्तर सुलावें॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जहाँ सूर्य की किरणों का स्पर्श सब ओर से हो और जो बल का अधिक बढ़ाने वाला घर हो, उसके शुद्ध होने में सब को सुलावें और हम लोग भी सोवें॥७॥

पुनः स्त्रीणां गृहाणि उत्तमानि कार्याणीत्याह॥

फिर स्त्री जनों के घर उत्तम बनावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रो॒ष्ठे॒श॒या व॑ह्येश॒या नारी॒र्यास्त॑ल्प॒शीव॑रीः।

स्त्रियो॒ याः पुण्य॑गन्धा॒स्ताः सर्वाः॑ स्वा॒पया॑मसि॥८॥२२॥३॥

प्रो॒ष्ठे॒ऽश॒याः। व॒ह्ये॒ऽश॒यः। नारीः॑। याः। त॒ल्प॒ऽशीव॑रीः। स्त्रियः॑। याः। पुण्य॑ऽगन्धाः। ताः। सर्वाः॑। स्वा॒प॒या॒म॒सि॥८॥

पदार्थः-(**प्रोष्ठेशयाः**) याः प्रोष्ठे अतिशयेन प्रौढे गृहे शेरते ताः (**वह्येशयाः**) या वह्ये प्रापणीये शेरते ताः (**नारीः**) नरस्य स्त्रियः (**याः**) (**तल्पशीवरीः**) यास्तल्पेषु शेरते ताः (**स्त्रियः**) (**याः**) (**पुण्यगन्धाः**) पुण्यः शुद्धो गन्धो यासां ताः (**ताः**) (**सर्वाः**) (**स्वापयामसि**)॥८॥

अन्वयः-हे गृहस्था! यथा वयं याः प्रोष्ठेशया वह्येशया तल्पशीवरीर्नारीः स्त्रियः याः पुण्यगन्धाः स्युस्ताः सर्वा वयं उत्तमे गृहे स्वापयामसि यूयमप्येता उत्तमे गृहे स्वापयत॥८॥

भावार्थः-हे गृहस्था! यत्र गृहे स्त्रियो वसेयुस्तद्गृहमतीवोत्तमं रक्षणीयं यतः स्वसन्ताना उत्तमा भवेयुः॥८॥

अत्र गृहस्थकृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदे सप्तमे मण्डले तृतीयोनुवाकः पञ्चपञ्चाशत्तमं सूक्तं पञ्चमेऽष्टके चतुर्थेऽध्याये द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग (**याः**) जो (**प्रोष्ठेशयाः**) अतीव सब प्रकार उत्तम सुखों

की प्राप्ति कराने वाले घर में सोती हैं **(वह्येशयाः)** वा जो प्राप्ति कराने वाले घर में सोतीं वा जो **(तल्पशीवरीः)** पलंग पर सोने वाली उत्तम **(नारीः)** स्त्री **(स्त्रियः)** विवाहित तथा **(पुण्यगन्धाः)** जिन का शुद्धगन्ध हो **(ताः)** उन **(सर्वाः)** सभों को हम लोग उत्तम घर में **(स्वापयामसि)** सुलावें, वैसे तुम भी उत्तम घर में सुखाओ॥८॥

भावार्थः-हे गृहस्थो! जिस घर में स्त्री बसें वह घर अतीव उत्तम रखना चाहिये जिससे निज सन्तान उत्तम हों॥८॥

इस सूक्त में गृहस्थों के काम का और गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह ऋग्वेद के सातवें मण्डल में तीसरा अनुवाक, पचपनवां सूक्त और पञ्चम अष्टक के चौथे अध्याय में बाईसवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ पञ्चविंशतितमर्चस्य [षट्पञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। मरुतो देवताः। १ आर्ची गायत्री। २, ६, ७, ९ भुरिगार्चीगायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ३, ४, ५ प्राजापत्या बृहतीछन्दः। मध्यमः स्वरः। ८, १० आर्च्युष्णिक्। ११ निचृदार्च्युष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। १२, १३, १५, १८, १९, २१ निचृत्त्रिष्टुप्। १७, २०, त्रिष्टुप्। २२, २३, २५ विराट् त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। २४ पङ्क्तिः। १४, १६ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ के मनुष्याः श्रेष्ठा भवन्तीत्याह॥

अब पच्चीस ऋचा वाले छप्पनवें सूक्त का आरम्भ हैं, उसके प्रथम मन्त्र में अब कौन मनुष्य श्रेष्ठ होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

क ईं व्यक्ता नरः सनीळा रुद्रस्य मर्या अधा स्वश्वाः॥ १॥

के। ईम्। विऽअक्ताः। नरः। सऽनीळाः। रुद्रस्य। मर्याः। अध। सुऽअश्वाः॥ १॥

पदार्थः-(**के**) (**ईम्**) सर्वतः (**व्यक्ताः**) विशेषेण प्रसिद्धाः कमनीयाः (**नरः**) नेतारो मनुष्याः (**सनीळाः**) समानं नीळं प्रशंसनीयं गृहं येषां ते (**रुद्रस्य**) रोगाणां द्रावकस्य निस्सारकस्य (**मर्याः**) मनुष्याः (**अधा**) अथ। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**स्वश्वाः**) शोभना अश्वाः तुरङ्गा महान्तो जना वा येषां ते॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन्नध क ईं रुद्रस्य स्वश्वा व्यक्ताः सनीळा मर्या नरस्सन्तीति ब्रूहि॥ १॥

भावार्थः-अत्र संसारे क उत्तमाः प्रसिद्धाः प्रशंसनीयाः मनुष्यास्सन्तीत्यस्याग्रस्थे मन्त्रे समाधानं वेद्यमिति॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान्! (**अध**) अनन्तर इस के (**के**) कौन (**ईम्**) सब ओर से (**रुद्रस्य**) रोगों के निकालने वाले के (**स्वश्वाः**) सुन्दर घोड़े वा महान् जल जिस में विद्यमान हैं (**व्यक्ताः**) विशेषता से प्रसिद्ध (**सनीळाः**) समान घर वाले (**मर्याः**) मरणधर्मा (**नरः**) नायक मनुष्य हैं, इस को कहो॥ १॥

भावार्थः-इस संसार में कौन उत्तम प्रशंसा करने योग्य मनुष्य हैं, इस का अगले मन्त्र में समाधान जानना चाहिये॥ १॥

पुनर्विद्वांस एव प्रकटकीर्तयो जायन्त इत्याह॥

फिर विद्वान् जन ही प्रकट कीर्ति वाले होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नकिर्ह्येषां जनूंषि वेद ते अङ्ग विद्रे मिथो जनित्रम्॥ २॥

नकिः। हि। एषाम्। जनूंषि। वेद। ते। अङ्ग। विद्रे। मिथः। जनित्रम्॥ २॥

पदार्थः-(**नकिः**) निषेधे (**हि**) यतः (**एषाम्**) (**जनूंषि**) जन्मानि (**वेद**) विदन्ति (**ते**) (**अङ्ग**) सुहृत् (**विद्रे**) लभन्ते (**मिथः**) परस्परम् (**जनित्रम्**) जन्मसाधनं कर्म॥ २॥

अन्वयः-अङ्ग जिज्ञासो! ये ह्येषां जनूंषि नकिर्वेद ते मिथो जनित्रं विद्रे॥ २॥

भावार्थः-ये विदुषां जन्मानि विद्याप्रापकाणि जन्मानि न विदुस्ते प्रसिद्धा न भवन्ति ये च विद्याजन्म

प्राप्नुवन्ति ते हि कृत्यकृत्याः प्रसिद्धा जायन्त इत्युत्तरम्॥२॥

पदार्थः-हे **(अङ्ग)** मित्र जिज्ञासु! जो **(हि)** जिस कारण **(एषाम्)** इन के **(जनूंषि)** जन्मों को **(नकिः)** नहीं **(वेद)** जानते हैं **(ते)** वे उसी कारण **(मिथः)** परस्पर **(जनित्रम्)** जन्म सिद्ध करने वाले कर्म को **(विद्रे)** पाते हैं॥२॥

भावार्थः-जिन विद्वानों के जन्मों को विद्या प्राप्ति कराने वाले न जानते हैं, वे प्रसिद्ध नहीं होते हैं और जो विद्या जन्म पाते हैं, वे ही कृतकृत्य और प्रसिद्ध होते हैं, यह उत्तर है॥२॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि स्वपूभिर्मिथो वपन्त वातस्वनसः श्येना अस्पृध्रन्॥३॥

अभि। स्वऽपूभिः। मिथः। वपन्त। वातऽस्वनसः। श्येनाः। अस्पृध्रन्॥३॥

पदार्थः-**(अभि)** आभिमुख्ये **(स्वपूभिः)** शयानैस्स्वकीयैः पवित्राचरणैः सह **(मिथः)** अन्योन्यम् **(वपन्त)** वपन्ति **(वातस्वनसः)** वातस्य स्वनः शब्द इव शब्दो येषान्ते **(श्येनाः)** श्येन इव पराक्रमिणः **(अस्पृध्रन्)** स्पर्धन्ते॥३॥

अन्वयः-ये गृहस्था वातस्वनसः श्येना इव वर्त्तमानाः स्वपूभिर्मिथो वपन्ताभ्यस्पृध्रन् ते श्रेष्ठैश्वर्या जायन्ते॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये गृहस्थाः परस्परं सत्याचरणानुष्ठानेन गम्भीराशयाः पराक्रमिणो भूत्वा सर्वस्योन्नतिं चिकीर्षन्ति तेऽभिपूजिता भवन्ति॥३॥

पदार्थः-जो गृहस्थ पुरुष **(वातस्वनसः)** पवन के शब्द के समान जिनका शब्द है वे **(श्येनाः)** वाज के समान पराक्रमी **(स्वपूभिः)** सोते हुए अर्थात् अप्रसिद्ध अपने पवित्र आचरणों के साथ **(मिथः)** परस्पर **(वपन्त)** धोते **(अभि, अस्पृध्रन्)** और सम्मुख स्पर्द्धा करते हैं, वे श्रेष्ठ ऐश्वर्य वाले होते हैं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो गृहस्थ परस्पर सत्याचरणानुष्ठान से गम्भीर आशय वाले पराक्रमी होकर सब की उन्नति करना चाहते हैं, वे पूजित होते हैं॥३॥

पुनर्विद्वान् किं कुर्यादित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एतानि धीरो निण्या चिकेत पृश्निर्यदूधो मही जभार॥४॥

एतानि। धीरः। निण्या। चिकेत। पृश्निः। यत्। ऊधः। मही। जभार॥४॥

पदार्थः-**(एतानि)** **(धीरः)** मेधावी विद्वान् **(निण्या)** निश्चितानि **(चिकेत)** **(पृश्निः)** अन्तरिक्षमिव गम्भीराशयोऽक्षोभः **(यत्)** **(ऊधः)** दुग्धाधारम् **(मही)** पृथिवी **(जभार)** बिभर्ति॥४॥

अन्वयः-यो धीरः यदूधः पृश्निर्महो जभार तद्वदेतानि निण्या चिकेत जानीयात्स गृहभारं धर्तुं शक्नुयात्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा पृथिवी सूर्यश्च सर्वान् गृहान् बिभर्ति तथैव ये विद्वांसो निर्णीतान् सिद्धान्ताञ्जानन्ति ते सर्वत्र सत्कर्तव्या भवन्ति॥४॥

पदार्थः-जो **(धीरः)** बुद्धिमान् विद्वान् **(यत्)** जैसे **(ऊधः)** दुग्धधारायुक्त और **(पृश्निः)** अन्तरिक्ष के **(मही)** तथा पृथिवी **(जभार)** धारण करती है, वैसे क्षोभ रहित निष्कम्प गम्भीर **(एतानि)** इन **(निण्या)** पदार्थों को जो **(चिकेत)** जाने, वह घर के भार को धर सके॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे पृथिवी और सूर्य्य सब गृहों को धारण करते हैं, वैसे जो विद्वान् जन निर्णीत सिद्धान्तों को जानते हैं, वे सर्वत्र सत्कार करने योग्य होते हैं॥४॥

का प्रजा उत्तमेत्याह॥

कौन प्रजा उत्तम है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सा विट् सुवीरा मरुद्भिरस्तु सनात्सहन्ती पुष्यन्ती नृम्णम्॥५॥

सा। विट्। सुऽवीरा। मरुत्ऽभिः। अस्तु। सनात्। सहन्ती। पुष्यन्ती। नृम्णम्॥५॥

पदार्थः-**(सा)** **(विट्)** प्रजा **(सुवीरा)** शोभना वीरा यस्यां सा **(मरुद्भिः)** मनुष्यैः **(अस्तु)** **(सनात्)** सनातने **(सहन्ती)** सहनं कुर्वती **(पुष्यन्ती)** पुष्टं कारयित्री **(नृम्णम्)** धनम्॥५॥

अन्वयः-या सुवीरा विट् मरुद्भिः सनात् नृम्णं पुष्यन्ती पीडां सहन्ती वर्त्तते साऽस्माकमस्तु॥५॥

भावार्थः-सैव स्त्री वरा या ब्रह्मचर्येण समग्रा विद्या अधीत्य शूरवीराँस्तनयान् प्रसूते सहनशीला कोशिका भवति॥५॥

पदार्थः-जो **(सुवीरा)** सुन्दर वीरों वाली **(विट्)** प्रजा **(मरुद्भिः)** मनुष्यों के साथ **(सनात्)** सनातन व्यवहार में **(नृम्णम्)** धन को **(पुष्यन्ती)** पुष्ट करवाती और पीड़ा को **(सहन्ती)** सहने वाली वर्त्तमान है **(सा)** वह हमारे लिये **(अस्तु)** होवे॥५॥

भावार्थः-वही स्त्री श्रेष्ठ है जो ब्रह्मचर्य्य से समग्र विद्याओं को पढ़ के शूरवीर पुत्रों को उत्पन्न करती है और वही सहनशील तथा कोश वाली होती है॥५॥

पुनस्ता नार्यः कीदृश्यो भवेयुरित्याह॥

फिर वे स्त्री कैसी हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यामं येष्ठाः शुभा शोभिष्ठाः श्रिया संमिश्ला ओजोभिरुग्राः॥६॥

यामम्। येष्ठाः। शुभा। शोभिष्ठाः। श्रिया। सम्ऽमिश्लाः। ओजःऽभिः। उग्राः॥६॥

पदार्थः-**(यामम्)** प्रहरं प्राप्तव्यं वा **(येष्ठाः)** अतिशयेन यातारः **(शुभा)** शोभनेन **(शोभिष्ठाः)** अतिशयेन शोभायुक्ताः **(श्रिया)** धनेन **(संमिश्लाः)** सम्यक् मित्रत्वेन मिश्रिताः **(ओजोभिः)** पराक्रमादिभिः **(उग्राः)** कठिनगुणकर्मस्वभावाः॥६॥

अन्वयः-हे गृहस्था! याः शुभा शोभिष्ठाः श्रिया संमिश्ला येष्ठा ओजोभिरुग्राः सत्यो यामं प्रापणीयं यान्ति ताः गृहस्थैस्सम्माननीयाः॥६॥

भावार्थः-हे गृहस्था! याः शाला श्रियान्नादिभिर्युक्ताः शोभमानाः प्रापणीयं सुखं प्रयच्छन्ति ताः पतिव्रता स्त्रिय इव सुशोभनीयाः सततं कुरुत॥६॥

पदार्थः-हे गृहस्थो! जो **(शुभा)** शोभन **(शोभिष्ठाः)** अतीव शोभायुक्त **(श्रिया)** धन से **(संमिश्लाः)** अच्छे प्रकार मित्रता के साथ मिली हुई **(येष्ठाः)** अतीव प्राप्त होने और **(ओजेभिः)** पराक्रम आदि से **(उग्राः)** कठिन गुण-कर्म-स्वभाव वाली होती हुई **(यामम्)** प्राप्त होने वाले व्यवहार को पहुँचती हैं, वे गृहस्थों को मान करने योग्य हैं॥६॥

भावार्थः-हे गृहस्थो! जो शालाधर धन और अन्नादि पदार्थों से युक्त शोभायमान प्राप्त होने योग्य सुख को देते हैं, उनको पतिव्रता स्त्रियों के समान सुन्दर शोभायुक्त निरन्तर करो॥६॥

पुनः स्त्रियः कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर स्त्री कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उ॒ग्रं व॒ ओजः॑ स्थि॒रा शवां॒स्यधा॑ म॒रुद्भि॑र्ग॒णस्तुवि॑ष्मान्॥७॥

उ॒ग्रम्। व॒ः। ओजः॑। स्थि॒राः। शवां॑सि। अध॑। म॒रुत्ऽभिः॑। ग॒णः। तु॒वि॑ष्मान्॥७॥

पदार्थः-**(उग्रम्)** तेजस्वी **(वः)** युष्माकम् **(ओजः)** पराक्रमः **(स्थिरा)** स्थिराणि दृढानि **(शवांसि)** बलानि **(अधा)** अथ। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(मरुद्भिः)** उत्तमैर्मनुष्यैः **(गणः)** समूहः **(तुविष्मान्)** बलवान्॥७॥

अन्वयः-हे स्त्रियो! वो मरुद्भिस्सहोग्रम् ओजः स्थिरा शवांस्यध गणस्तुविष्मान् भवतु॥७॥

भावार्थः-या स्त्रियः स्वेषां पतीनां च बलं न ह्रासयन्ति तासां पुत्रपौत्रादिगणो बलवान् जायते॥७॥

पदार्थः-हे स्त्रियो! **(वः)** तुम्हारा **(मरुद्भिः)** उत्तम मनुष्यों के साथ **(उग्रम्)** तेजस्वी **(ओजः)** पराक्रम और **(स्थिरा)** स्थिर दृढ़ **(शवांसि)** बल **(अध)** इस के अनन्तर **(गणः)** समूह **(तुविष्मान्)** बलवान् हो॥७॥

भावार्थः-जो स्त्रियाँ अपने पतियों के बल को न क्षीण करातीं उनका पुत्र-पौत्रादि समूह बलवान् होता है॥७॥

पुनर्गृहस्थः किं कर्म कुर्यादित्याह॥

फिर गृहस्थ कौन काम करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शु॒भ्रो व॒ः शुष्म॒ः क्रुध्मी॒ मनां॑सि॒ धुनि॒र्मुनि॑रिव॒ शर्ध॑स्य धृ॒ष्णोः॥८॥

शु॒भ्रः। व॒ः। शुष्मः॑। क्रु॒ध्मी॑। मनां॑सि। धुनिः॑। मुनिः॑ऽइव। शर्ध॑स्य। धृ॒ष्णोः॥८॥

पदार्थः-**(शुभ्रः)** शुद्धः प्रशंसनीयः **(वः)** युष्माकम् **(शुष्मः)** बलयुक्तो देहः **(क्रुध्मी)** क्रोधशीलानि **(मनांसि)** अन्तःकरणानि **(धुनिः)** कम्पनं चेष्टाकरणम् **(मुनिरिव)** यथा मननशीलो विद्वांस्तथा **(शर्धस्य)** बलयुक्तस्य **(धृष्णोः)** दृढस्य॥८॥

अन्वयः-हे गृहस्था! वो युष्माकं धार्मिकेषु शुभ्रः शुष्मोऽस्तु दुष्टेषु क्रुध्मी मनांसि सन्तु मुनिरिव शर्धस्य धृष्णोर्धुनिरिव वागस्तु॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये गृहस्थाः श्रेष्ठैस्सह सन्धिं दुष्टैस्सह पृथग्भावं रक्षन्ति ते बहुबलं लभन्ते॥८॥

पदार्थः-हे गृहस्थो! **(वः)** तुम्हारा धार्मिक जनों में **(शुभ्रः)** प्रशंसनीय **(शुष्मः)** बलयुक्त देह हो, दुष्टों में **(क्रुध्मी)** क्रोधशील **(मनांसि)** मन हों **(मुनिरिव)** मननशील विद्वान् के समान **(शर्धस्य)** बलयुक्त बली **(धृष्णोः)** दृढ़ के **(धुनिः)** चेष्टा करने के समान वाणी हो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो गृहस्थ जन श्रेष्ठों के साथ मिलाप और दुष्टों के साथ अलग होना रखते हैं, वे बहुत बल पाते हैं॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सनेम्यस्मद्युयोत दिद्युं मा वो दुर्मतिरिह प्रणङ्नः॥९॥

सनेमि। अस्मत्। युयोत। दिद्युम्। मा। वः। दुःऽमतिः। इह। प्रणक्। नः॥९॥

पदार्थः-**(सनेमि)** पुरातनम् **(अस्मत्)** अस्माकं सकाशात् **(युयोत)** पृथक् कुरुत **(दिद्युम्)** प्रज्वलितं शस्त्रास्त्रम् **(मा)** **(वः)** युष्मान् **(दुर्मतिः)** दुष्टधीः **(इह)** अस्मिन् गृहाश्रमे **(प्रणक्)** प्रणाशयेत् **(नः)** अस्मान्॥९॥

अन्वयः-हे विद्वांसः! अस्मत्सनेमि दिद्युं युयोत यत इह वो युष्मान् नोऽस्माँश्च दुर्मतिर्मा प्रणक्॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं सदा दुष्टचारेभ्यो मनुष्येभ्यः पृथक् स्थित्वा शत्रुबलं निवार्य वर्धमाना भवत॥९॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(अस्मत्)** हम से **(सनेमि)** पुराने **(दिद्युम्)** प्रज्वलित शस्त्र और अस्त्र समूह को **(युयोत)** अलग करो जिससे **(इह)** इस गृहाश्रम व्यवहार में **(वः)** तुम लोगों को और **(नः)** हम लोगों को **(दुर्मतिः)** दुष्टबुद्धि **(मा)** मत **(प्रणक्)** नष्ट करावे॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम सदा दुष्टाचारी मनुष्यों से अलग रह कर और शत्रु बल को निवार के बढ़ते हुए होओ॥९॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रिया वो नाम हुवे तुराणामा यत्तृपन्मरुतो वावशानाः॥१०॥२३॥

प्रिया। वः। नाम। हुवे। तुराणाम्। आ। यत्। तृपत्। मरुतः। वावशानाः॥१०॥

पदार्थः-**(प्रिया)** प्रियाणि कमनीयानि **(वः)** युष्माकम् **(नाम)** नामानि **(हुवे)** प्रशंसामि **(तुराणाम्)** सद्यःकारिणाम् **(आ)** **(यत्)** यः **(तृपत्)** तृप्यति **(मरुतः)** प्राण इव प्रिया विद्वांसः **(वावशानाः)** कामयमानाः॥१०॥

अन्वयः-हे वावशाना मरुतस्तुराणां वः प्रिया नामाहं हुवे यद्यः आ तृपत् तं मा च यूयं सत्कुरुत॥१०॥

भावार्थः-ये सर्वेषां प्रियाचरणाः सुखं कामयमाना मनुष्या वर्तन्ते त एव प्रियाणि सुखानि लभन्ते॥१०॥

पदार्थः-हे **(वावशानाः)** कामना करते हुए **(मरुतः)** प्राण के समान प्यारे विद्वानो! **(तुराणाम्)** शीघ्र करने वालों **(वः)** आप लोगों के **(प्रिया)** मनोहर **(नाम)** नामों को मैं **(हुवे)** प्रशंसता हूँ अर्थात् मैं उनकी प्रशंसा करता हूँ **(यत्)** जो **(आ, तृपत्)** अच्छे प्रकार तृप्त होता है उस का और मेरा सत्कार करो॥१०॥

भावार्थः-जो सब के प्रियाचरण करने और सुख की कामना करने वाले मनुष्य वर्त्तमान हैं, वे ही प्रिय सुखों को पाते हैं॥१०॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का उत स्वयं तन्वः शुम्भमानाः॥११॥

सुऽआयुधासः। इष्मिणः। सुऽनिष्काः। उत। स्वयम्। तन्वः। शुम्भमानाः॥११॥

पदार्थः-**(स्वायुधासः)** शोभनान्यायुधानि येषान्ते **(इष्मिणः)** इच्छान्नादियुक्ताः **(सुनिष्काः)** शोभनानि निष्काणि सौवर्णानि येषां ते **(उत)** **(स्वयम्)** **(तन्वः)** शरीराणि **(शुम्भमानाः)** शोभमानाः॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! ये स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का उत स्वयं तन्वः शुम्भमानास्सन्ति त एव विजयप्रशंसे प्राप्नुवन्ति॥११॥

भावार्थः-ये धनुर्वेदमधीत्यारोगशरीरा युद्धविद्याकुशलास्सन्ति त एव धनधान्ययुक्ता भवन्ति॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(स्वायुधासः)** अच्छे हथियारों वाले **(इष्मिणः)** इच्छा और जलादि पदार्थों से युक्त **(सुनिष्काः)** जिन के सुन्दर सुवर्ण के गहने विद्यमान **(उत)** और **(स्वयम्)** आप **(तन्वः)** शरीरों की **(शुम्भमानाः)** शोभा करते हुए वर्त्तमान हैं, वे ही विजय और प्रशंसा को पाते हैं॥

भावार्थः-जो धुनर्वेद को पढ़ के आरोग्ययुक्त शरीर और युद्ध विद्या में कुशल हैं, वे ही धनधान्य युक्त होते हैं॥११॥

केऽत्र संसारे पवित्रा जायन्त इत्याह॥

कौन इस संसार में पवित्र होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुची वो हव्या मरुतः शुचीनां शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः।
ऋतेन सत्यमृतसाप आयञ्छुचिजन्मानः शुचयः पावकाः॥१२॥

शुची। वः। हव्या। मरुतः। शुचीनाम्। शुचिम्। हिनोमि। अध्वरम्। शुचिऽभ्यः। ऋतेन। सत्यम्। ऋतऽसापः। आयन्। शुचिऽजन्मानः। शुचयः। पावकाः॥१२॥

पदार्थः-**(शुची)** शुचीनि पवित्राणि **(वः)** युष्माकम् **(हव्या)** दातुमादातुमर्हाणि **(मरुतः)**

मरणधर्माणो मनुष्या: (**शुचीनाम्**) पवित्राचाराणाम् (**शुचिम्**) पवित्रम् (**हिनोमि**) वर्धयामि (**अध्वरम्**) अहिंसनीयं यज्ञम् (**शुचिभ्य:**) पवित्रेभ्यो विद्वद्भ्य: पदार्थेभ्यो वा (**ऋतेन**) यथार्थेन (**सत्यम्**) अव्यभिचारि नित्यम् (**ऋतसाप:**) ये ऋतेन सपन्ति प्रतिज्ञां कुर्वन्ति ते (**आयन्**) आगच्छन्ति प्राप्नुवन्ति (**शुचिजन्मान:**) पवित्रजन्मवन्त: (**शुचय:**) पवित्रा: (**पावका:**) वह्नय इव वर्त्तमाना:॥१२॥

अन्वय:-हे पावका इव शुचय: शुचिजन्मान ऋतसापो मरुत: शुचीनां वो यानि शुची हव्यान्यसन्ति तेभ्य: शुचिभ्य: शुचिमृतेन सत्यमध्वरं य आयँस्तानहं हिनोमि तं मां सर्वे वर्धयत॥१२॥

भावार्थ:-येषां प्राक्कर्माणि पुण्यात्मकानि सन्ति त एव पवित्रजन्मानोऽथवा येषां वर्तमाने धर्माचरणानि सन्ति ते पवित्रजन्मानो भवन्ति॥१२॥

पदार्थ:-हे (**पावका:**) अग्नि के समान प्रताप सहित वर्त्तमान (**शुचय:**) पवित्र (**शुचिजन्मान:**) पवित्र जन्म वाले (**ऋतसाप:**) जो सत्य से प्रतिज्ञा करते हैं वे (**मरुत:**) मरणधर्मा मनुष्यो (**शुचीनाम्**) पवित्र आचरण करने वाले (**व:**) तुम लोगों के जो (**शुची**) पवित्र (**हव्या**) देने लेने योग्य वस्तु वर्त्तमान हैं उन (**शुचिभ्य:**) पवित्र वस्तुओं से वा पवित्र विद्वानों से (**शुचिम्**) पवित्र को और (**ऋतेन**) यथार्थ भाव से (**सत्यम्**) अव्यभिचारी नित्य (**अध्वरम्**) न नष्ट करने योग्य व्यवहार को (**आयन्**) जो प्राप्त होते हैं उन्हें (**हिनोमि**) बढ़ाता हूँ, उस मुझे सब बढ़ावें॥१२॥

भावार्थ:-जिनके पिछले काम पुण्यरूप हैं वे ही पवित्र जन्म वाले हैं अथवा जिनके वर्त्तमान में धर्मयुक्त आचरण हैं, वे पवित्रजन्मा होते हैं॥१२॥

पुनर्योद्धार: कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर योद्धा कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अंसे॒ष्वा म॑रुतः खा॒दयो॑ वो॒ वक्षः॑सु रु॒क्मा उ॑पशिश्रिया॒णाः।
वि वि॒द्युतो॒ न वृ॒ष्टिभी॑ रुचा॒ना अनु॑ स्व॒धामायु॑धै॒र्यच्छ॑मानाः॥१३॥

अंसे॑षु। आ। म॒रु॒तः॒। खा॒दयः॑। वः॒। वक्षः॑ऽसु। रु॒क्माः। उ॒प॒ऽशि॒श्रि॒या॒णाः। वि। वि॒ऽद्युतः॑। न। वृ॒ष्टिऽभिः॑। रु॒चा॒नाः। अनु॑। स्व॒धाम्। आयु॑धैः। यच्छ॑मानाः॥१३॥

पदार्थ:-(**अंसेषु**) भुजमूलेषु (**आ**) (**मरुत:**) वायव इव बलिष्ठा मनुष्या: (**खादय:**) ये खादन्ति ते (**व:**) युष्माकम् (**वक्ष:सु**) हृदयदेशेषु (**रुक्मा:**) देदीप्यमाना: (**उपशिश्रियाणा:**) ये उपश्रयन्ति ते (**वि**) (**विद्युत:**) स्तनयित्नव: (**न**) इव (**वृष्टिभि:**) (**रुचाना:**) रोचमाना: (**अनु**) (**स्वधाम्**) अन्नम् (**आयुधै:**) शस्त्रास्त्रै: युद्धसाधनै: (**यच्छमाना:**) निग्रहीतार:॥१३॥

अन्वय:-हे मरुतो! ये उपशिश्रियाणा वक्ष:सु रुक्मा: खादयो वृष्टिभिर्विद्युतो नानु स्वधां वि रुचाना आयुधैश्शत्रून् यच्छमाना: तेषां वोंऽसेषु बलमा वर्तते ते भवन्तो विजयिनो भवन्ति॥१३॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। हे शूरवीरा! मनुष्या यथा विद्युतो वृष्टिभिस्सहैव प्रकाशन्ते तथैव यूयं शस्त्रास्त्रै: प्रकाशध्वं स्वशरीरबलं वर्धयित्वोत्तमसेनामुपश्रित्य शत्रुन् निगृह्णीत॥१३॥

पदार्थ:-हे (**मरुत:**) पवनों के समान बलिष्ठ मनुष्यो! जो (**उपशिश्रियाणा:**) समीप सेवने

वाले **(वक्षःसु)** हृदयों में **(रुक्माः)** देदीप्यमान **(खादयः)** भक्षण करते हैं **(वृष्टिभिः)** वर्षाओं से जैसे **(विद्युतः)** बिजुली **(न)** वैसे **(अनु, स्वधाम्)** अनुकूल अन्न को **(वि, रुचानाः)** प्रदीप्त करते हुए **(आयुधैः)** शस्त्र और अस्त्र युद्ध के साधनों से शत्रुओं को **(यच्छमानाः)** पराजय देने वाले उन **(वः)** आप की **(अंसेषु)** भुजाओं की मूलों में बल **(आ)** सब ओर से वर्तमान है, वे आप लोग विजय प्राप्त होने वाले होते हैं॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे शूरवीर पुरुषो! जैसे बिजुली वर्षाओं के साथ ही प्रकाशित होती है, वैसे ही आप लोग शस्त्र और अस्त्रों से प्रकाशित होओ और अपने शरीर बल को बढ़ाके और उत्तम सेना का आश्रय लेकर शत्रुओं को पराजय देओ॥१३॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र बुध्न्या॑ व ईरते महां॑सि प्र नामा॑नि प्रयज्यवस्तिरध्वम्।
सहस्रियं दम्यं॑ भागमेतं गृहमेधीयं॑ मरुतो जुषध्वम्॥१४॥

प्र। बुध्न्या॑ः। वः। ईरते। महां॑सि। प्र। नामा॑नि। प्रऽयज्यवः। तिरध्वम्। सहस्रियम्। दम्य॑म्। भागम्। एतम्। गृहऽमेधीय॑म्। मरुतः। जुषध्वम्॥१४॥

पदार्थः-**(प्र)** **(बुध्न्याः)** बुध्न्येऽन्तरिक्षे मेघाः **(वः)** युष्माकम् **(ईरते)** प्राप्नुवन्ति **(महांसि)** **(प्र)** **(नामानि)** **(प्रयज्यवः)** प्रकर्षेण संगन्तारः **(तिरध्वम्)** शत्रुबलमुल्लङ्घध्वम् **(सहस्रियम्)** सहस्रेषु भवं **(दम्यम्)** दमनीयम् **(भागम्)** भजनीयम् **(एतम्)** **(गृहमेधीयम्)** गृहमेधे गृहस्थे शुद्धे व्यवहारे भवम् **(मरुतः)** वायव इव **(जुषध्वम्)** सेवध्वम्॥१४॥

अन्वयः-हे मरुतः प्रयज्यवो! यूयं ये वो महांसि नामानि बुध्न्याः प्रेरते तैः शत्रून् प्र तिरध्वमेतं सहस्रियं दम्यं गृहमेधीयं भागं जुषध्वम्॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे गृहस्था! यथा मेघाः पृथिवीं सेवन्ते तथैव भवन्तः प्रजाः सेवध्वम् शत्रून्निवार्यातुलसुखं प्राप्नुत॥१४॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** पवनों के समान **(प्रयज्यवः)** उत्तम संग करने वालो! तुम जो **(वः)** तुम लोगों के **(महांसि)** बड़े-बड़े **(नामानि)** नामों को **(बुध्न्याः)** अन्तरिक्ष में उत्पन्न हुए मेघ **(प्र, ईरते)** प्राप्त होते हैं उससे शत्रुओं के **(प्र, तिरध्वम्)** बल को उल्लङ्घन करो **(एतम्)** इस **(सहस्रियम्)** हजारों में हुए और **(दम्यम्)** शान्त करने योग्य **(गृहमेधीयम्)** घर के शुद्ध व्यवहार में हुए **(भागम्)** सेवने करने योग्य विषय को **(जुषध्वम्)** सेवो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे गृहस्थो! जैसे मेघ पृथिवी को सेवते हैं, वैसे ही आप लोग प्रजाजनों को सेओ और शत्रुओं की निवृत्ति कर अतुल सुख पाओ॥१४॥

पुनस्ते मनुष्याः कीदृशा जायेरन्नित्याह॥

फिर वे मनुष्य कैसे प्रसिद्ध हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यदि स्तुतस्य मरुतो अधीथेत्था विप्रस्य वाजिनो हवीमन्।

मक्षू रायः सुवीर्यस्य दात नू चिद्यमन्य आदभदरावा॥ १५॥ २४॥

यदि। स्तुतस्य। मरुतः। अधिऽइथ। इत्था। विप्रस्य। वाजिनः। हवीमन्। मक्षु। रायः। सुऽवीर्यस्य। दात। नु। चित्। यम्। अन्यः। आऽदभत्। अरावा॥ १५॥

पदार्थः-(**यदि**) (**स्तुतस्य**) (**मरुतः**) वायव इव (**अधीथ**) (**इत्था**) अनेन प्रकारेण (**विप्रस्य**) मेधाविनः (**वाजिनः**) वेगयुक्तस्य (**हवीमन्**) हवींषि दातव्यानि वसूनि विद्यन्ते यस्मिन् (**मक्षू**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघे**ति दीर्घः। (**रायः**) धनस्य (**सुवीर्यस्य**) शोभनं वीर्यं यस्मात्तस्य (**दात**) दत्त (**नु**) शीघ्रम्। अत्र **ऋचि तुनुघे**ति दीर्घः। (**चित्**) अपि (**यम्**) (**अन्यः**) (**आदभत्**) हिंस्यात् (**अरावा**) अदाता अवचनो वा॥ १५॥

अन्वयः-हे मरुतो! यदि स्तुतस्य वाजिनो विप्रस्य हवीमन्नित्था मक्ष्वधीथ सुवीर्यस्य रायो दात चिदपि यमन्योऽरावा न्वादभत् तर्हि किं किं विमर्शनं न जायेत॥ १५॥

भावार्थः-ये विदुषः सकाशादधीयते ते समर्था भूत्वा धनस्वामिनो जायन्ते॥ १५॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) पवनों के समान वर्त्तमान मनुष्यो! (**यदि**) यदि (**स्तुतस्य**) प्रशंसित (**वाजिनः**) वेगयुक्त (**विप्रस्य**) मेधावी जन के (**हवीमन्**) जिस में देने योग्य वस्तु विद्यमान उस व्यवहार में (**इत्था**) इस प्रकार से (**मक्षू**) शीघ्र (**अधीथ**) स्मरण करो (**सुवीर्यस्य**) और जिन के सम्बन्ध में शुभ वीर्य होता उस (**रायः**) धन को (**दात**) देओ (**चित्**) और (**यम्**) जिसको (**अन्यः**) अन्य (**अरावा**) न देने वाला जन (**नु**) शीघ्र (**आदभत्**) नष्ट करें तो क्या-क्या विचार न हो॥ १५॥

भावार्थः-जो विद्वान् के समीप से पढ़ते हैं, वे समर्थ अर्थात् विद्यासम्पन्न हो धनपति होते हैं॥ १५॥

पुनस्ते राजजनाः कीदृशाः भवेयुरित्याह॥

फिर वे राजजन कैसे हों इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अत्यासो न ये मरुतः स्वञ्चो यक्षदृशो न शुभयन्त मर्याः।

ते हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्रा वत्सासो न प्रक्रीळिनः पयोधाः॥ १६॥

अत्यासः। न। ये। मरुतः। सुऽअञ्चः। यक्षऽदृशः। न। शुभयन्त। मर्याः। ते। हर्म्येऽस्थाः। शिशवः। न। शुभ्राः। वत्सासः। न। प्रऽक्रीळिनः। पयःऽधाः॥ १६॥

पदार्थः-(**अत्यासः**) येऽतन्त्यध्वानं व्याप्नुवन्ति ते (**न**) इव (**ये**) (**मरुतः**) वायव इव बलिष्ठा मनुष्याः (**स्वञ्चः**) ये सुष्ठ्वञ्चन्ति गच्छन्ति ते (**यक्षदृशः**) ये यक्षान् पूजनीयान् पश्यन्ति ते (**न**) इव (**शुभयन्त**) शुभ इवाचरन्ति (**मर्याः**) मनुष्याः (**ते**) (**हर्म्येष्ठाः**) ये हर्म्ये तिष्ठन्ति ते (**शिशवः**) बालकाः (**न**) इव (**शुभ्राः**) शुद्धाः (**वत्सासः**) सद्योजाता वत्साः (**न**) इव (**प्रक्रीळिनः**) प्रकृष्टा क्रीळा विद्यते येषां ते (**पयोधाः**) ये पयांसि स्वगतानि दधति ते॥ १६॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! ये मर्या अत्यासो न स्वञ्चः पयोधा मरुत इव गतिमन्तो बलिष्ठा यक्षदृशो न हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्रा वत्सासो न प्रक्रीळिनः सन्तः शुभयन्त ते कृतकार्या भवन्ति॥१६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये शूरवीरा अश्ववद्वेगवन्तः कल्याणदृष्टिवत्समीक्षकाः शिशुवत्सरलस्वभावा वत्सवत्क्रीडाकर्तारः वायुवत्सामग्रीधरा राजादयो वीरास्सन्ति त एव विजयप्रतिष्ठे सततं लभन्ते॥१६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(ये)** जो **(मर्याः)** मरणधर्मा मनुष्य **(अत्यासः)** मार्ग को व्याप्त होते हुओं के **(न)** समान **(स्वञ्चः)** सुन्दरता से जाने **(पयोधाः)** वा जलों को धारण करने वाले **(मरुतः)** पवनों के समान निरन्तर चाल वाले बलिष्ठ **(यक्षदृशः)** जो पूजन करने योग्यों को देखते हैं उनके **(न)** समान **(हर्म्येष्ठाः)** अटारियों पर स्थिर होने वाले **(शिशवः)** बालकों के **(न)** समान **(शुभ्राः)** शुद्ध सुन्दर **(वत्सासः)** शीघ्र उत्पन्न हुए बछड़ों के **(न)** समान **(प्रक्रीळिनः)** अच्छे प्रकार खेल वाले होते हुए **(शुभयन्त)** उत्तम के समान आचरण करते हैं **(ते)** वे कृतकार्य होते हैं॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो शूरवीर घोड़े के समान वेग वाले, अच्छी दृष्टि वाले के समान देखने वाले, बालकों के समान सीधे स्वभाव वाले, बछड़ों के समान खेल करने वाले, पवनों के समान पदार्थों के धारण करने वाले राजा आदि वीर जन हैं, वे ही विजय और प्रतिष्ठा को निरन्तर पाते हैं॥१६॥

पुनः के राजजनाः श्रेष्ठाः सन्तीत्याह॥

फिर कौन राजजन श्रेष्ठ हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दृशस्यन्तो नो मरुतो मृळन्तु वरिवस्यन्तो रोदसी सुमेके।
आरे गोहा नृहा वधो वो अस्तु सुम्नेभिरस्मे वसवो नमध्वम्॥१७॥

दृशस्यन्तः। नः। मरुतः। मृळन्तु। वरिवस्यन्तः। रोदसी इति। सुमेके इति सुऽमेके। आरे। गोऽहा। नृऽहा। वधः। वः। अस्तु। सुम्नेभिः। अस्मे इति। वसवः। नमध्वम्॥१७॥

पदार्थः-**(दशस्यन्तः)** बलयन्तः **(नः)** अस्मान् **(मरुतः)** प्राणा इव **(मृळन्तु)** सुखयन्तु **(वरिवस्यन्तः)** परिचरन्तः **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(सुमेके)** सुस्वरूपे **(आरे)** दूरे **(गोहा)** यो गां हन्ति **(नृहा)** यो नॄन् हन्ति **(वधः)** हन्ति येन सः **(वः)** युष्माकम् **(अस्तु)** **(सुम्नेभिः)** सुखैः **(अस्मे)** अस्मान् **(वसवः)** वासयितारः **(नमध्वम्)**॥१७॥

अन्वयः-हे वीरा मरुत इव! दशस्यन्तस्सुमेके रोदसी वरिवस्यन्तो नो मृळन्तु वो युष्माकमारे गोहा नृहा वधोऽस्तु वसवो यूयं सुम्नेभिरस्मे नमध्वम्॥१७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव राजजना उत्तमास्सन्ति ये श्रेष्ठान् सुखयित्वा दुष्टान् घ्नन्त्याप्तत्वा दुष्टेषूग्रा भवन्तीति॥१७॥

पदार्थः-हे वीरो **(मरुतः)** प्राणों के समान! **(दशस्यन्तः)** बल करते और **(सुमेके)** एक से रूप वाले **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी को **(वरिवस्यन्तः)** सेवते हुए जन **(नः)** हम लोगों को

(मृळन्तु) सुख देवें और **(वः)** तुम्हारे **(आरे)** दूर देश में **(गोहा)** गो हत्यारा **(नृहा)** और मनुष्य हत्यारा **(वधः)** वह दोनों जिससे मारते हैं वह **(अस्तु)** दूर हो जाये **(वसवः)** निवास दिखाने वाले तुम लोग **(सुम्नेभिः)** सुखों के साथ **(अस्मे)** हम लोगों को **(नमध्वम्)** नमो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही राजजन उत्तम हैं, जो श्रेष्ठों को सुख देकर दुष्टों को मारते हैं और आप्त जनों को नम के दुष्टों में उग्र होते हैं॥१७॥

पुनस्ते कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर वे राजजन कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ वो होता जोहवीति सत्तः सत्राचीं रातिं मरुतो गृणानः।
य ईवतो वृषणो अस्ति गोपाः सो अद्वयावी हवते व उक्थैः॥१८॥

आ। वः। होता। जोहवीति। सत्तः। सत्राचीम्। रातिम्। मरुतः। गृणानः। यः। ईवतः। वृषणः। अस्ति। गोपाः। सः। अद्वयावी। हवते। वः। उक्थैः॥१८॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(वः)** युष्मान् **(होता)** दाता **(जोहवीति)** भृशमाह्वयति **(सत्तः)** निषण्णः **(सत्राचीम्)** या सत्रा सत्यमञ्चति प्रापयति ताम् **(रातिम्)** दानम् **(मरुतः)** वायव इव मनुष्याः **(गृणानः)** स्तुवन् **(यः)** **(ईवतः)** गच्छतः **(वृषणः)** वृष्टिकरस्य **(अस्ति)** **(गोपाः)** रक्षकः **(सः)** **(अद्वयावी)** छलकपटादिरहितः **(हवते)** आह्वयति **(वः)** युष्मान् **(उक्थैः)** वक्तुमर्हैः वचनैः॥१८॥

अन्वयः-हे मरुतो! यो गृणानः सत्तोऽद्वयावी होता ईवतो वृषणो वो युष्माना जोहवीति सत्राची रातिं ददाति गोपा अस्ति उक्थैर्वे हवते स उत्तमोऽस्तीति विजानीत॥१८॥

भावार्थः-यो राजादिर्जनो भवदाता सर्वस्य रक्षकः मायादिदोषरहितः सत्यविद्याप्रदाता सत्यग्राहकोऽस्ति स एवात्र प्रशंसितो वर्त्तते तमेवोत्तमं मनुष्या विजानन्तु॥१८॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** पवनों के तुल्य मनुष्यो! **(यः)** जो **(गृणानः)** स्तुति करता **(सत्तः)** बैठा हुआ **(अद्वयावी)** छल-कपट आदि से रहित **(होता)** देने वाला **(ईवतः)** जाते हुए **(वृषणः)** वर्षा करने वाले के सम्बन्ध में **(वः)** तुम लोगों को **(आ, जोहवीति)** निरन्तर बुलाता **(सत्राचीम्)** जो सत्य को देती है उस **(रातिम्)** दान को देता और **(गोपाः)** रक्षा करने वाला **(अस्ति)** है तथा **(उक्थैः)** कहने योग्य वचनों से **(वः)** तुम लोगों को **(हवते)** बुलाता है, वह उत्तम है, इस को जानो॥१८॥

भावार्थः-जो राजा आदि जन अभय देने और सब की रक्षा करने वाला, छलकपट आदि दोषरहित, सत्यविद्या दाता और सत्यग्राहक है, वही यहाँ प्रशंसित वर्त्तमान है, उसी को मनुष्य उत्तम जानें॥१८॥

पुनस्ते कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर वे कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमे तुरं मरुतो रामयन्तीमे सहः सहस आ नमन्ति।

इमे शंसं वनुष्यतो नि पान्ति गुरु द्वेषो अररुषे दधन्ति॥१९॥

इमे। तुरम्। मरुतः। रमयन्ति। इमे। सहः। सहसः। आ। नमन्ति। इमे। शंसम्। वनुष्यतः। नि। पान्ति। गुरु। द्वेषः। अररुषे। दधन्ति॥१९॥

पदार्थः-(**इमे**) (**तुरम्**) शीघ्रम् (**मरुतः**) वायव इव (**रमयन्ति**) (**इमे**) (**सहः**) बलम् (**सहसः**) बलात् (**आ**) (**नमन्ति**) (**इमे**) (**शंसम्**) प्रशंसकम् (**वनुष्यतः**) क्रुध्यतः। **वनुष्यतीति क्रुध्यतिकर्मा।** (निघं०२.१२) (**नि**) (**पान्ति**) रक्षन्ति (**गुरु**) भारवत् (**द्वेषः**) अप्रीतिम् (**अररुषे**) अलंरोषकाय (**दधन्ति**)॥१९॥

अन्वयः-हे राजन्! य इमे मरुतस्तुरं रमयन्तीमे सहसस्सह आ नमन्तीमे वनुष्यतः शंसं नि पान्त्यररुषे द्वेषो गुरु दधन्ति स्तांस्त्वं सततं सत्कृद्रक्ष॥१९॥

भावार्थः-हे राजन्ये! सेनां सुशिक्ष्य सद्यो व्यूह्य बलिष्ठानपि शत्रून् विजित्योत्तमान् संरक्ष्य दुष्टे द्वेषं विदधति ते त्वया सत्कर्तव्याः सन्ति॥१९॥

पदार्थः-हे राजन्! जो (**इमे**) ये (**मरुतः**) पवनों के समान (**तुरम्**) शीघ्र (**रमयन्ति**) रमण कराते (**इमे**) यह (**सहसः**) बल से (**सहः**) बल को (**आ, नमन्ति**) सब ओर से नमते (**इमे**) यह (**वनुष्यतः**) क्रोध करने वाले की (**शंसम्**) प्रशंसा करने वाले को (**नि, पान्ति**) निरन्तर रखते और (**अररुषे**) पूरा रोष करने वाले के लिए (**द्वेषः**) वैर (**गुरु**) बहुत (**दधन्ति**) धारण करते हैं, उन का आप निरन्तर सत्कार करो॥१९॥

भावार्थः-हे राजा! जो सेना को अच्छी शिक्षा देकर शीघ्र विशेष रचना कर बड़ी शत्रुओं को भी जीत उत्तमों की रक्षा कर दुष्टों में द्वेष फैलाते हैं, वे तुम को सत्कार करने चाहियें॥१९॥

पुनस्ते राजजनाः कीदृशा भवन्तीत्याह॥

फिर वे राजजन कैसे होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमे रध्रं चिन्मरुतो जुनन्ति भृमिं चिद्यथा वसवो जुषन्त।
अप बाधध्वं वृषणस्तमांसि धत्त विश्वं तनयं तोकमस्मे॥२०॥२५॥

इमे। रध्रम्। चित्। मरुतः। जुनन्ति। भृमिम्। चित्। यथा। वसवः। जुषन्त। अप। बाधध्वम्। वृषणः। तमांसि। धत्त। विश्वम्। तनयम्। तोकम्। अस्मे इति॥२०॥

पदार्थः-(**इमे**) (**रध्रम्**) समृद्धिमन्तम् (**चित्**) अपि (**मरुतः**) वायव इव मनुष्याः (**जुनन्ति**) प्रेरयन्ति (**भृमिम्**) भ्रमणशीलम् (**चित्**) अपि (**यथा**) (**वसवः**) वासयितारः (**जुषन्त**) सेवन्ते (**अप**) (**बाधध्वम्**) (**वृषणः**) बलिष्ठाः (**तमांसि**) रात्रिरिव वर्तमानान् दुष्टान् जनान् (**धत्त**) (**विश्वम्**) सर्वम् (**तनयम्**) विस्तीर्णशुभगुणकर्मस्वभावम् (**तोकम्**) अपत्यम् (**अस्मे**) अस्मासु॥२०॥

अन्वयः-हे वृषणो वसवो! यूयं यथेमे मरुतो रध्रं चित् जुनन्ति भृमिं चित् जुषन्त तथा यूयं सूर्यस्तमांसीव शत्रूनप बाधध्वमस्मे विश्वं तनयं तोकं धत्त॥२०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा प्राणायामादिभिः सुसाधिता वायवस्समृद्धिं कुपथ्येन सेविता दारिद्र्यं च जनयन्ति तथैव सेविता विद्वांसो राज्यर्द्धिमपमानिता राज्यभङ्गं जनयन्ति सुशिक्ष्य सत्कृत्य रक्षिताः शूरवीराः यथा शत्रूनपबाधन्ते तथा वर्तित्वा प्रजासूत्तमान्यपत्यानि राजजना नयन्तु॥२०॥

पदार्थः-हे **(वृषणः)** बलिष्ठो **(वसवः)** निवास कराने वालो! तुम **(यथा)** जैसे **(इमे)** यह **(मरुतः)** पवनों के समान वर्त्तमान **(रध्रम्)** समृद्धिमान् **(चित्)** ही को **(जुनन्ति)** प्रेरणा करते हैं और **(भृमिम्)** घूमने वाले को **(चित्)** ही **(जुषन्त)** सेवते हैं, वैसे और जैसे सूर्य अन्धकारों को वैसे **(तमांसि)** रात्रि के समान वर्त्तमान दुष्ट शत्रुओं को **(अप, बाधध्वम्)** अत्यन्त बाधा देओ और **(अस्मे)** हम लोगों में **(विश्वम्)** समस्त **(तनयम्)** विस्तारयुक्त शुभ गुण-कर्म-स्वभाव वाले **(तोकम्)** सन्तान को **(धत्त)** धारण करो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्राणायामादिकों से अच्छे सिद्ध किये हुए पवन समृद्धि और कुपथ्य से सेवन किये दरिद्र**[ता]** को उत्पन्न करते हैं, वैसे ही सेवन किये हुए विद्वान् राज्य की वृद्धि और अपमान किये हुए राज्य का भङ्ग उत्पन्न करते हैं, अच्छी शिक्षा दिये और सत्कार कर रक्षा किये हुए शूरवीर जैसे शत्रुओं को नष्ट करते हैं, वैसे वर्त्तकर प्रजाजनों में उत्तम सन्तान राजजन उत्पन्न करावें॥२०॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवन्तीत्याह॥

फिर मनुष्य कैसे होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा वो दात्रान्मरुतो निरराम मा पश्चाद्दध्म रथ्यो विभागे।
आ नः स्पार्हे भजतना वसव्ये३ यदीं सुजातं वृषणो वो अस्ति॥२१॥

मा। वः। दात्रात्। मरुतः। निः। अराम। मा। पश्चात्। दध्म। रथ्यः। विऽभागे। आ। नः। स्पार्हे। भजतन। वसव्ये। यत्। ईम्। सुऽजातम्। वृषणः। वः। अस्ति॥२१॥

पदार्थः-**(मा)** **(वः)** युष्मान् **(दात्रात्)** दानात् **(मरुतः)** वायव इव मनुष्याः **(निः)** नितराम् **(अराम)** **(मा)** **(पश्चात्)** **(दध्म)** गच्छेम। **दध्यतीति गतिकर्मा।** (निघं०२.१४) **(रथ्यः)** बहवो रथा विद्यन्ते येषां ते **(विभागे)** विभजन्ति यस्मिन् तस्मिन् व्यवहारे **(आ)** **(नः)** अस्मान् **(स्पार्हे)** स्पृहणीये **(भजतना)** सेवध्वम्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वसव्ये)** वसुषु द्रव्येषु भवे **(यत्)** **(ईम्)** सर्वतः **(सुजातम्)** सुष्ठु प्रसिद्धं सुखम् **(वृषणः)** **(वः)** युष्माकम् **(अस्ति)**॥२१॥

अन्वयः-हे मरुतो! यथा वयं वो दात्रान्मा निरराम, हे रथ्यो! वयं पश्चान्मा दध्म, हे वृषभो! वो यत्सुजातमस्ति तस्मिन् वसव्ये स्पार्हे विभागे यूयं नोऽस्मानीमा भजतन॥२१॥

भावार्थः-मनुष्याः सदैव विद्वद्भ्यो देयात्सत्यासत्ययोर्विभागात्पृथङ्मां भवन्तु यत्किञ्चिदपि श्रेष्ठं सुखं भवेत्तत्सर्वस्मै निवेदयन्तु॥२१॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** पवनों के समान मनुष्यो! जैसे हम लोग **(वः)** तुम को **(दात्रात्)** दान से **(मा)** मत **(निः, अराम)** अलग करें, हे **(रथ्यः)** बहुत रथों वालो! हम लोग **(पश्चात्)** पीछे से **(मा,**

दध्म) मत जावें, हे (**वृषणः**) वर्षा कराने वालो! (**वः**) तुम्हारा (**यत्**) जो (**सुजातम्**) सुन्दर प्रसिद्ध सुख (**अस्ति**) है उस (**वसव्ये**) द्रव्यों में हुए (**स्पार्हे**) इच्छा करने योग्य (**विभागे**) विभाग जिसमें कि बांटते हैं उस में तुम (**नः**) हम लोगों को (**ईम्**) सब ओर से (**आ, भजतन**) अच्छे प्रकार सेवो॥२१॥

भावार्थः-मनुष्य सदैव विद्वानों के लिये देने योग्य सत्यासत्य व्यवहार से अलग न होवें, जो कुछ भी उत्तम सुख हो, उसको सब के लिये निवेदन करें॥२१॥

पुनस्ते वीराः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर वे वीर कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सं यद्धनन्त मन्युभिर्जनासः शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु।
अध स्मा नो मरुतो रुद्रियासस्त्रातारो भूत पृतनास्वर्यः॥ २२॥

सम्ऽयत्। हनन्त। मन्युऽभिः। जनासः। शूराः। यह्वीषु। ओषधीषु। विक्षु। अध। स्म। नः। मरुतः। रुद्रियासः। त्रातारः। भूत। पृतनासु। अर्यः॥ २२॥

पदार्थः-(**संयत्**) (**हनन्त**) घ्नन्ति (**मन्युभिः**) क्रोधादिभिः (**जनासः**) जनाः प्रसिद्धाः (**शूराः**) निर्भयाः (**यह्वीषु**) महतीषु (**ओषधीषु**) (**विक्षु**) प्रजासु च (**अध**) अथ (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**नः**) युष्माकम् (**मरुतः**) वायव इव मनुष्याः (**रुद्रियासः**) रुद्र इवाचरन्तः (**त्रातारः**) रक्षकाः (**भूत**) भवत (**पृतनासु**) शूरवीरमनुष्यसेनासु (**अर्यः**) स्वामी॥२२॥

अन्वयः-हे मरुतो यद्ये रुद्रियासो जनासः शूरा मनुष्या! मन्युभिश्शत्रून् संयत् हनन्ताध यह्वीष्वोषधीषु विक्षु पृतनासु स्म नस्त्रातारो भूत यो युष्माकमर्यः स्वामी तस्यापि त्रातारो भवत॥२२॥

भावार्थः-ये वीराः शत्रूणां हन्तारः प्रजानां रक्षकाः महौषधीषु चतुरास्सन्ति तान् स्वामी राजा प्रीत्या रक्षेत्॥२२॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) पवनों के समान! (**यत्**) जो (**रुद्रियासः**) रुद्र के समान आचरण करने वाले (**जनासः**) प्रसिद्ध (**शूराः**) निर्भय मनुष्यो! (**मन्युभिः**) क्रोधादिकों से शत्रुओं को (**संयत्**) संग्राम में (**हनन्त**) मारिये (**अध**) इसके अनन्तर (**यह्वीषु**) बहुत बड़ी (**ओषधीषु**) ओषधियों में और (**विक्षु**) प्रजाओं में (**पृतनासु**) शूरवीरों की सेनाओं में (**स्म**) निश्चित (**नः**) हमारे (**त्रातारः**) रक्षा करने वाले (**भूत**) हूजिये जो (**वः**) तुम्हारा (**अर्यः**) स्वामी है, उसकी भी रक्षा करने वाले हूजिये॥२२॥

भावार्थः-जो वीरजन शत्रुओं को मारने वाले, प्रजाओं के रक्षक और बड़ी-बड़ी ओषधियों में चतुर हैं, उनको स्वामी राजा प्रीति से रक्खें॥२२॥

पुनस्ते मनुष्याः किं किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भूरि चक्र मरुतः पित्र्याण्युक्थानि या वः शस्यन्ते पुरा चित्।

मरुद्भिरुग्रः पृतनासु साळ्हा मरुद्भिरित्सनिता वाजमर्वा॥२३॥

भूरि। चक्र। मरुतः। पित्र्याणि। उक्थानि। या। वः। शस्यन्ते। पुरा। चित्। मरुत्ऽभिः। उग्रः। पृतनासु। साळ्हा। मरुत्ऽभिः। इत्। सनिता। वाजम्। अर्वा॥२३॥

पदार्थः-(**भूरि**) बहु (**चक्र**) कुर्वन्ति (**मरुतः**) वायुवद्वर्तमाना मनुष्याः (**पित्र्याणि**) पितॄणां सेवनादीनि (**उक्थानि**) प्रशंसनीयानि कर्माणि (**या**) यानि (**वः**) युष्माकम् (**शस्यन्ते**) स्तूयन्ते (**पुरा**) वाक् (**चित्**) अपि (**मरुद्भिः**) उत्तमैर्मनुष्यैस्सह (**उग्रः**) तेजस्वी (**पृतनासु**) सेनासु (**साळ्हा**) सहनकर्ता (**मरुद्भिः**) मनुष्यैः (**इत्**) एव (**सनिता**) विभाजकः (**वाजम्**) विज्ञानं वेगं वा (**अर्वा**) वेगवानश्व इव॥२३॥

अन्वयः-हे मरुतो! वो योक्थानि पित्र्याणि शस्यन्ते पुरा तानि मरुद्भिस्सह पृतनासूग्रः साळ्हा मरुद्भिस्सह सनिताऽर्वेव वाजं प्राप्तश्चिदेव विजयते तानि यूयं भूरि चक्र॥२३॥

भावार्थः-ये मनुष्याः प्रशस्तानि कर्माणि कुर्वन्ति तेषां सदैव विजयो जायते॥२३॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) पवन के सदृश वर्त्तमान मनुष्यो! (**वः**) आप लोगों के (**या**) जो (**उक्थानि**) प्रशंसा करने योग्य कर्म्म और (**पित्र्याणि**) पितरों के सेवन आदि (**शस्यन्ते**) स्तुति किये जाते हैं (**पुरा**) पहिले उनको (**मरुद्भिः**) उत्तम मनुष्यों के साथ (**पृतनासु**) सेनाओं में (**उग्रः**) तेजस्वी (**साळ्हा**) सहने वाला पुरुष और (**मरुद्भिः**) मनुष्यों के साथ (**सनिता**) विभाग करने वाला (**अर्वा**) वेग युक्त घोड़ा जैसे वैसे (**वाजम्**) विज्ञान वा वेग को प्राप्त हुआ (**चित्**) भी जीतता है, उनको आप लोग (**भूरि**) बहुत (**चक्र**) करते हैं॥२३॥

भावार्थः-जो मनुष्य प्रशंसनीय कर्मों को करते हैं, उनका सदा ही विजय होता है॥२३॥

पुनस्ते मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर वे मनुष्य कैसे होवें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्मे वीरो मरुतः शुष्म्यस्तु जनानां यो असुरो विधर्ता।
अपो येन सुक्षितये तरेमाध स्वमोको अभि वः स्याम॥२४॥

अस्मे इति। वीरः। मरुतः। शुष्मी। अस्तु। जनानाम्। यः। असुरः। विऽधर्ता। अपः। येन। सुऽक्षितये। तरेम। अध। स्वम्। ओकः। अभि। वः। स्याम॥२४॥

पदार्थः-(**अस्मे**) अस्माकम् (**वीरः**) प्राप्तबलबुद्धिशौर्यादिः (**मरुतः**) प्राणवद् बलकारकाः (**शुष्मी**) बहुबलयुक्तः (**अस्तु**) (**जनानाम्**) (**यः**) (**असुरः**) असुषु प्राणेषु विद्युदग्निरिव (**विधर्ता**) विशेषेण धर्ता (**अपः**) जलानि (**येन**) (**सुक्षितये**) शोभनायै पृथिव्याः प्राप्त्यै (**तरेम**) (**अध**) अथ (**स्वम्**) स्वकीयम् (**ओकः**) गृहम् (**अभि**) (**वः**) युष्माकम् (**स्याम**) भवेम॥२४॥

अन्वयः-हे मरुतो! यो वीरोऽसुरो जनानां विधर्ता सोऽस्मे शुष्म्यस्तु येन सुक्षितये वयमपस्तरेमाऽध स्वमोकोऽभि तरेम वो युष्माकं रक्षकाः स्याम॥२४॥

भावार्थः-ये मनुष्या मनुष्यान् बलयुक्तान् कुर्वन्ति नौकादिभिः समुद्रं तीर्त्वा द्वितीयं देशं गत्वा धनमार्जयन्ति ते युष्माकमस्माकं च रक्षकास्सन्तु॥२४॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** प्राणों के सदृश बल करने वाले जनो! **(यः)** जो **(वीरः)** वीर अर्थात् प्राप्त हुई बल, बुद्धि और शूरता आदि जिसको **(असुरः)** प्राणों में रमता हुआ बिजुली अग्नि के सदृश **(जनानाम्)** मनुष्यों का **(विधर्ता)** विशेष करके धारण करने वाला है वह **(अस्मे)** हमारा **(शुष्मी)** बहुत बल से युक्त **(अस्तु)** हो **(येन)** जिससे **(सुक्षितये)** सुन्दर पृथिवी की प्राप्ति के लिये हम लोग **(अपः)** जलों को **(तरेम)** तरें **(अध)** इसके अनन्तर **(स्वम्)** अपने **(ओकः)** गृह के पार होवें और **(वः)** आप लोगों के रक्षक **(स्याम)** होवें॥२४॥

भावार्थः-जो मनुष्य, मनुष्यों को बलयुक्त करते और नौका आदिकों से समुद्र के पार होकर दूसरे देश में जाकर धन बटोरते हैं, वे आप लोगों और हम लोगों के रक्षक हों॥२४॥

पुनर्मनुष्याः किंवत् किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके सदृश क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥२५॥२६॥

तत्। नः। इन्द्रः। वरुणः। मित्रः। अग्निः। आपः। ओषधीः। वनिनः। जुषन्त। शर्मन्। स्याम। मरुताम्। उपऽस्थे। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥२५॥

पदार्थः-**(तत्)** पूर्वोक्तं सर्वं कर्म वस्तु वा **(नः)** अस्माकम् **(इन्द्रः)** विद्युत् **(वरुणः)** जलाधिपतिः **(मित्रः)** सखा **(अग्निः)** पावकः **(आपः)** जलानि **(ओषधीः)** सोमलताद्याः **(वनिनः)** बहुकिरणयुक्ता वनस्था वृक्षादयः **(जुषन्त)** सेवन्ताम् **(शर्मन्)** शर्मणि सुखकारके गृहे **(स्याम)** भवेम **(मरुताम्)** वायूनां विदुषां वा **(उपस्थे)** समीपे **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)** अस्मान्॥२५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथेन्द्रो वरुणो मित्रोऽग्निराप ओषधीर्वनिनो नस्तज्जुषन्त यस्मिन् शर्मन् मरुतामुपस्थे वयं सुखिनः स्याम तत्र यूयं स्वस्तभिर्नस्सदा पात॥२५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्युदादयः पदार्थाः सर्वान्नुन्नयन्ति क्षयन्ति च तथैव दोषान् विनाश्य गुणानुन्नीय सर्वेषां रक्षणं सर्वे सदा कुर्वन्त्विति॥२५॥

अत्र मरुद्विद्वद्राजशूरवीराध्यापकोपदेशकरक्षकगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्पञ्चाशत्तमं सूक्तं षड्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे **(इन्द्रः)** बिजुली **(वरुणः)** जल **[=जलाधिपति]** **(मित्रः)** मित्र **(अग्निः)** अग्नि **(आपः)** जल **(ओषधीः)** सोमलता आदि ओषधियों को **(वनिनः)** बहुत किरणें जिनमें पड़तीं ऐसे वन में वर्त्तमान वृक्ष आदि **(नः)** हम लोगों के **(तत्)** पूर्वोक्त सम्पूर्ण कर्म वा वस्तु

की **(जुषन्त)** सेवा करें और जिस **(शर्मन्)** सुखकारक गृह में **(मरुताम्)** पवनों वा विद्वानों के **(उपस्थे)** समीप में हम लोग सुखी **(स्याम)** होवें उसमें **(यूयम्)** आप लोग **(स्वस्तिभिः)** कल्याणों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सदा **(पात)** रक्षा कीजिये॥ २५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे बिजुली आदि पदार्थ सब की उन्नति और नाश करते हैं, वैसे ही दोषों का नाश कर और गुणों की वृद्धि करके सब की रक्षा को सब सदा करें॥ २५॥

इस सूक्त में वायु, विद्वान्, राजा, शूरवीर, अध्यापक, उपदेशक और रक्षक के गुण वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह छप्पनवां सूक्त और छब्बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य [सप्तपञ्चाशत्तमस्य] सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। मरुतो देवताः। २, ४ त्रिष्टुप्। १ विराट् त्रिष्टुप्। ३, ५, ६, ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनर्मनुष्याः किंवत् किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके सदृश क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मध्वो वो नाम मारुतं यजत्राः प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति।

ये रेजयन्ति रोदसी चिदुर्वी पिन्वन्त्युत्सं यदयासुरुग्राः॥ १॥

मध्वः। वः। नाम। मारुतम्। यजत्राः। प्र। यज्ञेषु। शवसा। मदन्ति। ये। रेजयन्ति। रोदसी इति। चित्। उर्वी इति। पिन्वन्ति। उत्सम्। यत्। अयासुः। उग्राः॥ १॥

पदार्थः-(**मध्वः**) मन्यमानाः (**वः**) युष्माकम् (**नाम**) (**मारुतम्**) मरुतां मनुष्याणामिदं कर्म (**यजत्राः**) संगन्तारः (**प्र**) (**यज्ञेषु**) विद्वत्सत्कारादिषु (**शवसा**) बलेन (**मदन्ति**) कामयन्ते (**ये**) (**रेजयन्ति**) कम्पयन्ति (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**चित्**) अपि (**उर्वी**) बहुपदार्थयुक्ते (**पिन्वन्ति**) सिञ्चन्ति (**उत्सम्**) कूपमिव (**यत्**) ये (**अयासुः**) प्राप्नुयुः (**उग्राः**) तेजस्विनः॥ १॥

अन्वयः-हे यजत्रा! य उग्रा विद्युत्सहिता वायवो यद्ये उर्वी रोदसी उत्समिव सर्वं जगत् पिन्वन्ति चिदपि रेजयन्त्ययासुस्तद्वद्ये वो मध्वो नाम यज्ञेषु शवसा मारुतं प्रमदन्ति तान् यूयं विजानीत॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये वायवो भूगोलान् भ्रामयन्ति धरन्ति वृष्टिभिस्सिञ्चन्ति तान् विदित्वा विद्वांसः कार्याणि निष्पाद्यानन्दन्तु॥ १॥

पदार्थः-हे (**यजत्राः**) मिलने वाले! (**ये**) जो (**उग्राः**) तेजस्वी बिजुली के सहित पवन (**यत्**) जो (**उर्वी**) बहुत पदार्थों से युक्त (**रोदसी**) अन्तरिक्ष पृथिवी और (**उत्सम्**) कूप को जैसे वैसे सम्पूर्ण संसार को (**पिन्वन्ति**) सींचते हैं और (**चित्**) भी (**रेजयन्ति**) कम्पाते हैं (**अयासुः**) प्राप्त होवें उसको (**ये**) जो (**वः**) आप लोगों को (**मध्वः**) मानते हुए (**नाम**) प्रसिद्ध (**यज्ञेषु**) विद्वानों के सत्कार आदिकों में (**शवसा**) बल से (**मारुतम्**) मनुष्यों के कर्म की (**प्र, मदन्ति**) कामना करते हैं, उनको आप लोग जानिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो पवन, भूगोलों को घुमाते और धारण करते हैं और दृष्टियों से सीचते हैं, उनको जान कर विद्वान् जन कार्यों को कर के आनन्द करें॥ १॥

पुनस्ते विद्वांसः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर वे विद्वान् कैसे होवें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

निचेतारो हि मरुतो गृणन्तं प्रणेतारो यजमानस्य मन्म।

अस्माकमद्य विदथेषु बर्हिरा वीतये सदत पिप्रियाणाः॥ २॥

निऽचेतारः। हि। मरुतः। गृणन्तम्। प्रऽनेतारः। यजमानस्य। मन्म। अस्माकम्। अद्य। विदथेषु। बर्हिः। आ। वीतये। सदत। पिप्रियाणाः॥ २॥

पदार्थः-(**निचेतारः**) ये निचयं समूहं कुर्वन्ति ते (**हि**) यतः (**मरुतः**) वायवः (**गृणन्तम्**) स्तुवन्तम् (**प्रणेतारः**) प्रकृष्टं न्यायं कुर्वन्तः (**यजमानस्य**) सर्वेषां सुखाय यज्ञकर्तुः (**मन्म**) विज्ञानम् (**अस्माकम्**) (**अद्य**) अस्मिन् (**विदथेषु**) यज्ञेषु (**बर्हिः**) अन्तरिक्षस्थमुत्तममासनम् (**आ**) (**वीतये**) विज्ञानाय प्राप्तये वा (**सदत**) आसीदत (**पिप्रियाणाः**) प्रियमाणाः॥२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! हि निचेतारो मारुतः सर्वान् प्रेरयन्ति ततः प्रणेतारस्सन्तो यजमानस्य मन्मास्माकं विदथेषु गृणन्तं पिप्रियाणाः अद्य वीतये बर्हिरासदत॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं सर्वेषां पदार्थानां संधातारं मरुद्गणं विज्ञाय सर्वेषां प्रियं साध्नुवन्तु॥२॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! (**हि**) जिस कारण (**निचेतारः**) समूह करने वाले (**मरुतः**) पवन सब को प्रेरित करते हैं, उस कारण (**प्रणेतारः**) अच्छे न्याय को करते हुए जन (**यमजानस्य**) सब के सुख के लिये यज्ञ करने वाले के (**मन्म**) विज्ञान को (**अस्माकम्**) हम लोगों के (**विदथेषु**) यज्ञों में (**गृणन्तम्**) स्तुति करते हुए को (**पिप्रियाणाः**) प्रसन्न करते हुए (**अद्य**) आज (**वीतये**) विज्ञान वा प्राप्ति के लिये (**बर्हिः**) अन्तरिक्ष में स्थित उत्तम आसन पर (**आ, सदत**) बैठिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोग सम्पूर्ण पदार्थों के रचने वाले पवनों के समूह को जान कर सब के प्रिय को सिद्ध करो॥२॥

पुनस्ते विद्वांसः कीदृशा भवन्तीत्याह॥

फिर वे विद्वान् जन कैसे होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नैतावदन्ये मरुतो यथेमे भ्राजन्ते रुक्मैरायुधैस्तनूभिः।
आ रोदसी विश्वपिशः पिशानाः समानमञ्ज्यञ्जते शुभे कम्॥३॥

न। एतावत्। अन्ये। मरुतः। यथा। इमे। भ्राजन्ते। रुक्मैः। आयुधैः। तनूभिः। आ। रोदसी इति। विश्वऽपिशः। पिशानाः। समानम्। अञ्जि। अञ्जते। शुभे। कम्॥३॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**एतावत्**) (**अन्ये**) (**मरुतः**) वायुवन्मनुष्याः (**यथा**) (**इमे**) (**भ्राजन्ते**) प्रकाशन्ते (**रुक्मैः**) देदीप्यमानैः (**आयुधैः**) (**तनूभिः**) शरीरैः (**आ**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**विश्वपिशः**) विश्वस्यावयवभूताः (**पिशानाः**) संचूर्णयन्तः (**समानम्**) तुल्यम् (**अञ्जि**) गमनम् (**अञ्जते**) गच्छन्ति व्यक्तिं कुर्वन्ति (**शुभे**) शोभनाय (**कम्**) सुखम्॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथेमे मरुतो रुक्मैरायुधैस्तनूभिस्सह भ्राजन्ते विश्वपिशः पिशानाः शुभे समानमञ्जि कमञ्जते रोदसी आ भ्राजन्ते नैतावदन्ये कर्तुं शक्नुवन्ति॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यथा विद्वांसः शूरवीरा शरीरात्मबलयुक्ताः स्वायुधाः संग्रामेषु प्रकाशन्ते तथा भीरवो मनुष्या न प्रकाशन्ते यथा प्राणस्सर्वं जगदानन्दयन्ति तथा विद्वांस्सर्वान् मनुष्यान् सुखयन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! (**यथा**) जैसे (**इमे**) ये (**मरुतः**) वायु के सदृश मनुष्य (**रुक्मैः**)

प्रकाशमान **(आयुधैः)** आयुधों और **(तनूभिः)** शरीरों के साथ **(भ्राजन्ते)** प्रकाशित होते हैं और **(विश्वपिशः)** संसार के अवयवभूत **(पिशानाः)** उत्तम प्रकार चूर्ण करते हुए **(शुभे)** सुन्दरता के लिये **(समानम्)** तुल्य **(अञ्जि)** गमन को और **(कम्)** सुख को **(अञ्जते)** व्यतीत करते हैं तथा **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(आ)** सब ओर से प्रकाशित करते हैं **(न)** न **(एतावत्)** इतना ही **(अन्ये)** अन्य करने को समर्थ होते हैं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् शूरवीर जन शरीर और आत्मा के बल से युक्त और श्रेष्ठ आयुधों से युक्त हुए सङ्ग्रामों में प्रकाशित होते हैं, वैसे भीरु मनुष्य नहीं प्रकाशित होते हैं, जैसे प्राण सब जगत् को आनन्दित करते हैं, वैसे विद्वान् सब को सुखी करते हैं॥३॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्ताव करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋधुक्सा वो मरुतो दिद्युदस्तु यद्व आगः पुरुषता कराम।
मा वस्तस्यामपि भूमा यजत्रा अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा॥४॥

ऋधक्। सा। वः। मरुतः। दिद्युत्। अस्तु। यत्। वः। आगः। पुरुषता। कराम। मा। वः। तस्याम्। अपि। भूम। यजत्राः। अस्मे इति। वः। अस्तु। सुऽमतिः। चनिष्ठा॥४॥

पदार्थः-**(ऋधक्)** सत्ये **(सा)** **(वः)** युष्माकम् **(मरुतः)** मनुष्याः **(दिद्युत्)** देदीप्यमाना नीतिः **(अस्तु)** **(यत्)** यथा **(वः)** युष्माकम् **(आगः)** अपराधम् **(पुरुषता)** पुरुषाणां भावेन पुरुषार्थतया **(कराम)** कुर्याम **(मा)** **(वः)** युष्मान् **(तस्याम्)** **(अपि)** **(भूम)** भवेम। अत्र **द्व्यचो०** इति दीर्घः। **(यजत्राः)** संगन्तारः **(अस्मे)** अस्मासु **(वः)** युष्माकम् **(अस्तु)** **(सुमतिः)** शोभना प्रज्ञा **(चनिष्ठा)** अतिशयेनान्नाद्यैश्वर्ययुक्ता॥४॥

अन्वयः-हे यजत्राः मरुतः! यद्यया व आगः यद्यया पुरुषता कराम तस्यामपि च आगो मा कराम यया वयं पुरुषार्थिनो भूम सा व ऋधक् चनिष्ठा सुमतिरस्मे अस्तु सा विद्युद्वो युष्माकमस्तु॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! अन्यायापराधं विहाय सत्यां प्रज्ञां गृहीत्वा पुरुषार्थेन सह सुखिनो भवत॥४॥

पदार्थः-हे **(यजत्राः)** मेल करने वाले **(मरुतः)** मनुष्यो! **(यत्)** जिससे **(वः)** आप लोगों के **(आगः)** अपराध को और जिस **(पुरुषता)** पुरुषपने से **(कराम)** करें **(तस्याम्)** उसमें **(अपि)** भी **(नः)** आप लोगों के अपराध को **(मा)** नहीं करें और जिससे हम लोग पुरुषार्थी **(भूम)** होवें **(सा)** वह **(वः)** आप लोगों के **(ऋधक्)** सत्य में **(चनिष्ठा)** अतिशय अन्न आदि ऐश्वर्य्य से युक्त **(सुमतिः)** अच्छी बुद्धि **(अस्मे)** हम लोगों में **(अस्तु)** हो और वह **(दिद्युत्)** प्रकाशमान नीति **(नः)** आप लोगों की **(अस्तु)** हो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! अन्याय से अपराध का परित्याग कर और सत्य बुद्धि को ग्रहण कर वे पुरुषार्थ से सुखी होओ॥४॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा भूत्वा किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन कैसे होकर क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कृते चिदत्रं मुरुतों रणन्तानवद्यासः शुचयः पावकाः।
प्र णोऽवत सुमतिभिर्यजत्राः प्र वाजेभिस्तिरत पुष्यसे नः॥५॥

कृते। चित्। अत्रं। मुरुतः। रणन्त। अनवद्यासः। शुचयः। पावकाः। प्र। नः। अवत। सुमतिऽभिः। यजत्राः। प्र। वाजेभिः। तिरत। पुष्यसे। नः॥५॥

पदार्थः-(**कृते**) (**चित्**) अपि (**अत्र**) अस्मिन् संसारे (**मरुतः**) मनुष्याः (**रणन्त**) रमध्वम् (**अनवद्यासः**) अनिन्द्याः धर्माचराः (**शुचयः**) पवित्राः (**पावकाः**) पवित्रकराः (**प्र**) (**नः**) अस्मान् (**अवत**) रक्षत (**सुमतिभिः**) उत्तमप्रज्ञैर्मनुष्यैः (**यजत्राः**) सङ्गन्तारः (**प्र**) (**वाजेभिः**) अन्नादिभिः (**तिरत**) निष्पादयत (**पुष्यसे**) पुष्टये (**नः**) अस्मान्॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथाऽनवद्यासः शुचयः पावकाः मरुतश्चित्कृतेऽत्र रणन्त तथा यजत्रास्सन्तो यूं सुमतिभिर्वाजेभिस्सह नः प्रावत नः पुष्यसे प्र तिरत॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। य आप्तवद्धार्मिकाः पवित्राः विद्वांसो भूत्वा सर्वे सर्वान् रक्षन्ति ते सर्वान् पुष्टान् सुखिनः कर्तुं शक्नुवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जैसे (**अनवद्यासः**) नहीं निन्दा करने योग्य और धर्म्माचरण से युक्त (**शुचयः**) पवित्र और (**पावकाः**) पवित्र करने वाले (**मरुतः**) मनुष्य (**चित्**) भी (**कृते**) उत्तम कर्म्म में (**अत्र**) इस संसार में (**रणन्त**) रमें, वैसे (**यजत्राः**) मिलने वाले हुए आप लोग (**सुमतिभिः**) उत्तम बुद्धिवाले मनुष्यों और (**वाजेभिः**) अन्न आदिकों के साथ (**नः**) हम लोगों की (**प्र, अवत**) रक्षा कीजिये और (**नः**) हम लोगों को (**पुष्यसे**) पुष्टि के लिये (**प्र, तिरत**) निष्पन्न कीजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो यथार्थवक्ता, धार्मिक, पवित्र, विद्वान् होके सब सबकी रक्षा करते हैं, वे सब को पुष्ट और सुखी कर सकते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्तुतासो मरुतो व्यन्तु विश्वेभिर्नामभिर्नरो हवींषि।
ददात नो अमृतस्य प्रजायै जिगृत रायः सूनृता मघानि॥६॥

उत। स्तुतासः। मरुतः। व्यन्तु। विश्वेभिः। नामऽभिः। नरः। हवींषि। ददात। नः। अमृतस्य। प्रऽजायै। जिगृत। रायः। सूनृता। मघानि॥६॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**स्तुतासः**) प्राप्तप्रशंसाः (**मरुतः**) वायव इव मनुष्याः (**व्यन्तु**) व्याप्नुवन्तु प्राप्नुवन्तु (**विश्वेभिः**) समग्रैः (**नामभिः**) संज्ञाभिः (**नरः**) नायकाः (**हवींषि**) दातुमर्हाणि (**ददात**) (**नः**) अस्माकम् (**अमृतस्य**) नाशरहितस्य (**प्रजायै**) प्रजासुखाय (**जिगृत**) उद्गिरत (**रायः**) श्रियः (**सूनृता**)

सूनृतानि धर्मेण सम्पादितानि **(मघानि)** धनानि॥६॥

अन्वयः-हे मरुतो नरो! यूयं विश्वेभिर्नामभिर्नो हवींषि ददात उत स्तुतासो हवींषि व्यन्तु नोऽस्माकममृतस्य प्रजायै रायस्सूनृता मघानि च जिगृत॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! ये प्रशंसका मनुष्याः समग्रैश्शब्दार्थसम्बन्धैः सर्वा विद्याः प्राप्य शुम्भमाना भूत्वा प्रजाजनेभ्यस्सत्यां वाचं प्रयच्छन्ति ते सर्वे सुखं प्राप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** पवनों के सदृश मनुष्यो **(नरः)** अग्रणी! आप लोगो **(विश्वेभिः)** सम्पूर्ण **(नामभिः)** संज्ञाओं से **(नः)** हम लोगों के लिये हम लोगों के **(हवींषि)** देने योग्य पदार्थों को **(ददात)** दीजिये **(उत)** और **(स्तुतासः)** प्रशंसा को प्राप्त हुए जन देने योग्य द्रव्यों को **(व्यन्तु)** प्राप्त होवें, हम लोगों और **(अमृतस्य)** अविनाशी की **(प्रजायै)** प्रजा के सुख के लिये **(रायः)** शोभाओं वा लक्ष्मियों को और **(सूनृता)** धर्म्म से इकट्ठे किये गये **(मघानि)** धनों को **(जिगृत)** उगलिये॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो प्रशंसा करने वाले मनुष्य सम्पूर्ण शब्द और अर्थ के सम्बन्धों से सम्पूर्ण विद्याओं को प्राप्त कर और शोभित होकर प्रजाजनों के लिये सत्य वचन को देते हैं, वे सम्पूर्ण सुख को प्राप्त होते हैं॥६॥

पुनः के प्रशंसनीया माननीया भवन्तीत्याह॥

फिर कौन प्रशंसा करने और आदर करने योग्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ स्तुतासो मरुतो विश्व ऊती अच्छा सूरीन्त्सर्वताता जिगात।
ये नस्त्मना शतिनो वर्धयन्ति यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥७॥२७॥

आ। स्तुतासः। मरुतः। विश्वे। ऊती। अच्छ। सूरीन्। सर्वऽताता। जिगात। ये। नः। त्मना। शतिनः। वर्धयन्ति। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥७॥

पदार्थः-**(आ)** **(स्तुतासः)** प्राप्तप्रशंसाः **(मरुतः)** वायव इव व्याप्तविद्या मनुष्याः **(विश्वे)** सर्वे **(ऊती)** **(अच्छा)** सम्यक्। अत्र संहितायामिति दीर्घः। **(सूरीन्)** धार्मिकान् विदुषः **(सर्वताता)** सर्वेषां सुखकरे यज्ञे **(जिगात)** प्रशंसत **(ये)** **(नः)** अस्मान् **(त्मना)** आत्मना **(शतिनः)** शतमसंख्यातं बलं येषामस्ति ते **(वर्धयन्ति)** **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)**॥७॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! ये विश्वे स्तुतासः शतिनो मरुतो त्मनोती नोऽस्मान् वर्धयन्ति तान् सूरीन् सर्वताता यूयमच्छा जिगात स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये विद्वांसो धर्म्यकर्माणो असंख्यविद्या दयालवो न्यायकारिण आप्ता अस्मान् सर्वान् सततं वर्धयेयुर्वर्धयित्वा सदा रक्षन्ति वयं तानेव प्रशंसितान् कृत्वा सेवेमहीति॥७॥

अत्र मरुद्वद्विद्वद्गुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तपञ्चाशत्तमं सूक्तं सप्तविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वान् मनुष्यो! **(ये)** जो **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(स्तुतासः)** प्रशंसा को प्राप्त हुए

(शतिनः) असंख्य बलवाले **(मरुतः)** पवनों के समान विद्या से व्याप्त मनुष्य **(त्मना)** आत्मा से **(ऊती)** रक्षण आदि क्रिया से **(नः)** हम लोगों को **(वर्धयन्ति)** बढ़ाते हैं उन **(सूरीन्)** धार्मिक विद्वानों को **(सर्वताता)** सब के सुख करने वाले यज्ञ में **(यूयम्)** आप लोग **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(आ, जिगात)** प्रशंसा कीजिये और **(स्वस्तिभिः)** कल्याणों से **(नः)** हम लोगों की **(सदा)** सब काल में **(पात)** रक्षा कीजिये॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो विद्वान् धर्म्मयुक्त कर्म्म करने वाले असंख्य विद्या से युक्त, दयालु, न्यायकारी, यथार्थवक्ता जन हम सबों की निरन्तर वृद्धि करें, वृद्धि करके सदा रक्षा करते हैं, उनको ही हम लोग प्रशंसित करके सेवा करें॥७॥

इस सूक्त में पवन के सदृश विद्वान् के गुणों और कृत्य का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की संगति इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ जाननी चाहिये॥

यह सत्तावनवां सूक्त और सत्ताईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्चस्याष्टापञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। मरुतो देवताः। ३, ४ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ त्रिष्टुप्। १ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ६ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

अब छः ऋचा वाले अट्ठावनवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र साकमुक्षे अर्चता गणाय यो दैव्यस्य धाम्नस्तुविष्मान्।
उत क्षोदन्ति रोदसी महित्वा नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेरवंशात्॥ १॥

प्र। साकम्ऽउक्षे। अर्चत। गणाय। यः। दैव्यस्य। धाम्नः। तुविष्मान्। उत। क्षोदन्ति। रोदसी इति। महिऽत्वा। नक्षन्ते। नाकम्। निःऽऋतेः। अवंशात्॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**साकमुक्षे**) यः साकं सहोक्षति सुखेन सचति सम्बध्नाति तस्मै (**अर्चता**) सत्कुरुत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**गणाय**) गणनीयाय (**यः**) (**दैव्यस्य**) देवैः कृतस्य (**धाम्नः**) नामस्थानजन्मनः (**तुविष्मान्**) बहुबलयुक्तः (**उत**) अपि (**क्षोदन्ति**) संपिंशन्ति (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**महित्वा**) महत्त्वेन (**नक्षन्ते**) प्राप्नुवन्ति (**नाकम्**) अविद्यमानदुःखम् (**निर्ऋतेः**) भूमेः (**अवंशात्**) असन्तानात्॥ १॥

अन्वयः-यस्तुविष्मान् दैव्यस्य धाम्नो ज्ञातास्ति तस्मै साकमुक्षे गणाय विदुषे यूयं प्रार्चत अपि ये वायवो महित्वा रोदसी नक्षन्ते सावयवानुत क्षोदन्ति निर्ऋतेरवंशान्नाकं व्याप्नुवन्ति तद्विदो विदुषो यूयमुत प्रार्चत॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये वायुविद्यां जानन्ति तान् नित्यं सत्कृत्यैतेभ्यो वायुविद्यां प्राप्य भवन्तो महान्तो भवत॥ १॥

पदार्थः- (**यः**) जो (**तुविष्मान्**) बहुत बल से युक्त (**दैव्यस्य**) देवताओं से किये गये (**धाम्नः**) नाम, स्थान और जन्म का जानने वाला है उस (**साकमुक्षे**) साथ ही सुख से सम्बन्ध करने वाले (**गणाय**) गणनीय विद्वान् के लिये आप लोग (**प्र, अर्चत**) सत्कार करिये और (**अपि**) भी जो पवन (**महित्वा**) महत्त्व से (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**नक्षन्ते**) व्याप्त होते हैं, अवयवों के सहितों को (**उत**) भी (**क्षोदन्ति**) पीसते हैं (**निर्ऋतेः**) भूमि से (**अवंशात्**) सन्तान भिन्न से (**नाकम्**) दुःख से रहित स्थान को व्याप्त होते हैं, उनको जानने वाले विद्वानों को आप लोग भी सत्कार कीजिये॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो वायु आदि की विद्या को जानते हैं, उनका नित्य सत्कार करके इनसे वायु की विद्या को प्राप्त होकर आप लोग श्रेष्ठ हूजिये॥ १॥

पुनः के अविश्वसनीया इत्याह॥

फिर कौन नहीं विश्वास करने योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

जनूश्चिद्वो मरुतस्त्वेष्येण भीमासस्तुविमन्यवोऽयासः।

प्र ये महोभिरोजसोत सन्ति विश्वो वो यामन् भयते स्वर्दृक्॥२॥

जनूः। चित्। वः। मरुतः। त्वेष्येण। भीमासः। तुविऽमन्यवः। अयासः। प्र। ये। महःऽभिः। ओजसा। उत। सन्ति। विश्वः। वः। यामन्। भयते। स्वःऽदृक्॥२॥

पदार्थः-(**जनूः**) जनन्यः प्रकृतयः (**चित्**) अपि (**वः**) युष्माकम् (**मरुतः**) वायव इव मनुष्याः (**त्वेष्येण**) त्विषि प्रदीपने भवेन (**भीमासः**) बिभ्यति येभ्यस्ते (**तुविमन्यवः**) बहुक्रोधाः (**अयासः**) ज्ञातारो गन्तारो वा (**प्र**) प्रकाशयन्तः (**ये**) (**महोभिः**) महद्भिः पराक्रमैर्गुणैर्वा (**ओजसा**) बलेन सह (**उत**) अपि (**सन्ति**) (**विश्वः**) सर्वः (**वः**) युष्मान् (**यामन्**) यान्ति येन यस्मिन् वा तस्मिन् (**भयते**) भयं करोति (**स्वर्दृक्**) यः स्वः सुखं पश्यति सः॥२॥

अन्वयः-हे मरुतो! ये महोभिरोजसा त्वेष्येण सह वर्त्तमानाः भीमासस्तुविमन्यवोऽयासो वो युष्माकं जनूः प्रसन्त्युत यो विश्वः स्वर्दृग्जनो यामन् वो भयते ताँस्तं चिद्यूयं विज्ञाय युक्त्या सेवध्वम्॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो मनुष्याः! ये भयङ्करा मनुष्यादयः प्राणिनः सन्ति तेषां विश्वासमकृत्वा तान् महता बलेन पराक्रमेण च वशं नयत॥२॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) पवनों के समान मनुष्यो! (**ये**) जो (**महोभिः**) बड़े पराक्रमों वा गुणों के और (**ओजसा**) बल (**त्वेष्येण**) प्रकाश में हुए के साथ वर्त्तमान (**भीमासः**) डरते हैं जिन से वे (**तुविमन्यवः**) बहुत क्रोधयुक्त (**अयासः**) जानने वा जाने वाले जन (**वः**) आप लोगों को (**जनूः**) स्वभाव (**प्रसन्ति**) प्रकाश करते हुए हैं और (**उत**) भी जो (**विश्वः**) सम्पूर्ण (**स्वर्दृक्**) सुख को देखने वाला मनुष्य (**यामन्**) लाते हैं जिससे वा जिस में उस में (**वः**) आप लोगों को (**भयते**) भय देता है उनको और उस को (**चित्**) भी आप लोग जान कर युक्ति से सेवा करिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् मनुष्यो! जो भयङ्कर मनुष्य आदि प्राणी है, उनका विश्वास नहीं करके उन को बड़े बल और पराक्रम से वश में करिये॥२॥

पुनः के जगत्पूज्या भवन्तीत्याह॥

फिर कौन जगत् से आदर पाने योग्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बृहद्वयो मघवद्भ्यो दधात जुजोषन्निन्मरुतः सुष्टुतिं नः।
गतो नाध्वा वि तिराति जन्तुं प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेत॥३॥

बृहत्। वयः। मघवत्ऽभ्यः। दधात। जुजोषन्। इत्। मरुतः। सुऽस्तुतिम्। नः। गतः। न। अध्वा। वि। तिराति। जन्तुम्। प्र। नः। स्पार्हाभिः। ऊतिऽभिः। तिरेत॥३॥

पदार्थः-(**बृहत्**) महत् (**वयः**) जीवनम् (**मघवद्भ्यः**) (**दधात**) दधति (**जुजोषन्**) सेवन्ते (**इत्**) एव (**मरुतः**) (**सुष्टुतिम्**) शोभनां प्रशंसाम् (**नः**) अस्माकमस्मान् वा (**गतः**) प्राप्तः (**न**) निषेधे (**अध्वा**) मार्गः (**वि**) (**तिराति**) विहन्ति (**जन्तुम्**) प्राणिनम् (**प्र**) (**नः**) अस्मान् (**स्पार्हाभिः**) स्पृहणीयाभिः (**ऊतिभिः**) रक्षादिभिः क्रियाभिः (**तिरेत**) वर्धये॥३॥

अन्वय:-हे मनुष्या! ये मरुतो मघवद्भ्यो नोऽस्मभ्यं बृहद्वयो जुजोषन्निन्नोऽस्माकं सुष्टुतिं दधात यो गतोऽध्वास्ति तस्मिन् जन्तुं न वि तराति यश्च स्पार्हाभिरूतिभिर्नोऽस्मान् प्र तिरेत तान् वयं नित्यं सेवेमहि॥३॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! ये विद्वांस: सर्वेषामायुर्वर्धयन्ति प्रशंसितानि कर्माणि कारयन्ति त एव सर्वैस्सत्कर्तव्या भवन्ति॥३॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(मरुत:)** मनुष्य **(मघवद्भ्य:)** अन्न से युक्त **(न:)** हम लोगों के लिये **(बृहत्)** बहुत **(वय:)** जीवन का **(जुजोषन्)** सेवन करते **(इत्)** ही हैं **(न:)** हम लोगों की **(सुष्टुतिम्)** उत्तम प्रशंसा को **(दधात)** धारण करते हैं और जो **(गत:)** प्राप्त हुआ **(अध्वा)** मार्ग है उस में **(जन्तुम्)** प्राणी को **(न)** नहीं **(वि, तिराति)** मारता है और जो **(स्पार्हाभि:)** स्पृहा करने योग्य **(ऊतिभि:)** रक्षा आदि क्रियाओं से हम लोगों को **(प्र, तिरेत)** बढ़ावें, उनका हम लोग नित्य सेवन करें॥३॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो विद्वान् जन सब की अवस्था को बढ़ाते हैं, प्रशंसित कर्मों को कराते है, वे ही सबों से सत्कार करने योग्य होते हैं॥३॥

केन रक्षिता: मनुष्या: कीदृशा भवन्तीत्याह॥

किससे रक्षित मनुष्य कैसे होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

युष्मोतो विप्रो मरुत: शतस्वी युष्मोतो अर्वा सहुरि: सहस्री।
युष्मोत: सम्राळुत हन्ति वृत्रं प्र तद्वो अस्तु धूतयो देष्णम्॥४॥

युष्माऽऊत:। विप्र:। मरुत:। शतस्वी। युष्माऽऊत:। अर्वा। सहुरि:। सहस्री। युष्माऽऊत:। सम्ऽराट्। उत। हन्ति। वृत्रम्। प्र। तत्। व:। अस्तु। धूतय:। देष्णम्॥४॥

पदार्थ:-**(युष्मोत:)** युष्माभी रक्षित: **(विप्र:)** मेधावी **(मरुत:)** प्राणा इव प्रियकरा विद्वांस: **(शतस्वी)** शतमसंख्यं स्वं धनं विद्यते यस्य स: **(युष्मोत:)** युष्माभि: पालित: **(अर्वा)** अर्वेव अश्व इव **(सहुरि:)** सहनशील: **(सहस्री)** सहस्राण्यसंख्याता उत्तममनुष्या: पदार्था वा विद्यन्ते यस्य स: **(युष्मोत:)** युष्माभि: संरक्षित: **(सम्राट्)** स: सूर्य: सम्यग्राजते तद्वद्वर्तमानश्चक्रवर्ती राजा **(उत)** **(हन्ति)** **(वृत्रम्)** मेघम् **(प्र)** **(तत्)** **(व:)** युष्मभ्यम् **(अस्तु)** **(धूतय:)** कम्पयितार: **(देष्णम्)** दातुं योग्यं धनम्॥४॥

अन्वय:-हे धूतयो मरुतो! यं युष्मोतो विप्र: शतस्वी युष्मोतोऽर्वेव सहुरि: सहस्र्युत युष्मोत: सम्राड् वृत्रमिव शत्रून् हन्ति तद्देष्णं व: प्रास्तु॥४॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यथा प्राण: शरीरादिकं सर्वं रक्षयित्वा सुखं प्रापयन्ति तथैव विद्वांस: शरीरात्मबलायूंषि रक्षयित्वा सर्वानानन्दयन्ति नैतेषां रक्षया विना कोपि सम्राड् भवितुमर्हति तस्मादेते सर्वदा सत्कर्तव्यास्सन्ति॥४॥

पदार्थ:-हे **(धूतय:)** कम्पाने वाले **(मरुत:)** प्राणों के सदृश प्रिय करने वाले विद्वान् जनो! [जो] **(युष्मोत:)** आप लोगों से रक्षा किया **(विप्र:)** बुद्धिमान् जन **(शतस्वी)** असंख्य धन वाला **(युष्मोत:)** आप लोगों से पालन किया गया **(अर्वा)** घोड़े के सामन **(सहुरि:)** सहनशील **(सहस्री)**

असंख्यात उत्तम मनुष्य वा पदार्थ जिसके वह **(उत)** और **(युष्मोतः)** आप लोगों से उत्तम प्रकार रक्षा किया गया **(सम्राट्)** उत्तम प्रकाशित सूर्य्य के समान वर्त्तमान चक्रवर्ती राजा **(वृत्रम्)** मेघ को जैसे सूर्य वैसे शत्रुओं का **(हन्ति)** नाश करता है **(तत्)** वह **(देष्णम्)** देने योग्य दान **(वः)** आप लोगों के लिये **(प्र, अस्तु)** हो अर्थात् आप का दिया हुआ समस्त है सो आपका विख्यात हो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे प्राण, शरीर आदि सब की रक्षा करके सुख को प्राप्त करते हैं, वैसे ही विद्वान् जन शरीर, आत्मा, बल और अवस्था की रक्षा कर के सब को आनन्द देते हैं, उनकी रक्षा के बिना कोई भी चक्रवर्ती राजा होने को योग्य नहीं होता, तिस से ये सब काल में सत्कार करने योग्य होते हैं॥४॥

पुनः के मनुष्याः सत्करणीयास्तिरस्करणीयाश्च भवन्तीत्याह॥

फिर कौन मनुष्य सत्कार करने योग्य और तिरस्कार करने योग्य होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ताँ आ रुद्रस्य मीळ्हुषो विवासे कुविन्नंसन्ते मरुतः पुनर्नः।
यत्सस्वर्ता जिहीळिरे यदाविरव तदेन ईमहे तुराणाम्॥५॥

तान्। आ। रुद्रस्य। मीळ्हुषः। विवासे। कुवित्। नंसन्ते। मरुतः। पुनः। नः। यत्। सस्वर्ता। जिहीळिरे। यत्। आविः। अव। तत्। एनः। ईमहे। तुराणाम्॥५॥

पदार्थः-**(तान्)** **(आ)** समन्तात् **(रुद्रस्य)** प्राणस्येव विदुषः **(मीळ्हुषः)** सेचकस्य **(विवासे)** वासयामि **(कुवित्)** महत् **(नंसन्ते)** नमन्ति **(मरुतः)** मनुष्याः **(पुनः)** **(नः)** अस्मान् **(यत्)** येन **(सस्वर्ता)** उपतापकेन शब्देन **(जिहीळिरे)** क्रोधयेयुः **(यत्)** **(आविः)** प्राकट्ये **(अव)** विरोधे **(तत्)** **(एनः)** पापमपराधम् **(ईमहे)** दूरीकुर्महे **(तुराणाम्)** क्षिप्रं कारिणाम्॥५॥

अन्वयः-ये मनुष्याः यत्सस्वर्ता नो जिहीळिरे तेषां तुराणां यदेनस्तदवेमहे तान् रुद्रस्य मीळ्हुषो नंसन्ते पुनस्तान् रुद्रस्य कुवित् कुर्वन्तोऽहमाविराविवासे॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये पापिनो धार्मिकाणामनादरकर्तारः स्युस्ते दूरे निवासनीयाः ये च नम्रत्वादिगुणयुक्ता धार्मिकाः स्युस्तान्निकटे निवासयेयुर्यतः सर्वेषां सत्कीर्तिः प्रकटा स्यात्॥५॥

पदार्थः-जो मनुष्य **(यत्)** जिस **(सस्वर्ता)** तपाने वाले शब्द से **(नः)** हम लोगों को **(जिहीळिरे)** क्रुद्धित करावें उन **(तुराणाम्)** शीघ्र कार्य्य करने वालों का **(यत्)** जो **(एनः)** पाप अपराध **(तत्)** उस को **(अव)** विरोध में **(ईमहे)** दूर करें उनको **(रुद्रस्य)** प्राण के सदृश विद्वान् **(मीळ्हुषः)** सींचने वाले विद्वान् के सम्बन्ध में **(नंसन्ते)** नम्र होते हैं **(पुनः)** फिर **(तान्)** उनको **(रुद्रस्य)** प्राण के सदृश विद्वान् के **(कुवित्)** बड़ा करते हुए को मैं **(आविः)** प्रकटता में **(आ)** सब प्रकार से **(विवासे)** बसाता हूँ॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पापी जन धार्मिक जनों के अनादर करने वाले होवें, उनको दूर बसाना चाहिये और जो नम्रता आदि से युक्त धार्म्मिक होवें, उन को समीप बसावें, जिससे सब का

श्रेष्ठ यश प्रकट होवे॥५॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र सा वांचि सुष्टुतिर्मघोनांमिदं सूक्तं मुरुतों जुषन्त।
आराच्चिद्द्वेषों वृषणो युयोत यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥६॥२८॥

प्र। सा। वाचि। सुऽस्तुतिः। मघोनांम्। इदम्। सुऽउक्तम्। मरुतः। जुषन्त। आरात्। चित्। द्वेषः। वृषणः। युयोत। पात। स्वस्तिऽभिः। सदां। नः॥६॥

पदार्थः-(**प्र**) (**सा**) (**वाचि**) वाण्याम् (**सुष्टुतिः**) शोभना प्रशंसा (**मघोनाम्**) बहुपूजितधनानाम् (**इदम्**) (**सूक्तम्**) शोभनं वचनम् (**मरुतः**) विद्वांसो मनुष्याः (**जुषन्त**) सेवन्ताम् (**आरात्**) दूरात् समीपाद् वा (**चित्**) अपि (**द्वेषः**) द्वेष्टॄन् दुष्टान् शत्रून् मनुष्यान् (**वृषणः**) बलिष्ठाः (**युयोत**) पृथक्कुरुत (**यूयम्**) (**पात**) (**स्वस्तिभिः**) (**सदा**) (**नः**)॥६॥

अन्वयः-हे वृषणो! मघोनां वाचि सा सुष्टुतिस्तदिदं सूक्तं मरुतः प्र जुषन्त साऽस्मान् जुषतां यूयं द्वेष आरात् दूरान्निकटाच्चिद्युयोत स्वस्तिभिर्नस्सदा पात॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्यास्सदैव सत्यस्य वक्तारस्ते स्तावकाः स्युस्तैस्सह बलं वर्धयित्वा सर्वशत्रून् निवार्य श्रेष्ठान् सदा रक्षन्तु॥६॥

अत्र मरुद्विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इत्यष्टपञ्चाशत्तमं सूक्तमष्टाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**वृषणः**) बलयुक्त जनो! (**मघोनाम्**) बहुत श्रेष्ठ धन वालों की (**वाचि**) वाणी में (**सा**) वह (**सुष्टुतिः**) सुन्दर प्रशंसा है (**इदम्**) इस (**सूक्तम्**) उत्तम वचन को (**मरुतः**) विद्वान् मनुष्य (**प्र, जुषन्त**) सेवन करें (**सा**) वह हम लोगों को सेवन करे (**यूयम्**) आप लोग (**द्वेषः**) करने वालों को (**आरात्**) समीप से वा दूर से (**चित्**) भी (**युयोत**) पृथक् करिये और (**स्वस्तिभिः**) कल्याणों से (**नः**) हम लोगों की (**सदा**) सब काल में (**पात**) रक्षा कीजिये॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य सदा ही सत्य के कहने वाले हों, वे ही स्तुति करने वाले होवें, उन के साथ बल को बढ़ाय के सब शत्रुओं को दूर करके श्रेष्ठों की सदा रक्षा करो॥६॥

इस सूक्त में वायु और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इस से पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह अट्ठावनवां सूक्त और अट्ठाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ द्वादशर्चस्यैकोनषष्टितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। १-११ मरुतः। १२ रुद्रो देवता। १ निचृद्बृहती। ३ बृहती। ६ स्वराड्बृहती छन्दः। मध्यमस्वरः। २ पङ्क्तिः। ४ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ५, १२ अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ७ निचृत्त्रिष्टुप्। ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ९, १० गायत्री। ११ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्तव्यमित्याह॥

अब बारह ऋचा वाले उनसठवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यं त्रायध्व इदमिदं देवासो यं च नयथ।
तस्मा अग्ने वरुण मित्रार्यमन्मरुतः शर्म यच्छत॥१॥

यम्। त्रायध्वे। इदम्ऽइदम्। देवासः। यम्। च। नयथ। तस्मै। अग्ने। वरुण। मित्र। अर्यमन्। मरुतः। शर्म। यच्छत॥१॥

पदार्थः-(**यम्**) (**त्रायध्वे**) रक्षथ (**इदमिदम्**) वचनं श्रावयित्वा कर्म कृत्वा वा (**देवासः**) प्राणा इव विद्वांसः (**यम्**) नरम् (**च**) (**नयथ**) प्रापयथ (**तस्मै**) (**अग्ने**) (**वरुण**) श्रेष्ठ (**मित्र**) सखे (**अर्यमन्**) न्यायकारिन् (**मरुतः**) प्राण इव नेतारः (**शर्म**) सुखं गृहं वा (**यच्छत**) दत्त॥१॥

अन्वयः-हे मरुतो देवासो! यूयमिदमिदं यन्नयथ यं च त्रायध्ये तस्मै शर्म यच्छत, हे अग्ने वरुण मित्रार्यमँस्त्वमेतानेव सदा सेवस्य॥१॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! भवन्तस्सत्योपदेशसुशिक्षाविद्यादानेन सर्वान् मनुष्यान् सम्यग्रक्षित्वा वर्धन्तु येन सर्वे सुखिनः स्युः॥१॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) प्राणों के सदृश अग्रणी (**देवासः**) विद्वान्! आप लोग (**इदमिदम्**) इस-इस वचन को सुनाय के वा कर्म करके (**यम्**) जिसको (**नयथ**) प्राप्त कराइये (**यम्, च**) और जिस मनुष्य की (**त्रायध्वे**) रक्षा करें (**तस्मै**) उसके लिये (**शर्म**) सुख वा गृह (**यच्छत**) दीजिये और हे (**अग्ने**) अग्नि के समान तेजस्वी (**वरुण**) श्रेष्ठ (**मित्र**) मित्र (**अर्यमन्**) न्यायकारी! आप इन्हीं की सदा सेवा करिये॥१॥

भावार्थः-हे विद्वान् जनो! आप लोग सत्य उपदेश, उत्तम शिक्षा और विद्या दान से सब मनुष्यों की उत्तम प्रकार रक्षा करके वृद्धि करिये, जिससे सब सुखी होवें॥१॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

युष्माकं देवा अवसाहनि प्रिय ईजानस्तरति द्विषः।
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति॥२॥

युष्माकम्। देवाः। अवसा। अहनि। प्रिये। ईजानः। तरति। द्विषः। प्र। सः। क्षयम्। तिरते। वि। महीः। इषः। यः। वः। वराय। दाशति॥२॥

पदार्थः-(**युष्माकम्**) (**देवाः**) विद्वांसः (**अवसा**) रक्षणादिना (**अहनि**) दिने (**प्रिये**) कमनीये प्रीतिकरे (**ईजानः**) (**तरति**) उल्लङ्घते (**द्विषः**) द्वेष्टॄन् (**प्र**) (**सः**) (**क्षयम्**) निवासम् (**तिरते**) वर्धयति (**वि**) (**महीः**) भूमीः सुशिक्षिता वाचो वा (**इषः**) अन्नाद्याः (**यः**) (**वः**) युष्मान् (**वराय**) श्रेष्ठत्वाय (**दाशति**)॥२॥

अन्वयः-हे देवा! य ईजानोऽवसा द्विषस्तरति प्रियेऽहनि युष्माकं प्रियं साध्नोति यो महीरिषो वो वराय प्र दाशति स क्षयं प्र वि तिरते॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये दुष्टतानिवारकास्सर्वेषां रक्षका विद्याद्यैश्वर्यप्रदाः सुखेन सर्वदा वासयितारो विद्वांसः स्युस्तानेव सेवयित्वा संगत्य प्राप्नुत॥२॥

पदार्थः-हे (**देवाः**) विद्वान् जनो! (**यः**) जो (**ईजानः**) यजमान (**अवसा**) रक्षण आदि से (**द्विषः**) द्वेष करने वालों का (**तरति**) उल्लङ्घन करता है और (**प्रिये**) प्रीति करने वाले (**अहनि**) दिन में (**युष्माकम्**) आप लोगों के प्रिय को सिद्ध करता है और जो (**महीः**) भूमियों का उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियों वा (**इषः**) अन्नादिकों (**वः**) आप लोगों के अर्थ (**वराय**) श्रेष्ठत्व के लिये (**प्र, दाशति**) देता है (**सः**) वह (**क्षयम्**) निवास को (**प्र, वि, तिरते**) बढ़ाता है॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो दुष्टता के दूर करने वाले, सब की रक्षा करने वाले, विद्या आदि ऐश्वर्य्य के देने वाले और सुख से सर्वदा वसाने वाले विद्वान् हों, उन्हीं की सेवा और मेल कर के विद्याओं को प्राप्त हूजिये॥२॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नहि वश्चरमं चन वसिष्ठः परिमंसते।
अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा विश्वे पिबत कामिनः॥३॥

नहि। वः। चरमम्। चन। वसिष्ठः। परिऽमंसते। अस्माकम्। अद्य। मरुतः। सुते। सचा। विश्वे। पिबत। कामिनः॥३॥

पदार्थः-(**नहि**) निषेधे (**वः**) युष्माकम् (**चरमम्**) अन्तिमम् (**चन**) अपि (**वसिष्ठः**) अतिशयेन वासयिता (**परिमंसते**) वर्जनीयं विरुद्धं वा परिणमति (**अस्माकम्**) (**अद्य**) (**मरुतः**) मनुष्याः (**सुते**) निष्पन्ने महौषधिरसे (**सचा**) सम्बन्धेन (**विश्वे**) सर्वे (**पिबत**) (**कामिनः**) कामयितारः॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसः कामिनो विश्वे मरुतो! यूयं सचाद्यास्माकं सुते रसं पिबत यतो वश्चरमं चन वसिष्ठो नहि परिमंसते॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदि यूयमिच्छासिद्धिं चिकीर्षेयुस्तर्हि युक्ताहारविहारं ब्रह्मचर्यं कुरुत॥३॥

पदार्थः-हे विद्वानो (**कामिनः**) कामना करने वाले (**विश्वे**) सम्पूर्ण (**मरुतः**) मनुष्य! आप लोग (**सचा**) सम्बन्ध से (**अद्य**) इस समय (**अस्माकम्**) हम लोगों के (**सुते**) उत्पन्न हुए बड़ी ओषधियों के रस में रस को (**पिबत**) पीवें जिससे (**वः**) आप लोगों के (**चरमम्**) अन्त वाले को

(चन) भी **(वसिष्ठः)** अतिशय वसाने वाला **(नहि)** नहीं **(परिमंसते)** त्यागने योग्य वा विरुद्ध परिणाम को प्राप्त होता है॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो आप लोग इच्छा की सिद्धि करने की इच्छा करें तो योग्य आहार और विहार जिसमें उस ब्रह्मचर्य्य को करिये॥३॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

नहि व ऊतिः पृतनासु मर्धति यस्मा अराध्वं नरः।
अभि व आवर्त्सुमतिर्नवीयसी तूयं यात पिपीषवः॥४॥

नहि। वः। ऊतिः। पृतनासु। मर्धति। यस्मै। अराध्वम्। नरः। अभि। वः। आ। अवर्त्। सुऽमतिः। नवीयसी। तूयम्। यात। पिपीषवः॥४॥

पदार्थः-**(नहि)** निषेधे **(वः)** युष्माकम् **(ऊतिः)** रक्षाद्या क्रिया **(पृतनासु)** मनुष्यसेनासु **(मर्धति)** हिंसति **(यस्मै)** **(अराध्वम्)** स्मर्धयन्ति **(नरः)** नायकाः **(अभि)** **(वः)** युष्माकम् **(आ)** **(अवर्त्)** आवर्तते **(सुमतिः)** शोभना प्रज्ञा **(नवीयसी)** अतिशयेन नवीना **(तूयम्)** तूर्णम्। **तूयमिति क्षिप्रनाम।** (निघं०२.१५) **(यात)** प्राप्नुत **(पिपीषवः)** पातुमिच्छवः॥४॥

अन्वयः-हे पिपीषवो नरो! येषां व ऊतिः पृतनासु नहि मर्धति यस्मै यूयमराध्वं स वोऽभ्यावर्त् येषां नवीयसी सुमतिरस्ति ते यूयं विद्यां तूयं यात॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! भवन्त एवं प्रयतन्तां येन युष्माकं न्यायेन रक्षा सेनाः समृद्धिरुत्तमा प्रज्ञा कदाचिन्न ह्रस्येत॥४॥

पदार्थः-हे **(पिपीषवः)** पान करने की इच्छा करने वाले **(नरः)** अग्रणी जनो! जिन **(वः)** आप लोगों की **(ऊतिः)** रक्षा आदि क्रिया **(पृतनासु)** मनुष्यों की सेनाओं में **(नहि)** नहीं **(मर्धति)** हिंसा करती है और **(यस्मै)** जिस के लिये आप लोग **(अराध्वम्)** आराधना करते हैं वह **(वः)** आप लोगों के **(अभि, आ, अवर्त्)** समीप सब प्रकार से वर्त्तमान होता है और जिनकी **(नवीयसी)** अतिशय नवीन **(सुमतिः)** उत्तम बुद्धि है वे आप लोग विद्या को **(तूयम्)** शीघ्र **(यात)** प्राप्त हूजिये॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग इस प्रकार से प्रयत्न करिये, जिससे आप लोगों की न्याय से रक्षा सेना की बढ़ती और उत्तम बुद्धि कभी न न्यून हो॥४॥

पुनः स्वामिनः भृत्यान् प्रति कथमाचरेयुरित्याह॥

फिर स्वामी जन नौकरों के प्रति कैसा आचरण करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ओ षु घृष्विराधसो यातनान्धांसि पीतये।
इमा वो हव्या मरुतो ररे हि कं मो ष्वऽन्यत्र गन्तन॥५॥

ओ इति। सु। घृष्विऽराधसः। यातन। अन्धांसि। पीतये। इमा। वः। हव्या। मरुतः। ररे। हि। कम्। मो इति। सु। अन्यत्र। गन्तन॥५॥

पदार्थः-(**ओ**) सम्बोधने (**सु**) (**घृष्विराधसः**) घृष्वीनि सम्बद्धानि रारांसि येषां ते (**यातन**) प्राप्नुत (**अन्धांसि**) अन्नपानादीनि (**पीतये**) पानाय (**इमा**) इमानि (**वः**) युष्मभ्यम् (**हव्या**) दातुमादातुमर्हाणि (**मरुतः**) मनुष्याः (**ररे**) ददामि (**हि**) (**कम्**) सुखम् (**मो**) निषेधे (**सु**) (**अन्यत्र**) (**गन्तन**) गच्छत॥५॥

अन्वयः-ओ घृष्विराधसो मरुतो! यानीमा हव्यान्धांसि वः पीतयेऽहं ररे तर्हि यूयं कं सु यातनान्यत्र मो सु गन्तन॥५॥

भावार्थः-हे धार्मिका विद्वांसोऽहं युष्माकं पूर्णं सत्कारं करोमि यूयमन्यत्रेच्छां मा कुरुतात्रैव कर्तव्यानि कर्माणि यथावत् कृत्वा पूर्णमभीष्टं सुखमत्रैव प्राप्नुत॥५॥

पदार्थः- (**आ**) हे (**घृष्विराधसः**) इकट्ठे लिये हुए धनों वाले (**मरुतः**) मनुष्यो! जिन (**इमा**) इन (**हव्या**) देने और ग्रहण करने योग्य (**अन्धांसि**) अन्नपान आदिकों को (**वः**) आप लोगों के अर्थ (**पीतये**) पान करने के लिये मैं (**ररे**) देता हूँ उनसे (**हि**) ही आप लोग (**कम्**) सुख को (**सु, यातन**) अच्छे प्रकार प्राप्त हूजिये (**अन्यत्र**) अन्य स्थान में (**मो**) नहीं (**सु**) अच्छे प्रकार (**गन्तन**) जाइये॥५॥

भावार्थः-हे धार्मिक विद्वानो! मैं आप लोगों का पूर्ण सत्कार करता हूँ, आप लोग अन्यत्र की इच्छा को न करिये, यहाँ ही करने योग्य कर्मों को यथावत् करके पूर्ण अभीष्ट सुख को यहाँ ही प्राप्त हूजिये॥५॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ च नो बर्हिः सदताविता च नः स्पार्हाणि दातवे वसु।
अस्रेधन्तो मरुतः सोम्ये मधौ स्वाहेह मादयाध्वै॥६॥२९॥

आ। च। नः। बर्हिः। सदत। अवित। च। नः। स्पार्हाणि। दातवे। वसु। अस्रेधन्तः। मरुतः। सोम्ये। मधौ। स्वाहा। इह। मादयाध्वै॥६॥

पदार्थः-(**आ**) (**च**) अप्यर्थे (**नः**) अस्माकम् (**बर्हिः**) उत्तमं बृहद्गृहम् (**सदत**) उपविशत (**अविता**) प्रविशत रक्षत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**च**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**स्पार्हाणि**) स्पृहणीयानि कमनीयानि (**दातवे**) दातुं (**वसु**) द्रव्यम् (**अस्रेधन्तः**) अहिंसन्तः (**मरुतः**) मनुष्याः (**सोम्ये**) सोम इवानन्दकरे (**मधौ**) मधुरे (**स्वाहा**) सत्यया क्रियया (**इह**) अस्मिन् लोके (**मादयाध्वै**)॥६॥

अन्वयः-हे ऽस्वस्रेधन्तो मरुतो! यूयं नो स्पार्हाणि च दातवेऽस्माकं बर्हिरा सदत नोऽस्माँश्चावितेह स्वाहा सोम्ये मधौ मादयाध्वै॥६॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयं सर्वेभ्यो मनुष्येभ्यो विद्यां दातुं प्रवर्त्तध्वं विद्ययैवैषां रक्षां विधत्तैश्वर्यं सर्वार्थं वर्धयत॥६॥

पदार्थः-हे **(वसु)** द्रव्य का **(अस्रेधन्तः)** नहीं नाश करते हुए **(मरुतः)** मनुष्यो! आप लोग **(नः)** हम लोगों के **(स्पार्हाणि)** कामना करने योग्य पदार्थों को **(च)** निश्चित **(दातवे)** देने के लिये हम लोगों के **(बर्हिः)** उत्तम बड़े गृह में **(आ, सदत)** बैठिये **(नः, च)** और हम लोगों की **(अवित)** रक्षा कीजिये **(इह)** इस लोक में **(स्वाहा)** सत्य क्रिया से **(सोम्ये)** सोमलता के सदृश आनन्द करने वाले **(मधौ)** मधुर रस में **(मादयाध्वै)** आनन्द कीजिये॥६॥

भावार्थः-हे विद्वानो! आप लोग सब मनुष्यों के लिये विद्या देने को प्रवृत्त हूजिये, विद्या ही से इनकी रक्षा कीजिये और ऐश्वर्य्य सब के लिये बढ़ाइये॥६॥

पुनर्मनुष्याः किंवत् किं जानीयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके सदृश किसको जानें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सस्वश्चिद्धि तन्व१ः शुम्भमाना आ हंसासो नीलपृष्ठा अपप्तन्।
विश्वं शर्धो अभितो मा नि षेद नरो न रण्वाः सवने मदन्तः॥७॥

सस्वरिति। चित्। हि। तन्वः। शुम्भमानाः। आ। हंसासः। नीलऽपृष्ठाः। अपप्तन्। विश्वम्। शर्धः। अभितः। मा। नि। सेद। नरः। न। रण्वाः। सवने। मदन्तः॥७॥

पदार्थः-**(सस्वः)** अन्तर्हिताः **(चित्)** अपि **(हि)** यतः **(तन्वः)** विस्तीर्णाः **(शुम्भमानाः)** शोभायुक्ताः **(आ)** **(हंसासः)** हंसा इव गमनकर्तारः **(नीलपृष्ठाः)** नीलं शुद्धं पृष्ठमन्तावयवं कारणं येषां ते **(अपप्तन्)** पतन्ति **(विश्वम्)** अखिलम् **(शर्धः)** बलम् **(अभितः)** सर्वतः **(मा)** माम् **(नि, सेद)** निषादयत **(नरः)** नायकाः **(न)** इव **(रण्वाः)** रमणीयाः **(सवने)** ऐश्वर्ये **(मदन्तः)** आनन्दन्तः॥७॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा शुम्भमानाः हि हंसासो नीलपृष्ठाः सस्वश्चित्तन्वः प्राणाः देहादिष्वापप्तन् तथा सवने मदन्तः रण्वा नरो न मामभितो यूयं नि षेद विश्वं शर्धः प्रापयत॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! यथा हंसा पक्षिणस्सद्यो गच्छन्ति तथा देहात्प्राणा निर्गच्छन्ति यथा रमणीया नरा सर्वेषां हृद्या भवन्ति तथैव विद्वांसः सर्वेषां प्रिया जायन्ते॥७॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जैसे **(शुम्भमानाः)** शोभते हुए **(हि)** ही **(हंसासः)** हंसों के समान गमन करने वाले **(नीलपृष्ठाः)** शुद्ध कारण जिनके वे **(सस्वः)** छिपे हुए **(चित्)** निश्चित **(तन्वः)** विस्तारयुक्त प्राण देह आदि में **(आ)** सब ओर से **(अपप्तन्)** गिरते हैं, वैसे **(सवने)** ऐश्वर्य्य में **(मदन्तः)** आनन्द करते हुए **(रण्वाः)** सुन्दर **(नरः)** अग्रणी जनों के **(न)** समान **(मा)** मुझ को **(अभितः)** सब ओर से आप लोग **(नि, सेद)** बैठाइये और **(विश्वम्)** सम्पूर्ण **(शर्धः)** बल को प्राप्त कराइये॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! वैसे हंस पक्षी शीघ्र चलते हैं, वैसे देह से प्राण निकलते हैं और जैसे उत्तम मनुष्य सब के प्रिय होते हैं, वैसे ही विद्वान् जन सब के प्रिय होते हैं॥७॥

पुनर्धार्मिका विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर धार्मिक विद्वान् क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

यो नो मरुतो अभि दुर्हृणायुस्तिरश्चित्तानि वसवो जिघांसति।
द्रुहः पाशान् प्रति स मुचीष्ट तपिष्ठेन हन्मना हन्तना तम्॥८॥

यः। नः। मरुतः। अभि। दुःऽहृणायुः। तिरः। चित्तानि। वसवः। जिघांसति। द्रुहः। पाशान्। प्रति। सः। मुचीष्ट। तपिष्ठेन। हन्मना। हन्तन। तम्॥८॥

पदार्थः-(**यः**) (**नः**) अस्मान् (**मरुतः**) मनुष्याः (**अभि**) आभिमुख्ये (**दुर्हृणायुः**) दुष्टहृदयः (**तिरः**) तिरस्करणे (**चित्तानि**) अन्तःकरणानि (**वसवः**) वासयितारः (**जिघांसति**) हन्तुमिच्छति (**द्रुहः**) द्रोग्धीन् (**पाशान्**) बन्धकान् (**प्रति**) (**सः**) (**मुचीष्ट**) मुञ्चत (**तपिष्ठेन**) अतिशयेन तप्तेन (**हन्मना**) हननेन (**हन्तना**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः (**तम्**)॥८॥

अन्वयः-हे वसवो मरुतो! यो दुर्हृणायुर्नश्चित्तान्यभि जिघांसति स द्रुहः पाशान् प्रापयति तमस्मान् प्रति मुचीष्ट तपिष्ठेन हन्मना तं तिरो हन्तन॥८॥

भावार्थः-हे धार्मिका विद्वांसो! यूयं दुष्टान् मनुष्यान् श्रेष्ठेभ्यो दूरीकृत्य मोहादि बन्धनानि निवार्य तेषां देवान् हत्वैतान् शुद्धान् सम्पादयत॥८॥

पदार्थः-हे (**वसवः**) वास कराने वाले (**मरुतः**) मनुष्यो! (**यः**) जो (**दुर्हृणायुः**) दुष्ट विचार वाला (**नः**) हम लोगों के (**चित्तानि**) अन्तःकरणों को (**अभि**) सम्मुख (**जिघांसति**) मारने की इच्छा करता है (**सः**) वह (**द्रुहः**) द्रोह करने वाले (**पाशान्**) बन्धनों को प्राप्त कराता है (**तम्**) उसको हम लोगों के (**प्रति**) प्रति (**मुचीष्ट**) छोड़िये (**तपिष्ठेन**) और अत्यन्त तप्त (**हन्मना**) हनन से उसको (**तिरः, हन्तन**) तिरछा मारिये॥८॥

भावार्थः-हे धार्मिक विद्वानो! आप लोग दुष्ट मनुष्यों को श्रेष्ठों से दूर करके मोह आदि बन्धनों को निवृत्त कर के उनके दोषों का नाश करके उन को शुद्ध करिये॥८॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सांतपना इदं हविर्मरुतस्तज्जुजुष्टन। युष्माकोती रिशादसः॥९॥

साम्ऽतपनाः। इदम्। हविः। मरुतः। तत्। जुजुष्टन। युष्माक। ऊती। रिशादसः॥९॥

पदार्थः-(**सान्तपनाः**) सन्तपने भवाः शत्रूणां सन्तापकराः (**इदम्**) (**हविः**) दातुमर्हमन्नादिकम् (**मरुतः**) मानवाः (**तत्**) (**जुजुष्टन**) सेवध्वम् (**युष्माक**) अत्र **वा छन्दसी**ति मलोपः। (**ऊती**) ऊत्या रक्षणाद्यया क्रियया (**रिशादसः**) हिंसकानां हिंसकाः॥९॥

अन्वयः-हे विद्वांसस्सान्तपना मरुतो! यूयं तदिदं हविर्जुजुष्टन, हे रिशादसः! युष्माकोती जुजुष्टन॥९॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! भवन्तः सर्वेषां रक्षणं विधाय ग्रहीतव्यं ग्राहयन्तु॥९॥

पदार्थः-हे विद्वानो (**सान्तपनाः**) उत्तम प्रकार तपन में हुए (**मरुतः**) मनुष्यो! आप (**तत्**) उस

(इदम्) इस **(हविः)** देने योग्य अन्न आदि पदार्थ की **(जुजुष्टन)** सेवा करिये, हे **(रिशादसः)** हिंसा करने वालों के हिंसक! **(युष्माक)** आप लोगों की **(ऊती)** जो रक्षण आदि क्रिया उससे आप सेवन करें अर्थात् परोपकार करें॥९॥

भावार्थः-हे विद्वानो! आप लोग सबका रक्षण करके ग्रहण करने योग्य को ग्रहण कराइये॥९॥

पुनर्गृहस्थाः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर गृहस्थ कैसे होवें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गृहमेधास आ गत मरुतो माप भूतन। युष्माकोती सुदानवः॥ १०॥

गृहऽमेधासः। आ। गत। मरुतः। मा। अप। भूतन। युष्माक। ऊती। सुऽदानवः॥ १०॥

पदार्थः-**(गृहमेधासः)** गृहे मेधा प्रज्ञा येषां ते **(आ)** **(गत)** आगच्छत **(मरुतः)** उत्तमा मनुष्याः **(मा)** निषेधे **(अप)** **(भूतन)** विरुद्धा भवत **(युष्माक)** युष्माकम् **(ऊती)** ऊत्या रक्षणाद्यया क्रियया **(सुदानवः)** सुष्ठु दानाः॥१०॥

अन्वयः-हे गृहमेधासो मरुतो! यूयमत्रागत सुदानवो भूतन युष्माकोती सहिता यूयं माप भूतन॥१०॥

भावार्थः-हे गृहस्था! यूयं विद्यादिशुभगुणदातारो भूत्वा धर्मपुरुषार्थविरुद्धा मा भवत॥१०॥

पदार्थः-हे **(गृहमेधासः)** गृह में बुद्धि जिन की ऐसे **(मरुतः)** उत्तम मनुष्यो! आप लोग यहाँ **(आ, गत)** आइये और **(सुदानवः)** अच्छे दान वाले **(भूतन)** हूजिये और **(युष्माक)** आप लोगों की **(ऊती)** रक्षण आदि क्रिया के सहित आप लोग **(मा)** नहीं **(अप)** विरुद्ध हूजिये॥१०॥

भावार्थः-हे गृहस्थ जनो! आप लोग विद्या आदि श्रेष्ठ गुणों के देने वाले होकर धर्म्म और पुरुषार्थ के विरुद्ध मत होओ॥१०॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इहेह वः स्वतवसः कवयः सूर्यत्वचः। यज्ञं मरुत आ वृणे॥ ११॥

इहऽइह। वः। स्वऽतवसः। कवयः। सूर्यऽत्वचः। यज्ञम्। मरुतः। आ। वृणे॥ ११॥

पदार्थः-**(इहेह)** अस्मिन् संसारे **(वः)** युष्माकम् **(स्वतवसः)** स्वकीयबलाः **(कवयः)** विद्वांसः **(सूर्यत्वचः)** सूर्य इव प्रकाशमाना त्वग्येषां ते **(यज्ञम्)** संगतिमयम् **(मरुतः)** मनुष्याः **(आ)** समन्तात् **(वृणे)** स्वीकरोमि॥११॥

अन्वयः-हे सूर्यत्वचस्स्वतवसः कवयो मरुत! इहेह वो यज्ञमहमा वृणे॥११॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! भवन्तो विद्यादिप्रचाराख्यं कर्म सदोन्नयत॥११॥

पदार्थः- **(सूर्यत्वचः)** सूर्य्य के समान प्रकाशमान त्वचा जिन की ऐसे **(स्वतवसः)** अपने बल वाले हे **(कवयः)** विद्वान् **(मरुतः)** मनुष्यो! **(इहेह)** इसी संसार में **(वः)** आप लोगों के **(यज्ञम्)**

सङ्गतिस्वरूप यज्ञ को मैं **(आ, वृणे)** स्वीकार करता हूँ॥११॥

भावार्थः-हे विद्वानो! आप लोग विद्या आदि के प्रचार नामक कर्म्म की सदा उन्नति करिये॥११॥

पुनर्मनुष्यैः क उपासनीय इत्याह॥

फिर मनुष्यों को किसकी उपासना करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥१२॥३०॥४॥

त्र्यम्बकम्। यजामहे। सुगन्धिम्। पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव। बन्धनात्। मृत्योः। मुक्षीय। मा। आ। अमृतात्॥१२॥

पदार्थः-**(त्र्यम्बकम्)** त्रिष्वम्बकं रक्षणं यस्य रुद्रस्य परमेश्वरस्य यद्वा त्रयाणां जीवकारणकार्याणां रक्षकस्तं परमेश्वरम् **(यजामहे)** संगच्छेमहि **(सुगन्धिम्)** सुविस्तृतपुण्यकीर्तिम् **(पुष्टिवर्धनम्)** यः पुष्टिं वर्धयति तम् **(उर्वारुकमिव)** यथोर्वारुकफलम् **(बन्धनात्)** **(मृत्योः)** मरणात् **(मुक्षीय)** मुक्तो भवेयम् **(मा)** निषेधे **(आ)** मर्यादाम् **(अमृतात्)** मोक्षप्राप्तेः॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं त्र्यम्बकं वयं यजामहे तं यूयमपि यजध्वं यथाऽहं बन्धनादुर्वारुकमिव मृत्योर्मुक्षीय तथा यूयं मुच्यध्वं यथाऽहममृतादा मा मुक्षीय तथा यूयमपि मुक्तिप्राप्तेर्विरक्ता मा भवत॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! अस्माकं सर्वेषां जगदीश्वर एवोपास्योऽस्ति यस्योपासनात् पुष्टिर्वृद्धिः शुद्धकीर्तिर्मोक्षश्च प्राप्नोति मृत्युभयं नश्यति तं विहायान्यस्योपासनं वयं कदापि न कुर्यामेति॥१२॥

अत्र वायुदृष्टान्तेन विद्वदीश्वरगुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदे पञ्चमाष्टके चतुर्थोऽध्याये त्रिंशो वर्गः सप्तमे मण्डले एकोनषष्टितमं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस **(सुगन्धिम्)** अच्छे प्रकार पुण्यरूपय यशयुक्त **(पुष्टिवर्धनम्)** पुष्टि बढ़ाने वाले **(त्र्यम्बकम्)** तीनों कालों में रक्षण करने वा तीन अर्तात् जीव, कारण और कार्य्यों की रक्षा करने वाले परमेश्वर को हम लोग **(यजामहे)** उत्तम प्रकार प्राप्त होवें उसकी आप लोग भी उपासना करिये और जैसे मैं **(बन्धनात्)** बन्धन से **(उर्वारुकमिव)** ककड़ी के फल के सदृश **(मृत्योः)** मरण से **(मुक्षीय)** छूटूं, वैसे आप लोग भी छूटिये जैसे मैं मुक्ति से न छूटूं, वैसे आप भी **(अमृतात्)** मुक्ति की प्राप्ति से विरक्त **(मा, आ)** मत हूजिये॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! हम सब लोगों का उपास्य जगदीश्वर ही है जिसकी उपासना से पुष्टि, वृद्धि, उत्तम यश और मोक्ष प्राप्त होता है, मृत्यु सम्बन्धि भय नष्ट होता है, उस का त्याग कर के अन्य की उपासना हम लोग कभी न करें॥१२॥

इस सूक्त में वायु के दृष्टान्त से विद्वान् और ईश्वर के गुण और कृत्य के वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह ऋग्वेद में पांचवे अष्टक में चौथा अध्याय तीसवां वर्ग तथा सप्तम मण्डल में उनसठवां सूक्त समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चमाष्टके पञ्चमाऽध्यायारम्भः॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ द्वादशर्चस्य षष्टितमस्य सूक्तस्य वसिष्ठ ऋषिः। १ सूर्यः। २-१२ मित्रावरुणौ देवते। १ पङ्क्तिः। ९ विराट् पङ्क्तिः। १० स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ३, ४, ६, ७, १२ निचृत्त्रिष्टुप्। ५, ८, ११ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः कः प्रार्थनीय इत्याह॥

अब मनुष्यों को किसकी प्रार्थना करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यद॒द्य सू॑र्य॒ ब्रवोऽना॑गा उ॒द्यन्मि॒त्राय॒ वरु॑णाय स॒त्यम्।
व॒यं दे॑व॒त्रादि॑ते स्याम॒ तव॑ प्रि॒यासो॑ अर्यमन् गृ॒णन्तः॑॥ १॥

यत्। अ॒द्य। सू॒र्य॒। ब्रवः॑। अना॑गाः। उ॒त्ऽयन्। मि॒त्राय॑। वरु॑णाय। स॒त्यम्। व॒यम्। दे॒व॒ऽत्रा। अ॒दि॒ते॒। स्या॒म॒। तव॑। प्रि॒यासः॑। अ॒र्य॒म॒न्। गृ॒णन्तः॑॥ १॥

पदार्थः-(**यत्**) यः (**अद्य**) (**सूर्य**) सूर्य इव वर्त्तमान (**ब्रवः**) वद (**अनागाः**) अनपराधः (**उद्यन्**) उदयन् (**मित्राय**) सख्ये (**वरुणाय**) श्रेष्ठाय (**सत्यम्**) यथार्थम् (**वयम्**) (**देवत्रा**) देवेषु विद्वत्सु (**अदिते**) अविनाशिन् (**स्याम**) (**तव**) (**प्रियासः**) प्रियाः (**अर्यमन्**) न्यायकारिन् (**गृणन्तः**) स्तुवन्तः॥ १॥

अन्वयः-हे सूर्यादितेऽर्यमन् जगदीश्वर! यद्योऽनागास्त्वमस्मानुद्यन् सूर्य इव यथा मित्राय वरुणाय सत्यं ब्रवस्तथाऽस्मभ्यं ब्रूहि यतस्त्वा देवत्रा गृणन्तो वयं तवाद्य प्रियासस्स्याम॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! भवन्तं सूर्यवत्प्रकाशकं परमात्मानमेवं प्रार्थयन्तु, हे परब्रह्मन्! भवान्नस्माकमात्मस्वन्तर्यामिरूपेण सत्यं सत्यमुपदिशतु येन तवाज्ञायां वर्तित्वा वयं भवत्प्रिया भवेमेति॥ १॥

पदार्थः-हे (**सूर्य**) सूर्य्य के समान वर्त्तमान (**अदिते**) अविनाशी और (**अर्यमन्**) न्यायकारी जगदीश्वर! (**यत्**) जो (**अनागाः**) अपराध से रहित आप हम लोगों को (**उद्यन्**) उद्यत कराते हुए सूर्य्य जैसे वैसे (**मित्राय**) मित्र और (**वरुणाय**) श्रेष्ठ जन के लिये (**सत्यम्**) यथार्थ बात को (**ब्रवः**) कहिये, वैसे हम लोगों के लिये कहिये जिससे आप की (**देवत्रा**) विद्वानों में (**गृणन्तः**) स्तुति करते हुए हम लोग (**तव**) आपके (**अद्य**) इस समय (**प्रियासः**) प्रिय (**स्याम**) होवें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोग सूर्य्य के सदृश प्रकाशक परमात्मा ही की प्रार्थना करो, हे परब्रह्मन्! आप हम लोगों के आत्माओं में अन्तर्य्यामी के

स्वरूप से सत्य-सत्य उपदेश करिये, जिससे आपकी आज्ञा में वर्त्ताव कर के हम लोग आप के प्रिय होवें॥१॥

पुनः स जगदीश्वरः कीदृशः किंवत्किं करोतीत्याह॥

फिर वह कैसा जगदीश्वर किसके सदृश क्या करता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एष स्य मित्रावरुणा नृचक्षा उभे उदेति सूर्यो अभि ज्मन्।
विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपा ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन्॥२॥

एषः। स्यः। मित्रावरुणा। नृऽचक्षाः। उभे इति। उत्। एति। सूर्यः। अभि। ज्मन्। विश्वस्य। स्थातुः। जगतः। च। गोपाः। ऋजु। मर्तेषु। वृजिना। च। पश्यन्॥२॥

पदार्थः-(**एषः**) (**स्यः**) सः (**मित्रावरुणा**) सर्वेषां प्राणोदानौ (**नृचक्षाः**) नृणां कर्मणां द्रष्टा (**उभे**) द्वे (**उत्**) (**एति**) उदयं करोति (**सूर्यः**) सवितृलोकः (**अभि**) अभितः (**ज्मन्**) भूमौ। **ज्मेति पृथिवीनाम।** (निघं०१.१) (**विश्वस्य**) सर्वस्य (**स्थातुः**) स्थावरस्य (**जगतः**) जङ्गमस्य (**च**) (**गोपाः**) रक्षकः (**ऋजु**) सरलम् (**मर्तेषु**) मनुष्येषु (**वृजिना**) वृजिनानि बलानि (**च**) (**पश्यन्**) विजानन्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! एषः स्यो नृचक्षाः परमात्मोभे स्थूलसूक्ष्मे जगति यथा ज्मन् सूर्योऽभ्युदेति तथा विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपाः मर्तेष्वृजु वृजिना च पश्यन् मित्रावरुणा प्रकाशयति॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथोदितः सूर्यः सन्निहितं स्थूलं जगत् प्रकाशयति तथान्तर्यामीश्वरस्स्थूलं सूक्ष्मं जगज्जीवांश्च सर्वतः प्रकाशयति सर्वान् संरक्ष्य सर्वेषां कर्माणि पश्यन् यथायोग्यं फलं प्रयच्छति॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**एषः**) (**स्यः**) सो यह (**नृचक्षाः**) मनुष्यों के कर्मों को देखने वाला परमात्मा (**उभे**) दोनों प्रकार के स्थूल और सूक्ष्म संसार में जैसे (**ज्मन्**) भूमि में (**सूर्यः**) सूर्य्य लोक (**अभि, उत्, एति**) सब ओर से उदय करता है, वैसे (**विश्वस्य**) सम्पूर्ण (**स्थातुः**) नहीं चलने वाले और (**जगतः**) चलने वाले संसार का भी (**गोपाः**) रक्षक वह (**मर्तेषु**) मनुष्यों में (**ऋजु**) सरलतापूर्वक (**वृजिना**) सेनाओं को (**च**) और (**पश्यन्**) विशेष कर के जानता हुआ (**मित्रावरुणा**) सब के प्राण और उदान वायु को प्रकाशित करता है॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे उदय को प्राप्त हुआ सूर्य्य समीप में वर्त्तमान स्थूल जगत् को प्रकाशित करता है, वैसे अन्तर्य्यामी ईश्वर स्थूल और सूक्ष्म जगत् और जीवों को सब प्रकार से प्रकाशित करता है और सब की उत्तम प्रकार रक्षा कर के सब के कर्मों को देखता हुआ यथायोग्य फल देता है॥२॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहतेहैं॥

अयुक्त सप्त हरितः सधस्थाद्या ईं वहन्ति सूर्यं घृताचीः।

धामा॑नि मि॒त्रावरुणा यु॒वाकुः॒ सं यो यू॒थेव॒ जनि॑मानि॒ चष्टे॑॥३॥

अयु॑क्त। स॒प्त। ह॒रित॑ः। स॒धऽस्था॑त्। याः। ई॒म्। वह॑न्ति। सूर्य॑म्। घृ॒ताची॑ः। धामा॑नि। मि॒त्रा॒व॒रु॒णा॒। यु॒वाकु॑ः। सम्। यः। यू॒थाऽइ॑व। जनि॑मानि। चष्टे॑॥३॥

पदार्थः-(**अयुक्त**) युञ्जते (**सप्त**) एतत्संख्याकाः (**हरितः**) दिशः। **हरित इति दिङ्नाम।** (निघं०१.६) (**सधस्थात्**) समानस्थानात् (**याः**) (**ईम्**) उदकम् (**वहन्ति**) (**सूर्यम्**) (**घृताचीः**) रात्रयः (**धामनि**) जन्मस्थाननामानि (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानौ (**युवाकुः**) सुसंयोजकः (**सम्**) (**यः**) (**यूथेव**) यूथानि समूहा इव (**जनिमानि**) जन्मानि (**चष्टे**) प्रकाशयति॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा सप्त हरितो या घृताची रात्रयस्सधस्थात् सूर्यमीं वहन्ति तथा योऽयुक्त धामानि मित्रावरुणा युवाकुस्सन् यूथेव जनिमानि सं चष्टे तं यूयं बोधयत॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा वायवस्सूर्यान् लोकान् सर्वतो वहन्ति तथा विद्वांसस्सूर्यप्राणपृथिव्यादिविद्या जानीयुः॥३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे (**सप्त**) सात (**हरितः**) दिशा और (**याः**) जो (**घृताचीः**) रात्रियाँ (**सधस्थात्**) तुल्य स्थान से (**सूर्यम्**) सूर्य्य को और (**ईम्**) जल को (**वहन्ति**) धारण करती हैं, वैसे (**यः**) जो (**अयुक्त**) युक्त होता है (**धामानि**) जन्म, स्थान और नाम को (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान वायु को (**युवाकुः**) उत्तम प्रकार संयुक्त करने वाला हुआ (**यूथेव**) समूहों के सदृश (**जनिमानि**) जन्मों को (**सम्, चष्टे**) प्रकाशित करता है, उसको आप लोग जनाइये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे पवन सूर्य्य लोकों को सब ओर से धारण करते हैं, वैसे विद्वान् जन सूर्य्य, प्राण और पृथिवी आदि की विद्या को जानें॥३॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उद्वां॑ पृ॒क्षासो॒ मधु॑मन्तो अस्थु॒रा सूर्यो॑ अरुहच्छु॒क्रमर्णः॑।
यस्मा॑ आदि॒त्या अध्व॑नो॒ रद॑न्ति मि॒त्रो अ॒र्य॒मा वरु॑णः स॒जोषाः॑॥४॥

उत्। वा॒म्। पृ॒क्षासः॑। मधु॑ऽमन्तः। अ॒स्थुः॒। आ। सूर्यः॑। अ॒रु॒ह॒त्। शु॒क्रम्। अर्णः॑। यस्मै॑। आ॒दि॒त्याः। अध्व॑नः। रद॑न्ति। मि॒त्रः। अ॒र्य॒मा। वरु॑णः। स॒ऽजोषाः॑॥४॥

पदार्थः-(**उत्**) (**वाम्**) (**युवयोः**) (**पृक्षासः**) सेचकाः (**मधुमन्तः**) मधुरादयो गुणा विद्यन्ते येषु ते (**अस्थुः**) उत्तिष्ठन्तु (**आ**) (**सूर्यः**) सूर्यलोकः (**अरुहत्**) रोहति (**शुक्रम्**) शुद्धम् (**अर्णः**) उदकम् (**यस्मै**) (**आदित्याः**) संवत्सरस्य मासाः (**अध्वनः**) मार्गस्य मध्ये (**रदन्ति**) विलिखन्ति (**मित्रः**) प्राणः (**अर्यमा**) विद्युत् (**वरुणः**) जलादिकम् (**सजोषाः**) समानप्रीत्या सेवनीयः॥४॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! वां ये पृक्षासो मधुमन्त उत्तस्थुः यः सूर्यः शुक्रमर्णः आरुहद्यस्मा आदित्या अध्वनो रदन्ति सजोषा मित्रो वरुणोऽर्यमा चाध्वनो रदन्ति तान् सर्वान् यूयं यथावद्विजानीत॥४॥

भावार्थः-हे विद्वांसः! अध्यापकोपदेशाभ्यां प्राप्तविद्या यूयं पृथिव्यादिपदार्थविद्यां विज्ञाय श्रीमन्तो भवत॥४॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! **(वाम्)** आप दोनों के जो **(पृक्षासः)** सींचने वाले **(मधुमन्तः)** मधुर आदि गुण विद्यमान जन में वे **(उत्, अस्थुः)** उठें और जो **(सूर्यः)** सूर्य्य लोक **(शुक्रम्)** शुद्ध **(अर्णः)** जल को **(आ, अरुहत्)** सब ओर से चढ़ाता और **(यस्मै)** जिसके लिये **(आदित्याः)** वर्ष के महीने **(अध्वनः)** मार्ग के मध्य में **(रदन्ति)** आक्रमण करते हैं **(सजोषाः)** तुल्य प्रीति से सेवा करने योग्य **(मित्रः)** प्राण **(वरुणः)** जल आदि **(अर्यमा)** बिजुली और मार्ग के मध्य में आक्रमण करते हैं, उन सब को आप लोग यथावत् जानो॥४॥

भावार्थः-हे विद्वानो! अध्यापक और उपदेशक से विद्या को प्राप्त हुए आप लोग पृथिवी आदि की विद्या को जान कर धनवान् हूजिये॥४॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमे चेतारो अनृतस्य भूरेर्मित्रो अर्यमा वरुणो हि सन्ति।
इम ऋतस्य वावृधुर्दुरोणे शग्मासः पुत्रा अदितेरदब्धाः॥५॥

इमे। चेतारः। अनृतस्य। भूरेः। मित्रः। अर्यमा। वरुणः। हि। सन्ति। इमे। ऋतस्य। ववृधुः। दुरोणे। शग्मासः। पुत्राः। अदितेः। अदब्धाः॥५॥

पदार्थः-**(इमे)** **(चेतारः)** सम्यग्ज्ञानयुक्ताः विज्ञापकाः **(अनृतस्य)** मिथ्यावस्तुनः **(भूरेः)** बहुविधस्य **(मित्रः)** सर्वसुहृत् **(अर्यमा)** न्यायकारी **(वरुणः)** जलमिव पालकः **(हि)** **(सन्ति)** **(इमे)** **(ऋतस्य)** सत्यस्य वस्तुनो व्यवहारस्य वा **(ववृधुः)** वर्धयन्ति। अत्राभ्यासदैर्घ्यम्। **(दुरोणे)** गृहे **(शग्मासः)** बहुसुखयुक्ताः **(पुत्राः)** **(अदितेः)** अखण्डितस्य **(अदब्धाः)** अहिंसकाः॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथेमे मित्रोऽर्यमा वरुणश्च भूरेरनृतस्य चेतारस्सन्तीमे हि शग्मास अदितेः पुत्रा अदब्धाः दुरोणे भूरेर्ऋतस्य विज्ञानं वावृधुस्तस्मात्ते सत्कर्तव्यास्सन्ति॥५॥

भावार्थः-ये पूर्णविद्या भवन्ति त एव सत्यासत्यप्रज्ञापका जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे **(इमे)** ये **(मित्रः)** सर्व मित्र **(अर्यमा)** न्यायकारी और **(वरुणः)** जल के सदृश पालक **(भूरेः)** बहुत प्रकार के **(अनृतस्य)** मिथ्या वस्तु के **(चेतारः)** उत्तम प्रकार ज्ञानयुक्त वा जनाने वाले **(सन्ति)** हैं और **(इमे)** जो **(हि)** निश्चित **(शग्मासः)** बहुत सुख से युक्त **(अदितेः)** अखण्डित न नष्ट होने वाली के **(पुत्राः)** पुत्र **(अदब्धाः)** नहीं हिंसा करने वाले **(दुरोणे)** गृह में बहुत प्रकार के **(ऋतस्य)** सत्य वस्तु के विज्ञान को **(वावृधुः)** बढ़ाते हैं, इससे वे सत्कार करने योग्य हैं॥५॥

भावार्थः-जो पूर्ण विद्यायुक्त होते हैं, वे ही सत्य और असत्य के जानने वाले होते हैं॥५॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा वरा भवन्तीत्याह॥

फिर विद्वान् कैसे श्रेष्ठ होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इ॒मे मि॒त्रो वरु॑णो दू॒ळभा॑सोऽचे॒तसं॑ चिच्चितयन्ति॒ दक्षैः॑।

अपि॒ क्रतुं॑ सु॒चेत॑सं॒ वत॑न्तस्ति॒रश्चि॒दंहः॑ सु॒पथा॑ नयन्ति॥६॥१॥

इ॒मे। मि॒त्रः। वरु॑णः। दुः॒ऽदभा॑सः। अ॒चे॒तस॑म्। चि॒त्। चि॒त॒यन्ति॒। दक्षैः॑। अपि॑। क्रतु॑म्। सु॒ऽचेत॑सम्। वत॑न्तः। ति॒रः। चि॒त्। अंहः॑। सु॒ऽपथा॑। न॒यन्ति॒॥६॥

पदार्थः-(**इमे**) (**मित्रः**) सखा (**वरुणः**) श्रेष्ठः (**दूळभासः**) दुःखेन लब्धुं योग्या विद्वांसः (**अचेतसम्**) अज्ञानिनम् (**चित्**) अपि (**चितयन्ति**) ज्ञापयन्ति (**दक्षैः**) बलैश्चतुरैर्जनैर्वा (**अपि**) (**क्रतुम्**) प्रज्ञाम् (**सुचेतसम्**) शुद्धान्तःकरणम् (**वतन्तः**) वनन्तः संभजन्तः। अत्र वर्णव्यत्ययेन नस्य: तः। (**तिरः**) तिरस्करणे निवारणे (**चित्**) अपि (**अंहः**) अपराधं पापम् (**सुपथा**) शोभनेन धर्मेण मार्गेण (**नयन्ति**) प्रापयन्ति॥६॥

अन्वयः-य इमे दूळभासो मित्रो वरुणश्च दक्षैरप्यचेतसं चिच्चितयन्ति सुचेतसं क्रतुं वतन्तस्सुपथांऽहश्चित् तिरो नयन्ति त एव जगत्कल्याणकारका भवन्ति॥६॥

भावार्थः-ये अज्ञान् ज्ञानिनस्सज्ञानान् सद्यो विदुषः कृत्वा सत्यधर्ममार्गेण गमयित्वा पापाद्वियोजयन्ति त एवात्र संसारे दुर्लभास्सन्ति॥६॥

पदार्थः-जो (**इमे**) ये (**दूळभासः**) दुःख से प्राप्त होने योग्य विद्वान् (**मित्रः**) मित्र और (**वरुणः**) श्रेष्ठ पुरुष (**दक्षैः**) सेनाओं वा चतुर जनों से (**अपि**) भी (**अचेतसम्**) अज्ञानी को (**चित्**) भी (**चितयन्ति**) जनाते हैं और (**सुचेतसम्**) शुद्ध अन्तःकरण और (**क्रतुम्**) बुद्धि का (**वतन्तः**) सेवन करते हुए जन (**सुपथा**) सुन्दर धर्म्मयुक्त मार्ग से (**अंहः**) अपराध को (**चित्**) भी (**तिरः**) निवारण में (**नयन्ति**) पहुँचाते हैं, वे ही संसार में कल्याणकारक होते हैं॥६॥

भावार्थः-जो अज्ञानियों को ज्ञानी और ज्ञानियों को शीघ्र विद्वान् करके सत्य धर्म्म के मार्ग से चलाकर पाप से पृथक् करते हैं, वे ही इस संसार में दुर्लभ हैं॥६॥

पुनः के विद्वांसः श्रेष्ठा भवन्तीत्याह॥

फिर कौन विद्वान् श्रेष्ठ होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते है॥

इ॒मे दि॒वो अनि॑मिषा पृथि॒व्याश्चि॑कि॒त्वांसो॑ अचे॒तसं॑ नयन्ति।

प्र॒व्रा॒जे चि॑न्न॒द्यो॑ गा॒धम॑स्ति पा॒रं नो॑ अ॒स्य वि॑ष्पि॒तस्य॑ पर्षन्॥७॥

इ॒मे। दि॒वः। अनि॑ऽमिषा। पृ॒थि॒व्याः। चि॒कि॒त्वांसः॑। अ॒चे॒तस॑म्। न॒यन्ति॒। प्र॒व्रा॒ऽजे। चि॒त्। न॒द्यः॑। गा॒धम्। अ॒स्ति॒। पा॒रम्। नः॒। अ॒स्य। वि॒ष्पि॒तस्य॑। प॒र्षन्॥७॥

पदार्थः-(**इमे**) (**दिवः**) सूर्यादेः (**अनिमिषा**) नैरन्तर्येण (**पृथिव्याः**) भूम्यादेः पदार्थमात्रस्य (**चिकित्वांसः**) विज्ञापयन्तः (**अचेतसम्**) जडबुद्धिम् (**नयन्ति**) (**प्रव्राजे**) प्रव्रजन्ति यस्मिन् देशे (**चित्**) यथा (**नद्यः**) सरितः (**गाधम्**) अपरिमितमुदकम् (**अस्ति**) (**पारम्**) परभागम् (**नः**) अस्मान् (**अस्य**)

(विष्पितस्य) व्याप्तस्य कर्मण: **(पर्षन्)** पारयन्ति॥७॥

अन्वय:-हे मनुष्या:! य इमे चिकित्वांसोऽनिमिषा पृथिव्या: दिवश्च विद्यामचेतसं नयन्ति चित् प्रव्राजे नद्यो गच्छन्ति यदासां गाधमुदकमस्ति तस्मात्पारं नयन्ति तथाऽस्य विष्पितस्य कर्मण: पारं नोऽस्मान् पर्षन् एत एव विदुष: कर्तुमर्हन्ति॥७॥

भावार्थ:-ये विद्वांसो विद्युद्भूम्यादेस्सर्वस्या: सृष्टेर्विद्यां बोधयन्ति ते सर्वान् मनुष्यान् दु:खात् पारं नेतुं शक्नुवन्ति॥७॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(इमे)** ये **(चिकित्वांस:)** विज्ञान देते हुए **(अनिमिषा)** निरन्तरता से **(पृथिव्या:)** भूमि आदि पदार्थ मात्र की ओर **(दिव:)** सूर्य्य आदि की विद्या को **(अचेतसम्)** जड़ बुद्धि को **(नयन्ति)** प्राप्त कराते हैं और **(चित्)** जैसे **(प्रव्राजे)** जिसमें चलते हैं उस देश में **(नद्य:)** नदियाँ जाती हैं जो इन नदियों का **(गाधम्)** अथाह जल **(अस्ति)** है इससे **(पारम्)** परभाग को पहुँचाते हैं, वैसे **(अस्य)** इस **(विष्पितस्य)** व्याप्त कर्म के पार में **(न:)** हम लोगों को **(पर्षन्)** पहुँचाते हैं, वे ही विद्वान् करने को योग्य होते हैं॥७॥

भावार्थ:-जो विद्वान् जन बिजुली और भूमि आदि सम्पूर्ण सृष्टि की विद्या को जानते हैं वे सब मनुष्यों को दु:ख से पार ले जाने को समर्थ होते हैं॥७॥

पुन: के विद्वांस उत्तमा भवन्तीत्याह॥

फिर कौन विद्वान् उत्तम होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यद् गोपावददितिः शर्म भद्रं मित्रो यच्छन्ति वरुणः सुदासे।
तस्मिन्ना तोकं तनयं दधाना मा कर्म देवहेळनं तुरासः॥८॥

यत्। गोपावत्। अदितिः। शर्म। भद्रम्। मित्रः। यच्छन्ति। वरुणः। सुऽदासे। तस्मिन्। आ। तोकम्। तनयम्। दधानाः। मा। कर्म। देवऽहेळनम्। तुरासः॥८॥

पदार्थ:-**(यत्)** ये **(गोपावत्)** पृथिवीपालवत् **(अदिति:)** विदुषी माता **(शर्म)** गृहम् **(भद्रम्)** भजनीयं कल्याणकरम् **(मित्र:)** सखा **(यच्छन्ति)** प्रददति **(वरुण:)** श्रेष्ठ: **(सुदासे)** शोभना दासा दातारो यस्मिन् व्यवहारे **(तस्मिन्)** **(आ)** समन्तात् **(तोकम्)** अपत्यम् **(तनयम्)** विशालम् **(दधाना:)** धरन्त: **(मा)** निषेधे **(कर्म)** **(देवहेळनम्)** देवानां विदुषामनादराख्यम् **(तुरास:)** त्वरिता आशुकारिण:॥८॥

अन्वय:-यथादितिर्मित्रो वरुणश्च गोपावद्भद्रं शर्म ददाति तथा सुदासे तस्मिन् तनयं तोकं च दधाना यद्ये सर्वेभ्य: सुखं यच्छन्ति ते भवन्त: तुरासस्सन्तो: देवहेळनं कर्म मा कुर्वन्॥८॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। ये मातृवन्मित्रवन्न्यायाधीशराजवत्सर्वान् सत्या विद्या: प्रदाय सुखं प्रयच्छन्ति धार्मिकाणां विदुषामनादरं कदाचिन्न कुर्वन्ति सर्वान् सन्तानान् ब्रह्मचर्ये विद्यायां च रक्षन्ति त एव सर्वजगद्धितैषिणो भवन्ति॥८॥

पदार्थ:-जैसे **(अदिति:)** विद्यायुक्त माता **(मित्र:)** मित्र **(वरुण:)** श्रेष्ठ **(गोपावत्)** पृथिवी के

पालन करने वाले राजा के सदृश **(भद्रम्)** सेवन करने योग्य सुखकारक **(शर्म)** गृह को देते हैं, वैसे **(सुदासे)** सुन्दर दाता जन जिस व्यवहार में **(तस्मिन्)** उसमें **(तनयम्)** विशाल उत्तम **(तोकम्)** सन्तान को **(दधानाः)** धारण करते हुए **(यत्)** जो जन सबके लिये सुख **(यच्छन्ति)** देते हैं वे आप लोग **(तुरासः)** शीघ्र करने वाले हुए **(देवहेळनम्)** विद्वानों का जिसमें अनादर हो ऐसे **(कर्म)** कर्म को **(मा)** मत करें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो माता के, मित्र के और न्यायाधीश के सदृश सब को सत्य विद्या देकर सुख देते हैं और धार्मिक विद्वानों के अनादर को कभी भी नहीं करते हैं और सब सन्तानों की ब्रह्मचर्य्य और विद्या में रक्षा करते हैं, वे ही सम्पूर्ण जगत् के हित चाहने वाले होते हैं॥८॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युः किं च न कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें और क्या न करें, इस विषय को कहते हैं॥

अव वेदिं होत्राभिर्यजेत रिपः काश्चिद्वरुणध्रुतः सः।
परि द्वेषोभिरर्यमा वृणक्तूरुं सुदासे वृषणा उ लोकम्॥९॥

अव। वेदिम्। होत्राभिः। यजेत। रिपः। काः। चित्। वरुणऽध्रुतः। सः। परि। द्वेषःऽभिः। अर्यमा। वृणक्तु। उरुम्। सुऽदासे। वृषणौ। ऊँ इति। लोकम्॥९॥

पदार्थः-(अव) विरोधे **(वेदिम्)** हवनार्थं कुण्डम् **(होत्राभिः)** हवनक्रियाभिर्वाग्भिर्वा। **होत्रेति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) **(यजेत)** संगच्छेत् **(रिपः)** पापात्मिकाः क्रियाः **(काः)** **(चित्)** अपि **(वरुणध्रुतः)** वरुणेन ध्रुतः स्थिरीकृतः **(सः)** **(परि)** सर्वतः **(द्वेषोभिः)** द्वेषयुक्तैः सह **(अर्यमा)** न्यायाधीशः **(वृणक्तु)** पृथग्भवतु **(उरुम्)** बहुसुखकरं विस्तीर्णम् **(सुदासे)** सुष्ठु दानाख्ये व्यवहारे **(वृषणौ)** बलिष्ठौ राजामात्यौ **(उ)** **(लोकम्)**॥९॥

अन्वयः-यो होत्राभिर्वेदिं यजेत यः कश्चित् काश्चिद्रिपः क्रिया अवयजेत स वरुणध्रुतोऽर्यमा द्वेषोभिः परि वृणक्तूरुं लोकमु वृषणौ च सुदासे प्राप्नोतु॥९॥

भावार्थः-ये विद्वांसो वेदयुक्ताभिर्वाग्भिस्सर्वान् व्यवहारान् संसाध्य दुष्टक्रिया दुष्टांश्च त्यजन्ति त एवोत्तमं सुखं लभन्ते॥९॥

पदार्थः-जो **(होत्राभिः)** हवन की क्रियाओं वा वाणियों से **(वेदिम्)** हवन के निमित्त कुण्ड का **(यजेत)** समागम करे और जो कोई **(चित्)** भी **(काः)** किन्हीं **(रिपः)** पापस्वरूप क्रियाओं का **(अव)** नहीं समागम करे **(सः)** वह **(वरुणध्रुतः)** श्रेष्ठ से स्थिर किया गया **(अर्यमा)** न्यायाधीश **(द्वेषोभिः)** द्वेष से युक्त जनों के साथ **(परि)** सब ओर से **(वृणक्तु)** पृथक् होवे तथा **(उरुम्)** बहुत सुखकारक और विस्तीर्ण **(लोकम्)** लोक को **(उ)** और **(वृषणौ)** दो बलिष्ठों को **(सुदासे)** उत्तम प्रकार दान जिसमें दिया जाये, ऐसे कर्म्म में प्राप्त होवे॥९॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन वेद से युक्त वाणियों से सम्पूर्ण व्यवहारों को सिद्ध करके और दुष्ट

क्रियाओं और दुष्टों का त्याग करते हैं, वे ही उत्तम सुख को प्राप्त होते हैं॥९॥

पुनस्ते विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सुस्वश्चिद्धि समृतिस्त्वेष्येषामपीच्येन सहसा सहन्ते।
युष्मद्भिया वृषणो रेजमाना दक्षस्य चिन्महिना मृळता नः॥१०॥

सुस्वरिति। चित्। हि। सम्ऽऋतिः। त्वेषी। एषाम्। अपीच्येन। सहसा। सहन्ते। युष्मत्। भिया। वृषणः। रेजमानाः। दक्षस्य। चित्। महिना। मृळत। नः॥१०॥

पदार्थः-(**सस्वः**) अन्तश्चरन्तः (**चित्**) अपि (**हि**) (**समृतिः**) सम्यक् सत्यक्रियावान् (**त्वेषी**) प्रकाशमाना (**एषाम्**) (**अपीच्येन**) येनायमञ्चति तत्र भवेन (**सहसा**) बलेन (**सहन्ते**) (**युष्मत्**) युष्माकं सकाशात् (**भिया**) भयेन (**वृषणः**) बलिष्ठाः (**रेजमानाः**) कम्पमाना गच्छन्तः (**दक्षस्य**) बलस्य (**चित्**) अपि (**महिना**) महत्त्वेन (**मृळत**) सुखयत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः (**नः**) अस्मान्॥१०॥

अन्वयः-ये हि सस्वश्चिदेषां त्वेषी समृतिरस्त्यपीच्येन सहसा सहन्ते तेभ्यो युष्मद्भिया रेजमाना वृषणो रेजमाना भवन्ति ते यूयं दक्षस्य महिना चिन्नो मृळत॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्य सत्या प्रज्ञा विद्या नीतिः सेना प्रजाश्च वर्तते स एव शत्रून् सहमानः सर्वान् सुखयति स महिम्नानन्दितो भवति॥१०॥

पदार्थः-जो (**हि**) निश्चित (**सस्वः**) मध्य में चलते हुए हैं (**चित्**) और (**एषाम्**) इनकी (**त्वेषी**) प्रकाशमान (**समृतिः**) उत्तम प्रकार सत्यक्रिया है (**अपीच्येन**) जिससे चलता है उस में हुए (**सहसा**) बल से (**सहन्ते**) सहते हैं उनके लिये और (**युष्मत्**) आप लोगों के समीप से (**भिया**) भय से (**रेजमानाः**) कांपते और चलते हुए (**वृषणः**) बलिष्ठ कांपते हुए जाने वाले होते हैं, वे आप लोग (**दक्षस्य**) बल के (**महिना**) महत्व से (**चित्**) भी (**नः**) हम लोगों को (**मृळत**) सुखयुक्त करें॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसकी सत्य बुद्धि, विद्या, नीति, सेना और प्रजा वर्त्तमान है, वही शत्रुओं को सहता हुआ सब को सुखयुक्त करता है, वह महिमा से आनन्दित होता है॥१०॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यो ब्रह्मणे सुमतिमायजाते वाजस्य सातौ परमस्य रायः।
सीक्षन्त मन्युं मघवानो अर्य उरु क्षयाय चक्रिरे सुधातु॥११॥

यः। ब्रह्मणे। सुऽमतिम्। आऽयजाते। वाजस्य। सातौ। परमस्य। रायः। सीक्षन्त। मन्युम्। मघऽवानः। अर्यः। उरु। क्षयाय। चक्रिरे। सुऽधातु॥११॥

पदार्थः-(**यः**) (**ब्रह्मणे**) धनाय परमेश्वराय वा (**सुमतिम्**) शोभनां प्रज्ञाम् (**आयजते**) समन्ताद्यजेत सङ्गच्छेत (**वाजस्य**) विज्ञानस्य (**सातौ**) संविभागे (**परमस्य**) श्रेष्ठस्य (**रायः**) धनस्य

(सीक्षन्त) सम्बध्नन्ति **(मन्युम्)** क्रोधम् **(मघवानः)** परमधनयुक्ताः **(अर्यः)** यथावज्ज्ञातारः **(उरु)** बहु **(क्षयाय)** निवासाय **(चक्रिरे)** कुर्वन्ति **(सुधातु)** शोभना धातवो यस्मिन् गृहे॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः परमस्य वाजस्य रायः सातौ ब्रह्मणे सुमतिमा यजाते ये मघवानोऽर्यः मन्युं सीक्षन्त क्षयायोरु सुधातु चक्रिरे त एव श्रीमन्तो जायन्ते॥११॥

भावार्थः-ये मनुष्या ईश्वरविज्ञानायोत्तमधनलाभाय श्रेष्ठाय गृहाय क्रोधादिदोषान् विहाय प्रयतन्ते ते सर्वसुखा जायन्ते॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो **(यः)** जो **(परमस्य)** श्रेष्ठ **(वाजस्य)** विज्ञान और **(रायः)** धन के **(सातौ)** उत्तम प्रकार बांटने में **(ब्रह्मणे)** धन के वा परमेश्वर के लिये **(सुमतिम्)** उत्तम बुद्धि को **(आयजाते)** सब प्रकार से प्राप्त होवें और जो **(मघवानः)** अत्यन्त धन से युक्त **(अर्यः)** यथावत् जानने वाले **(मन्युम्)** क्रोध को **(सीक्षन्त)** सम्बन्धित करते हैं और **(क्षयाय)** निवास के लिये **(उरु)** बड़े **(सुधातु)** सुन्दर धातु सुवर्ण आदि जिसमें उस गृह को **(चक्रिरे)** सिद्ध करते हैं, वे ही लक्ष्मीवान् होते हैं॥११॥

भावार्थः-जो मनुष्य ईश्वर के विज्ञान के, उत्तम धन के लाभ के और श्रेष्ठ गृह के लिये क्रोध आदि दोषों का परित्याग कर के प्रयत्न करते हैं, वे सम्पूर्ण सुखों से युक्त होते हैं॥११॥

पुनर्विद्वद्भिः किं क्रियत इत्याह॥

फिर विद्वानों से क्या किया जाता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि।
विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥१२॥२॥

इयम्। देवा। पुरःऽहितिः। युवऽभ्याम्। यज्ञेषु। मित्रावरुणौ। अकारि। विश्वानि। दुःऽगा। पिपृतम्। तिरः। नः। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः॥१२॥

पदार्थः-**(इयम्)** **(देवा)** दातारौ **(पुरोहितिः)** पुरस्ताद्धिता क्रिया **(युवभ्याम्)** **(यज्ञेषु)** विद्वत्सत्कारादिषु **(मित्रावरुणौ)** प्राणोदानवदध्यापकोपदेशकौ **(अकारि)** क्रियते **(विश्वानि)** सर्वाणि **(दुर्गा)** दुःखेन गन्तुं योग्यानि **(पिपृतम्)** पूरयतम् **(तिरः)** तिरस्क्रियायाम् **(नः)** अस्मान् **(यूयम्)** **(पात)** **(स्वस्तिभिः)** **(सदा)** **(नः)**॥१२॥

अन्वयः-हे मित्रावरुणौ देवा! युवभ्यां यज्ञेष्वियं पुरोहितिरकारि युवां नो विश्वानि तिरस्कृत्य पिपृतम्, हे विद्वांसो! यूयं स्वस्तिभिर्नस्सर्वान् मनुष्यान् सदा पात॥१२॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकौ यथा भवन्तौ सर्वेषां हितं कुर्यातां तथाऽस्मत् दुर्व्यसनानि दूरीकृत्य सर्वदाऽस्मान् वर्धयतमिति॥१२॥

अत्र सूर्यादिदृष्टान्तैर्विद्वद्गुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षष्टितमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(मित्रावरुणौ)** प्राण और उदान वायु के सदृश वर्त्तमान अध्यापक और उपदेशक जनो **(देवा)** दाता दोनों! **(युवभ्याम्)** आप दोनों से **(यज्ञेषु)** विद्वानों के सत्काररूपी यज्ञ कर्मों में

(इयम्) यह **(पुरोहितिः)** पहले हित की क्रिया **(अकारि)** की जाती है, वे दोनों आप **(नः)** हम लोगों के लिये **(विश्वानि)** सम्पूर्ण **(दुर्गा)** दुःख से जाने योग्य कामों का **(तिरः)** तिरस्कार कर के आप दोनों **(पिपृतम्)** पूर्ण करिये और हे विद्वान् जनो! **(यूयम्)** आप लोग **(स्वस्तिभिः)** कल्याणों से **(नः)** हम सब मनुष्यों की **(सदा)** सब काल में **(पात)** रक्षा कीजिये॥१२॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! जैसे आप दोनों सब के हित को करें, वैसे हम लोगों के दुष्ट व्यसनों को दूर कर के सब काल में हम लोगों की वृद्धि करें॥१२॥

इस सूक्त में सूर्य्य आदि के दृष्टान्तों से विद्वानों के गुण और कृत्य के वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की संगति इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ जाननी चाहिये।

यह साठवां सूक्त और द्वितीय वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकषष्टितमस्य सप्तर्चस्य सूक्तस्य वसिष्ठर्षिः। मित्रावरुणौ देवते। २, ४ त्रिष्टुप् । ३ ५, ६, ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। १ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाध्यापकोपदेशकौ कीदृशौ भवेतामित्याह॥

अब सात ऋचा वाले इकसठवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब अध्यापक और उपदेशक कैसे होवें, इस विषय को कहते हैं॥

उद्वां चक्षुर्वरुण सुप्रतीकं देवयोरेति सूर्यस्ततन्वान्।

अभि यो विश्वा भुवनानि चष्टे स मन्युं मर्त्येष्वा चिकेत॥१॥

उत्। वाम्। चक्षुः। वरुणा। सुऽप्रतीकम्। देवयोः। एति। सूर्यः। ततन्वान्। अभि। यः। विश्वा। भुवनानि। चष्टे। सः। मन्युम्। मर्त्येषु। आ। चिकेत॥१॥

पदार्थः-(**उत्**) (**वाम्**) युवयोः (**चक्षुः**) चष्टेऽनेन तत् (**वरुणा**) वरौ (**सुप्रतीकम्**) सुष्ठु रूपादिप्रतीतिकरम् (**देवयोः**) विदुषोः (**एति**) (**सूर्यः**) सवितृमण्डलम् (**ततन्वान्**) विस्तीर्णः (**अभि**) (**यः**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**भुवनानि**) (**चष्टे**) जानाति (**सः**) (**मन्युम्**) क्रोधम् (**मर्त्येषु**) मनुष्येषु (**आ**) समन्तात् (**चिकेत**) विजानीयात्॥१॥

अन्वयः-हे वरुणा देवयोर्वां यत्सुप्रतीकं चक्षुस्ततन्वान् सूर्यइवोदेति यो मनुष्यो विश्वा भुवनान्यभि चष्टे स मर्त्येषु मन्युमा चिकेत तथा युवां कुरुतम्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यथा सूर्यस्सर्वान् लोकान् प्रकाशयति तथाऽध्यापकोपदेशकौ सर्वेषामात्मनः प्रकाशयतः॥१॥

पदार्थः-हे (**वरुणा**) श्रेष्ठो (**देवयोः**) विद्वान्! जो (**वाम्**) आप उन दोनों के जिस (**सुप्रतीकम्**) उत्तम प्रकार रूप आदि के ज्ञान कराने वाले (**चक्षुः**) चक्षु इन्द्रिय को कि जिससे देखता है (**ततन्वान्**) विस्तृत करता हुआ (**सूर्यः**) सूर्य्यमण्डल जैसे (**उत्, एति**) उदय को प्राप्त होता है और (**यः**) जो मनुष्य (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**भुवनानि**) भुवनों को (**अभि, चष्टे**) जानता है (**सः**) वह (**मर्त्येषु**) मनुष्यों में (**मन्युम्**) क्रोध को (**आ**) सब प्रकार से (**चिकेत**) जाने वैसे आप दोनों करिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करता है, वैसे अध्यापक और उपदेशक जन सब के आत्माओं को प्रकाशित करते हैं॥११॥

पुनस्तौ कीदृशौ भवेतामित्याह॥

फिर वे दोनों कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

प्र वां स मित्रावरुणावृतावा विप्रो मन्मानि दीर्घश्रुदियर्ति।

यस्य ब्रह्माणि सुक्रतू अवाथ आ यत्क्रत्वा न शरदः पृणैथे॥२॥

प्र। वाम्। सः। मित्रावरुणौ। ऋतऽवा। विप्रः। मन्मानि। दीर्घऽश्रुत्। इयर्ति। यस्य। ब्रह्माणि। सुक्रतू इति सुऽक्रतू। अवाथः। आ। यत्। क्रत्वा। न। शरदः। पृणैथे इति॥२॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वाम्**) युवाम् (**सः**) (**मित्रावरुणौ**) प्राणोदानाविवाध्यापकोपदेशकौ (**ऋतावा**) सत्यसेवी (**विप्रः**) मेधावी (**मन्मानि**) मन्तव्यानि विज्ञानानि (**दीर्घश्रुत्**) यो दीर्घं विस्तीर्णानि बहुकालं वा शास्त्राणि शृणोति (**इयर्ति**) प्राप्नोति (**यस्य**) (**ब्रह्माणि**) धनानि (**सुक्रतू**) शोभनप्रज्ञायुक्तौ (**अवाथः**) रक्षेताम् (**आ**) (**यत्**) (**क्रत्वा**) प्रज्ञया (**न**) इव (**शरदः**) शरदादीनृतून् (**पृणैथे**) पूरयतम्॥२॥

अन्वयः-हे मित्रावरुणा! स ऋतावा दीर्घश्रुद्विप्रो वां मन्मानीयर्ति यस्य ब्रह्माणि सुक्रतू सन्तौ युवां प्रावाथः यत् क्रत्वा न शरद आ पृणैथे तौ युवां वयं सततं सत्कुर्याम॥२॥

भावार्थः-हे विद्वांसः! यो दीर्घकालं ब्रह्मचर्येण शास्त्राण्यधीते स एव मेधावी भूत्वा सर्वान् मनुष्यान् रक्षितुं शक्नोति॥२॥

पदार्थः-हे (**मित्रावरुणौ**) प्राण और उदान वायु के सदृश वर्त्तमान अध्यापक और उपदेशक जनो! (**सः**) वह (**ऋतावा**) सत्य का सेवन करने और (**दीर्घश्रुत्**) बहुत शास्त्रों को वा बहुत काल पर्य्यन्त शास्त्रों को सुनने वाला (**विप्रः**) बुद्धिमान् जन (**वाम्**) आप दोनों के (**मन्मानि**) विज्ञानों को (**इयर्त्ति**) प्राप्त होता है (**यस्य**) जिसके (**ब्रह्माणि**) धनों को (**सुक्रतू**) सुन्दर बुद्धि से युक्त होते हुए आप (**प्र, अवाथः**) रक्षा करें और (**यत्**) जिसकी (**क्रत्वा**) बुद्धि से (**न**) जैसे पदार्थों को वैसे (**शरदः**) शरद् आदि ऋतुओं को (**आ, पृणैथे**) अच्छे प्रकार पूरो, उन आप दोनों का हम लोग निरन्तर सत्कार करें॥२॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो बहुत काल पर्य्यन्त ब्रह्मचर्य्य से शास्त्रों को पढ़ता है, वही बुद्धिमान् होकर सब मनुष्यों की रक्षा करने को समर्थ होता है॥२॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां श्रीपरमविदुषां विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मिते संस्कृतार्यभाषाभ्यां समन्विते सुप्रमाणयुक्ते ऋग्वेदभाष्ये सप्तमे मण्डले चतुर्थानुवाक एकषष्टितमे सूक्ते पञ्चमाष्टके पञ्चमाध्याये तृतीयवर्गे द्वितीयमन्त्रस्य भाष्यं समाप्तम्॥

उक्तस्वामिकृतं भाष्यं चैतावदेवेति।

सं० १९५६ वि० आषाढ कृष्णा ५ को छपके समाप्त हुआ॥